Bachelor of Arts

(B.A.)

BA - 106

HISTORY

(from 1526A.D. to 1857A.D.)

Directorate of Distance Education

Guru Jambheshwar University of Science & Technology

HISAR-125001

विषय सूची

No.	Title	Author	Pages
1	इतिहास एक बौद्ध एवं पाषाण काल (HISTORY OF UNDERSTANDING AND STONAGE	Sh.Mohan Singh	4
2	हडप्पा सभ्यता (THE HARAPPAN CIVILIZATION)	Sh.Mohan Singh	38
3	वैदिक संस्कृति (1500 ई०पू०–600 ई०पू०) VEDIC CULTURE (1500 BC-600 BC)	Sh.Mohan Singh	72
4	महाजनपद एवं मगध साम्राज्य का अभ्युदय (Mahajanapadas and Emergence of Magadha Empire)	Sh.Mohan Singh	111
5	मौर्य साम्राज्य (MAURYAN EMPIRE)	Sh.Mohan Singh	145
6	गुप्त साम्राज्य (Gupta Empire)	Sh.Mohan Singh	187
7	गुप्तोत्तर काल: पुष्यभूति, चालुक्य वंश एवं भारतीय सामंतवाद	Sh.Hari Singh	221
8	त्रिपक्षीय संघर्ष; पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट तथा चोल साम्राज्य	Sh.Hari Singh	261
9	भक्ति व सूफी आंदोलन (Bhakti & Sufi Movement)	Sh.Mohan Singh	321
10	गुप्तोत्तर काल : सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास	Sh.Mohan Singh	365
11	बहमनी और विजयनगर साम्राज्य	Sh.Mohan Singh	406
12	भारत पर तुर्कों का आक्रमण : महमूद गजनवी एवं मुहम्मद गौरी	Sh.Mohan Singh	451
13	दिल्ली सल्तनतः उदय, विस्तार व पतन (1200 ई.–1526 ई.)	Sh.Mohan Singh	486

14	सल्तनतकालीन शासन प्रबन्ध, अर्थव्यवस्था, कला व स्थापत्य (भवन निर्माण)	Sh.Mohan Singh	534

Edited and updated by: Dr.Shakuntla Devi

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE : B.A. 106	**AUTHOR : MR. MOHAN SINGH BALODA**
LESSON NO : 1	**VETTER:**
इतिहास एक बौद्ध एवं पाषाण काल (HISTORY OF UNDERSTANDING AND STONAGE	

अध्याय संरचना (Lesson Structure)

1.1 अधिगम उद्दे"य (Learning Objectives)

1.2 परिचय (Introduction)

1.3 **अध्याय के मुख्य बिन्दु** (Main Body of Text)

1.3.1 इतिहास का अर्थ (Meaning of History)

1.3.2 इतिहास का क्षेत्र (Scope of History)

1.3.3 प्राचीन भारतीय इतिहास के स्त्रोत (Sources of Ancian Indian History)

1.4 **अध्याय का आगे का मुख्य भाग** (Further main body of the text)

1.4.1 प्राक् इतिहास या प्रागैतिहासिक काल (Pre-History Age)

1.4.2 पाषाण काल (Pre-History Age)

1.4.3 पुरापाषाण काल/प्रारंभिक पत्थर युग/पैलिओलिथिक काल (Paleolithic Age)

1.4.4 पुरापाषाण कालीन की विशेषताऐं (Features of Old Age-Culture)

1.4.5 मध्यपाषाण/मीसोलिथिक काल (Mesolithic Age)

1.4.6 पुरापाषाण और मध्यपाषाण काल के औजार (Palaeolitichic and Mesolithic Age of Tool)

1.4.7 कृषि प्रणाली की उत्पति (उद्गम) (Origin of the Agriculture System)

1.4.8 नवपाषाण युग की विशेषताऐं (Characteristics of Neolithic)

1.5 प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

1.6 सारांश/संक्षिप्तिका (Summary)

1.7 संकेत सूचक (Key Words)

1.8 स्वंय मूल्यांकन के लिए परीक्षा (Self-Assessment Test) (SAT)

1.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answer to Check Your Progress)

1.10 सहायक संदर्भ ग्रंथ एवं अध्ययन सामग्री (References/Suggested Readings)

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे :

- अधिगमकर्ताओं को इतिहास के अर्थ से परिचित करवाना।
- हमारा अतीत किस प्रकार पाठकों को प्रभावित करता है।
- इतिहास सिर्फ इतिहास नहीं है। यह वर्तमान को भी प्रतिबिम्बित करता हे। इससे छात्रों को रूबरू करवाना।
- इतिहास के क्षेत्र से शिक्षार्थियों को अवगत करवाना।
- प्राचीन भारतीय इतिहास के स्त्रोतों पर विद्यार्थियों से परिचर्चा करना।
- पुरापाषाण काल से नवपाषाण काल तक के गमन से मानव जीवन में होने वाले परिवर्तनों पर पाठको से गोष्ठी करना।
- वर्तमान में इसकी प्रासंगिकता पर जिज्ञासु पाठकों से चर्चा करना।
- अपने अतीत में शिक्षार्थियों की रूचि विकसित करना।
- वर्तमान समय में इसकी प्रासंगिकता पर अधिगमकर्ताओं के मतों को जानना।

- इस अध्याय के माध्यम से छात्रों में सूझ व सृजनात्मकता को विकसित करना।

1.2 परिचय (Introduction)

इतिहास ज्ञान प्राप्त करने की एक प्रथम अवस्था है। इतिहास से हम अतीत की जानकारी लेकर एवं वर्तमान से तुलना करके भविष्य की योजना तैयार कर सकते है। इतिहास को विश्व की जननी की संज्ञा दी जा सकती है। प्रत्येक, समाज, देश, राष्ट्र, व्यक्ति का एक इतिहास होता है। उसका इतिहास ही उसके बारे में जानकारी देता है। इसी प्रकार प्राचीन भारतीय इतिहास का भी एक इतिहास है। इसके अनेकों स्त्रोत हैं जिनके माध्यम से प्राचीन भारतीय इतिहास की गुप्त जानकारी प्राप्त होती है। इस अध्याय में इतिहास के अर्थ की जानकारी उसके विस्तार क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करेंगे। पाषाण काल–पुरापाषाण काल (20 लाख ई० पूर्व से 12000 ई० पूर्व) मध्य पाषाण काल (12000 ई० – 10000 ई० पूर्व) नवपाषाण काल (10000 ई० पूर्व – 40000 ई० पूर्व) इन प्रत्येक युग में किस प्रकार की संस्कृति रही और मानव ने किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत किया। इन तीनों में किस प्रकार बदलाव आए इसकी चर्चा क्रमबद्ध रूप से इस अध्याय में प्रस्तुत की जाएगी। इस अध्याय अध्ययन करके अधिगमकर्त्ता लाभान्वित होंगे कि इतिहास क्या है और प्राचीन भारतीय इतिहास किस प्रकार ज्ञान का सागर है आदि मानव से लेकर मनुष्य किस प्रकार एक युग से दूसरे युग में प्रवेश करता चला गया ओर चारों तरफ विज्ञान की क्रान्ति लायी। इस प्रकार से इस अध्याय को विभिन्न रूपों में शिक्षार्थियों को ज्ञान के भण्डार की तरफ आकर्षित किया जाएगा।

1.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

1.3.1 इतिहास का अर्थ (History of Meaning)

इतिहास के लिए अंग्रेजी में History शब्द प्रयोग किया जाता है जो ग्रीक शब्द 'Histo' (हिस्टो) से बना है जिसका अर्थ है इसे जानों। ('Know this') किसी व्यक्ति समूह, समाज या देश, स्थान, क्षेत्र से संबंधी विशेष घटनाओं व तथ्यों आदि का कालक्रमिक विवरण (Chronological description) या घटनाओं का समयबद्ध क्रम में सजाया हुआ दस्तावेज है। वह इतिहास कहलाता है।

इतिहास किसी समाज विशेष की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, भौगोलिक एवं आर्थिक स्थिति तथा इन स्थितियों में समय के साथ–2 क्या बदलाव हुए इसका विवरण क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करता है। अर्थात् साधारण शब्दों में अतीत की घटनाओं की जानकारी देना ही इतिहास है।

सबसे पहले इतिहास शब्द का उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है। इतिहास के जनक हेराडोटस है। (484 ई० पू० – 425 ई० पू०) ये यूनानी इतिहासकार थे जिन्होंने सर्वप्रथम तथ्यों को सिलसिलेवार ढंग से प्रस्तुत किया तथा उनकी सच्चाई को जाना। इस इतिहासकार ने "हिस्टोरिका" नामक पुस्तक की रचना की जिसमें भारत–ईरान (फारस) के बीच संबंध का वर्णन है। कुछ विद्वानों का मानना है कि 'हिस्ट्री' यूनानी संबा लोरोटला (Loropla) से लिया गया है जिसका अर्थ होता है 'सीखना'। कुछ विद्वान 'हिस्ट्री' शब्द की व्युत्पति जर्मन शब्द (Geschichte) से मानते हे। जिसका अर्थ – 'घटित होना'।

E.H. Car के अनुसार, "इतिहास अतीत और वर्तमान के बीच का अनवरत्' संवाद है।" (प्राचीन भारत–सौरभ चौबे पृ० सं० 7)

डॉ० के०एस० लाल के अनुसार, "इतिहास मानव जीवन के महान कार्यों का अध्ययन है। यह मानव जाति की महान और असाधारण सफलताओं का संकलन है।"

उपरोक्त तथ्यों एवं परिभाषाओं के आधार पर हम साधारण भाषा में कह सकते है कि इतिहास वह है जो अतीत की जानकारी देता है।

1.3.2 इतिहास का क्षेत्र (Scope of History)

इतिहास के क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। प्रत्येक विषय, व्यक्ति, खोज, आंदोलन आदि सभी का अपना इतिहास होता है। कहा तो यह भी जाता है कि इतिहास का भी इतिहास होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दार्शनिक, वैज्ञानिक आदि दृष्टिकोणों की तरह ऐतिहासिक दृष्टिकोण की भी अपनी विशेषता है। 17वीं शताब्दी से सभ्य संसार में यह बात व्याप्त हो गई है कि इतिहास एक विचार शैली है। जो पुरातन काल से चली आ रही है। आधुनिक सदी में यूरोपीय शिक्षा में दीक्षित हो जाने के बाद से ऐतिहासिक अनुसंधान की हिंदुस्तान में उत्तरोत्तर उन्नति होने लगी है। इतिहास की सहस्रों धाराएँ हैं। वर्तमान में इसका प्रयोग राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में अधिक हुआ है। इतिहास के निमन विविध क्षेत्र हैं :–

1. सैन्य इतिहास – युद्ध, रणनीतियों, हथियार, युद्ध के मनोविज्ञान से संबंधित है। 1970 के दशक के बाद नए सैन्य इतिहास जो जनशक्ति से अधिक सैनिकों के साथ रणनीति से अधिक मनोविज्ञान के साथ समाज और संस्कृति पर युद्ध के व्यापक प्रभाव से संबंधित है।

2. धर्म का इतिहास – यह इतिहास दुनिया के सभी क्षेत्रों और जगहों में धर्मों का अध्ययन करता है जहाँ मनुष्य रहते हैं।

3. सामाजिक इतिहास – यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें सामान्य जन के इतिहास और जीवन के साथ सामना करने की रणनीतियाँ सम्मिलित हैं।

4. सांस्कृतिक इतिहास – 1989–90 के दशक में सांस्कृतिक इतिहास ने सामाजिक इतिहास की जगह ले ली। यह पिछले ज्ञान, रीति रिवाजों और लोगों के समूह के कला के अभिलेखों और वर्णनात्मक विवरणों की जांच करता है।

5. राजनीतिक इतिहास – यह राष्ट्रों के बीच संबंधों पर केन्द्रित है यह मुख्यतः कूटनीति और युद्ध के कारणों का अध्ययन करता है।

6. आर्थिक इतिहास – 19वीं सदी के उत्तरार्ध से ही आर्थिक इतिहास अच्छी तरह से स्थापित है। हाल के वर्षों में यह पारंपरिक इतिहास विभागों से स्थानान्तरित होकर अर्थशास्त्र विभाग की तरफ चला गया है।

7. पर्यावरण इतिहास – यह इतिहास का एक नया क्षेत्र है जो 1980 के दशक में पर्यावरण पर मानवीय गतिविधियों के प्रभाव को लेकर उभरा है।

8. विश्व इतिहास – विश्व इतिहास वास्तव में अनुसंधान की बजाय शिक्षण क्षेत्र है। इसे 1980 के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान आदि देशों में लोकप्रियता मिली। इससे छात्रों को बढ़ते हुए वैश्वीकरण के परिवेश में व्यापक ज्ञान की प्राप्ति हो सकेगी।

1.3.3 प्राचीन भारतीय इतिहास का स्त्रोत (Sources of Ancient Indian History)

प्राचीन भारत के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक ढांचे को जानने के लिए प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत का क्रमबद्ध अध्ययन करना अतिआवश्यक है। इसके बारे में जानकारी प्रमुख रूप से चार स्रोत से प्राप्त होती है।

1. धार्मिक ग्रंथ 2. ऐतिहासिक एवं सामाजिक ग्रंथ (धर्मोत्तर साहित्य) 3. विदेशियों के वृत्तांत 4. पुरातत्व–संबंधित साक्ष्य

1. धार्मिक ग्रंथ – भारत की धरा (धरती) पर प्राचीन काल में मुख्य रूप से तीन धर्मों की जानकारी मिलती है – (क) वैदिक धर्म (ख) जैन धर्म (ग) बौद्ध धर्म

(क) वैदिक ग्रंथ – वैदिक ग्रंथों को समझने के लिए हमें वेद, वेदांग, पुराण, महाकाव्य, उपनिषद और स्मृतियाँ आदि का अध्ययन करना होगा।

(i) वेद (Ved) (वेद शब्द 'विद्' धातु से निकला है जिसका) अर्थ है 'ज्ञान' वेदों की संख्या चार है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अर्थववेद। पहले तीन वेदों को 'त्रिवेद' कहते है और चारों वेदों की संहिता भी कहते है।

(क) ऋग्वेद (Rjgved) – यह सबसे प्राचीन वेद है। ऋचाओं के क्रमबद्ध ज्ञान के संग्रह को ऋग्वेद कहते हे। इससे आर्यों की राजनीतिक जानकारी मिलती है। इसमें 10 मंडल, 1028 सूवत है और 10,642 ऋचाएँ है। इस वेद की रचनाओं को पढ़ने वाले ऋषि को होतृ कहते है। सबसे पुराना सूक्त दूसरे से नौवें मंडल में है। प्रथम और दसवां मंडल बाद में जोड़ा गया है। दूसरा एवं सातवां मंडल सर्वाधिक प्राचीन है। तीसरे मंडल में गायत्री मंत्र है। आठवें मंडल की हस्तलिखित ऋचाओं को खिल कहा जाता है। दसवें मंडल में पुरूष–सूक्त है जिसके अनुसार चार वर्ण है – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शुद्र।

(ख) यजुर्वेद (Yajurved) – 'यजुष' का अर्थ है यज्ञ। यह एक ऐसा वेद है जो गद्य एवं पद्य दोनों में है। इस वेद में यज्ञ संबंधी विधि–विधान का वर्णन है। यजुर्वेद की पाँच शाखाएँ है। (i) काठक (ii) कपिण्ठत (iii) मैत्रायणी (iv) तैतरी (v) वाजसनेयी इसके पाठककर्त्ता को अध्वर्यु कहते हैं।

(ग) सामवेद (Samved) – साम का अर्थ है गान। यानी गायी जा सकने वाली ऋचाओं का संकलन है। इसमें 1549 ऋचायें है जिनमें से केवल 75 नई है बाकी सारी ऋग्वेद से ली गई है। इसके अधिगमकर्त्ता को उद्रातृ कहते हैं। इसे भारतीय संगीत का जनक माना जाता है।

(घ) अथर्ववेद (Atharvaved) – अथर्वा ऋषि द्वारा रचित इस वेद में 731 सूक्त और बीस अध्याय शामिल है। इसमें रोग निवारण, जादू–टोना, विवाह, प्रेम, आर्शीवाद, स्तुतीत औषधि, अनुसंधान, तंत्र मंत्र, अंधविश्वास आदि मंत्र उल्लेखित है।

(ii) उपवेद – इनकी संख्या 4 है – आयुर्वेद – चिकित्सा से संबंधित, धनुर्वेद– युद्धकौशल से संबंधित, गंधर्व वेद – संगीत कला से संबंधित, शिल्पवेद – निर्माण कला से संबंधित।

(iii) वेदांग – वेदों के अर्थ को समझने व सूक्तों के सही उच्चारण के लिए वेदांग की रचना की गई। इनकी संख्या 6 है – ध्वनिशास्त्र (शिक्षा), अनुष्ठान (कल्प), व्याकरण, व्युत्पत्ति (निरूक्त), छंद, खगोलशास्त्र (ज्योतिष) साथ ही इन सभी विषयों के इर्द–गिर्द बहुत सारे साहित्य की रचना की गई।

(iv) महाभारत – महाकाव्यों में महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित महाभारत बहुत पुराना है और इसमें लगभग ई० पू० 10 वीं शताब्दी से ईसा की चौथी शताब्दी तक का वर्णन मिलता है। इसमें प्रारंभ में 8800 श्लोक थे तब इसे जय

संहिता का नाम दिया गया। फिर इसमें श्लोकों की संख्या बढ़कर 24 हजार हो गई तब इसे भारत कहा जाने लगा। जब इसकी संख्या एक लाख हो गई तब शत्साहस्त्री संहिता या महाभारत का नाम दिया गया। महाभारत में कुल 18 पर्व (अध्याय) यह विश्व का सबसे बड़ा महाकाव्य है।

(v) पुराण – मुख्य पुराण 18 हैं। पुराणों के रचयिता लोम हर्ष अथवा इनके पु,त्र उग्रश्रवां माने जाते हैं। 1. ब्रह्मपुराण 2. पद्म पुराण 3. विष्णु पुराण 4. मार्कण्डेय पुराण 5. अग्नि पुराण 6. वायु पुराण 7. भागवत पुराण 8. नारदीय पुराण 9. भविष्य पुराण 10. ब्रहावैवर्त पुराण 11. शैव पुराण 12. लैंग पुराण 13. वराह पुराण 14. स्कन्द पुराण 15. गरूड़ पुराण 16. वामन पुराण 17. मतस्य पुराण 18. कूर्म पुराण इनमें मार्कण्डेय, ब्रहाण्ड, वायु, विष्णु, भागवत और मत्स्य ये प्राचीन पुराण है। इन में राजवंशो का वर्णन मिलता है।

(vi) रामायण – रामायण की रचना महर्षि वाल्मीकि ने की थी। इसमें मूल रूप से 600 श्लोक थे, फिर इनकी संख्या 12 हजार और अन्ततः तक यह संख्या बढ़ कर 24 हजार तक हो गई। रामायण की रचना ई० पू० 5वीं शताब्दी से प्रारम्भ होकर 5 चरणों से होकर गुजरा तब तक 12वीं शताब्दी का काल हो चुका था।

(vii) ब्राह्मण – ब्रह्म (यज्ञ) + यण् (व्याख्या) अर्थात् जो यज्ञ की व्याख्या करें वही ब्राह्मण है। ऋषियों ने इसकी रचना गद्य शैली में की है और वेदों की व्याख्या करते है।

(viii) आरण्यक – अरण्य (जंगल) + यक् (ज्ञान)। यह वनों में रहने वाले संयासियों के प्रयोग तथा मार्गदर्शन हेतु ब्राह्मण से अलग कर दिया।

(ix) उपनिषद् – उपनिषद का अर्थ है गुरू के पास बैठना (उप + नि + 'ाद) अर्थात् गुरू के समीप बैठकर विद्या ग्रहण करना। उपनिषदों की संख्या 108 है। उपनिषद वैदिक साहित्य के अन्तिम भाग है इसलिए इन्हें वेदान्त भी कहा जाता है।

(x) स्मृतियाँ – इन्हें धर्म शास्त्र भी कहते है। सबसे प्रसिद्ध एवं प्रथम स्मृति मनुस्मृति है। स्मृतियाँ –

- मनुस्मृति
- याज्ञवल्क्य स्मृति
- नारद स्मृति
- पराशर स्मृति
- बहृस्पति स्मृति
- विष्णु स्मृति

(ख) जैन धर्म (जैन साहित्य) (Jainism Literature) – प्राचीन भारतीय इतिहास के विषय में अनेक ऐसे तथ्यों का वर्णन प्राकृत भाषा में लिखित जैन साहित्य में मिलता है, जिनका वर्णन ब्राह्मण एवं बौद्ध साहित्य में या तो

किया ही नहीं गया है या फिर बहुत कम किया गया है। जैन साहित्य में 'जैन आगम' का स्थान सर्वोपरि है इसमें 12 अंग, 12 उपांग, 10 पकीर्ण, 6 छंदसूत्र, नन्दिसूत्र, अनुयोगद्वार और मूल सूत्र सम्मलित हैं, इनकी रचना किसी एक व्यक्ति द्वारा तथा किसी एक काल में नहीं हुई। इन ग्रन्थों को वर्तमान स्वरूप वल्लभी में 513 ई० अथवा 526 ई० में आयोजित एक सभा में प्रदान किया गया था। जैन साहित्य के आचारांग सूत्र में जैन भिक्षुओं के आचार नियमों का 'भगवती सूत्र' में महावीर स्वामी के जीवन के विषय में तथा छठीं शताब्दी ई. पू. के उतर भारत के महाजनपदों का 'औपचारिक सूत्र' और 'आवश्यक सूत्र' में अजातशत्रु के धार्मिक विचारों का 'भद्रबाहु चरित्र' में चन्द्र गुप्त मौर्य के राज्यकाल की घटनाओं का वर्णन मिलता है।

इसके अतिरिक्त त्रिलोक प्रजटित, कथाकोष, लोक विभाग, आराधना कथा–कोष, स्थविरावली, कल्पसूत्र आदि जैन साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं 'परिशिष्ट पर्व' जिसकी रचना बारहवीं शताब्दी में हेमचंद द्वारा की गई जैन साहित्य का अति महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, वसुदेव हिण्डी, वृहतकल्प सूत्र भाष्य, आवश्यक चुर्णि, कुलिका पुराण कथाकोष आदि अन्य महत्वपूर्ण जैन ग्रन्थ हैं जिनका ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। जैन साहित्य में कुल 24 तीर्थकार हुए जिनमें से प्रथम ऋषयदेव और 23 वे पार्श्वनाथ 24 वें महावीर स्वामी थे।

कल्पसूत्र – कल्प से आशय विधि अथवा नियम से है तथा सूत्र जिनमें विधि अथवा नियमों का प्रतिपादन किया गया है कल्प 6 वेदांगों में से एक है कल्प सूत्र के तीन भाग हैं :–

1. श्रोत सूत्र – यज्ञ सम्बन्धी विधि नियमों का उल्लेख करने वाले सूत्र 'श्रोत सूत्र' कहलाते हैं।

2. गृह्य सूत्र – मनुष्य की समस्त लौकिक और पारलौकिक कर्तव्यों का वर्णन करने वाले सूत्र 'गुप्त सूत्र' कहलाते हैं।

3. धर्म सूत्र – मनुष्य के विभिन्न धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक कर्तव्य और अधिकारों का वर्णन करने वाले सूत्र 'धर्म सूत्र' कहलाते हैं।

(प्रतियोगिता दर्पण/प्राचीन भारत/उपकार प्रकाशन P.P. 11-12)

(ग) बौद्ध धर्म (Bodh Literature) – भारतीय इतिहास के रूप में बौद्ध साहित्य का विशेष महत्व है। सबसे प्राचीन बौद्ध ग्रंथ त्रिपिटक हैं इनके नाम है – 1. सुत्तपिटक 2. विनयपिटक 3. अभिधम्मपिटक। गौतम बुद्ध के निर्वाण प्राप्त करने के बाद इनकी रचना हुई। सुत्तपिटक में बुद्ध के धार्मिक विचारों और वचनों का संग्रह है। विनयपटिक में बौद्ध संघ के नियमों का उल्लेख है और अभिधम्मपिटक में बौद्ध दर्शन का विवेचन है। त्रिपिटक में ईसा से पूर्व की शताब्दियों में भारत के सामाजिक व धार्मिक जीवन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। जातकों में बुद्ध के पूर्व जन्मों की काल्पनिक कथाएं है। ईसा पूर्व पहली शताब्दी में जातकों की रचना आरंभ हो चुकी थी। जातकों में

भी गद्यांशों की अपेक्षा पद्यांश अधिक प्राचीन हैं। गद्यांश भी संभवतः अपने वर्तमान रूप में ईसा की दूसरी शताब्दी में विद्यमान थे। दीपवंश की रचना संभवतः चौथी और महावंश की पांचवीं शताब्दी में हुई। ईसा की पहली दो शताब्दियों के उत्तर–पश्चिमी भारत के जीवन की झलक भी देखने को मिलती है। दिव्यावदान में अनेक राजाओं की कथाएं है। इसमें अनेक अंश चौथी शती ई० तक जोड़े गए। आर्य–मंजु–श्री–मूल–कल्प में बौद्ध दृष्टिकोण से गुप्त सम्राटों का वर्णन मिलता है। बौद्ध साहित्य से भारत और विदेशों के सांस्कृतिक संबंधों पर बहुत प्रकाश पड़ा है। प्रारंभिक बौद्ध धार्मिक साहित्य से हमें प्राचीन भारत के सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन की जानकारी तो मिलती ही है, छठी शती ई० पू० की राजनीतिक दशा का भी पर्याप्त वर्णन उपलब्ध होता है।

(प्राचीन भारत का इतिहास – द्विजेन्द्रनारायण झा एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली P-23)

2. ऐतिहासिक एवं सामाजिक ग्रंथ (धर्मोत्तर साहित्य) :– उपर्युक्त वर्णित साहित्य के अतिरिक्त धर्मेत्तर साहित्य भी प्राचीन भारतीय इतिहास पर समुचित प्रकाश डालता है। इस प्रकार के साहित्य के अन्तर्गत कानून की पुस्तक जिन्हें धर्मसूत्र तथा स्मृतियाँ कहते हैं, रखा जा सकता है। स्मृतियों कि रचना छठी शताब्दी ई.पू. में की गई थी। जिनका वर्णन पहले ही किया जा चुका है। स्मृतियों के विषय में हम यहाँ समुचित प्रकाश डालता है। इस साहित्य को अनेक प्रबुद्ध कवियों द्वारा लिखा गया था। चूँकि लेखन कार्य साहित्यक सभाओं में किया जाता था और इन सभाओं को संगम कहा जाता था। अतः इस काल के साहित्य को संगम साहितय में 'नन्दिक्कलम्बकम' जिसमें पल्लव राजा नन्दिवर्मन तृतीय के विषय में तथा कलिंगतुप्परणि से कोलोतुंग द्वारा कलिंग राज्य पर किए गए आक्रमण के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है, इसके अतिरिक्त ओट्टकृतन नामक प्रसिद्ध लेखक ने तीन चोलवंशी शासकों–विक्रम चोल, कुलोतृंग द्वितीय और राजराज द्वितीय पर तीन अलग–अलग ग्रन्थों की रचना की जिसमें इन शासकों की उपलब्धियों का वर्णन किया गया है, किन्तु इन सभी लेखकों के वर्णन पूर्णतया ऐतिहासिक नहीं हैं।

राजनीतिक एवं व्याकरण सम्बन्धी ग्रन्थ – इस प्रकार के ग्रन्थों के अन्तर्गत कौटिल्य का अर्थशास्त्र, कामन्दक का नीतिशास्त्र, पाणिनी का अष्टाध्यायी, पंतजलि का महाभाष्य आदि ग्रन्थों को रखा जा सकता है। कौटिल्य द्वारा लिखित 'अर्थ"ाास्त्र' जिसमें 15 खण्ड है कानून एवं शासन बन्ध की अत्यन्त ही महत्वपूर्ण पुस्तक है। जिसमें मौर्य युग की सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक स्थिति का वर्णन किया गया है साथ ही इस ग्रन्थ में राजा के कर्त्तव्य, राजकुमारों की शिक्षा–दीक्षा, मंत्रियों की नियुक्ति व पद से हटाना, युद्ध शैली तथा तत्कालीन गुप्तचर विभाग के संगठन के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

अष्टाध्यायी तथा महाभाष्य संस्कृत के व्याकरण ग्रन्थ होने के बावजूद भी तत्कालीन जनतन्त्र एवं राजनीतिक घटनाओं पर यथोचित प्रकाश डालते हैं, पाणिनी का अष्टाध्यायी मौर्यकाल से पूर्व के भारत की राजनीतिक,

सामाजिक व धार्मिक दशा की जानकारी प्रदान करता है। पंतजलि के महाभाष्य से शुंगवंश के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। अतः कहा जा सकता है कि ये ग्रन्थ अत्यन्त ही महत्व के हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार राय चौधरी का मत है कि इन ग्रन्थों से प्राप्त सूचनाएं महाकाव्यों एवं पुराणों से प्राप्त सूचनाओं की तुलना में अधिक तर्कपूर्ण एवं विश्वसनीय हैं।

कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ

1. **अर्थशास्त्र** – चौथी शताब्दी ई.पू. में चन्द्रगुप्त मौर्य में प्रधानमंत्री कौटिल्य द्वारा रचित ग्रन्थ अर्थशास्त्र से मौर्यकाल की सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक स्थिति का यथोचित ज्ञान होता है।

2. **नीतिसार** – कामन्दक द्वारा रचित इस ग्रन्थ से गुप्तकालीन राज्यतंत्र पर कुछ प्रकाश पड़ता है।

3. **मुद्राराक्षस** –विशाखदत्त द्वारा लगभग 600–700 ई. में रचित इस नाटक से चाणक्य एवं चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा नंदवंश के विनाश के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

4. **मालविकाग्निमित्र** – महाकवि कालिदास द्वारा रचित इस नाटक से पुष्यमित्र शुंग और यवनों के मध्य हुए युद्ध के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

5. **हर्षचरित** – बाणभट्ट द्वारा रचित इस ग्रन्थ से हर्षवर्धन की उपलब्धियों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

6. **अष्टाध्यायी** – पाणिनी द्वारा रचित अष्टाध्यायी से मौर्यकाल से पहले के भारत की राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक दशा के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

7. **गार्गी संहिता** – इसमें यवन आक्रमण का उल्लेख किया गया है।

8. **महाभाष्य** – पंतजलि द्वारा रचित महाभाष्य से शुंग वंश के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है।

9. **वृहत्कथामंजरी** – क्षमेद्र द्वारा रचित वृहतकथामंजरी से मौर्य काल की कुछ घटनाओं के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

10. **राजतरंगिणी** – कल्हण द्वारा बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में रचित इस ग्रन्थ से कश्मीर के इतिहास के विषय में विस्तृत एवं पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

11. **गौडवहो** – वाकपति द्वारा रचित इस ग्रन्थ से कन्नौज के नरेश यशोवर्मा की उपलब्धियों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

12. पृथ्वीराज रासो – जयानक द्वारा रचित पृथ्वीराज रासो से पृथ्वीराज चौहान की उपलब्धियों की जानकारी प्राप्त होती है।

13. संगम साहित्य – संगम साहित्य से हमें दक्षिण भारत के प्राचीन इतिहास की जानकारी मिलती है। यह तमिल भाषा में लिखा गया है। इससे चोल शासकों के बारे में जानकारी मिलती है।

14. मृच्छ कटिकम – शूद्रक रचित इस नाटक से गुप्तकालीन सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी मिलती है। (प्रतियोगिता दर्पण/प्राचीन भारत/उपकार प्रकाशन P.P. 12-18)

3. विदेशियों के वृत्तांत (Accounts of Foreigners) :– विदेशियों के वृत्तांत भी साहित्यिक साक्ष्य हैं। विदेशी लेखकों की धर्मेतर घटनाओं में विशेष रूचि थी, अतः उनके वर्णनों से राजनीतिक और सामाजिक दशा पर अधिक प्रकाश पड़ता है। इन लेखकों का समय भी प्रायः निश्चित है, इसलिए इनके वर्णन भारतीय लेखकों के वर्णनों की अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। परंतु यूनानी लेखक भारतीय परिस्थितियों तथा भाषा से अनभिज्ञ थे, अतः उनके सभी वर्णन पूर्णतया सही नहीं हैं। इसी प्रकार चीनी यात्रियों के वर्णन भी पूर्णतया ठीक नहीं हैं क्योंकि वे प्रत्येक घटना का वर्णन बौद्ध दृष्टिकोण से करते थे। अलबिरूनी ने भी प्रायः उपलब्ध भारतीय साहित्य के आधार पर लिखा, अपने अनुभव के आधार पर नहीं।

विदेशियों के वृत्तांतों का विवेचन हम निम्न वर्गों में करेंगे : (i) यूनान और रोम के लेखक (ii) चीनी यात्रियों के वृत्तान्त (iii) अरब के यात्रियों के वृत्तान्त (iv) तिब्बतियों के वृत्तान्त (v) मुसलमान लेखक

(i) यूनान और रोम के लेखक : यूनान और रोम के लेखकों में सबसे प्राचीन हिरोडोटस और टीसियस के वृत्तांत हैं। संभवतः इन दोनों लेखकों ने भारत के विषय में अपना ज्ञान ईरान से प्राप्त किया था। हिरोडोटस के वर्णन में कुछ उपयोगी तथ्य मिलते हैं किंतु उसमें भी अनेक कल्पित कहानियां है। टीसियस के वर्णन में कल्पित कहानियां हैं जो पूर्णतया अविश्वसनीय हैं। इन दोनों लेखकों की अपेक्षा उन यूनानी लेखकों के वर्णन अधिक महत्वपूर्ण है जो सिंकदर के साथ भारत आए थे। यूनान और रोम के लेखकों ने इंडिका के आधार पर अपने वर्णन लिखे हैं। इन लेखकों के वर्णन बहुत उपयोगी हैं क्योंकि उन्होंने उन तथ्यों को लिखा है जिन्हें भारतीय लेखक कोई महत्त्व नहीं देते थे। इनसे प्राचीन भारत का सामाजिक तथा राजनीतिक इतिहास लिखने में बहुत सहायता मिली है। उदाहरण के लिए सिकंदर के आक्रमण की तिथि पर ही मौर्य शासकों की तिथियां निश्चित की गई हैं। लेखकों के वर्णन चंद्रगुप्त के समय की राजनीतिक घटनाओं पर कम, सामाजिक रीति–रिवाजों और शासन प्रबंध पर अधिक प्रकाश डालते हैं। टॉलमी ने दूसरी शती ईसवी में भारत का भौगोलिक वर्णन लिखा। उसने अन्य लेखकों के वर्णन के आधार पर अपना वर्णन लिखा था, अतः उसके वर्णन में अनेक भूलें हैं। परंतु फिर भी उसके वर्णन से हमें अनेक

महत्वपूर्ण बातें मालूम होती है। प्लिनी ने अपना वर्णन पहली शती ईसवी में लिखा। भारतीय पशुओं, पौधों और खनिज पदार्थों के बारे में उसका भी वर्णन बहुत उपयोगी है। इन लेखकों को दूरस्थ देशों के विषय में जानकारी प्राप्त करने की जो लगन थी वह प्रशंसनीय है।

(ii) चीनी यात्रियों के वृत्तांत : चीनी यात्रियों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण फा–ह्यान, युवान च्वांग और ई–चिंग के वर्णन हैं। इनके वर्णन चीनी भाषा में अभी तक उपलब्ध हैं और उनका अँगरेजी भाषा में अनुवाद भी कर दिया गया है। फा–ह्यान पांचवीं शती ईसवीं में भारत आया था और 14 वर्ष भारत में रहा। उसने विशेष रूप से भारत में बौद्ध धर्म की स्थिति के विषय में लिखा। युवान च्वांग हर्ष के राज्यकाल में भारत आया था और वह 16 वर्ष भारत में रहा। उसने धार्मिक अवस्था के साथ–साथ तत्कालीन राजनीतिक दशा का भी वर्णन किया है। सातवीं शताब्दी के अंत में ई–चिंग भारत आया था। वह बहुत समय तक विक्रमशिला और नालंदा के विश्वविद्यालयों में रहा। उसने बौद्ध शिक्षा संस्थाओं और भारतीयों की वेशभूषा, खानपान आदि के विषय में भी लिखा है।

युवान च्वांग ने हर्ष, भास्करवर्मन् आदि के विषय में लिखा है। परंतु इन सभी चीनी यात्रियों की बौद्ध धर्म में अटूट श्रद्धा थी, अतः वे निष्पक्ष रूप से भारत का वर्णन लिखने में असफल रहे। हर्ष ने बुद्ध की प्रतिमा के साथ–साथ सूर्य और शिव की प्रतिमाओं का भी पूजन किया था। इस प्रकार की भूल का मुख्य कारण यही था कि चीनी यात्री प्रत्येक बात को बौद्ध दृष्टिकोण से देखते थे और वे विशेष रूप से भारतीय बौद्धों के ही संपर्क में आए।

(iii) अरब यात्रियों के वृत्तांत : आठवीं शताब्दी से अरब लेखकों ने भारत के विषय में लिखना आरंभ कर दिया था। सुलैमान नवीं ईसवी के मध्य में भारत आया था। उसने पाल और प्रतीहार राजाओं के विषय में लिखा है। अल मसूदी 941 ई० से 943 ई० तक भारत में रहा। उसने राष्ट्रकूट राजाओं की महत्ता के विषय में लिखा है। किंतु अरब लेखकों में सबसे प्रसिद्ध अबूरिहान (अलबिरूनी) था। वह महमूद गजनवी का समकालीन था। उसने संस्कृत भाषा सीखी और भारत की सभ्यता एवं संस्कृति को पूर्ण रूप से जानने का प्रयत्न किया। उसने बड़े धैर्य से भारतीय समाज और संस्कृति को जानने का प्रयत्न किया।

(प्राचीन भारत का इतिहास – झा एवं श्रीमाली (द्विजेन्द्रनारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली P.P. 27-29)

(iv) तिब्बतियों के वृत्तांत : तिब्बत के लेखकों में लामा तारानाथ सर्वाधिक प्रसिद्ध लेखक है इनके द्वारा लिखित 'कग्युर' तथा 'तग्युर' ग्रन्थ में वर्णित वृत्तान्त प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुए है। चीनी व तिब्बती लेखकों के विवरण में मौर्यकाल के पश्चात् के प्राचीन भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है।

(v) मुसलमान लेखक : प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रस्तुतीकरण में मुसलमान लेखकों के विवरणों से बहुत सहायता मिलती है, प्रसिद्ध मुस्लिम इतिहासकार एवं लेखक अबूरहान मुहम्मद बिन अलबेरूनी, जोकि एक महान गणितज्ञ एवं ज्योतिषी थे, ग्यारहवीं शताब्दी में महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत आए। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'तककीक–ए–हिन्द' में तत्कालीन भारत की राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक दशा का विस्तृत वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त अन्य मुसलमान लेखक व इतिहासकारों यथा– अलबिलादुरी, सुलेमान, अलमसूदी आदि के लेखों से भी प्राचीन भारतीय इतिहास के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विदेशी लेख व यात्रियों के विवरण ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त ही उपयोगी हैं, परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में उपर्युक्त वर्णित स्रोतों का प्रयोग सावधानीपूर्वक किया जाए।

4. पुरातात्त्विक स्त्रोत (पुरातत्व–संबंधित साक्ष्य) :– प्राचीन भारत के अध्ययन के पुरातात्त्विक सामग्रियों का विशेष महत्व है। अनेक स्थानों पर किया गया उत्खनन कार्य इसका प्रमाण है। भारतीय पुरातात्त्विक वस्तुओं के अध्ययन का कार्य विलियम जोन्स ने प्रारंभ किया। भारतीय ग्रंथों का रचना काल ठीक से ज्ञात नहीं है। इसलिए इन से किसी काल विशेष की सामाजिक और आर्थिक स्थिति की वास्तविक जानकारी नहीं मिलती है। पुरातात्त्विक सामग्री अधिक विश्वसनीय एवं प्रमाणिक है। क्योंकि इसके काल निर्धारण बहुत कम सम्भावना होती है। इसलिए पुरातात्त्विक साक्ष्य अधिक विश्वसनीय होते है।

छात्र क्रिया कलाप (Student Activities)

(i) इतिहास के अर्थ से आप क्या समझते हो ? (What do you mean by History ?

(ii) इतिहास का क्षेत्र क्या है ? (What is scope of History ?)

(i) अभिलेख (Insciptions) – प्राचीन काल में भारत में स्तम्भों, शिलाओं और गुफाओं के साथ–साथ मुद्राओं, मूर्तियों, धातु–पत्रों, आदि पर भी लेख उत्कीर्ण करवाए जाते थे। अभिलेखों की दृष्टि से मौर्य सम्राट अशोक का शासनकाल सर्वाधिक उल्लेखनीय है। अशोक ने राजकीय अभिलेखों को खुदवाने की परम्परा प्रारम्भ कर भारतीय इतिहास को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अशोक के अभिलेखों को खुदवाने की परम्परा प्रारम्भ कर भारतीय इतिहास को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अशोक के अभिलेखों के अतिरिक्त कलिंगराज, खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख, समुद्रगुप्त का प्रयाग प्रशस्ति अभिलेख, चंद्रगुप्त द्वितीय का महरौली स्तम्भलेख, स्कंदगुप्त का भितरी स्तम्भ लेख तथा पुष्यमित्र शुंग, रूद्रदामन, पुलकेशिन द्वितीय, विजयसेन, भोज आदि शासकों के अभिलेख से भी भारतीय इतिहास के निर्माण में बहुत सहायता मिली है।

कुछ ऐसे गैर–राजकीय अभिलेख भी हैं, जिनका पर्याप्त ऐतिहासिक महत्त्व है। गैर–राजकीय अभिलेख अधिकाशतः मंदिरों की दीवारों एवं मूर्तियों पर अंकित है।

(ii) सिक्के (Coins) – सिक्के के अध्ययन को न्यूमिसमैटिक्स कहते हैं। अर्थात् सिक्कों के अध्ययन को मुद्राशास्त्र कहा जाता है। आजकल की तरह, प्राचीन भारतीय मुद्रा कागज निर्मित नहीं थी बल्कि धातु के सिक्के के रूप में थी। प्राचीन सिक्के धातु से बनाए जाते थे। वे ताम्बे, चाँदी, सोने और सीसे से बनाए जाते थे।

प्राचीन समय में आधुनिक बैंकिंग प्रणाली की तरह कुछ भी नहीं था, लोग मिट्टी के बर्तन और पीतल के बर्तनों में धन इकट्ठा किया करते थे और उनको बहुमूल्य चीजों के रूप में रखते थे ताकि वे जरूरत के समय उसका इस्तेमाल कर सकें। भारत के विभिन्न हिस्सों में सिक्कों के ऐसे कई ढेर पाए गए हैं; जिनमें केवल भारतीय ही नहीं, रोमन साम्राज्य जैसे विदेशों में ढाले गए सिक्के भी थे। वे मुख्यतः कोलकाता, पटना, लखनऊ, दिल्ली, जयपुर, मुम्बई और चेन्नई के संग्रहालयां में संरक्षित हैं। कई भारतीय सिक्के नेपाल, बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान के संग्रहालयों में हैं। लम्बे समय तक भारत पर ब्रिटेन ने शासन किया; फलस्वरूप वे कई भारतीय सिक्कों को भारत से ब्रिटेन के निजी और सार्वजनिक संग्रहालयों में ले जाने में सफल रहे।

सिक्के राजाओं और देवताओं के आकार–प्रकार के साथ–साथ उनके नाम और तारीखों का भी उल्लेख करते हैं। जहाँ वे पाए जाते हैं, उससे उनके संचरण के क्षेत्र का संकेत मिलता है। सिक्कों का इस्तेमाल विभिन्न उद्देश्यों मसलन दान, भुगतान और विनिमय के माध्यम के रूप में किया जाता था। ये उस वक्त के आर्थिक इतिहास के स्वरूप पर प्रकाश डालते हैं। शासकों की अनुमति से व्यापारियों एवं सुनारों के समूह द्वारा कुछ सिक्के जारी किए गए थे। इससे पता चलता है कि उन दिनों शिल्प और वाणिज्य महत्वपूर्ण हो चुके थे। सर्वाधिक बड़ी संख्या में भारतीय सिक्के मौर्य काल के बाद के काल में मिलते हैं। ये शी"ा, पोटीन, ताम्बा, काँस्य, चाँदी और सोने के बने होते थे। गुप्त काल में सबसे ज्यादा सोने के सिक्के जारी किए गए। इससे यह स्पष्ट होता है कि मौर्यों के बाद खासकर गुप्त काल में व्यापार और वाणिज्य में बड़े पैमाने पर विकास हुआ। परन्तु, उत्तर–गुप्त काल के कुछ ही सिक्के पाए गए हैं, जो उस काल के व्यापार और वाणिज्य के पतन को दर्शाते हैं।

सिक्कों के रूप में कौड़ी का भी इस्तेमाल होता था, मगर उसकी क्रय–शक्ति कम थी। यह उत्तर–गुप्त काल में भारी मात्रा में पाई जाती थी। लेकिन हो सकता है इसका इस्तेमाल पहले भी होता रहा हो। (भारत का प्राचीन इतिहास–राम शरण शर्मा P.P. 17-18)

(iii) स्मारक (Building) – प्राचीन भारत के इतिहास को जानने में खुदाइयों में प्राप्त स्मारकों के अवशेषों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। सैन्धंव सभ्यता के संबंध में तो जानकारी का एकमात्र स्रोत खुदाइयों में प्राप्त हुई।

मौर्यकाल के संबंध में भी हमें अनेक प्रकार की जानकारियां भग्नावशेषों से प्राप्त होती है। विभिन्न स्थलों पर निर्मित स्तूप, गुफा, चैत्य एवं विहार इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। स्मारकों के रूप में अशोक के समय के सांची स्तूप, गुप्तकाल के देवगढ़ तथा भितरीगांव और तिगवां के मंदिर भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कनिष्ठ के शासन काल की तक्षशिला तथा उत्तरपश्चिमी प्रदेशों से प्राप्त मूर्तियां, गांधार कला के सौंदर्य के साथ–साथ कला पर यूनानी प्रभाव, कुषाण शासक की बौद्धों के महायान शाखा में आस्था आदि को भी प्रकट करती है। गुप्तकाल की वैष्णव, बौद्ध, जैन और शैव मूर्तियों से गुप्त शासकों की धार्मिक सहिष्णुता की जानकारी मिलती है। मलाया में शिव, पार्वती, गणेश आदि की मूर्तियां आदि प्रमुख हैं। इन स्मारकों से ज्ञात होता है कि उस समय की भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रचार–प्रचार दूर–दूर देशों में हुआ था।

(iv) मूर्तियां – प्राचीन काल में कुषाणों, गुप्त शासकों और गुप्तोत्तर काल में जो मूर्तियां बनाई गईं उनसे जनसाधारण की धार्मिक आस्थाओं और मूर्तिकला के विकास पर बहुत प्रकाश पड़ा है। कुषाण काल की मूर्तिकला में विदेशी प्रभाव अधिक है। प्राचीन भारत की मूर्तिकला से जनसाधारण के जीवन पर भी पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। भारहुत, बोधगया, सांची और अमरावती की मूर्तिकला में जनसाधारण के जीवन की अति सजीव झांकी मिलती है।

(v) चित्रकला (Painting) – इसी प्रकार अजंता के चित्रों में मनोभावों की सुंदर अभिव्यक्ति मिलती है। चित्रकला ने 'माता और शिशु' या 'मरणासन्न राजकुमारी' जैसे चित्रों में ऐसे मनोभावों का चित्रण किया है। जीवन और कला का अटूट संबंध है। चित्रकला से हमें तत्कालीन जीवन की झलक देखने को मिलती है।

(vi) अवशेश (Fossils) – बस्तियों के स्थलों के उत्खनन से जो अवशेष मिले हैं उनसे प्रागितिहास और आद्य इतिहास पर बहुत प्रकाश पड़ा है। आदि मानव ने किस प्रकार उपलब्ध प्राकृतिक साधनों का उपयोग करके अपने जीवन को सुखमय बनाने का प्रयत्न किया, इसकी जानकारी हमें उसकी बस्तियों से प्राप्त पत्थर और हड्डी के औजारों, मिट्टी के बर्तनों, मकानों के खंडहरों से ही होती है। भारत में आदि मानव ईसा से 4 लाख से 2 लाख वर्ष पूर्व रहता था। ईसा से 10 हजार से 6 हजार वर्ष पूर्व के काल में मानव के जीवन में बड़े क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। वह खेती करने लगा, पशु पालने लगा, मिट्टी के बर्तन बनाने लगा, पत्थर के चिकने औजार बनाने लगा। इस नवपाषाण युग की जानकारी हमें उसके अवशेषों से ही हुई है। किस प्रकार जंगली फसलों से उसने खेती करना सीखा और इसी के साथ पशुपालन का कार्य भी शुरू कर दिया। इस विकास–प्रक्रिया की पूरी जानकारी हमें नवपाषाण युग के अवशेषों से ही हुई है।

(vii) मुहरे (Seals) – अवशेषों से जो मुहरें मिली हैं उनसे भी प्राचीन भारत का इतिहास लिखने में बहुत सहायता मिली है। मोहन–जोदड़ों में 500 से अधिक मुहरें मिली थी। उन्हीं के आधार पर हडप्पा संस्कृति के

निवासियों के धार्मिक विश्वासों का अनुमान लगाया गया है। इसी प्रकार बसाड़ (प्राचीन वैशाली) में जो 274 मिट्टी की मुहरें मिली थी। इन मुहरों से यह निष्कर्ष निकलता है कि गुप्तकालीन आर्थिक व्यवस्था में श्रेणियों का बहुत महत्व था।

अब पुरातत्ववत्ता वादक साहित्य, महाभारत और रामायण में उल्लिखित स्थानों का उत्खनन करके उनकी भौतिक संस्कृति का चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उदाहरण के लिए हस्तिनापुर की खुदाई के आधार पर डॉ वी० बी० लाल का मत है महाभारत में वर्णित कौरव–पांडवों का युद्ध लगभग ई० पू० 900 में हुआ। इस प्रकार साहित्यिक साक्ष्य यद्यपि घटना का पूरा विवरण देता है, फिर भी वह लेखक के विचारों से प्रभावित अवश्य होता है। पुरातात्विक साक्ष्य का साहित्यिक साक्ष्य के साथ तर्कसंगत संश्लेषण करके आधुनिक इतिहासकार सही चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न कर रहे है। पुरातात्विक साक्ष्य से संस्कृतियों के क्रमिक विकास पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला जा सकता है।

पुरातात्विक साक्ष्यों ने मानव की आर्थिक प्रगति के एक अन्य चरण पर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। यह चरण भारत में लौह युग के आगमन से संबंद्ध है। लोहे के प्रयोग का आरंभएक महत्त्वपूर्ण तकनीकी उपलब्धि थी। लोहे कि अवशेष भारत के बलूचिस्तान, उत्तर–पश्चिमी भारत, गंगा–यमुना के दोआब, पूर्वी भारत, मध्य भारत तथा दक्षिणी भारत में मिले हैं। इन छह केंद्रों में मध्य भारत का केंद्र सबसे प्राचीन प्रतीत होता है। मध्य और दक्षिण भारत में लोहे को पिघलाने की प्रक्रिया स्वतंत्र रूप से प्रारंभ हुई। लोहे के प्रयोग से कृषि में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए और जिन लोगों ने पहले लोहे के औजार और हथियारों का प्रयोग आरंभ किया वे लोहे का प्रयोग न करने वाले लोगों से अधिक शक्तिशाली हो गए।

इस प्रकार पुरातात्विक साक्ष्य की सहायता से हम प्राचीन भारत के इतिहास को पहले की अपेक्षा अधिक तर्कसंगत ढंग से समझ सके हैं क्योंकि पुरातात्विक साक्ष्य से हम लेखक के काल्पनिक पुट को अलग कर सके हैं।

(प्राचीन भारत का इतिहास– द्विजेन्द्रनारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली P.P. 18-20)

1.4 अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

1.4.1 प्राक् इतिहास का प्रागैतिहासिक काल (Pre-historic Age)

समस्त इतिहास को तीन वर्गों में बांटा गया है। 1. प्राक् इतिहास या प्रागैतिहासिक काल (Prehistoric Age) 2. ऐतिहासिक काल (Historic Age) 3. आद्य ऐतिहासिक काल (Protohistoric Age)

1. प्राक् इतिहास या प्रागैतिहासिक काल (Prehistoric Age) – जिस काल में मानव ने घटनाओं का कोई लिखित विवरण उद्धत नहीं किया उसे प्रागैतिहासिक काल कहा जाता है। अर्थात् इस काल में मनुष्य ने घटनाओं का कोई लिखित प्रमाण या विवरण नहीं रखा।

2. ऐतिहासिक काल (Historic Age) – मानव विकास के उस काल को इतिहास कहा जाता है जिसका विवरण लिखित रूप में उपलब्ध है।

3. आद्यऐतिहासिक काल (Proto-historic Age) – उस काल को आद्यऐतिहासिक काल कहा जाता है जिस काल में लेखन कला के प्रचलन होने के बाद भी उपलब्ध लेख पढ़े नहीं जा सकते।

1.4.2 पाषाण काल (Stone Age)

पाषाण का शाब्दिक अर्थ है – पत्थर। पाषाण काल में मानव के हथियार पाषाण (पत्थर) से बने हुए थे। इसलिए विद्वानों ने इसे पाषाण काल की संबा दी। यह काल मनुष्य की सभ्यता का प्रारम्भिक काल माना जाता है।

पाषाण काल

(Stone age)

- पुरापाषाण काल (Palarolithic age) (बीस लाख से 12 हजार ई० पू०)
- महापाषाण काल (Mesolithic age) (बारह हजार – दस हजार ई० पू०)
- नवपाषाण काल (Neolithic age) (दस हजार–चार हजार ई० पू०)

- निम्न–पूर्व पाषाण युग (5 लाख ई0पू0 – 50 हजार ई0 पू0)
  - चापर–चापिंग (पेबल संस्कृति)
  - एश्यूलियन संस्कृति (हैण्ड–एक्स संस्कृति)
- मध्य–पूर्व पाषाण युग (50 हजार ई0पू0 – 40 हजार ई0 पू0)
- उच्च–पूर्व पाषाण युग (40 हजार ई0पू0 – 10 हजार ई0 पू0)

1.4.3 पुरापाषाण काल या प्रारंभिक पत्थर युग / पैलिओलिथिक काल (Paloeolithic Age) :-

पैलिओलिथिक शब्द दो ग्रीक शब्दों से मिलकर बना है। पैलिओ (Paleo) + लिथौस (Lithos) पैलिओ का अर्थ है – प्राचीन, लिथौस का अर्थ है – पत्थर। पाषाणकालीन सभ्यता एवं संस्कृति का अन्वेषण सर्वप्रथम ब्रूस फूट महोदय ने 1826 ई0 में किया था। यह काल आखेटक एवं खाद्य संग्राहक काल के रूप में भी जाना जाता है। भारत में जो कुछ अवशेष के रूप में मिला है। जो उस समय प्रयोग में लाए जाने वाले पत्थर के उपकरण के रूप में प्राप्त होता है। भारत में पुरापाषाणकालीन मनुष्य के अवशेष (जीवाश्म) कहीं से नहीं प्राप्त हुए है। इस कल में मानव का जीवन शिकार एवं खाद्य संग्रहपर निर्भर था।

पुरापाशाण युग के क्षेत्रों का वर्गीकरण

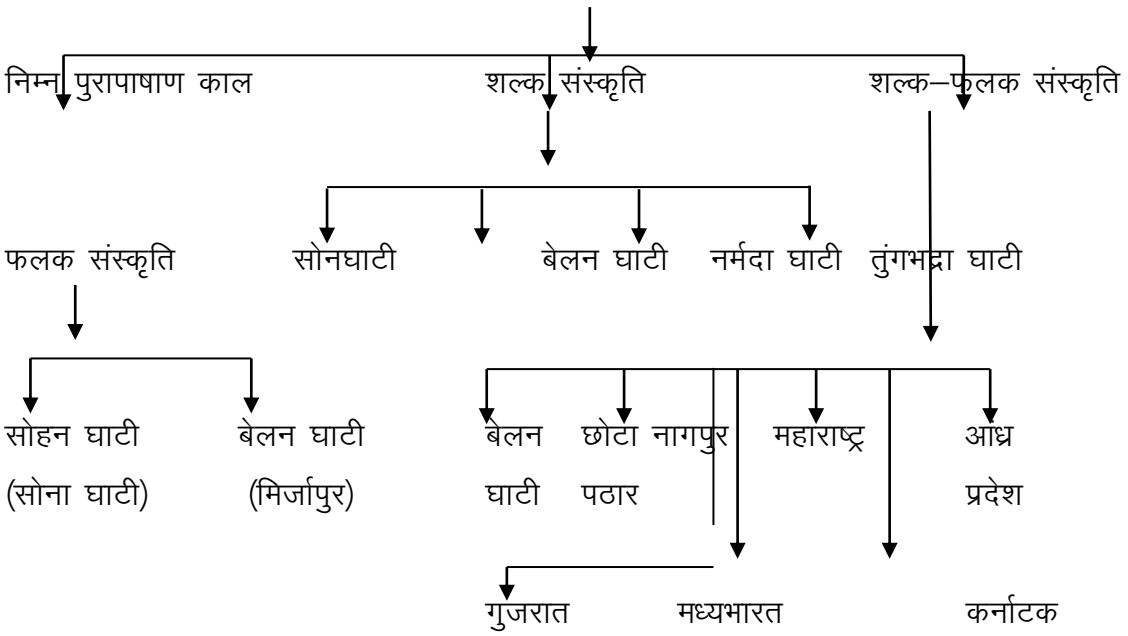

(संक्षिप्त इतिहास NCERT सार – महेश कुमार बर्णवाल P.12)

1.4.4 पुरापाषाणकालीन की विशेषताएँ (Features of Old Stone Age Culture) या पुरापाषाणकालीन संस्कृति क्रम और भौगोलिक प्रसार:-

(i) भारत की पुरापाषाण की सभ्यता का विकास प्लाइस्टोसीन काल या हिम–युग में हुआ।

(ii) पुरापाषाण–कालीन निवासियों के संबंध में कोई निश्चित प्रमाण नहीं है, क्योंकि इस काल के मनुष्य का किसी प्रकार का कोई अवशेष प्राप्त नहीं हुआ है।

(iii) कुछ विद्वानों के विचार है कि पुरापाषाण काल में भारत में निवास करने वाले लोग अण्डेमान द्वीप में निवास करने वाले वर्तमान मानवो की भांति हब्शी जाति के थे।

(iv) लोगों का रंग काला और कद छोटा होता था। इसकी पहचान चपटी नाक वालों के रूप में भी की जाती है।

(v) पुरापाषाण काल की जलवायु आजकल की जलवायु से भिन्नी थी।

(vi) पुरापाषाण कल एक ऐसा युग था, जब बहुत से परिवर्तन हुए जैसे– महाशीत, झंझावत (बिजली का कड़कना), अतिवृष्टि, प्लावन, तुषारपात आदि के प्रकोप से मनुष्य को रक्षा करना आवश्यक था।

(vii) पुरापाषाण कल के लोग वृक्षों की पत्तियों, छाल तथा पशुओं की चमड़ी (चर्म) से अपने शरीर को ढ़कते थे तथा गर्मी (धूप) वर्षा, सर्दी (शीत) से रक्षा करते थे।

(viii) पुरापाषाण काल में जनसंख्या बहुत कम थी और लोगों की आवश्यकताएं भी सीमित थी।

(ix) पुरापाषाण कल में मनुष्य का आहार (भोजन), फल, फुल, कच्चा मांस, कंदमूल आदि खता था इसलिए इस काल को 'आखेटक एवं खाद्य संग्रहक' युग भी कहा जाता है।

(x) इस काल (पुरापाषाण काल) में शवों को जलाने की प्रथा नहीं थी। शवों को गाड़ दिया जाता था या फिर शवों को खुले मैदान में छोड़ दिय जाता था जिसे पशु या पक्षी खा लेते थे।

(xi) इस काल में सभी औजार पत्थर से ही बनते थे और पत्थरों की प्राप्ति कठोर चट्टानों से होती थी।

1.4.5 मध्यपाषाण / मीसोलिथिक काल (Mesolithic Age) :-

मध्यपाषाण युग को आखेटक और पशुपालक युग के नाम से भी जाना जाता है। मध्यपाषाण काल की शुरूआत लगभग 10 हजार से 8 हजार ई० पू०। यह काल पुरापाषाण काल तथ नवपाषाण काल दोनों का सम्मिश्रित है।

मध्यपाषाण संस्कृति प्रसार (वितरण) (Mesolithic Culture distribution) –

(i) मध्यपाषाण काल के अध्ययन के बाद पुरातत्वेता इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मनुष्य हब्शी थे।

(ii) इस काल में मनुष्य की रोजी–रोटी का साधन आखेट ही था।

(iii) मध्यपाषाण काल में कच्चा मांस और मछलियों का भी भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता था।

(iv) मध्यपाषाण काल में शवों की दाह संस्कार की प्रक्रिया शुरू कर दी थी और शवो से संबंधित अनुष्ठान भी करते थे।

(v) मध्यपाषाण की संस्कृति कृषि प्रारंभ होने से पहले की है।

(vi) मध्यपाषाण काल के लोगों के प्रमुख औजारों में सूक्ष्म–पाषाण (पत्थर) के बहुत छोटे औजार (माइक्रोलिथ) मिलते है।

(vii) मध्यपाषाण काल के प्रमुख स्थल – मध्यप्रदेश में – आदमगढ़, भीमबेटका, बोछोर।

(viii) राजस्थान में – बागोर (भीलवाड़ा) और उत्तरप्रदेश में – महदहा, सराय नाहर राय। बिहार में – पायसरा।

1.4.6 पुरापाषाण काल और मध्यपाषाण के औजार

(i) चीरंने के औजार – इसमें दुहरी धार होती थी। इसका उपयोग पेड़ों को काटने और चीरने के लिए किया जाता था।	**(i) ब्लेड** – यह एक प्रकार का विशेषीकृत पत्तर होता है। इसकी लम्बाई चौड़ाई की दो गुनी होती इसका प्रयोग काटने के लिए किया जाता था।
(ii) काटने के औजार – एक बड़ा स्थूल औजार जिसमें एकतरफा धार होती है और इसका उपयोग काटने के लिए किया जाता था।	**(ii) क्रोड** – क्रोड़ साधारणतया आकार में वेलनाकार होता है जिसकी पूरी लंबाई में फ्लूटिंग के निशान होते है और इसमें एक सपाट प्लेटमार्फ होता है।
(iii)पत्तर – यह एक प्रकार का औजार था, जिसे पत्थर को तोड़कर बनाया जाता था। पत्तर की सतह पर सकारात्मक समाघात और इसके सारभाग में एक नकारात्मक समाघात होता है। जिस स्थान पर पत्थर के हथौड़े से चोट की जाती है। उसे समाघात स्थल कहते है। इस चोट के परिणाम स्वरूप सारभाग का जो हिस्सा है उसे अवतल कहते है।	**(iii) नुकीला औजार** – यह एक प्रकार का टूटा तिकोना ब्लेड होता है। इसके दोनों सिरे ढलवां तथा धारदार होते है। इसके सिरे सरल रेखीय य वक्र रेखीय भी हो सकता है।
(iv)खुरचनी – इसमें एक ब्लेड होता है और इसका किनारा धारदार होता है। इसका उपयोग पेड़ों की छाल और जानवरों का चमड़ा उतारने में किया जाता है।	**(iv) त्रिकोण** – इसमें साधारणतः एक सिरा और एक आधार होत है और सिरे को धारदार बनाया जाता है। इसका उपयोग काटने के लिए किया जाता

	है या इसे तीर के अग्र भाग में भी लगाया जाता है।
(v)लक्षणी – यह ब्लेड जैसी होती है इसका किनारा दो तलों के मिलने से बनता है। लक्षणी के काम वाले हिस्से की लम्बाई 2–3 से0मी0 से अधिक नहीं होती।	**(v) नवचंद्राकार** – नवचंद्राकार औजार भी एक तरह का ब्लेड होता है। इसका सिरा वृताकार होता है। यह एक वृत के हिस्से से समान मालूम होता है।

1.4.6 नवपाषाण/नियोलिथिक काल (Concept of Neolithic Age)

निथोलिथिक ग्रीक भाषा के नियो शब्द नवीन के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसलिए इस काल को नवपाषाण काल कहा जाता है। अर्थात् पुरापाषाण काल के उपकरणों के निर्माण की तकनीक, शैली तथा विधि से भिन्नता एवं नवीनता होने के कारण इस कालखण्ड को नवपाषाण काल का नाम दिया जाता है। इस का समय काल 10000 वर्ष से 4000 ई० पू० तक माना गया है। इस को नवीन पत्थर युग (The New Stone Age) भी कहा जाता है। नवपाषाण में बड़े–बड़े परिवर्तन हुए जिनके फलस्वरूप मानव सभ्यता की नींव पड़ी। नवपाषाण युग को मानव जीवन के विकास में इस युग को अत्यन्त की ही क्रांतिकारी माना जाता है। इस युग में इतने क्रांतिकारी परिवर्तन हुए कि इस युग के विकास के क्रम को 'नव पाषाण युगीन क्रांति' कहा जाता है। भारत में नवपाषाण काल से सम्बद्धित पुरातात्विक खोज प्रारंभ करने का श्रेय डॉ० प्राइमरोज को जाता है। जिन्होंने 1842 ई० कर्नाटक के लिंगसुगुर नामक स्थल से उपकरण खोजे थे। नवपाषाण काल में आकर जलवायु मानव के लिए अपेक्षाकृत अधिक अनुकूलन हो गई थी। मानव ने अपने विकास के लिए अपनी विवेकशीलता का उपयोग प्रारंभ कर दिया। इस काल में भी अधिकांश औजार पाषाणों के बने होते थे लेकिन औजारों का स्वरूप परिकृण्त होता था। इस काल में आजीविका में सहयोग देने वाली वस्तुओं का निर्माण लकड़ी, हाथी दांत तथा विभिन्न प्रकार के पशुओं की अस्थियों से भी होने लगा। इस काल में धनुष–बाण, पहिया, डोंगी, तकली, करघे आदि के निर्माण के प्रमाण मिले है।

1.4.7 कृषि प्रणाली की उत्पति/उद्गम (Origin of the Agriculture System)

खेती की शुरूआत या प्रारंभ (Beginning of Farming)

(i) अतिरिक्त इस कालखण्ड में मक्का, पटसन, बाजरा, कपास विभिन्न प्रकार के खाद्यान्नो का उत्पादन आरम्भ हो चुका था।

(ii) किसानों ने कृषि का प्रारंभ, नवपाषाण युग का सबसे बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन था।

(iii) उत्खनन में प्राप्त एक पाषाण–शिला पर दो बैलो से कृषक भूमि जोतते हुए चित्र प्राप्त हुआ जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि उस मय बैलो की सहायता से कृषि की जाती थी।

(iv) नवपाषाण बाशिन्दे सबसे प्राचीन कृषक समुदाय थे। वे पत्थर से बने फाबड़े और खुदाई योग्य लकड़ियों से सीमन खोदते थे।

(v) नवपाषाण युगीन लोगों ने एक स्थिर जीवन को अपनाया और रागी, कुल्थी और चावल उपजाया।

(vi) मेहरगढ़ के नवपाषाण लोग अधिक उन्नत थे। उन्होंने गेहूँ और जौ का उत्पादन किया। इसके फावड़ा और हल जैसे आसान औजारों का प्रयोग किया। वे चकमक पत्थर से बने हँसुए से खेती करते थे।

(vii) वास्तव में कृषि की खोज के कारण खाद्य संग्राहकों से खाद्य पैदा करने वाले बन गए इससे उनके जीवन में परिवर्तन हुआ।

1.4.8 नवपाषाण युग की विशेषताएँ (Characteristics of Neolithic)

(i) स्थायी जीवन की शुरूआत (Beginning of a Settled Life)

(i) कृषि के साथ–साथ स्थायी जीवन की शुरूआत हुई क्योंकि जो लोग फसल उपजाते थे उन्हें एक स्थान पर लम्बे समय तक रहना पड़ता था।

(ii) वे बीजो को मिट्टी में डालने के बाद उनकी देखभाल के लिए कई महीनों तक उसी स्थान पर रहना पड़ता।

(iii) पौधों की देखभाल के लिए पानी देना, पशु–पक्षियों से बचाना, घास साफ (खरपतवार हटाना)।

(iv) जब तक फसल पककर तैयार ना हो जाए तब तक उसी स्थान पर रहना।

(v) खाने और बीज के लिए उन्हें संभाल कर (भण्डारण) रखना इसलिए लोगों ने भ्रमणकारी जीवन का त्याग करके स्थायी जीवन को अपनाया।

(ii) पशुपालन की शुरूआत (Beginning of Herding) :- नवपाषाण काल में कृषि के साथ–2 लोगो ने पशुपालन कार्य की शुरूआत की जिससे पशुओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई। मनुष्य नें सबसे पहले कुत्ते को पालतू बनाया ताकि वह अन्य जानवरों से अपनी रक्षा कर सके। धीरे–2 उसने गाय, बैल, भेड़–बकरी, बिल्ली, सुअर, घोड़ा आदि को पालना शुरू कर दिया। इस प्रकार धीरे–2 पशुपालन के व्यवसाय में काफी तेजी से वृद्धि हुई।

(iii) घर (Houses) :- नवपाषाण काल में मनुष्य के स्थायी रूप से रहने के लिए अपने घरों का निर्माण किया ताकि वर्षा के समय, गर्मी, सर्दी व हिंसात्मक पशुओं से बचा जा सके। नवपाषाण काल में मिट्टी के घर व झोपड़ियाँ बनाकर रहते थे। जैसे– बुर्जहोम के लोग गड्ढ़े वाले घर बनाते थे। ये घर मिट्टी को खोद कर

बनाए जाते थे जिनमें अन्दर की ओर उतरने के लिए छोटी–2 सीढ़िया बनी होती थी। क्योंकि लोगो को सही जीवन जीने के लिए घर ही एक आश्रय था। फिर धीरे–2 मोहल्लें तथा गांव अस्तित्व में आने लगे।

(iv) गाँवो का उद्‌गम (Origin of Village) :- नवपाषाण काल में लोगों ने छोटी–2 बस्तियाँ बनाई जिससे गाँव की उत्पति हुई। इन गाँवो के कारण लोगों की आपस में एक दूसरे से निरर्भरता बढ़ी। स्थायी रूप से खेती और पशुपालन, व्यापार, त्यौहारों, धर्म आदि को बढ़ावा मिला। भारत में मेहरगढ़ नामक स्थान ग्रामीण बस्तियो के अवशेष मिले है।

(v) पहिए की खोज (Discovery of the Wheel) :- नवपाषाण युग में पहिए की खोज लोगो के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इससे लोगो का जीवन आसान एवं आरामदायक हो गया। इसका उपयोग मिट्टी के बर्तन बनाने और भारी चीजों एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए आसान कार्य हो गया।

(vi) भोजन (Food) :- नवपाषाण युग में मनुष्य के कच्चे कंदमूल के स्थान पर अच्छा भोजन शुरू कर दिया। लोग भोजन में गेहूँ की चपातियाँ, चना, मक्का, मटर, जौ, चावल, दाले, फल व विभिन्न सब्जियों के अतिरिक्त दूध, दही एवं मक्खन का भी प्रयोग करने लगे।

(vii) वस्त्र (Clothing) :- लोगों ने ऊन, रूई, पटसन आदि को अच्छे तरीके से बनुकर। अब ऊनी एवं सूती वस्त्रों का प्रयोग शुरू कर दिया और जानवरों की खाल व पेडों की छाल से बने वस्त्रां का प्रयोग समाप्त हो गया।

(viii) कृषि का प्रारम्भ (Starting of Agriculture) :- 12 हजार वर्ष वातावरण घोर बदलाव आया। इससे कई क्षेत्रों में घास के मैदान विकसित हो गए। मनुष्य ने घास और बीजो को एकत्रित करना शुरू कर दिया। इनको सुरक्षित रखने के लिए मिट्‌टी में दबा दिया। कुछ दिनों के बाद ये अंकुरित हो गए। जब उन्होंने देखा की बीज पौधों के रूप में बढ़ रहे है। तब उनको आश्चर्य हुआ और उनकी देखभाल शुरू कर दी। कुछ दिनों के बाद पौधों पर फल लगने लगे। यही से कृषि की शुरूआत हुई। गेहूँ और जौ पहले अनाज थे जिनकी खेती सबसे पहले शुरू हुई उसके बाद अन्य फसलों कि जैसे चावल, अलसी, मक्का, चना, कपास आदि।

(ix) कला (Art) :- नवपाषाण काल में कला का विकास बहुत हुआ। चाक की सहायता से बढ़िया बर्तनों का निर्माण करना तथा उन पर सुन्दर चित्रकारी करते थे। गुफाओं की चित्रकारी भी की जाती है। शिकार का एक दृश्य पत्थर के टुकड़े पर बना हुआ मिला है इसमें दो शिकारियों को हाथ में लंबा भाला तथा तीर और धनुष लेकर हिरण का शिकार करते हुए दिखाया गया है।

(x) धार्मिक विश्वास (Reigious Belief) :- नवपाषाण काल में प्राकृतिक घटनाओं का ज्ञान नहीं था जैसे – बिजली के चमकने, वज्रपात, वर्षा, बाढ़, भूकंप, ओलावृष्टि आदि के भय के कारण वे सूर्य, चंद्रमा, वर्षा, वज्र आदि की पूजा करने लगे और उनको खुश करने के लिए त्योहार मनाने लगे।

(xi) राजनैतिक संगठन (Political Organisation) :- जब नवपाषाण युग में जब मनुष्य स्थायी निवासी बना तब गोत्र, परिवार, समाज आदि के विकास व उत्थान के लिए संगठ बनाकर अधिक आयु वाले लोगो को मुखिया चुना। इस प्रकार राजनैतिक संगठनो का तेजी से निर्माण हुआ।

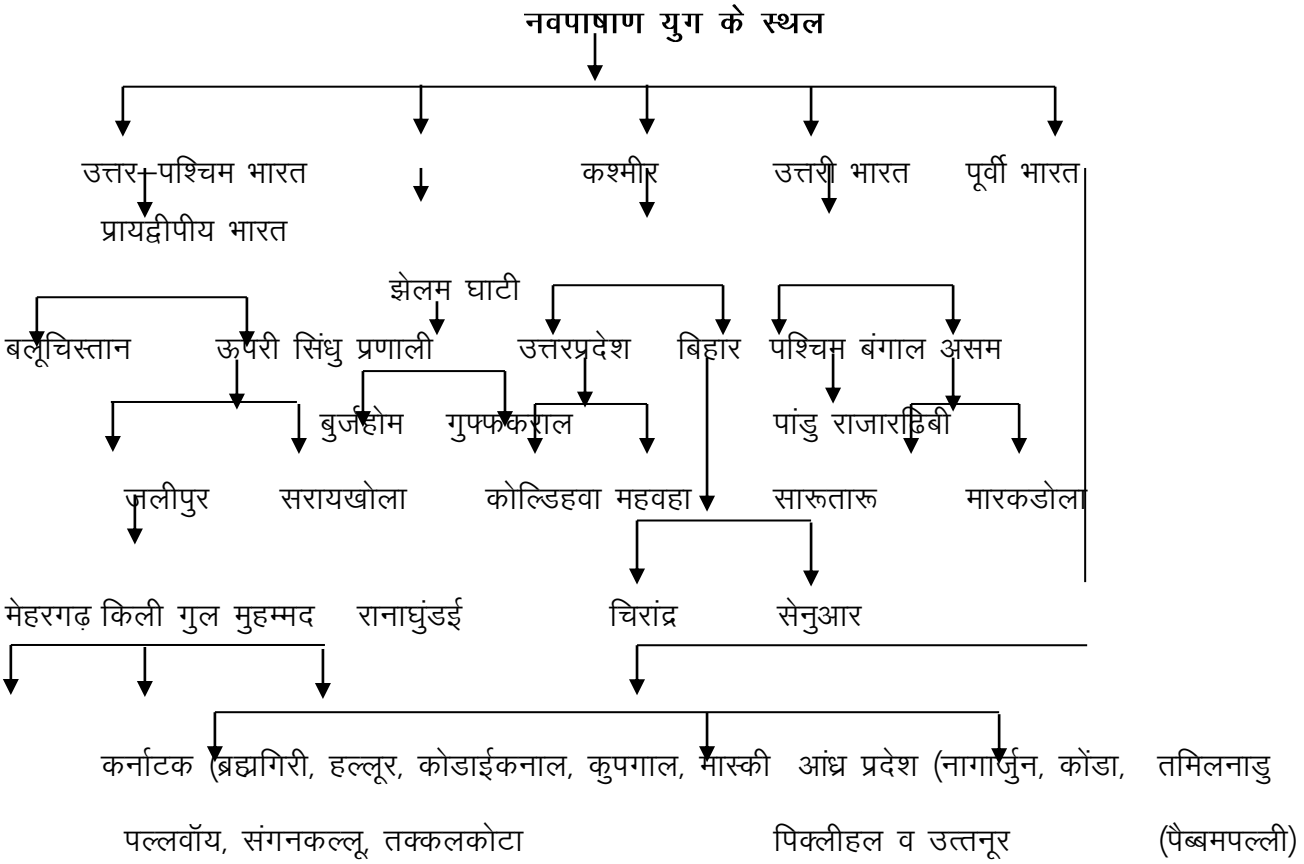

(संक्षिप्त इतिहास NCERT सार – महेश कुमार बर्णवाल P.14)

1.5 प्रगति समीक्षा (Check your Progress)

(क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :– (Filling the blanks)

(i) इतिहास के जनक या पिता ..... को कहा जाता है।

(ii) हिस्टो (Histo) का अर्थ ..... है।

(iii) वेद शब्द ..... धातु से निकला है जिसका अर्थ ..... है।

(iv) प्रथम तीन वेदों को ..... कहते हैं और चारों वेदों को ..... भी कहते है।

(v) वेदांगों की संख्या ..... है और उपवेदों की संख्या ..... है।

(vi) पुराणों की संख्या ..... है और संस्कारों की संख्या ..... है।

(vii) जैन धर्म के..... तीर्थकर हुए।

(viii) अरब लेखकों में सबसे प्रसिद्ध..... था।

(ix) युवान च्वांग हर्ष के राज्यकाल में ..... आया था और वह ..... वर्ष भारत में रहा।

(x) मोहनजोदड़ों में ..... अधिक मोहरें मिली थीं।

(ख) सत्य/असत्य कथन :– (True/False)

(i) पाषाण काल का शाब्दिक अर्थ है पत्थर। (सत्य/असत्य)

(ii) पैलिओं (Palaeo) का अर्थ है पत्थर। (सत्य/असत्य)

(iii) समस्त इतिहास को तीन भागों में बांटा गया है। (सत्य/असत्य)

(iv) पहिए की खोज मध्यम पाषाण युग में हुई थी। (सत्य/असत्य)

(v) कृषि की शुरूआत नवपाषाण युग में हुई थी। (सत्य/असत्य)

(vi) BCE → BEFORE COMMONERA । (सत्य/असत्य)

(vii) यूनानी भाषा में नियो (Neo) शब्द नवीन के अर्थ में प्रयोग होता है। (सत्य/असत्य)

(viii) खुरचनी औजार मध्यम पाषाणकाल का औजार था। (सत्य/असत्य)

(ix) पूर्व पाषाण काल में मनुष्य भोजन में फल, फूल, कच्चा मांस, कन्दमूल आदि खाते थे। (सत्य/असत्य)

(x) सिक्कों के अध्ययन को मुद्रा शास्त्र कहा जाता है। (सत्य/असत्य)

1.6 सारांश (Summary)

रेडियो कार्बन डेटिंग एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि कोई वस्तु किस काल से संबंधित है। टीला धरती की सतह के उस उभरे भाग को कहते है; जिसके नीचे पुरानी बस्तियों के अवशेष विद्यमान होते हैं। प्राचीन टीलों अथवा स्मारकों का उत्खनन कर वहाँ से प्राप्त वस्तुओं व कलाकृतियों के आधार पर क्रमिक ऐतिहासिक विश्लेषण करना, पुरातत्व विज्ञान (आर्कियोलॉजी) कहलाता है। प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोतों को जानने के लिए इसे चार भागों में बाँटा गया है– 1. धार्मिक ग्रंथ 2. ऐतिहासिक एवं सामाजिक ग्रंथ (धर्मोत्तर साहित्य) 3.विदेशियों के वृत्तान्त 4. पुरातत्व संबंधी साक्ष्य।

- ईस्वी पूर्व/ बी० सी०/ ई (BC/ BCE) → BC → BEFORE COMMON / BCE → BEFORE COMMON ERA ईस्वी/सी ई० (AD/CE) → CE – COMMON ERA
- ईस्वी पूर्व (BC) इसका अर्थ है क्राइस्ट से पहले। ईसा के जन्म से पहले की सभी तारीखों को ईस्वी पूर्व के रूप में व्यक्त किया जाता है। इनकी गणना उलटी की जाती है। जैसे 280 ई० पू० इसका अर्थ हुआ। ईसा के जन्म से 280 वर्ष पहले और बी.सी.ई. का अर्थ होता है। सर्वमान्य समय से पहले।
- ईस्वी (AD) दो लैटिन शब्दों से मिलकर बना है 'एनो' + 'डोमिनी' से बना है। जिसका अर्थ होता है प्रभु अर्थात् क्राइस्ट के समय या युग में। जेसस क्राइस्ट के जन्म के बाद की सारी तिथियों और वर्षों को ईस्वी में प्रकट किया जाता है। इनकी गणना आगे की ओर की जाती है, जैसे– 2001 को 2001 ई० भी लिखा जा सकता है। इसका मतलब हुआ कि जेसस क्राइस्ट के जन्म 2001 वर्ष बाद।
- ई० पूर्व की दो तिथियों के बीच के अंतर को जानने के लिए हम छोटी संख्या को बड़ी संख्या में से घटाते हैं। जैसे – 2000 ई० पू० और 500 ई० पू० के बीच के समय का अंतर = 2000 ई० पू० – 500 ई० पू० = 1500 वर्षों की स्थिति में भी गणना ठीक ऐसे ही की जाती है। दूसरी ओर दो ऐसी तिथियों के बीच के समय के अंतराल को जानने के लिए जिनमें से एक ईस्वी पूर्व में है और दूसरी ई० में, इन्हें जोड़ दिया जाता है। जैसे 500 ई० पू० और 1500 ई० के बीच के समय का अंतराल = 500 + 1500 वर्ष = 2000 वर्ष

  (NCERT VI कक्षा – इतिहास – हमारे अतीत–1 P.7)

- इतिहास अतीत के लोगों, स्थलों और घटनाओं का समयवद्ध रूप से संकलित दस्तावेज है।

- वेद शब्द 'विद्' धातु से निकला है जिसका अर्थ है 'ज्ञान' वेदों की संख्या चार है – ऋग्वेद, युजुर्वेद, सामवेद एवं अर्थववेद।
- उपवेदों की संख्या 4 है। वेदांगों की संख्या 6 है। वेदों का अर्थ समझने व सूक्तों के सही उच्चारण के लिए वेदांग की रचना की गई। हिन्दुओं के दो प्रसिद्ध प्राचीनतम महाकाव्य है 'रामायण' और 'महाभारत'।
- 18 पुराणो से हमें मौर्य पूर्व से लेकर गुप्तकाल तक अनेक प्रकार की महत्त्वपूर्ण जानकारियां मिलती हैं। बौद्धो के सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ त्रिपिटक– सुत्तपिटक, विनयपिटक और अभिधम्मपिटक। त्रिपिटको, महावंश तथा दीपवंश को दक्षिणी बौद्धमत का ग्रंथ माना जाता है।
- प्रसिद्ध बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तार' की रचना नेपाल में हुई। 549 जातकों में मुख्य रूप से गौतम बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाओं का वर्णन है। जैनों के धार्मिक ग्रंथों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हेमचन्द्र रचित 'परिशिष्ट पर्व' है। ऐतिहासिक महत्व के प्रथम ग्रंथ की रचना हर्ष के दरबारी बाणभट्ट ने 'हर्षचरित' के रूप में की। ऐतिहासिक ग्रंथों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण 12वीं शताब्दी मे कल्हण द्वारा रचित 'राजतरंगिणी' है। रत्नावली, प्रियदर्शिका और नागानेद नामक तीन प्रसिद्ध नाटकों की रचना हर्ष ने की।
- संगम साहित्य के प्रमुख ग्रंथ है तोलकाटिपयम, शिलप्पायिकाराम एवं मणिमेखलै।
- हेरोडोटस (Herodatus) को इतिहास का पिता कहा जाता है। इन्होंने हिस्टोरिका नामक पुस्तक की रचना की थी।
- भारत में आदिमानव पत्थर के अनगढ़ और अपरिष्कृत औजारों का प्रयोग करता था। यह काल आखेटक एवं खाद्य संग्राहक काल के रूप में जाना जाता है।
- सर्वप्रथम आगका प्रयोग पुरापाषाण काल में चीन के चाऊ–जू–कोलियन गुफा से प्राप्त होता है।
- आरंभिक पुरापाषाण कालीन औजार उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में बेलन नहीं घाटी में पाए गए है। मध्यप्रदेश के पास भीम बेटिका की गुफाओं और शैलाश्रयों (चट्टानों से बने आश्रयों) में औजार मिले है। जो लगभग एक लाख ईसा पूर्व के है।
- मध्यपाषाण (मिसोलिथिक) युग आखेटक और पशुपालक। भारत में मध्यपाषाण युग के विषय में जानकारी सर्वप्रथम सी० एल० कालइिल द्वारा सन् 1867 ई० में विंध्य क्षेत्र से लघु पाषाण उपकरण खोजे जाने से हुई।
- मध्यपाषाण युग का मुख्य लक्षण बहुत छोटा औजार माइक्रोलिथ है जो प्रायः समस्त भारत में विशेषतः उत्तरी गुजरात में पाए गये है। इस युग में लघुपाषाण उपकरणों के अतिरिक्त कुत्ते, गाय, बैल, भैंस, जगली घोड़े, बैल, बकरी, मछली, घड़ियाल तथा नीग्रो जाति के मनुष्य के अवशेष भी मिले है।

- भारत में मानव अस्थिपंजर मध्यपाषाण काल से ही प्राप्त होने लगे थे। भीलवाड़ा जिले में कोठारी नदी के तटपर स्थित बागोर भारत का सबसे बड़ा मध्यपाषाणिक स्थल है। मध्यप्रदेश में आदमगढ़ और राजस्थान में बागोर पशुपालन के प्राचीनतम साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं, जिसका समय लगभग 5,000 ईसा पूर्व हो सकता है।
- पाषाणकालीन सभ्यता तथा संस्कृति का अन्वेषण सर्वप्रथम 1862 ई० में ब्रसफूट ने किया। पुरापाषाण काल में मानव केवल पत्थरों के औजारों का ही प्रयोग करता था। पुरापाषण काल में मानव केवल पत्थरों के औजारों का ही प्रयोग करता था। पुरापाषाण काल में शवाधान की दो पद्धतिया प्रचलित थी। शवों को गाड़ा जाता था और शवों को खुले मैदान में छोड़ दिया जाता था।
- मध्यपाषाणकाल में पशुओं के मास के अतिरिक्त मछलियां भी आहार बन गई। मध्यपाषाण काल में मानव–अस्थियों के साथ–2 कुत्ते के भी अस्थि–पंजर प्राप्त हुए है।
- यूनानी भाषा का नियो (Neo) शब्द नवीन के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसलिए इस काल को नवपाषाण काल कहा जाता है। भारत में नवपाषाण से संबंद्धित पुरातात्विक खोज प्रारंभ करने का श्रेय डॉ प्राइमरोज को जाता है, जिन्होंने 1842 ई० में कर्नाटक के लिंगसुगुर नामक स्थल से उपकरण खोजे थे।
- सर्वप्रथम 1860 ई० में लॉ मसूरिये ने इस काल के प्रथम प्रस्तर उपकरण उत्तरप्रदेश की टोंस नदी घाटी में प्राप्त किए। नवपाषाण काल की एक ऐसी बस्ती मिली है, जिसका समय लगभग 7000 ई० पू० बताया जाता है। नवपाषाण युगीन प्राचीनतम बस्ती पाकिस्तान में स्थित बलूचिस्तान प्रांत के मेहरगढ़ में है। मेहरगढ़ में कृषि के प्राचीनतम साक्ष्य मिले है।
- इलाहाबाद में स्थित कोल्डिहवा एकमात्र ऐसा नवपाषाणिक पुरास्थल है, जहाँ से चावल या धान के प्राचीनतम साक्ष्य प्राप्त हुए है। नवपाषाण युग के निवासी सबसे पुराने कृषक समुदाय थे। ये लोग स्थायी घर बनाकर रहते थे। मिट्टी के बर्तन सर्वप्रथम इसी काल में बने।
- इस काल में स्थायीघर, मिट्टी के बर्तन, कृषि व पहिये के आविष्कार। इस युग के लोग पत्थर के पॉलिशदार औजारों और हथियारों का प्रयोग करते थे, वे विशेष रूप से पत्थर की कुल्हाड़ियों का इस्तेमाल करते थे।

  (संक्षिप्त इतिहास NCERT – रमेश कुमार बर्णवाल P-14)

1.7 संकेत शब्द (Key-words)

- इतिहासिक → इतिहास का विशेषज्ञ
- अभिलेख → किसी स्मारक या किसी पुस्तक में लिखी बाते।
- हस्तलेख → हस्तलिखित पुस्तकया दस्तावेज

- पाषाण → पत्थर
- वृत्तांत → विवरण, वर्णन
- शस्त्र → हाथ में पकड़ चलाए जाने वाला हथियार
- अस्त्र → हवा में फेंक कर चलाया जाने वाला हथियार

1.8 स्वयं मूल्यांकन के लिए परीक्षा (Self-AssessmentTest)

भाग (क) बहुवैकल्पिक प्रश्न (Objective Types Questions)

(इनके उत्तरदायी और कोष्ठक में देखिए)

(i) वेदांग की संख्या है।

(a) चार (b) पाँच (c) छः (d) सात उत्तर– C

(ii) इतिहास के जनक ने कौन सी पुस्तक लिखी ?

(a) अष्टाध्यायी (b) हिस्टोरिका (c) पृथ्वीराज रासो (d) नीतिसार उत्तर– B

(iii) आग की खोज हुई ?

(a) पुरापाषाण काल में (b) मध्यपाषाणकल में

(c) नवपाषाण काल में (d) ताम्रपाषाणकाल में उत्तर– A

(iv) पुरापाषाण काल को किस अन्य नाम से जानते है ?

(a) खाद्य–उत्पादक (b) आखेटक और पशुपालक

(c) आखेटक एवं खाद्य संग्राहक (d) उपर्युक्त सभी उत्तर– C

(v) अष्टाध्यायी किसने लिखी ?

(vi) भारत के किस स्थल से नवपाषाणकाल की संस्कृति के प्राचीनतम साक्ष्य प्राप्त हुए है?

(a) चिरांद (b) बुर्जहोम (c) महदहा (d) मेहरगढ उत्तर– D

(vii) नवीन पत्थर युग

(a) 10,000 वर्ष से 4,000 ई० पू० (b) 12,000–10,000 ई० पू०

(c) 20,00,000 – 12,000 ई० पू० (d) उपर्युक्त में से कोई नहीं उत्तर– A

(viii) बौद्ध संघ के नियमों का उल्लेख कौन से ग्रंथ में मिलता है।

(a) सुत्तपिटक (b) विनयपिटक (c) अभिधम्मपिटक (d) उपर्युक्त सभी उत्तर– B

(ix) महाभारत मूल रूप से किस भाषा में लिखी गई है?

(x) रामायण में मूल रूप से कितने श्लोक थे ?

(a) 24000 (b) 12000 (c) 8800 (d) 600 उत्तर– D

(xi) अष्ठाध्यायी की रचना किसने की ?

(a) कल्हण ने (b) पाणिनी ने (c) महर्षि वाल्मीकि ने (d) कौटिल्य ने उत्तर– B

(xii) कृषि और पहिये का आविष्कार किस काल में हुआ था ?

(a) वैदिककाल में (b) पुरापाषाण काल में

(c) मध्यपाषाणकाल में (d) नवपाषाणकाल में उत्तर– D

(xiii) इतिहास का पिता कौन है ?

भाग–ख निबंधात्मक प्रश्न (Long Questions)

प्र.1 इतिहास क्या है ? प्राचीन भारतीय इतिहास के स्त्रोतों का वर्णन कीजिए।

(What is History? Describe the Sources of Ancient Indian History).

प्र.2 प्रागैतिहासिक काल के बारे में आप क्या जानते है ? पुरापाषाण कालीन संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(What do you know about pre historic Age? Describe the main features of Palaeolithic Culture).

प्र.3 मध्यपाषाण काल से आप क्या समझते है ? मध्यपाषाण कालीन संस्कृति की व्याख्या कीजिए।

(What do you understand by Mesolithic Age? Explain the Characteristics of Mesolithic Culture).

प्र.4 नवपाषाण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

(Explain the concept of Neolithic)

प्र.5 नवपाषाण काल के बारे में आप क्या जानते है ? नवपाषाण काल की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(What do you know by Neolithic Age? Describe the characteristics of Nelithic Age.)

प्र.6 'नवपाषाण क्रांति' शब्द की व्याख्या कीजिए। नियोलिथिक समाज पुरापाषाण से अधिक जटिल कैसे था ?

(Explain the term'Neolithic Revolution'. How was the Neolithic Society more complex than the Paleolithic?

प्र.7 मध्यपाषाणकाल मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(Describe the main characteristics of the Mesolithic Age)

प्र.8 नवपाषाण काल की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजि।

(Give an account of main features of Neolithic Period.)

प्र.9 'आखेट–संग्राहक' से क्या अभिप्राय है? भारत में इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(What is meant by the term 'Hunter-gatherer'? Explain the main features of Hunter-gatherer life in India?)

(ग) लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

(i) कृषि प्रणाली की उत्पति। (Origin of the Agriculture System)

(ii) इतिहास का क्षेत्र। (Scope of History)

(iii) जैन साहित्य ।(Jainism Literature)

(iv) अभिलेख। (Inscriptions)

(v) चित्रकला (Painting)

(vi) इतिहास का अर्थ (Meaning of History)

(vii) बौद्ध साहित्य (Boudh Literature)

(viii) पुरापाषाण काल (Palaeolithic Age)

(ix) वेद के प्रकार (Types of Ved)

(x) प्रागैतिहासिककाल (Pre-Historic Age)

(xi) सिक्के (Coins)

(xii) स्मारक (Buildings)

(xiii)सामवेद (Samved)

(xiv) पाषाण काल (Stone Age)

(xv) आद्यऐतिहासिक काल (Proto-Historic Age)

(xvi) पुराण (Puran)

(xvii) उपनिषद (Upnishad)

(xviii) वेदांग (Vedanj)

(xix) मुहरे (Seals)

1.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to Check your Progress)

(क)

(i) हेरोदोश

(ii) जानना

(iii) विद्, ज्ञान

(iv) चरक संहिता, चार

(v) छह, चार

(vi) अठारह, सोलह

(vii) चौबीस

(viii) एलबरोनी एवं इबनबतवा

(ix) भारत, सोलह वर्क

(x) पांच सौ

(भाग –ख)

(i) सत्य

(ii) सत्य

(iii) सत्य

(iv) सत्य

(v) असत्य

(vi) असत्य

(vii) सत्य

(viii) सत्य

(ix) सत्य

(x) सत्य

1.10 संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें (References and Suggested Readings)

- महे"ा कुमार बर्णवाल – संक्षिप्त इतिहास NCERT सार, कोसमोस पब्लिकेशन मुखर्जीनगर, दिल्ली जनवरी 2019।
- द्विजेन्द्र नारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली – प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यानन्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नवम्बर 2018
- डी०एन० झा प्राचीन भारत का इतिहास विविध आयाम, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय अक्तूबर 2016 पुनर्मुद्रण।
- Proof – Manjeet Singh Sodhi Themes in Indian History. Modern Publishers Jalandhar, 2009
- स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन – सामान्य अध्ययन, राजीव अहीर, नई दिल्ली
- यूनिक सामान्य अध्ययन – डा. विनय कुमार सिंह, यूनिक पब्लिकेशन्ज, नई दिल्ली
- रामशरण शर्मा– भारत का प्राचीन इतिहास, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली द्वारा चौथा हिंदी संस्करण भारत में प्रकाशित।

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE : B.A. 106	**AUTHOR : MR. MOHAN SINGH BALODA**
LESSON NO : 2	**VETTER:**
हडप्पा सभ्यता (THE HARAPPAN CIVILIZATION)	

अध्याय–संरचना

2.1 अधिगम उद्दे"य (Learning Objectives)

2.2 परिचय (Introduction)

2.3 **अध्याय के मुख्य बिन्दु** (Main Body of Text)

2.3.1 हडप्पा सभ्यता की उत्त्पति का उद्गम (Origins of Harappan Civilization)

2.3.2 हडप्पा सभ्यता का विस्तार (प्रसार) या मुख्य केन्द्र (Extent of Harappan Civilization or Main Centres)

2.3.3 हडप्पा सभ्यता की नगर योजना (Town Planning of Harappan Civilization)

2.4 **अध्याय का आगे का मुख्य भाग** (Further main body of the text)

2.4.1 आर्थिक संगठन (Economy Organization)

2.4.2 छात्र क्रिया–कलाप (Student Activity)

2.4.3 सामाजिक संगठन (Society Organization)

2.4.4 धार्मिक जीवन (Religious Life)

2.4.5 हडप्पा सभ्यता की कला (Arts of Harappan Civilization)

2.4.6 राजनैतिक संगठन (Political Organization)

2.4.7 हडप्पा लिपि (Harappan Script)

2.4.8 हड़प्पा सभ्यता का पतन (Decline of the Harappan Civilization)

2.5 प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

2.6 सारांश (Summary)

2.7 **संकेत शब्द** (Key Words)

2.8 स्वंय मूल्यांकन के लिए परीक्षा (Self-Assessment Test) (SAT)

2.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answer to Check Your Progress)

2.10 सहायक संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तके/सहायक अध्ययन सामग्री (References/Suggested Readings)

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

जब आप इस अध्याय को समझ पाएँगे तो आप निम्न योग्य हो जाएँगे–

- हड़प्पा की सभ्यता से पाठकों को अवगत कराना।
- वर्तमान में हड़प्पा सभ्यता के महत्त्व से शिक्षार्थियों को परिचित करवाना।
- इतिहास के प्रति छात्रों में रूचि विकसित करना।
- हड़प्पा–सभ्यता–संस्कृति की प्रमुख कला विविधताओं से अधिगमकर्त्ताओं को रूबरू करवाना।
- सिंधु घाटी के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक संगठन पर विद्यार्थियों के बीच परिचर्चा करवाना।
- वर्तमान समय में इसकी क्या प्रासंगिकता है इसकी जानकारी शिक्षार्थियों को देना।
- हड़प्पा सभ्यता के विस्तार पर जिज्ञासुओं के बीच चर्चा करना।
- हमारा अतीत किस प्रकार शिक्षार्थियों को प्रभावित करता है।
- सैंधव सभ्यता के पतन में कौन–कौन से कारक उत्तरदायी रहे इससे छात्रों को परिचित कराना।

2.2 परिचय (Introduction)

हड़प्पा सभ्यता भारत की बहुत प्राचीन सभ्यताओं में गिनी जाती है। इसका उद्गम ताम्रपाषाणिक पृष्ठभूमि में भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमोत्तर भाग से हुआ। इसको सैंधव सभ्यता या सिंधु घाटी सभ्यता, कांस्य युगीन सभ्यता के नाम से भी जाना जाता है। यह भारत की प्रथम नागरीय सभ्यता थी जो हमारे निष्कर्ष का विषय है। सिंधु घाटी सभ्यता की खोज ने भारत के इतिहास में नवीन इतिहास जोड़ने का काम किया। हड़प्पा सभ्यता कांस्ययुगीन एवं संस्कृति ताम्रपाषाणिक (प्राक् हड़प्पन) है। पाकिस्तान इलाके वाले पंजाब के हड़प्पा में काँस्य युग की शहरी संस्कृति एक अग्रणीय खोज थी। सन् 1853 ई० में एक महान उत्खननकर्ता और खोजी ब्रिटिश इंजीनियर ए० कनिंघम का ध्यान एक हड़प्पा मुहर पर गई। हालाँकि मुहर पर एक बैल और छह अक्षर अंकित थे लेकिन वह इसके महत्व से अनभिज्ञ रहा। हड़प्पा स्थलों की क्षमता की पहचान बहुत बाद में सन् 1921 में की गई, जब भारतीय पुरातत्वविद् दया राम सहानी ने इसकी खुदाई शुरू की उसी समय एक इतिहास आर० डी० बनर्जी ने सिंध में मोहनजोदड़ो स्थल की खुदाई की। दोनों ने मिलकर एक विकसित सभ्यता का सूचक माने जाने वाले मिट्टी के बर्तनों और अन्य प्राचीन वस्तुओं की खोज को सम्भव बनाया। (भारत का प्राचीन इतिहास– रामशरण शर्मा P -72)

यह सभ्यता पहली बार सन् 1921 में पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त में स्थित आधुनिक स्थल हड़प्पा में खोजी गई थी। भारत में हड़प्पा के स्थल संघोल, कालीबंगन, मिताथल, आलमगीर पुर और लोथल है। हड़प्पा के नगर काफी काफी सुन्दर व उच्ची कोटि के थे। हड़प्पा सभ्यता के लोगों का जीवन काफी समृद्ध था। हड़प्पा के लोग देवी–देवताओं की बहुत पूजा करते थे। वे सूर्य, शिव, वृक्षों, पशु–पक्षियों की पूजा करते थे। सिंधु नदी के किनारे अवस्थित होने के कारण इसे 'हड़प्पा सभ्यता' और सिंधुघाटी सभ्यता अर्थात् 'सैंधव सभ्यता' का नाम दिया गया। पूरे उपमहाद्वीप में अभी तक लगभग 2800 हड़प्पा स्थलों की पहचान की गई है। अब हमारे पास हड़प्पा पर्याप्त समृद्ध सामग्री है। अभी भी उत्खनन और खोज अभी भी प्रगति पर विद्ववानों की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि इस सिंधु सभ्यता व कांस्य युगीन सभ्यता की बजाय इसे हड़प्पा सभ्यता कहा जाए। इस अध्याय में इस पर आगे चलकर विस्तृत परिचर्चा करेंगे।

2.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

2.3.1 हड़प्पा सभ्यता (सिंधु घाटी) की उत्पति या उद्गम (Origins of Harappan Civiliztion)

ई.पू. 4000 के आस–पास पाकिस्तान में चोलिस्तानी रेगिस्तान के हकरा क्षेत्र में कई पूर्व– हड़प्प कृषि बस्तियों का विकास हुआ। हालाँकि, ई. पू. 7000 के आस–पास कृषि बस्तियाँ पहले बलूचिस्तान के पूर्वी किनारे पर सिन्धु मैदानों की सीमा पर नवपाषाण–युग में चीनी मिट्टी के दौर से पहले बसी। तब से लोग बकरियाँ, भेड़ और अन्य पशु पालते थे। उन्होंने जौ और गेहूँ का भी उत्पादन किया। तब भण्डारण की स्थापना हुई। ई.पू. पाँचवीं और

चौथी सहस्राब्दि में मिट्टी की ईंटों का उपयोग शुरू हो गया था। चित्रित मिट्टी के बर्तन और महिला मूर्तियाँ भी बनने लगीं। बलूचिस्तान के उत्तरी भाग में शुरूआती शहर के रूप में सुनियोजित सड़क और व्यवस्थित घर। यह स्थल पश्चिम में हड़प्पा के लगभग समानान्तर स्थित था। यह स्पष्ट है कि बलूचिस्तान की बस्तियों से ही शुरूआती हड़प्पा और विकसित हड़प्पा संस्कृतियाँ विकसित हुईं।

कभी–कभी हड़प्पा सभ्यता की उत्पति का श्रेय मुख्य रूप से प्राकृतिक पर्यावरण को दिया जाता है। ई.पू. 3000–2000 में भारी बारिश और सिन्धु एवं इसकी सहायक नदी सरस्वती में सघन जल का प्रवाह इसके प्रमाण है। कभी–कभी सिन्धु संस्कृति को सरस्वती संस्कृति कहा जाता है, लेकिन हड़प्पन नदी हकरा में पानी के प्रवाह का आना यमुना और सतलुज के बदौलत था। हिमालय में विवर्तनिक (टेक्टोनिक) विकास के कारण ये दोनों नदियाँ कुछ सदियों बाद सरस्वती में शामिल हुईं। इसलिए हड़प्पा संस्कृति को मदद करने का श्रेय वास्तव में सिन्धु के साथ इन दोनों नदियों को मिलना चाहिए, अकेले सरस्वती को नहीं। इसके अलावा, सिन्धु क्षेत्र में भारी बारिश के सबूतों को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। (भारत का प्राचीन इतिहास– रामशरण शर्मा, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस– नई दिल्ली : 2019 P -87)

2.3.2 हड़प्पा सभ्यता का विस्तार (प्रसार) या मुख्य केन्द्र (Extent of Harappan Civilization or Main Centres)

हड़प्पा सभ्यता एक विस्तृत क्षेत्र में फैली हुई थी। पाकिस्तान और भारत में अब तक लगभग 1000 केंद्रों की खोज की जा चुकी है। इन केन्द्रों में से प्रमुख केंद्रों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार से है –

1. हड़प्पा (Harappa) – हड़प्पा का उपनाम तोरण द्वार का नगर है। हड़प्पा, पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) में रावी नदी के किनारे पर स्थित है। यह लाहौर से लगभग 160 किलोमीटर दूर है। यह हड़प्पा सभ्यता का खोजा गया प्रथम स्थल अथवा नगर थ। इसकी खोज 1921 ई० में आर० बी० दया राम साहनी ने की थी। यह हड़प्पा सभ्यता से मिलने वाले नगरों में सबसे विशाल था। इसके मकान पक्के, सड़कें और गलियाँ चौड़ी थीं। रात्रि के समय प्रकाश की बढ़िया व्यवस्था थी। इस नगर से हमें बहुत–से गोदाम घर, मूर्तियाँ, बर्तन और मुहरें प्राप्त हुई हैं जो इस सभ्यता पर भरपूर प्रकाश डालती हैं। इस नगर की शत्रुओं से सुरक्षा के लिए इसके चारों ओर एक विशाल दीवार बनाई गई थी।

2. मोहनजोदड़ो (Mohanjodaro) – मोहनजोदड़ो के उपनाम मुओं का भाटा (मृतकों का टीना), स्तूपों का शहर, रेगिस्तान का बगीचा या सिंध का बाग। मोहनजोदड़ो सिंधुनदी के तट पर स्थित है। मोहनजोदड़ों, हड़प्पा सभ्यता का दूसरा महत्त्वपूर्ण नगर है। यह सिंध (पाकिस्तान) के लरकाना ज़िला में स्थित है। मोहनजोदड़ो का

शाब्दिक अर्थ हैं, 'मृतकों का टीला'। इस की खोज 1922 ई० में राखाल दास बनर्जी ने की थी। यह 125 हेक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ था। यह नगर सिंधु नदी के किनारे पर स्थित था। यह हड़प्पा से 483 किलोमीटर दूर था। इस नगर की रचना भी हड़प्पा की तरह थी। इस नगर की सात परतें मिली हैं। इससे यह अनुमान लगाया जाता है कि यह नगर सात बार बसा और उजड़ा। यह नगर यहाँ से हड़प्पा सभ्यता के सबसे विशाल स्नानागार, गोदाम घर, काँसे की नर्तकी की मूर्ति और बहुसंख्या में प्राप्त मुहरों के कारण। यह एक बड़ा व्यापारिक केंद्र भी था।

3. चन्हुदड़ो (Chanhudaro) – यह नगर भी सिंध प्राँत में मोहनजोदड़ो से कोई 160 किलोमीटर दूर सिंधु नदी के तट पर स्थित है। इसकी खोज 1931 ई० में एन० जी० मजूमदार ने की थी। यह 7 हेक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ था। इस नगर की दो परतें मिली हैं जिससे यह ज्ञात होता है कि यह दो बार बसा और नष्ट हुआ। यह नगर मनके बनाने के लिए सुविख्यात था। इस नगर में हमें शंख की कटाई (shell cutting), धातुकर्म (metal working), मुहर निर्माण (seal making) तथा बाट बनाने (weight making) के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।

4. कोटला निहंग खाँ (Kotla Nihang Khan) – यह केंद्र पूर्वी पंजाब (भारत) के रोपड़ जिला में स्थित है। इसकी खोज 1953 ई० में वाई० डी० शर्मा ने की थी। यह सतलुज नदी के तट पर स्थित था। इस नगर से प्राप्त हुए बर्तन, आभूषण और उपकरण हड़प्पा नगर से मिलते–जुलते हैं।

5. कालीबंगन (Kalibangan) – यह केंद्र राजस्थान प्राँत के ज़िला गंगानगर में घग्घर नदी के तट पर स्थित है। इस नगर का नाम यहाँ पर बनने वाली चूड़ियों के कारण पड़ा। इस नगर की खोज 1953 ई० में ए० घोष ने की थी। 1960 ई० में बी० के० थापर और बी० बी० लाल ने यहाँ पर व्यापक उत्खनन किया। इस नगर की निर्माण योजना हड़प्पा नगर की निर्माण योजना जैसी ही है। यहाँ से हमें हड़प्पा संस्कृति के बहुत–से बर्तन, आभूषण और खिलौने मिले है। वर्तमान में यह नगर हनुमानगढ़ जिला में है।

6. लोथल (Lothal) – यह नगर गुजरात प्राँत के ज़िला अहमदाबाद में भोगवा नदी के किनारे पर स्थित है। इस नगर की खोज 1955 ई० में एस० आर० राव ने की थी। इस बंदरगाह से पश्चिमी एशिया के देशों से बहुत व्यापार चलता था। इसके अतिरिक्त यहाँ पर एक मनके बनाने का उद्योग भी मिला है। यहाँ से प्राप्त खंडहरों से हमें हड़प्पा संस्कृति के स्नानागार, सड़कों और नालियों के विषय में ज्ञान प्राप्त हुआ है। अन्य नगरों की भाँति लोथल के दुर्ग को दीवार से घेरा नहीं गया था। इसे कुछ ऊँचाई पर अवश्य बनाया गया था। लोथल से ताँबे की मूर्ति मिली है। ये बतख, खरगोश, कुत्ता एवं वृषभ की है।

7. आलमगीरपुर (Alamgirpur) – यह नगर उत्तर प्रदेश के ज़िला मेरठ में हिंडन नदी के तट पर स्थित है। इस नगर की खोज 1958 ई० में वाई० डी० शर्मा ने की थी। यहाँ से हमें हड़प्प संस्कृति के आभूषण, मूर्तियाँ और बर्तन प्राप्त हुए हैं।

8. गंगा–यमुना दोआब (Ganga Yamuna Doab) – यहाँ के स्थल मेरठ ज़िले के आलमगीरपुर तक फैले हुए है। एक अन्य स्थल सहारनपुर जिले में स्थित दुलास है। यहाँ से संस्कृति के विभिन्न चरणों का पता चलता है।

9. धौलावीरा (Dholavira) – इस नगर की खोज 1967–68 ई० में जे० पी० जोशी ने की थी। यह वर्तमान में गुजरात में स्थित है। इस नगर का व्यापक पैमाने पर उत्खनन आर० एस० बिष्ट ने 1990–91 में किया। यह नगर अपनी भवन निर्माण कला, जल निकासी व्यवस्था एवं मनके बनाने के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ बड़ी मात्रा में जलाशयों के साक्ष्य प्राप्त हुए है। इनका प्रयोग खती के लिए किया जाता है।

10. संघोष (Sanghol) – इस नगर की खुदाई 1968 ई० में एस० एस० तलवार तथा आर० एस० बिष्ट ने की थी। वर्तमान यह नगर पंजाब राज्य के लुधियाना जिला में स्थित है। यहां से बर्तन और मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इस नगर के बाहर एक बहुत बड़ी खाई थी जो सदैव जल से भरी रहती थी। ऐसा शत्रुओं से सुरक्षा के लिए किया जाता था।

हड़प्पा सभ्यता का विस्तार (Extent of Harappan Civilization)

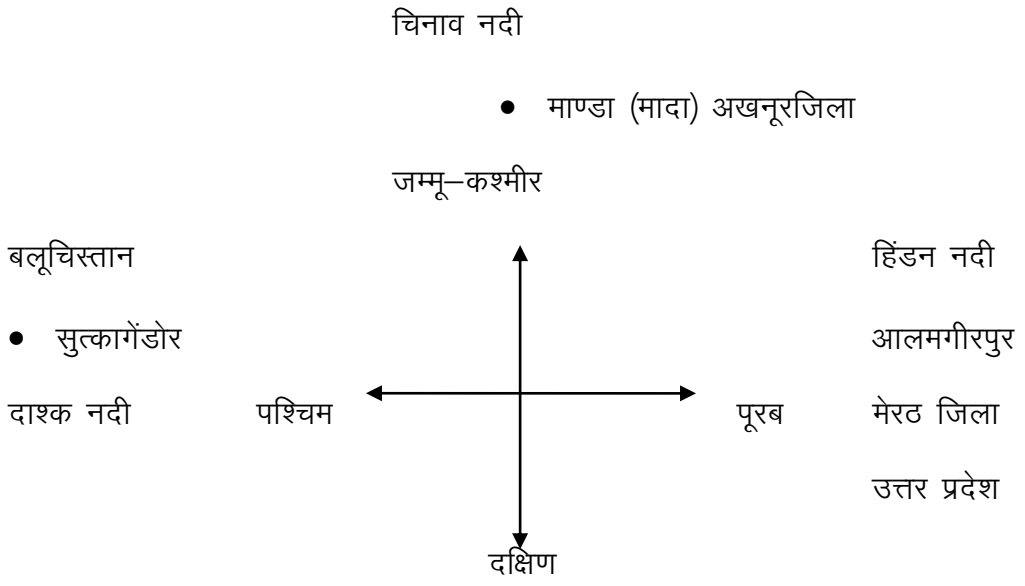

12. अमरी (Amri) – अमरी भी सिंधु–पूर्व सभ्यता का एक हिस्सा है। इस स्थल पर सिंधु–पूर्व सभ्यता स्तर की किलेबंदी नहीं है। अमरी की एक विलक्षण विशेषता यह है कि यहां पुरानी, सिंधु–पूर्व संकृति और परवर्ती सिंधु सभ्यता के बीच का संक्रमण काल परिलक्षित होता है। यहां मृदभाणु (Pottery) शैलियों के दर्शन होते है।

13. अलीमुराद (Alimurad) – यह वर्तमान में पाकिस्तान के सिंध प्रांन्त में स्थित है। कुआं, मृदभाण्ड, पाषाणों से निर्मित एक विशाल दुर्ग का अवशेष प्राप्त हुआ है। बैल की एक छोटी सी मूर्ति कच्ची मिट्टी की, कांस्य–निर्मित कुल्हाड़ी।

14. भगवानपुरा (Bhagwanpura) – हरियाणा के कुरूक्षेत्र जिले में सरस्वती नदी के किनारे पर स्थित इस स्थल से सैन्धव सभ्यता के पतनोन्मुख काल के अवशेष प्राप्त हुए है। इस स्थल का उत्खनन जे० पी० के नेतृत्व में करवाया गया था। यहाँ सफेद, काले तथा आसमानी रंग की कांच की चूड़ियां, ताँबे की चूड़ियां, कांच की मिट्टी के चित्रित मनके आदि है। इसका उत्खनन जे० पी० जोशी के नेतृत्व में किया गया।

15. दैमाबाद (Thaimabad) – यह स्थल प्रवरा नदी के किनारे (तट) पर अहमदनगर जिले में महाराष्ट्र में है। इस नगर की खुदाई से सिंधु घाटी के कुछ साक्ष्य मिले है। जैसे– मृदमांड (Pottery) लिपि की एक मुहर (Script Seal) प्याले, तश्तरी आदि। यह स्थल हड़प्पा के दक्षिण में स्थित है।

16. बनवाली (Banawali) – यह हरियाणा प्रांत के हिसार जिले में सरस्वती के तट पर स्थित है। इसकी खोज 1973 ई० में आर० एस० बिष्ट ने की थी। यह नगर भी मोहनजोदड़ो नगर की तरह सुनियोजित ढंग से बनाया गया था। इस नगर से प्राप्त मुहरें, उपकरण, आभूषण, मूर्तियाँ हड़प्पा संस्कृति से मिलती जुलती है।

17. राखीगढ़ी (Rakhigarhi) – राखीगढ़ी हरियाणा के हिसार जिले में घग्घर नदी के तट पर स्थित है। इसकी खोज 1969 में सूरज भान ने की यहां से ताम्र उपकरण, हड़प्पा लिपि युक्त मुद्रा प्राप्त हुई।

18. रोपड़ (Ropar) – रोपड़ पंजाब के रूप नगर ज़िल में सतलुत नदी के किनारे पर है। इसकी खोज यज्ञदत शर्मा ने 1955 ई० में की थी। यहाँ से ताँबे की कुल्हाड़ी, मानव के साथ कुत्ते दफनाने का साक्ष्य भी मिला है।

19. कोटदीजी (Kotdiji) – इसकी खाज घुर्ये एवं फजल अहमद खान ने 1935 ई०, 1955 ई० में की यह स्थल वर्तमान में सिंध (पाकिस्तान) में सिंधु नदी के किनारे पर स्थित है। यहां से कच्ची ईंटों के मकान व चूल्हे के साक्ष्य प्राप्त हुए है।

20. रंगपुर (Rangpur) – रंगपुर का उत्खनन का कार्य एस० आर राव ने 1954 ई० में किया यहां से ज्वार–बाजरा, तीन संकृतियों के अवशेष, नालियाँ, कच्ची ईट के दुर्ग, धान की मूसी के साक्ष्य मिले है। यह वर्तमान में गुजरात प्रान्त के अहमदाबाद जिले में भादर नदी के तट पर स्थित है।

21. सुरकोटदा (Surkotada) – यह नगर सरस्वती नदी के तट पर गुजरात के कच्छ जिले में स्थित है। इसकी खोज जगपति जोशी ने 1964 ई० में की थी। यहाँ से कलश शवाद्यान, घोड़े की हड्डी, तराजू का पलडा प्राप्त हुआ।

22. मापडा या मांदा (Manda) – यह चेनाब नदी के तटपर जम्मू कश्मीर राज्य के जम्मू क्षेत्र में स्थित है। इसकी खोज जगपति, जोशी न 1982 ई० में की। यहाँ से चर्ट, ब्लेड, हड्डी बाणाग्र, मुहरों के साक्ष्य प्राप्त हुए है। यह चेनाब नदी के दक्षिण किनारे पर स्थित है।

23. कुन्तासी (Kuntasi) – यह स्थल गुजरात के राजकोट जिले में स्थित है। इस स्थल का उत्खनन एम० के धावलिकर, एम० आर० रावल और वाई० एम० चीतलवाल के नेतृत्व में किया गया। यहाँ अवशेषो से अनुमान लगाया जाता है कि यहां बंदरगाह, व्यापार केंद्र, निगरानी स्तंभ थे। यहां पर लम्बी सुराहियां, दोहत्थे कटोरे, मिट्टी के खिलौने, गाड़ी, कांचली मिट्टी तथा सेलखड़ी के मनके, दो अंगूठियों आदि के साक्ष्य मिले है।

24. रोजदी (Rozadi) – यह स्थल गुजरात के सौराष्ट्र जिला में इस स्थल की खुदाई से लाल काले और चमकदार मृदमांडो के अवशेष मिले है। बस्ती के चारों ओर बड़े–2 पत्थरों की सुरक्षा दीवार मिली है। हाथी के भी अवशेष मिले है।

25. अल्लाहदीनों (Allahadinona) – यह स्थल सिन्धु तथा अरब सागर के संगम स्थल से 16 किलोमीटर, उत्तर–पूर्व तथा पाकिस्तान के कराची से 40 कि0मी0 पूर्व में स्थित है। 1982 में फेयर सर्विस ने इस टीले की खोज की। यहाँ नींव और नालियाँ पत्थरों से बनी हुई है। मिट्टी से बनी एक खिलौना–गाडी का भी साक्ष्य प्राप्त हुआ है। यह संभवतः एक बन्दरगाह नगर था। (स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन, गुहाटी (असम) – भारतीय इतिहास – P.P. 23-24)

26. मिताथल (Mithal) – हरियाणा राज्य के भिवानी जिले में स्थित इस स्थल की खोज 1968 ई० में सूरजभान ने की। यहाँ से ताँबे की कुल्हाड़ी मिली है।

2.3.3 हड़प्पा सभ्यता की नगर योजना (Town Planning of Harappan Civilization):-

हड़प्पा सभ्यता निश्चित रूप से एक उच्चकोटि की नगरीय सभ्यता थी। यह विशेष योजनानुसार तथा बड़े वैज्ञानिक ढंग से बसाया गया था। सभ्यता की नगर योजना की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं –

1. भवन (Houses) – हड़प्पा सभ्यता के लोग भवन–निर्माण कला में बहुत कुशल थे। उनके मकान पक्की ईंटों से बने होते थे। बाढ़ के ख़तरे से बचने के लिए वे अपने घरों की नींव काफी गहरी रखते थे। उनके घर खुले तथा हवादार होते थे। उनके घरों में बड़े–बड़े द्वार, खिड़कियाँ तथा रोशनदान होते थे। इस तरह लोगों को अनियोजित घर निर्मित नहीं करने दिए जाते थे। कई मकान दो तथा इससे भी अधिक मंज़िलों के होते थे। इनके ऊपर जाने के लिए सीढ़ी प्रयोग की जाती थी। प्रत्येक मकान में खुला प्रांगन, रसोई घर, कुआँ तथा स्नानागार होता था।

2. विशाल स्नानागार (The Great Bath) – हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से मिलने वाला सबसे प्रसिद्ध नगर मोहनजोदड़ो में स्थित विशाल स्नानागार था। यह स्नानागार 180 फुट लंबा और 108 फुट चौड़ा था। इसके मध्य 39 फुट लंबा, 23 फुट चौड़ा तथा 8 फुट गहरा तालाब बना हुआ था। इस तालाब के निकट एक कुआँ था, जिससे इस तालाब में पानी भर लिया जाता था। तालाब में उतरने तथा चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। इस स्नानागार के आस–पास कई कमरे बने हुए थे। समझा जाता है कि लोग यहाँ धार्मिक आयोजनों पर स्नान करने आते थे। डॉ० आर० के० मुकर्जी के अनुसार, "ऐसे स्नानागार के निर्माण से उस समय की इंजीनियरी की प्रगति का ज्ञान होता है।"

("The construction of such a swimming bath reflects great credit on the engineering of those days." Dr.R.K. Mookerjee, Hindu Civilization (Delhi : 1962) p. 51)

3. अन्य भवन (Other Buildings) – हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से हमें कुछ अन्य विशाल भवन भी मिले है कि इन भवनों का प्रयोग महलों अथवा सरकारी कार्यालयों के रूप में किया जाता था। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा तथा लोथल आदि नगरों में हमें बड़े–बड़े गोदाम भी मिले हैं। इन गोदामों में अन्न को सुरक्षित रखा जाता था। यात्रियों की सुविधा के लिए उस समय विश्राम–गृह भी बनाए जाते थे।

4. नालियों की व्यवस्था (Drainage System) – हमें यह जानकर बहुत आश्चर्य होता है कि हड़प्पा सभ्यता के लोगों ने गंदे पानी के निकास के लिए नालियों को बड़े वैज्ञानिक ढंग से घरों की नालियाँ गली की बड़ी नालियों में गिरती थीं और वे शहर के बाहर किसी बड़े नाले में जा गिरती थीं। इन नालियों को ईंटों से इस प्रकार ढका जाता था कि स़फाई करते समय उन्हें आसानी से उठाया जा सकता था। इससे पता चलता है कि वे सफ़ाई की ओर विशेष ध्यान देते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० ए० एल० बाशम के अनुसार, "नालियों की अद्भुत व्यवस्था

सिंधु घाटी के लोगों की महान् सफलताओं में से एक थी। रोमन सभ्यता के अस्तित्व में आने तक किसी भी प्राचीन सभ्यता की नाली व्यवस्था इतनी अच्छी नहीं थी।"

("The unique sewerage systemof the Indus people is one of the most impressive of their achievements. No other Civilization until that of the Romans had so efficient systemof drains." Dr. A.L. Basham, The Wonder that was India (Calcutta: 1990) p. 17)

5. सड़के (Roads) – हड़प्पा सभ्यता के लोग सड़कों के निर्माण में भी बड़े कुशल थे। वे सड़के नगर के प्रत्येक ओर बनाई जाती थीं। सड़कें काफी चौड़ी होती थीं। सड़कों की चौड़ाई 13 फुट से लेकर 34 फुट तक होती थी। सड़कों पर चौराहे भी बनाए जाते थे और रोशनी की व्यवस्था भी की जाती थी। हड़प्पा सभ्यता की नगर योजना के संबंध में हम डॉक्टर अरूण भट्टाचार्जी के अनुसार, "सिंधु घाटी सभ्यता का सर्वाधिक आश्चर्यजनक पक्ष उनकी सर्वश्रेष्ठ नगर–योजना थी।"

("The most wonderful aspect of the Indus Valley Civilization was the excellent town planning." Dr. Arun Bhattacharjee, History of Ancient Indian (New Delhi : 1979) p. 47)

(Prof. Manjeet Singh Sodhi, Themes in Indian History (Modern Publishers Jalendhar : 2009) P.P. 67)

2.4 अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

2.4.1 आर्थिक संगठन (Economy Organization)

हड़प्पा सभ्यता के लोगों की आर्थिक स्थिती मजबूत थी। निम्नलिखित तथ्यों से प्रतीत होता है –

1. कृषि (Agriculture) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि था। सिंधु नदी के आसपास का क्षेत्र बहुत उपजाऊ था और सिंचाई के लिए पानी की कोई कमी नहीं थी। हड़प्पा सभ्यता के लोग बाढ़ के पानी को बाँध बना कर सिंचाई के काम में लाते थे। वे बिजाई के लिए हेरो जैसे उपकरण का प्रयोग करते थे। उस समय के यंत्र लकड़ी के बनाए जाते थे जो समय बीतने पर नष्ट हो गए। उस समय बैल के मुहरों पर किए गए रेखांकन एवं पक्की मिट्टी की मूर्तियाँ (terracotta sculpture) संकेत है कि खेतों को जोतने के लिए बैलों का प्रयोग किया जाता था। चोलिस्तान (Cholistan) एवं बनावली (Banawali) से पुरातत्वविदों को मिट्टी से बने हल के प्रतिरूप (terracotta models of the plough) मिले हैं। ये इस बात का प्रमाण थे कि खेतों की जुताई के

लिए हलों का प्रयोग किया जाता था। अफ़गानिस्तान में शोर्तुघई (Shortughai) नामक स्थल से नहरों, पंजाब एवं सिंध से कुओं एवं धौलावीरा से जलाशयों (water reservoirs) के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। इनसे पता चलता है कि उस समय सिंचाई के लिए विभिन्न साधनों का प्रयोग किया जाता था।

कालीबंगन में जुते हुए खेत में हल रेखाओं के दो समूह एक–दूसरे को समकोण पर काटते हुए (two sets of furrows at right angles to each other) मिले हैं। उस समय फ़सलों की इतनी अधिक पैदावार होती थी कि उनसे न केवल लोगों की तुरंत आवश्यकताएँ पूरी हो जाती थीं बल्कि भविष्य में किसी आपात् स्थिति के लिए भी काफी भंडार रख लिया जाता था। इस तथ्य का बड़ी संख्या में मिले अन्नागारों से पता चलता है। हड़प्पा स्थलों से मिले अनाज के दानों से यह स्पष्ट होता है कि गेहूँ (wheat) तथा जौ (barley) उस समय की प्रमुख फसलें थीं। इनके अतिरिक्त दाल (lentil), सफेद चना (chick pea), तिल (sesame), बाजरा (millets) तथा चावल (rice) के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं। खाद्य पदार्थों के अतिरिक्त हड़प्पा सभ्यता की सर्वाधिक प्रसिद्ध उपज कपास (cotton) थी। इससे कपड़ा (clothes) तैयार किया जाता था। कपास की उपज के लिए हड़प्पा सभ्यता (पूरे विश्व) में प्रसिद्ध थी।

2. पशु पालन (Animal Rearing) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों का दूसरा मुख्य व्यवसाय पशु पालन था। हड़प्पा के लोग भेड़, बकरी, गाय, बैल, भैंस, सुअर, कुत्ता, ऊँट तथा हाथी पालते थे। वे उनका दूध, माँस, ऊन तथा भार ढ़ोने के लिए प्रयोग करते थे। वे भेड़, बकरी, गाय, भैंस तथा सूअरों से दूध, ऊन तथा माँस प्राप्त करते थे। बड़े जानवर जैसे बैल, ऊँट, गधा तथा हाथी आदि भार ढोने के लिए प्रयोग किए जाते थे। कुत्ते घर की रखवाली तथा शिकार के लिए रखे जाते थे। इसके अतिरिक्त हड़प्पा के लोग बिल्लियाँ, मोर, हिरण, बत्तखें, खरगोश, मुर्गे तथा तोते घरों में पालते थे। उन्हें चीता, शेर, रीछ तथा गैंडे आदि जानवरों का भी ज्ञान था। उन्हें घोड़े का ज्ञान नहीं था।

3. उद्योग (Industries) – कृषि तथा पशु पालन के अतिरिक्त हड़प्पा सभ्यता के लोग उद्योग भी चलाते थे। क्योंकि हड़प्पा घाटी में कपास बड़ी मात्रा में उगाई जाती थी इस कारण कपड़ा उद्योग को बहुत प्रोत्साहन मिला। हड़प्पा के लोग बुनने, रंगने, सिलाई करने तथा कढ़ाई का काम करने में बहुत निपुण थे। वे ऊनी वस्त्र भी बनाते थे। उन्हें सोने, चाँदी तथा ताँबे आदि का ज्ञान था। हड़प्पा के लोगों को लोहे का ज्ञान नहीं था। कुछ लोग बढ़इगिरी का कार्य करते थे जैसे भवनोंका फर्नीचर तथा खिलौने बनाते थे। इन शिल्पों के अतिरिक्त कुछ लोग

आभूषण बनाने, हाथी दाँत, मूर्तियाँ तथा भवन बनाने का काम करते थे तथा कुछ चिकित्सक तथा मछुवारे का कार्य करते थे।

4. व्यापार तथा वाणिज्य (Trade and Commerce) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों का व्यापार तथा वाणिज्य। आरंभ में वे देश के अन्य विभिन्न क्षेत्रों के साथ व्यापार करते थे। कृषि उत्पादों, औद्योगिक कच्चा माल, धातु के तैयार उत्पादों, मूल्यवान, पत्थरों, सोने तथा चाँदी के आभूषणों आदि का व्यापार कई क्षेत्रों के साथ किया जाता था। हड़प्पा के लोग ताँबा राजस्थान की खेतड़ी खानों से प्राप्त करते थे, मनके गुजरात से, सोना दक्षिण भारत से तथा मूल्यवान पत्थर कश्मीर तथा अफ़गानिस्तान से प्राप्त करते थे। बाद में हड़प्पा वासियों ने बाह्य व्यापार विकसित किया। विदेशों को वे पर्याप्त मात्रा में सूती कपड़ा, आभूषण, मोती तथा हाथी दाँत की वस्तुएँ निर्यात करते थे। इनके अतिरिक्त लंगूर, बंदर तथा मोर भी बाहर भेजे जाते थे। विदेशों से व्यापार जल तथा स्थल दोनों प्रकार से होता था लेकिन अपने देश में स्थल मार्ग के द्वारा व्यापार का कार्य किया जाता था। बैलगाड़ी सामान ढ़ोने का मुख्य साधन था। व्यापारिक उन्नति के कारण हड़प्पा सभ्यता के लोगों का जीवन बहुत समृद्ध था।

5. तोल तथा माप (Weights and Measures) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों ने व्यापार की सुविधा के लिए तोल तथा माप प्रणाली प्रचलित की थी। हड़प्पा की खुदाई के दौरान हमें बड़ी संख्या में बाट प्राप्त हुए हैं। ये विभिन्न आकारों तथा वज़न वाले हैं। बड़े बाटों का प्रयोग भारी सामानों को तोलने तथा अति छोटे बांटों का प्रयोग आभूषणों और मनकों को तोलने के लिए किया जाता था। ये सभी बाट चर्ट (chert) नामक पत्थर से बनाए जाते थे। इन बाटों को सरकारी नियंत्रण में तैयार किया जाता। ये सभी बाट 1, 2, 4, 8, 16, 32, 64 के अनुपात में होते थे। बाटों के अतिरिक्त हमें हड़प्पा स्थलों से धातु के तराजू तथा पैमाने भी मिले हैं। पैमानों का प्रयोग वस्तुओं को मापने के लिए किया जाता था। उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि हड़प्पा सभ्यता के लोगों का आर्थिक जीवन काफी उन्नत था। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉक्टर एच० वी० श्रीनिवास मूर्ति का यह कहना पूर्णतः ठीक है, (Prof. Manjeet Singh Sodhi, Themes in Indian History (Modern Publishers Jalandhar : 2009) P.P. 9-10)

"इस विशाल (सिंधु घाटी) सभ्यता के लोगों का जीवन स्तर समकालीन मिस्त्री, सुमेरिया तथा बेबीलोनिया की सभ्यताओं से काफी ऊँचा था।"

("This vast civilization had a high standard of life far superior to that of contemporary Egyptian, Sumerian and Babylonian civilizations." Dr. H.V. Sreenivasa Murthy, History and Culture of India to 1000 A.D. (New Delhi: 1980) p. 43)

2.4.2 छात्र क्रिया कलाप (Student Activity)

सिंधु सभ्यता के प्रसार, नगर योजना एवं आर्थिक संगठन का वर्णन कीजिए।

2.4.3 सामाजिक संगठन (Society Organization)

हड़प्पा खोजों से मिले अवशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि हड़प्पा के लोगों का जीवन काफी सुखमय था। हड़प्पा सभ्यता के लोगों के सामाजिक जीवन की मुख्य विशेषताओं का वर्णन निम्न प्रकार से है –

1. परिवार (Family) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों के समाज की मुख्य इकाई परिवार थी। उस समय परिवार संयुक्त होते थे। उस समय के विशाल भवनों को देखकर यह अनुमान लगाया गया है कि यहाँ बड़े परिवार रहते थे। प्रत्येक परिवार में माता–पिता, भाई–बहन तथा पुत्र–पुतियाँ आदि रहते थे। हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से प्राप्त बहुसंख्या में स्त्रियों की मूर्तियों के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि उस समय का समाज मातृसत्तात्मक था। इसके आधार पर कहा जा सकता है कि समाज में स्त्रियों को प्रमुख स्थान दिया गया था।

2. सामाजिक वर्गीकरण (Social Stratification) – हड़प्पा सभ्यता का समाज कितने वर्गों में विभाजित था, इसकी स्पष्ट जानकारी नहीं है। संभवतः उस समय का समाज तीन वर्गों में विभाजित था। ये वर्ग थे – शासक एवं धनी वर्ग, मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग। शासक तथा धनी वर्ग सुखी एवं संपन्न जीवन व्यतीत करते थे। वे दुर्गों तथा विशाल भवनों में रहते थे। मध्यम वर्ग के निवास अपेक्षाकृत कुछ छोटे थे। निम्न वर्ग झोपड़ियों में रहता था।

3. भोजन (Diet) – हड़प्पा सभ्यता के लोग विभिन्न प्रकार का भोजन खाने के बहुत शौकीन थे। पुरातत्वविद जले हुए अनाज के दानों (charred grains) एवं बीजों (seeds) की खोज में हड़प्पा सभ्यता के लोगों की भोजन संबंधी आदतों को जानने में सफल हो पाए हैं। प्राचीन वनस्पति का अध्ययन करने वाले विद्वानों (scholars) को पुरा–वनस्पतिज्ञ (archaeo-botanists) कहा जाता है। इन विद्वानों ने हड़प्पा के विभिन्न स्थलों से गेहूँ, जौ, दाल, सफेद चना एवं तिल नामक अनाज के दाने प्राप्त किए हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने गुजरात से बाजरे के दाने प्राप्त किए हैं। चावल के दाने बहुत कम मिले हैं। भेड़, बकरी, भैंस तथा सूअर ये सभी जानवर पालतू थे। इसके अतिरिक्त जंगली जानवरों का शिकार हड़प्पाई लोगों द्वारा किया जाता था अथवा वे इनका माँस अन्य आखेटक समुदायों (hunting communities) से प्राप्त करते थे। इस प्रकार कह सकते है कि हड़प्पा सभ्यता के लोग शाकाहारी एवं माँसाहारी दोनों तरह का भोजन करते थे।

4. वस्त्र (Dress) – हड़प्पा सभ्यता के लोग किस प्रकार के वस्त्र पहनते थे। इस बात का अनुमान हम मूर्तियों की वेशभूषा से लगा सकते हैं। अधिकतर लोग सूती वस्त्र पहनते थे। धनी लोग ऊनी वस्त्रों का भी प्रयोग करते थे। स्त्रियों तथा पुरूषों के वस्त्रों में कोई विशेष अंतर न था। स्त्रियाँ निचले भाग में लहँगा डालती थीं तथा ऊपरी भाग में एक चादर का प्रयोग करती थीं। वे सिर पर एक विशेष वस्त्र पहनती थीं जो पँखे की तरह उठा होता था। पुरूष नीचे के लिए धोती तथा ऊपरी भाग के लिए एक चादर अथवा शाल का प्रयोग करते थे। हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से हमें अनेक तकले तथा सुइयाँ प्राप्त हुई हैं जो इस बात का प्रमाण हैं कि उस समय के लोग सूत कातना तथा कपड़ों को बुनना और सीना जानते थे।

5. आभूषण (Ornaments) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों को चाहे पुरूष अथवा स्त्री आभूषणों के शौकीन थे। शरीर का शायद ही कोई ऐसा अंग होगा जिसे वे अलंकृत न करते हों। प्रमुख आभूषणों में हार, चूड़ियाँ, कड़े, अँगूठी, बाजूबँद, नथनी, पाज़ेब तथा कानों की बालियाँ थीं। धनी लोगों के आभूषण सोने, चाँदी, मूल्यवान् पत्थरों तथा हाथी दाँत से बने होते थे। ग़रीब लोगों के आभूषण ताँबे तथा हड्डियों के बने होते थे।

6. हार श्रृंगार (Diet) – हड़प्पा सभ्यता के लोग हार–श्रृंगार के बहुत शौकीन थे। स्त्रियाँ लंबं बाल रखने, विभिन्न प्रकार के जूड़े अथवा चोटी बनाने की शौकीन थीं। वे बालों को सँवारने के लिए दर्पण, कंघी तथा विभिन्न प्रकार की पिनों का प्रयोग करती थीं। खुदाई के दौरान हमें ताँबे के दर्पण तथा हाथी दाँत की कंघियाँ मिली है। इनके अतिरिक्त हमें अनेक श्रृंगारदान भी मिले हैं, जो हाथी दाँत से निर्मित होते थे। इनसे पता चलता है कि स्त्रियाँ काजल, लिपिस्टक, विभिन्न प्रकार के पाऊडरों, सुंगधित तेलों तथा सिंदूर आदि का प्रयोग करती थीं। पुरुषों में दाढ़ी तथा मूँछ रखने का रिवाज था और कुछ पुरुष पगड़ी भी बाँधते थे। पुरुष आँखों को सुंदर बनाने के लिए काजल का प्रयोग करते थे।

7. मनोरंजन (Amusements) – हड़प्पा सभ्यता के लोग बहुत आमोदप्रिय थे। वे अपने अवकाश के क्षणों में शतरंज तथा चौपड़ खेलने के बहुत शौकीन थे। शिकार करना, मछलियाँ पकड़ना, पशु–पक्षियों को पालना तथा उन्हें आपस में लड़वाना भी हड़प्पा निवासियों के मनोरंजन के साधन थे। उस समय के लोगों को नृत्य एवं संगीत में विशेष रूचि थी। ढोल तथा वीणा उनके मुख्य वाद्य थे। बच्चों के मनोरंजन के लिए विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षी, मानव आकृतियाँ, गाड़ियाँ, सीटियाँ तथा झुनझुने नामक आदि खिलौने तैयार किए जाते थे।

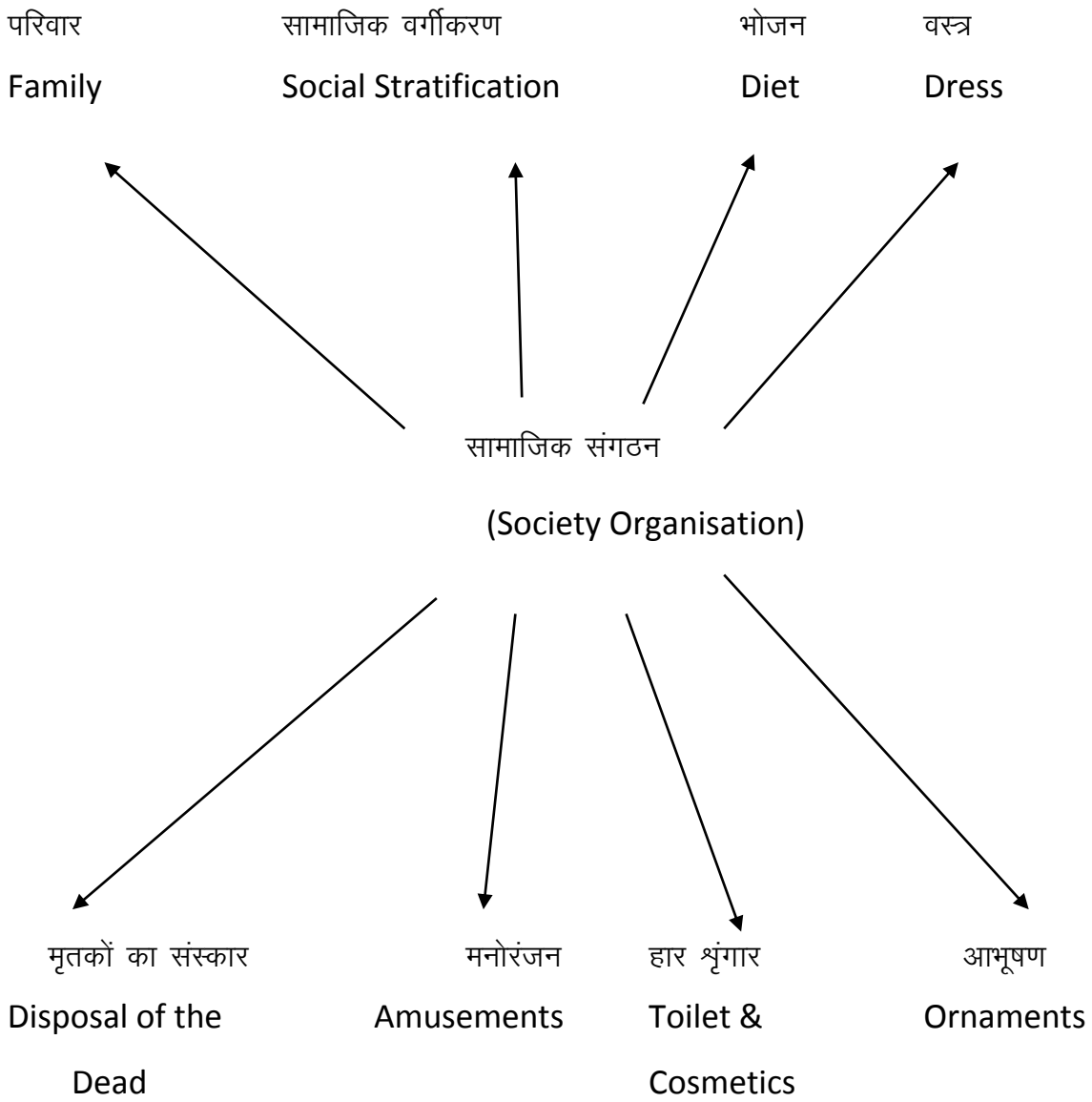

8. मृतकों का संस्कार (Disposal of the Dead) – हड़प्पा सभ्यता के लोगों में शवों के विसर्जन की तीन प्रथाएँ प्रचलित थी। प्रथम विधि के अनुसार शव को पूरी तरह जला दिया जाता था। जो राख बच जाती थी उसे एक बर्तन में डाल कर दबा दिया जाता था। द्वितीय विधि के अनुसार पूरे शव को कब्र में दफ़ना दिया जाता था। मृतक व्यक्ति के अगले जीवन में प्रयोग करने के लिए उसके साथ कब्र में अनाज से भरे मिट्टी के बर्तनों को रख दिया जाता था। कुछ कब्रों में मृदभाँड एवं आभूषण भी मिले हैं। कहीं–कहीं मृतकों को ताँबे के दर्पणों के साथ दफ़नाया गया था। कुछ कब्रों की बनावट एक–दूसरे से भिन्न होती थी। तृतीय विधि के अनुसार शव को कुछ समय के लिए किसी खुले स्थान पर रख दिया जाता था। पशु–पक्षियों के खाने के बाद जब उसका अस्थि–पंजर शेष रह जाता था तो उसे दफ़ना दिया जाता था।

(Prof. Manjeet Singh Sodhi, Themes in Indian History (Modern Publishers Jalandhar : 2009) P.P. 11-13)

निष्कर्ष रूप से उपरोक्त तथ्यों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हड़प्पा सभ्यता के लोगों का सामाजिक जीवन भी पर्याप्त उन्नत था। प्रसिद्ध इतिहासकार एस० आर० शर्मा ने ठीक लिखा है, "सिंधु घाटी के लोगों की सामाजिक व्यवस्था मिस्र तथा बेबीलोनिया की तुलना में बहुत श्रेष्ठ थी।"

("The social system of the Indus people was superior to even that of Egypt and Babylonia." S.R. Sharma,India As I See Her (Agra : 1956) p. 21)

2.4.4 धार्मिक जीवन (Religious Life)

पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि सैंधव लोगों की धर्म में अत्यधिक आस्था थी। हड़प्पा सभ्यता के लोगों का धार्मिक जीवन पर्याप्त उन्नत था।

1. मातृदेवी की उपासना (Worship of Mother Goddess) – उत्खनन में प्राप्त अनेक प्रकार की नारी की मूर्तियां मिली है। कई मूर्तियों पर धुएँ के धब्बे है जिससे लगता है कि लोग देवी माँ की धूप, दीप, तेल, घी आदि पूजा करते थे। मातृभूमि को कई रूपों में प्रदर्शित किया है। जैसे– एक नारी शिशु को स्तनपान करा रही है यह जननी की देवी मानी गई। इसी तरह की नारी की एक मूर्ति के गर्भ से वृक्ष निकलता दिखाया गया है। यह वनस्पति जगत का प्रतीक थी।

2. लिंग तथा योनि की उपासना (Worship Phallus and Vagina) – हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से बहुत संख्या में चीनी मिट्टी तथा सीप से बने छल्ले प्राप्त हुए है विद्वानों ने इन छल्लों को योनी माना, जिनकी पूजा सिंधवासी जननशक्ति के कारण करते थे।

3. शिव की उपासना (Worship of Lord Shiva) – सिंधु निवासी शिव की उपासना लिंग और मूर्ति दोनों के रूप में करते थे। अनेको ऐसे पाषाण निर्मित छल्ले (Ringstones) प्राप्त हुए जो योनि की पूजा का प्रमाण प्रस्तुत करते है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक मुद्रा में एक त्रिमुखीय पुरुष का चित्र अंकित है। उसके सिर पर सींगों वाला मुकुट है। उसके दाई ओर हाथी एवं शेर तथा बाई ओर गैंडा एवं साँड के चित्र अंकित है। विद्ववानो ने इसे पशुपति माना है। हड़प्पा के लोग शिव की पूजा शिव की उपासना पशुपति महादेव के रूप में करते थे।

4. वृक्षों की पूजा (Worship of Trees) – उत्खनन से प्राप्त विभिन्न मुहरों व मूर्तियों पर वृक्ष के प्रमाण मिले जिससे ज्ञात होता है कि सिंधुवासी विभिन्न वृक्षों की पूजा करते थे। इन पेड़ो की पूजा देवी–देवताओं का निवास मानकर की जाती थी। मार्शल महोदय जी का मत है कि सिंधु घाटी का स्थान पवित्र पेड़ या पीपल था। इसके अतिरिक्त नीम, तुलसी, महुआ, खजूर आदि पेड़ भी थे।

5. पशुओं की उपासना (Worship of Animals) – मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के उत्खनन से अनेको मुहरों से हमें पता चला कि सिंधु सभ्यता के लोग कुछ पशुओं की पूजा भी करते थे। हाथी, बैल, भैंस, बकरा, साँड, चीते, गैंडे आदि में से कुछ मूर्तियों की पूजा की जाती है कुछ को खिलौने के रूप में प्रयोग किया जाता था। एक सींग वाले बैल को अधिक पवित्र माना जाता था। मोहनजोदड़ो से एक ताम्र–पत्र प्राप्त हुआ इस पर कूबड़वाले बैल का चित्र अंकित था जिसको शक्ति के प्रतीक के रूप में पूजा जाता था। बैल की भांति भैंसे को भी शक्ति का प्रतीक माना जाता था।

6. सूर्य तथा अग्नि की पूजा (Worship Sun and Fire) – हड़प्पा सभ्यता के उत्खनन से प्राप्त मुहरों पर स्वास्तिक तथा चक्र के चिन्ह अंकित मिले है और साथ ही कुछ ऐसे प्रमाण भी मिले जो अग्निशालाओं के है। इन तथ्यों के आधार पर पुरातत्ववेत्ताओं ने कहा कि सिंधु सभ्यता के लोग सूर्य और अग्नि की उपासना करते थे।

7. अन्य धार्मिक विश्वास (Other Reigious Beliefs) – हड़प्पा सभ्यता के अवशेषों से सिंधुवासियों के धार्मिक विश्वासो की धारणा का प्रमाण मिलता है। स्नानागारों से पता चलता है कि धार्मिक उत्सवों में स्नानकुण्डों में स्नान करने की प्रथा थी ओर वे जल की पूजा में पूर्ण विश्वास करते थे। लोथल, कालीबंगन तथा बनावली से बड़ी संख्या हवन कुँड मिले है। जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि हवन–यज्ञ करने के लिए इनका प्रयोग करते थे। अनेको प्राप्त ताबीजों के आधार पर यह कहा जा सकता है। सिंधु सभ्यता के लोग अंधविश्वासी भी थे। वे भूत–प्रेतों के बचाव के लिए जादू–टोनो का आश्रय भी लेते थे।

2.4.5 हड़प्पा सभ्यता की कला (Arts of Harappan Civilization)

भारत की प्रथम विकसित सभ्यता होने के बावजूद कला की दृष्टि से अत्यधिक समृद्ध थी सैंधव सभ्यता। मूर्तिकला, मिट्टी के बर्तन बनाने की कला, आभूषण बनाने की कला एवं चित्रकला आदि में काफी उन्नति की थी। जिसका विवरण निम्न प्रकार से है –

1. मूर्तिकला (Art of Sculpture) – उत्खनन से जानकारी मिली कि सिंधु सभ्यता के निवासी मूर्तिकला में काफी निपुण थे। इन्होंने मूर्तियों का निर्माण मुलायम पत्थर, भूरी तथा पीली चट्टानों व धातुओं को काटकर मूर्तियों

का निर्माण करते थे। मूर्तियों महिलाओं और पुरूषों दोनों की मूर्तियाँ बनाते थे। मोहनजोदड़ो से प्राप्त पुरोहित–राजा की मूर्ति तथा हड़प्पा से प्राप्त लाल पत्थर की बनी नग्न खड़े पुरुष की मूर्ति अत्यंत ही कलात्मक है। इसके अतिरिक्त बच्चों के बहुत सारे खिलौने भी प्राप्त हुए है। इनमें कुत्ते, बंदर, हाथी, साँड आदि को सम्मिलित किया गया है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त काँसे की नर्तकी मूर्ति में उसका बायाँ हाथ कमर पर रखा हुआ है और इसमें बहुत सारी चूड़ियाँ पहनी हुई है। इसके गले में हार है। सिर के बाल घुँघराले दर्शाए गए है। इसमें नर्तकी को नग्न दिखाया गया है। यह देखने में बहुत ही सुन्दर है। रस्तम जे मेहता के अनुसार "यह कृति अत्यंत सुन्दर है।" ("It is a work of great Beauty." Rustam J. Mehta. Masterpieces of Indian Sculpture (Bombay: 1976) p. 37)

2. मुहरे (Seals) – हड़प्पा सभ्यता की सर्वोत्तम कलाकृतियाँ मुहरें हैं। अब तक लगभग 2,000 मुहरें प्राप्त हुई है उन में से 1200 से अधिक मुहरें मोहनजोदड़ो से प्राप्त हुई है। ये मुहरें सेलखड़ी पत्थर (Steatite stone), काचली मिट्टी (Faience soil), चर्ट (Chert), गोमद (Gomedh) आदि की मुहरें प्राप्त हुई है। इन मुहरों पर जानवरों के चित्र अंकित है एक श्रृंगीपशु, भैंसे, बाद्य, सांड, बकरी, शेर, हाथी और बारहसिंगे आदि की आकृतियाँ उकेरी गई है। लोथल (Lothal) और देसलपुर (Desalpur) से ताँबे (copper) ये मुहरें (seals) बेलनाकार (Cylindrical), वर्गाकार, आयताकार एवं वृत्ताकार है। मोहनजोदड़ो (Mohaljodaro) और लोथल (Lothal) से नाव की आकृतिकी मुहरें मिली है।

3. मिट्टी के बर्तन (Soil Pots) – सिंधुवासी कुम्हार के चाक का प्रयोग बड़ी कुशलता के साथ करते थे। चाक् द्वारा बनाए गए मिट्टी के बर्तनो (Soil pots) पर विभिन्न प्रकार के रंगों पेड़ो व पशुपक्षियों के चित्र अंकित करते थे। हड़प्पाई लोग चाक के माध्यम से मृदभाँडो (Pottery) को चिकना और चमकीला बनाते थे। हड़प्पा के बर्तनों पर की गई चित्रकारी यह प्रदर्शित करती है कि हड़प्पावासी बड़े अच्छे चित्रकार थे।

4. ताबीज (Tabiza) – उत्खनन से वर्गाकार तथा आयताकार तामपत्र प्राप्त हुए हैं जिन पर एक तरफ मनुष्य तथा पशु की आकृति तथा दूसरी तरफ लेख है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि इन ताम्रपात्रो का प्रयोग ताबीज के रूप में किया जाता होगा। क्योंकि सिंधुवासी अंधविश्वासी थे। वे भूत–प्रेतों से बचने के ताबीज (Tabiza) बांधते थे।

5. आभूषण एवं मनके बनाने की कला (Art of Making Jewellery and Beads)

हड़प्पा सभ्यता वासियों में आभूषण एवं मनके बनाने की कला के बारे में साक्ष्य प्राप्त हुए है जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि सिंधुवासियों में यह कला कूट–कूट कर भरी हुई थी जैसे – ताँबें (Copper), पक्की मिट्टी (Terracotta) एवं हाथी के दाँत के मनके (Beads), सोने (Gold), चाँदी, शंख (Shell), पत्थर (Stone), सेलखड़ी (steatie), क्वार्ट्ज (Quartz) घोंघे, हड्डिया आदि। हड़प्पा के लोगो के द्वारा बनाए गए मनके कई प्रकार के होते थे। मनको को पिरोकर माला भी बनाई जाती थी। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० आर० सी० मजूमदार के अनुसार, "ये आभूषण कई प्रकार के थे और इनसे उनके उच्च तकनीकी ज्ञान का पता चलता है।" ("These were marked by variety of designs and high technical skill") Dr. R.C. Majumdar Ancient India (Delhi : 1971) p. 23)

6. चित्रकारी (Painting) – विभिन्न प्रकार के बर्तनों, मुहरों, घरों पर विभिन्न प्रकार के चित्र देखकर कहा जा सकता है कि हड़प्पा वासियों में चित्रकला का गुण था वे कला के प्रेमी थे इसलिए वे मनुष्यों, पशु–पक्षियों, वृक्षो, फल, पत्तियों को बनाकर विभिन्न रंगों से उनको सजाते व संवारते थे। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते है कि हड़प्पा सभ्यता के लोग कला प्रेमी थे और अपनी कला की एक अमीट छाप उन्होंने मुहरों, बर्तनों, आभूषणों, मनको, मूर्तियों, भवनों आदि पर छोड़ी वे कला के माध्यम से मनोरंजन (Amusements) करते थे। अपने अवकाश के समय का सदुपयोग कला के माध्यम से करते थे।

2.4.6 राजनैतिक संगठन (Political Organization)

हड़प्पा सभ्यता के राजनीतिक संगठनों के बारे में निश्चित रूप से कहना असम्भव है क्योंकि इसके बारे में कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिला है।

(1) हड़प्पा संस्कृति के विशाल स्वरूप को देखने पर लगता है कि यह संस्कृति किसी सर्वोच्चय शक्ति द्वारा संचालित होगी।

(2) कोटिल्य के अर्थ"ास्त्र में सम्प्रभुता, मन्त्रिगण, आबादी युक्त क्षेत्र, किला, राजकोष, शक्ति और बन्धुतरव को राज्य का अटूट अंग माना गया है।

(3) हड़प्पा सभ्यता क्षेत्र की आबादी अच्छी थी। किलाबन्दी कई शहरों की विशेषताएँ होती थीं। धौलावीरा में विशेषकर किलों के अन्दर किले होते थे।

(4) व्हीलर ने हड़प्पा सभ्यता के लोगों के शासन को मध्यम वर्गीय जनंतत्रात्मक शासन रहा और उसमें धर्म के महत्त्व को स्वीकारा है।

(5) ऐसा माना गया है कि सैंधव स्थलों का शासन दुर्गो द्वारा होता था। शासनधिकारी श्रम, भार, मूल्य आदि में एकरूपता स्थापित करने के लिए उत्तरदायी थे।

(6) मैके अनुसार मोहनजोदड़ो का शासन एक प्रतिनिधि शासक के हाथ में था

अतः हम कह सकते है कि हड़प्पा सभ्यता के राजनैतिक संगठन (राजनीतिक स्थिति) के संबंध में जो निष्कर्ष निकाले गए है। वे एक अनुमान पर आधारित है। सभी इतिहासकारों के अलग–2 विचार है जैसे किसी ने जनतंत्रात्मक शासन, प्रतिनिधि शासन, व्यापारियों का शासन, मध्यम वर्ग का शासन, पुरोहितों का शासन आदि ने विचार दिए है। जिसका निष्कर्ष निकालना असंभव है।

2.4.7 हड़प्पा लिपि (Harappan Script)

हड़प्पा के लोगों ने प्राचीन मेसोपोटामिया के लोगों की तरह लेखन की कला का आविष्कार किया। यद्यपि हड़प्पा लिपि की खोज सन् 1853 में हुई और सम्पूर्ण लिपि की खोज सन् 1923 में पूरी हुई। कुछ विद्वानों ने इसे प्रोटो–द्रविड़ भाषा या द्रविड़ियन के साथ जोड़ा, कुछ ने संस्कृत के साथ और अन्य विद्वानों ने सुमेरियाई भाषा के साथ जोडने का प्रयास किया। लेकिन इनमें से किसी भी अध्ययन सन्तोषजनक नहीं है। क्योंकि लिपि की व्याख्या नहीं हो पाई है, इसलिए हम न तो साहित्य में हड़प्पा के योगदान का मूल्यांकन कर सकते हैं, और न ही उनके विचारों और विश्वासों के बारे में कुछ कहा जा सकता है।

पत्थर की मुहरों और अन्य वस्तुओं पर हड़प्पा लेखन के लगभग 4000 नमूने हैं। अधिकांश अभिलेख मुहर पर दर्ज थे और उनमें कुछ ही शब्द होते थे। इन मुहरों का उपयोग धनाढय–वर्ग अपनी सम्पत्ति को चिन्हित करने के लिए करते थे। कुल मिलाकर हमारे पास लगभग 250 से 400 चित्रलेख हैं और एक तस्वीर के रूप में इसके प्रत्येक अक्षर से कुछ ध्वनि, विचार या वस्तु का अर्थ स्पष्ट होता है। हड़प्पा लिपि वर्णमाला के अनुसार नहीं है, यह एक चित्रकारी के रूप में है। मेसोपोटामिया और मिस्र की समकालीन लिपियों के साथ इसकी तुलना करने के प्रयास किए गए, लेकिन यह सिन्धु क्षेत्र में निर्मित होने के कारण पश्चिमी एशिया की लिपियों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं दर्शाते हैं। (राम शरण शर्मा, भारत का प्राचीन इतिहास (आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस–नई दिल्ली:2019) P.81)

2.4.8 हड़प्पा सभ्यता का पतन (Decline of the Harappan Civilization)

कोई भी सभ्यता जब विकास का चरमोत्कर्ष प्राप्त कर लेती है। तब उसमें अवांछित लक्ष्ण आ जाते है। यह प्रकृति का शाश्वत नियम है। शैनः शैनः उसका पतन भी शुरू हो जाता है। किसी भी सभ्यता के पतन के अनेको कारण हो सकते है। हड़प्पा के पतन के अनेकों कारण है। जिसको लेकर इतिहासकारो के अलग–अलग मत है। विकसित हड़प्पा सभ्यता 2500 ई० पू० से 1900 ई० पू० के बीच मौजूद थी। लेकिन ई० पू० उन्नीसवीं सदी पर

हड़प्पा सभ्यता के दो मुख्य केन्द्र हड़प्पा और मोहनजोदड़ो लुप्त हो चुके थे। लेकिन अन्य दूसरे स्थलों पर यह शैनः–2 नष्ट हुई है। हड़प्पा सभ्यता के पतन के कुछ प्रमुख कारण उत्तरदायी माने जाते है। उन तथ्यों पर एक नजर डाल कर संक्षिप्त विवरण का अध्ययन निम्न प्रकार से है –

1. बाढ़ (Floods) – हड़प्पा के केन्द्र नदियों के किनारे बसे हुए थे। वर्षा ऋतु में नदियों का जलस्तर बढ़ गया है जिससे जान मान का नुकसान हुआ होगा। अर्थात् नदियों में प्रत्येक वर्ष बाढ़ आ जाती थी। बाढ़ के कारण नगरों के बार–2 पुननिर्माण के स्पष्ट प्रमाण मिलते है। इस प्रकार हर वर्ष जान–माल के नुकसान को देखते हुए लोगों ने स्थानांतरण का फैसला लिया होगा। एम० आर० साहनी, जार्ज डेल्स, डॉ० राईकस का मत है कि हड़प्पा सभ्यता के विनाश में बाढ़ का मुख्य योगदान था।

2. अग्नि (Fire) – कुछ विद्वानों के विचार है कि हड़प्पा सभ्यता के विनाश में अग्नि का भी प्रमुख कारण माना जाता है। क्योंकि उस समय भवनों के निर्माण लकड़ी का ज्यादा प्रयोग किया जाता था। अचानक आग लगने पर भवन जलकर राख हो गए। क्योंकि ब्लूचिस्तान में अनेको स्थलों पर राख के अवशेष मिले है। लेकिन अधिकतर विद्वान इस पर असहमत है ऐसा मानते है कि कुछ स्थलों को हानि पहुँची होगी। लेकिन सम्पूर्ण हड़प्पा के लिए इसे जिम्मेदार नहीं माना जा सकता।

3. भूकंप (Earthquake) – कुछ इतिहासकारों का मानना है कि हड़प्पा सभ्यता के नष्ट होने में भूंकपों का कारण रहा है। क्योंकि भूकंप आने पर हड़प्पा के स्थल उथल–पुथल हुए और मिट्टी की परत चढ़ गई। इस कारण वहाँ नगरों का दोबारा अस्तित्व में आना संभव था नहीं।

4. जल प्लावन (Floating of Water) – प्रसिद्ध वैज्ञानिक एम० आर० साहनी का विचार है कि हड़प्पा नगरों के पतन में जल प्लावन के कारण भी हुआ है। जल प्लावन से भूमि कृषि योग्य नहीं रही होगी। जिस उत्पादन की समस्या आई होगी। जिसके कारण वहाँ के लोगों ने दूसरी जगह पलायन शुरू कर दिया होगा और धीरे–2 हड़प्पा का पतन हो गया।

5. महामारी (Epidemic) – कुछ इतिहासकारों का मत है कि हड़प्पा के पतन के कारण प्लेग अथवा कोई जानलेवा महामारी जैसी भंयकर समस्या के कारण लोगों का जीवन जीना कठिन हो गया जिसकी वजह से उन्हें जीवित रहने के लिए किसी दूसरे स्थान पर स्थानांतरण करना पड़ा होगा और धीरे–2 हड़प्पा सभ्यता पतन की ओर बढ़ी होगी। फिर एक समय हड़प्पा की अमिट छाप लुप्त हो गई।

6. बढ़ती जनसंख्या (Increasing Population) – हड़प्पा सभ्यता के विनाश का एक कारण वहाँ की तीव्रता से बढ़ती हुई जनसंख्या भी माना गया है। क्योंकि जनसंख्या बढ़ने से प्राकृतिक संसाधनों में कमी आ गई होगी और आर्थिक स्थिति ढ़ामा ढ़ोल हो गई जिसके कारण लोग वहाँ से पलायन कर गए होगे जिससे हड़प्पा का पतन होना स्वाभाविक ही था। कुछ इतिहासकारों ने यह मत दिया है।

7. प्राकृतिक आपदा (Natural Disaster) – कुछ इतिहासकारों का कथन है कि हड़प्पा सभ्यता के पतन में प्राकृतिक आपदा भी एक कारण रहा है। जैसे – ओलावृष्टि, तेज अंधड़, ज्वालामुखी विस्फोट, वज्रपात (बिजली का गिरना), महामारी, प्लेग, मलेरिया, भूकंप, बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाएँ निश्चय ही हड़प्पा के पतन का कारण रहे होगे।

8. व्यापार में गिरावट (Fall in Trade) – आर० एस० शर्मा का मत है कि व्यापार में गिरावट के कारण हड़प्पा का पतन हुआ था। कच्चे माल के अभाव में उद्योगों में तैयार माल की कमी और मजदूरों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया होगा। दूसरा हड़प्पा सभ्यता के दूसरे नगरों के साथ व्यापारिक संबंधों में मतभेद का कारण भी हो सकता है। जिस से वहाँ की अर्थव्यवस्था बिगड़ गई होगी। जिसकी वजह से पतन होना तो निश्चित ही था।

9. नदियों के जल–मार्ग में परिवर्तन (Changes Path of River) – नदियाँ समय–समय पर अपने प्रवाह–मार्ग को परिवर्तित करती रहती हैं। प्रसिद्ध विद्वान एच० टी० लैम्ब्रिक, जी० एफ० देल्स तथा माधोंस्वरूप वत्स ने इसी मार्ग–परिवर्तन को सभ्यता पतन का कारण माना है। एम० एस० वत्स ने हड़प्पा के पतन का कारण रावी नदी को माना है। देल्स ने घग्गर और उसकी सहायक नदियों को कालीबंगन के पतन का कारण माना है।

10. पर्यावरणीय असंतुलन (Enviornmental Degradation) – जॉन मार्शल तथा डॉक्टर रौनल्ड का विचार है कि हड़प्पा के पतन में पर्यावरणी असंतुलन की अहम भूमिका रही है। जिसकी वजह से हड़प्पा वासियों को सामान्य अनेकों समस्या पैदा हो गई जिससे वहां रहना और जीवन यापन करना दुर्गम हो गया। हड़प्पा वासी कई दूसरे स्थान पर प्लायन कर गए होंगे जिससे हड़प्पा सभ्यता का विनाश हो गया।

11. आक्रमण (Invasions) – गार्डन चाइल्ड, व्हीलर, स्टुवर्ट पिग्गट, आदि इतिहासकारों का मानना है कि हड़प्पा के मोहनजोदड़ो में एक ही कपड़े में तेरह व्यक्तियों के अस्थि–अवशेष की प्राप्ति के आधार पर कहा जा सकता है कि अचानक आक्रमण के कारण लोग मारे गए होगे। ऋग्वेद में भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि आर्य अपने शत्रुओं के दुर्ग नष्ट करने के लिए इंद्र भगवान की पूजा करते थे। वैदिक संस्कृति को मजबूत स्थापित करने के लिए 1500 ई० पू० हड़प्पा को मिटाने के लिए वहाँ के लोगों को मार डाला होगा। इस प्रकार हड़प्पा का पतन हुआ होगा।

2.5 प्रगति समीक्षा (Check your Progress)

(क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :– (Filling the blanks)

(i) हड़प्पा सभ्यता के लोग ..... धातु के बारे में नहीं जानते थे।

(ii) सिंधु घाटी सभ्यता के अन्य नाम ..... और ..... है।

(iii) मोहन जोदड़ो का शाब्दिक अर्थ ..... है।

(iv) लोथल ..... प्रान्त ..... के जिले में स्थित है।

(v) हड़प्पा सभ्यता की खोज ..... ने की थी।

(vi) 1922 ई. में मोहनजोदड़ो की खोज ..... ने की थी।

(vii) काली बंगन ..... के लिए प्रसिद्ध है।

(viii) सिंधु घाटी के लोग ..... पशु के बारे में परिचित नहीं थे।

(ix) हड़प्पा सभ्यता की लिपि ..... थी।

(x) 1853 ई० में ..... हड़प्पा मोहर का पता लगाया।

(ख) सत्य/असत्य कथन :– (True/False)

(i) रोपड़ पंजाब के रूप नगर जिले में सतलुज नदी के किनारे पर है। (सत्य/असत्य)

(ii) आलमगीरपुर उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में हिंडन नदी के तट पर स्थित है। (सत्य/असत्य)

(iii) हड़प्पा सभ्यता के लोगों का कृषि मुख्य व्यवसाय नहीं था। (सत्य/असत्य)

(iv) हड़प्पा संस्कृति के लोग पीपल की प्रमुख रूप से पूजा करते थे। (सत्य/असत्य)

(v) कांस्य युगीन सभ्यता के लोगों की रूचि चित्रकारी में नहीं थी। (सत्य/असत्य)

(vi) मोहनजोदड़ो में विशाल स्नानागार नहीं था। यह लोथल में था। (सत्य/असत्य)

(vii) हड़प्पा सभ्यता के पतन का कारण बाढ़ और अग्नि भी माना गया है। (सत्य/असत्य)

(viii) सैन्धव सभ्यता में यातायात का प्रमुख साधन बैलगाड़ी था। (सत्य/असत्य)

(ix) कांस्य युगीन सभ्यता भारत की प्रथम नागरीय सभ्यता थी जो हमारे लिए गौरव का विषय था। (सत्य/असत्य)

(x) रेडियो कार्बन–14 (C-14) पद्धति के आधार पर 2350 ई० पू० से 1750 ई० पू० कांस्य युगीन सभ्यता की तिथि मानी गई है। (सत्य/असत्य)

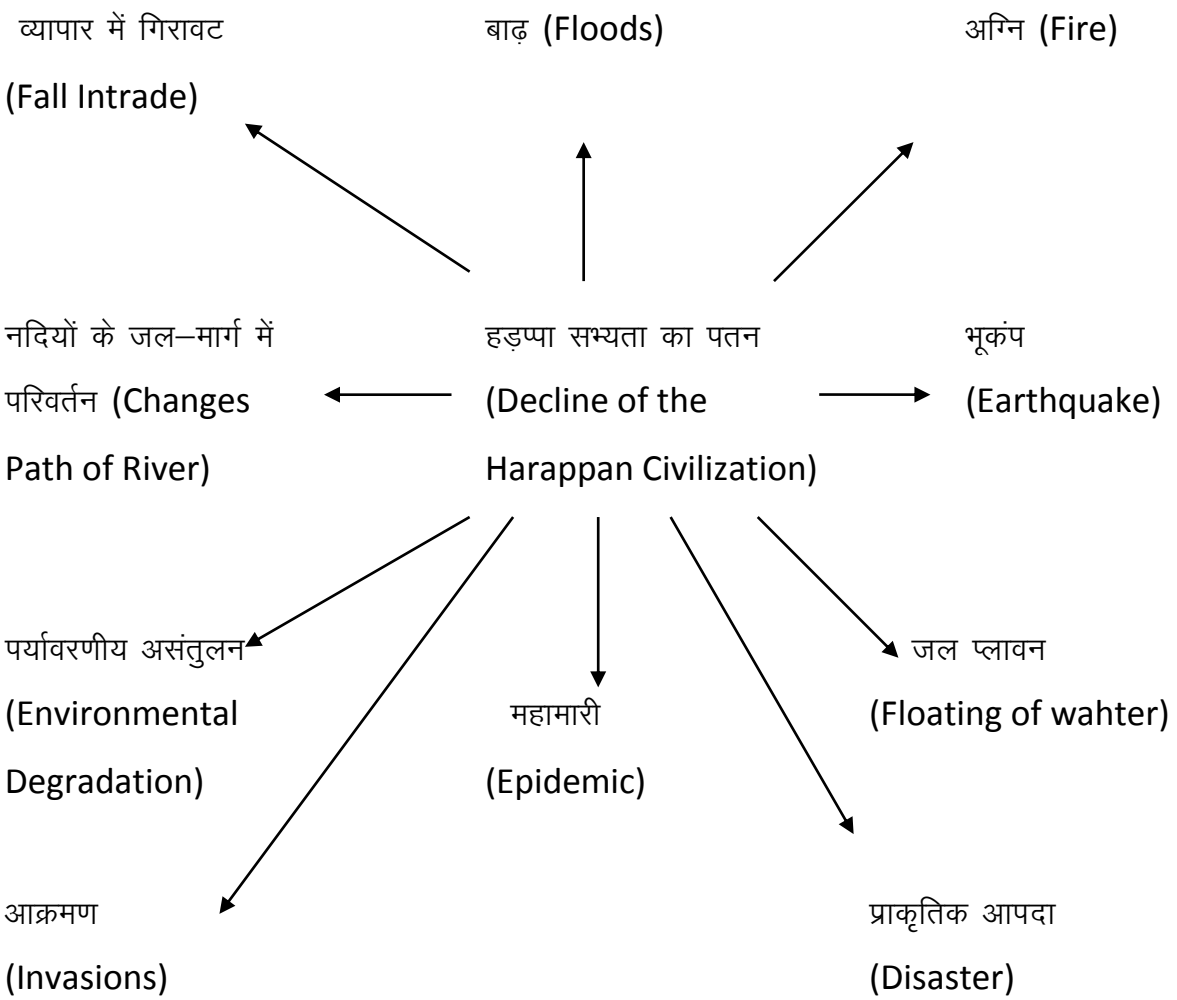

2.6 सारांश या संक्षिप्तिका (Summary)

- क्षेत्रफल की दृष्टि से प्राचीन सभ्याओं में हड़प्पा संस्कृति प्रसार सबसे अधिक है। यह सभ्यता त्रिभुजाकार में फैली हुई थी। इस संस्कृति का उदय ताम्रपाषाणिक पृष्ठभूमि में भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमोत्तर भाग में हुआ।

- हड़प्पा सभ्यता वर्तमान में मोंटगोमरी जिला, पि"चमी पंजाब (पाकिस्तान) में रावी नदी के तट पर है। इस सभ्यता की खोज का श्रेय रायबहादुर दयाराम साहनी को जाता है उन्होंने पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के महानिदेशक सर जॉन मार्शल के निर्देशन में 1921 ई० में किया। हड़प्पा सभ्यता का विस्तार उतर में जम्मू से लेकर दक्षिण में नर्मदा के मुहाने तक और पश्चिम में बलूचिस्तान के मकरान तट से लेकर पूर्व में मेरठ तक था। इसका क्षेत्रफल 12,99,600 वर्ग कि0मी0 था।
- 1826 ई० में सर्वप्रथम चार्ल्स मर्सन को हड़प्पा से बड़ी संख्या में ईंटें प्राप्त हुई थी। 1875 ई० अलेवजेण्डर कनिघम ने हड़प्पा के खण्डहरों का सर्वप्रथम उत्खनन कराया था।
- हड़प्पा सभ्यता से प्राप्त मुद्राओं की संख्या 200 से अधिक है। राणा घुण्डई के सबसे निचले स्तरों में घोड़े के दांत मिले है। हड़प्पा से आटा पीसने की चक्कियों के अवशेष मिले है। हड़प्पा से प्राप्त भण्डारागार का प्रमुख प्रवेश द्वार नदी की ओर से था। हड़प्पा के बर्तनों पर लेख प्राप्त हुए है यहाँ से प्राप्त बर्तनों में मानव आकृतियाँ भी दिखाई देती है।
- हड़प्पा से प्राप्त मुद्रा में गरूड का अंकन मिला है। एक काँसे की बनी एक नर्तकी की मूर्ति प्राप्त हुई है तथा ताँबे की बनी हुई एक 'इक्का गाड़ी' प्राप्त हुई है।
- रेडियो कार्बन–14 (C-14) पद्धति के आधार पर 2350 ई० पू० से 1750 ई० पू० हड़प्पा सभ्यता की तिथि मानी गई है। सैंधन सभ्यता में मुद्रा का निर्माण अधिका"ातः 'सेलखड़ी' से होता था।
- सिंधु सभ्यता के लोग गेहूँ, जौ, राई, मटर, तिल, सरसों आदि अनाज उगाते थे उन्हें नौ प्रकार की फसलों का ज्ञान था। वे गेहूँ और जौ की दो किस्में उगाते थे। सबसे पहले कपास पैदा करने का श्रेय सिंधु सभ्यता के लोगों को जाता है। क्योंकि कपास का उत्पादन सबसे पहले सिंधु क्षेत्र में हुआ। इसलिए यूनान के लोग इसे सिन्डन (Sindon) कहने लगे।
- सिन्धुकाल में यातायात का मुख्य साधन बैलगाड़ी था। बैलों के दो प्रकार थे – 1. कूबड़ और बड़े सींगवाला बैल 2. बिना कूबड़ और छोटे सींग वाला बैल। सिंधुवासी सूत कातना, कपड़ा बुनना तथा कपड़ा रंगना भी जानते थे।
- कालीबंगा घग्घर नदी के तट पर है। यहाँ से जुते हुए खेत, चुड़ियाँ, ईंट, अग्नि हवन कुंड, लकड़ी की नाली, साधारण चूल्हों के साथ तंदूरी चूल्हे भी मिलते हैं।
- मोहनजोदड़ो सिंधु नदी के दाहिने तट पर 250 मील की दूरी पर स्थित इसकी खोज 1922 ई० राखालदास बनर्जी, मार्टिमर व्हीलर ने की थी। यहाँ से विभिन्न प्रकार के साक्ष्य मिले जैसे – विशाल स्नानागार, पुरोहितों का आवास, महाविद्यालय, ठमकानों का बैक, कांस्य से निर्मित नग्न महिला मूर्ति, दाढ़ी वाले पुजारी की मूर्ति,

चमकते हुए बंदर का चित्र, एक श्रृंगी पशुओं वाली मुद्राएँ प्राप्त हुई। मोहनजोदड़ो में अब तक भवनों के नौ स्तर निकाले जा चुके। मोहनजोदड़ो का अर्थ सिंधी भाषा में 'मृतकों का टीला' है। मोहनजोदड़ो में एक अन्नागार मिला है, जो 45.71 मीटर लम्बा और 15.23 मीटर चौड़ा है। मोहनजोदड़ो में प्रत्येक छोटे या बड़े मकान के प्रांगण और स्नानागार होता था। यहां की जल निकास प्रणाली भी अद्भुत थी। मोहनजोदड़ो की सबसे अधिक चौड़ी सड़क 10 मीटर की होती थी जिसे राजपंथ कहा जाता था।

- हड़प्पा वासी व्यापार और अन्य लेन–देन के लिए वनज मापन हेतु मौटे तौर पर 16 या उसके गुणकों का उपयोग किया करते थे जैसे – 16, 64, 160, 320 और 640 आदि और यह परम्परा भारत में कुछ वर्षों पहले भी थी और 16 आने का मतलब एक रूपया होता था।
- कच्चे माल का आयात (i) चाँदी और टीन का – ईरान और अफगानिस्तान से। (ii) सोना–अफगानिस्तान, फारस और दक्षिणी भारत से, (iii) ताँबा – राजस्थान के खेतड़ी और बलूचिस्तान से (iv) सीसा – ईरान, अफगानिस्तान, राजस्थान से। (v) नीलमणि– महाराष्ट्र से (vi) सेलखड़ी – बलूचिस्तान, राजस्थान, गुजरात (vii) शिलाजीत – हिमाचल क्षेत्र से।
- हड़प्पा पुरातत्व का कालक्रम :–
  1. 1853 ई० – ए० कनिंघम ने हड़प्पा मुहर का पता लगाया।
  2. 1921 ई० – हड़प्पा में दया राम साहनी ने खोज की।
  3. 1931 ई० – मार्शल द्वारा मोहनजोदड़ो की खुदाई।
  4. 1938 ई० – मैके द्वारा समान आकार की खुदाई।
  5. 1940 ई० – वत्स द्वारा हड़प्पा की खुदाई।
  6. 1946 ई० – मोर्टिमर व्हीलर द्वारा हड़प्पा की खुदाई।
  7. 1947 के बाद – सूरजभान, एम० के धवलीकर, जे० पी० जोशी, बी० बी० लाल, एस० आर० राव, बी० के यापर, आर० एस०, बिष्ट, एवं अन्य द्वारा हड़प्पा सभ्यता और उससे संबंधित स्थलों की खुदाई।
- हड़प्पा नगरों के उत्खनन से अभी तक मंदिर के अवशेष नहीं मिले है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक मुहर एक स्वास्तिक का अंकन सूर्य पूजा का प्रतीक माना जाता है। हिन्दू धर्म में आज भी स्वास्तिक को पवित्र मांगलिक चिह्न के रूप में माना जाता है।

धार्मिक प्रतीक चिन्ह			
प्रतीक चिन्ह	महत्व	प्रतीक चिन्ह	महत्व

• ताबीज	प्रजनन शक्ति का प्रतीक	• बैल	शिव का वाहन
• बकरा	बलि हेतु	• स्वास्तिक	सूर्य उपासना का प्रतीक
• सयोगी शिव	योगीश्वर	• शृंग	शिव का रूप
• नाग	पूजा हेतु	• भैंसा	देवता की शत्रुओं पर विजय का प्रतीक
• युगल शवाधान	पति के साथ पत्नी का सती होना		

- सिंधु लिपि के बारे में सर्वप्रथम विचार व्यक्त करने वाले व्यक्ति अलेवजंडर कनिंघम थे, कनिंघमने 1873 ई० में विचार व्यक्त किया कि इस लिपि का संबंध ब्रह्मी लिपि से है। इस लिपि को पढ़ने का प्रयास सबसे पहले 1925 ई० में एल० ए० बैडेल ने किया था।
- हड़प्पा लिपि का सबसे पुराना साक्ष्य 1853 ई० मिला था और सम्पूर्ण लिपि की खोज 1923 ई० में पूरी हुई थी, हालाँकि अभी तक इसकी व्याख्या नहीं हुई है। कुछ ने संस्कृत के साथ और अन्य विद्वानों ने सुमेरियाई भाषा के साथ जोड़ने का प्रयास किया। लेकिन इनमें से कोई भी अध्ययन संतोषजनक नहीं है। हड़प्पा लिपि न पढ़े जाने के कारण साहित्य में हड़प्पा के लोगों का क्या योगदान रहा, कुछ कहा नहीं जा सकता है।
- पत्थर की मुहरों और अन्य वस्तुओं पर हड़प्पा लेखन के लगभग 4000 नमूने हैं। मिस्त्र और मेसोपोटामिया के विपरित, हड़प्पा ने लम्बे समय तक शिलालेख नहीं लिखा था। हड़प्पा लिपि में कुल मिलाकर हमारे पास लगभग 250 से 400 तक चित्रलेख या भावचित्रात्मक (पिवटोग्राफ) है और एक तस्वीर के रूप में इसके प्रत्येक अक्षर से कुछ ध्वनि, विचार (भाव) या वस्तु का अर्थ स्पष्ट होता है। इस लिपि में 270 वर्ण थे।
- हड़प्पा सभ्यता सम्भवतः 2500 से 1900 ईसा पूर्व बीच तक अस्तित्व में रही। हड़प्पा संस्कृति की नागरिकोत्तर अवस्था को उपसिंधु संस्कृति कहते हैं। यह उत्तर–हड़प्पा संस्कृतियाँ मूलतः ताम्रपाषाणिक हैं जिनमें पत्थर और ताँबे के औजारों का उपयोग होता था।
- जोर्वे बस्तियों में सबसे बड़ी दैमाबाद की बस्ती है, जो लगभग 22 हेक्टेयर में बसी थी और जहाँ 4000 की आबादी रही होगी इसके स्वरूप को आद्य नगरीय कहा जा सकता है, परन्तु अधिकांश जीर्वे बस्तियाँ ग्रामीण है।

- नागरिकोत्तर हड़प्पाई बस्तियाँ स्वात घाटी में मिली है। यहाँ लोग चाक पर लाल व काले रंग वाले मृदमांड तैयार करते थे इससे अच्छी कृषि और पशुपालन का कार्य भी होता था। आलमगीरपुर में उत्तर हड़प्पाई लोग संभवतः कपास का प्रयोग धागे के लिए करते थे।
- हड़प्पा सभ्यता के मनुष्यों की मृत्यु के बाद अंतिम संस्कार की प्रमुख रूप से तीन प्रथाएँ मिलती है :– (i) दाह संस्कार – इसमें शव को पूर्ण रूप जलाने के बाद भस्मावशेष को मिट्टी के पात्र में रखकर दफना दिया जाता था। (हिंदू विधि से मिलती प्रथा)। यह सर्वप्रमुख प्रथा थी। (ii) पूर्ण समाधिकरणः इसमें संपूर्ण शव को भूमि में दफना दिया जाता था। (iii) आं"ाक समाधिकरण : इसमें पशु–पक्षियों के खाने के बाद बचे शेष भाग को भूमि में दफना दिया जाता था। (पारसी विधि से मिलती प्रथा) सामान्यतः मृतकों को उत्तर–दक्षिणक्रम (सिर उत्तर की ओर व पैर दक्षिण की ओर) में दफनाया जाता था। इसके अपवाद हड़प्पा व कालीबंगा में दक्षिण–उत्तर क्रम में, लोथल में पूर्व–पश्चिम क्रम में रोपड़ में पश्चिम–पूर्व में मृतक को दफनाए जाने प्रमाण मिले हैं। एक कब्र में एक ही व्यक्ति को दफनाया जाता था परन्तु कालीबंगा से एक ओर लोथल से तीन युगल। युग्म समाधिकरण। शवाधान मिले हैं, जिनमें एक कब्र में दो–2 मृतक दफनाए गए हैं। रोपड़ की कब्र से मालिक के साथ कुत्ते के दफनाए जाने के प्रमाण मिले हैं। लोथल की एक कब्र से मृतक के साथ बकरे को दफनाए जाने के प्रमाण मिले है।

हड़प्पा सभ्यता के पतन में इतिहासकारों के विचार		
	ठतिहासकार	विचार
1.	गार्डन चाहल्ड व व्हीलर	सैन्य सभ्यता विदेशी आक्रम व आर्यो के आक्रम से नष्ट हुई।
2.	जॉन मार्शल	इस सभ्यता के विनाश के लिए भूकम्प उत्तरदायी था। प्रशासनिक शिथिलता के कारण इस सभ्यता का विनाश हुआ।
3.	अर्नेस्ट मैके जॉन मार्शल	सिंधु सभ्यता बाढ़ के कारण नष्ट हुई।
4.	फेयर सर्विस	संसाधन की कमी, वनों का कटाव एवं पारिस्थितिक असंतुलन पतन का कारण था।
5.	ऑरेल स्टाइन	जलवायु परिवर्तन के कारण यह सभ्यता नष्ट हो गई।
6.	मार्टीमर व्हीलर	हड़प्पा सभ्यता का आकस्मिक अंत हुआ था। हड़प्पा

		सभ्यता का आधार विदेशी था।
7.	लैम्ब्रिक	जनसंख्या वृद्धि
8.	एम० आर० साहनी	यह सभ्यता भू–तात्विक परिवर्तन के कारण नष्ट हुई।
9.	राइक्स व डेल्स डी० डी० कोशाम्बी	मोहनजोदड़ो के लोगों की आग लगाकर सामूहिक हत्या कर दी गई।

(महेश कुमार बर्णवाल : संक्षिप्त इतिहास NCERT सार, Cosmos पब्लिकेशन दिल्ली : 2019 P.P. 26-28)

कालक्रम (Time Line)

	Year BC (ई० पू०)	Event (घटना)
1.	7000	बलूचिस्तान में सबसे पुरानी कृषि बस्तियाँ
2.	पाँचवीं सहस्त्राब्दि	अनाज का अस्तित्व, मिट्टी की ईंटों का उपयोग
3.	4000	चोलिस्तान (पाकिस्तान) में पूर्व–हड़प्पा बस्ती
4.	3000 – 2000	सिन्धु और सरस्वती में भारी बारिश और पानी का प्रवाह
5.	2500 – 1900	विकसित हड़प्पा संस्कृति
6.	2000	शक्तिशाली राज्य एलाम का उदय। सरकोतड़ा में घोड़े का अवशेष
7.	1900 – 1500	गुजरात, राजस्थान, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में हड़प्पा संस्कृति का क्षरण काल
8.	1800	लोथल में चावल का उपयोग
9.	19–1200	उत्तर–शहरी हड़प्प संस्कृति
10.	1700	यमुना और सतलुज का सरस्वी
11.	1500 – 1200	वैदिक लोगों के एक समूह का भारतीय उपमहाद्वीप में आगमन

12.	300	उत्तरी भारत में पक्की ईंटों का उपयोग। ब्रह्मी लिपि में लेखन

(भारत का प्राचीन इतिहास – रामशरण शर्मा 2019 : 2019 P.89)

2.7 सूचक शब्द (Key-words)

• विवर्तनिक (टेक्टोनिक्) → (भूविज्ञान में) पृथ्वी की सतह की संरचनों से संबंधित	• सहस्त्राब्दि → एक हजार वर्ष के समूह को सहस्त्राब्दि कहते है।
• श्रेय → उपलब्धि या प्रतिष्ठा	• साक्ष्य → प्रमाण
• प्रांसगिकता → उपयोगिता	• अर्ध–शुष्क → आधा सूखा
• 40 मी० लम्बा और चौड़ा → एक बिघा	• प्रतिनिधिशासक – जनता के द्वारा चुना हुआ शासक
• एक हेक्टेयर = 2½ एकड़ (किले)	• एक एकड़ = 220 फुट लम्बा, चौड़ाई 198 फुट (220 X 198 = 436560 वर्ग 9 फीट)

2.8 स्वयं मूल्यांकन के लिए प्रश्न (Self-AssessmentTest)

भाग (Part) (क) बहुवैकल्पिक प्रश्न (Objective Types Questions)

(इनके उत्तरदायी और कोष्ठक में देखिए)

(i) हड़प्पा सभ्यता के अधिकांश मनसे किस पदार्थ के बने थे ?

(a) सेलखड़ी (Steatite) (b) सोना (Gold)

(c) ताँबा (Copper) (d) काँसा (Bronze) उत्तर– A

(ii) हड़प्पा सभ्यता (Harappan Civilization) के सर्वप्रथम किस केन्द्र (centres) की खोज हुई ?

(a) हड़प्पा (Harappan) (b) कालीबंगन (Kalibangan)

(c) चन्दुहड़ो (Chanhundaro) (d) मोहनजोदड़ो (Mohanjodaro)उत्तर– A

(iii) सिंधु घाटी सभ्यता के लोग परिचित नहीं थे –

(a) गाय (Cow) (b) कुत्ता (Dog) (c) घोड़ा (House) (d) बिल्ली (Cat) उत्तर– C

(iv) हड़प्पा सभ्यता के लोग किस उपज के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध थे ? उत्तर – B

(a) जौ (Barley) (b) कपास (Cotton) (c) गेहूँ (Wheat) (d) बाजरा (Millets)

(v) भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (Archaeological Survey of India) के प्रथम डायरेक्टर जनरल कौन थे ?

(a) आर०बी० दया राम साहनी (R.B.Daya Ram Sahni)

(b) जॉन मार्शल (Johan Marshall)

(c) अलेक्जैंडर कनिंघम (Alexander Cunnigham)

(d) आर०ई०एम० व्हीलर (R.E.M. Wheeler) उत्तर– C

(vi) हड़प्पा सभ्यता के लोगों का मुख्य व्यवसाय क्या था ?

(a) पशुपालन (Animal Rearing) (b) उद्योग (Industries)

(c) कृषि (Agriculture) (d) व्यापार (Trade) उत्तर – C

(vii) पुरोहित राजा की मूर्ति हमें कहाँ से मिली है ?

(a) संघोल (Sanghal) (b) बनावली (Banawali)

(c) धौलावीरा (Dholavira) (d) मोहनजोदड़ो (Mohanjodaro) उत्तर – D

(viii) हड़प्पा सभ्यता के बाट किस पदार्थ से बनाए गए थे ?

(a) सोना (Gold) (b) सेलखड़ी (Steatite)

(c) पत्थर (Stone) (d) चर्ट पत्थ्झर (Chert Stone) उत्तर – D

(ix) हड़प्पा सभ्यता के लोग किस धातु से परिचित नहीं थे ?

(a) सोना (Gold) (b) ताँबा (Copper)

(c) लोहा (d) काँसा (Bronze) उत्तर – C

(x) हड़प्पा सभ्यता से संबंधित सर्वाधिक मुहरें कहाँ से प्राप्त हुई है ?

(a) कालीबंगन (Kalibangan) (b) कोटला निहंग खाँ (Kotla Nihang Khan)

(c) मोहनजोदड़ो (Mohanjodaro) (d) आलमगीरपुरा (Alamgirpur) उत्तर – C

भाग (Part) – ख (Essay Type Question/Long Answer type Question)

प्र.1 हड़प्पा सभ्यता के महत्वपूर्ण स्थलों को दिखाने के लिए मानचित्र पर रूपरेखा को चिन्हित कीजिए।

(Mark/Label on the outline map of the world show/Locate important Sites of Harappan Civilization).

प्र.2 हड़प्पा सभ्यता की नगर योजना, आर्थिक संगठन एवं राजनैतिक संगठन की विवेचना कीजिए।

(Discuss the town planning of Harappan Civilization, Economy Organization and political organization).

प्र.3 हड़प्पा सभ्यता के मुख्य केन्द्रों का वर्णन कीजिए।

(Describe the main centres of Harappan Civilization).

प्र.4 हड़प्पा सभ्यता की उत्पति की व्याख्या करें। हड़प्पा सभ्यता की कला पर चर्चा कीजिए।

(Explain the Extent of Harappan Civilization. Discuss the Arts of Harappan Civilization.)

प्र.5 हड़प्पा सभ्यता के पतन से संबंधित मुख्य कारणों पर प्रकाश डालिए।

(Throw Light on the main causes for the decline of Harappan Civilization.)

प्र.6 हड़प्पा सभ्यता के विस्तार या प्रसार के बारे में आप क्या जानते है?

(What do you mean by Extent of Harappan Civilization)

(ग) लघु उत्तीय प्रश्न (Short Answer Type Question)

(A) रोपड़ (Ropar) (B) धौलवीरा (Dholavira) (C) सुरकोतड़ा (Surkotada) (D) बनावली (Banawali) (E) मिताथल (Mithal) (F) भोजन (Diet) (G) शिव की उपासना (Worship of Lord Shiva) (H) मुहरें (Seals) (I) चित्रकारी (Painting) (J) विशाल स्नानागार (The Gread Bath) (K) तोल तथा माप (Weights and Measures) (L) कृषि (Agriculture) (M) रोजदी (Rozadi) (N) बर्तन बनाने की कला (Art of Pottery) (O) लिपि (Script)

2.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to Check your Progress)

(भाग–क)

(i) लोहा

(ii) हड़प्पा, कांस्य युगीन सभ्यता

(iii) मरकू का टिल्ला

(iv) गुजरात, अहमदाबाद

(v) दयाराम साहनी, 1921

(vi) राखल दास बनर्जी

(vii) काले रंग की चूड़ियाँ

(viii) घोड़ा

(ix) भाव चरित्रात्मक

(x) कनिघम

(भाग –ख)

(i) सत्य

(ii) सत्य

(iii) असत्य

(iv) सत्य

(v) असत्य

(vi) असत्य

(vii) सत्य

(viii) सत्य

(ix) सत्य

(x) सत्य

2.10 संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें (References and Suggested Readings)

- महे"ा कुमार बर्णवाल – संक्षिप्त इतिहास NCERT सार, कोसमोस पब्लिकेशन मुखर्जीनगर, दिल्ली जनवरी 2019।
- द्विजेन्द्र नारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली – प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यानन्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नवम्बर 2018
- डी०एम० झा प्राचीन भारत का इतिहास विविध आयाम, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय पुनर्मुद्रण : अक्तूबर 2016 ।
- Proof – Manjeet Singh Sodhi Themes in Indian History. Modern Publishers Jalandhar, 2009
- स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन – सामान्य अध्ययन, राजीव अहीर, नई दिल्ली
- यूनिक सामान्य अध्ययन – डा. विनय कुमार सिंह, यूनिक पब्लिकेशन्ज, नई दिल्ली
- रामशरण शर्मा– भारत का प्राचीन इतिहास, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली द्वारा चौथा हिंदी संस्करण भारत में प्रकाशित।

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE : B.A. 106	**AUTHOR : MR. MOHAN SINGH BALODA**
LESSON NO : 3	**VETTER:**
वैदिक संस्कृति (1500 ई०पू०–600 ई०पू०) VEDIC CULTURE (1500 BC-600 BC)	

अध्याय–संरचना (Lesson Structure)

3.1 अधिगम उद्दे"य (Learning Objective)

3.2 परिचय (Introduction)

3.3 **अध्याय के मुख्य बिन्दु** (Main Body of Text)

3.3.1 पूर्व वैदिक काल या ऋग्वैदिक काल (1500–1000 ई.पू.) Prevedic Period (1500-1000 B.C.)

3.3.2 राज्यव्यवस्था (Polity)

3.3.3 समाज (Society)

3.3.4 धर्म (Religion)

3.3.5 आर्थिक स्थिति (Economic Conditions)

3.4 **अध्याय का आगे का मुख्य भाग** (Further main body of the text)

3.4.1 उत्तर वैदिक काल (Post/Later Vedic Period) (1000-1600 B.C.)

3.4.1.1 राज्य व्यवस्था (Polity)

3.4.1.2 समाज (Society)

3.4.1.3 छात्र क्रियाकलाप (Student Activity)

3.4.1.4 धर्म (Religion)

3.4.1.5 आर्थिक जीवन (Economic Life)

3.4.1.6 साहित्य सामाजिक संस्थाएँ (Literature Social Institution)

3.4.1.7 वर्ण (Varna)

3.4.1.8 जाति (Caste)

3.4.1.9 अस्पृ"यता (Untouchability)

3.4.1.10 लैंगिक संबंध (Gender Relations)

3.5 प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

3.6 सारांश (Summary)

3.7 संकेत सूचक (Key Words)

3.8 स्वंय मूल्यांकन के लिए परीक्षा (Self-Assessment Test) (SAT)

3.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answer to Check Your Progress)

3.10 सहायक संदर्भ ग्रंथ एवं अध्ययन सामग्री (References/Suggested Readings)

3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

- हमारा अतीत हमें किस प्रकार से प्रभावित करता है।
- शिक्षार्थियों की इतिहास के प्रति रूचि विकसित करना।
- इतिहास सिर्फ इतिहास नहीं है। यह वर्तमान को भी प्रतिबिम्बित करता है। इस पर पाठकों से परिचर्चा करना।
- अधिगमकर्ताओं को वैदिक संस्कृति के रूब–रूब करवाना।
- पाठकों को पूर्व वैदिक काल या ऋग्वैदिक काल की राज्यव्यवस्था, समाज, धर्म, आर्थिक स्थित से अवगत करवाया जायेगा।
- छात्रों को उतरवैदिक काल की राज्यव्यवस्था, धर्म, साहित्य सामाजिक संस्थाओं, समाज आदि के ज्ञान की जानकारी देना।

- वर्तमान समय में इसकी प्रासंगिकता पर जिज्ञासु पाठकों के बीच चर्चा करना।
- इस अध्याय के माध्यम से अधिगमकर्ताओं में सूझ व सृजनात्मकता विकसित करना।

3.2 परिचय (Introduction)

हड़प्पा सभ्यता के पतन के बाद एक नवीन सभ्यता का उदय हुआ जिसे इतिहास में वैदिक सभ्यता के नाम से जाना जाता है। अर्थात् सिंधु सभ्यता के पतन के बाद जो नवीन संस्कृति प्रकाश में आई उसके विषय में हमें सम्पूर्ण जानकारी वेदों से मिलती है। इसलिए इस काल को हम 'वैदिक काल' के नाम से जानते है। इस संस्कृति के निर्माता या जनक आर्य थे। इसलिए कभी–2 इसे आर्य सभ्यता भी कहा जाता है। आर्य शब्द का अर्थ है – श्रेष्ठ, उदात्त, अभिजात्य, कुलीन, उत्कृष्ठ, स्वतंत्र आदि। आर्यों ने जिन मूल्यों की स्थापना की वे आज भी जीवन के आदर्श माने जाते है। आर्यों को विश्व की सर्वश्रेष्ठ एवं सुसंस्कृत जाति माना जाता है। आर्यों का रंग गोरा, कद लम्बा, नाक लम्बी, शरीर हृष्ट–पुष्ट था। हमेशा चेहरे पर लाली दिखाई देती थी। आर्य मूल निवासी कहाँ के थे। वे भारत में कब आए। इस विषय में इतिहासकार एक मत नहीं है। आर्यों का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशुपालन था। भारतीय इतिहास में 1500 ई० पू० से 600 ई० पू० तक के काल–खण्ड को 'वैदिक सभ्यता' की संज्ञा दी जाती है। अध्ययन सुविधा की दृष्टि से वैदिक सभ्यता को मुख्यतः दो भागों में बाँटा गया है –

1. पूर्व–वैदिक काल या ऋग्वैदिक काल (1500–1000 ई०पू०)

2. उत्तर–वैदिक कालीन (1000 ई० पू० से 600 ई० पू०)

(उत्तर वैदिक काल का समय कुछ विद्ववानों ने 1000–500 ई० पू० माना है, लेकिन ज्यादा इतिहासकारों ने 1000 ई० पू० से 600 ई० पू० माना है) यह सर्वमान्य है।

आर्यों का भारत में आगमन कई चरणों में हुआ था। शुरूआत में आर्य सिंधु नदी और सरस्वती नदी के किनारे आकर बस गए थे। इस युग को पूर्व–वैदिक काल (1500–1000 ई० पू०) कहते है। इस काल की जानकारी का स्त्रोत ऋग्वेद है, इसलिए इस काल खंड को ऋग्वैदिक युग भी कहते हैं। कुछ समय के बाद आर्य लोग आगे बढ़े और गंगा की घाटी में बस गए उन्होंने अपने अधिकार क्षेत्र को पुनर्नामित 'आर्यावर्त' के नाम से पहचान बनाई। जिसका अर्थ है आर्यो का देश। जिस की समय अवधि (1000–600 ई० पू०) मानी जाती है। जिसे उत्तर–वैदिक कालीन कहा जाता है। इसकी जानकारी हमें यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद से मिलती है। इस अध्याय में हम आगे चलकर वैदिक सभ्यता की विभिन्न गतिविधियों पर विस्तार से परिचर्चा करेंगें।

3.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

3.3.1 पूर्व वैदिक काल या ऋग्वैदिक काल (1500–1000 ई० पू०) (Pre Vedic Period (1500-1000 BC)

3.3.2 राज्यव्यवस्था (Polity)

पूर्व वैदिक काल में आर्यो ने राजनीतिक एवं प्रशासनिक इकायें की स्थापना की नींव डाल दी थी। अब कबीले जनों में परिवर्तित होने लगे थे और उनमें वर्चस्व की लड़ाई लड़ी जाने लगी। अब कबीले जनों में परिवर्तितों होने लगे थे और उनमें वर्चस्व की लड़ाई लड़ी जाने लगी। कालानुक्र में भारत में आर्यो–2 के बीच अनेक लम्बे–2 संघर्ष हुए। ऋग्वेद के अनुसार, इन संघर्षों के बाद सुदास महान् विजेता के रूप में स्थापित हुआ। इन संघर्षों का सकारात्मक परिणाम यह हुआ कि भारत में एक सुदृढ़ राजनीतिक संगठन की स्थापना हुई।

(1) राजनीतिक इकाइयां – ऋग्वैदिक काल में राजनीतिक दृष्टि से पाँच इाइियां प्रचलित थी – 'गृह', 'ग्राम', 'विश', 'जन' और राष्ट्र इनमें से सबसे छोटी इकाई 'गृह' और बड़ी राष्ट्र थी। वे निम्न प्रकार से थी।

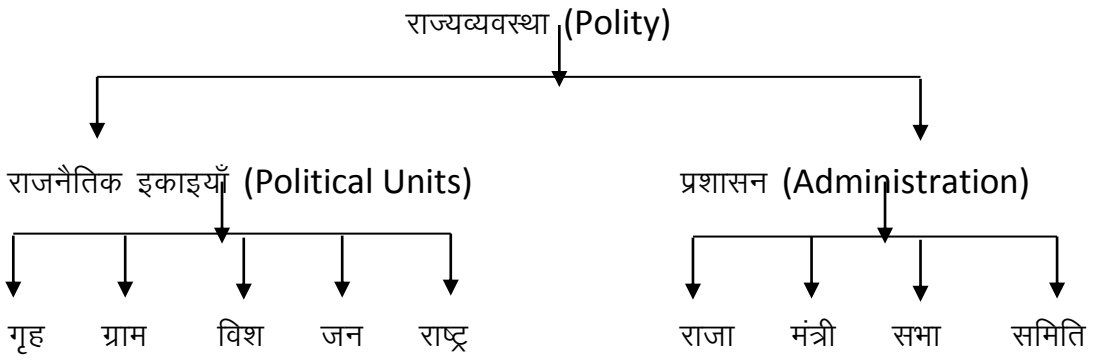

(i) गृह – इसे 'कुल' और 'परिवार' भी कहते थे। यह सामाजिक व्यवस्था के साथ–साथ राजनीतिक व्यवस्था की भी लघुतम इकाई थी। परविार के प्रमुख को 'कुलप' या 'गृहपति' कहते थे। 'कुलप' या 'गृहपति' का पद वंशानुगत था। प्रकृत्या पितृसत्तात्मक परिवार में पिता की प्रधानता होती थी, किन्तु माताओं को भी पर्याप्त अधिकार प्राप्त होते थे।

(ii) ग्राम (Gram) – अनेक ग्रामों के समूहों को मिलाकर 'ग्राम' नामक इाकई का निर्माण होता था। ग्राम–प्रधान को 'ग्रामणी' (Rural) कहते थे। इसकी नियुक्ति का आधार निर्वाचन, मनोनयन अथवा वंश था, इसके संबंध में पर्याप्त जानकारी नहीं मिलती। अनुमानतः 'ग्रामणी' कुटुम्बों में सर्वाधिक सम्माननीय, वयस्क और अनुभवी व्यक्ति होता था। उच्च स्तरीय इकाई द्वारा शासन की प्रमुख प्रशासनिक इकाई के रूप में ग्रामों की रक्षा, व्यवस्था तथा नियंत्रण की उपयुक्त व्यवस्था की जाती थी।

(iii) दिश – अनेक ग्रामों को मिलाकर 'विश' का निर्माण किया जाता था। 'विश' का प्रधान 'विशपति' कहलाता था।

(iv) जन – अनेक दिशों का समूह 'जन' कहलाता था। ऋग्वेद में यादव जन, भरत जन आदि पंच जन का उल्लेख है।

(v) राष्ट्र – एक सम्पूर्ण राज्य के लिए 'राष्ट्र' शब्द प्रयुक्त होता था। ऋग्वेद में राष्ट्र के पर्यायवाची के रूप में 'गण' का भी उल्लेख है। ऐसा अनुमान किया जाता है 'राष्ट्र' और 'गण' शब्द ऋग्वैदिक भारत में संघात्मक शासन प्रणाली का संकेत प्रस्तुत करते है। यह भी माना जाता है कि 'जन' शासन की प्रांतीय इकाई थी, जबकि 'राष्ट्र' केन्द्रीय इकाई।

(2) प्रशासन इकाइयां (Administration Units)

(i) राजा (King) – ऋग्वेद में इंद्र या वरुण को राजा (सम्राट) के रूप में व्याख्यायित किया गया है। शासन–व्यवस्था का प्रधान राजा या सम्राट ही होत था। ऋग्वेद में राजा को प्रजा का रक्षक (गोपजनस्य) और नगरों पर विजय पाने वाला (पुरन्भेत्ता) कहा गया है। ऋग्वेद में राज्याभिषेक के दौरान दिए जाने वाले आर्शीवाद के मंत्र भी मिलते है। राजा का पद सामान्यतः वंशानुगत होता था, किन्तु विशिष्ट परिस्थितियों में जनता, राजवंश या उच्च पदाधिकारी उपयुक्त व्यक्ति को शासक के रूप में चुन लेते थे।

ऋग्वैदिक काल में राजा का प्रमुख कार्य प्रज की रक्षा, शत्रुओं का नाश करना, धर्म की स्थापना, शास्त्र–समस्त विधि के अनुसार आचरण करना, निष्पक्ष न्याय तथा दण्ड की व्यवस्था करना और प्रजा की आध्यात्मिक एवं भौतिक उन्नति के लिए नियमित प्रयत्न करना था।

(ii) मंत्री (Ministers) – ऋग्वैदिक शासन–व्यवस्था में राजा के बाद 'मंत्री' अथवा 'पुरोहित' का स्थान आता था। मंत्री राजा के पथ–प्रदर्शक, परामर्शदाता, दार्शनिक तथा मित्र होते थे। वशिष्ठ, विश्वामित्र, देवापि आदि ऐसे ही पुरोहित थे। ऋग्वेद में मंत्रियों अथवा मंत्रिपरिषद् का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

(iii) सभा (Sabha) – ऋग्वेद में 'सभा' का उल्लेख तो किया गया है, किंतु उसकी कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं दी गई है। इसके संगठन अथवा कार्यों के विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती। ऐसा माना जाता है कि ऋग्वेद में सम्मेलन कक्ष को 'सभा', सभा के प्रमुख व्यक्ति को 'सभासद' तथा सभा के योग्य व्यक्ति को 'सभेय' कहा जाता था। 'सभा' नामक संस्था की उत्पत्ति ऋग्वेद के उत्तरकाल में हुई और 'सभा' में राज्य के वयोवृद्ध तथा सम्माननीय व्यक्ति सम्मिलित होते थे।

(iv) समिति (Samiti) – यह एक प्रशासनिक इकाई थी और इसमें राज्य के साधारण जन भाग लेते थे। ऐसा समझा जाता है कि यह परामर्शदात्री संस्था थी और राजा समय–समय पर इस संस्था से विचार–विमर्श किया करता था। इस संस्था का प्रमुख कार्य राजा का वरण करना था। वैधानिक रूप से 'समिति' सर्वप्रधान थी और ऋग्वेद में उल्लिखित है कि समस्त प्रजा की उपस्थिति में 'समिति' राजा का निर्वाचन करती थी। 'सभा' तथा 'समिति' राजनैतिक महत्व की संस्थाएं थी और राजा पर अंकुश रखने का कार्य करती थीं।

3.3.3 समाज (Society)

प्रायः ऐसा माना जात है कि ऋग्वैदिक समाज ग्रामीण समाज था, किन्तु आर्यों ने एक ऐसे समाज की स्थापना की थी, जिसका आधार सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक था। इस काल के लोगों का जीवन कबायली जीवन से मिलता–जुलता था, इसलिए वे युद्धप्रिय थे और उनकी रुचियां सामान्य तथा कुछ हद तक असम्य थीं। परंतु, जिस प्रकार की विकसित सोच वाला रूढ़ि–विमुख व स्वतंत्र विचार वाला समाज ऋग्वैदिककाल में था, वैसा समाज भारत में फिर कभी स्थापित नहीं हो सका। इस काल में न तो जातिगत भेदभाव था, न वर्ग–विभेद था और न ही स्त्रियों को हीनता की भावना से देखा जाता था।

(i) वर्ण–व्यवस्था (Varna System) – ऋग्वेद के दसवें एवं अंतिम मण्डल में पुरुष सूक्त में 'विराट पुरुष' द्वारा चार वर्णों की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है– 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहु राजन्यः कृतः उरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रो अजायत', अर्थात् विराट् पुरुष के मुख से ब्राह्मणों की, बाहुसे राजन्य (क्षत्रिय) की, उदर से वैश्य की तथा पद से शूद्रों की उत्पत्ति हुई। इसी के आधार पर ब्राह्मणों का कार्य अध्ययन–अध्यापन (बुद्धिपरक कार्य), क्षत्रियों का कार्य युद्ध (वीरतापूर्ण कार्य), वैश्यों का कार्य व्यवसाय (वस्तुओं का व्यापार) और शूद्रों का कार्य अन्य तीनों वर्णों की सेवा करना था। ऋग्वैदिक वर्ण–व्यवस्था जन्मना नहीं कर्मणा थी। ऐसा माना जाता है कि ऋग्वेद में दसवां मण्डल बाद में जोड़ा गया है, इसलिए ऋग्वैदिक काल के संदर्भ में मुख्य रूप से दो ही जातियों अथवा वर्गों की चर्चा की जाती है, जिन्हें आर्य और अनार्य की संबा दी जाती है।

ऋग्वैदिक काल में शक्ति–सम्पन्न वर्ग 'आर्य' था, जबकि दास, दस्यु (असुर) के लिए 'अनार्य' पद का प्रयोग किया गया है। आर्यों एवं अनार्यों का भेद केवल सांस्कृतिक दृष्टि से ही नहीं था, अपितु इनमें शारीरिक भेद भी था। ऋग्वेद के अनेक संदर्भों से ज्ञात होता है कि धर्म, भाषा, रीति–रिवाज तथा सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी आर्यों एवं अनार्यों के बीच व्यापक भेदभाव था।

(ii) परिवार (Family) – ऋग्वैदिक समाज निश्चय की पितृसत्तात्मक था, परंतु नारी को मातृरूप में पर्याप्त महत्त्व प्राप्त था। परिवार का ज्येष्ठ पुरुष–सदस्य प्रधान होता था, जिसे 'गृहपति' या 'कुलप' कहा जाता था। 'गृहपति' का

पद वंशानुगत होता था तथा परिवार के सभी सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते थे। 'गृहपति की पत्नी' को भी सम्मान मिलता था।

सामान्यतः पुत्र, पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता था, किंतु कुछ परिस्थितियों में पैतृक सम्पत्ति का विभाजन भी किया जाता था। पिता की सम्पत्ति पर पुत्री का अधिकार नहीं होता था। संयुक्त परिवार प्रणाली होने के कारण उत्तरदायित्व भी समान तथा सामूहिक था। परिवार के सम्मान, पारिवारिक परम्पराओं, रीति–रिवाजों तथा मान्यताओं के पालन में समस्त कुटुम्ब तत्पर रहता था।

(iii) स्त्रियों (Women) – ऋग्वैदिक समाज में नारियों की भी महत्त्वपूर्ण भागीदारी थी। पत्नी अपने पति के साथ धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेती थी। ऋग्वेद के मंत्रों में कहा गया है कि 'पत्नी ही गृह है, वही गृहस्थी है तथा उसी में आनन्द समाहित है।' इस काल में पुत्र और पुत्री के बीच कोई विशेष भेदभाव का उल्लेख तो नहीं हैं, किंतु इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि उनकी आकांक्षा रहती थी कि 'उनके घर संतानों से परिपूर्ण हों और परिवार में वीर पुत्रों की कमी नहीं हो।' इस काल खण्ड में नारियों को राजनीति में भी भाग लेने का अधिकार था और शिक्षा प्राप्ति में भी उन्हें कोई बाधा नहीं थी। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं का निर्माण विदुषियों ने किया था। ऋग्वेद में विष्पला नामक एक महिला–योद्धा का उल्लेख भी मिलता है।

(iv) खानपान (Diet) – वैदिक आर्य भोजन के रूप में मांसाहर और शाकाहार दोनों को पसंद करते थे। अजावयः – भेड़ और बकरी मांस के लिए उपयुक्त माने जाते थे और इन्हें ही यज्ञीय पशु भी कहा जाता था। ऋग्वेद में गाय 'अघन्या' – नहीं मारे जाने योग्य, कही गयी है। ऋग्वैदिक काल में सामान्यतः शाकाहार ही प्रचलित था, विशिष्ट अवसरों पर ही मांसाहार का प्रयोग किया जाता था। खाद्यान्न के रूप में गेहूं, जौ, धान, उड़द, मूंग आदि सामान्य रूप से प्रचलित थे।

ऋग्वैदिक काल में सुरापान निन्दित था, निषिद्ध नहीं। इस काल में निश्चित रूप से सुरापान किया जाता था। सुरापान विशेष रूप से यज्ञादि के अवसर पर किया जाता थ। सुरा देवताओं को भी अर्पित की जाती थी। ऋग्वेद के नवें मण्डल तथा 6 अन्य सूक्तों के सोम की स्तुति की गई है। सोम–रस मूजवंत पर्वत पर अथवा कीकटों के देश में उत्पन्न होता था। ऋग्वेद में सोम–रस की मादकता तथा उसकी आनंददायिनी शक्ति का वर्णन मिलता है।

(v) पहनावा (Cloth) – आय जन अधोवस्त्र, उत्तरीय तथा अधिवास धारण करते थे। वस्त्रों का निर्माण सूत, ऊन तथा मृगचर्म से होता था। पेशस्कारी नामक स्त्रियों सूई द्वारा कढ़ाई करके वस्त्र बनाती थीं। ऋग्वेद में सिर पर धारण की जाने वाली पगड़ी का भी उल्लेख मिलता है, जिसे 'ऊष्णीस' कहते थे।

आर्य विशेषकर नारियां श्रृंगार–प्रिय थीं। वेणी स्त्री की सुंदरता का प्रतीक मानी जाती थी। श्रृंगार विविध प्रकार के फूलों तथा आभूषणों द्वारा किया जाता था। आर्य पुरुष भी लंबे बाल रखते थे। दाढ़ी को '"मेक्षु' कहा जाता था और क्षौर कर्म करने वाले नाई को 'वप्ता' कहा जाता था।

इस काल में स्त्री तथा पुरुष समाज रूप से आभूषण–प्रिय थे। कानों में कर्णशोभन, गले में निष्क, हाथों में कड़े, पैरों में खडुवे, छाती पर सुनहले पदक, गली में मणियां आदि इस काल के प्रमुख आभूषण थे। ऋग्वेद में माथे के टीके के रूप में 'क्रम्ब', भुजबन्ध, केयूर, नुपूर, कंकड़, मुद्रिका, खेदि आदि आभूषणों का भी उल्लेख मिलता है। इस काल में सोना, चांदी, कीमती पत्थर, हाथीदांत, मोती–मूंगा आदि का प्रयोग आभूषण–निर्माण में होता था।

वर्ण–व्यवस्था

Varna-System

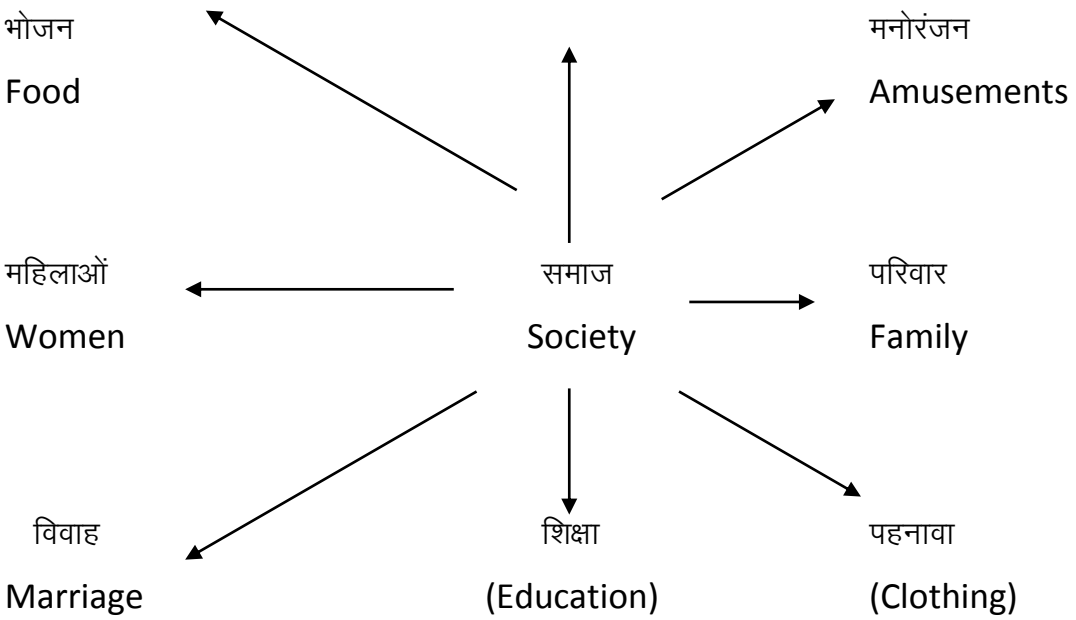

(vi) भोजन (Food) – ऋग्वैदिक काल में शाकाहारी तथा माँसाहारी दोनों प्रकार का भोजन करते थे। शाकाहारी भोजन में आर्य गेहूँ, जौ आदि की रोटियाँ बनाकर खाते थे। दूध, घी, मक्खन आदि का प्रयोग प्रचुर मात्रा में करते थे। इसके साथ–साथ वे विभिन्न प्रकार के फलो एवं सब्जियों का प्रयोग भी करते थे। माँसाहारी भोजन में भेड़ और बकरी आदि का माँस खाते थे लेकिन गाय का वध निविद्ध था। आर्य मधु तथा कुछ अन्य पेय पदार्थों का भी सेवन करते थे। सोमरस इनका प्रिय पेय पदार्थ था, जिसका प्रयोग धार्मिक अवसरों पर करते थे।

(vii) शिक्षा (Education) – महिलाओं पुरुषों दोनों के लिए शिक्षा ही समुचित व्यवस्था थी। शिक्षा कार्य गुरूकुल में किया जाता था। शिक्षा मौखिक रूप से दी जाती थी। स्मरण शक्ति पर विशेष बल दिया जाता था। शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण व व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना था।

(viii) विवाह (Marriage) – वैदिक काल में विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता था। बालिकाएं अपने पिता की आज्ञानुसार विवाह करती थीं, परन्तु साथ ही बालिकाए अपने पति को चुनने के लिए स्वतंत्र भी थी। साधारण वर्ग में एक पत्नी तथा उच्च वर्ग में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी। विवाह सजातीय तथा अन्तर्जातीय दोनों प्रकार से होते थे कुछ साक्ष्य एवं उल्लेख आजीवन अविवाहित रहने वाली कन्याओं के भी मिले है इन कन्याओं को अमाजू कहा जाता था। पुनर्विवाह का भी प्रचलन था, विधवा महिला अपने देवर व अन्य किसी पुरुष से विवाह कर सकती थी। लेकिन बाल विवाह का कोई भी उल्लेख नहीं मिलता है। विवाह के दो मुख्य संस्कार थे– 'पाणिग्रहण' और 'अग्नि परिक्रमा'।

3.3.4 धर्म (Religion)

ऋग्वैदिक काल में अनेक प्रकार के देवी–देवताओं एवं प्राकृतिक शक्तियों की आराधना की जाती थी। ऋग्वेद में कुल 33 देवता माने जाते है। इनमें से तीन सबसे अधिक महत्वपूर्ण थे इन्द्र, अग्नि तथा सोम है। इन्द्र देवता को ऋग्वैदिक युग सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। इन्द्रके 250 सूक्त है। इन्द्र को वर्षा का देवता भी माना गया है। अग्नि के 200 तथा सोम के लिए 100 से अधिक मंत्र रचे गए है। अग्नि की भूमिका जंगलों को जलाने, खाना पकाने आदि कार्यों में थी। सोम को वनस्पतियों का अधिपति माना गया है तथा एक मादक रस सोमरस इसी के नाम पर पड़ा। पृथ्वी को जगतमाता कहा जाता है। सूर्य की पूजा काफी भक्ति भाव से की जाती थी। रूद्र उग्र देवता थे। उग्ररूप में रूद्र थे तथा योगी रूप में शिव थे। स्तुति, सूक्ति, स्तवत प्रशंसा आदि से देवताओं को प्रसन्न किया जाता था। देवताओं की पूजन–प्रणाली में स्तुति अथवा प्रार्थना सबसे सरल, सुबोध और सुविधाजनक पद्धति थी। ऋग्वेद में देवताओं के लिए पवित्र आचरण का आग्रहहै। ऋग्वेद देवताओं के चार प्रकार बताए गए है – दिव्य (स्वर्गीय देवता), पार्थिव (पृथ्वी के देवता), गोजात (गाय से उत्पन्न या संबद्ध देवता) अप्य (जल से उत्पन्न या संबंद्ध देवता)। वरूण को जल या समुद्र का देवता माना गया है। इसे ऋत् अर्थात् प्राकृतिक संतुलन का रक्षक कहा गया है। मारूत आँधी के देवता के रूप में जाने जाते थे। देवताओं में कुछ देवियाँ, जैसे अदिति और ऊषा, जो प्रायत के प्रतिरूप है। सामान्यतः प्रत्येक कबीले या गोत्र का अलग देवता होता था।

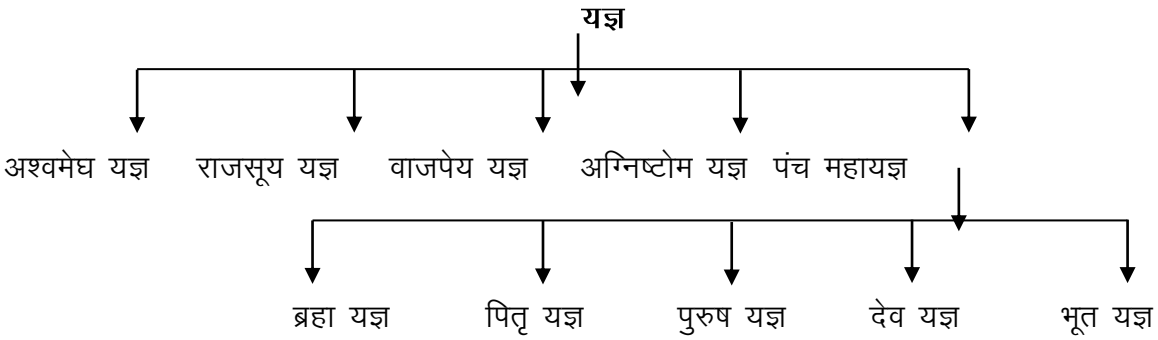

(1) अश्वमेघ यज्ञ – यह यज्ञ राजा के प्रभुत्व को चुनौती था। युवराज के राज्याभिषेक के बाद अन्य राज्यों को चुनौती देते हुए एक घोड़ा छोड़ दिया जाता था। यह घोड़ा जिन–2 राज्यों से होकर गुजरता था उसे राजा के अधीन मान लिया जाता था। यदि कोई शासक इसका विरोध करता तो उसे घोड़े के स्वामी नरेश से युद्ध करना पड़ा था।

(2) राजसयू यज्ञ – यह यज्ञ किसी राजा के राज्याभिषेक के लिए आयोजित शक्ति का प्रदर्शन करना था।

(3) वाजपेय यज्ञ – यह एक गोत्र के राजाओं के मध्य रथदौड़ भी इसका उद्देश्य शौर्य एवं शक्ति का प्रदर्शन करना था।

(4) अग्निश्टोम यज्ञ – इस यज्ञ में सोम रस का पान किया जाता था तथा अग्नि में पशु बलि चढ़ाई जाती थी।

(5) पंचमहा यज्ञ – ब्रहा यज्ञ, पितृ यज्ञ, पुरुष यज्ञ, देव यज्ञ एवं भूत यज्ञ।

(i) ब्रहा यज्ञ – इसमें वेदों का पाठ कर ब्रहा की पूजा एवं स्मरण किया जाता था।

(ii) पितृ यज्ञ – इसमें सामाजिक श्राद्धों तथा प्रर्पण द्वारा पितरों की पूजा की जाती थी।

(iii) पुरुश यज्ञ – अतिथि सत्कार करके मनुष्यों की पूजा की जाती थी।

(iv) देव यज्ञ – इसमें देवताओं को प्रसन्न करने हेतु पवित्र अग्नि में घी एवं सुगंधित द्रव्यों का हवन किया जाता था।

(v) भूत यज्ञ – भूतों को प्रसन्न करने हेतु भोजन अन्न या अन्य पदार्थों द्वारा भूतों की पूजा की जाती थी।

(स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन – सामान्य अध्ययन राजीव अहीर, नई दिल्ली 2018 – P.P. 28-30)

ऋग्वैदिक कालीन नदियां

आधुनिक नाम	प्राचीन नाम	आधुनिक नाम	प्राचीन नाम
• झेलम	वितस्ता	• सोहन	सुषोमा
• काबुल	कुभा	• घग्घर/रक्षी/चितंग	सरस्वती दृशद्वती
• चिनाव	आस्किनी	• सिंध	सिंधु
• कुर्रम	क्रुभु	• स्वात	सुवस्तु
• मरूवर्मन	मरूद्वृधा	• गोपल	गोमती
• घग्घर	दृषद्वती	• सतलज	शतुद्रि
• व्यास	विपाशा	• रावी	परुण्णी

ऋग्वैदिक युग की देवियाँ

• पृथ्वी → जगत की जननी या माता	• इला → आराधना की देवी
• ऊषा → प्रातः काल के देवी	• सिंधु → नदी देवी
• सूर्या → सूर्य देवता की पुत्री	• पुरापाधि → उर्वरता की देवी
• रात्री → रात की देवी	• आप → जल की देवी
• सावित्री → सूर्य को प्रेरणा प्रदान करने वाली	• अरण्यानी → वन देवी
• दिशान → वनस्पतिदेवी	

3.3.5 आर्थिक स्थिति (Economic Condition)

ऋग्वैदिक काल में कृषि एवं पशुपालन पर आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आधारित थी। इसलिए ऋग्वैदिक सभ्यता को ग्रामीण माना गया है। वेद में 'गव्य' एवं गव्यति शब्द चारागाह के लिए प्रयुक्त है। इस काल

में गाय का प्रयोग मुद्रा के रूप में भी होता था। अवि (भेड़) अजा (बकरी) का ऋग्वेद कई बार वर्णन किया गया है। हाथी, बाघ, बत्तख, गिद्ध से लोग अपरिचित थे।

(1) कृषि (Agriculture) – ऋग्वेद में 'कृषि' शब्द का उल्लेख 24 बार हुआ है। उस समय उत्पादित किए जाने वाले खाद्यान्नों में गेहूँ (Wheat) तथा जौ (Barley) मुख्य थे। 'लांगल' 'वृक' से जोतने के बाद भूमि में बीज बोये जाते थे। बाद में करीब का भी प्रयोग पानी की कमी होने पर सिंचाई की भी व्यवस्था की जाती थी इसके लिए कुओं का प्रयोग किया जाता था। कृषि औजार लोहे व लकड़ी के बने होते थे। वर्ष में दो फसलें बोई जाती थी। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर अच्छी कृषि तथा उपयुक्त वर्षा के लिए की जाने वाली प्रार्थनाओं का उल्लेख है। कृषि योग्य भूमि धीरे–2 व्यक्तिगत सम्पति का हिस्सा बन गए थे, किन्तु चारागह अभी भी सामूहिक सम्पति बने हुए थे। ऋग्वेद के चौथे मंडल में कृषि–प्रणाली एवं कृषि–उपकरणों का सविस्तार उल्लेख है।

(2) पशुपालन (Animal Rearing) – ऋग्वैदिक आर्यों का मुख्य धन्धा पशुपालन था। गाय, भैस, भेड़, बकरी, ऊँट, हाथी, घोड़े, बैल, गधा, सुअर, कुत्ता आदि आर्यो के मुख्य पालतू पशु थे। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर पशु–धन की वृद्धि के लिए देवताओं से प्रार्थना की गई है। गाय दुहने का कार्य करने वाले को दुहिता कहा जाता था। अजा व अवि को यज्ञीय पशु के रूप में मान्यता दी गई है। वास्तव में पशु ही आर्यों के धन थे।

(3) आखेट (Aakhet) – ऋग्वैदिक आर्य अपने पशुओं की रक्षा तथा जीवन निर्वाह हेतु आखेट किया करते थे। ऋग्वेद में निद्यापति (चिड़ीमार) का भी उल्लेख मिलता है। आर्य शिकार से ग्राहक का कार्य करते थे जिससे वे साधारणतः धनुष, तीर, भाले आदि का प्रयोग करते थे।

(4) उद्योग (Industries) – आर्यों का मुख्य उद्योग कपड़ा बुनना था। इस कार्य को महिलाएं करती थी। इसके अतिरिक्त शिकारी (hunter), बढ़ई, लोहकार, धोबी, चटाई बनाने वाले, जौहरी, कसाई, कुम्हार, रस्सी बनाने वाले, टोकरी बनाने वाले मूर्तिकार, कृषक, गायक आदि अपने–2 व्यवसाय में लगे रहते थे।

(5) व्यापार (Trade) – ऋग्वैदिक काल में देशी एवं विदेशी व्यापार दोनों का उल्लेख मिलता है। विदेशी व्यापार समुद्री मार्ग (जल मार्ग) द्वारा होता था एवं देशी व्यापार थलमार्ग के द्वारा होता था। वस्तुओं का विनिमय होता था। व्यापार में ब्याज पर ऋण देना, मुद्राओं आदि का प्रयोग होता था। ऋण वापिस न चुकाना पाप समझा जाता था। व्यापार करने वालो को 'पाणि' कहा जाता था।

3.4 अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

3.4.1 उत्तर वैदिक काल (1000– 600 ई० पू०) Post Later Vedic Period (1000-600 BC) :-

भारतीय इतिहास में उस काल को जिसमें सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद तथा ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों एवं उपनिषद् की रचना हुई को उत्तर वैदिक काल (1000से 600 ई० पू०) कहा जाता है।

3.4.1.1 राज्यव्यवस्था (Polity)

उतर वैदिक काल में 'राजतंत्र' ही शासन तन्त्र का आधार था, कही–2 पर गणराज्यों के उदाहरण भी मिले है।

(1) जनपद या राज्य (Janapada Or Kingdom) – उत्तरवैदिक काल में कबीलों से जनपद बन जाने के कारण राजनैतिक गतिविधियां तेज हो गई। साम्राज्यवादी तथा सामंतवादी दोनों प्रकार की प्रवृतियां प्रबल हुई। उत्तरवैदिक काल में राजत्व का दैवी सिद्धांत स्पष्ट हो गया और स्त्रियों की राजनैतिक गतिविधियां कम हुई। इसी काल में 'पुरु' एवं 'भरत' जनपदों को मिलाने से 'कुरू' जनपदों को मिलाने से 'पंचाल' जनपद का निर्माण हुआ।

उत्तरवैदिक काल में राज्य का आकार बढ़ने से राजा के पद का महत्त्व भी बढ़ा। अपने पद की प्रतिष्ठा के लिए राजा इस काल में 'राजसूय', 'अश्वमेघ' एवं 'वाजपेय' जैसे विशाल यज्ञों का आयोजन करता था। ज्यों–ज्यों साम्राज्यवाद का विस्तार हुआ, त्यों–त्यों विभिन्न दिशाओं के शासकों ने अलग–अलग उपाधियों को धारण करना शुरू कर दिया। पूर्व के राजा 'सम्राट' की, पश्चिम के राजा 'स्वराट्' की, उत्तर के राजा 'विराट्' की दक्षिण के राजा 'भोज' की और मध्यदेश के राजा 'राजा' की उपाधि धारण करते थे।

उत्तरवैदिक काल निम्नलिखित राज्य (State) थे –

(i) गंधार (Gandhara) – पश्चिमी पंजाब के रावलपिण्डी और उत्तरी पश्चिमी सीमा के पेशावर जिले में स्थित इस राज्य के दो प्रमुख नगर थे – तक्षशिला और पुष्कलावर्त्त (पुष्कलावती)।

(ii) केकय – गंधार राज्य के पूर्व में व्यास नदी के तट पर केकय राज्य था। विदेह के राजा जनक के समय अश्वपति इस राज्य का राजा था।

(iii) मद्र – कश्मीर मं उत्तर मद्र, कांगड़ा के समीप पूर्वी मद्र और अमृतसर के आसपास दक्षिणी मद राज्य था।

(iv) उशीनगर – अनुमानतः यह वर्तमान उत्तर प्रदेश के उत्तरी क्षेत्र में था।

(v) पाँचाल (Panchala) – आधुनिक उत्तर प्रदेश के बरेली, बदायूं, फर्रुखाबाद के जिले प्राचीन पांचाल थे। विदेह के राजा जनक के समय प्रवाहण जावलि इस राज्य के राजा थे। आरंभ में यह राज्य राजतंत्र था। छठी ई० पू० में यहाँ पर गणतंत्र की स्थापना हो गई।

(vi) काशी (Kashi) – यह राज्य पहले बहुत शक्तिशाली था। इस राज्य की राजधानी वाराणसी थी। अजातशत्रु यहां का (जनक के समकालीन) राजा था।

(vii) कोशल (Koshala) – इस राज्य की राजधानी अयोध्या थी। इसके पूर्व में विदेह राज्य था।

(2) राजा (King) – सर्वप्रथम ऐतरेय ब्राहाण में राजा की उत्पत्ति का सिद्धान्त मिलता है। राजत्व का दैवी सिद्धांत इसी कालखण्ड में स्थापित हुआ। राजा के पदारोहण के लिए जनता की पूर्व स्वीकृति आवश्यक थी (अथर्ववेद के अनुसार)। राजा का पद वंशानुगत होता था और उस पर धर्म का अंकुश होता था। उत्तरवैदिक काल में राजा स्वेच्छाचारी हो गया था –वह किसी भी व्यक्ति को दण्ड दे सकता था। प्रजा से कर वसूल कर सकता था तथा किसी भी कर्मचारी को अपदस्थ कर सकता था। वह साम्राज्य का विस्तार यश और कीर्ति का प्रसार करने के लिए भी स्वच्छंद था। राज्याभिषेक पुरोहित द्वारा सौ छिद्रो वाले स्वर्ण पात्र से और 17 प्रकार के जल से किया जाता था।

(3) प्रशासनिक पदाधिकारी (Administrative Officer) – उत्तरवैदिक काल में आर्यों के जीवन में पूर्ण रूप से स्थिरता आ गई थी। अब व्यवस्थित शासन–प्रणाली की आवश्यकता पड़ी। ऋग्वैदिक काल में प्रशासनिक कार्यों में राजा को सहयोग देने के लिए मुख्य रूप से तीन ही अधिकारी थे – पुरोहित, सेनानी और ग्रामीण। इसी काल में प्रशासनिक पदाधिकारियोंको 'रत्निन' कहते थे। इस काल में भी पुरोहित को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। उसके बाद सेनापति, संगृहीतृ (कोषाध्यक्ष), भागदुध (कर वसूलने वाला अधिकारी), सूत अथवा भार, प्रतिहारी, अक्षवाप (जूआ आदि पर निगरानी रखने वाला), क्षत्रि (घरेलू कार्य का अध्यक्ष), पालागल (दूत या संदेशवाहक) आदि मुख्य पदाधिकारी थे। उत्तरवैदिक काल में ग्रामीणी के कार्यों में भी वृद्धि हुई। ऋग्वैदिक काल में वह ग्राम–स्तर पर केवल सैनिक कार्य करता था, किंतु अब वह ग्राम के लोगों से कर एकत्रित करने तथा स्थानीय स्तर पर मुख्य न्यायाधीश के कार्य भी करने लगा था। इन अधिकारियों के अतिरिक्त अंगरक्षक, धर्माध्यक्ष, दौवारिक (राजमहल के द्वार का प्रमुख अधिकारी), परिचारक, वृन्दाध्यक्ष, अश्वाध्यक्ष आदि का भी उल्लेख मिलता है।

उत्तरवैदिक काल में सबसे निचले स्तर का अधिकारी 'ग्राम अधिकृत' था। इस काल में स्थानीय प्रशासकों के लिए 'रथपति', 'शतपति' जैसे शब्दों का उपयोग हुआ है। 'उग्र' एवं 'जीवग्रह' इस काल में पुलिस एवं गुप्तचर अधिकारी थे।

(4) प्रशासनिक संस्थाएँ (Administrative Institutions) – अथर्ववेद में 'सभा' (Sabha) एवं 'समिति' को प्रजापति की दो पुत्रियां कहा गया है। राजा प्रार्थना करता है कि सभा एवं समिति मेरे ऊपर कृपा करें। सभा एवं समिति की स्थापना ऋग्वैदिक काल में ही हो चुकी थी। सभा, ऋग्वैदिक युग की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्था थी। उत्तरवैदिक काल में भी सभा महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्था बनी रही।

उत्तरवैदिक काल में 'समिति' सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था के रूप में स्थापित हो गयी। इस काल में समिति का राजा पर पर्याप्त नियंत्रण था। अथर्ववेद में समिति को 'अरिष्टा' कहा गया है। समिति सामान्यतः युद्ध, संधि, आय–व्यय तथा सार्वजनिक कार्यों को देखती थी। भूमि, द्यूतक्रीड़ा, ऋण, दायभाग, चोरी, चोट तथा हत्या के मामलों में न्याय का कार्य भी समिति (Samiti) करती थी।

(5) न्याय व्यवस्था (Justice System or Nyay System) – उत्तरवैदिक काल में न्याय–व्यवस्था भी सुव्यवस्थित हो गई। मुख्य न्यायाधीश राजा स्वयं होता था। ब्राह्मण की हत्या को उस समय सबसे बड़ा अपराध माना जाता था। ब्राह्मण को दण्डमुक्त रखा गया था। क्षत्रिय की हत्या के लिए 1000 गायें, वैश्य की हत्या के लिए 100 गायें तथा शूद्र की हत्या करने पर 10 गायें अपराधी को मृतक के परिजन को देने पड़ते थे। जबकि प्रत्येक हत्या के लिए अपराधी को सरकार को एक बैल देना होता था। हाथ–पांव काट देने का दण्ड दिया जाता था।

3.4.1.2 समाज (Society)

1. परिवार (Family) – उत्तरवैदिक काल में ग्रामीण समाज का नागरीय समाज में परिवर्तन होने लगा था। परिवार पितृ प्रधान होते थे। पैतृक सम्पत्ति संयुक्त परिवार की निधि होती थी। अपने जीवनकाल में ही पिता अपने पुत्रों के मध्य सम्पत्ति का विभाजन कर देता था।

2. भोजन (Food) – उत्तरवैदिक आर्य खानपान के विशेष प्रेमी थे। उनके खाद्य व्यंजनों में 'क्षीरौदन' (खीर), 'तिलोदन', 'मुदगोदन'(लड्डू), 'घृतोदन', 'पंक्ति', 'करम्भ', 'पुरोपाष', 'युवगु', 'लाज' तथा 'सक्तु' प्रमुख थे। शहद का उपयोग किया जाता था और विशेष अवसरों पर सुरापान भी किया जाता था।

3. महिलाएँ (Women) – उत्तरवैदिक काल में रचे गए ब्राह्मण ग्रंथों में स्त्रियों की निन्दा के उल्लेख यह बताते हैं कि इस काल में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आई। इस काल में स्त्रियों की राजनीतिक गतिविधियां न के बराबर हो गई थी इनको शिक्षा से दूर रखा जाने लगा।

4. पहनावा या वेश–भूषा (Dress/Clothing) – उत्तरवैदिक काल में ऋग्वैदिक काल के तीन प्रमुख वस्त्रों – अधोवस्त्र, उत्तरीय तथा अधिवास के साथ चीर, चेबर तथा चेल नामक वस्त्रों का प्रचलन भी हो गया। ऋषि तथा ब्रह्मचारी पशुधर्म का उपयोग करते थे। निष्क, प्रवर्न, प्रकाश, विमुक्ता आदि इस काल की स्त्रियों के प्रमुख आभूषण थे।

5. गोत्र–व्यवस्था (Gotra System) – 'गोत्र' की संकल्पना ऋग्वैदिक काल में भी थी। संस्था के रूप में 'गोत्र' का उल्लेख प्रथम अथर्ववेद में मिलता है। गोत्र का शाब्दिक अर्थ होता है 'गोष्ठ'। गोष्ठ उस स्थल को कहा जाता

था जहां सम्पूर्ण कुल की गो सम्पत्ति एक साथ रखी जाती थी। उत्तरवैदिक काल में 'गोत्र' सामुदायिक जीवन का आधार हो गया। एक ही 'गोत्र' के महिला एवं पुरुष का विवाह नहीं हो सकता था।

6. विवाह प्रथा (Marriage) – उत्तरवैदिक काल में सामाजिक दृष्टि से विवाह का बड़ा महत्त्व था। अविवाहित व्यक्ति को यज्ञ का अधिकार प्राप्त नहीं था। वैदिक ग्रंथों में उल्लेख हुआ है – 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्'। जिसका अर्थ है कन्या वर की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करती थी। विवाह को धार्मिक महत्त्व भी प्राप्त था और दहेज प्रथा का अभाव था।

उत्तरवैदिक काल में जाति–प्रथा कठिन नहीं हुई थी, अंतरजातीय विवाह प्रतिबंधित नहीं था। ऋग्वेद में भाई–बहन, पिता–पुत्री आदि के विवाहों का निषेध है। उत्तरवैदिक काल बहुविवाद भी प्रचलित था। वैदिक साहित्य में राजाओं की अनेक पत्नियों का उल्लेख मिलता है। मैत्रायणी संहिता में मनु की दस पत्नियों का उल्लेख है।

ऐतरेय ब्राह्मण में ऐसा उल्लेख है कि पुरुष एक ही समय में अनेक पत्नियां रख सकता है, किंतु एक स्त्री एक ही समय में अनेक पति नहीं रख सकती। इससे ऐसा आभास मिलता है कि भिन्न–भिन्न समयों में महिलाओं के अलग–अलग पति हो सकते थे। अथर्ववेद में 'दिधुषू' शब्द से ज्ञात होता है कि विधवा अपने देवर से विवाह करती थी, जबकि 'परपूर्वी' शब्द से ज्ञात होता है कि स्त्री दूसरा विवाह कर सकती थी।

7. आश्रम–व्यवस्था (Ashram System) – उत्तरवैदिक काल में आश्रम ने व्यवस्थाका स्वरूप ले लिया और आरंभ में तीन आश्रम प्रचलित हुए – 'ब्रह्मचर्य गृहस्थ' एवं 'वानप्रस्थ'। आश्रम–व्यवस्था का सर्वप्रथम उल्लेख छान्दोग्योपनिषद् में मिलता है। उत्तरवैदिक काल के अंत में आकर चौथा आश्रम भी प्रचलित हो गया जिसे 'सन्यास' कहते है। सर्वप्रथम 'जाबालोपनिषद्' में चार आश्रमों का वर्णन मिलता है एवं 'सन्यास' आश्रम को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है।

(स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन – सामान्य अध्ययन राजीव अहीर, नई दिल्ली 2018 – P.P. 33-34)

3.4.1.3 छात्र क्रियाकलाप (Student Activity)

प्र. पूर्व वैदिक काल पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। (Write a short note on the Pre-vedic Period).

3.4.1.4 धर्म (Religion)

धर्म शब्द संस्कृतकी धृ धातु से बना है का प्रयोग 'धारण करना' इस अर्थ में होता है कि इस प्रकार धर्म वह है जो व्यक्ति धारण करे। "धारणाद्धर्मितया है, एडवर्ड के अनुसार, "धर्म आध्यात्मिक शक्तियों में विश्वास है।" (Religion is the belief in spritiualbeings)

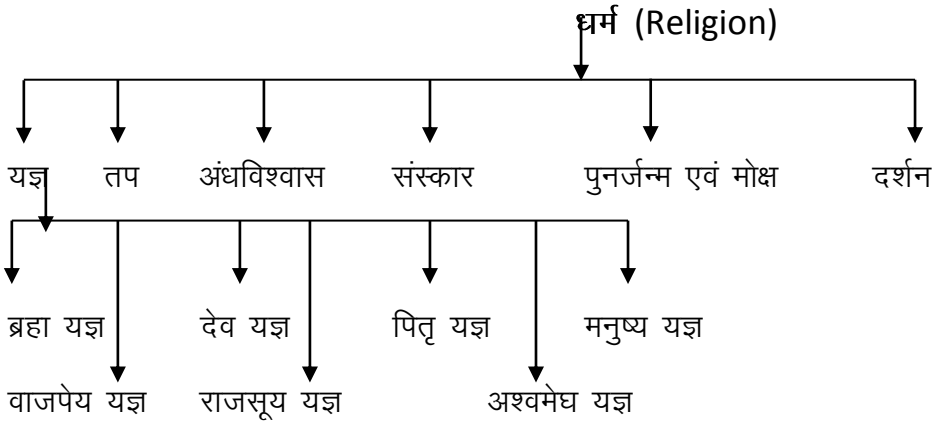

(1) यज्ञ – उत्तर वैदिककाल में धर्म का मुख्य आधार यज्ञ था। इस काल में यज्ञों में पशुओं की बलि भी बड़े पैमाने पर दी जाती थी। गृह सूत्र और श्रौत सूत्र से तत्कालीन यज्ञ विधि विधान की जानकारी मिलती है। उत्तरवैदिक काल में सामान्यतः शूद्रों को यज्ञों में शामिल नहीं किया जाता था लेकिन कुछ उदाहरण मिलते कि इनकी सहभागिता यज्ञों में थी। देवता, ऋषि, पितृ, पशु आदि के लिए यज्ञ किया जाता था। इस काल में यज्ञ ब्राह्मण ही करा सकते थे।

(i) वाजपेय यज्ञ – यह यज्ञ राजा अपनी शक्ति को बढ़ाने के लिए करते थे। यह यज्ञ सोम की प्रार्थना के लिए किया जाता था और यह यज्ञ 17 दिनों तक चलता था।

(ii) ब्रहा यज्ञ – प्राचीन ऋषियों के प्रति कृतज्ञता।

(iii) राजसूय यज्ञ – जो यज्ञ राजा के राज्याभिषेक के समय किया जाता था उसे राजसूय यज्ञ कहा जाता था। इस यज्ञ से राजा की शक्ति को प्रजा में प्रदर्शित किया जाता था।

(iv) देव यज्ञ – देवताओं के प्रति प्रार्थना की जाती थी।

(v) पितृज्ञय – पितरों का तर्पण किया जाता था।

(vi) अश्वमेघ यज्ञ – यह उत्तरवैदिक काल का महत्वपूर्ण एवं कठिन यज्ञ था। इस यज्ञ की तैयारी के लिए 10–12 माह का लगभग समय लगता था और यह तीन दिन तक चलता था। इस यज्ञ में एक घोड़ा छोड़ा जाता

था। यह घोड़ा जहाँ तक जाता वहाँ तक राजा का साम्राज्य समझा जाता था। घोड़े का प्रतिरोध करने वाले को राजा के साथ युद्ध करना पड़ता था।

(vii) मनुष्य यज्ञ – अतिथि सत्कार के लिए।

(2) तप – इस युग में तप को अधिक महत्त्व दिया जाता था ऐसा माना जाता था कि तप के आधार दैवी शक्ति प्राप्त की जा सकती है। तैत्तिरीय उपनिषद में यह उल्लेख मिलता है कि वरूण अपने पुत्र को कहता है कि तप के आधार पर ब्रह्म मिल सकते है इसलिए तप करो।

(3) अंधविश्वास – उत्तरवैदिक काल में अंधविश्वास की प्रवृत्ति थी। आर्य जादू–टोने में विश्वास करते थे। इसकी जानकारी अर्थर्ववेद में मिलती है।

(4) पुनर्जन्म एवं मोक्ष – उत्तरवैदिक काल में पुनर्जन्म, मोक्ष तथा कर्मके सिद्धान्तों की स्पष्ट रूप से स्थापना हुई। उनका मानना था जो मनुष्य जीवन ब्रहाज्ञान प्राप्त कर लेता है बाद में मृत्यु के बाद ब्रहा तत्व में विलिन हो जाता है और वह जन्म–मरण चक्र से मुक्त हो जाता है।

(5) दर्शन – इस काल में लोगों के दार्शनिक विचारों में परिवर्तन आया। उत्तरवैदिक काल में रचित उपनिषद के अध्यात्मिक साहित्य में उच्च स्थान प्राप्त है। इस काल में ब्रहा और आत्मा की एकता पर विशेष बल दिया गया है। उपनिषद काल में 'ब्रह्म' एक जीव–स्वरूप, 'आत्मा' एवं परमात्मा के संबंध, मोक्ष, माया आदि। अर्थात् ब्रह्म को सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक तथा अन्तर्यायी स्वीकार किया, आत्मा–परमात्मा, स्वर्ग–नरक, माया–मोक्ष और कर्म सिद्धान्त का प्रतिपादन इसी काल में हुआ।

मुख्य दर्शन एवं रचयिता

दर्शन	रचयिता / प्रवर्तक
चार्वाक (भौतिकवादी)	चार्वाक
सांख्य	कपिल
योग	पंतजलि (योगसूत्र)
न्याय	गौतम (न्यायसूत्र)
पूर्व मीमांसा	जैमिनी
उत्तर मीमांसा (वेदांत)	बादरायण (ब्रहासूत्र)

वैशेषिक कणाद या उत्रक

(6) संस्कार (Sanskar) – संस्कार शब्द के अनेक अर्थ हैं शुद्धि, आत्म–सृजन का गुण, यथा पूर्ण करना, स्मृति चिन्ह आदि ऐसा विश्वास किया जाता है, कि संस्कारों का उदय वैदिककाल अथवा इससे पूर्व हो चुका था संस्कारों का शास्त्रीय विवेचन सर्वप्रथम 'वृहदारण्यकोपनिषद' से प्राप्त होता है विभिन्न ग्रंथों में संस्कारों की संख्या अलग–2 बताई गई है, किन्तु अधिकांशत विद्वानों ने सोलह संस्कारों को मान्यता प्रदान की है प्राचीन भारतीय समाज में प्रत्येक व्यक्ति इन सोलह संस्कारों को पूर्ण करता था।

16 संस्कारों का विवरण स्मृति ग्रंथों से मिलता है –

1. गर्भाधान 2. पुंसवन 3. सीमन्तोप्रथन 4. जातकर्म 5. नामकरण 6. निष्क्रमण 7. अत्रप्राशन 8. चूड़ाकरण 9. कर्ण भेद 10. विद्यारम्भ 11. उपनयन 12. वेदारम्भ 13. केशन्त गोदान 14. समावर्तन 15. विवाह 16. उन्तेष्टि (अन्त्येष्टि)

(i) गर्भाधान संस्कार – एक पुरुष जिस क्रिया के द्वारा स्त्री में अपना वीर्य स्थापित करता है उसे गर्भाधान संस्कार कहा जाता है। शौनक मुनि ने इस संस्कार की परिभाषा देते हुए कहा है – "जिस कर्म की पूर्ति से स्त्री प्रदत्त शुक्र धारण करती है, उसे गर्भाधान कहते है। इस सस्कार के समय पुरुष और स्त्री की कम–से–कम क्रमशः 25 और 16 वर्ष की आयु होनी चाहिए। वेदों में गर्भ की स्थापनाओं के लिए अनेक प्रार्थनाओं का उल्लेख मिलता है। प्राचीनकाल भारतीय समाज में गर्भाधान करना पुरुष का परम आवश्यक कर्तव्य समझा जाता था। इस संस्कार के लिए रात्रि तथा उचित नक्षत्र का ध्यान रखना अति आवश्यक था। स्त्री के ऋतुकाल की चौथी रात्रि से लेकर सोलहवीं रात्रि तक का समय गर्भाधान संस्कार के लिए उपयुक्त माना जाता था। यह संस्कार प्रथम गर्भाधारण के समय ही किया जाता था। बार–बार नहीं, यह संस्कार श्रेष्ठ सन्तानोत्पति हेतु किया जाता था।

(ii) पुंसवन संस्कार – स्त्री द्वारा गर्भधारण करने के तीसरे, चौथे अथवा आठवें माह में पुत्र प्राप्ति की इच्छा हेतु यह संस्कार दिया जाता था। संस्कार सम्पन्न होने के समय गर्भवती स्त्री को स्नान कर स्वच्छ वस्त्र धारण करने होते थे तथा उपवास रखना होता था। इसकी नासिका के दाहिने रन्ध्र में इस उद्देश्य से वटवृक्ष का रस दिया जाता था। जिससे उसे गर्भकाल में किसी प्रकार का कष्ट न हो, स्त्री तथा पुरुष द्वारा यह भी प्रतिज्ञ की जाती थी कि वे ऐसा कोई भी कार्य नहीं करेंगे जिससे गर्भ को किसी प्रकार की हानि पहुँचे।

(iii) सीमांतोन्नयन संस्कार – यह संस्कार गर्भवती स्त्री के गर्भ की रक्षा के लिए किया जाता था। ताकि रक्तपान करने वाली राक्षसनियाँ गर्भ को हानि न पहुँचा सके। आश्वलायन गृहसूत्र के अनुसार यह संस्कार गर्भ के चौथे अथवा पाँचवें माह में किया जाता था। अलबरूनी ने भी इसका समर्थन किया है। स्मृतियों के अनुसार यह संस्कार

गर्भधारण के छठे अथवा आठवें माह में किया जाता था। इस संस्कार में स्त्री के केशों को ऊपर उठाकर सँवारा जाता था। इस संस्कार के द्वारा स्त्री के गर्भधारण की सूचना दी जाती थी। इस प्रकार ये तीन संस्कार शि"ु के जन्म से पूर्व किए जाते थे।

(iv) जातकर्म संस्कार – शि"ु के जन्म के उपरान्त यह संस्कार किया जाता था। इस संस्कार के समय पिता नवजात शिशु को अपनी अंगुली से मधु अथवा घृत चटाता था तथा उसके कान में मेघाजनन का मंत्र पढ़ता था तथा उसे आशीर्वाद देता था। इस संस्कार में नवजात शि"ु के लिए बल, बुद्धि तथा दीर्घायु की प्रार्थना की जाती थी तथा ब्राह्मणों को दान दिया जाता था

(v) नामकरण संस्कार – यह संस्कार नवजात शिशु के नाम रखने हेतु किया जाता था। शि"ु का नाम अधिकांशतः किसी ऋषि देवता अथवा पूर्वज के नाम के आधार पर रखा जाता था। कभी–कभी नक्षत्र, मास के देवता अथवा लौकिक नाम के आधार पर बच्चे का नाम रखा जाता था। बृहस्पति के अनुसार यह संस्कार शि"ु के जन्म से 10वें, 11वें, 13वें, 16वें, 19वें तथा 32 वें दिन होना चाहिए जबकि गोमिल के अनुसार 10वें, 12वें, 100वें अथवा प्रथम वर्ष के समाप्त होने पर यह संस्कार किया जाना चाहिए। इस संस्कार में शि"ु की बाईं कलाई पर सोने की पत्ती बाँधी जाती है। होम किया जाता है तथ साथ ही ब्राह्मणों को भोजन भी कराया जाता है।

(vi) निष्क्रमण संस्कार – नवजात शिशु को घर से बाहर निकाले जाने के अवसर पर किए जाने वाले संस्कार को निष्क्रमण संस्कार कहा जाता है। यह शिशु के जन्म के 12वें दिन से लेकर चौथे मास के मध्य कभी भी किया जा सकता है। इस संस्कार में शिशु को अच्छे वस्त्र पहनाकर, माता–पिता द्वारा सूर्य के दर्शन कराए जाते थे।

(vii) अन्नप्राशन संस्कार – मनु तथा याज्ञवल्क्य के अनुसार शि"ु के जन्म के छटवें मास में किया जाना चाहिए। इसमें शिशु को ठोस अन्न (मुख्यतः चावल की खीर) खिलाया जाता है। किसी–किसी ग्रन्थ में इस अवसर पर शिशु को पक्षियों का माँस खिलाने का विधान मिलता है। जोकि मार्कण्डेय पुराण तथा अन्य ग्रन्थों में मधु, घी, तथा खीर खिलाने का विधान मिलता है। इस संस्कार के सम्पन्न होने के पश्चात् माता अपने शिशु को स्तनपान कराना बन्द कर देती है।

(viii) चूड़ाकर्म संस्कार – इस संस्कार को मुंडन अथवा चौल संस्कार के नाम से भी जाना जाता है। इस संस्कार के द्वारा शि"ु के अच्छे स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना की जाती है। गृहसूत्रों के अनुसार यह संस्कार शि"ु जन्म के प्रथम वर्ष के अन्त में अथवा तीसरे वर्ष की समाप्ति से पूर्व किया जाना चाहिए। किन्तु परिवर्ती साहित्य में इस संस्कार का समय शिशु जन्म के पाँच से लेकर सात वर्ष के मध्य माना गया है। इस संस्कार के अवसर पर शिशु के सिर को गीला कर सम्पूर्ण बाल मुंड़वा दिए जाते हैं। सिर पर मात्र शिखा (चोटी) रहती है।

शि"ु के मुंडे हुए बालों को गीले आटे अथवा गोबर के पिंड के साथ रखकर किसी गुप्त स्थान पर फेंक दिया जाता है। वैदिक ग्रन्थों के अनुसार इस संस्कार के सम्पादन का प्रयोजन यह था कि इससे हर्ष, सौभाग्य और उत्साह की वृद्धि होती है। इस संस्कार का सम्पादन वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ किया जाता था।

(ix) कर्णवेध संस्कार – रोगादि से बचने तथा आभूषण धारण करने के उद्देश्य से यह संस्कार किया जाता था। यह एक अनिवार्य संस्कार था। स्मृतिकार देवल के अनुसार जिस ब्राह्मण का कर्णवेध नहीं होता उसके देखने मात्र से ही सम्पूर्ण पुण्य नष्ट हो जाते हैं। बृहस्पति के अनुसार यह संस्कार शिशु के जन्म के दसवें, पन्द्रहवें दिन करना चाहिए। जबकि कात्यायन के अनुसार इस संस्कार को शि"ु के जन्म के तीसरे अथवा पाँचवे वर्ष में भी सम्पन्न किया जा सकता है। गृहसूत्र में इस संस्कार का कहीं उल्लेख नहीं मिलता है।

(x) विद्यारम्भ संस्कार – ऋषि विश्वामित्र के अनुसार यह संस्कार बालक के जन्म के पाँचवें वर्ष में सम्पन्न किया जाता है। चूँकि इस संस्कार के अन्तर्गत बालक को अक्षरों का ज्ञान कराया जाता है। इसलिए इस संस्कार को अक्षरारम्भ संस्कार के नाम से भी जाना जाता है। इस संस्कार के अवसर पर बालक को गुरु के पास ले जाकर सरस्वती पूजन किया जाता है। यह कार्य किसी भी शुभ दिन प्रारम्भ किया जाता है। इस दिन गुरु बालक को गायत्री मंत्र उच्चारण के साथ उसे शिक्षा देना प्रारम्भ करता है।

(xi) उपनयन संस्कार – इस संस्कार का मुख्य प्रयोजन था – शिक्षा, बालक के शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो जाने पर यह संस्कार किया जाता था। अलग–अलग जाति के बालको के लिए इस संस्कार की आयु अलग निर्धारित थी। गृहसूत्रों के अनुसार ब्राह्मण बालक का जन्म के आठवें वर्ष में, क्षत्रिय बालक का ग्यारहवें वर्ष में तथा वैश्य बालक का बारहवें वर्ष में यह संस्कार किया जाना चाहिए। यह संस्कार शूद्रों के लिए वर्जित था। इस संस्कार के बाद व्यक्ति द्विज हो जाता था अर्थात् उसका दूसरा जन्म माना जाता था। इस संस्कार के अवसर पर बालक को यज्ञोपवीत धारण करवा के ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रविष्ट कराया जाता था। गृहसूत्रों के अनुसार यह कोई आवश्यक संस्कार नहीं था किन्तु उपषिद काल में यह एक आवश्यक संस्कार हो गया था। वर्तमान काल में इस संस्कार का विद्या सम्बन्धी महत्व प्रायः समाप्त हो गया है। अब तो यह संस्कार अधिकाशतः विवाह से पूर्व ही किया जाता है। प्राचीन साहित्य में इस संस्कार का उल्लेख मिलता है। संस्कार के समय अनेक देवी–देवताओं की उपासना की जाती थी तथा बालक अन्तिम बार अपनी माँ के साथ भोजन करता था। इस संस्कार के साथ ही बालक को उत्तरदायित्वपूर्ण एवं संयमी जीवन व्यतीत करने का आदेश दिया जाता था।

(xii) वेदारम्भ संस्कार – प्राचीनकाल में उपनयन संस्कार के समय वेदाध्ययन स्वतः ही आरम्भ हो जाता था। इसी कारण 'वेदारम्भ' को पृथक् से संस्कार नहीं माना जाता था। सम्भवतः इसी कारण धर्मसूत्रों, गृहसूत्रों एवं

स्मृतियों में कहीं भी इस संस्कार का उल्लेख नहीं मिलता है। किन्तु परवर्ती काल में संस्कृत का बोलचाल की भाषा में प्रयोग होना समाप्त हो गया तो 'वेदारम्भ' को अलग से संस्कार के रूप में स्वीकार कर लिय गय। इस संस्कार का सर्वप्रथम उल्लेख व्यास स्मृति में मिलता है। इस संस्कार का सम्पादन उपनयन संस्कार के पश्चात् किसी शुभ दिन किया जाता था। इस अवसर पर चारों वेदों का अलग–अलग स्वाध्याय करने हेतु अलग–अलग आहुतियां दी जाती थीं। बाद में चारों वेदों का एक–साथ अध्ययन प्रारम्भ करने के लिए विशिष्ट आहुति दी जाती थी। इसके पश्चात गुरु विद्यार्थी को वेदों की शिक्षा देना आरम्भ करता था।

(xiii) केशान्त अथवा गौदान संस्कार – जब बालक सोलह वर्ष की आयु प्राप्त कर लेता था। तब इस संस्कार की सम्पादन किया जाता था। इस संस्कार को किसी शुभ दिन किया जाता था। इस अवसर पर बालक की प्रथम बार दाड़ी–मूछों को मूँड़ा जाता था। यह संस्कार बालक के वयस्क होने का सूचक है। चूँकि इस संस्कार के समय बालक अपने आचार्य को गाय दान में देता था। इसलिए इस संस्कार को गौदान संस्कार के नाम से भी जाना जाता है।

(xiv) समावर्तन संस्कार – समावर्तन का अर्थ है लौटना। जब बालक छात्र विद्याध्ययन पूर्ण कर गुरुकुल से अपने घर को वापस लौटता था। तब इस संस्कार का सम्पादन किया जाता था। यह संस्कार बालक के ब्रह्मचर्य आश्रम की समाप्ति का सूचक है। इस संस्कार को गुरु की अनुमति मिलने पर ही किया जाता था। इसमें बालक अपने गुरु को उचित दान दक्षिणा देता था। इसके उपरान्त स्नान कर मृगचर्म, मेखल तथा दण्ड आदि को जल में प्रवाहित कर देता था तथा एक नवीन कोपीन को धारण करता था। कुछ दही एवं तिल का भोजन करने के उपरान्त अपनी दाड़ी, नाखून एवं केशों को कटवाता था। तत्पश्चात् ब्रह्मचर्य आश्रम में वर्जित वस्तुओं यथा – माला, हार, उष्णीय, उपानह आकि को धारण करता था। यह संस्कार अधिकांशतः 25 वर्ष की आयु में किया जाता था।

(xv) विवाह संस्कार – प्राचीनकाल से वर्तमानकाल तक हिन्दू धर्म में विवाह को एक पवित्र संस्कार के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है। वासतव में अन्य संस्कारों की तुलना में इस संस्कार का अत्यधिक महत्व है। इस संस्कार के साथ ही मनुष्य गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होता है। इसमें स्त्री–पुरुष पवित्र अग्नि को साक्षी मानकर एक–दूसरे के साथ सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करने की प्रतिज्ञा करते हैं। यह संस्कार चारों वर्ण – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इस संस्कार का मुख्य प्रयोजन सन्तान उत्पन्न कर पितृ ऋण से मुक्त होना।

(xvi) अन्त्यष्टि संस्कार – यह मनुष्य के जीवन का अन्तिम संस्कार हैं, जो व्यक्ति के निधन हो जाने के पश्चात् सम्पन्न किया जाता है। चूँकि इस संस्कार को शुभ संस्कार नहीं माना गया है। सम्भवतः इसीलिए अधिकांश

गृहसूत्रों में इसका उल्लेख नहीं मिलता है। किन्तु इतना अवश्य है कि यह मनुष्य के जीवन का अन्तिम तथा आवश्यक संस्कार है जो मृत्यु उपरान्त मनुष्य की अन्तिम क्रिया कर सम्पन्न किया जाता है।

छात्र क्रियाकलाप (Student Activity)

उत्तर वैदिक काल की राज्यव्यवस्था, समाज एवं धर्म की व्याख्या कीजिए। (Explain the Later Vedic Period of Polity System, Society and Religion).

Ans.

3.4.1.5 आर्थिक जीवन (Economic Life)

उत्तरवैदिक काल में लोगों का जीवन बहुत खुशाल था। लोग विभिन्न व्यवसायों के माध्यम से अपनी आजीविका चलाते थे। जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है :–

1. पशु पालन (Animal Rearing) – उत्तरवैदिक काल में पशुपालन भी एक मुख्य व्यवसाय था। वे गाय, बैल, भैंस, भेड़, हाथी, बकरी, गधा, ऊंट, घोड़ा आदि पालतू पशु पालते थे। इनमें से सबसे प्रमुख पशु गाय को माना जाता था। बड़े बैल को उत्तरवैदिक काल में 'महोक्ष' कहा जाता था। राजा भी जब किसी का सम्मान करते थे तो गाय देते थे।

2. कृषि (Agriculture) – कृषि इस काल में आर्यों का मुख्य व्यवसाय था अर्थात् उत्तरवैदिक काल में कृषि आर्यो की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार हो गई थी। अथर्ववेद के अनुसार पृथ्वैन्य ने हल एवं कृषि को जन्म दिया। वैदिक ग्रंथों में छह, आठ, बारह और चौबीस तक की संख्या के हल जोतने का उल्लेख मिलता है। जुताई लकड़ी वाले हल और फाल से होती थी। इस काल में गेहूँ (गोंधूम) धान (ब्रीह) जौ (यव), उडदू (माण), मूंग (मृद्ग), चावल, तील, सरसों आदि। अनाजो का वर्णन यजुर्ववेद में मिलता है। अथर्ववेद में सिंचाई के साधन के रूप में वर्ष कूप एवं नहर का उल्लेख किया गया है। अथर्ववेद में दो तरह के धान ब्रीहि एवं तण्डुल तथा ईख (ईक्षु) का भी उल्लेख मिलता है। पैराणिक अख्यान के अनुसार विदेह के राजा जनक भी हल जोतते थे। कृष्ण के भाई बलराम को हलधर कहा जाता है, क्योंकि हल उसका अस्त्र था।

3. उद्योग (Industries) – इस काल के मुख्य व्यवसाय धातुकर्मी मछवारे, धोबी, कुलाल, भिषक (चिकित्सक), जिसका उल्लेख वाजस नेथी संहिता एवं तैत्तिरीय उपनिषद में मिलता है, रथकार आदि थे।

4. कच्चा माल (Raw Material) – यजुर्वेद में सोना (हिरण्य), कांस्य (अथस) लोहा (लोह) सीसा (सीस) आदि का उल्लेख मिलता है। लगभग 1000 ई०पू० में लोहे के साक्ष्य कर्नाटक का धारवाड़ जिले से मिले है। 1500 ई०पू० तांबे के अत्यधिक औजार के जखीरे पश्चिमी उत्तरप्रदेश और बिहार में मिले आर्य लोग राजस्थान के खेतड़ी की ताँबे की खानों का प्रयोग करते थे। ताँबे के उपकरण चित्रित धूँसरमृतमात्र स्थलों में पाये गये है। इनका मुख्य उपयोग युद्ध, आखेट, आभूषण के लिए होता था। उत्तरवैदिक काल युग में कर्भार शब्द लुहार के लिए। अथर्ववेद में 'तक्षा' शब्द का उल्लेख बढ़ई के लिए हुआ है। यजुर्वेद में कैवर्त शब्द मछुआरे के लिए, कुलाल शब्द कुम्भकार के लिए।

5. वस्त्र निर्माण (Dress) – उत्तरवैदिक युग में कपास का कोई स्पष्ट विवरण नहीं मिलता है। ऊर्ण/ऊणा शब्द ऊन के लिए प्रयोग किया जाता था। शण (सन) धनी तथा राजधराने के लोग 'क्षौम' वस्त्र का उपयोग करते थे। शतपथ ब्राह्मण में कौश (रेशम) एवं मैत्रायणी क्षोभ का उल्लेख मिलता है।

6. भवन (Houses) – कृषि व अन्य कार्यों के कारण लोगों ने स्थायी जीवन व्यतीत करने के लिए घर बनाए थे। घर लोग कच्ची ईंटो तथा लकड़ी के खम्भों पर टिक मिट्टी के घरों में रहते थे। कुछ लोग घास फूस के घरों में भी रहते थे।

7. तोल तथा माप (Weights and Measures) – निष्क की तौल चार सुवर्णों के बराबर, एक सुवर्ण 320 रत्ती के बराबर, जबकि शतमान की तौल 100 रत्ती के बराबर होती थी। वाट की मूलभूत इकाई रत्तिका, गुंजा तथा वृष्ठान होती थी।

8. व्यापार तथा वाणिज्य (Trade and Commerce) – उत्तरवैदिक काल में आन्तरिक एवं विदेशी दोनो प्रकार के व्यापार होते थे। आन्तरिक व्यापार यातायात के साधनो से तथा विदेशी व्यापार समुद्री मार्ग के माध्यम से हो रहा था। इस काल में व्यापार वस्तु विनिमय प्रणाली पर ही आधारित था। जिसमें लेन–देन का माध्यम गाय को बनाया जाता था। गाय के व्यापारी गोवणिज कहलाते थे। ऐतरेय ब्राहाण में उल्लिखित श्रेष्ठी शब्द एवं वाजसनेयी संहिता में उल्लिखित गण व गणपति शब्द का प्रयोग शासद व्यावसायिक संगठन के लिए किया गया है।

3.4.1.6 साहित्य सामाजिक संस्थाएँ (Literature Social Institution)

ऋग्वेद के 10वें व अंतिम मण्डल में पुरुष सूक्त में विराट पुरुष के शरीर से चार वर्णों की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है।

3.4.1.7 वर्ण (Varna)

वर्ण (Varna)

बाह्मण (Brahmin) क्षत्रिय (Kshatriya) वैश्य (Vaishya) शुद्र (Shurdas)

उत्तरवैदिक काल (Post Vedic Period) तक समाज चार वर्गों (वर्णों) में विभाजित हो चुका था – ब्राह्मण (Brahmin), क्षत्रिय (Shatriya), वैश्य (Vaishya), शूद्र (Shurdas)

(i) ब्राह्मण (Brahmin) – ब्राह्मणों का कार्य शिक्षा देना, धार्मिक अनुष्ठान व यज्ञ करना। युद्ध के समय राजाओं की जीत के लिए देवाराधा करते थे। बदले में राजा इन्हें धान देते थे।

(ii) क्षत्रिय (Shatriya) – क्षत्रियों का समाज में दूसरा स्थान होता था। ये समाज के सभी वर्गों की रक्षा करते थे और शासन चलाते थे।

(iii) वैश्य (Vaishya) – वैश्यों का समाज में तीसरा स्थान था। इनका कार्य कृषि, पशुपालन, व्यापार और उत्पादन से संबंधित कार्य करते थे।

(iv) शूद्र (Shurdas) – शूद्रो का वर्ण व्यवस्था में चौथा स्थान है। शूद्र को 'अन्यस्यप्रेस्य' अर्थात् तीनों वर्णों का सेवक बतलाया गया है। उत्तर वैदिक काल में शूद्रो के अन्य वर्ग थे चांडाल, निषाद्, पौल्कस, वेदहव आदि। गायत्री मंत्र एवं उपनयन संस्कार इनके लिए मना था। (यानी इसका इनको अधिकार नहीं था)

3.4.1.8 जाति (Caste)

जाति शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम महर्षि यास्क के निरूक्त में कृष्ण जाति के रूप हुआ है। जाति के लिए अंग्रेजी भाषा में प्रयुक्त शब्द 'Caste' पुर्तगाली भाषा के 'Casta' शब्द से बना है जिसका अर्थनस्ल। इस आधार पर कहा जा सकता है कि जाति वह सामाजिक समूह है जिसकी सदस्यता का आधार एवं प्रमाण वंशानुक्रम (Heredity) होता है। अर्थात् जाति एक वंशानुक्रम शील गुणों का एक गुच्छ हे। चाल्स्र कूले के अनुसार, "जब एक वर्ग पूर्णतः वंशानुगत होता है तो हम उसे एक जाति कह सकते है।" (According to Charles Cooley, "When a class is some what hereditary, we may call it caste.") जाति वंशानुगत के आधार पर व्यक्तियों का एक ग्रुप या समूह है। जाति खान–पान, रहन–सहन, विवाह, व्यवसाय, रिति–रिवाज आदि तौर–तरीकों

में अनेक संबंधो व प्रतिबन्धो में बंधी हुई होती है। समाज में इसके सभी सदस्यों की स्थिति वंशानुक्रम (Heredit) के आधार पर निर्धारित होती है।

जाति की विशेषताएँ (Characteristics of Caste) – जाति की मुख्य विशेषताएँ निम्न है –

1. प्रत्येक जाति की समाज में अपनी एक पहचान होती है।
2. जाति का आधार वंशानुक्रम होता है।
3. प्रत्येक जाति के अपने रिति–रिवाज, रहन–सहन, कार्यशैली अलग–अलग होती है।
4. एक जाति में अनेक उपजातियां पाई जाती है।
5. जाति में अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध होते है।
6. जातियों में जातीय चेतना (Caste Consciousness) पाई जाती है।
7. प्रत्येक जाति में सामाजिक स्तीकरण (Social Stratification) पाया जाता है। अर्थात् ऊंच–नीच के आधार पर जातियों का सामाजिक ढंग अलग–2 होता है।
8. एक जाति के व्यक्ति अपनी ही जाति में विवाह करते है।

3.4.1.9 अस्पृश्यता (Untouchability)

वैदिक युग के सयम समाज वर्णों में बढ़ा हुआ। उत्तर वैदिक युग में कई सामाजिक समूह थे, जैसे– पुजारी, राजा, सैनिक, व्यापारी, कृषक, पशुपालक, शिल्पी, मजदूर, मछली पकड़ने वाले और आदिवासी लोग, शिकारी और खाद्य संग्राहक और ऐसे लोग जो दफनाने और दाह–संस्कार का काम करते। इसे लोगो को पुजारी घृणा व नफरत की दृष्टि से देखते थे। इन लोगों के साथ संबंध रखना पाप समझते थे। उत्तर वैदिक युग अस्पृ"यता बहुत अधिक थी। जिन लोगो को व्यवसाय के आधार पर शुद्र समझा जाता था वे लोग तीनो वर्णों के लोगों की सेवा करते थे। वे कोई धार्मिक अनुष्ठान भी नहीं कर सकते थे। शुद्रों के लिए मंदिरो आदि में पूजा करने की मनायी थी।

3.4.1.10 लैंगिक संबंध (Gender Relations)

वैदिक काल में लैंगिक संबंध अच्छे थे। पती–पत्नी संभोग सहवास करके संतान पैदा करते थे। गृहस्थ कार्य को मिलकर सप्रेम पूरक चलाते थे। लिंग के आधार पर वैदिक युग में भेदभाव क्रम देखने को मिलता है।

ऋग्वैदिक काल में महिलाआं की स्थिति सम्मान जनक थी। वे अपने पति के साथ धार्मिक अनुष्ठानों में शामिल होती अर्थात् यज्ञ कार्यों में पति के साथ सम्मिलित होकर दान दिया करती थी। महिलाएँ शिक्षा ग्रहण करती थी। उनमें से कुछ स्त्रियां अध्यापन का कार्य भी करती थी। लड़कियों का भी उपनयन संस्कार किया जाता था। ऋग्वेद में लोपामुद्रा, घोषा, सिकता, अपाला आदि विदुषी महिलाओं का वर्णन मिलता है। इन विदुषी कन्याओं को 'ऋषी' उपाधि से सम्मानित किया गया था। शिक्षा की प्रणाली गुरूकूल पद्धति पर आधारित थी। सामान्यत गुरूकूलों में शिक्षण–अधिगम का कार्य मौखिक रूप में होता था। विवाह न करने वाली कन्याओं को पिता की सम्पति में बराबर का हिस्सा दिया जाता था। आजीवन अविवाहित कन्याओं को अमालू कहा जाता था। समाज में एक पत्नी प्रथा प्रचलित थी। सामान्य तौर पर बहुप्रथा एवं बाल विवाह का प्रचलन नहीं था। विवाह की आयु 16–17 वर्ष होती थी। सती प्रथा, पर्दाप्रथा एवं तलाक प्रथा उल्लेख नहीं मिलता है। विधवा का पुनर्विवाह, अन्तर्जातीय विवाह प्रचलित था। समाज में नियोग प्रथा थी। जिसके तहत् पुत्र विहीन विधवा पुत्र प्राप्ति हेतु अपने देवर से यौन संबंध स्थापित कर सकती थी एवं बहुपतीत्व प्रथा का भी प्रचलन था। इस प्रकार कह सकते है वैदिक काल में लैंगिक संबंध अच्छे थे। कुल मिलाकर महिलाओं की स्थिति ठीक थी। महिलाओं व पुरुषों के लैंगिक संबंध समाज के दृष्टिकोण में नैतिक व धार्मिक रूप से अच्छे कहे जा सकते है। महिलाऐं सभा एवं समितियों में भाग लेती थी। राजकाज के कार्यों में भी सहयोग करती थी। पितृसता प्रणाली थी, लेकिन परिवार के सभी निर्णयों में महिलाओं की भागीदरी महत्त्वपूर्ण थी।

3.5 प्रगति समीक्षा (Check your Progress)

(क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :– (Filling the blanks)

(i) पूर्व वैदिक काल का समय ..... था।

(ii) आर्यों का मुख्य व्यवसाय ..... था।

(iii) सांख्य दर्शन के ..... प्रवर्वतक थे।

(iv) संस्कारों की संख्या ..... थी।

(v) पृथ्वी ..... की जन्नी माता थी।

(vi) अश्वमेघ यज्ञ ..... को चुनौती देने के लिए होता था।

(vii) शिक्षा से पूर्व ..... संस्कार संपन्न किया जाता था।

(viii) ऋग्वेद 10 मंडल तथा ..... सूक्त है।

(ख) सत्य/असत्य कथन :– (True/False)

(i) भारत में आर्यो के प्रारंभिक इतिहास की मुख्य जानकारी का स्त्रोत वेद है। (सत्य/असत्य)

(ii) ऋग्वेद के तीन पाठ है – (i) साकल (ii) बाल खिल्भ (iii) वासकल (सत्य/असत्य)

(iii) आर्य शब्द का अर्थ है श्रेष्ठ, उदान्त, कुलीन। (सत्य/असत्य)

(iv) आर्य की भाषा संस्कृत नहीं थी। (सत्य/असत्य)

(v) ऋग्वेद की सर्वाधिक पवित्र नदी सरस्वती नहीं थी। (सत्य/असत्य)

(vi) असतोमासडऋगमयो वाक्य ऋग्वेद से लिया गया है। (सत्य/असत्य)

(vii) जिस कर्म की पूर्ति से स्त्री प्रदत्त शुक्र धारण करती है उसे गर्भाधान कहते हैं। (सत्य/असत्य)

(viii) जूते हुए खेत को उर्वरा कहा जाता था। (सत्य/असत्य)

(ix) वेदांगो की संख्या 6 है और वेदों की संख्या 4 है। (सत्य/असत्य)

(x) संगीत के बारे जानकारी ऋग्वेद से मिलती है। (सत्य/असत्य)

(xi) आर्य लोग दो प्रकार के वस्त्र प्रयोग करते थे। (सत्य/असत्य)

(xii) शिशु के जन्म के उपरान्त जातकर्म संस्कार किया जाता था। (सत्य/असत्य)

(xiii) वर्णों की संख्या तीन थी। (सत्य/असत्य)

(xiv) आश्रम चार थे। (सत्य/असत्य)

(xv) सबसे बड़ी इकाई गृह तथा छोटी इकाई राष्ट्र थी। (सत्य/असत्य)

3.6 सारांश (Summary)

- भारत में आर्यो के प्रारंभिक इतिहास की जानकारी का मुख्य स्त्रोत वेद है। वेद शब्द का अर्थ है – ज्ञान।
- आर्य सर्वप्रथम पंजाब एवं अफगानिस्तान में बसे मैक्स मूलर आर्यो का मूल निवास स्थान मध्य एशिया को माना है।

- भारत में आर्यो की जानकारी ऋग्वेद से भी मिलती है। इस वेद में आर्य शब्द का उल्लेख 36 बार हुआ है। आर्यो द्वारा निर्मित सभ्यता वैदिक सभ्यता कहलाई। आर्य शब्द का अर्थ – श्रेष्ठ, उदात्त, कुलीन।
- आर्यो की भाषा संस्कृत थी व मुख्य व्यवसाय पशुचारण व उसके साथ खेती भी करते थे।
- ऋग्वैदिक काल की मुख्य सामाजिक संस्थाएं थी – (i) कुल परिवार (ii) ग्राम (iii) विश (कबीला) (iv) जन (v) राष्ट्र। ग्राम के मुखिया को ग्रामिणी एवं विश के प्रधान को विशपति तथा जन के शासक को राजन कहा जाता था।
- ऋग्वैदिक युग की सावजनिक संस्था 'सभा' वृद्ध और अभिजात वर्गीय लोगों की संस्था थी। ऋग्वेद में सर्वत्र आर्यों के निवास स्थान के लिए सप्तसैन्धव शब्द का प्रयोग किया गया है। समिति जनता की विशाल संस्था होती थी।
- ऋग्वेद एक संहिता है जिसमें दस मण्डल तथा 1028 सूक्त हैं। ऋग्वेद के तीन पाठ है। (i) साकल – 1017 मंत्र (ii) बालखिल्य–11 मंत्र (iii) वाष्कल–56 मंत्र
- ऋग्वेद के ब्राहाण ग्रंथ ऐतरेय व कौषितिकी है। आयुर्वेद को ऋग्वेद का उपवेद कहा जाता है। ऋग्वेद की सर्वाधिक पवित्र नदी सरस्वती थी। असतो मा सद्गमय वाक्य ऋग्वेद से लिया गया है।
- ऋग्वेद हिन्द–यूरोपीय भाषाओं का सबसे प्राचीनतम और पवित्र गंथ है। ऋग्वेद में अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरूणा आदि देवताओं की स्तुतियाँ संग्रहीत हैं, जिनकी रचना विभिन्न गोत्रों के ऋषियों और मन्त्रसृष्टाओं ने की है।
- ऋग्वेद में 'संघ' नामक उच्च शिक्षण–संस्थान का उल्लेख हुआ है। संघ शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ऋग्वेद में किया गया, जो बाद में बौद्ध धर्म का केन्द्र–बिन्दु बना।
- ऋग्वैदिक काल समाज में एक पत्नी प्रथा थी एवं पितृसत्तात्मक था विधवा विवाह पर रोक थी। खुद की संतान न होने पर दत्तक पुत्र को अपनाया जाता था। संपति का वारिस पुत्र के न रहने पर पुत्री होती थी।
- राज्याधिकारियों में पुरोहित एवं सेनानी मुख्य थे। रथकार तथा कम्मादिनामक अधिकारी रत्नी कहे जाते थे इनकी संख्या राजा सहित करीब 12 हुआ करती थी।
- 'पुरप' दुर्गपति होते थे। 'स्पश' जनता की गतिविधियों को देखने वाले गुप्तचर होते थे।
- संधि–विग्रह के प्रस्तावों को राजाओं के पास ले जाने वालो को दूत कहा जाता था।
- वाजपति गोचर भूमिका अधिकारी एवं कुलप परिवार का मुखिया होता था।
- उग्र (पुलिस) अपराधियों को पकड़े का कार्य करती थी।
- सभा– यह श्रेष्ठ एवं संभ्रांत लोगों की संस्था थी।

- समिति – यह केन्द्रीय राजनीतिक संस्था थी। सामान्य जनता का प्रतिनिधित्व करती थी। राजा को चुनने एवं पदच्युत करने का अधिकार होता था। समिति के अध्यक्ष को 'ईशान' कहते थे।
- भागन्दुध – विशिष्ट अधिकारी जो राजा के अनुयायियों के मध्य बलि भेंट का समुचित बंटवारा एवं कर का निर्धारण करता था।
- ऋग्वेद में उललेख 33 बार हुआ है जिसमें अनेक स्थानों पर यव एवं धान्य शब्द का उल्लेख मिलता है। 'गो' शब्द प्रयोग ऋग्वेद में 174 बार किया गया है। युद्ध का मुख्य कारण गायों की गवेषणा अर्थात् 'गावेष्टि' था। पुरोहितों को दान के रूप में गायें और दासियाँ दक्षिणा दी जाती थी।
- जुते हुए खेत को – 'उर्वरा' कहा जाता था।
- बैल के लिए – 'बृक' शब्द प्रयोग किया जाता था।
- हल के लिए – 'लांगल' शब्द प्रयोग किया जाता था।
- अनाज नापने वाले पात्र का नाम – 'ऊर्दर'
- अनाज के भण्डारण करने वाले कमरे (कोठार) को 'स्थिवि' कहते थे।
- गोबर की खाद के लिए – 'करीष' शब्द प्रयोग किया जाता था।
- 'अवत' शब्द का प्रयोग नलकूपों के लिए होता था।
- 'कीनांश' शब्द हलवाहे के लिए प्रयोग किया जाता था।
- बादल के लिए – 'पर्जन्य' शब्द प्रयोग किया जाता था।
- 'सीता' शब्द का प्रयोग हल से बनी नालियों के लिए होता था।
- 'पणि' – व्यापार के लिए भ्रमण करने वाले को पणि कहा जाता था।
- 'गविष्टि' – शब्द का प्रयोग युद्ध के लिए होता था जिसका अर्थ है – गायों की खोज।
- गाय – अघन्या (जिसका वध न हो)
- आमाजू – जीवन भर अविवाहित रहने वाली महिलाओं को कहा जाता था।
- दुहिता – पुत्री को कहा जाता था।
- उर्वरा – ऊपजाऊ भूमि को कहा जाता था।
- गोमत – धनी व्यक्ति को गोमत कहा जाता था।
- तक्षण – बढ़ई का काम करने वाले को तक्षण कहा जाता था।

- ऋग्वेद में बेटी के लिए कामना व्यक्त नहीं की गई है, जबकि संतान और पुश की कामना सूक्तों में बार–बार मिलती है। इस युग में नियोग–प्रथा और विधवा–विवाह के प्रचलन का आभास मिलता है। बाल–विवाह का कोई उदाहरण नहीं है।
- पृथ्वी – सृजन की देवी है।
- घौ – आकाश का देवता (सबसे प्राचीन)
- वरूण – जल का देवता है। पृथ्वी एवं सूर्य के निर्माता, विश्व के नियामक एवं शासक, सत्य का प्रतीक।
- सरस्वती – विद्या की देवी है।
- सोम– वनस्पति देवता।
- विष्णु – विश्व के संरक्षक व पालककर्ता
- उषा – प्रगति एवं उत्थान–देवता
- पूषत – पशुओं का देवता
- रूद्र– पशुओं के देवता है।
- मरूत – आधी–तूफान का देवता।
- आ"वन – विपत्तियों को हरने वाले देवता
- इन्द्र – वर्षा का देवता एवं युद्ध का नेता
- सूर्य – तेजका देवता है।
- अश्विन – दुर्भाग्य एवं रोगों को दूर करने वाला देवता है।
- अग्नि – देवता एवं मनुष्य के बीच मध्यस्थ
- आर्यों का मुख्य पेय पदार्थ सोमरस था और यह प्राकृतिक जड़ी बूटियों से बनाया जाता था।
- आर्य लोग तीन प्रकार के वस्त्रों का प्रयोग करते थे – वास, अधिवास, उष्णीय। अन्दर जो कपड़ा डालते थे उस को नीवि कहते थे।
- ऋग्वैदिक काल के प्रमुख खाद्य को 'शकम' या 'करीष' के नाम से जाना जाता था।
- ऋग्वैदिक काल के प्रमुख खाद्यान्न चावल और जौ थे। इस काल में उन के लिए प्रसिद्ध गंधार था।
- वेदों की संख्या चर है – 1. ऋग्वेद 2. यजुर्वेद 3. सामवेद 4. अथर्ववेद
- ऋग्वेद से चिकित्सा शास्त्र से संबंधित जानकारी मिलती है।

- यजुर्वेद – यजुर्वेद से युद्धकला से संबंधित जानकारी प्राप्त होती है।
- समवेद – कला व संगीत के बारे जानकारी प्राप्त होती है। इसी वेद से सबसे पहले 7 स्वरों (सा ....रे..... गा .... मा .....प ..... ध ..... नि) की प्राप्ति हुई। इसे भारतीय संगीत का जनक कहा जाता है। सामवेद का मंत्र सूर्य देवता को समर्पित है। इस प्रकार यह कह सकते है कि साम का अर्थ है – गान।
- ऋग्वेद, सामवेद तथा यजुर्वेद को वेदत्रयी के नाम से भी जाना जाता है।
- अथर्ववेद – इस वेद को ब्रहमवेद (श्रेष्ठवेद) कहा जाता है। इससे वेद भवन निर्माण कला से संबंधित जानकारी मिलती है। इसमें 20 अध्याय, 731 सूक्त व 6 कमंत्र है।
- उपवेदों की संख्या चार है – 1. आयुर्वेद 2. धनुर्वेद 3. गंधर्ववेद 4. शिल्पवेद
- वेदांगों की संख्या 6 है – 1. शिक्षा 2. कल्प 3. व्याकरण 4. विरूक्त 5. छंद 6. ज्योतिष
- संस्कार 16 है – 1. गर्भाधान 2. पुंसवन 3. सीमन्तोन्नयन 4. जातकर्म 5. नामकरण/नाधेय 6. निष्क्रमण 7. अन्नप्राशन 8. चूड़ाकर्म/मुंडन 9. कर्ण–वेध 10. विद्यारम्भा 11. उपनयन 12. वेदारम्भ 13. समावर्तन 14. विवाह 15. वानप्रस्थ 16. अंत्येष्टि
- वर्ण 4 है। 1. ब्राहाम्ण 2. क्षत्रिय 3. वैश्य 4. शूद्र
- पुरुषार्थ 4 है धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष
- आश्रम 4 है – प्राचीन समय से ही आश्रम को भारतीय समाज का मुख्य आधार माना गया है आश्रम शब्द 'श्रम' धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है – परिश्रम करना। आश्रम का आश्य जीवन के विभिन्न स्तरों से है इसलिए प्रत्येक आश्रम की अवधि 25 वर्ष मानी गई है। 1. ब्रहाचर्य आश्रम (0–25 वर्ष) – इस आश्रम में गुरू के पास रह कर शिक्षा प्राप्त करना। 2. गृहस्थ आश्रम (25–50 वर्ष) – इस आश्रम को चारों आश्रमों में से महत्वपूर्ण माना गया है। इस आश्रम में व्यक्ति विवाह करता है, संतान उत्पन्न व अन्य कार्य करता है। 3. वानप्रस्थ (50–75 वर्ष) वन की ओर प्रस्थान करना व दो पुरूषार्थ धर्म एवं मोक्ष की प्राप्ति वनों में होती थी। 4. सन्यास (75–100 वर्ष) – इस आश्रम में व्यक्ति सन्यासी की तरह जीवन यापन करता था। व्यक्ति गृहस्थ आश्रम से संयास आश्रम में सीधा जा सकता है। इनमें से गृहस्थ आश्रम को उतम माना गया है।
- शूद्र – गायत्री मंत्र का उच्चारण नहीं कर सकते थे और नहीं जनेऊ पहन सकते थे। यह तीन उच्च वर्णों को अधिकार था (ब्राहाम्ण, क्षत्रिय, वैश्य) लेकिन राजा के राज्याभिषेक से जुड़े हुए सामाजिक सार्वजनिक अनुष्ठानों में शूद्रो को हिस्सा लेने की इजाजत थी। क्योंकि वे भी मूलतः आर्य समुदाय के वंश माने जाते थे।
- वर्ण व्यवस्था की शुरूआत वैदिक आर्यो ने की थी।

- बाल गंगाधर तिलक ने उतरी ध्रुव को आर्यो का मूल निवास माना है। यह वर्णन इनकी पुस्तक "The Arctic Home of the Aryans" में मिलता है।
- आर्यों का मूल निवास को सबसेअधिक प्रामाणिक मत (विचार) आल्प्स पर्वत के पूर्वी भाग में स्थित यूरेशिया का है।

3.7 सूचक शब्द (Key-words)

शब्द (प्राचीन नाम) अर्थ (आधुनिक नाम)	शब्द (प्राचीन नाम) अर्थ (आधुनिक नाम)
• गोप्ता → राजा	• दात्र या सृणि → फसल काटने का हँसुआ
• उर्दर → अनाज मापक	• गोमत → धनी व्यक्ति
• स्थिवी → अनाज भण्डारण/ अनाज जमा करने वाली कोठरी	• श्रेत्रिय → विद्वान ब्राहाम्ण
• यव → जौ	• कुष्टि → कृषि
• कीवांस या कीनाश → किसान	• वहतु → दहेज
• अजा → बकरी	• विदुषी → विद्वान महिलाएँ/ज्ञान से परिपूर्ण
• अवि → भेड़	• करीष → गोबर की खाद
• तनय और सुवीर → पुत्र या बेटा	• तनया एवं दुहिता/दुहित्री → पुत्री या बेटी अर्थात् दूध दुहने वाली
• गविष्टि → गवेषणा का शाब्दिक अर्थ गायों की खोज करना लेकिन इस शब्द का अर्थ लड़ाई भी है क्योंकि गायों के कारण अनेक लड़ाइयाँ हुई थी।	• वप्ता → नाई
• पवीरवत् → फाल वाला हल	• लांगल → हल
• बेकनाट या सूदखोर → ऋण या कर्ज देकर ब्याज	• पर्जन्य → बादल

लेने वाला	
• गव्य या गव्यति → चारागाह	• उर्वरा → कृषि योग्य भूमि या जुता हुआ खेत
• बृक → बैल	• कुसीद → ऋण
• आमाजू → आजीवन अविवाहित रहने वाली लड़कियां	• सृणि या दात्र → दरांती
• अघन्या → गाय अर्थात्	• तक्षण/तक्षक/तक्षा → बढ़ई
• सुरा → शराब	• मधु → शहद
• उग्र → पुलिस	• सीता → हल से बनी नालियां
• कुन्या, कूप, अवत → ये सिंचाई के साधन थे।	• वाय/तंतवायु → जुलाहा (वस्त्र बनाने वाला)
• अरित्र → पतवार	• क्षीरौदन → खीर
• अरितृ → नाविक	• धन्व → मरूस्थल
• कुटुम्ब → परिवार	• गोहंता/गोहन → अतिथि अर्थात् गाय का वध करने वाला
• गृहपति या कुलप → ज्येष्ठ पुरुष	• गोधूलि → समय
• गवभूति → दूरी	

3.8 स्वयं मूल्यांकन के लिए प्रश्न (Self-AssessmentTest)

भाग (Part) (क) दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Question)

प्र.1 पूर्व वैदिक काल की व्याख्या कीजिए। (Explain the Prevedic Period).

प्र.2 उत्तर वैदिककाल पर एक लेख लिखिए। (Write a note on Later Vedic Period).

प्र.3 ऋग्वैदिक काल या पूर्व वैदिक काल की राज्यव्यवस्था, समाज और धर्म की विस्तार से चर्चा कीजिए। (Discuss in detail Polity System, Society and Religion of Pre-Vedic Period).

प्र.4 वैदिक काल की राजनीतिक व्यवस्था को समझाइये। (Explain political system of vedic period).

प्र.5 वैदिक संस्कृति से आप क्या समझते है ? वर्ण, जाति एवं लैंगिक संबंधों का संक्षेप में वर्णन कीजिए। (What do you mean by Vedic Culture? Describe in brief Varna, Caste and Gender Relation.).

प्र.6 उत्तर वैदिक काल की राज्यव्यवस्था, समाज और धर्म की विस्तार से चर्चा कीजिए (Discuss in detail Polity Society and Religion. Explain Society and Religion of Vedic Period).

प्र.7 वैदिक काल, समाज धर्म को समझाइए। (Explain Society and Religion of Vedic period).

प्र.8 उत्तर वैदिक कालीन आर्यो में राजनैतिक, आर्थिक व धार्मिक जीवन का वर्णन कीजिए। (Analyse the political, economic and relgion of the life of later Vedic Aryans). GJU Hisar 2019

भाग (Part-B) (ख) लघु उत्तरीय प्रश्न (Very Short Question)

प्रश्न 1. पूर्व वैदिककाल काल क्या है ? (What is Pre-Vedic Period)

प्रश्न 2. उत्तर वैदिक काल के समाज पर चर्चा कीजिए? (Discuss the Society of Post Vedic Pediod)

प्रश्न 3. वर्ण को परिभाषित कीजिए।(Defineof Varna)

प्रश्न 4. जाति क्या है? (What is Caste)

प्रश्न 5. अस्पृश्यता से आप क्या समझते है ? (What do you mean by untouchability)

प्रश्न 6. संस्कार पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए। (Write a short note on Sanskar).

प्रश्न 7. वैदिक संस्कृति को परिभाषित कीजिए। (Define of Vedic Culture).

भाग (Part-C) (ग) बहुवैकल्पिक प्रश्न (Objective Types Questions)

(इनके उत्तरदायी और कोष्ठक में देखिए)

(i) आर्यो का मुख्य पेय पदार्थ क्या था ?

(a) दूध (b) चाय (c) सोमरस (d) असवगंधा उत्तर– C

(ii) आर्य शब्द का अर्थ है –

(a) घुड़सवार (b) यायावर (c) राष्ट्र (d) उत्कृष्ट उत्तर– D

(iii) सबसे प्राचीन वेद –

(a) सामवेद (b) धनुर्वेद (c) ऋग्वेद (d) यजुर्वेद उत्तर– C

(iv) आर्यो की भाषा थी –

(a) संस्कृत (b) पालि (c) अरबी (d) उर्दू उत्तर– A

(v) वेदों की संख्या कितनी है ?

(a) 2 (b) 4 (c) 6 (d) 10 उत्तर– B

(vi) आजीवन अविवाहित रहने वाली कन्या को वैदिक काल में क्या कहा जाता था ?

(a) संयासी (b) वाजसनेयी (c) अखुर (d) अमाजु उत्तर– D

(vii) ऋग्वेद में 'जन' और 'विश' शब्द का उल्लेख कितनी बार हुआ है ?

(a) 250, 175 (b) 270, 170 (c) 200, 100 (d) 170, 33 उत्तर– B

(viii) 'उसतो मा सद्गमय' किस वेद से लिया गया है ?

(a) ऋग्वेद (b) यजुर्वेद (c) सामवेद (d) अथर्ववेद उत्तर– A

(ix) उपवेदों की संख्या कितनी है ?

(a) 4 (b) 6 (c) 8 (d) 2 उत्तर– A

(x) भारतीय संगीत का जनक माना जाता है ?

(a) ऋग्वेद (b) उपनिषद (c) वेदांग (d) सामवेद उत्तर– D

(xi) सोम देवता का संबंध है –

(a) वर्षा (b) वनस्पति (c) विद्या (d) तूफान उत्तर– B

(xii) मनुस्मृति में विवाह के कितने प्रकारों का उल्लेख किया गया है?

(a) 8 (b) 16 (c) 6 (d) 4 उत्तर– A

(xiii) ऋग्वैदिक काल की सर्वाधिक महत्वपूर्ण नदी –

(a) सिंधु (b) गंगा (c) रावी (d) सरस्वती उत्तर– D

(xiv) 'अवि' शब्द किस के लिए प्रयोग किया जाता था ?

(a) बकरी (b) भेड़ (c) हल (d) बढ़ई उत्तर– B

(xv) उपनिषदों की संख्या –

(a) 108 (b) 16 (c) 18 (d) 1028 उत्तर– A

3.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answer to Check your Progress)

(भाग–क)

(i) 1500 ई. पूर्व – 1000

(ii) करसी

(iii) कपिलमुनी

(iv) सोलह

(v) जननी

(vi) युद्ध

(vii) उपनयन

(viii) 1028

(भाग –ख)

(i) सत्य

(ii) सत्य

(iii) सत्य

(iv) सत्य

(v) सत्य

(vi) सत्य

(vii) सत्य

(viii) सत्य

(ix) सत्य

(x) सत्य

(xi) सत्य

(xii) सत्य

(xiii) असत्य

(xiv) सत्य

(xv) असत्य

3.10 संदर्भित एवं विशेष अध्ययन ग्रन्थ (References and Suggested Readings)

- द्विजेन्द्र नारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली – प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यानन्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नवम्बर 2018
- सौरभे चौबे : प्राचीन भारत का इतिहास, यूनीवर्सल बुक्स 1519 अल्लापुर, इलाहाबाद, संशोधित संस्करण : 5 मार्च, 2018

- महे"ा कुमार बर्णवाल – संक्षिप्त इतिहास NCERT सार, कोसमोस पब्लिकेशन मुखर्जीनगर, दिल्ली जनवरी 2019 ।
- K.L. Khurana : Ancient India (From Earliestto 1206A.D.), Lakshmi Narain Agarwal, Agra: Eighteenth Edition: 2019
- डी०एन० झा प्राचीन भारत का इतिहास विविध आयाम, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पुनर्मुद्रण : अक्तूबर 2016 ।
- रामशरण शर्मा– भारत का प्राचीन इतिहास, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा भारत में प्रकाशित 2/11 भूतल अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्लीः चौथा हिंदी संस्करण 2019
- स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन – सामान्य अध्ययन, राजीव अहीर, नई दिल्ली।
- डॉ० विनय कुमार सिंह : कार्यकारी सम्पादक, यूनीक सामान्य अध्ययन, यूनीक पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	**AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA**
LESSON NO. 04	**VETTER :**
महाजनपद एवं मगध साम्राज्य का अभ्युदय (Mahajanapadas and Emergence of Magadha Empire)	

अध्याय सरंचना (Lesson Structure)

4.1. अधिगम उद्दे"य (Learning Objectives)

4.2. परिचय (Introduction)

4.3 **अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)**

4.3.1. महाजनपद युग (MahajanPads Period)

4.3.2. मगध साम्राज्य का उदय या अभ्युदय (The rise of Magadha Empire)

4.3.3. मगध साम्राज्य के विस्तार के कारण या मगध की सफलता के कारण (Reasons for the Expansion of Magadha Empire)

4.4. **अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of text)**

4.4.1 धार्मिक आन्दोलन : बौद्ध और जैन धर्म (Religious Movements : Buddhism and Jainism)

4.4.2. बौद्ध धर्म (Buddhism)

4.4.2.1. महात्मा बुद्ध का जीवन परिचय (Life History of Mahatma Baudh)

4.4.2.2. बौद्ध धर्म की "िक्षाएँ एवं सिद्धान्त (Teaching and theory of Buddhism)

4.4.2.3 बौद्ध धर्म का विकास या प्रसार (Development or range of Buddhism)

4.4.2.4. बौद्ध धर्म के पतन के कारण (Reason of decline of Buddhism)

4.4.3 जैन धर्म (Jainism)

4.4.3.1. महावीर स्वामी का जीवन परिचय (Life History of Mahavir Swami)

4.4.3.2. जैन धर्म की "िक्षाएं एवं सिद्धान्त (Teaching and theory of Jainism)

4.4.3.3 जैन धर्म के विस्तार के कारण (Reason for the espansion of Jainism)

4.5. प्रगति समीक्षा (Check your Progress)

4.6. सारां"ा (Summary)

4.7. सूचक शब्द (Key works)

4.8 स्व–मूल्यांकन परीक्षा (Self. Assessment Test) (SAT)

4.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्र"नोत्तर (Answers to check your Progress)

4.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री (References/Suggested Reading)

4.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात्, विद्यार्थी योग्य होगें :–

- सोलह महाजनपदों में से मगध साम्राज्य किस प्रकार शक्ति"ाली साम्राज्य बना इस से पाठकों को अवगत करवाना।
- मगध का उत्थान किस प्रकार हुआ अधिगमकत्ताओं के बीच चर्चा करना।
- मगध के उत्थान की सफलता के क्या कारण थे इस पर ि"ाक्षार्थियों के बीच परिचर्चा करना।
- मगध साम्राज्य के उदय में किन व"ाों के शासकों की अह्म भूमिका रही, इससे छात्रों को रूबरू करवाना।
- मगध साम्राज्य के संदर्भ में वि"ोष धार्मिक आन्दोलनों पर विस्तार पूर्वक चर्चा करना।
- वर्तमान समय में इसकी क्या प्रांसगिकता है इस पर एक गोष्ठी करवाना।
- सर्वोच्चता एवं वर्चस्व के लिए लगातार संघर्ष के बीच मगध को किस प्रकार सफलता मिली इस पर जिज्ञासु पाठकों के बीच क्रिया–कलाप करवाना।
- बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म के उद्य (उद्भव) के क्या कारण थे। इससे छात्रों को अवगत करवाना।
- जन साम्राज्य में बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म का किस प्रकार से फैलाव (विस्तार) हुआ इनकी जानकारी अधिगमकर्ताओं को देना।

4.2. परिचय (Introduction) :- पारंपरिक साहित्य के अनुसार छठी शताब्दी ई. पू. में 16 बडे राज्य (महाजनपद) थे। (छठी शताब्दी ई.पू. वि"व इतिहास के लिए महत्वपूर्ण शताब्दी मानी जाती है। यह एक

ऐसी सदी थी जिसमें पूरे वि"व में धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक बदलाव आए। भारत भी इन परिवर्तनों से अछूता नही रहा। इन महाजनपदों को पोड़"ा महाजनपदों के नाम से भी जाना जाता था। इनमें से प्रत्येक में कई कृषक बस्तियां शामिल थी। महाजनपदों में से अधिकतर राजतंत्र थे परन्तु कुछ राज्य गणतंत्र भी थे। इनका उल्लेख हमें बौद्ध ग्रंथ के ''अंगुत्तरनिकाय'' में मिलता है। पाणिनी ने अपने ''अष्टाध्यायी'' बाईस जनपदों का उल्लेख किया है। 'महावस्तु' में केवल सात महाजनपदों का उल्लेख मिलता है। लेकिन बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में सोलह का उल्लेख मिलता है। ये राज्य थे अंग, मगध, का"ी, कौ"ाल, वज्जि (वृज्जि), मल्ल, चेदि, वत्स, कुरू, पांचाल, मत्स्य, शूरसेन, अ"मक, अवन्ति, गन्धार, कम्बोज। भारत में कां"ी इनमें से सबसे अधिक शक्ति"ाली था। लेकिन छठी शताब्दी मे का"ी, को"ाल, मगध और वज्जि महासंघ यही चार राज्य महत्वपूर्ण रह गए। इन सभी में आपसी संघर्ष चलता रहा अन्त में मगध इन में से एक शक्ति"ाली राज्य बनकर सामने आया। मगध का उत्थान उसके प्रथम शक्ति"ाली शासक विम्बिसार था। जो छठी शताब्दी के उत्तरार्ध में केवल 15 वर्ष की छोटी आयु में सिंहासन पर बैठा जो बौद्ध धर्म का संरक्षक था। शुरूआत में मगध की राजधानी गिरिव्रज थी लेकिन बाद में राजगृह को राजधानी बनाया गया था।

भारत में ईसा पूर्व छठी शताब्दी को ' धार्मिक क्रान्ति का काल' भी कहा जाता है क्योंकि ब्राह्मणों के प्रभुत्व, यज्ञ एवं कर्मकाण्ड के विरोध में यह आन्दोलन चला। इस आन्दोलन में जैन धर्म और बौद्ध धर्म प्रमुख थे। जिन्होनें एकें"वरवाद तथा अंहिसा पर बल दिया। इस अध्याय में सोलह महाजनपदों, मगध साम्राज्य एवं धार्मिक आन्दोलन : **बौद्ध एवं जैन का विस्तार से अध्ययन करेंगे।**

4.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

4.3.1 महाजनपद युग (Mahajanapadas Period):- महात्मा बुद्ध के जन्म के पूर्व लगभग छठी सदी ई.पू. उत्तरी भारत में कुल 16 बडे राज्य स्थापित थे। जिन्हे महाजनपद कहा जाता था। जनपद से अभिप्राःय एक ऐसे क्षेत्र से है जहां किसी कुल (Clan) अथवा जनजाति (Tribe) के लोग आकर बस जाते है। महाजनपदों का उल्लेख हमें बौद्ध ग्रंथ ''अगुत्तरनिकाय'' (Anguttaranikaya) में मिलता है। ये दो प्रकार के थे। इनमें से अधिकां"ा राजतंत्र और कुछ गणतंत्र थे जैनग्रन्थ 'भगवतीसूत्र' (Bhagwatisutra) में भी 16 महाजनपदों (Sixteen Mahajanapadas) का उल्लेख किया गया है। दोनों की सूची में अन्तर है। अधिका"ा इतिहासकार व विद्वान इस बौद्ध ग्रन्थ की सूची पर ही बल देते है। **इनकी सूची निम्नप्रकार से है :–**

क्र.सं.	महाजनपद (Mahananapadas)	राजधानी (Capital)

1	अंग (Anga)	चम्मा
2	मगध (Magadha)	गिरित्रज (राजगृह)
3	का"ी (Kashi)	वाराणसी
4	को"ाल (Kosala)	श्रावस्ती/अयोध्या (फैजाबाद)
5	मल्ल (Malla)	कु"ीनगर/पावापुरी (देवरिया गौरखपुर)
6	वज्जि (Vajji)	विदेह एवं मिथला
7	चेदि (Chedi)	शक्तिमती (सोत्थिवती)
8	वत्स (Vatsa)	कौ"ाम्बी (इलाहाबाद)
9	कुरू (kuru)	इन्द्रप्रस्थ (मेरठ, द.पू. हरियाणा)
10	मत्स्य (Matsya)	विराटनगर (जयपुर)
11	पांचाल (Panchala)	उत्तर पंचाल – अहिच्छत्र
12	शूरसेन (sursena)	मथुरा
13	अ"मक (Ashmaka)	पोतन या पोटली
14	अवन्ति (Avanti)	उत्तरी अवन्ति (उज्जैन), दक्षिणी अवन्ति (महि"मति)
15	गन्धार (Gandhara)	तक्षि"ाला
16	कम्बोज (Kamboj)	हारक

उपरोक्त 16 महाजनपदों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है (The Sixteen Mahajanapadas)

(1) अंग (Anga) उत्तरी बिहार का आधुनिक भागलपुर एवं मुंगेर जिला का क्षेत्र इसके अन्तर्गत सम्मिलित था। इस जनपद की राजधानी चम्पा थी। जिसका प्राचीन नाम मालिनी था। छठी सदी ईसा पूर्व में यह कला, सभ्यता, संस्कृति तथा व्यापार का मुख्य केन्द्र बिन्दु था। यहॉ का शासक ब्रह्मदत्त था। इस राज्य का मगध के साथ संघर्ष चल रहा था। धीरे–धीरे इस राज्य की शक्ति कमजोर होती गई। बाद में मगध के राजा ने अपने राज्य में मिला लिया। इस प्रकार अंग महाजनपद का पतन हुआ।

(2) मगध (Magadha) आधुनिक बिहार राज्य के पटना और गया जिलों को मिलाकर मगध बनता है। मगध का उल्लेख सर्वप्रथम अथर्ववेद में मिलता है। मगध जनपद की राजधानी गिरीवृज (राजगृह) थी। मगध राज्य उत्तर की ओर से गंगा नदी, दक्षिण की ओर से विंध्याचल पर्वत, पूर्व की ओर से चम्पा और पि"चम की ओर से सोन नदियों से घिरा हुआ था। मगध में राज्य के प्रधान को सम्राट कहा जाता था। हरयक व"ा, नंदव"ा और मौर्यव"ा के सम्राटों के शक्ति केन्द्र मगध में ही था।

(3) काशी (Kashi) का"ी की राजधानी वाराणसी थी जो दो नदियों वरूणा और असी नदियों के मध्य स्थित थी। आधुनिक बनारस एवं उसके निकटवर्ती क्षेत्रों को का"ी जनपद कहा जाता था। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में वाराणसी मिट्टी की दीवारों से घिरी हुई एक नगरी थी। आजात शत्रु के समय इसे मगध में मिला लिया गया।

(4) कोशल (Koshala) को"ाल महाजनपद में आधुनिक उत्तर प्रदे"ा के फैजाबाद, गोडा तथा बहराईच जिले शामिल थे। यह उत्तर में नेपाल, दक्षिण में सई नदी, पि"चम में पांचाल राज्यों की सीमाओं से लेकर पूर्व में गंडक नदी तक फैला हुआ था। इसकी राजधानी श्रावस्ती थी। कौ"ाल को भी मगध का ि"ाकार बनना पडा। आजात शत्रु ने अपने पराक्रम से कौ"ाल को भी मगध में मिला लिया।

(5) मल्ल (Malla) इसमें उत्तर प्रदे"ा के आधुनिक देवरिया, बस्ती, गोरखपुर का क्षेत्र शामिल था। इसकी दो राजधानियां थी कु"ानगर और पावा। कु"ीनगर में महात्मा बुद्ध का महापरिनिर्वाण एवं पावा में महावीर स्वामी को निर्वाण की प्राप्ति हुई। आपसी संघर्षो में मल्ल भी कमजोर हो गया। इसका लाभ मगध ने उठाया और अपने साम्राज्य में मिला लिया।

(6) वज्जि (Vajji) इसकी राजधानी का नाम वै"ाली था। यह मगध के उत्तर में स्थित वज्जि संग आठ कुलो का एक संघ था। जिसमें मुख्य विदेह, लिच्छवि, कात्रिक, और वज्जि महत्वपूर्ण थे। वज्जि में आधुनिक बिहार का मुज्जफ्फर जिला शामिल था। छठी शताब्दी ई.पू. में यह एक स्वतंत्र राज्य था, किन्तु कालान्तर में अजात"ात्रु ने इस राज्य को अपने राज्य मगध में मिला लिया था।

(7) चेदि (Chedi) यह महाजनपद यमुना के किनारे बुन्देलखण्ड और इसके इर्द–गिर्द के क्षेत्र सम्मिलित थे। इसकी राजधानी शक्तिमति थी। महाभारत काल में यहां का शासक शि"ुपाल था। चेदि वं"ा भारत के प्राचीन क्षत्रिय वं"ाों मे से एक था। खाखेल के हाथी गुफा ि"ालालेख से ज्ञात होता है कि इस वं"ा की एक शाखा ने कलिंग मे अपना शासन स्थापित किया।

(8) वत्स (Vatsa) वत्स राज्य उत्तर प्रदे"ा के इलाहाबाद तथा मिर्जापुर आदि आधुनिक जिले सम्मिलित थे। इसकी राजधानी **कोशाम्बी** थी। प्राचीन को"ाम्बी को आजकल 'कौ"ाम' कहा जाता है। उदयन इस राज्य का सबसे प्रसिद्ध शासक था। वह महात्मा बुद्ध का संमकालीन था।

(9) कुरू (Kuru) कुरू राज्य में वर्तमान दिल्ली, मेरठ और थाने"वर (कुरूक्षेत्र) सम्मिलित थे। इसकी राजधानी **इन्द्रप्रस्थ** (आधुनिक दिल्ली) थी जिसका उल्लेख महाभारत में मिलता है। महात्मा बुद्ध के समय यहां का राजा कोरव्य था। पहले यहां राजतंत्र था बाद में गणतंत्र की स्थापना हुई। छठी सदी ई.पू. में यह राज्य अपना प्राचीन गौरव समाप्त कर चुका था।

(10) मत्स्य (Matsya) वर्तमान में जयपुर के समीपवर्ती क्षेत्र मत्स्य महाजनपद के अन्तर्गत आते थे। इसकी राजधानी विराट नगर थी। इस राजधानी की स्थापना राजा विराट ने की थी। छठी शताब्दी ई.पू. मे इस राज्य का महत्व कम हो गया था फिर यह मगध साम्राज्य का अंग बन गया।

(11) पांचाल (Panchala) वर्तमान रूहेलखण्ड के बरेली, बदायूँ, एवं फरूखाबाद जिलों को मिलाकर ही प्राचीन पांचाल महाजनपद का निर्माण होता था। यह राज्य उत्तरी पांचाल ओर दक्षिणी पांचाल नामक दो भागों में बंटा हुआ था। उत्तरी पांचाल की राजधानी का नाम अहिछत्र और दक्षिणी पांचाल की राजधानी का नाम कांपिल्य था। प्रारंभ में यहां राजतंत्र था, किन्तु बाद में गणतंत्र की स्थापना हो गई। पाण्डवों की पत्नी द्रोपदी यही के राजा द्रुपद की पुत्री थी।

(12) शूरसेन (Sursena) शूरसेन राज्य यमुना नदी के किनारे पर स्थित था। इसकी राजधानी मथुरा थी। बुद्ध के समय में यहां का राजा अवन्ति पुत्र था। जो बुद्ध के उपदे"ाों से बहुत प्रभावित था। मेगस्थनीज ने इसका वर्णन एक शान्तिप्रिय राज्य के रूप में किया है।

(13) अश्मक (Ashmaka) यह जनपद गोदावरी के तटवर्ती प्रदे"ा में स्थित था। इसका दूसरा नाम अस्सक भी था। इसकी राजधानी पोतन थी जिसका पहले नाम पोदन्य था। इस राज्य के शासक ईक्ष्वाकु वं"ा के थे। बुद्ध के समय में अवन्ति राज्य ने अ"मक को जीत कर अपने राज्य में मिला लिया था।

(14) अवन्ति (Avanti) आधुनिक मालवा और उसके समीपवर्ती भाग शामिल थे। इसकी दो शाखाएं थी– उत्तरी तथा दक्षिणी अवंति। उत्तरी अवंति की राजधानी उज्जैन एवं दक्षिणी अवन्ति की राजधानी महि"मति थी बौद्ध धर्म से प्रभावित इस महाजनपद को ि"ा"ुनाग ने मगध में मिला लिया था।

(15) गंधार (Gandhara) गंधार महाजनपद में वर्तमान पाकिस्तान के पे"ावर, रावलपिंडी और क"मीर के जिले सम्मिलित थे। इसकी राजधानी तक्षि"ाला थी। तक्षि"ाला उस समय वि"वविद्यालय के रूप में प्रसिद्ध था। यह वि"वविद्यालय ज्ञान के केन्द्र के रूप में सर्वत्र प्रख्यात था। यहां पर भारत के विभिन्न राज्यों एवं विदे"ाों से विद्यार्थी ि"ाक्षा ग्रहण करने आते थे। कुरूवं"ाीय धृतराष्ट्र महाराजा की पत्नी गंधारी यही की राजकुमारी थी। छठी शताब्दी ई. पू. में यहॉ का शासक पु"कर सरित था। वह मगध के शासक बिम्बसार का समकालीन था। छठी सदी ई.पू. के अंत में ईरान के शासक डेरियस प्रथम ने गंधार पर अधिकार करके इसे अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया था। पाणिनि के अनुसार गंधार का प्राचीन नाम कंधार था।

(16) कम्बोज (Kamboj) वर्तमान में रोजारी एवं हजरा के क्षेत्र ही कम्बोज राज्य के अन्तर्गत आता था। इसकी राजधानी हाटक थी। आरंभ में यहां पर प्रजातंत्रीय प्रणाली थी, परन्तु बाद में यहां पर गणतंत्रीय शासन की स्थापना

की गई। कौटिल्य ने कम्बोज राज्य को 'वार्ता"ास्त्रोपजीवी' कहा है। कम्बोज राज्य घोड़ो के लिए प्रसिद्ध था। साहित्यिक स्त्रोतों में यहां के दो प्रमुख राजाओं – चन्द्रवर्मन और सुदक्षिण का उल्लेख हुआ है। छठी सदी ई.पू. की राजनीति में कम्बोज की कोई भागीदारी नही रही।

4.3.2 मगध साम्राज्य का उदय (The Rise of Magadha Empire)

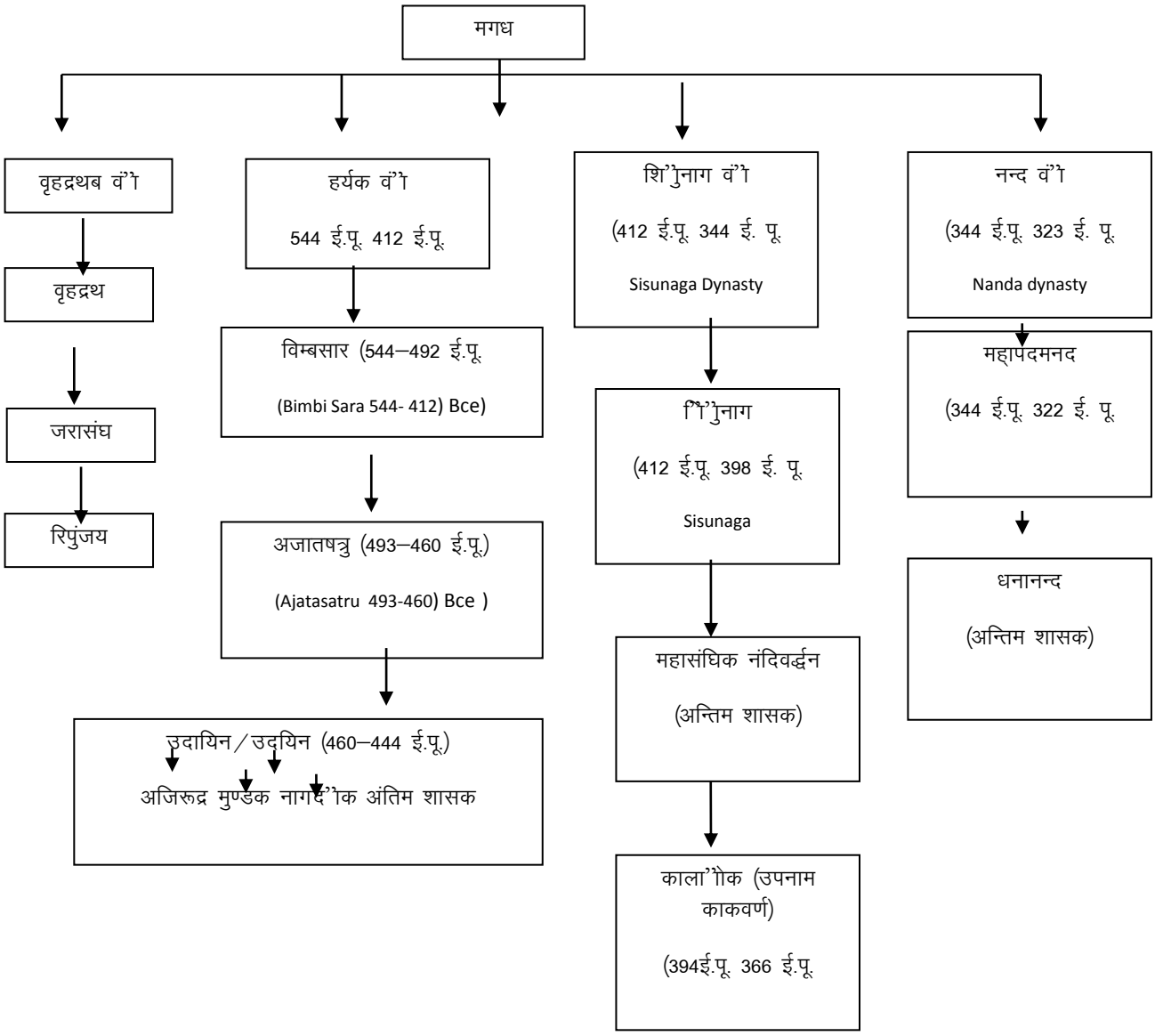

मगध साम्राज्य का उल्लेख सर्वप्रथम अथर्ववेद में मिलता है मगध वंश के संस्थापक इस प्रकार है :–

क्र.सं.	वं"ा	संस्थापक
1	बृहद्रथ	बृहद्रथ
2	हर्यक	बिम्बसार
3	शि"ुनाग	शि"ुनाग
4	नंद	महापद्म नंद (महानन्दिन)

मगध साम्राज्य के उत्थान एवं विस्तार में जिन वंशों के शासकों की भूमिका रही है उनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार से है –

(1) बृहदथ वंश :– महाकाव्यों एवं पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि मगध के सबसे पुरातन वं"ा के संस्थापक बृहद्रथ थे। बृह्द्रथ के पिता का नाम वसु था। बृह्द्रथ ने बह्द्रथ वं"ा की नींव डाली इस वं"ा के निम्न शासकों ने मगध पर शासन किया।

(क) बृह्द्रथ :– बृह्द्रथ महाभारत के समय का राजा थां इसने प्राग ऐतिहासिक काल में सर्वप्रथम मगध में स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थीं बृह्द्रथ अपने वं"ा का महान राजा था। महाभारतकालीन कृष्ण का घोर शत्रु था। मगध राज्य का उत्कर्ष या उदय इसी के शासनकाल में हुआ था। इसकी राजधानी गिरिब्रज (राजगृह) थी।

(ख) जरासंघ – जरासंघ बृह्द्रथ का पुत्र था। यह भी अपने पिता की भांति महाभारतकालीन कृष्ण का पक्का शत्रु था। जरासंघ एक पराक्रमी शासक था और उसने अनेक राजाओं को पराजित करके अपने साम्राज्य का विस्तार किया। उत्तर भारत में अपने साम्राज्य के विस्तार के समय भीम और जरासंघ के बीच में मल्ल युद्ध हुआ। इस युद्ध में भीम ने जरासंघ को मार डाला। जरासंघ की मृत्यु के बाद उसका पुत्र शासक बना।

(ग) रिपुंजय :– रिपुंजय जरासंघ का पुत्र था। यह बह्द्रथ वं"ा का अन्तिम शासक था। यह एक कमजोर व अयोग्य राजा था। रिपुंजय की हत्या इसके मन्त्री पुलिक ने कर दी और अपने पुत्र को गद्दी पर बैठाया। इस प्रकार बृह्द्रथ वं"ा का अन्त हो गया।

(2) हर्यक वंश (पितृ रूता वंश) (544 ई.पू. से 492 ई.पू.) :– बिम्बसार, महत्वाकांक्षी एवं वीर सामंत, 'भट्टिय' का पुत्र था। हर्यक वं"ा का संस्थापक था एवं इस वं"ा का सबसे अधिक प्रतापी राजा था। इसका उपनाम 'श्रेणिक

या (जैन साहित्य में इसे श्रेणिक कहा गया है) यह अपने पिता के सहयोग से मगध के सिंहासन पर आसीन हुआ था। इसे अपनी राजधानी गिरिव्रज को बनाया और कु"ाल प्र"ाासन की आव"यकता पर बल दिया। बिंबसार ने अपनी शक्ति और राज्य के विस्तार के लिए अनेक राज्यों से वैवाहिक संबन्ध स्थापित किए उसकी चार पत्नियां थी, पहली पत्नी कौ"ालराज की पुत्री व प्रसेनजित की बहन महाकौ"ाल थी। दूसरी पत्नी वै"ाली लिच्छवि शासक चेटक की पुत्री चेल्लना थी। तीसरी पत्नी विदेहराज की पुत्री वासपी थी। चौथी पत्नी क्षेमा थी जो भद्र नरे"ा की पुत्री थी, विभिन्न राजबली से वैवाहिक सम्बन्ध से उसकी प्रतिष्ठा बढ़ी व मगध का प्रसार क्षेत्र भी बढ़ा। बिंबसार ने केवल 15 वर्ष की आयु में अपने पिता की सहायता से मगध का सिंहासन संभाल लिया था।

प्रसिद्ध इतिहासकार आर.एस.त्रिपाठी के अनुसार ये विवाह न केवल बिंबिसार के समकालीन शासकों में प्राप्त प्रमुखता को ही द"ार्ातें है, अपितु इन्होनें मगध राज्य के विस्तार के लिए मार्ग भी तैयार किया**। "These marriages net only show the high position of bimbisar among his royal contemporaries, but they seem to have also paved the way for the expansion of Magadha"" R.S. Tripathi, history of ancient India (Delhi : 1987) P93)**

बिंबिसार एक सफल कूटनीतिज्ञ था। पुराणों के अनुसार विम्बिसार ने करनी 28 वर्ष तक शासन किया। बौद्ध ग्रंथ महावं"ा के अनुसार 52 वर्ष तक शासन किया स्मिथ ने बिम्बिसार की शासन की तिथि **582 ई.पू.–544 ई.** पू. मानी है। राधामुकुंद मुखर्जी व डॉ. हेमचन्द राय चौधरी ने बिम्बिसार की शासन की तिथि **(544 ई.पू.–492 ई.पू. तक)** मानी है। यानि विभिन्न इतिहासकारों में इस को लेकर मतभेद है। बिम्बिसार महात्मा बुद्ध का मित्र एवं संरक्षक था। विनयपिटक से ज्ञात होता है कि बुद्ध से मिलने के बाद उसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। बिम्बिसार का अवन्ति से अच्छा सम्बन्ध था क्योंकि जब अवन्ति के राजा प्रद्योत बीमार थे तो बिम्बिसार ने अपने वैद्य जीवक को भेजा था। बिम्बिसार ने अंग और चम्मा को जीतकर अपने साम्राज्य में मिला लिया और इसकी शासन व्यवस्था को चलाने के लिए अपने पुत्र अजात"ात्रु को यहां का उपराजा नियुक्त किया।

- **बिम्बिसार के शासन काल के प्रमुख प्रशासनिक पदाधिकारी** :–
  प्र"ाासन व्यवस्था को उत्तम ढंग से चलाने के उद्दे"य से उसने एक मंत्रिमण्डल का गठन किया हुआ था।
  (1) उपराजा (2) माण्डलिक राजा (3) सेनापति (4) सेनानायक महामात्र (5) व्यावहारिक महामात्र (6) ग्रामभोजक

(ख) **अजातशत्रु 492 ई.पू. – 460 ई.पू.) (Ajatashatru)** अजात"ात्रु ने अपने पिता की हत्या करके सत्ता प्राप्त की थी। इसलिए इसे पितृहंता भी कहते है। अजात"ात्रु को कूणिक भी कहा जाता है। मगध के सिंहासन पर

बैठने से पहले वह अंग राज्य का सूबेदार ("ासक के रूप में) राजकीय कार्य कर चुका था। अजात"ात्रु एक दुर्धर्ष साम्राज्यवादी था। इसने काफी समय के बाद का"ी एवं वज्जि संघ को जीत लिया था। अजात"ात्रु का प्रथम युद्ध को"ाल के राजा प्रसेनजित से हुआ। बिम्बिसार की हत्या के दुख के कारण कोसल देवी ने जल्द ही प्राण त्याग दिए। राजा प्रसेनजित बिम्बिसार और अपनी बहन दोनों की मृत्यु का उत्तरदायी अजात"ात्रु को ही मानता था। इसलिए उसने का"ी साम्राज्य को वापिस मांगा क्योकि का"ी मगध साम्राज्य की आय का एक मुख्य स्त्रोत था। युद्ध के बाद को"ाल राजकुमारी वाजिरा के साथ उसका विवाह हुआ। अजात"ात्रु की दूसरी महत्वपूर्ण सफलता वै"ाली के लिच्छवियों को पराजित करना था। मगध और लिच्छवियों के बीच 16 व"ों तक शासन चला। अंत में अजात"ात्रु को ही सफलता मिली।

अजात"ात्रु बौद्ध एवं जैन धर्म दोनों को मानता था। इसी के शासन काल में आठवें वर्ष में महात्मा बुद्ध का निर्वाण प्राप्त हुआ था। महापरिनिर्वाण सूत्र के अनुसार अजात"ात्रु ने बुद्ध के अव"ेषों को लेकर राजगृह में एक स्तूप निर्मित कराया। बौद्ध साहित्य के अनुसार अजात"ात्रु ने 32 वर्षो तक शासन किया। पुराणों के अनुसार उसने 28 वर्षो तक शासन किया। साम्राज्य के विस्तार के लिए अजात"ात्रु ने अपना अंतिम युद्ध अवंति के विरूद्ध लड़ने की इच्छा पाल रखी थी, किन्तु ऐसा करने के पूर्व ही उसकी हत्या उसके पुत्र उदायिन द्वारा करवा दी गई।

(ग) उदायिन (460 ई.पू. से 444 ई.पू.) :– यह अजात"ात्रु एवं पद्मावती की संतान था। इसे उदयभद्र के नाम से भी जाना जाता है। सिंहली अनश्रुतियों के अनुसार अजात"ात्रु के पुत्र उदायिन ने पिता की हत्या करके सत्ता प्राप्त की। उदायिन ने (460ई.पू. से 444 ई. पू.) तक मगध पर शासन किया। गंगा और सोन नदी के संगम पर एक किला बनाया ओर 'पाटलिपुत्र' (वर्तमान पटना) की स्थापना की तथा उसे अपनी राजधानी बनाया। राजगृह के व्यापारी पाटलिपुत्र मे आकर बस गए और शीघ्र ही यह व्यापारिक केन्द्र बन गया। जैन स्त्रोतों के अनुसार पह अपने पिता के शासन काल में चम्पा का उपराजा था। पुराणों के अनुसार उसने 33 वर्ष शासन किया और महावं"ा के अनुसार 16 वर्ष तक शासन किया लेकिन यह जैन मतानुयायी था। इसने पाटलिपुत्र में जैन **चैत्यगृह** का निर्माण करवाया और यह जैनियों के उपवास (व्रत) भी रखता था। बौद्ध साहित्य के अनुसार उदायिन के बाद उसने तीन पुत्रों – (1) अनिरूद्ध (2) मुंडक (3) नागद"ाक ने क्रम"ाः शासन किया। बाद में जनता ने इन पितृहताओं को शासन से उतारकर ि"ा"ुनाग नामक एक योग्य अमात्य को शासक बनाया और इसी ने ि"ा"ुनाग वं"ा की नींव रखी।

(3) **शिशुनाग वंश (412 ई.पू.–344 ई.पू.)**

(क) **शिशुनाग (412 ई.पू. से 398 ई.पू.)** :– इस वं"ा का संस्थापक ि"ा"ुनाग था। शासक बनने से पूर्व ि"ा"ुनाग अमात्य था और बनारस के गवर्नर के रूप में कार्य करते थे। इसकी सबसे बडी सफलता अंवति एवं वत्सराज को

जीत कर मगध साम्राज्य का विस्तार उत्तरी भारत में मालवा से बंगाल तक किया। इसने वै"ाली को अपनी राजधानी बताया।

(ख) कालाशोक या काकवर्ण (394ई.पू. से 366 ई.पू.) – पुराण एवं दिव्यावादन में काला"ोक का नाम काकवर्ण मिलता है। इसने वै"ाली के स्थान पर पुनः पाटलिपुत्र को अपनी राजधानी बनाया। इसी के शासनकाल में वै"ाली में द्वितीय बौद्ध संगीति (383 ई.पू.) का आयोजन हुआ। काला"ोक की हत्या राजधानी के समीप घूमते समय किसी व्याक्ति ने छुरा घोंपकर कर दी थी। काला"ोक की मृत्यु के बाद उसके दस पुत्रों – (1) भद्रसेन (2) कोंरडवर्ण (3) मंगुर (4) सर्वज (5) जलिक (6) उभाक (7) संजय (8) कोरव्य (9) पजाक (10) नंदिवर्द्धन या महानंदिन इन सभी ने काला"ोक की मृत्यु के बाद 22 वर्ष तक शासन किया।

(4) नंदवंश (344 ई.पू.–323 ई.पू.) – ि"ा"ुनाग व"ा के बाद मगध पर नंद व"ा के शासकों का अधिकार हो गया। नंद व"ा में कुल नौ राजा हुए और इसी कारण उन्हे नवनंद कहा जाता है। नंद व"ा के संस्थापक और उसके व"ा के बारे में विद्वानों में मतभेद है। पुराणों के अनुसार इसे 'महापद्म' का नाम दिया गया है।

(क) महापद्मनंद (344 ई.पू. से 322 ई.पू.) – नंद व"ा के संस्थापक शासक की सेना की संख्या दस पद्म थी इसलिए उसे महापद्मनंद की संज्ञा दी गई है। जैन ग्रन्थ के अनुसार वह एक नाई और वै"या का पुत्र था। यह सम्पूर्ण मगध साम्राज्य का सबसे अधिक शक्ति"ाली शासक था। कलिंग की विजय के बाद इसने एक नहर या बांध का निर्माण करवाया जिसका वर्णन बाद में खारवेल ने अपने हाथी गुफा में किया। महापदमनंद ने ''सर्वक्षत्रांतक'' और ''एकराट'' की उपाधि धारण की थी। व्याकरणाचार्यपाणिनि इसका एक अच्छा मित्र था।

(ख) धनानंद :– महापदमनंद के बाद के शासकों के बारे में कोई वि"ोष जानकारी नहीं मिलती है। केवल थोड़ी बहुत जानकारी मिलती हे तो धनानंद के बारे में मिलती हैं महोबोधिवं"ा के अनुसार, नंदव"ा का अंतिम शासक धनानंद था। यह महापदमनंद के आठ पुत्रों में सबसे छोटा था। धनानन्द सिकन्दर का समाकलीन था ग्रीक (यूनानी) लेखकों में इसे अग्रमीज कहा गया है। जेनाफोन ने धनानंद को बहुत धनाढ्य एवं शक्ति"ाली व्यक्ति कहा है। इस के पास दो लाख पैदल सैनिक तीस घुडसवार एवं तीस हजार से लेकर छः हजार तक हाथी थे। पुराणों, बौद्धग्रन्थों, अर्थ"ास्त्र (कोटिल्य) से जानकारी के आधार पर ऐसा माना गया है कि) से जानकारी के आधार पर ऐसा माना गया है कि 322 ई.पू. चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने गुरू चाणक्य की मदद से धनानंद की हत्या की और मौर्यव"ा के शासन की नींव डाली।

4.3.3. मगध साम्राज्य के विस्तार के कारण (Reasons for the Expansion of Magadha Empire)

मगध की सफलता के कारण निम्नलिखित थे जो इस प्रकार से है :–

(1) **भौगोलिक स्थिति (Geographical Position)** :– मगध साम्राज्य के विस्तार के लिए उत्तरदायी उसकी भौगोलिक स्थिति थी। मगध तीन ओर से नदियों से घिरा हुआ था और एक और पहाड़ी से। इस के उत्तर की ओर गंगा, दक्षिण की ओर विंध्याचल पर्वत, पूर्व की ओर सोन तथा पि"चम की ओर चंपा नदियां बहती थी। मगध की दो राजधानियां थी एक राजधानी गिरित्राज (राजगीर) थी, दूसरी पाटलिपुत्र थी इसका वर्तमान में नाम पटना हैं राजगीर पहाड़ियों से घिरा हुआ था दूसरी राजधानी गंगा, गंडक ओर सोन नदियों के संगम पर स्थित थी। इसलिए ये दोनों राजधानियां सुरक्षित थी। इस प्रकार मगध साम्राज्य को शक्ति"ाली एवं समृद्ध बनाने में इसकी भौगोलिक स्थिति एक मुख्य कारण रहा।

(2) लोहे के विशाल भंडार (Rich Iorn ore) :– लोहे के काफी समृद्ध भण्डार मगध की राजधानी राजगीर के आस–पास थे। जिसका उपयोग प्रभाव"ाली हथियार बनाने एवं दैनिक उपयोग की वस्तुएं बनाना सरल था। क्योंकि मगध के विरोधियों के पास लोहे के भण्डार की कमी थी। इसलिए वे अच्छे शस्त्रों का निर्माण नहीं कर सकें। मगध में धातु से बने सिक्को का लाभ भी शासकों को मिला। इस प्रकार कह सकते है कि मगध के उत्थान व कल्याण (सफलता) के पीछे लोहे के भण्डारों का बहुत सहयोग था जिसके कारण वे अपने साम्राज्य का विस्तार कर सकें।

(3) **कृषि ;Agriculture)** :– लोहे के वि"ाल भण्डारों के कारण कृषि के कार्य में भी उन्नति हुई। जिससे बढ़िया औजारों के माध्यम से यहां के किसानों ने पर्याप्त अनाज पैदा किया। अपने पालन–पोषण के बाद उनके पास पर्याप्त अनाज बच जाता था। उसे राजा कर के रूप में जनता से लेकर इकट्ठा कर लेते थे।

(4) **प्रतिबन्धों से मुक्ति** :– आर्यो का साम्राज्य उत्तर में पि"चम से पूर्व की ओर फैला हुआ था। पूर्वी राज्यों में आर्येतर लोग अधिक थे। इसलिए किसी सीमा तक मगध के आस–पास के लोग आर्य जाति पर लगे प्रतिबंधो से मुक्त थे।

(5) **व्यापार (Trade)** :– मगध साम्राज्य में चावल की पैदावार भरपूर होती थीं प्रयाग से पि"चम के क्षेत्र की अपेक्षा यह प्रदे"ा कहीं अधिक उपजाऊ था ओर पाटलिपुत्र एक जलदुर्ग भी था।

(6) विशाल (Vast Army) :– सेना मगध के शासकों के पास एक वि"ाल सेना थी इस सेना के सैनिक बहादुर थे। अन्य शासक युद्ध में पैदल सैनिक और घुड़सवार की सेना रखते थे। यूनानी स्त्रोतों से पता चलता है कि नंद शासकों के 2 लाख पैदल सैनिक, 60 हजार घुडसवार, 6 हजार हाथी थे। इस वि"ाल सेना का प्रयोग बड़ी सूझ–बूझ के साथ युद्धों में प्रयोग किया व हाथियों से बड़े–2 दुर्गो को तोड़ने के लिए तथा व्यापार का सामान लाने व ले जाने के लिए किया।

(7) महान शासक (Great King) :– मगध साम्राज्य के विस्तार में महत्वपूर्ण कारण वहां के महान राजाओं का योगदान बिम्बिसार से लेकर धनानंद तक मगध को ऐसे वीर एवं शक्ति"ाली, महत्वाकांक्षी, साम्राज्यवादी और कु"ाल शासक प्राप्त हुए। इन शासकों ने मगध साम्राज्य के विस्तार के लिए अनेकों प्रयास किए। ये शासक अच्छे राजनीति थे और अपनी शक्तियों का आंकलन करके सही अवसर पर विरोधियों को पराजित करते थे। जिसे मगध को एक वि"ाल साम्राज्य बनाकर खडा कर दिया।

(8) अच्छी आर्थिक स्थिति (Good Economic Condition) :– मगध को आर्थिक पक्ष से मजबूत बनाने में वहॉ लोहे के वि"ाल भण्डार, उपजाऊ भूमि जल दुर्ग, फसलों की भरपूर पैदावार। वाणिज्य एवं व्यापार के मुख्य केन्द्र एव सिंचाई के साधन। चावल की पैदावार के सुविख्यात क्षेत्र एवं वहॉ की मेहनती व कर्मठ जनता का साम्राज्य के प्रति भरपूर योगदान।

इस प्रकार से हम कह सकते है कि मगध की सफलता के पीछे अनेक कारक उत्तरदायी थे। जिन के कारण मगध एक वि"ाल साम्राज्य बन कर चमका।

4.4 अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of Text)

4.4.1 धार्मिक आन्दोलन (Religious Movements):- ई. पू. छठी शताब्दी में गंगा के मैदानी इलाकों मे कई धार्मिक सम्प्रदायों का उदय हुआ। जिनमें से 62 धार्मिक सम्प्रदायों के बारे में जानकारी या प्रमाण मिलता है। लेकिन जैन साहित्य के अनुसार इनकी संख्या 200 थी एवं बौद्ध साहित्य के अनुसार इनकी संख्या 62 थी। ब्राह्मणों के प्रभुत्व, धार्मिक अनुष्ठानो, रीति–रिवाजों, यज्ञ एवं कर्मकाण्डों धार्मिक प्रथाओं के विरोध में यह आन्दोलन चला। भारत में इसी सदी को धार्मिक क्रान्ति का काल कहा जाता है। इसका केन्द्र बिन्दु मगध था। धार्मिक आन्दोलन के इस काल में सामाजिक व्यवस्थाकार, दा"ानिक, इतिहासकार, धर्मसुधारक आदि वर्तमान को भविष्य की आकांक्षाओं से परिचित करने का प्रयास कर रहे थे। इस समय दो वर्ग मुख्य थे। एक धार्मिक कर्मकाण्ड को मानने वाला, दूसरा वर्ग धार्मिक कर्मकाण्ड का विरोध करने वाला। इस समय सन्यासियों की संख्या लगातार बढ़ रही थी। ई. पू. छठी सदी को भारतीय इतिहास का संक्रमण काल भी कहा गया है। इस युग मे पूरे वि"व में धार्मिक आन्दोलन की गति काफी तेजी से बढ़ रही थी। चीन में कन्फयू"ायस तथा लाओत्से ईरान में जरथ्रुष्ट, जुडिया में जैरेमिया ने, यूनान में सुकरात अपने दा"ानिक सिद्धान्तों की विवेचना कर रहे थे। इन सभी नेताओं ने तत्कालीन धर्म प्रविष्ट बुराईयों को दूर करने एवं मानव कल्याण के लिए प्रयत्न किए।

ऐसे समय में लोग एक ऐसे धर्म की खोज में जुटे हुए थे जो सरल, सुबोध और उच्चस्तरीय हो। उसी समय भारत में महावीर स्वामी और महात्मा बुद्ध दो महान व्यक्ति आगे आए। जिन्होने अन्धवि"वास की

घोर निन्दा की ओर लोगों के समक्ष बौद्ध एवं जैन धर्म को रखा। बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म ने धार्मिक विचारों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया और इन धर्मो का उदय सबसे शक्ति"ाली धार्मिक सुधार आन्दोलनो के रूप में हुआ।

4.4.2 बौद्ध धर्म (Buddhism):- भारत प्राचीन काल से धार्मिक संस्कारों वाला दे"ा रहा है। जब भी धर्म का पतन हुआ तब धर्म की रक्षा के लिए महान व्यक्तियों ने अवतार लिया। छठी सदी में जब धर्म पतन की ओर अग्रसर था। ऐसे समय में भगवान बुद्ध का जन्म हुआ जिन्होनें बौद्ध धर्म की स्थापना की। इसलिए बौद्ध धर्म का वास्तविक संस्थापक महात्मा बुद्ध को कहा जाता है। बौद्ध धर्म को भारत में ही नही पूरे वि"व के धर्म की संज्ञा दी गई। बौद्ध धर्म के उपदे"ा पालि भाषा में दिए गए ताकि जनसाधारण उपदे"ाों को सुनकर अपने जीवन में उतार सकें।

4.4.2.1 महात्मा बुद्ध का जीवन परिचय (Introduction of life of Mahatma Budha):- बुद्ध का जन्म 563 ई. पू. कपिलवस्तु के पास नेपाल के लुम्बिनी मे शाक्य क्षत्रिय परिवार में हुआ था। जिसे बस्ती जिले में पिपरहवा नाम से जाना जाता है। कहा जाता है कि जन्म होने पर वे खड़े हो गए, सात डग चले और कहा यह मेरा अंतिम जन्म है। इसके बाद मेरा कोई जन्म नही होगा। इनकी माता का नाम महामाया एवं पिता का नाम शुद्धोधन था। इनकी माता का इनके जन्म के सातवें दिन देहान्त हो गया। इनका पालन–पोषण (लालन–पालन) विमाता (मौसी) महाप्रजापति गौतमी ने किया इसलिए ये बाद में गौतम कहलाए। बालक गौतम को देखकर कालदेव तथा ब्राह्मण कौण्डिन्य ने भविष्यवाणी की थी कि यह बालक बडा होकर एक चक्रवर्ती सम्राट अथवा सन्यासी होगा। बालक का नाम सिद्धार्थ रखा गया। 16 वर्ष की आयु में सिद्धार्थ का विवाह शाक्य कुल की कन्या य"ोधरा से हुआ। य"ोधरा के अन्य नाम गोपा, बिंबा तथा भद्रकच्छा भी है। य"ोधरा से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। लेकिन सिद्धार्थ खु"ा नही हुए वरन् उसे मोह बन्धन मानकर 'राहु' कहा और उसका नाम राहुल रखा गया। राजा शुद्धोधन यह नही चाहते थे कि सिद्धार्थ सन्यासी बने इसलिए बचपन से ही उनका राजसी ठाट–बाट (भोग–विलास) के जीवन के लिए प्रबन्ध किया गया। सांसारिक दुःखों से व्यथित होकर सिद्धार्थ ने 29 वर्ष की अवस्था में गृह त्याग दिया। इसे बौद्ध ग्रन्थ में महापरिनिर्वाण कहा गया है। 35 वर्ष की अवस्था में निरंजना नदी के तट पर स्थित अरूवेला (बौद्ध गया) नामक स्थान पर ज्ञान की प्राप्ति हुई और इन्होनें अपना प्रथम उपदे"ा मगधी भाषा (पाली) में दिया।

इन्होनें अपना प्रथम उपदेश सारनाथ (बनारस) में दिया जिसे धर्मचक्रपरिवर्तन कहा गया है। वहीं बौद्ध ने संघ की स्थापना की और संघ के सदस्यों को विभिन्न क्षेत्रों में जाकर धर्म का प्रचार करने का आदे"ा दिया। इन्होने अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में चुंद नामक सुनाार के घर भोजन किया जिसके कारण बीमार हो गए और उसी समय वह कु"ाीनगर आ गए और 80 वर्ष की आयु में 483 ई.पू. इनका

निधन हो गया। जिसे बौद्ध ग्रन्थों में महापरिनिर्वाण कहा गया है। कुछ विद्वानों ने इनकी मृत्यु को 486 ई. पूर्व भी माना है।

4.4.2 बौद्ध धर्म की शिक्षाएं एवं सिद्धान्त (Buddhism Religious of Education and theory)

बौद्ध धर्म की ि"ाक्षाओं की जानकारी बौद्ध साहित्य के मूल ग्रंथ त्रिपिटक से मिलती है। (1) त्रिपिटक :–

(क) विनयपिटक

(ख) सुत्तपिटक (ग) अभिधम्मपिटक

(क) **सुत्तपिटक** – यह तीनों पिटकों में सर्वाधिक बड़ा और अधिक महत्व वाला पिटक है। सुत्तपिटक में बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों तथा महात्मा बुद्ध के उपदे"ाों व संवादों का वर्णन किया गया है। इस के 5 खण्ड है।

(i) दीर्घ निकाय (ii) मजिसम निकाय (iii) अंगुतर (iv) संयुक्त निकाय (v) खुदक निकाय

(ख) **अभिधम्मपिटक** – इसमें बौद्ध द"ान तथा बौद्ध परिभाषाओं आदि का विवेचन किया गया है। इस पिटक के सात भाग –:

(i) धम्म संगनी (ii) विभिंग (iii) धातु कथा (iv) पुलपंजति (v) कथा वस्तु (vi) यमक (vii) पठान इसमें अध्यात्मिक एवं दा"ानिक विचारों का संकलन

(ग) **विनयपिटक** – विनय पिटक जिसमें भिक्षु–भिक्षुणियों के संघ उनके दैनिक जीवन से संबधित नियमों का वर्णन किया गया है। इस पिटक के तीन भाग है :– (i) सुत विभाग (ii) परिवार (iii) खंदक। बौद्ध संघ के आचार–विचार व नियम–निषेध का संकलन है।

(2) **बौद्ध संगितियां** :– बौद्ध धर्म में सभाओं का आयोजन किया गया। जिन्हे बौद्ध संगीति के नाम से जाना जाता है। बौद्ध धर्म में चार समितियों का आयोजन किया गया :–

(i) **प्रथम बौद्ध संगीति (483 बी.सी.)** :– महात्मा बुद्ध के निर्वाण प्राप्त करने के बाद 483 ई.पू. में आजात"ात्रु के शासनकाल मे राजगृह (बिहार) नामक स्थान पर प्रथम बौद्ध संगीति का आयोजन किया गया। इस संगीति में बुद्ध के उपदे"ाों को दो पिटकों सुत्तपिटक, विनयपिटक नामक ग्रंथों में संकलित किया गया है। इसके अध्यक्ष महाकस्सप थे।

(ii) **द्वितीय बौद्ध संगीति (383 ई.पू.)** :– यह बौद्ध संगीति काला"ोक के शासन में वै"ाली (बिहार) में आयोजन हुआ। इसके अध्यक्ष साबकमीर थे।

(iii) **तृतीय बौद्ध संगीति (255 ई.पू.)** :– इस बौद्ध संगीति का आयोजन सम्राट अ"ोक के शासन काल में पाटलिपुत्र (वर्तमान में पटना) में हुआ था। इसके अध्यक्ष मोग्गलिपुत्र तिस्स थे। इस संगीति में महात्मा बुद्ध के उपदे"ाों का संकलन किया गया है। इसे अभिधम्मपिटक के नाम से जाना जाता है। इसमें संघ भेदों को रोकने के लिए कठोर नियम बनाए गए है।

(iv) **चतुर्थ बौद्ध संगीति (प्रथम ई. शताब्दी)** :– इस संगीति का आयोजन कुषाण वं"ा के शासक कनिष्क के समय में कुण्डलवन (क"मीर) में हुआ था। इसका कार्य विभाष"ाास्त्र नामक टीका का संकलन तथा बौद्ध धर्म का दो संप्रदाय में बटना – हीनयान और महायान नामक दो संप्रदाय में बटना। इसके अध्यक्ष वसुमित्र (अवघोष) थे।

(3) **कर्मवाद** :– बौद्ध धर्म में कर्म के अनुसार ही जन्म, मृत्यु एवं निर्माण की प्राप्ति। इसके लिए सत्कर्म करना जरूरी था अर्थात मनुष्य जैसे कर्म करता है, वैसे ही फल को प्राप्त करता है।

(4) **क्षणिकवादी** –: बौद्ध धर्म के अनुसार संसार क्षणवाद है ओर अन्तः शुद्धिवादी है इसके लिए संस्कार व्ययधर्मा है। इसी के साथ मोक्ष की प्राप्ति। मनुष्य को भ्रम है कि वह सांसारिक वस्तुओं को स्थाई मान लेता है।

(5) **दुःख** :– संसार दुःखों का घर है। दुःख महात्मा बुद्ध के चार आर्य सत्यों में से एक है। जन्म, मरण, जरा, व्याधि प्रिय का वियोग, इच्छा के अनुसार वस्तु का न मिलना।

(6) **अष्टांगिक मार्ग** – महात्मा बुद्ध ने दुःख की निवृति (निर्वाण) के लिए अष्टांगिक मार्ग का उपाय बताया है।

(i) **सम्यक दृष्टि** :– चार आर्य सत्यों को जानने के लिए सम्यक दृष्टि आव"यक है। सत्य, असत्य, पाप, पुण्य, सदाचार–दुराचार, तृष्णा–अतृष्णा के बीच विभेद समझाना।

(ii) **सम्यक संकल्प** :– भौतिक सुखों के प्रति आकर्षण के त्याग का संकल्प।

(iii) **सम्यक् वाक्** :– सदा सच बोलने वाला।

(iv) **सम्यक् क्रम** :– सम्यक् कर्म से मनुष्य अहिसां प्रिय अर्थात सदा सत्य कर्म करने वाला।

(v) **सम्यक जीविका** :– ईमानदारी से आजीविका अर्जित करना।

(vi) **सम्यक प्रयत्न** :– इंद्रियों पर संयम तथा बुरी भावनाओं का परित्याग करना सम्यक प्रयत्न है।

(vii) **सम्यक् स्मृति** :– कार्य, वेदना, चित्त और धर्म में स्मृति सम्यक स्मृति है।

(viii) **सम्यक समाधि** :– मन की एकाग्रता और ध्यान केन्द्रित करना सम्यक समाधि है।

अष्टांगिक मार्ग में स्कंध तीन है – प्रज्ञा स्कंध, शील स्कंध, समाधि स्कंध।

(7) दस शील :– (i) अहिंसा (ii) सत्य (iii) अस्तेय (चोरी न करना) (iv) अपरिग्रह अर्थात धन संग्रह न करना (v) ब्रह्चर्य (vi) नृत्य व संगीत का त्याग (vii) सुगन्धित पदार्थो का त्याग (viii) असमय भोजन का त्याग (ix) कोमल शय्या का त्याग (x) कामिनी कंचन का त्याग

उपयुर्क्त दस शीलों में से प्रथम पांच गृहस्थों के लिए तथा भिक्षुओं के लिए दसों शील आव"यक था।

(8) **अनीश्वरवादी** :– महात्मा बुद्ध अनी"वरवादी विचारों के थे। वे संसार के उत्पत्ति में ई"वरीय योगदान नही मानते है। अर्थात संसार की सृष्टि में ई"वर का कोई अस्तित्व नही है। बौद्ध धर्म में व्यक्ति, भौतिक और मानसिक तत्वों के पांच (स्कंधों, रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार, विज्ञान) से मिलकर बना है।

(9) **मध्यम मार्ग** :– बुद्ध के अनुसार ि"क्षा न अधिक विलास करना चाहिए न ही अधिक संयम करना चाहिए। मध्यम मार्ग को अपनाना चाहिए।

(10) **प्रतोत्य समुत्पाद** :– महात्मा बुद्ध के अनुसार एक वस्तु के विना"ा के प"चात् दूसरी वस्तु की उत्पत्ति होती है। प्रत्येक घटना के पीछे कार्य–कारण का संबन्ध होता है।

(11) **पुनर्जन्म** – ई"वर और आत्मा के अस्तित्व में न होते हुए भी बुद्ध का पुर्नजन्म मे वि"वास था, इस सम्बन्ध में उनका विचार है कि पुर्नजन्म आत्मा का नही वरन् अनित्य अंहकार का होता है वे पुर्नजन्म को भी कार्यकारण नियम द्वारा संचालित मानते है।

(12) **जाति–पांति के विरोधी** – गौतम बुद्ध जाति–पांति में वि"वास न करके बल्कि एकता पर बल देते थे। बौद्ध धर्म का अनुसरण कोई भी कर सकता है चाहे वो किसी भी जाति का हो। उन्होनें एक स्थान पर कहा भी – ''हे भिक्षुओ ! जिस प्रकार बडी–बडी नदियां समुन्द्र में गिरकर अपना अस्तित्व खो देती है, उसी प्रकार भिक्षु के वस्त्र धारण करने के बाद ऊंच–नीच, वरण–भेद, समाप्त हो जाता है।

(13) **कर्मकाणड, यज्ञ तथा पशुबलि के विरोधी** – प"ुओं की बलि चढ़ाना तथा यज्ञ आदि में महात्मा बुद्ध वि"वास नही करते थे तथा कर्मकाण्ड के घोर विरोधी थे।

(14) **अंहिसा पर बल** – महात्मा बुद्ध अंहिसा पर बल डालते थे ज्ञान प्राप्ति के बाद उन्होनें अंहिसा परमोधर्म के सिद्धान्त का प्रचार–प्रसार किया। मनुष्य को अपने मन, वचन तथा कर्म से किसी जीव को दुःख नही पहुंचाना चाहिए।

(15) **अनात्मवाद** – शरीर अनेक तत्वों से मिलकर बना हुआ है तथा मृत्यु के बाद प्रत्येक तत्व अपने मूल स्त्रोत में विलीन हो जाता है। आत्मा से बढ़कर कोई चीज इस सृष्टि में नही है।

(16) **निर्वाण** – बौद्ध धर्म का प्रमुख लक्ष्य निर्वाण की प्राप्ति जिसका अर्थ है – दीपक का बुझ जाना अर्थात जीवन–मरण चक्र से मुक्ति पाना। महात्मा बुद्ध के निधन को महापरिनिर्वाण की संज्ञा दी गई है।

4.4.2.3. बौद्ध धर्म का विकास या प्रसार (Development/range of Buddhism)

I. **बौद्ध धर्म का लचीलापनः**– अन्य धर्मो की तुलाना में बौद्ध धर्म में लचीलापन था क्योकिं इसमें परिस्थितियों के अनुसार परिर्वतन संभव था। केवल भारतीय ही नही विदे"ाी भी इस धर्म के प्रति आकर्षित हुए और इस प्रकार बौद्ध धर्म का विकास तेजी से हुआ।

II. **सिद्धान्तों की सरलता में व्यवहारिकता** :– बौद्ध धर्म के सिद्धान्त व्यवहारिक एवं सरल थे इन्हे जनसाधारण लोग भी आसानी से अपना सकते थे। इसके माध्यम से जनसाधारण को कर्तव्यों का बोध कराया जाता था।

III. **महात्मा बुद्ध का व्यक्तित्व** – महात्मा बुद्ध का व्यक्तित्व क्षमा, दया, सहन"ाीलता, स्नेह, करूणा आदि से भरपूर था। इसलिए जनता से लेकर राजा तक प्रत्येक व्यक्ति उनकी तरफ आकर्षित हुआ ओर उनका अनुयायी बन गया।

IV. **सामाजिक समानता का सिद्धान्त (Principle of Social Equality)** – महात्मा बुद्ध ने जाति वर्ग की घोर निन्दा की ओर समानता पर बल दिया जबकि ब्राह्मण धर्म में समाज के निम्न वर्ग के लोगों के साथ घृणा करते थे।

V. **मठों की स्थापना** – किसी भी धर्म के विकास के लिए उसमें संगठन की अति आव"यकता होती है। इसलिए बुद्ध ने बौद्ध धर्म के विकास व प्रचार के लिए मठों की स्थापना की। ताकि भिक्षुओं में पारस्परिक समानता व भाईचारे की भावना विकसित हो। यह किसी भी धर्म के प्रचार व प्रसार के लिए आव"यक है।

VI. **राजकीय संरक्षण** – बौद्ध धर्म ने अत्यधिक विकास कर लिया था। जिसके कारण बिन्दुसार, अ"ोक, कनिष्क, हर्ष आदि ने इसे राजकीय संरक्षण प्रदान किया। अ"ोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए स्तूप एवं स्तम्भों का निर्माण करवाया।

VII. **तत्कालीक धार्मिक स्थिति** – छठी शताब्दी ई. पू. कर्म काण्ड, यज्ञों ओर आडम्बरों का प्रचलन अधिक हो गया था। जिसके कारण जनसाधारण बौद्ध धर्म के प्रति आकर्षित हुए।

VIII. **साहित्य की प्रचुरता** – किसी भी धर्म के विकास में साहित्य का वि"ोष योगदान होता है। साहित्य को ही पढ़कर उस धर्म का सार आसानी से समझा जा सकता है। बौद्ध धर्म साहित्य को पढ़कर भारतीय ही नहीं किन्तु विदे"ाी भी आकर्षित हुए।

IX. **बौद्ध संगीतियों का आयोजन** – समय–समय पर बौद्ध संगीतियां आयोजन की गई। इन संगीतियों ने बौद्ध धर्म के विकास में वि"ोष योगदान दिया तथा आव"यकता पडने पर सिद्धान्तों का सरलीकरण किया। जिससे बौद्ध धर्म की उन्नति हुई।

X. **आम बोल की भाषा का प्रयोग** – बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार हेतू सरल एवं रोचक भाषा (पाली) का प्रयोग किया गया। परिणाम स्वरूप जनसाधारण ने सुगमता पूर्वक ग्रहण किया। इससे बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई।

4.4.2.4 बौद्ध धर्म के पतन के कारण (The reasons of Decline of Buddhism)

1. **मठों में प्रर्याप्त मात्रा में भ्रष्टाचार** – अब बौद्ध मठ ि"ाक्षा का केन्द्र न रहकर भोग ओर विलासिता का केन्द्र बन गये। बौद्ध धर्म कर्मकाण्ड का विरोधी था किन्तु अब वह कर्मकाण्ड के भावों में ग्रस्त हो गया।
2. **बौद्ध धर्म के धार्मिक सिद्धान्तों में मत वैभिन्य** – बौद्ध भिक्षु धार्मिक सिद्धान्तों को लेकर एक मत न होकर आपस में विरोध कर रहे थे जिस कलह के कारण लोगों की रूचि बौद्ध धर्म से हट गई। जिन रूढियों एवं कुरीतियों के कारण हिन्दू धर्म का पतन हुआ था वही सब बुराईयॉ बौद्ध धर्म के पतन का भी कारण बनी और जनसाधारण का धीरे–धीरे इस पर से वि"वास उठ गया।
3. **हिन्दू धर्म में सुधार** – बौद्ध धर्म की उत्पत्ति के समय हिन्दू धर्म में बहुत सारी त्रुटियां थी ओर धीरे–धीरे हिन्दू धर्म ने अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने की भरपूर को"ा"ा की जिसमें कुछ धर्म सुधारकों का भरपूर प्रयास रहा। धर्म सुधारकों में शंकराचार्य, रामानन्द, रामानुज, कुमारिल भट्ट, प्रभाकर आदि नाम उल्लेखनीय है। इन दा"ानिकों ने हिन्दू धर्म के दोषों को दूर किया ओर बौद्ध अनुयायियों से तर्क करके उन्हे पराजित किया जिसका जनसाधारण पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। हिन्दू धर्म की और उन लोगों का आकर्षण बढ़ा।
4. **बौद्ध धर्म का बदला रूप** – जिस बौद्ध धर्म का महात्मा बुद्ध ने प्रतिपादन किया तब यह अत्यंत सरल एवं व्यवहारिक जीवन के लिए उपयोगी था किन्तु समय परिर्वतन के साथ–साथ

बौद्ध धर्म में दुरूहता और कट्टरता का समावे"ा हो गया। इसका वास्तविक स्वरूप बदल गया। बौद्ध धर्म में उत्पन्न होने वाली कुप्रथाओं ने सामान्य जन को विक्षुब्ध कर दिया।

5. **राजकीय संरक्षण का अभाव** – बौद्ध धर्म के उत्थान में राजकीय संरक्षण को अह्म भूमिका थी उसके पतन में भी उसकी उतनी ही भूमिका रही। सातवाहन, शुंग, गुप्त आदि शासकों ने बौद्ध धर्म को संरक्षण नही दिया इन्होनें ब्राह्मण विद्वानों को प्रोत्साहन दिया परिणाम स्वरूप बौद्ध धर्म एक राष्ट्रीय धर्म रहा। इस प्रकार बौद्ध धर्म का अन्त हो गया।
6. **बौद्ध धर्म में महिलाओं का प्रवेश** – बौद्ध धर्म में महिलाओं के प्रवे"ा से अनेकों कुरीतियां पनपी। महात्मा बुद्ध के मठों में भिक्षु–भिक्षुणियों के रहने का अलग–अलग प्रबन्ध किया था ताकि उनके बीच में वार्तालाप न हो ओर एक दूसरे के सम्पर्क में न आए परन्तु महात्मा बुद्ध के परिनिर्वाण के बाद शनै–"ानै नियमों में ि"ाथिलता आई ओर कुछ वर्षो में ही बौद्ध बिहारों में महिलाओं की संख्या अधिक हो गई जिसके कारण ब्रह्मचर्य का पालन नही रहा। जिसके कारण मठों का वातावरण दूषित हो गया। यह सब देखकर सामान्य जन इसे तुच्छ दृष्टि से देखने लगे।
7. **बाहरी आक्रमण** – बाहर से भारत पर होनें वाले नरसंहार करने वाले आक्रमण भी बौद्ध धर्म के पतन का प्रमुख कारण बने। विदे"ाी आक्रमणों ने बौद्ध सांस्कृति, संघारामों तथा बौद्ध बिहारों को विनष्ट कर दिया। इसके कारण भी बौद्ध धर्म की बहुत अवनति हुई ओर बौद्ध धर्म भारत से विलुप्त हो गया।
8. **राजपूत राजाओं का उद्‌य** – सम्राट हर्ष की मृत्यूपरान्त भारत में राजपूत राजाओं की शक्ति बढ़ने लगी। राजपूत राजा बौद्ध धर्म के अहिंसावादि सिद्धान्त के विरूद्ध थे अतः उन्होनें इसे राजाश्रय नही दिया। यह भी बौद्ध धर्म के पतन का मुख्य कारण बना।
9. **मुस्लिम आक्रमणकारी** – इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए बौद्ध बिहारों एवं हिन्दू धर्मो को नष्ट कर दिया। भिक्षु–भिक्षुणियों की हत्या कर दी गई। नालंदा जैसे बौद्ध ि"ाक्षा केन्द्रों को जला दिया। इस प्रकार भारत बौद्ध केन्द्रों को उन्होनें नष्ट कर दिया। बौद्ध धर्म धीरे–धीरे नष्ट हो गया।

4.4.3. जैन धर्म (Jainism) – भारत में विभिन्न धर्मो का अपना–अपना वर्चस्व जिसमें जैन धर्म का भी वि"ोष महत्व रहा है। यह काफी पुरातन है। लेकिन जैन धर्म का विकास छठी शताब्दी ई.पू. हुआ है। जैन शब्द संस्कृत के जिन शब्द से बना है जिसका अर्थ है विजेता (जितेन्द्रिय) जैन

महात्माओं को निग्रंथ (बन्धन रहित) जैन धर्म के अनुयायियों को तीर्थंकर कहा जाता है। जैन धर्म में 24 तीर्थंकर है। जैन मुनियों ने ऋषभदेव को प्रथम तीर्थंकर माना है। पुराणों, विष्णुपुराण ओर भागवत पुराण में ऋषभदेव का उल्लेख मिलता है। जो साधक अद्भुत सिद्धि प्राप्त करके कैवल्य (ज्ञान) प्राप्त कर लेता है वहीं तीर्थंकर कहलाता है। जैन धर्म का संस्थापक ऋषभदेव को माना जाता है। लेकिन वास्तिव संस्थापक महावीर स्वामी को माना जाता है। तीन तीर्थंकर के बारे में ऐतिहासिक प्रमाण मिलता है। जिनमें प्रथम – ऋषभदेव 23वें पा"र्वनाथ 24वें महाबीर स्वामी लेकिन शेष 22 तीर्थंकरों के बारे में कोई ऐतिहासिक प्रमाण नही मिलता है।

- **जैन धर्म के 24 तीर्थंकर**

(1) ऋषभदेव	(2) अजितनाथ	(3) संभवनाथ
(4) अभिनंदन	(5) सुमितनाथ	(6) पद्मप्रभु
(7) सुपा"र्वनाथ	(8) चंद्रप्रभु	(9) पद्मप्रभु
(10) पुष्पदंत	(11) शीतलनाथ	(12) श्रेयां"ानाथ
(13) वसुपूज्य	(14) विमलनाथ	(15) अनंतनाथ
(16) धर्मनाथ	(17) कुंधुनाथ	(18) अरनाथ
(19) मल्लिनाथ	(20) मुनिसुब्रतनाथ	(21) नमिनाथ
(22) अरिष्टनेमि	(23) पा"र्वनाथ	(24) महावीर

4.4.3.1 महावीर स्वामी का जीवन परिचय (Life History of Mahavir Swami) – महावीर स्वामी का जन्म वै"ाली के समीप कुण्डग्राम में (बिहार के वर्तमान जिले वै"ाली में) 599 ई. पूर्व में और मृत्यु 527 ई.पू. में हुई थी, कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार इनका जन्म 540 ई.पू. और मृत्यु 468 ई.पू. में निर्धारित करते है। यही बाद वाली तिथि निर्धारित की गई है। इनके पिता सिद्धार्थ क्षत्रियगण के मुखिया थे। इनकी माता त्रि"ाला लिच्छवी नरे"ा चेटक की बहन थी। महावीर स्वामी का विवाह राजकुमारी य"ोधरा से हुआ। य"ोधरा से प्रियद"र्ना एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसका विवाह जामालित से हुआ। जामालित महावीर स्वामी के प्रथम अनुयायी बने। तीस वर्ष की आयु मे महावीर स्वामी ने गृह त्याग किया। अपने पिता के निधन के बाद अपने बड़े भाई नंदीवर्धन से आज्ञा लेकर और अपने परिवार के दायित्व को बडे भाई को सौंपकर सत्य की खोज के लिए निकल पडे। जैन ग्रन्थ कल्पसूत्र से ज्ञात होता है कि बारह वर्ष की घोर यातनापूर्ण तपस्या के बाद तेरहवें वं"ा में महावीर को केवल्य (ज्ञान) की प्राप्ति हुई। जाम्भियगाम (जुम्भिका) ऋजुपालिक नदी शॉल वृक्ष नीचे ज्ञान की प्राप्ति हुई। आचरांग सूत्र से महावीर के कठोर तप की जानकारी मिलती है। वर्धमान ने तप के दौरान महान पराक्रम का प्रद"र्न किया इसलिए इन्हे

महावीर कहा जाता है। 'पद्मावती' (चम्पानरे"ा दधिवाहन की पुत्री) महावीर स्वामी की प्रथम ि"ाष्या बनी। 72वर्ष की आयु में महावीर स्वामी ने राजगृह के समीप पावापुरी में शरीर छोडा।

4.4.3.2. जैन धर्म की शिक्षाएं एवं सिद्धान्त (Teachings and Theory of Jainism)

- **पंचमहाव्रत** – जैन धर्म के पालन के लिए पंचमहाव्रत का पालन करना अति आवश्यक है।
- **अहिंसा** – मन, क्रम–वचन किसी के प्रति ऐसा व्यवहार न करें जिससे उसे दुःख या कष्ट हों।
- **सत्य** – कर्म एवं वचन में सत्य होना।
- **अस्तेय** – दूसरों की किसी भी वस्तु को किसी रूप में स्वीकार न करना। (छल/कपट/चोरी/लोभ)
- **ब्रह्मचर्य** – भोग वासनाओं से दूर रहकर सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करना। स्त्री को न देखना ओर न उससे वार्तालाप करना।
- **अप्रिग्रह** – भौतिक वस्तुओं का त्याग करना चाहिए तथा भौतिक सम्पति का अनाव"यक संग्रह नही करना चाहिए।

2. **त्रिरत्न** – कर्म फल से छुटकारा पाना तथा निवारण को जैन धर्म में त्रिरत्न कहा है। मोक्ष प्राप्ति के लिए त्रिरत्न है –

- **सम्यक् ज्ञान** – सच्चा और पूर्ण ज्ञान ही सम्यक् ज्ञान है।
- **सम्यक् दर्शन** – यर्थाथ ज्ञान की प्रति श्रद्धा को जैन धर्म में सम्यक् द"ान कहा गया है।
- **सम्यक् आचरण** – मनुष्य को इन्द्रियों के अधीन न होकर सदाचारी जीवन यापन करना चाहिए। इसके लिए उसे सत्य, अहिंसा तथा ब्रह्मचर्य का पालन आव"यक है।

3 **पंच अणुव्रत** – जैन भिक्षु और भिक्षुणियों के लिए पंच महाव्रत का पालन करना आव"यक था। महावीर स्वामी ने गृहस्थों को 5 या पंच अणुव्रत के पालन का उपदे"ा दिया – (i) अंहिसा (ii) अमृषा (iii) अचौर्य (iv) अपरिग्रह (v) ब्रह्मचर्य

4 **अनीश्वरवादिता** – महावीर स्वामी ई"वर के अस्तित्व में वि"वास नहीं करते थे। सृष्टि का निर्माण द्रव्यों, आका"ा, काल, धर्म, अधर्म व जीव से हुआ है।

5 **कर्म तथा पुनःर्जन्म** – मोक्ष की प्राप्ति के लिए कर्म से विमुख होना आव"यक है इससे ही पुनःर्जन्म से मुक्ति मिलती है।

6 **स्यादवाद** :– मनः स्थिति वैचारिक शक्ति एवं योग्यता की क्षमता सभी मे समान नही होती।

7 **अनेकात्मकतावाद** – आत्मा का अस्तित्व तो है परन्तु परम आत्मकता जैसी चीज नही थी। आत्मा धर्म का कोई सम्बन्ध नही है।

8 **निवृति की प्रधानता** – जैन धर्म में निवृति की प्रधानता पर बल दिया गया है। संसार दुःखों का घर है। दुख का मुख्य कारण तृष्णा है। तृष्णा का ना"ा करने के लिए निवृति से ही हो सकता है।

9 **अठारह पाप** – इन पापों से मनुष्य कर्म बंधन में फंसता है – (i) झूठ (ii) चोरी (iii) मैथुन (iv) क्रोध (v) हिंसा (vi) द्रव्य मूर्छा (vii) लोभ (viii) माया (ix) मान (x) मोह (xi) कलह (xii) द्वेष (xiii) दोषारोपण (xiv) चुगली (xv) निंदा (xvi) असंयम (xvii) माया मृषा (कपटपूर्ण झूठ (xviii) मिथ्या द"ान रूपी शल्य

10 **जाति प्रथा तथा लिंग भेद के प्रति विरूद्ध** – महावीर स्वामी ने जाति प्रथा के घोर विरोधक थे। मनुष्य कर्म से ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वै"य और शूद्र होता है। लिंग भेद का भी महावीर स्वामी ने विरोध किया। महिला और पुरूष दोनों ही समान है तथा दोनों को मोक्ष प्राप्ति का अधिकार है।

4.4.3.3 जैन धर्म के विस्तार के कारण (Reasons for the expansion of Jainism) :– जैन धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी ने कैवल्य की प्राप्ति के बाद जैन धर्म का प्रचार–प्रसार किया। कौ"ाल, विदेह, मगह तथा अंग राज्यों में तेजी के साथ फैल गया। जैन साधुओं ने पि"चम में प्रचार किया। तीर्थ–स्थली मथुरा को अपने धार्मिक प्रचार का केन्द्र बनाया। दक्षिण में जैन धर्म का प्रचार दिगंबर सम्प्रदाय के अनुयायियों ने किया। लेकिन जैन धर्म बौद्ध धर्म की भांति विदे"ाों तक फूला–फैला नही । भारत में जैन धर्म के प्रसार के कारण निम्नलिखित थे।

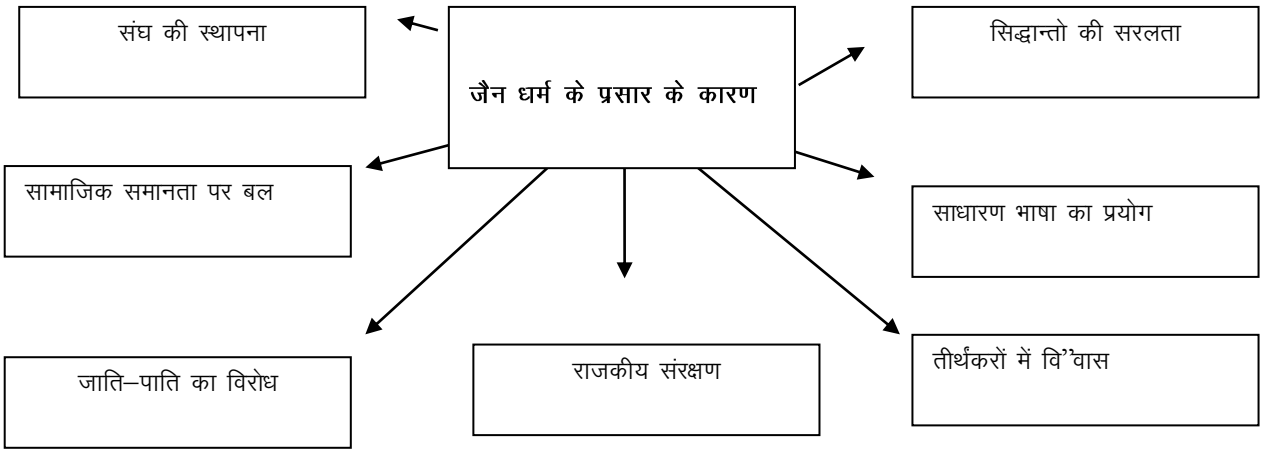

इसका वर्णन निम्न प्रकार से है –

(1) सिद्धान्तों की सरलता – जैन धर्म के सिद्धान्त बहुत ही सरल थे जो जनसाधारण आसानी से अपना सकता था। कष्ट साध्य जैन धर्म के व्यवहारिक एवं सरल सिद्धान्तों ने जनता को उनके कर्तव्यों का बोध करवाया एवं स्वालंबी बनने का उपदे"ा दिया।

(2) तीर्थंकरों में विश्वास – जैन अनुयायी जैन धर्म के 24 तीर्थंकरों में अटूट वि"वास व श्रद्धा रखते थे। वे तीर्थंकरो का सर्वज्ञ एवंम् सर्व"ाक्ति मान मानते थे।

(3) राजकीय सरंक्षण – जैन धर्म के प्रचार–प्रसार में तत्कालीन राजाओं का समर्थन व राजकीय संरक्षण प्रदान किया। अनेक राजा सांमत महावीर के उपदे"ाों से बहुत प्रभावित हुए और जैन धर्म के प्रसार में अपना सम्पूर्ण योगदान दिया।

(4) संघ की स्थापना – महावीर स्वामी ने कैवल्य की प्राप्ति के बाद जैन धर्म के संघ की स्थापना की और जैन धर्म के प्रचार–प्रसार में अहम् भूमिका निभाई।

(5) जाति–पाति का विरोध – महावीर स्वामी जाति–पाति एवं वर्ण वर्ग के विरोधी थे। वे सभी के साथ एक समान व्यवहार करने पर बल देते थे कि किसी जीव को दुःख न हो।

(6) साधारण भाषा का प्रयोग – जैन धर्म के सिद्धान्त साधारण बोल–चाल की भाषा में लिखे गए थे ताकि जनता उन्हे आसानी से समझ सके। महावीर स्वामी तथा उसके ि"ाष्यों ने साधारण भाषा में उपदे"ा दिए ताकि लोग इस धर्म के ज्यादा से ज्यादा अनुयायी बन सके।

(7) सामाजिक समानता पर बल – महावीर स्वामी ने समानता पर बल दिया और इसके साथ स्वतंत्रता एवं नैतिकता पर भी बल दिया। ब्राह्मण समाज में निम्न वर्ग के लोगों को हीन दृष्टि से देखा जाता था। महावीर स्वामी ने इन सभी जातियों के लिए धर्म के रास्ते खोल दिए।

इस प्रकार से कह सकते है कि उपयुर्क्त तथ्यों व कथनों के कारण जैन धर्म ने छठी शताब्दी में पूरे भारत में तेज गति के साथ विकास किया। जिसमें स्वामी जी व उनके ि"ाष्यों का योगदान काफी सराहनीय था।

4.5 प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

भाग (क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

(i) महाजनपदों की संख्या ..... थी और कां"ाी की राजधानी .... थी।

(ii) उत्तरी बिहार का आधुनिक भागलपुर मूंगेर जिले का क्षेत्रफल ..... में शामिल था।

(iii) वज्जी जनपद की राजधानी का ..... था।

(iv) विराटनगर ..... की राजधानी थी।

(v) ि"ा"ुनाग व"ा ..... तक था।

(vi) जरासंध ..... का पुत्र था।

(vii) घटक ..... की राजधानी थी

(viii) ि"ा"ुनाग व"ा का संस्थापक ..... था।

(ix) दक्षिण भारत का एकमात्र जनपद ..... था।

(x) महावीर की पत्नी का ..... एवं पुत्री का नाम ..... था।

(xi) जैन धर्म त्रिरत्न (क)..... (ख) ..... (ग) ..... है।

(xii) गौतम बुद्ध का जन्म ..... ई.पू. में ..... स्थान पर हुआ।

(xiii) गौतम बुद्ध का विवाह ..... वर्ष की अवस्था में ..... के साथ हुआ।

(xiv) महाबीर के बचपन का नाम ..... था।

(xv) बौद्ध संघ में सम्मिलित होने के लिए न्यूनतम आयु सीमा ..... थी।

भाग (ख) उचित मिलान किजिए (Matching Test)

(i) ऋषभदेव जैन धर्म के संस्थापक थे	(1) जन्म, घटना से
(ii) महावीर स्वामी की मृत्यु कितने वर्ष में हुई	(2) प्रथम
(iii) कमल एवं सांड का बौद्ध धर्म के किस प्रतीक से संबन्ध है।	(3) 72 वर्ष की आयु
(iv) दिगंबर और श्वेताम्बर का सम्बन्ध किस धर्म से है।	(4) महात्मा बुद्ध
(v) ऐि"ाया का ज्योतिपुंज (Light of Asia)	(5) जैन धर्म
(vi) शूरसेन महाजनपद की राजधानी	(6) 30 वर्ष
(vii) गंधार धनपद की राजधानी	(7) 255 ई.पू.
(viii) सबसे बड़ा महाजनपद	(8) श्रावस्ती
(ix) बुद्ध ने सर्वाधिक उपेद"ा किस महाजनपद की राजधानी में दी	(9) मथुरा

(x) महावीर स्वामी ने कितनी वर्ष की आयु में गृह त्याग किया।	(10) 29 वर्ष
(xi) महात्मा बुद्ध ने कितनी वर्ष की आयु में गृह त्याग किया।	(11) तक्षशिला
(xii) प्रथम बौद्ध संगीति कब हुई	(12) मगध
(xiii) तृतीय बौद्ध संगीति कब हुई	(13) 483 ई.पू.
(xiv) सोलह महाजनपदों की जानकारी मिलती है	(14) उपनिषद्
(xv) विश्व दुःखों से भरा है का सिद्धान्त बुद्ध ने कहां से लिया	(15) अंगुन्तर निकाय से

भाग (ग) सत्य/असत्य (True & False)

(i) पश्चिम में काशी जनपद था जिसकी राजधानी वाराणसी थी।

(सत्य/असत्य)

(ii) अयोध्या कोशल के अन्तर्गत आता था जिसका सम्बन्ध रामकथा से नही था।

(सत्य/असत्य)

(iii) शूरसेन की राजधानी मथुरा थी।

(सत्य/असत्य)

(iv) महावीर की माता त्रिशला राजा चेटक की बहन नहीं थी।

(सत्य/असत्य)

(v) मगध सोलह महाजनपदों में से सबसे कमजोर था।

(सत्य/असत्य)

(vi) मगध का सर्वप्रथम उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है।

(सत्य/असत्य)

(vii) नन्दवंश के शासक बौद्ध धर्म के समर्थक थे।

(सत्य/असत्य)

(viii) नन्द वंश का अन्तिम शासक विम्बसार था।

(सत्य/असत्य)

(ix) यूनानी साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि नंदों की सेना में छह हजार हाथी थे।

(सत्य/असत्य)

(x) उग्रसेन को पुराणों ने महापद्म कहा गया है और उसके आठ पुत्र थे।

(सत्य/असत्य)

(xi) चतुर्थ बौद्ध संगति प्रथम सदी ई.पू. में कनिष्क के शासनकाल में वै"ाली में हुई थी।
(सत्य / असत्य)

(xii) सुतपिटक में बुद्ध के आध्यात्मिक व दा"ंनिक विचारों का संकलन किया गया है।
(सत्य / असत्य)

(xiii) जैन धर्म में युद्ध और कृषि दोनों को वर्जित माना गया है दोनों का संबन्ध जीवों के प्रति हिंसा से है।**(सत्य / असत्य)**

(xiv) महावीर स्वामी की पत्नी का नाम य"ोधरा और पुत्री का नाम त्रि"ाला था।
(सत्य / असत्य)

(xv) महावीर ने कृ म्भिक ग्राम में ऋजुपालिका नदी के तट पर साल वृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ति की। **(सत्य / असत्य)**

4.6. सारांश (Summary)

- मगध जनपद आधुनिक पटना, गया तथा शाहबाद का सम्मिलित भूभाग था। यह साम्राज्य उत्तरी भारत के वि"ाल तटवर्ती मैदानों के ऊपरी व निचले भागों के मध्य स्थित और पूर्ण सुरक्षित था। बौद्ध व जैन धर्मो का अभ्युदय इसी प्रदे"ा में हुआ।
- बृहद्रथ मगध राज्य का संस्थापक था। हरिवं"ा पुराण में उल्लेख मिलता है कि वृहद्रथ के पुत्र जरासंघ ने अपने काल में का"ी, को"ाल, मालवा, चेदि, मालवा, विदेह, अंग, बंग, कलिंग, पाण्डय, सौवीर, भद्र, क"मीर और गान्धार आदि राजाओं को पराजित किया।
- हर्यक, बिम्बसार, अजात"ात्रु उद्य भद्र, अनुरूद्ध, मुण्ड एवं नागद"ाक इस वं"ा के प्रमुख शासक था। बिम्बसार का राज्य तीन सौ योजन तक फैला था। बिम्बसार के शासनकाल मे मगध की राजधानी गिरिव्रज थी।
- बिम्बसार ने एक नवीन राज्य की स्थापना की थी जिसे फाह्यान ने अजात"ात्रु को उसका संस्थापक बताया है। बिम्बसार के राज्य में गांवों की संख्यां 80009 थी। बिम्बसार की राज्यसभा में गांव के प्रतिनिधियों को स्थान प्राप्त था। बिम्बसार के राज्य में जीवन वैद्य और महागोविन्द प्रसिद्ध वास्तुकार हुए। बिम्बसार के शासनकाल में दण्डनीति बडी कठोर थी कारावास के अतिरिक्त मृत्युदण्ड भी दिया जाता था। बिम्बसार के शासनकाल में न्यायधी"ा को व्यावहारिक महापात्र कहा जाता था।

- बिम्बसार के शासनकाल में उनका ज्येष्ठपुत्र द"ाक उपराजा था। अजात"ात्रु का दूसरा नाम कुणिक भी था। जैन अनुश्रुतियों के अनुसार अजात"ात्रु पितृहन्ता नहीं था। अजात"ात्रु के दो मंत्री थे – सुद्धि और वस्सकार अजात"ात्रु ने वै"ाली के विरूद्ध युद्ध में दो नवीन अस्त्रों का प्रयोग किया था। जिनका नाम रथमूसल तथा महा"िलाकष्टक था।
- प्रो. हेमचन्द्र राय ने रथमूसल की तुलना आधुनिक टैंकों से की है। जैन ग्रन्थों से पता चलता है कि अजात"ात्रु को वै"ाली जीतने के लिए 16 वर्ष तक युद्ध करना पड़ा था। अपने पिता के शासन काल में अजात"ात्रु सूबेदार रह चुका था।
- पौराणिक ग्रन्थों में उल्लेख है कि उभयी भद्र ने अपने पिता अजात"ात्रु की हत्याकर सत्ता हासिल की तथा सैंतीस वर्षो तक मगध पर शासन किया। उदयीभद्र के प"चात् अनुरूद्ध, मुण्ड और नागद"ाक ने मगध पर शासन किया। नागद"ाक मगघ का अंतिम शासक था।
- नागद"ाक के प"चात् हर्यक व"ा का अंत हो गया और ि"ा"ु नागव"ा का काला"ोक मगध का शासक बना। काला"ोक ने अपनी राजधानी पटना को बनाया। काला"ोक का उपनाम काकवर्ण था। राजधानी के समीप घूमते हुए काला"ोक की किसी व्यक्ति ने छुरा घोंपकर हत्या कर दी।
- ि"ा"ुनागव"ा का अंतिम शासक नंदिवर्धन था। ि"ा"ु नागों के बाद नंदीं का शासन शुरू हुआ ये मगध के सबसे शक्ति"ाली शासक थे।
- महापद्मनंद नंदव"ा के प्रथम शासक जिन्होनें ि"ा"ुनागव"ा का अन्त करके अपना अधिकार स्थापित किया। नंदव"ा में नौ राजा थे। इसलिए उन्हे नव नंद भी कहा जाता है। उग्रसेन को पुराणों में महापद्म कहा गया है। शेष आठ उसी के पुत्र थे। महापद्म नंद ने 344 ई.पू. से 322 ई.पू. शासन किया। इन्होनें कलिंग की विजय की तथा वहां एक नहर खुदवायी। बाद में इसका उल्लेख खाखेल ने अपनी हाथी गुफा में उल्लेख भी किया।
- घनानंद नंद व"ा का अंतिम शासक था। महापद्म नंद के आठ पुत्रों में घनानंद सिकन्दर का समकालीन था। घनानंद के समय 325 ई पू. सिकन्दर ने प"िचम भारत पर आक्रमण किया। यह नंदव"ा का अन्तिम सम्राट था।
- नन्द शासक जैन धर्म को मानते थे। नंद काफी धनी और बहुत शक्ति"ाली थे। 322 ई.पू. में चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने गुरू चाणक्य की मदद से घनानंद की हत्या कर दी और मौर्य व"ा की स्थापना की नींव डाली।

- प्रारम्भ में मगध की राजधानी राजगीर और द्वितीय पाटलिपुत्र। राजगीर पांच पहाडियों से घिरा हुआ है।
- यूनानी रत्रोतों से ज्ञात होता है कि नंदों की सेना में 6000 हाथी थे। यूनानियों ने घनानंद को अग्रमिस कहा था। नंद वं"ा के बाद मगध पर मौर्य वं"ा के शासकों ने शासन किया।
- महात्माबुद्ध का जन्म 563 ई.पू. में शाक्य नाम क्षत्रिय कुल में कपिलवस्तु के निकट लुम्बिनी वन में हुआ। बचपन का नाम सिद्धार्थ था। पिता का नाम शुद्धोदन माता का नाम महामाया देवी जो कौ"ाल राज्य कोलीय वं"ा की राजकुमारी थी। इनका गोत्र गौतम था। इनकी विमाता गौतमी प्रजापति थी।
- महात्मा बुद्ध का विवाह 16 वर्ष की आयु मे य"ोधरा के साथ हुआ। इनके पुत्र का नाम राहुल था। 29 वर्ष की आयु में महात्मा बुद्ध को वैराग्य उत्पन्न हो गया और उन्होनें गृहत्याग कर दिया। इस घटना को बौद्ध धर्म में महाभिनिष्क्रमण कहते है।
- महात्मा बुद्ध के तीन प्रमुख नाम है – बुद्ध, तथागत, शाक्यमुनि। गृहत्याग के बाद सिर मुंडवाकर भिक्षु के काषाय वस्त्र धारण करके अनोमा नदी के तट पर तपस्या करने लगे।
- 35 वर्ष की आयु में बोध गया में वै"ाख पूर्णिमा की एक रात को निरंजना (पुनपुन) नदी के तट पर पीपल वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ को ज्ञान की प्राप्ति हुई तब वे गौतम कहलाए। महात्मा बुद्ध ने अपना प्रथम उपदे"ा वाराणसी के सारनाथ में पांच सन्यासी ब्राह्मणों को दिया। जिसे बौद्ध ग्रन्थों में धर्मचक्र के नाम से जाना जाता है।
- महात्मा बुद्ध ने सबसे अधिक उपदे"ा को"ाल दे"ा की राजधानी श्रावस्ती में दिए और इसे प्रचार–प्रसार का केन्द्र बनाया। महात्मा बुद्ध के प्रिय ि"ाष्य उपालि व आनंद थे जिन्होनें बौद्ध मठ की स्थापना की।
- महात्मा बुद्ध के अनुयायी – महात्मा बुद्ध के अनुयायियों को चार भागों में बांटा गया है भिक्षु–भिक्षुणी, उपासक–उपासिका। बौद्ध धर्म के तीन सम्प्रदाय – हीनयान, महायान एवं वज्रयान। हीनयान ने महात्मा बुद्ध को उपदे"ा के रूप में स्वीकार किया है। महायान सम्प्रदाय ने बुद्ध को भगवान के रूप में तथा वज्रयान में बुद्ध को अलौकिक सिद्धपुरूष स्वीकार किया।
- महात्मा बुद्ध के चार आर्य सत्य – दुःख, दुःख समुदाय, दुःख विरोध, दुःख निरोध–गामिनी प्रतिपदा। महात्मा बुद्ध के अनुसार मध्यम या अष्टांगिक मार्ग अपनाना चाहिए। न अधिक विलास करना चाहिए न अधिक संयम।

- बुद्ध की ि"क्षाओं को संकलित करने के लिए तीन भागों में बांटा गया है – सुत्तषिटक (पिटकों में बृहत्तम) बुद्ध के उपदे"ाों व संवादों का संकलन। विनय पिटक (लघुत्तम) बौद्ध संघ के आचार–विचार न नियम–निषेध का संकलन है।
- अभिधम्म पिटक (पिटकों में माध्यम) बुद्ध के आध्यात्मिक व दा"ानिक विचारों का संकलन। 45 वर्ष तक निरन्तर धर्म का उपदे"ा देते रहे और 80 वर्ष की आयु में 483 ई. पू. वै"ाली पूर्णिमा के दिन कु"ानगर (कसिया गांव देवरिया जिला –पूर्वी उत्तर प्रदे"ा) में शरीर को त्याग दिया। इस घटना को बौद्ध धर्म में महापरिनिर्वाण कहा जाता है।
- महावीर का जन्म 540 ई.पू. कुण्डग्राम के वै"ाली के निकट बिहार में हुआ। बचपन का नाम वर्धमान महावीर। पत्नी य"ोदा और पुत्री प्रियद"ाना प्रथम ि"ाष्य जामालि (दामाद)। गृह त्याग 30 वर्ष की आयु में बड़े भाई नन्दिवर्द्धन की आज्ञा से।
- 12 वर्ष की लगातार तपस्या के बाद जृम्भिक ग्राम में ऋजुपालिका नदी के तट पर साल वृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ति हुई। उपाधियां – जिन (विजेता) निर्ग्रन्थ (वंधनरहित) अर्हत पूज्य 192 वर्ष की आयु 468 ई.पू. राजगीर के समीप पावापुरी (राजगृह) बिहार में।
- जैन धर्म में युद्ध और कृषि दोनों वर्जित थे। ये दोनों जीवों के प्रति हिंसा करती है। जैन धर्म के मुख्य उपदे"ाों को संकलित करने के लिए पटना में एक परिषद का गठन किया गया।
- वर्धमान के ज्ञान प्राप्ति के लिए कठिन तपस्या की जानकारी 'कल्पसूत्र'' से मिलती है। महावीर के तप वर्णन – आचारांग सूत्र से मिलती है। जैन धर्म की ि"ाक्षाओं में 5 मूल ि"ाक्षाएं थी – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, और अपरिग्रह ये पा"र्वनाथ ने प्रतिपादित किए। पाचवां तत्व ब्रह्मचर्य महावीर ने जोड़ा।

4.7. सूचक शब्द (Key Words)

शब्द (word)	अर्थ (Meaning)	शब्द (word)	अर्थ (Meaning)
मरण	मृत्यु	जरा	बुढ़ापा
दुरूहता	जटिल	निषेध	मनाही
विक्षुध्ध	दुखी कर दिया	कैवल्य	ज्ञान
विमाता	सौतेली माता	प्रख्यात	प्रसिद्ध

4.8. स्व–मूल्यांकन परीक्षा **(Self -Assessment Test) (SAT)**

भाग (क) **(Part –A)** बहुविकल्पीय प्रश्न **(Multiple Choice Questions) (MCQS)**

(इनके उत्तर दायिनी तरफ कोश्ठक में दिए गए है।)

I. छठी शताब्दी ई.पू. में पूर्वी उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले में स्थित था।

(क) मल्ल

(ख) पांचाल

(ग) कुरू

(घ) उपयुर्क्त में कोई नही (ग)

II **हर्यक वंश के शासक थ**

(क) विम्बसार, अजात"ात्रु, मुण्ड पंचनक

(ख) विम्बसार, अजात"ात्रु, अनुरूद्ध, नागदासक

(ग) विम्बसार, अजात"ात्रु, मुण्ड उदयत, पंचनक

(घ) अजात"ात्रु अनुरूद्ध, नागदासक, काला"ोक (घ)

III **चतुर्थ बौद्ध संगीति का आयोजन किसके शासनकाल में किया गया था।**

(क) अजात"ात्रु (ख) काला"ोक (ग) अ"ोक (घ) कनिष्क (घ)

IV **जैन ग्रंथ में किसकी मां का नाम 'पद्मावती ' मिलता है**

(क) उदयभद्र (ख) अनिरूद्ध (ग) मुण्डक (घ) नागद"ाक (घ)

V **छठी सदी ई. पू. अनेक गणतंत्रात्मक राज्य अस्तित्व में थे इस प्रकार के राज्यों में एक शाक्य राज्य था इस राज्य मं किस**

महान व्यक्ति का जन्म हुआ था

(क) महात्मा बुद्ध

(ख) महावीर स्वामी

(ग) उपयुक्त दोनों

(घ) कोई नही (ख)

VI **महात्मा बुद्ध के गृह स्थान का प्रतीक है**

(क) कमल एवं साण्ड (ख) स्तूप (ग) घोड़ा (घ) बोधि वृक्ष (ग)

VII **जैन धर्म में संस्थापक एवं प्रथम तीर्थंकर कौन थे**

(क) बुद्ध (ख) पा"र्वनाथ (ग) महावीर (घ) ऋषभदेव (घ)

VIII **23वें तीर्थंकर जैन ने चार व्रत के पालन का उपदेश दिया था, निम्नलिखित में कौन सा व्रत नही था**

(क) सत्य (ख) अहिंसा (ग) ब्रह्मचार्य (घ) अपरिग्रह (ग)

IX **छठी शताब्दी ई.पू. के किस महाजनपद की राजधानी का नाम महाभारत एवं पुराणों में 'मालिनी' मिलता है**

(क) अंग (ख) अ"मक (ग) कौ"ाल (घ) सम्युतर

X **बौद्ध धर्म 'हीनयान' एवं महायान दो सम्प्रदायों में विभिक्त हो गया था**

(क) मौर्य काल में (ख) कुषाण काल में (ग) शुंग काल में (घ) गुप्त काल में

भाग (ख) (Part –A) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer types Question) (LAQS)

प्रश्न 1. मगध साम्राज्य के विस्तार के कारणों की व्याख्या कीजिए।

(Explain the Reasons for the expension of Magadha)

प्रश्न 2. भगवान बुद्ध के जीवन एवं उपदेशों का मूल्यांकन करं।

(Exmine the Life and teaching of Loard Buddha) (Bhagalpur Univ. 2018)

प्रश्न 3. महावीर स्वामी की जीवनी और उनकी शिक्षाओं पर प्रकाश डालें।

(Throw Lighton the life and teachings of MahavirSwami)

प्रश्न 4. मगध साम्राज्य के उदय पर एक निबंध लिखिए। (Write a Brief essay on rise Magadha Empire)

प्रश्न 5. महाजनपद युग की व्याख्या करें। (Explain the Mahajanpadas period)

भाग (ग) अति लघु उत्तरीय प्रश्न (Part (C) (Very Short Answer Question)

(1) बौद्ध धर्म का संस्थापक कौन था ? (Who was the founder of Buddhism)

(2) मगध की राजधानी कौन सी थी ? (Which was the Capital of Magadha)

(3) जैन धर्म का संस्थापक कौन था ? (Who was the founder of Jainism)

(4) धार्मिक आन्दोलन क्या था ? (What is Religious Movements)

(5) बुद्ध के पिता कौन थे ? (Who is Father of Buddhism)

(6) भगवान बुद्ध के उपदे"ों का मूल्यांकन करें ? (Examine the teachings of Loard Buddha) (Bhagalpur Univ. 2018)

(7) महावीर स्वामी की पत्नी का क्या नाम था ? (What was the Name of Mahavir's wife)

(8) वज्जि की राजधानी कौन सी थी ? (Which was the Capital of Vajji)

(9) गौतम बुद्ध के पुत्र का क्या नाम था ? (What was the name of Gautam Budha's son)

4.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

(क) रिक्त स्थानों के उत्तर :–

(क) 16, वाराणसी (Varansi) (II) अंगजनपद (Angajanpad) (III) वै"ाली (IV) मत्स्य (Matsya) (V) 412 ई.पू.– 344 ई पू. (VI) बृहद्रथ (भीम के साथ मल युद्ध में मारा गया) (VII) कम्बोज (Kamboj) (VIII) ि"ा"ुनाग (IX) अ"मक (X) य"ोदा एवं पुत्री का नाम अनोज्या प्रियद"र्ानी (XI) (1) सम्यक द"र्ान (2) सम्यक् ज्ञान (3) सम्यक् आचरण (XII) 563 ई.पू. में कपिलवस्तु के लुम्बिनी (XIII) 16 वर्ष की अवस्था में य"ोधरा (XIV) वर्द्धमान (XV) 15 वर्ष

(ख) उचित मिलान करें :– (i) 2 (ii) 3 (iii) 1 (iv) 5 (v) 4 (vi) 9 (vii) 11 (viii) 12 (ix) 8 (x) 6 (xi) 10 (xii) 13 (xiii) 7 (xiv) 15 (xv) 14

(ग) **सत्य/असत्य (True an False) :-** (i) सत्य (ii) असत्य (iii) सत्य (iv) असत्य (v) असत्य (vi) सत्य (vii) सत्य (viii) असत्य (ix) सत्य (x) सत्य (xi) असत्य (xii) असत्य (xiii) सत्य (xiv) असत्य (xv) सत्य

4.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री (References /Suggested Readings)

- **मनजीत सिंह सोढी : (Themes in Indian History, Modern's publishers, Railway Road, Jalandhar, 1st Edition : 2009**
- द्विजेन्द्रनारयण झा एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली : प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेषालय दिल्ली विष्वविद्यालय, 43 वां पुनर्मुद्रण : नवम्बर, 2018
- महेष कुमार वर्णमाल : संक्षिप्त इतिहास – NCERT सार, cosmos पब्लिके"ान, मुखर्जी नगर, दिल्ली, जनवरी, 2019
- रामषरण शर्मा : भारत का प्राचीन इतिहास, ऑक्सबोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस द्वारा भारत प्रका"ित – 2/11 भूतल, भंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली, चौथा हिन्दी संस्करण, 2019
- डी.एन.झा. भारत का प्राचीन इतिहास, विविध आयाम, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेषालय दिल्ली विष्वविद्यालय, पुनर्मुद्रण : अक्टूबर, 2016
- यूनिक सामान्य अध्ययन – डॉ. विनय कुमार सिंह, इलाहाबाद (उत्तर प्रदे"ा)
- स्पेक्ट्रम पब्लिकेषन – सामान्य अध्ययन, अहिर नगर, दिल्ली

SUBJECT	**HISTORY**
COURSE CODE :B.A. 106	**AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA**
LESSON NO. 05	**VETTER :**
मौर्य साम्राज्य **(MAURYAN EMPIRE)**	

अध्याय संरचना

5.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

5.2 परिचय (Introduction)

5.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body Of Text)

5.3.1 मौर्य साम्राज्य (Maurvan Empire)

5.3.2 चन्द्रगुप्त मौर्य (Chandragupta Maurya) (323-298 ई0 पू0)

5.3.3 बिन्दुसार (Bindu Sara) (298-273 ई0 पू0)

5.3.4 अशोक (Ashoka)(273-232 ई0 पू0)

5.3.5 मौर्य वंश के मुख्य स्त्रोत (Main Sources of the Mauryan Dynasty)

5.4 अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body Of The Text)

5.4.1 राज्य व्यवस्था के एवं प्रशासन (Polity And Administration)

5.4.2 मौर्यकालीन आर्थिक जीवन (Economic Life Of The Mauryas)

5.4.3 सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति (Social And Religious Situation)

5.4.4 अशोक के धम्म प्रकृति एवं सिद्धान्त (Ashoka's Dhamma Of Nature And Principles)

5.4.5 अशोक के धर्म का प्रसार (Ashoka's Dhamma Of Proparagation)

5.4.6 मौर्य साम्राज्य का पतन (The Decline Of Maurya)

5.4.7 मौर्योत्तर साम्राज्य : कुषाण और सातवाहन (Post Mauryan Empires Kushnas And Satvahans)

5.4.7.1 कुषाण (Kushana)

5.4.7.2 सातवाहन (Satvahans)

5.5. प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

5.6. सारांश (Summary)

5.7. सूचक शब्द (Key Words)

5.8. स्व मूल्यांकन परीक्षा (Self-Assesment Test) (SAT)

5.9. प्रगति समीक्षा हेतू प्रश्नोत्तर (Answers To Check Your Progress)

5.10. सहायक संदर्भ ग्रंथ एवं अध्ययन सामग्री (References/Suggested Readings)

5.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives)

जब आप इस अध्याय को समझ पाएंगें तो आप इस योग्य हो जाएंगें (बन जाएंगें)

- शिक्षार्थी मौर्य साम्राज्य के बारे में ज्ञान प्राप्त करेगें।
- पाठकों के बीच इस पर परिचर्चा करना कि मौर्य साम्राज्य पूर्व साम्राज्यों की अपेक्षा अधिक सुदृढ़ नीतियों पर आधारित व विस्तारवादी था।
- अधिगमकर्ताओं को मौर्य साम्राज्य के भारत में फेलाव से रूबरू करवाना।
- मौर्यकालीन प्रशासनिक नीतियों की पाठक प्रमख विशेषताओं को आत्मसात कर सकेगें।
- मौर्यकालीन तथा पूर्व के शासकों की प्रशासनिक नीतियों का पाठक तुलनात्मक अध्यनन कर सकेगें।
- जिज्ञासु पाठकों के बीच राजनैतिक आर्थिक सामाजिक एवं सास्कृतिक पर परिचर्चा करना।
- अधिगमकर्ताओं को अशोक के धम्म् व प्रशासनिक सुधारों के प्रसार से अवगत करवाना।

- मौर्यकालीन ऐतिहासिक स्त्रोतों पर अपने साथी पाठकों के साथ परिचर्चा कर सकेगें।
- प्राचीन भारत के इतिहास में अशोक की प्रसिद्ध के क्या कारण थे। इसके बारे में अवगत करवाना।
- मौर्य काल के पतन के कारण क्या थे।
- मौर्योत्तर साम्राज्य के प्रमुख शासकों से परिचित करवाना।
- कुषाण शासकों की वंशावाली से शिक्षार्थियों को अवगत करवाना।
- सातवाहन वंश की मुख्य शासक कौन–कौन हुए।

5.2. परिचय (INTRODUCTION)

मौर्य वंश की स्थापना चन्द्रगुप्त मौर्य ने की थी जो एक साधारण परिवार के थे, चन्द्रगुप्त मौर्य ने प्रसिद्ध आचार्य चाणक्य की सहायता से नन्द वंश को नष्ट किया। चन्द्रगुप्त की जाति के सम्बन्ध में विद्वान एक मत नही है। ब्राह्याण परम्परा के अनुसार ये शुद्र जाति के बताए जाते है तो जैन एवं बोद्ध साहित्य के अनुसार चन्द्रगुप्त क्षत्रिय कुल से सम्बन्ध रखते थे। उनका जन्म नन्द के रनिवास में रहने वाली एक शुद्र महिला मुरा की कोख से हुआ था। बोद्ध परम्परा के अनुसार चन्द्रगुप्त नेपाल की तराई से लगने वाले गोरखपुर क्षेत्र के पीपहलिवन के छोटे गणराज्य के क्षत्रिय वंश के थे। रोमिला थापर ने चन्द्रगुप्त को वैश्य जाति का माना है। चन्द्रगुप्त मौर्य ने मगध के राजसिंहासन पर बैठ कर एक ऐसे राज्य की नींव डाली जो सम्पूर्ण भारत में फेला था। जस्टिन ने चन्द्रगुप्त के विषय में कहा है कि छः लाख की सेना के साथ चन्द्रगुप्त ने सम्पूर्ण भारत को रोंद कर उस पर अपना अधिकार कर लिया। उत्तरी पश्चिमी भारत को सिकन्दर के उत्तराधिकारियों से मुक्त कर सेल्सुकस को हराकर उसे संधि करने के लिए बाध्य कर दिया। सेल्सुकस के साथ हुए शान्ति समझौते में सेल्सुकस ने न केवल अपनी बेटी का चन्द्रगुप्त से विवाह किया अपितु पूर्वी अफगानिस्तान , बलुचिस्थान ओर सिंधु का पश्चिमी क्षेत्र भी चन्द्रगुप्त को सौंप दिया। सेल्सुकस ने पांच सौ हाथियों के साथ दहेज में चार प्रान्त एरिया, अराकोसिया, जेड्रोसिया एवं पेरीपेमिसदाई (अर्थात काबुल–कंधार–मक्रांत ओर हेरात) दे दिए। इस प्रकार चन्द्रगुप्त ने भारत के विशाल भू–भाग बिहार, उडिसा, बंगाल, पश्चिमी ओर उत्तर पश्चिमी भारत जिसमें दक्कन भी शामिल था, केरल, तमिलनाडु, उत्तरपूर्वी भारत लगभग पूरे महाद्वीप पर शासन किया।

चन्द्रगुप्त के वंश की भांति उनके जीवन के पुर्नगठन का आधार भी परम्पराय एवं कि – वंदतियां ही अधिक है इनका भी कोई ठोस आधार नही है। इस सम्बन्ध में चाणक्य चन्द्रगुप्त कथा सार उल्लेखनीय है जिसके अनुसार नंद से अपमानित होकर चाणक्य ने उसे समूल नष्ट करने का प्रण लिया इसी क्रम में संयोगात उनकी भेट चन्द्रगुप्त से हो गई वह उसे तक्षशिला ले गये ओर शिक्षा दीक्षा के उपरान्त चाणक्य की कुटनीति ओर चन्द्रगुप्त ने शौर्य तथा रण कौशल में नन्द वंश के अन्तिम सम्राट धनानन्द का उन्मूलन कर दिया।

मौर्य शासक न केवल महान विजेता थे अपितु वे उच्चकोटि के कुशल शासक प्रबन्धक भी थे। मौर्य का प्रशासन तन्त्र अत्यन्त विस्तृत था। मेगस्थनीज की पुस्तक इण्डिका तथा कोटिल्य के अर्थशास्त्र में इसके पुष्ट प्रमाण मिलते है। चन्द्रगुप्त मौर्य का साम्राज्य उत्तर पश्चिम में हिन्दुकुश तथा दक्षिण में उत्तरी कर्नाटक एवं पूर्व में मगध से पश्चिम में सौराष्ट्र तक फेला था। मौर्य साम्राज्य के संगठन का स्वरूप एक–तन्त्रिय था। केन्द्रिय व्यवस्था को शक्तिशाली एवं मजबूत बनाने प्रान्तों में विभाजित कर दिया। मेगस्थनीज यूनानी राजदूत था जिसे सेल्यूकस ने चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में भेजा था। इनकी प्रसिद्ध रचना 'इण्डिका' जो सम्पूर्ण मौर्य साम्राज्य के तात्कालिक व्यवस्था से अवगत कराती है।

मौर्य साम्राज्य के विस्तार में चन्द्रगुप्त मौर्य के पुत्र – बिन्दुसार – बिन्दुसार का पुत्र– अशोक इन सभी ने मौर्य साम्राज्य में समस–समय प्रशासनिक सुधार किए जिसकी वजय से मौर्य साम्राज्य समग्र राष्ट्र के रूप में विकसित हुआ।

मौर्योत्तर काल में, भारत में विकेन्द्रीकरण की प्रवृति को रोकने के लिए राजतन्त्र में दैवी तत्व का समायोजन हुआ। मौर्य सत्ता के पतन के बाद क्रमशः उत्तर–दक्षिण भारत की बडी शक्तियां थी। कुषाण वंश का प्रतापी शासक कनिष्क एक महान शासक था। सर्वप्रथम सात वाहनों ने बौद्ध और ब्राह्याणों को प्रशासनिक नियन्त्रण से मुफ्त भूमि दान देकर केन्द्रिय सत्ता को कमजोर करने की प्रथा को आरम्भ किया।

मौर्यत्तर काल युग की विकेन्द्रीकरण की प्रवृती कमजोर हो गई। सामन्ती शासन के बीज इसी युग में बोए गए। सातवाहनों का इतिहास काफी अन्धकारमय है। इनके अभ्युदय के काल और राजाओं के क्रम का ठीक पता नही है। इस वंश में गौतमी पुत्र सतकरणी महान शासक हुआ। मौर्य साम्राज्य के राज्य व्यवस्था प्रशासनिक व आर्थिक, अशोक धम्म का विस्तार। मौर्योत्तर काल के दो प्रमुख वंश कुषाण वंश व सातवाहन वंश आदि सभी की विस्तार पूर्वक चर्चा करेगें।

5.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body Of Text)

5.3.1. मौर्य साम्राज्य (Mauryan Empire) :– मगध में नन्द वंश के बाद मौर्यो का सूर्य उद्य हुआ। अनेको स्त्रोतों से जानकारी के आधार पर इनका इतिहास अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय हो जाता है। जैसे की कोटिल्य के अर्थशास्त्र से उनकी शासन व्यवस्था का पता चलता है। मौर्यकाल के असली छाप पुस्तकों का मूल भाव माना जाता है। सबसे अधिक प्रमाणित मौर्य पर लेख अशोक द्वारा जारी किए गए अभिलेख है। मोर्यो ने मगध साम्राज्य का विस्तार सम्पूण भारत में कर दिया था। इतिहाकारों ने मौर्यवंश के इतिहास को मौर्य साम्राज्य के इतिहास के रूप में सीापित कर दिया है। मौर्य वंश की स्थापना चन्द्रगुप्त मौर्य ने की थी। चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने गुरू विष्णु गुप्त अथवा चाणक्य की सहायता से नन्द वंश के अन्तिम शासक धनानन्द को हराकर मौर्य साम्राज्य की नींव डाली।

5.3.2. चन्द्रगुप्त मौर्य (323–298 ई.पू.) (Chandragupta Maurya) –: भारतीय इतिहास में मौर्य साम्राज्य का महत्वपूर्ण स्थान है। मौर्य राज वंश का संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य 25 वर्ष की आयु में 322 ई.पू. में नंदों से सत्ता छीनकर सिंहासन पर बैठा। इसका जन्म 345 ई.पू में हुआ था। भारतीय परंपराओं के अनुसार चाणक्य (कोटिल्य/विष्णुगुप्त)। नंद वंश के अन्तिम शासक धनानंद को हराने में इसके गुरू चाणक्य ने मदद की थी। जो बाद में चन्द्रगुप्त का प्रधानमंत्री बना और इसकी प्रसिद्ध पुस्तक अर्थशास्त्र है जिसका संबन्ध राजनीति से है।

चन्द्रगुप्त मौर्य की जाति के विषय में इतिहासकार एक मत नही है। ब्राह्मण साहित्य ने इन्हे शुद्र कुल में जन्म माना है। जैन बौद्ध ने क्षत्रिय कुल में माना है। प्रो. रोमिला थापर ने मौर्य को वैश्य जाति का माना है। चन्द्रगुप्त मौर्य की संज्ञा का प्राचीनतम अभिलेख साक्ष्य रूद्रदायन जूनागढ़ के अभिलेख से मिलता है। चन्द्रगुप्त मौर्य जैनधर्म का अनुयायी था। जस्टीन ने चन्द्रगुप्त मौर्य को सेन्ड्रोकोट्टस कहा है, जिसकी पहचान विलियम जोन्स ने चन्द्रगुप्त मौर्य से की है।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने व्यापक विजय प्राप्त कर प्रथम अखिल भारतीय साम्राज्य की स्थापना की थी, 305 ई.पू. में चन्द्रगुप्त मौर्य और सेल्यूक समें युद्ध हुआ जिसमें चन्द्रगुप्त की विजय हुई, फिर बाद में दोनों राजाओं के मध्य संधि हुई। संधि के तरूत चन्द्रगुप्त ने 500 हाथी, पूर्वी अफगानिस्तान, ब्लूचिस्थान और सिंधु के पश्चिम के क्षेत्र दे दिए। सेल्यूकस ने अपनी पुत्री हेलना का विवाह चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ कर दिया। इस वैवाहिक संबंध का विवरण एटिपथानस ने किया। मेगस्थनीन को चन्द्रगुप्त ने अपना राजदूत नियुक्त किया।

वृद्धावस्था में चन्द्रगुप्त ने राजकाज के कार्य छोडकर वे जैन मुनि–भद्रभाहु का शिष्य बन गया। जैन धर्म की मान्यता के अनुसार जैन तरीके से श्रवण बेन गीता (मैसूर) में मृत्यु का वर्णन किया। चन्द्रगुप्त मौर्य ने जिस पहाडी पर अपना अंतिम समय अर्थात जीवन जिया उसे चंद्रगिरी कहा जाता है।

5.3.3. बिन्दुसार (BINDUSARA) (**298–273** ई.पू.) बिन्दुसार चन्द्रगुप्त मौर्य का पुत्र था। वह अपने पिता के देहान्त के बाद **298** ई.पूर्व सिंहासन पर विराजमान हुआ। यूनानियों ने इसे अमित्रकेटस कहा है इसका अर्थ हुआ शत्रुओं का विनाश करने वाला। बिन्दुसार को वायुपुराण में मदसार कहा गया है और जैन ग्रन्थों में इसे सिहंसेन कहा गया है। बिन्दुसार आजविक सम्प्रदाय को मानता था। इसके दरबार में पिंगलवास नामक एक भविष्यवक्ता रहता था जिसका सम्बंध आजीवक संप्रदाय से था बिन्दुसार ने अपने पिता के विशाल साम्राज्य पर कुशलता पूर्वक शासन किया और दक्षिण भारत के कुछ हिस्सों को अपने साम्राज्य में मिला लिया। पुराणों के अनुसार बिन्दुसार ने **24** वर्ष तक तथा महावंश के अनुसार **27** वर्ष तक शासन किया। अपने प्रशासन काल में उसने विदेशी शासकों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखे। सोरिया के शासक एंटीयोकस प्रथम ने डाइमेक्स नामक व्यक्ति को बिन्दुसार के राजदरबार में राजदूत के रूप में भेजा। मिश्र के शासक फिलाडेल्फस हाल्मो द्वितीय ने डायोनिसस नामक राजदूत को बिन्दुसार के राजदरबार में भेजा। बिन्दुसार के काल में तक्षशिला में दो विद्रोह हुए जिसका मुख्य कारण स्थानीय कुशासन था। दूसरे विद्रोह के दौरान बिन्दुसार की मृत्यु **273** ई. पू. हुई।

5.3.4. अशोक (Ashoka) (**273. 232** ई.पू.) अशोक विश्व के महान सम्राटों में से एक था अर्थात अशोक मौर्य शासकों में से भी एक महान शासक था। बौद्ध परम्परा के अनुसार अशोक ने अपने **99** भाईयों की हत्या करवा दी थी इससे ज्ञात होता है कि आरंभिक जीवन में अत्यन्त क्रूर स्वभाव का था। आधुनिक इतिहासकार इसे अतिशयोक्ति मानते है। लेकिन यह तो सत्य है कि सिंहासन के लिए इसका अपने भाईयों के साथ संघर्ष हुआ और इसमें इसकी विजय हुई, पुराणों में उसका नाम अशोक वर्धन मिलता है। उसके अभिलेखों ने उसे देवनांप्रियम तथा प्रियदर्शी कहा गया है। 'मास्की' शिलालेख में उसका नाम केवल अशोक मिलता हे प्रारंभ में अशोक ब्राह्मण धर्म का पालक तथा शिव का उपासक था। अशोक की पत्नी देवी सिंहली अनुश्रुति के अनुसार अशोक की प्रथम धर्मपत्नी थी। इसी से उसे महेन्द्र और संघमित्रा पुत्र–पुत्री प्राप्त हुए थे। अशोक की एक अन्य पत्नी 'तिष्यरक्षित' थी जिसका उल्लेख बौद्ध ग्रंथ दिव्यविद्वान में मिलता है। सिंहासनारूढ़ होने के पूर्व अवन्ति (उज्जैन) तक्षशिला का प्रान्तीय शासक था।

अशोक के साम्राज्य का विस्तार पूर्व में बंगाल से लेकर पश्चिम में अफगानिस्तान तक तथा उत्तर में कश्मीर तक तथा दक्षिण में सुदूर दक्षिण तक था। अशोक के जीवन के कलिंग का युद्ध एक घटना थी जिसमें उसकी जीवनधारा बदल गई। एक क्रूर शासक मानव कल्याण के लिए मानवता के उच्च आदर्शो को प्राप्त करने के लिए भरपूर प्रयास किया और अपना पूरा जीवन प्रजा की सेवा में लगा दिया। इसके लिए उन्होने धम्म का प्रतिपादन किया। धम्म लोक कल्याण की भावना से ओत–प्रोत था जिससे आपस में परस्पर सहिष्णुता भाईचारे की भावना को सीखने पर बल दिया। ऐसा माना जाता है कि अशोक का जन्म 294 ई.पूर्व हुआ था। इसकी माता का नाम सुभद्रांगी था। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार बिन्दुसार की 16 रानियों से 101 पुत्र थे जिनमें अशोक सबसे योग्य पुत्र था इसलिये 18 वर्ष की आयु में इनके पिता ने इन्हे उज्जैन का शासक बना दिया था। अशोक ने 40 वर्ष तक राज्य करने के बाद 232 ई. पूर्व लगभग प्राण त्याग दिए। इसके उपरान्त लगभग 50 वर्ष उसके उत्तराधिकारियों ने शासन किया। पुराणों के अनुसार अशोक के बाद कुणाल गद्दी पर बैठा दिव्यावदान में उसे धर्मविवर्द्धन कहा गया। कुणाल अंधा था और वह शासन कार्य में असमर्थ था। सत्य तो यह है कि अशोक के बाद ही मौर्य साम्राज्य का पतन आरंभ हो गया था ओर लगभग 50 वर्ष के इस साम्राज्य का अंत हो गया।

5.3.5. मौर्य वंश के मुख्य स्त्रोत (Main Sources Of The Mauryan Dynasty) मौर्य वंश भारत का ऐसा प्रथम वंश था जिसके समय में भारत में क्रमानुसार इतिहास के विषय में जानकारी मिलती है। मौर्य वंश के बारे में जानकारी निम्न स्त्रोतों से मिलती है :–

1. कौटिल्य के अर्थशास्त्र से (Arthashastra Of Kautilya)
2. मगस्थनीज की इंडिका से (Indica Of Megasthenes)
3. विशाखदत्त की मुद्राराक्षस (Visakhadatta's Of Mudrarakshas)
4. पुराण से (The Puranas)
5. जैन एवं बौद्ध ग्रन्थ से (Jain And Buddhist Texts)
6. अभिलेख (Inscriptions)
7. भवन एवं स्मारक से (Buldings And Monuments)
8. पंतजलि के महाभाष्य से ।
9. राजतरंगिणी से ।
10. यूनानी एवं रोमन विवरण से।

11. चीनी यात्रियों का विवरण।

5.4. अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body Of The Text)

5.4.1. राज्य व्यवस्था एवं प्रशासन (Polity And Administration)

चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपनी विजयों से सारे भारत को एकता के सूत्र में बांध दिया। मौर्य साम्राज्य से पूर्व भारत छोटे–छोटे टुकडों में बंटा हुआ था। उसमें राजनैतिक एकता की बहुत कमी थी। अपनी शासन व्यवस्था को इस ढंग से स्थापित किया कि मौर्य वंश अन्त तक बना रहे। चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपनी बुद्धि अपनी मेहनत के बल पर बहुत से प्रदेशों पर विजय प्राप्त करके एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की। चन्द्रगुप्त मौर्य एक कुशल योद्धा सेना नायक तथा महान विजेता ही नही बल्कि एक अच्छा योग्य प्रशासक भी था। इतने विशाल साम्राज्य को संभालना आसान कार्य नही था। इसलिए मौर्यो ने अपने शासक को अलग–अगल भागों में बांटा हुआ था। जो निम्न प्रकार से है।

मौर्य प्रशासन (Mourya Administration)

↓

केन्द्रीय शासन प्रबन्धक (Central Administration)

↓

राज्य प्रबन्ध/शासन (State Administration)

↓

जिला प्रबन्ध/शासन (District Administration)

↓

नगरीय प्रशासन (Cities Administration)

↓

न्याय प्रबन्ध (Judicial Administration)

↓

गुप्तचर व्यवस्था (Spy System)

↓

सेना प्रबन्ध (Army Administration)

इनका वर्णन निम्न प्रकार से है :–

(1) केन्द्रीय शासन (Central Administration) शासन का सर्वोच्च अधिकारी राजा होता था उसकी गद्दी पैतृक होती थी। उसकी शक्तियां असीमित थी। उसका प्रत्येक शब्द काननू बन जाता था। वह बडे से बडे अपराधी के दंड को कम या अधिक कर सकता था। राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियां भी राजा ही करता था। राजा ही प्रजा पर नए कर लगा सकता था तथा पुराने करों को हटा सकता था। राजा की शक्तियां किसी तानाशाह से कम न थी किंतु मौर्य साम्राज्य के किसी भी राजा ने इसका दुरूपयोग नही किया अपितु वे अपने को प्रजा का सेवक मानते थे प्रजा के सुख में अपना सुख तथा कल्याण में अपना कल्याण समझते थे। डॉ. वी. आर. आर. दिकशीतर के अनुसार '' राजा यह महसूस करता था कि वह राज्य का नौकर है। उसे इससे बढ़कर और कोई खुशी नही होती थी कि वह प्रजा के प्रति अपने कर्तव्यों तथा जिम्मेवारियों को जिसे वह पवित्र तथा धार्मिक समझता है का पालन कर रहा है। '' '' The King felt that he was only the servant of the state. No pleasure was greater to him then to discharge the duties and responsibilities wich he outed to the people and which he regarded sacred and religious " Dr. V.R.R. Dikshitar. The mouryan polity(delhi : 1993) P. 100.

मंत्रि परिषद (The Council of Ministres) राजा की सहायता के लिए मंत्रिपरिषद की व्यवस्था की गई थी। इसमें 12 से लेकर 20 मंत्री होते थे। मौर्यो ने प्रशासन की सुविधा के लिए मंत्रिगठन कर रखा था। शासक उन्ही व्यक्तियों का मन्त्री पद के लिए चुनाव करते थे जो योग्य तथा ईमानदार होते थे। समय–समय पर ये मन्त्री बैठक करके राज्य की नीतियों को बनाने ओर लागू करने में सहायता करते थे। इन मन्त्रियों को बारह हजार पण वार्षिक वेतन दिया जाता था। मौर्य काल के निम्न मन्त्री होते थे:–

(i) प्रधानमन्त्री (Prime Minister) (ii) पुरोहित (Purohit) (iii) सेनापति (senapati) (iv) दण्डपाल (Dandpal) (v) सनीदात्ता (Sannidhata) (vi) द्वारपाल (Dwarpal) (VII) दुर्गवाल (Durgpal) (VIII) अन्तपाल (Antpal) (ix) अन्तपुर रक्षाअधिकारी (Antahpur Rakshadhikari) (x) प्रशात्र अर्थात कारागार का अधिकारी (Karagar Ka Adhikari) xi नगर का रक्षक (Nagar Ka Rakshak) (xii) समाहर्ता (Samaharta) (xiii) प्रदेष्टा (Pradeshta) xiv न्यायधीश (Judge) (xv) कोतवाल (Kotwal) (xvi) मन्त्रीमण्डलाध्यक्ष

(Mantrimandladhyksha) (xvii) कारखानों का अधिकारी–कार्मान्तरिक (Karmantrik) (xviii) अन्नपाल (annpal)

2. राज्य प्रबन्ध (State Administration) मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त ने शासन की सुविधा के लिए साम्राज्य को चार प्रान्तों में विभक्त कर रखा था। मध्य प्रदेश या प्राची का शासन सीधा केन्द्र के अधीन था। दूसरे प्रान्तों को युवराज तथा राजकुमारों की देख–रेख में चलाया जाता था। प्रान्तों के शासक सम्राट की आज्ञानुसार कार्य करते थे। प्रान्तीय शासकों की सहायता के लिए अनेक पदाधिकारी नियुक्त किये थे। कोटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार प्रान्त के राज्यपालों को वेतन के रूप बारह हजार पण वार्षिक मिलते थे।

3 जिला प्रबन्ध (District Administration) मौर्य साम्राज्य के प्रान्त कई जिलों में विभक्त थे। उस समय जिलों को जनपद कहा जाता था। जनपद के प्रधान अधिकारी को प्रदेष्टा कहा जाता था। मेगस्थनीज ने जिला अधिकारियों के लिए 'एग्रोनोमोई' शब्द का प्रयोग किया है। जनपदों का शासन विशेष पद्धति से होता था। जिसमें स्थानीय, द्रोणमुख, खाकटिक ओर सग्रहण चार कोटियां थी। स्थानीय के अधिन आठ सौ गांव आते थे। द्रोणमुख के अधीन चार सौ गांव आते थे खाखटिक के अर्न्तगत दो सौ गांव शामिल थे ओर संग्रहण के अधीन केवल सौ गांव थे। इन संस्थानों के प्रमुख युक्त की सहायता से प्रशासनिक कार्य करते थे। संग्रहण का प्रधान अधिकारी गोप कहलाता था। गोप के ऊपर स्थानित तथा स्थानित के ऊपर नगराध्यक्षक का पद होता था। जिला स्तर पर समयक् व्यस्था के लिए अनेक समितियां कार्यरत थी।

4 नगरीय प्रशासन (Cities Administration) मौर्य शासन में पाटलिपुत्र, तक्षशिला कोशांबी और उज्जैन आदि नगरों के लिए विशेष व्यवस्था थी। नगर का मुखिया नगर अध्यक्ष कहलाता था। उसकी सहायता के लिए तीस सदस्यों की एक समिति थी। इसमें 6 विभाग थे ओर हर विभाग में 5 व्यक्ति थे। ऐसी सुदृढ शासन पद्धति को देखकर विदेशी भी अंचभित थे।

5 स्थानीय प्रंबध (Local Administration) शासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम शासन थी। इसके मुखिया को ग्रामिक अथवा ग्रामिणी कहते थे। हर गांव में एक सरकारी कर्मचारी था जो भोजक कहलाता था। 5–10 गांवों की व्यवस्था गोप नामक अधिकारी के पास थी। गोप से ऊपर स्थानिक होता था जो जनपद में चौथाई भाग की व्यवस्था करता था।

6 न्याय प्रबन्ध (Judicial Administration) न्यायालयों के चार स्तर होते थे। (1) जनपद संधि – इस न्यायालय में 200 गांवों का आपसी झगड़ों का निपटारा होता था। (2) द्रोणमुख – यह

न्यायालय 400 गांव के ऊपर होता था (3) सजुक – जनपद के न्यायालय का न्यायाधीश होता था। (4) व्यावहारिक महागात्र –यह नगर का न्यायाधीश होता था। (5) न्यायालय – मौर्य साम्राज्य में दो प्रकार के न्यायालय हाते थे (क) धर्मस्थलीय न्यायालय – इसमें दीवानी के मामलों का निपटारा होता था। (ख) कष्टक शोधन न्यायालय – इस न्यायालय में फौजदारी सम्बन्धी मामालों का न्याय निर्णय होता था।

7 गुप्तचर व्यवस्था (SPY System) – मौर्य साम्राज्य की गुप्तचर व्यवस्था अत्यंत सुन्दर थी। कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार – गुप्तचारों की दो श्रेणी थी (क) संस्थान (ख) संचारण।

(क) संस्थान – इस श्रेणी के गुप्तचर कापटीक, गृहपर्तिक, तापस, वैदेहक आदि नामों से जाने जाते थे। ये एक ही निश्चित स्थान पर रहते थे।

(ख) संचारण – इस कोर्ट के गुप्तचर ज्योतिष, साधु आदि के भेष में घूम–घूम कर सम्राट तक सूचनाएं पहुंचाते थे।

8 सेना प्रबन्ध (Army Administration) सेना प्रबन्ध में 6 भाग थे। प्रत्येक विभाग का प्रबन्ध पांच–पांच सदस्यों के हाथ में रहता था। सेना के निम्नलिखित विभाग थे –

(क) नौ सेना – इस विभाग का अध्यक्ष नवाध्यक्ष कहलाता था। इस विभाग में जहाज व नौकाओं का निर्माण तथा सामुंद्रिक युद्ध करने का प्रशिक्षण दिया जाता था।

(ख) सैनिक यातायात विभाग – युद्ध के दौरान यह विभाग सैनिकों को हथियार, भोजन सामग्री तथा पशुओं के लिए भोजन का प्रबन्ध करता है।

(ग) पैदल सेना विभाग – यह पैदल सेना संबन्धी प्रबन्ध करता था।

(घ) अश्व सेना विभाग – यह विभाग घोड़ो को युद्ध प्रशिक्षण तथा अस्तबल एवं चारे का प्रबन्ध करता था। इस विभाग का अध्यक्ष अश्वाध्यक्ष कहलाता था।

(ड) हस्तसेना विभाग – इस विभाग का काम हाथियों को युद्ध प्रशिक्षण तथा उन्हें विशेष जंगलों में रखने की व्यवस्था बनाता था। इसके अध्यक्ष को हस्ताध्यक्ष कहा जाता था।

(च) रथ सेना विभाग – इस विभाग का काम रथ सेना का प्रबन्ध करना था इस विभाग का अध्यक्ष रथाध्यक्ष कहलाता था।

समिति	कार्य
(1) प्रथम समिति	जलसेना की व्यवस्था
(2) द्वितीय समिति	यातायात एंव रसद की व्यवस्था
(3) तृतीय समिति	पैदल सैनिको की देख–रेख

(4) चतुर्थ समिति अश्वारोहियों की देख–रेख

(5) पंचम समिति गजसेना की देख–रेख

(6) षष्ठ समिति रथ सेना की देख–रेख

5.4.2 मौर्यकालीन आर्थिक जीवन (Economic Life of The Mauryas) मौर्यकाल में आर्थिक स्थिति काफी अच्छी थी। कृषि के साथ–साथ अन्य व्यवसाय भी उन्नत थे मौर्यकाल में आर्थिक विकास के लिए कुछ नियम अर्थात नीतियां बना रखी थी।

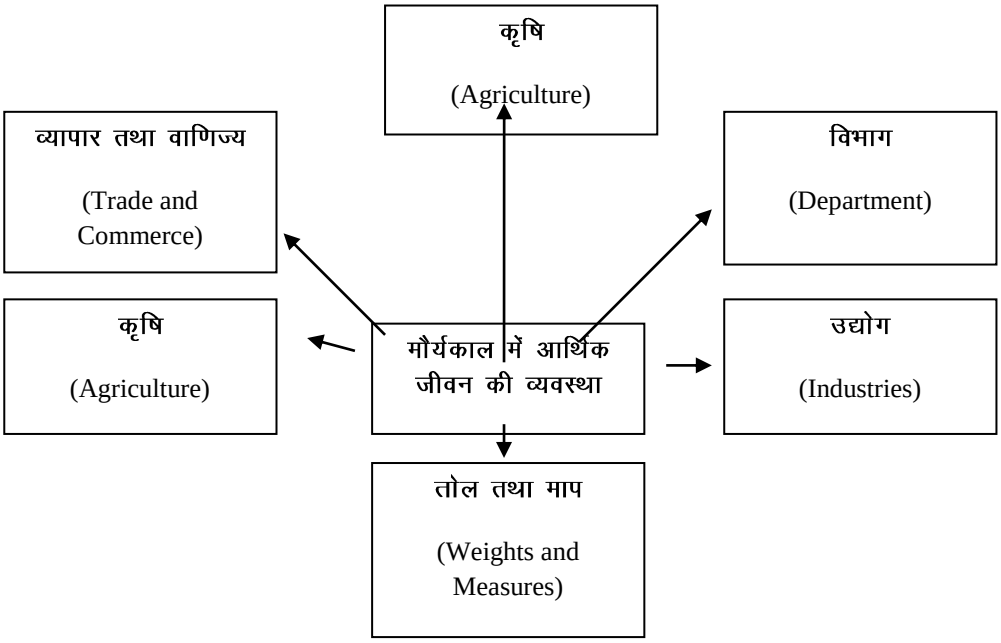

इनका वर्णन निम्न प्रकार से है –

(1) कृषि (Agriculture) भारत एक कृषि प्रधान देश था। इसलिए मौर्यकाल में आर्थिक स्थिति को मजबूत करने में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान था। वर्ष में प्रायः दो फसले होती थी। मौर्यकाल में हर प्रकार की फसल का उत्पादन होता था। गेहूं, जौ, चावल, उड़द, मूंग, गन्ना, चना, सरसों, मसूर, मटर आदि मुख्य फसलें थी ओर इसी के साथ फलों का भी उत्पादन किया जाता था जामुन, अनार, खरबूजा, आम, अंगूर, किशमिश आदिन फल का उत्पादन किया जाता थां कृषि की उन्नति के लिए राज्य ने कुछ विभाग बना रखे थे। सुखा, बाढ़, ओलावृष्टि आदि संकट के समय राज्य की ओर से उर्वरक, बीज कृषि के महत्वपूर्ण उपकरण उपलब्ध करवाए जाते थे। राज्य का आय का साधन भूमिकर था भूमि कर भूमि की उर्वराशक्ति पर निर्भर था। इसकी मात्रा 1/5 से 1/3 भाग होती थी। राज्य कर को वसूलने के लिए अधिकारी नियुक्त

कर रखे थे। राजा चन्द्रगप्त के समय सिंचाई की व्यवस्था की गई बाद में इस कार्य को ओर विकसित रूप अशोक ने दिया।

(2) व्यापार तथा वाणिज्य (Trade And Commerce) मौर्य काल में स्वदेशी और विदेशी दोनो तरह के व्यापार चलते थे अपने राज्य में सड़क मार्ग से व्यापार होते थे। विदेशी व्यापार जल मार्ग से किए जाते थे। प्राचीन भारत में कर प्रणाली की दृष्टि से मौर्यकाल अति उत्तम था। कोटिल्य ने किसानों शिल्पकारियों और व्यापारियों से वसूले जाने वाले विभिन्न करों के नाम उल्लेखित किए है। उत्तरी मैदानों में गंगा और अन्य नदियां यातायात के लिए मार्ग का निर्माण करती थी। मयूर पर्वत अर्द्ध चन्द्र की छाप वाली आहत रजत मुद्राएं मौर्य साम्राज्य की प्रसिद्ध मुद्राएं थी। ये मुद्राएं देश के विभिन्न भागों में बहुत मात्रा में प्रचलित थी। अर्थशास्त्र के अध्ययन से पता चलता है कि उत्तरी मार्ग से ऊनी वस्त्रों, घोड़ों तथा चमड का दक्षिणी मार्ग से मोती, स्वर्ण, हीरों आदि बहुमूल्य रत्नों का व्यापार होता था।

(3) विभाग (Department) मौर्य काल में आर्थिक व्यवस्था को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न विभागों के अधिकारी नियुक्त कर रखे थे –

- न्यायिक अधिकारी को रज्जुक कहा जाता था।
- जन सम्पर्क अधिकारी को पुलिसाती कहा जाता था।
- कृषि के विभाग के अध्यक्ष को सीताध्यक्ष कहा जाता था।
- मुद्रा विभाग के अध्यक्ष को अकाराध्यक्ष कहा जाता था।
- व्यापारिक कर लेने वाले को शुल्काध्यक्ष कहा जाता था।
- व्यापारिक मार्गो के अध्यक्ष को संस्थाध्यक्ष कहा जाता था
- कोटिल्य के अर्थशास्त्र में कृषि कार्यो में दास को रखने की व्यवस्था थी।

(4) उद्योग (Industries) मौर्य काल में बडे व लघु उद्योग दोनो प्रकार के थे। ऊनी वस्त्र उद्योग, कपड़ा उद्योग, बढई उद्योग, सुरा निमार्ण धातु उद्योग आदि। अर्थशास्त्र मं पांच प्रकार की सुरा का उल्लेख मिलता है। सबसे प्रमुख उन्नत व्यवसाय रेश्मी और सूती का था। सूती वस्त्र का व्यवसाय काशी, वत्स ओर मथुरा आदि प्रसिद्ध थे। ऊनी वस्त्र के लिए ओर बंगाल मलमल के लिए प्रसिद्ध था इसके अलावा धातु व्यवसाय था जिसमें लोहा, सोना, तांबा, चांदी,

जस्ता, बर्तन आदि के अलावा जहां उद्योग आदि उद्योग विकसित हो गए थे। व्यापारी के लिए व्यवसायिक संघ बने हुए थे। व्यापारियों को राजकीय संरक्षण प्राप्त था।

(5) तोल तथा माप (Weights and Measores) माप–तोल के लिए मौर्य लोगों ने इकाई बना रखी थी। जिस वस्तुओं को सही से मापा जा सके आर वस्तुओं के क्रय–विक्रय में किसी प्रकार की कोई हानि न हो।

(6) मुद्रा विनियम मौर्य काल में सोना, चांदी, तांबा से निर्मित सिक्के शुरू हो चुके थे। मुद्राओं को लक्षणाध्यक्ष मुद्रा तथा राजकीय टकसान का अधिकारी जारी करता था। मौर्यकाल में दो प्रकार की मुद्राए चलती थी (प्रचलन में थी) राजकीय मुद्रा एवं व्यवसायिक मुद्रा। अर्थशास्त्र में व्यापक रूप से मुद्रा प्रणाली की चर्चा की गई। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मौर्यकालीन मुद्राओं के नाम निम्न है –

(क) कर्षापण या पण – यह चांदी का सिक्का था।

(ख) सुवर्ण – यह सोने का सिक्का था।

(ग) भाषक – यह तांबे का सिक्का था।

(घ) मापक तथा काकणी

इन मुद्राओं का उल्लेख मिलता है। कुछ सुनार स्वतंत्र रूप से सिक्के ढ़ालते थे। जिसके लिए उन्हे राज्य को 13.5 प्रतिशत शुल्क के रूप में देना पड़ता था। चांदी व तांबे के सिक्के मौर्यो की शाही मुद्रा थो। इसके अतिरिक्त सांचे में ढले तांबे के सिक्के और डाई–स्ट्रक सिक्के भी जारी किए गए थे। चार तांबे व चार चांदी के सिक्कों का उल्लेख मिलता है।

चांदी के सिक्के – (1) पण (2) अर्द्धपण (3) पाद (4) अष्टभाग।

तांबे के सिक्के – (1) माषक (2) अर्द्धमाषक (3) काकणी (4) अद्धकाकाणी।

इस प्रकार से मौर्य काल में लोगों का आर्थिक जीवन समृद्ध था। राज्य के आय स्त्रोतों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण स्थापित किया जा सके ताकि राज्य सुदृढ़ व शक्तिशाली बन सकें। संकट के समय या प्राकृतिक आपदा के समय कृषकों की सहायता करना, उद्योगों व व्यापारिक केन्द्रो पर अधिकारियों की नियुक्ति कर रखी थी, खनिज पदार्थो व शराब के कारखानों पर राज्य का सीधे नियंत्रण था। राज्य की अपनी स्वंय की भूमि थी। जिस भूमि को सीता भूमि कहते थे इस पर मजदूरों को मजदूरी देकर स्वंय खेती करवा ली जाती थी। इस प्रकार राज्य के आमदनी के कई स्त्रोत थे। जिससे मौर्य राज्य की काफी उन्नति हुई।

5.4.3. सामाजिक एंव धार्मिक स्थिति (Social and Religious Situation)

(1) मगस्थनीज मौर्य समाज में सात जातियों के बारे में चर्चा की है जिसमें प्रथम जाति दार्शनिकों की अन्तिम मन्त्रियों की। (i) दार्शनिक (ii) शिल्पी (iii) शिकारी/अहिर/चरवाहा (iv) सैनिक (v) गुप्तचर (vi) कृषक (vii) पार्षद या मंत्री

(2) मौर्य सम्राटों की धार्मिक नीति एवं दृष्टिकोण बहुत अच्छा था जिसके कारण समाज के सभी धर्मो का विकास हुआ।

(3) मेगस्थनीज के अनुसार अन्तर जाति विवाह और पेश (काम–धंधा) दोनों की पाबंदी थी इसके अपवाद केवल दार्शनिक ही थे।

(4) मौर्यकालीन अशोक के समय में बौद्ध एवं जैन धर्म का राजकीय संरक्षण प्राप्त होने के कारण इसका तेजी से विकास हुआ। लेकिन चन्द्रगुप्त मौर्य ओर बिंदुसार के शासन काल में ब्राह्मण धर्म को ही संरक्षण प्राप्त था। जिसमें यज्ञ, कर्मकाण्डों, पूजा आदि का महत्व था।

(5) स्त्रियों की स्थिति काफी दयनीय थी विधवा पुनर्विवाह, नियोग आदि की अनुमति नही थी। पत्नी व पति दोनों को तलाक देने की अनुमति थी।

(6) समाज में गणिकाएं एवं रूपाजीवा महिलाए भी थी। गणिकाएं वे महिलाएं थी जो राज्य में शासनीय कार्यो के लिए नियुक्त की जाती थी। रूपाजीवा – ये वे स्त्रियां थी जो वेश्यावृति का कार्य करती थी। ये राज्य को कर देती थी।

(7) वेश्याओं के संगठन के अध्यक्ष को बन्धिकपोषक कहा जाता था ओर शराब परोसने वाली को पेशलरूपा कहा जाता था। वेश्याओं को नगर के दक्षिण की ओर रहने के लिए कौटिल्य ने कहा।

(8) मौर्यकाल समाज में दास प्रथा एंव सती प्रथा दोनों विद्यमान थी। रोमिला थापर एवं रामशरण शर्मा ने मौर्यकालीन दासता को रोमन दासता कहा है जो कि अनुचित है लेकिन मौर्यकालीन समाज में दासता तो थी लेकिन समाज दास समाज नही था। कौटिल्य ने समाज में सती प्रथा का उल्लेख नही किया है।

(9) मौर्य समाज में देवी–देवताओं की मूर्तियों का निर्माण करने वालों शिल्पियों को देवताकारू कहा जाता था।

(10) मौर्यकालीन आंरभिक चरण में अन्धविश्वासों में विश्वास करते थे लेकिन अशोक के काल में ब्राह्मण धर्म का अस्तित्व समाप्त हो गया था और बौद्ध धर्म उन्नति कर रहा था। लोग उसकी तरफ आकर्षित हो रहे थे।

(11) मौर्य काल में जैन धर्म भी अस्तित्व में था। चन्द्रगुप्त मौर्य ने भी अन्तिम समय में जैन धर्म को अपना लिया था और अशोक का पौत्र भी जैन धर्म का अनुयायी था।

5.4.4. अशोका के धम्म की प्रकृति एंव सिद्धांत (Ashoka's Dhamma of Nature and Principles) अशोक विश्व के महान सम्राटों में से एक था। अशोक का विधिवत राज्यभिषेक 269 ई.पूर्व में हुआ था। बल्कि अशोक 273 ई. पूर्व ही मगध के सिंहासन पर आसीन हो चुका था। कल्रूण की राजतरंगिणी के अनुसार अशोक शिव का उपासक था और वह लगभग 60 हजार ब्राह्मणों को प्रतिदिन भोजन खिलाता था पुराणों में अशोक नाम वर्धन मिलता है। अशोक ने अपनी प्रजा के नैतिक विकास के लिए जिन आचारों की संहिता के पालन की बात कही उसे ही अभिलेखों में 'धम्म' कहा गया। अशोक के दूसरे एवं सातवें स्तम्भ में धम्म के लेखों का वर्णन मिलता है। धम्म प्राकृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है – धर्म । अशोक के धम्म की परिभाषा 'राहुलोबादसुत्त' से ली गई है। 'अपासिनवे बहुकथाने दया दाने सचे सोच ये मादवे साधवे च'

(1) अशोक के धम्म की प्रकृति एवं सिद्धांत (Nature and Principles of Ashoka's) धम्म की शुरूआत करने का प्रमुख उद्देश्य अपने साम्राज्य में विभिन्न धर्मो एवं जातियों के लोगों के बीच आपसी एकता और भाई–चारे को स्थापित करना था। इस कार्य के लिए अशोक ने अपने धम्म में सभी धर्मो की अच्छी बातों को शामिल किया ओर उन्हे अपने साम्राज्य में लागू किया। इसलिए अशोक के धम्म को सभी धर्मो का सार कहा गया है।

(1) बडो का सम्मान एवं अपने से छोटों को प्यार (Respect for the Elders and Love with Youngers) हमें अपनों से बडों का सदैव आदर करना चाहिए तथा अपने से छोटों से हमेशा प्यार करना चाहिए। हमें अपने माता–पिता, गुरूजनों, उच्च अधिकारियों का हमेशा आदर करना चाहिए। इसके अलावा हमें साधुओं, ऋषि–मुनियों, मित्रों आदि का भी आदर करना चाहिए। बड़ो को भी अपने से निम्न अधिकारियों, सेवकों, गरीबों, शिष्यों, बच्चों को प्रेम करना चाहिए एवं सहानुभूति होनी चाहिए।

(2) सत्य कर्म (Truth Karma) मनुष्य को सदैव सत्कर्मो म विश्वास रखना चाहिए उसे अवश्य ही अपने कर्मो का फल मिलता है। अशोक का यह विश्वास है कि कर्म सिद्धान्त में दृढ़ विश्वास होना चाहिए। मनुष्य को उसके कर्मो का फल मिलता है ओर अच्छे कर्म करके मानव स्वर्ग की

प्राप्ति कर सकता है। समाज के दूसरे लोगों को सत्य कर्मो से काय करने की प्रेरणा दे सकता है। एक जन्म में किए गए कार्य का अगले जन्म में भुगतान करना पड़ता है।

(3) दान व्यवस्था (Charity System) अशोक गरीबों को दान देते थे व साधु संतों को भी खूब दान देते थे। वह शिक्षा को सर्वोत्तम दान समझता था। इसलिए अशोक ने अपने शासन काल में काफी स्कूल खुलवाए और लोगों के लिए शिक्षा की व्यवस्था की। लोगों को दान का महत्व बताया की जीवन दान देने से उसका जीवन सफल होता है।

(4) अच्छा जीवन (God Life) अशोक ने अपने धम्म के माध्यम से जनता को सादा एवं उच्च विचारों वाला जीवन व्यतीत करने की प्ररेणा दी। मनुष्य को अपने जीवन में सदैव दुष्कर्मो से बचकर रहना चाहिए। क्रोध, अहंकार, घृणा, ईर्ष्या, झूठ, बेईमानी इन सभी बुराइयों से हमेशा अपने आप को दूर रखना एवं अच्छा जीवन व्यतीत करना चाहिए।

(5) अहिंसा (Ahinsa) अशोक ने अपने धम्म के सिद्धान्त में इस बात पर बल दिया कि हमें कभी भी किसी जीव को कष्ट नही देना चाहिए। इसी को आधार मानकर अशोक ने भी शिकार करना व मांस खाना त्याग दिया। उसने वर्ष में 365 दिन में से 56 दिन किसी भी पशु का वध नही करना और उन्होनें पुशओं की सेवा के लिए पुश अस्पतालों की व्यवस्था की।

(6) सच्चाई (Truth) अशोक ने लोगों को सदैव सत्य बोलने के लिए प्रेरित किया और कहा कि सत्य ही जीवन का सबसे बडा आधार ओर धन है। सच्चाई के बिना धर्म एक बाह्य आडम्बर एवं दिखावा है। हमें अपने जीवन को सत्य की कसौटी पर ही कसना चाहिए।

(7) धार्मिक सहिष्णुता (Religious Tolerance) अशोक ने अपने धम्म को मूल सूत्र में निम्न को सम्मिलित किया – (i) संयम (ii) भाव शुद्धि (विचारों की पवित्रता) (iii) कृतज्ञता (iv) दृढ़ भक्ति (v) दया (vi) शौच (पवित्रता) (vii) सत्य (viii) सुश्रुता सेवा (ix) दान (x) सम्प्रतिपत्ति (सहायता करना) (xi) अपिचिति (आदर)

(8) रीति–रिवाज (Ceremonies) अशोक ने अपने धम्म के माध्यम से लोगों को संदेश दिया कि बाह्य आडम्बर, रूढ़ि, परम्परा, अंधविश्वास के अनुसार जन्म, विवाह, उपवास, तीर्थ स्थलों की यात्रा आदि से जुडी हुई प्रचलित कुरीतियां एवं रिवाज गलत अवधारणाएं आदि से दूर रहना चाहिए व अच्छे रीति–रिवाजों का पालन करना जैसे बडों का आदर, मित्रों का सम्मान, छोटों से प्रेम, दान, दया आदि परम्पराओं का अनुशरण करते हुए व्यक्ति महान बन सकता है।

4.5. अशोक के धम्म का प्रसार (Propagation of Ashoka's Dhamma) **-:** अशोक ने अपने धम्म का प्रचारकों को भेजकर पूरे विश्व में शान्ति का संदेश दिया इसके माध्यम से जन–जन मानवीय कल्याण की भावनाओं का प्रचार–प्रसार किया। शांति एवं अहिंसा का पाठ पूरे विश्व को पढ़ाया। अशोक के धम्म का उल्लेख भाब्रू (वैराट) लघु शिलालेख में मिलता है। इसी शिलालेख में अशोक ने त्रिसंघ में विश्वास व्यक्त किया है। ये त्रिसंघ या त्रिरत्न है – बुद्ध, धम्म एवं संघ। इसी के साथ बौद्ध भिक्षुओं को बौद्ध धर्म की पुस्तकें पढ़ने का निर्देश भी मिलता है।

(1) बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए :– अशोक ने सिर्फ उपदेश ही नही दिए बल्कि उन्हे व्यक्तिगत जीवन में उतारकर त्यागों के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत किया। उसने भोग विलासिता के जीवन को त्यागकर सादा एवं उच्च जीवन व्यतीत किया। कलिंग के युद्ध के पश्चात् युद्ध नीति को त्याग दिया। प्रजा के कल्याण के लिए अनके कार्य किए ओर सभी धर्मो के प्रति सहनशीलता की नीति धारण की जिससे जनसाधारण बहुत प्रभावित हुए।

(2) धर्मयात्रा (Dharam Yatra) **-** प्राचीन काल में बिहार यात्रा के रूप में प्रचलित यात्रा को अशोक ने अपने आठवें शिलालेख में धर्मयात्रा का वर्णन किया। धर्मयात्रा महात्मा बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित स्थानों की महत्वपूर्ण यात्रा थी। लुम्बिनी, महात्मा बुद्ध का जन्म बोधगया' बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति, सारनाथ, बुद्ध प्रथम प्रवचन, कुशीनगर बुद्ध का निर्वाण। इन यात्राओं के कारण बौद्ध धर्म का प्रसार एवं महत्व बढ़ गया।

(3) अभिलेखों द्वारा प्रचार' (Education Through Edicts) :- अशोक ने धम्म का प्रचार करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए। अपने अभिलेखों एंव स्तंभो पर अंकित करवाया ताकि जनता इन्हे पढ़कर अपने जीवन में उतार सके। इन अभिलेखों को मुख्य मार्गो व सार्वजनिक स्थानों पर स्थापित किया ताकि इन की तरफ आकर्षित हो सके।

(4) शिक्षा (Education):- अशोक ने अपने शासन काल में अनेकों स्कूलों की स्थापना की ताकि जनसाधारण को शिक्षित किया जा सके और शिक्षा माध्यम से धम्म के प्रति हीन भावना को दूर किया जा सके, शिक्षित लोगों के माध्यम से धम्म के प्रचार–प्रसार को तेजी से बढ़ाया जा सकता था।

(5) अच्छा व्यवहार (Good Behaviour):- धम्म के माध्यम से अशोक ने लोगों को उचित व्यवहार की प्रेरणा दी। बड़ो का सम्मान करना चाहिए। उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। गुरू के प्रति श्रद्धा, साधु सन्तों का सत्कार, मित्रों से मित्रवत व्यवहार, असहाय, दीन–दुखी और

दासों के प्रति करूणा की भावना और यथाशक्ति उनकी सहायता करना। अपने छोटे व शिष्यों के साथ प्रेम पूर्वक बर्ताव अपने अर्धानस्थ कर्मचारियों, बच्चों, गरीबों, नौकरों आदि के साथ विनम्र व सहानुभूति पूर्वक व्यवहार करना।

(6) धर्म महामात्र (Dharma Mahamatar):- अशोक ने राज्यभिषेक के 13वें वर्ष धर्म की स्थापना की। धर्म के विकास एवं उत्थान के लिए अनेकों धर्म महामात्रों की नियुक्ति की ताकि धर्म के देख–रेख का कार्य सुचारू रूप से चल सके।

(7) जनता की भलाई के काय (Works of public welfare):- अशोक ने अपने शासनकाल के दौरान अनेको जनकल्याण कार्य किए। उसने अनेकों मार्गों का निर्माण करवाकर उनके किनारे छायादार वृक्ष लगवाए, धर्मशालाएं, अस्पतालों का निर्माण करवाया। पानी की व्यवस्था के लिए अनेकों तालाबों, कुओं, बावडियों का निर्माण करवाया। यात्रियों की सुविधाओं के लिए जगह–जगह सराय बनवाई ताकि सुगमता से यात्रा एवं विश्राम कर सकें।

(8) धर्मानुशासन (Religion Dicipline):- अशोक ने अपने तीसरे शिलालेख में धर्म प्रचार के लिए नियुक्त राजुकों, प्रादेशिकों तथा युक्तों को आज्ञा देते हुए कहा कि वे प्रत्येक पांचवें वर्ष राज्यों का भ्रमणकर जनता को उपदेश दें। ये राजाज्ञा अशोक ने अपने राज्यभिषेक के बारहवें वर्ष में जारी किया था। इसे उनके अभिलेखों में अनुसंधान कहा गया।

(9) मठों का निर्माण (Building of Vihars):- अशोक ने अपने शासनकाल में अनेकों बौद्ध मठों का निर्माण करवाया और इसी के साथ–साथ बौद्ध धर्म में आने वाले विद्वानों को संरक्षण दिया। जगह–जगह बौद्ध मूर्तियों व स्तूपों को स्थापित किया गया।

(10) तृतीय बौद्ध समीति (Third Buddhist Sangati):- (1) अशोक ने बौद्ध धर्म में चले आ रहे संघर्ष व आपसी मतभेदां को दूर करने के लिए 251 ई. पूर्व पाटलिपुत्र में तीसरी बौद्ध समीति का आयोजन किया गया जिसमें बौद्ध भिक्षुओं ने भाग लिया जो नौ माह तक चली जिसमें भिक्षुओं को बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए अधिप्रेरित किया।

(11) अशोक के अभिलेख (Abhilekh of Ashoka):- अशोक के इतिहास की संपूर्ण जानकारी हमें उसके अभिलेखों से प्राप्त होती है। अभी तक हमें अशोक के चालीस अभिलेख प्राप्त हुए है। इन अभिलेखों में तीन लिपियों का प्रयोग किया गया है ब्राह्मी, खरोष्ठी, ग्रीक एवं आर्मेइक। आर्मेइक एवं ग्रीक लिपि के अभिलेख अफगानिस्तान से खेरोष्ठी लिपि उत्तर–पश्चिमी

पाकिस्तान से तथा शेष साम्राज्य से ब्राह्मी लिपि के अभिलेख मिलें है। अशोक के अभिलेखो को तीन वर्गो में बांटा गया है।

(i) शिला लेख (ii) स्तंभ लेख (iii) गुहा लेख।

(i) शिलालेख

शिलालेख	खोज का वर्ष	लिपि
1 शहबाजगढ़ी	1836	खरोष्ठी
2 मानसेहरा	1889	खरोष्ठी
3 गिरनार	1822	ब्राह्मी
4 थौली	1837	ब्राह्मी
5 कालसी	1837	ब्राह्मी
6 जौगढ़	1850	ब्राह्मी
7 सोपारा	1882	ब्राह्मी
8 एर्रगुड़ी	1916 के लगभग	ब्राह्मी

(ii) स्तंभ लख – अशोक के स्तंभ लेखों को दो वर्गो में विभक्त किया गया है, बृहत स्तंभ और लघु स्तंभ। ये स्तंभ लेख टोपरा (दिल्ली), मेरठ, कौशाम्बी (इलाहबाद), रामपूर्वा (चम्पारण), लौरिया (नन्दनगढ़ चम्पारण), लौरिया अरराज(चम्पारण महरौली (दिल्ली) से प्राप्त हुए है।

(iii) गुहालेख – यह लेख बराबर नामक पहाडी गुहा में स्थित है। उसमें अशोक द्वारा अपने राज्य अभिषेक के बारहवें वर्ष में आजीवकों को बराबर की गुफा देने और अशोक की धार्मिक सहिष्णुता का वर्णन मिलता है।

5.4.6 मौर्य साम्राज्य का पतन (The Decline of Mauryan) अशोक की मृत्यु 232 ई. पूर्व के बाद मौर्य साम्राज्य का विघटन शुरू हो गया। लगभग 185 ई. पूर्व अंतिम मौर्य सम्राट वृहद्रथ को पदचयुत कर पुब्यमित्र ने शुंग वंश की नींव रखी। अशोक की मृत्यु के बाद केवल 47 वर्षों में विशाल मौर्य साम्राज्य की अमिट छाप नष्ट हो गई। मौर्य साम्राज्य के पतन के लिए अनेकों कारक उत्तरदायी है जो निम्नलिखित है :–

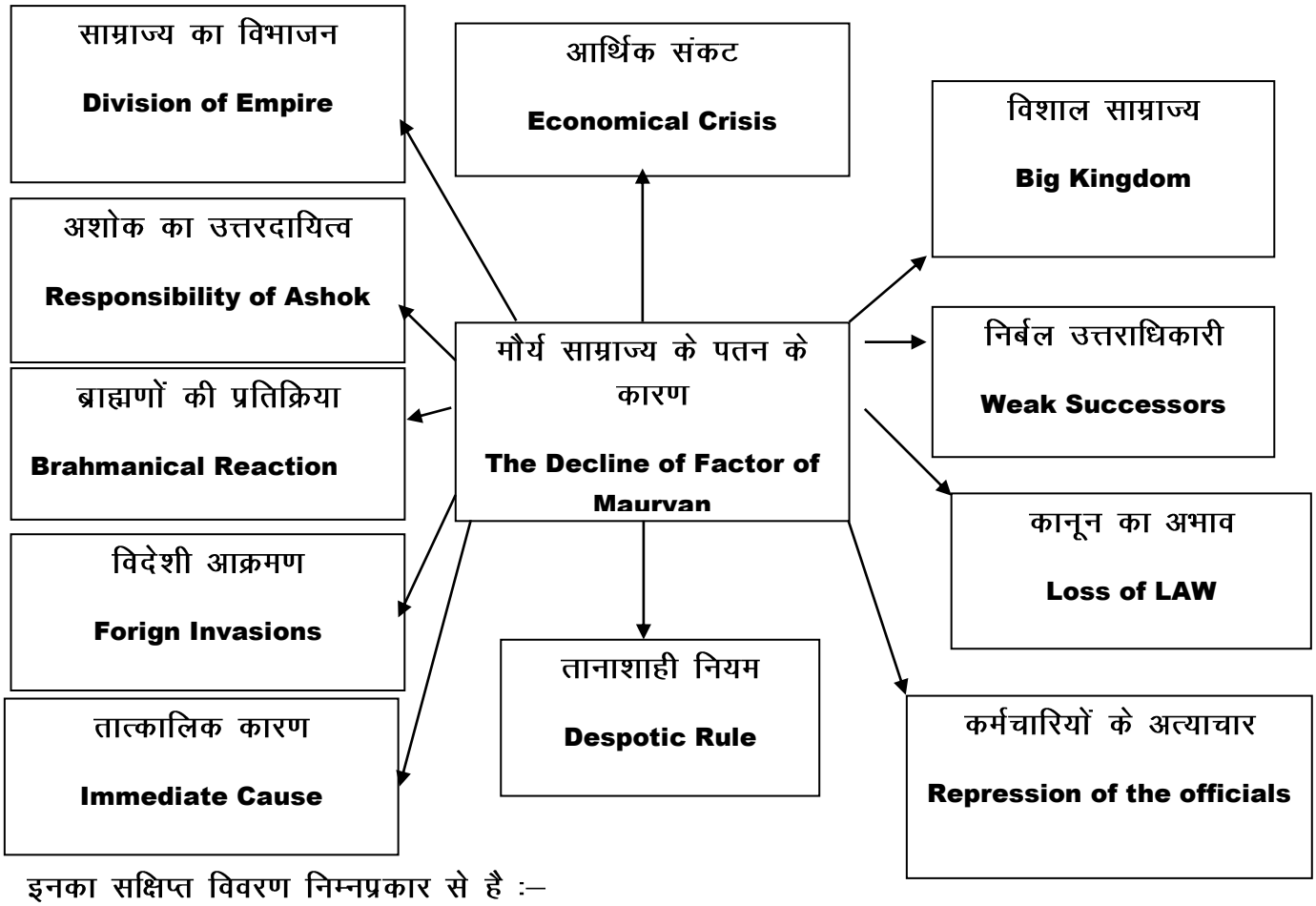

इनका सक्षिप्त विवरण निम्नप्रकार से है :–

(1) ब्राह्मणों की प्रतिक्रिया (Brahmanical Recation) :- डां. हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार अशोक के शासन काल में ब्राह्मणों की प्रतिक्रिया को झूठे देवता कहा गया था। इस अपमान का बदला लेने के लिए पुष्यमित्र शुंग ने मौर्य वंश को उखाड़ फैंका जो ब्राह्मण ही था। मौर्य साम्राज्य के शासक बृहद्रथ की हत्या कर दी और शुगवंश की स्थापना की।

(2) विशाल साम्राज्य (Big Kingdom):- मौर्य साम्राज्य काफी विशाल था इस विशाल साम्राज्य को चलाने के लिए योग्य व कुशल शासकों की आवश्यकता थी। अशोक के बाद के शासकों में इस योग्यता व क्षमता का अभाव था। मौर्य साम्राज्य का प्रसार उत्तर में हिमालय, दक्षिण में मैसूर, पूर्व में बंगाल, उत्तर–पश्चिम में हिन्दुकुश पर्वत तक इसकी सीमाएं फैली हुई थी।

(3) साम्राज्य का विभाजन (Division of Empire):- अशोक के शासनकाल तक एकता स्थापित थी लेकिन अशोक की मृत्यु के बाद जालोक ने कश्मीर की स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। बीरमेन ने गान्धार

को स्वतंत्र कर दिया। इस प्रकार मौर्य साम्राज्य एक–एक करके विभाजित होता गया जिसका परिणाम मौर्य साम्राज्य के लिए बहुत घातक रहा।

(4) आर्थिक संकट (Economical Crisis):- चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने शासनकाल के दौरान अनेकों नए पद सृजित किए और धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए धन का काफी व्यय किया। अशोक ने भी अपने शासनकाल में अनेकों जनकल्याण कार्य किए। जिससे राजकोष कंगाल हो गया। उत्तराधिकारियों को समय पर वेतन नही दिया गया। आय के स्त्रोत कम थे जिससे मौर्य साम्राज्य की आर्थिक स्थिति डामाडोल हो गई जो बाद में मौर्य साम्राज्य के पतन का कारण बनी।

(5) अशोक का उत्तरदायितव (Responsibility of Ashok):- डॉ. राय चौधरी के अनुसार अशोक की अहिंसा की नीति को मौर्य साम्राज्य के पतन के लिए उत्तरदायित्व माना गया है। अशोक के कलिंग के युद्ध के बाद सदा–सदा के लिए युद्ध नीति को त्याग दिया। अशोक की इस नीति के कारण सैनिकों के मनोबल में गिरावट आई मौर्य सेना निष्क्रिय हो गई। प्रान्तीय प्रशासक काफी स्वेच्छाचारी होकर जनता पर अत्याचार करने लगे। सेना की संख्या में कमी कर दी गई। अशोक ने धार्मिक तथा मानवतावादी कार्यो पर अधिक धन खर्च करना शुरू कर दिया जिले मोर्चो की आर्थिक दुर्बलता का दोषी माना गया है चारों तरफ अराजकता फैलनें लगी। ऐसे समय पतन स्वाभाविक था।

(6) निर्बल उत्तराधिकारी (Weak Successors):- किसी भी साम्राज्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए योग्य शासकों की आवश्यकता होती है। इतने विशाल साम्राज्य को संभालना अयोग्य शासकों के सामर्थ्य में नही था। चन्द्रगुप्त मौर्य और अशोक योग्य शासकों के कारण मौर्य साम्राज्य ने उन्नति की थी। उनके बाद के शासकों में योग्यता क्षमता का अभाव था। वे विशाल साम्राज्य को संभालने में असमर्थ रहे। पुष्यमित्र शुंग ने अन्तिम मौर्य शासक की हत्या कर सत्ता छीन ली।

(7) विदेशी आक्रमण (Foreign Invasions):- भारत की उत्तर–पश्चिमी सीमा हमेशा ही असुरक्षित रही। ऐसा अवसर पाकर विदेशी शासकों ने मौर्य साम्राज्य पर आक्रमण कर दिए क्योंकि अशोक की मृत्यु के बाद केन्द्रीय शासन कमजोर हो गया था। बार–बार होने वाले विदेशी आक्रमणों ने मौर्य साम्राज्य को कमजोर बना दिया ओर धीरे–धीरे उसका अस्तित्व मिट गया।

(8) तानाशाही नियम (Despotic Rule):- तक्षशिला ने बिंदुसार के समय अशोक के समय में जनविद्राह की जानकारी मिलती है। तक्षशिला वासियों ने अशोक से कहा था कि '' हम राजा के विरोधी नही है हमारा विरोध अमात्यों से है '' इस विद्रोह को दबाने के लिए अशोक ने कुणाल को

भेजा था इससे पता चलता है कि तानाशाही शासक थे। उनके आदेशों को कानून समझा जाता था। राजा की इच्छा को मानना सबके लिए आवश्यक था। निहार रंजन ने मौर्य साम्राज्य के पतन का मुख्य कारण जनता का विद्रोह बताया है। जब अयोग्य उत्तराधिकारियों ने नेतृत्व संभाला तो मौर्य साम्राज्य का पतन हो गया।

(9) तात्कालिक कारण (Immediate Cause):- पुष्यमित्र शुंग मौर्य शासक वृहद्रथ का सेनापति था। उसकी इच्छा शासक बनने की थी। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए 185 ई. पूर्व उसने व्रह्द्रथ की हत्या कर दी और शुंग वंश की नींव डाल दी जिससे मौर्य वंश का सदा के लिए अंत हो गया।

(10) कानून का अभाव (Lose of Law):- मौर्य साम्राज्य के पतन में जो कारक उत्तरदायी थे उनमें प्रमुख कारक कानून का अभाव भी था राजा की मृत्यु के बाद उनके पुत्रों में सिंहासन प्राप्त करने के लिए द्वन्द्व शुरू हो गया जैसे अशोक ने सिंहासन प्राप्त करने के लिए अपने 99 भाईयों की हत्या कर दी थी। दूसरा उदाहरण कुणाल को उसकी सौतेली माता न सिंहासन प्राप्ति के लिए अंधा करवा दिया था जिसके कारण मौर्य साम्राज्य की शक्ति छिन्न–भिन्न हो गई ओर राजमहल षड्यन्त्रों का केन्द्र बन गया।

(11) कर्मचारियों के अत्याचार (Repression of the officials) :- कर्मचारियों के अत्याचार की मौर्य साम्राज्य के पतन में अहम भूमिका रही है जैसे बिंदुसार के शासन में तक्षशिला विद्रोह अशोक के समय जनता विद्रोह कर्मचारियों के अत्याचार का ही परिणाम था। ऐसे अत्याचारी कर्मचारियों ने जनता को विद्रोह के लिए मजबूर किया। जिससे मौर्य साम्राज्य का पतन हुआ।

5.4.7. मौर्योत्तर साम्राज्य : कुषाण और सातवाहन (200 ई. पूर्व–300 ई. पूर्व) (Post Mauryan Empires : Kushanas and Satvahans) पूर्व मौर्योत्तरकाल माना जाता है।

मौर्य साम्राज्य का पतन होने से भारत की राजनैतिक एकता बिखरने लगी। भारत के उत्तर–पश्चिमी मार्गो से अनेकों विदेशी आक्रमणकारी भारत पहुंचे और अपना राज्य स्थापित करने लगे। उत्तर–दक्षिण भारत की बडी शक्ति के रूप में कुषाणवंश का एक तेजस्वी शासक कनिष्क एक महान शासक था। भारतीय संस्कृति के इतिहास में कुषाण काल का एक महत्वपूर्ण स्थान है।

सातवाहन शासकों का इतिहास तमसाच्छादित था। इस वंश में गौतमी पुत्र सतकरणी जैसा महान शासक हुआ है इसने अन्य शासकों को बुरी तरह से पराजित किया और लगभग संपूर्ण दक्षिणी भारत

और दक्षिणी पश्चिमी भारत पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। यहां हम मौर्योत्तर काल के दो प्रमुख वंशों का अध्ययन करेगें।

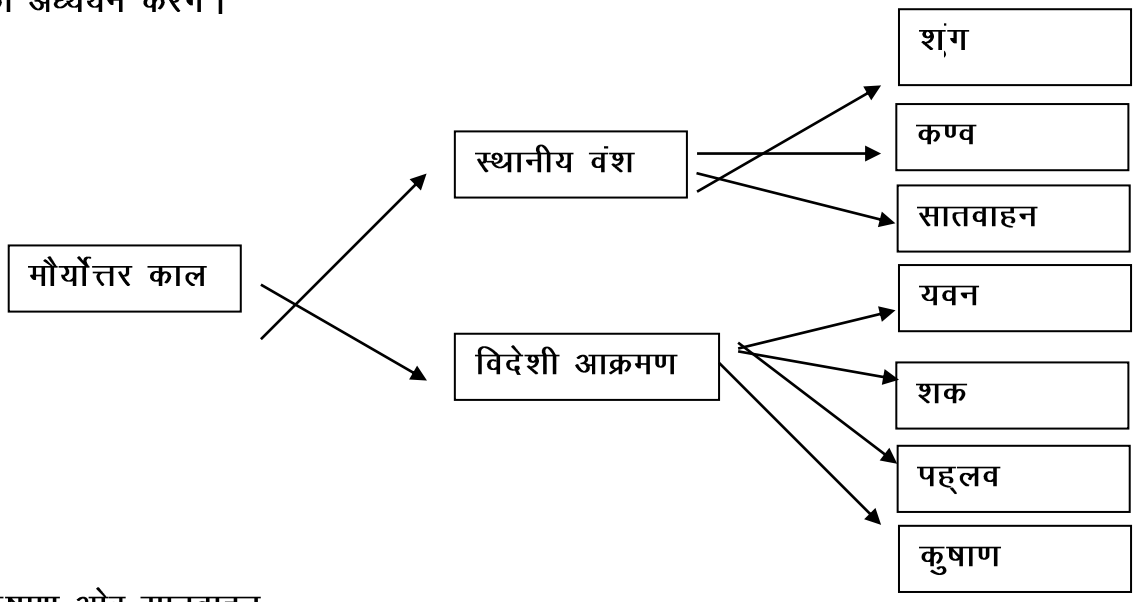

कुषाण ओर सातवाहन

5.4.7.1. कुषाण (Kushan):- कुषाण वंश मौर्योत्तरकालीन भारत का प्रथम साम्राज्य था जिसका प्रभाव सुदूर मध्य एशिया, ईरान, अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान तक फैला हुआ था। पार्थिभाईयों के बाद कुषाणों का शासन प्रभुत्व में आया, जो सूची कहलाते थे । सूची नाम का एक कबिला समूह था जो पांच कुलों मे बंटा हुआ था कुषाण उन्ही में से एक थे। इनका साम्राज्य अमुदरिया से गंगा तक मध्य एशिया के खुराशान से उत्तर प्रदेश के वाराणसी तक फैला हुआ था।

कुषाण राजवंश के विषय में उसकी जानकारी के स्त्रोतों में चीनी स्त्रोतों का स्थान प्रथम है, यूची कबीले भारत की आरे आए थे ऐसा चीनी स्त्रोतों में स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इन स्त्रोतों में History Offirst Han Dynasty नामक रचना का विशेष महत्व है। इसके अलावा नागार्जुन के माध्यमिक सूत्र अश्वघोष के बुद्धचरित तथा चीनी यात्री ह्वेनसांग से भी कुषाण तथा कनिष्क के विषय में परिचय प्राप्त होता है। कुषाण वंश के शासक निम्न थे। जिनकी सूची इस प्रकार से है :–

कुषाण वंश (**The Kushanas**)

↓

कुजुल कडफिसेस – 1

↓

पुत्र किम कडफिसेस – 2

↓

कनिष्क प्रथम (78–144 ई. पू. (**Kanishka – 1st**)

↓

हुविष्क (**Huvishka**)

↓

कनिष्क द्वितीय (**Kanishka – 2nd**)

↓

वासुदेव प्रथम (**Vasudeva**)

↓

कनिष्क तृतीय (**Kanishka – 3rd**)

↓

वासुदेव द्वितीय (**Vasudeva – 2nd)**

कुषाण वंश का अंतिम शासक

इनमें से कुछ मुख्य शासकों का वर्णन निम्न प्रकार से है :–

(1) कुजु कडफिसेस (Kuja Kadfhises):- कुजु कडफिसेस कसा एक अन्य नाम कदफिस भी था। ये कुषाण वंश का प्रथम शासक था। यूची कबीलो ने शकों से (ताहिआं क्षेत्र को जीत लिया। चीन के इतिहासकार स्यू माचियन का मानना है कि यूची कबीले में कुषाण बहुत शक्तिशाली थे इनका सरदार कुजुलफिसेस ने पांच अन्य कबायली समुदायों को अपने नेतृत्व में लेकर उत्तर पर्वतों को पार किया और काबुल पर कब्जा करके उसने वहां से यूनानी सत्ता को हटा दिया। कुजुलफिसेस ने तांबे के सिक्के

जारी करवाए थे और महाराजाधिराज की उपाधि धारण की। इसका शासन काल 15 ई. से 65 ई. के बीच माना जाता है। इसकी मृत्यु लगभग 80 वर्ष की अवस्था में हुई थी।

(2) विमकडफिसेस (VimKadphises – 2):- (65–78 ई.) कुजुल कडफिसेस की मृत्यु के बाद इसका पुत्र बिमकडफिसेस शासक बना। इसने भी अपने पिता की भांति अपने साम्राज्य का काफी विस्तार किया। चीनी ग्रन्थ ''हाऊहान्शू ' से ये अनुमान लगाया जाता है कि विमकडफिसेस ने 'तिएन'–यूं' (सिंधू नदी पार तक्षशिला के क्षेत्र) पर विजय प्राप्त किया। उसके बाद भी विजयों का क्रम जारी रखा। पंजाब बनारस और मथुरा के क्षेत्रों को अपने अधीन कर लिया यह अपने पिता को भांति एक महान योद्धा तथा कुशल शासन प्रबन्धक भी था। इसने अपने राज्य को छोटे–छोटे प्रान्तों में बांट दिया था जिन्हे स्ट्रेपीज कहते थे। शासन चलाने के लिए कुशल राज्यपाल नियुक्त कर रखे थे जिन्हे क्षत्रप कहते थे। इसने सिक्कों पर शिव, नदी, त्रिशुल, महाराज, राजाधिराज, महेश्वर, सर्व लोकेश्वर आदि उपाधियां भी धारण कर रखी थी। सिक्कों पर इन आकृतियों से ऐसा प्रतीत होता है कि विमकडफिसेस सर्वमतानुयायी था। अपने शासन काल के अन्त में इसने चीन पर आक्रमण किया लेकिन इस बार पराजय का सामना करना पड़ा। इसका शासन काल लगभग 65–78 ई. तक था। विमकडफिसेस द्वितीय के नाम से इसे जाना जाता है।

(3) कनिष्क (Kanishka 78-144 ई.):- दो कडफिसेस शासकों के बाद कुषाण शासन की बागडोर सबसे प्रसिद्ध और शक्तिशाली शासक कनिष्क ने संभाली। यह कुषाण वंश के सभी शासकों में योग्य ओर महान था। यह काल कुषाण काल का सबसे उत्कर्ष काल था। कन्ष्कि ने अपनी राजधानी पुरूषपुर में 400 फिट ऊंची 13 मंजिलों की एक मीनार बनवाई जिसके ऊपर एक लोह क्षत्र स्थापित किया और उसी के पास एक विशाल संघाराम विहार बनवाया। संघाराम कनिष्क के चैत्य के नाम से प्रसिद्ध था। इसका यवन वास्तुकार अगिलस ने किया। कनिष्क इतिहास में दो कारणों से प्रसिद्ध था। प्रथम उसने शक् संवत 78 ई. में चलाया। इस संवत का प्रयोग भारत सरकार द्वारा किया गया। द्वितीय इसने बौद्ध धर्म को अपनाया तथा उसे संरक्षण दिया। कुछ इतिहासकार इसका शासनकाल (78–144 ई.) कुछ (78–105 ई.) मानते है। कनिष्क की दूसरी राजधानी मथुरा थी। श्री धर्मपिटक निदान सूत्र के चीनी अनुवाद से ज्ञात होता है कि कनिष्क ने पाटलिपुत्र पर आक्रमण करके वहां के राजा को पराजित करके एवं उससे हर्जाने के रूप में अश्वघोष जैसे प्रसिद्ध विद्वान, बुद्ध का भिक्षापात्र तथा एक अनोखा मुकुट प्राप्त किया। कन्ष्कि

कला और संस्कृति का महान संरक्षक माना जाता है। कनिष्क की राज्य सभा में अनेकों विद्वान थे पार्श्व, वसुमित्र एवं अश्वघोष जैसे बौद्ध दार्शनिक तथा नागार्जुन प्रसिद्ध विद्वान, चरक जैसे चिकित्सक थे जिनका सहयोग कनिष्क को मिला। मध्य एशिया के कुछ प्रदेश यारकन्द, काशनगर, खोतान, ये कनिष्क के अधिकार में आ गए। इसके बाद विशाल साम्राज्य गंगा, सिन्धु एवं ऑक्सस की घाटियों तक इसका विशाल साम्राज्य फैला हुआ था। कनिष्क के शासन काल में चौथी संगीति का आयोजन किया। यह संगीति कश्मीर के कुण्डलवन में आयोजित की गई इसका अध्यक्ष वसुमित्र उपाध्यक्ष अश्वघोष थे। इस संगीती में बौद्ध धर्म को दो विभागों में विभाजित किया गया। हानियान और महायान। अश्वघोष ने दूद्धचरित सौन्दर नन्द, शारिपुत्र प्रकरण एवं सूत्रालंकार जैसे ग्रन्थ की रचना की। बुद्धचरित बौद्धधम का महाकाव्य कहलाता है। इसकी तुलना बाल्मीकि के 'रामायण' से की जाती है। कनिष्क दरबार की दूसरी विभूति नागार्जुन दार्शनिक होने के साथ–साथ वैज्ञानिक भी थे। इनकी समता मार्टिन लूथर से की जाती है इन्हे भारत का आईस्टाइन भी कहा जाता है। इन्होने अपने ग्रन्थ 'माध्यमिक सूत्र' में सापेक्षता के सिद्धान्त का निरूपण किया है। चौथी बौद्ध संगीति में वसुमित्र ने बौद्धधर्म के विश्वकोष 'महाविभाष सूत्र' को रचा। कनिष्क दरबार की विभूतियों में अन्यतम विभूति 'चरक' ने औषध विज्ञान 'चरक संहिता ' की रचना की। भारत में बसकर कुषाणों ने भारतीय संस्कृति को आत्मसात किया जो भारतीय संस्कृति यूनानी संस्कृति से प्रभावित थी। कुषाण शासकों को 'देवपुत्र' की उपाधि से विभूषित किया गया।

(4) हुविष्क (Huvishka):- कनिष्क के दो पुत्र थे – वशिष्क और हविष्क। कनिष्क की मृत्यु के बाद उसका बेटा हुविष्क 162 ई. में सिंहासन पर आसीन हुआ इसने कश्मीर में हुविष्कपुर नामक एक नगर की स्थापना की तथा मथुरा में एक बहुत सुंदर विहार का निर्माण करवाया। यह बौद्ध धर्म का अनुयायी था।

हुविष्क के शासन काल में इसके बडे भाई की मृत्यु हो गई। वह अपने पिता की भांति कहान योद्धा था। इसने अपने शासन काल के दौरान सुन्दर–सुन्दर सिक्के बनवाए। इसको भवन निर्माण कला से बहुत प्रेम था।

वासुदेव प्रथम (Vasudeva Oratham):- हुविष्क के बाद 180 ई. में वासुदेव कुषाण शासक बना। ये कुषाणवंश का अन्तिम शासक था। इसने बौद्ध धम्र का त्याग करक हिन्दू धर्म अपनाया। इसने पुरूषपुर से राजधानी को मथुरा में हस्तान्तरित किया। इसके शिलालेख मथुरा और उसके

आस–पास प्रदेशों से प्राप्त हुए। इसके सिक्को पर शिव तथा विष्णु के चित्र अंकित है क्योंकि यह शिव का उपासक था। वासुदेव के बाद वासुदेव द्वितीय और कनिष्क शासक हुए लेकिन इनके समय में कुषाण साम्राज्य अनेक टुकडो में बंट गया था। नागों, शको तथा पहलुओं ने कुषाण साम्राज्य के अलग–अलग हिस्सों को अपने–अपने अधिकार में ले लिया। चौथी सदी के शुरूआत में कुषाण साम्राज्य का पतन हो गया।

5.4.7.2 सातवाहन (Satvahanas):- मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद दक्षिण–पश्चिम भारत की मुख्य शक्ति सातवाहन थे। पुराणों में सातवाहनों को आन्ध्र कहा गया है। पुराणों के अनुसार आन्ध्रों नपे 300 वर्षो तक शासन किया। सातवाहनों के इतिहास की जानकारी हमें खुदाई से प्राप्त अभिलखों, सिक्कों और धार्मिक ग्रन्थों से प्राप्त होती है। सातवाहन शब्द वाणभट्ट रचित 'हर्षचरित' तथा सोमदेव रचित (कृत) ' कथा सरित्सागर में मिलता है। सातवाहनों के सबसे पुराने अभिलेख ई.पूर्व पहली सदी के है उन्होने कण्वों को पराजित कर मध्य भारत के कुछ भागों में अपनी सत्ता को स्थापित किया।

सातवाहन वंश

(The Satvahvnas)

↓

सिमुक (60–37 ई.पू.)

(Simuka)

↓

कृष्ण (37–27 ई.पू.)

(Krishna)

↓

शातकर्णी प्रथम (27–17 ई.पू.)

(Satkarani)

↓

शातकर्णी द्वितीय

(Satkarani)

↓

हाल (20–24 ई.पू.)

(Hala)

↓

गौतमी पुत्र शातकर्णी (106–130 ई.) **(Gotmi Putar Satakani)**

↓

वशिष्ठीपुत्र श्री पुलमावी (130–154 ई.) **(Vadhidhti Putta Shri Pulumavi)**

↓

यज्ञश्री शातकर्णी (165–194 ई.) **(Yagya Shri Satakani)**

सातवाहन वंश के मुख्य शासकों के बारे में निम्नप्रकार से वर्णन है :–

(1) सिमुक (Simuka):- सातवाहन वंश का संस्थापक सिमुक था। पुराणों के अनुसार सिमुक ने अन्तिम रूप से शुंग व कण्व सत्ता पर अधिकार किया। उसने लगभग 23 वर्षो तक शासन किया इसके अलावा सौराष्ट्र, मालवा तथा मध्यप्रदेश के बहुत से भागों पर अधिकार कर लिया था। पहले यह अच्छा शासक था लेकिन बाद में अत्याचारी बन गया इसलिए इसकी हत्या कर दी गई।

(2) कृष्ण (Krishna) (37–27 ई. पू.) – सिमुख के बाद उसका भाई कृष्ण गद्दी पर बैठा। वह बहुत वीर राजा था। पुराणों के अनुसार उसने 18 वर्षो (37–27 ई. पू.) तक शासन किया। उसने अपने साम्राज्य का खूब विस्तार किया। इसने अपने साम्राज्य में नासिक तक सातवाहन शक्ति का विस्तार किया। नासिक शिलालेख में इसका नाम मिलता है एवं इसके शासन काल में किसी उच्चअधिकारी ने नासिक में गुफा का निमार्ण करवाया।

(3) शातकर्णी प्रथम (27–17 ई. पू.) (Satakani -1):- कृष्ण के शातकर्णी 1 शासक बना जो सातवाहन सिमुख का पुत्र था। वह अपने पिता की भांति महान योद्धा व शासक था। ऐतिहासिक तथ्यों के प्रमाणिकता के आधार पर यह सुनिश्चित नही हो सका है कि सातकरणी सिमुख का पुत्र था या कृष्ण का। इसने प्रतिष्ठान को अपनी राजधानी बनाया। यह सातवाहन शासकों में प्रथम शासक था जिसने शातकर्णी की उपाधि प्राप्त की। इसने पश्चिमी मालवा, नर्मदा घाटी एवं आधुनिक बशर आदि क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया। इसने विजय के उपलक्ष्य में दो अश्वमेघ करवाए।

(4) शातकर्णी द्वितीय (Satakani – 2):- शातकर्णी द्वितीय सातवाहन वंश षष्टम का शासक था इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नही है। इसने शुंग शासकों से मालवा जीत लिया था।

(5) हाल (Hala) (20–24 ई. पू.) :– हाल इस वंश का सतरहवां शासक था। वह स्वयं एक महान कवि था। इसने प्राकृत भाषा गाथा सप्तसती नामक पुस्तक की रचना की इसमें उसकी प्रेम गाथाओं का वर्णन हैं। 'कातन्त्र' के लेखक सर्व वर्मन उसके दरबार में रहते थे। इसी के शासनकाल में गुणाढय ने वृहत्कथाकोष नामक ग्रंथ की रचना की।

(6) गौतमी पुत्र शातकर्णी (106–130 ई. पू.) (Gotmi Putra Satakani):- सातवाहन वंश का सुविख्यात एवं पराक्रमी शासक था। इसकी माता बलश्री का नासिक अभिलेख का नासिक अभिलेख प्राप्त हुआ। नासिक अभिलेखा में इसे ब्राह्मण एवं बेजोड़ ब्राह्मण माना गया है। यह सातवाहन वंशावली का 23वां शासक था। गौतमी पुत्र शातकर्णी से पूर्व शासकों ने खासकर शक शासक नहपान ने सातवाहन शासकों की शक्ति को क्षति पहुंचाई। इसका साम्राज्य उत्तर में मालवा से लेकर दक्षिण में कर्नाटक तक फैला हुआ था। उसके साम्राज्य में गुजरात, महाराष्ट्र, मालवा, कोकण, पूना और नासिक प्रदेश शामिल थे। उसकी शासन व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य प्रजा के लिए कल्याणकारी कार्य करना। उसने बौद्ध संघ को अजकालीकम तथा कार्ले के भिक्षु संघ को करजक ग्राम दान में दिए। इसने सातवाहन वंश के यश व कीर्तिमान को बढ़ाया। उसकी ये उपलब्धियां नासिक अभिलेख में मिलती है। गौतमी पुत्र शातकर्णी ने वेणकटक स्वामी की उपाधि धारण की तथा वेणकटक नगर की स्थापना की जो नासिक जिला में है।

(7) वशिष्ठीपुत्र पुलमावी (130–154 ई.) (Vashishtiputtar sri Pulumavi):- सातवाहन वंश का एक अन्य शक्तिशाली शासक जिसने 130 ई.–154 ई. तक शासन किया पुराणों ने इसका नाम पुलोभा शातकर्णी टाल्मी के अनुसार सिरो पोलिमेओस के रूप में मिलता है। इसने प्रतिष्ठान को अपनी राजधानी बनाया।

(8) यज्ञ श्री शातकर्णी (165–194 ई.) :– सातवाहन वंशावली का यह 127 वां शासक था। इसके शासन की जानकारी हमें चिन्न नामक स्थान से प्राप्त अभिलेख कल्हेरी अभिलेख नासिक अभिलेख से प्राप्त होते है, उसके सिक्के आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश और गुजरात में पाए गए है। इन सिक्कों पर जहाज का चित्र है जो जल यात्रा और समुन्द्री व्यापार का प्रतीक है।

5.5. प्रगति समीक्षा (Check Your Progress) :-

Part (A) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the Blanks):-

(1) चन्द्रगुप्त मौर्य का जन्म ..... ई. पूर्व हुआ।

(2) चन्द्रगुप्त मौर्य जिस पहाडी पर अपना अन्तिम जीवन व्यतीत किया, उसे ..... कहा जाता है।

(3) चन्द्रगुप्त मौर्य के राजनीतिक गुरू .....थे।

(4) अशोक का जन्म ..... ई. पूर्व हुआ था।

(5) मेगस्थनीज ने ..... पुस्तक की रचना की।

(6) अशोक की दो पुत्रियां ..... थी और .....।

(7) हिन्दुकुश पर्वत मौर्य साम्राज्य और ..... के राज्य की बीच की सीमा थी।

(8) बिन्दुसार की मृत्यु के समय अशोक ..... का वायसराय था।

(9) सातवाहनों को ..... राजवशं भी कहा जाता है।

(10) कनिष्क ने शक संवत् की शुरूआत .....ई. में की थी।

Part (B) सत्य/असत्य कथन (True/False):-

(1) मौर्योत्तर काल में विस्तृत राज्य की स्थापना सातवाहन एवं कुषाण दो वंशो ने की थी। सत्य/असत्य

(2) कनिष्क ने जैन धर्म को संरक्षण दिया। सत्य/असत्य

(3)सातवाहन वंश का स्थापक सिमूक था। सत्य/असत्य

(4) मौर्यकाल में मौर्य साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र थी सत्य/असत्य

(5) मौर्यकाल में लगान की दर 10 प्रतिशत थी। सत्य/असत्य

(6) अशोक की पत्नी का नाम पदमावती था। सत्य/असत्य

(7) गुहालख की तिथि 250 ई. पू. से 300 ई. पू. तक मानी गई है।
सत्य/असत्य

(8) अशोक को उसके अभिलेखों तथा साहित्यों में देवानां पियदरशी कहा गया है।
सत्य/असत्य

(9) सेल्यूकस ने अपनी पुत्री हेलना का विवाह चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ किया था। सत्य/असत्य

(10) चन्द्रगुप्त मौर्य ने कुषाणवंश की नींव डाली थी। सत्य/असत्य

Part (C) उचित मिलान कीजिए (Match the Following):-

(1) सातवाहन का संस्थापक	(1) 106–130 ई.।
(2) गौतमी पुत्र सातकर्णी ने शासन किया	(2) 323–298 ई. पूर्व।
(3) चन्द्रगुप्त मौर्य का शासनकाल	(3) सिमूक।
(4) अशोक का राज्यभिषेक	(4) 187–75 ई. पू.।
(5) शुगवंश का शासन काल	(5) वासुदेव द्वितीय
(6) कुषाण वंश का अंतिम शासक	(6) 273 ई. पूर्व
(7) मौर्य वंश का अन्तिम शासक	(7) यज्ञ श्रीशातकर्णी
(8) सातवाहन का 127 वां शासक	(8) वृहद्रथ

5.6 सारांश या संक्षिप्तिका (Summary) :-

- मौर्य राजवंश की स्थापना चन्द्रगुप्त मौर्य ने की थी। ब्राह्मण परंपरा के अनुसार चन्द्रगुप्त की माता शुद्र जाति की मुरा नामक स्त्री थी। सर विलियम जोंस ने सेन्ड्रोकोटस की पहचान चन्द्रगुप्त मौर्य से की थी। चन्द्रगुप्त मौर्य ने विजय पाप्त कर प्रथम अखिल भारतीय साम्राज्य की स्थापना की। मौर्य राज्य की स्थापना में विष्णुगुप्त/चाणक्य/कोटिल्य जो जाति से ब्राह्मण था जिसका अह्म योगदान है।
- चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य का 322 ई. पूर्व में राज्याभिषेक किया। चन्द्रगुप्त मौर्य ने 305 ई. पूर्व में सीरिया के सम्राट सेल्यूकस को पराजित किया सेल्यूकस ने अपनी पुत्री का विवाह चन्द्रगुप्त मौर्य से किया था। सेल्यूकस ने मेगस्थनीज को राजदूत बनाकर चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में भेजा था।
- चन्द्रगुप्त मौर्य की शासन प्रणाली राजतन्त्रात्मक थी ओर इसको चलाने के लिए मन्त्री परिषद की नियुक्ति की थी। कोटिल्य के अर्थशास्त्र से ज्ञात होता है कि चन्द्रगुप्त ने गुप्तचर विभाग भी बना रखा था। चन्द्रगुप्त मौर्य का शासन काल (223–298 ई. पूर्व)।

- चीनी ग्रन्थ फा–पुएन चु–लिन में बिन्दुसार को बिन्दुपाल कहा है। युनानियों ने बिन्दुसार को अमित्रकेटस या अमित्रघात कहा है। बिन्दुसार आजीवक सम्प्रदाय को मानता था।
- अर्थशास्त्र में शीर्षस्थअधिकारी के रूप तीर्थ का उल्लेख मिलता है, इन्हे महामात्र भी कहा जाता था, जिनकी संख्या 18 होती थी। पुरोहित, महामंत्री एवं सेनापति को लगभग 48000 पण वार्षिक वेतन के रूप में मिलता था।
- बिन्दुसार की सभा में 500 सदस्यों वाली एक मंत्रिपरिषद थी जिसका प्रधान खल्लाटक था। राधागुप्त, बिन्दुसार का महामंत्री था। बिन्दुसार का शासन काल 298 ई.पू. से 273 ई.पू. तक था। सीरिया के शासक एंटीयोकस प्रथम ने डाईमेकस नामक व्यक्ति को बिन्दुसार के राजदरबार में राजद्त के रूप में भेजा था।
- बिन्दुसार ने मैत्रीपूर्ण पत्र–व्यवहार में सीरिया के शासक एंटियोकस से तीन वस्तुओं (1) मीठी मदिरा (2) सूखी अंजीर (3) एक दार्शनिक की मांग की थी। दार्शनिक को छोड़कर अन्य दो वस्तुओं एंडियोकस ने भेजी। बिन्दुसार की मृत्यु 273 ई. पू. के लगभग हुई थी।
- मौर्य शासन में सबसे बडी प्रशसनिक इकाई – प्रांत होती थी। जिले का प्रशासन 'स्थानिक' के हाथों में रहता था। स्थानिक के अधीन गोप होते थे, जिनके अधिकार क्षेत्र गांव होते थे 100 गांवों को मिलाकर संग्रहण बनता था ओर क्षेत्र गांव होते थे। प्रशासन की सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' थी गांव के मुखिया को 'ग्रामिक' कहा जाता था। मेगस्नीज के अनुसार नगर का प्रशासन तीस सदस्यों का एक मण्डल होता था, एक मण्डल छः समितियों में बांटा गया ओर प्रत्येक समिति में पांच सदस्य
- इण्डिका में मौर्य काल के प्रशासन, समाज और अर्थ व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है। पाटलिपुत्र, कौशम्बी, उज्जयिनी और तक्षशिला मुख्य नगर थे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र मं विस्तारपूर्वक नौकरशाही का उल्लेख किया गया है।
- अशोक मौर्य शासकों में सबसे महान था वह अपने 99 भाईयों की हत्या करके 273 ई. पूर्व सिहांसन पर बैठा था। अशोक के इतिहास की जानकारी उसके अभिलेखों से मिलती है।
- अब तक अशोक से संबन्धित 40 अभिलेख प्राप्त हुए है। इन अभिलेखों में तीन लिपियों की जानकारी मिलती है – ब्राह्मी, खरोष्ठी ग्रीक एवं आर्मेइक।
- अशोक की पत्नी विदिशा के श्रेष्ठी पुत्रो थी। सिंहली अनुश्रुति के अनुसार यह अशोक की पहली पत्नी थी। इसी से महेन्द्र और संघमित्रा का जन्म हुआ।

- अशोक के धम्म की परिभाषा 'राहुलोबादसुत्त' से ली गई एव भात्रू (वैराट) लघु शिलालेख' में श्री अशोक के धम्म का उल्लेख मिलता है। इस अभिलेख में त्रिसंघ या त्रिरत्न है – बुद्ध, धम्म एवं संघ। अशोक ने अपने राज्याभिषेक के 13 वें वर्ष धर्म की स्थापना की ओर धम्म की देख–रेख के लिए धर्म–महामात्र की नियुक्ति की।
- अशोक शिलाओं पर संदेश खुदवाने वाला पहला भारतीय शासक था। बौद्धग्रन्थ दिव्यावदान में अशोक की एक अन्य पत्नी तिष्याक्षिता का उल्लेख हे। अशोक के अभिलेखों को तीन वर्गो में बांटा गया है (1) शिलालेख (2) स्तम्भलेख (3) गुहालेख। शिलालेख –इनकी संख्या 14 है। 1750 ई. में टीकेन्थैलर ने सबसे पहले अशोक स्तम्भ का पता लगाया। लेकिन 1837 ई. में जेम्स त्रिसेप ने इन्ह पढ़ने में सफलता प्राप्त की, शिलालेख पहाडों को काटकर शिलाखण्ड़ो को समतल कर उस पर उत्कीर्ण किया जाता था।
- कौशाम्बी तथा प्रयोग के स्तम्भों में अशोक की रानी का कारू बाकि द्वारा दान दिए जाने का उल्लेख है। इसे रानी का अभिलेख कहा जाता है।

अशोक के मुख्य शिलालेख :–

क्र.सं.	शिलालेख का नाम	खोज का वर्ष	लिपि	जिला	प्रदेश
1	मानसेहरा	1889	खरोष्ठी	मनसेहरा	पाक–अफगान सीमा
2	जोगगढ़	1850	ब्राह्मी	गंजाम	ओड़िशा
3	शहबाजगढ़ी	1836	खरोष्ठी	मर्दान	अफगानिस्तान
4	छौली	1837	ब्राह्मी	पुरी	ओडिशा
5	थ्गरनार	1822	ब्राह्मी	जूनागढ़	गुजरात
6	सौपरा	1882	ब्राह्मी	ठाठो	महाराष्ट्र
7	एर्रगुडी	1916 के लगभग	ब्राह्मी	कर्नूल	आन्ध्र प्रदेश
8	कालसी	1837	ब्राह्मी	देहरादून	उत्तराखण्ड

अशोक के लघु शिलालेख (Minor Rock Edict Of Ashok):-

क्रम संख्या	शिलालेख का नाम	स्थान
1	रूपनाथ	मध्य प्रदेश के जबलपुर जिले में स्थित
2	गोविमठ	मैसूर के कोपबल नामक स्थान के समीप स्थित
3	पलकिगुण्डु	गोविमठ से चार मील की दूरी पर स्थित
4	भाब्रू	बैराट (राजस्थान के जयपुर में स्थित)
5	मास्की	हैदराबाद के रायचूर जिले में स्थित
6	ब्रह्मगिरि	मैसूर क चितलुदुर्ग में स्थित
7	सिद्धपुर	ब्रह्मगिरि के एक मील पश्चिम में स्थित
8	जिंग रामेश्वर	ब्रह्मगिरि के तीन मील उत्तर–पश्चिम में स्थित
9	एर्रगुडि	आन्ध्र के कुर्नूल जिले में स्थित
10	अहरौश	उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में स्थित
11	ससाराम	बिहार
12	राजुलमंड गिरि	आन्ध्र के कुर्नूल जिले में स्थित
13	गुर्जरा	मध्य प्रदेश के दतिया जिले में स्थित

अशोक के स्तंभलेख (Pillar Edicts of Ashok) :- स्तंभ लेखों की संख्या 7 है जो 6 अलग–अलग स्थानों से मिले है। जो इस प्रकार है :–

क्रम सं.	स्तम्भ लेख का नाम	स्थान
1	दिल्ली मेरठ	यह भी पहले मेरठ में था जो बाद में फिरोजतुगलक द्वारा दिल्ली लाया गया।

2	लौरिया अरराज	बिहार के चंपारन जिले में स्थित
3	प्रयाग	यह पहले कौशाम्बी में था, जो बाद मे अकबर द्वारा इलाहाबाद के किले में रखा गया।
4	रामपुखा	चम्पारन (बिहार)
5	लौरिया नन्दगढ़	चम्पारन (बिहार)
6	दिल्ली टोपरा	सहारनपुर (खिजाबाद) जिले में, उत्तर प्रदेश तुगलक शासक फिरोजशॉह द्वारा दिल्ली। इस पर अशोक सातो अभिलेख उत्कीर्ण है जबकि शेष स्तम्भों पर केवल छः लेख है।

दिव्यावदान में अशोक की माता का नाम सुभद्रांगी बताया गया है। अभिलेखों में अशोक की 'देवानापिय' तथा 'पियदस्सी' कहा गया है। लघु शिला में अशोक ने अपने को बुद्ध शाक्य कहा है। कन्धार शिलालेख की भाषा यूनानी एवं अरमाइकण अशोक के लगभग सभी अभिलेखों की भाषा प्राकृत है।

- राज्याभिषेक के 20 वें वर्ष अशोक लुम्बनी गया ओर वहां उसने पत्थर की एक मजबूत दीवार का निर्माण करवाया। ग्यारहवें शिलालेख में अशोक धर्मदान को साधारण दान में उत्तम बताया है। अशोक के शासनकाल मे पाटलिपुत्र में तीसरी बौद्ध संगीति का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षत 'मोगालिपुत्ततिरस' ने की। कल्हण के अनुसार अशोक कश्मीर का प्रथम मौर्यशासक था।
- पुराणों के अनुसार अशोक ने 37 वर्ष तक कुशलतापूर्वक शासन किया और उसकी मृत्यु 236 ई. पू. हुई।
- मौर्यवंश का अंतिम सम्राट वृहद्रथ था उसे उसी के सेनापति पुष्यमित्र ने 184 ई.पू. में हत्या कर मौर्यवंश का नाश कर दिया और शुंगवंश की स्थापना की।
- शुंग वंश (187–75) का संस्थापक पुष्यमित्र शुंग था जिसने विद्रोह करके मौर्यवंश के अन्तिम सम्राट वृहद्रथ की हत्या कर शुंग वंश की नींव डाली।
- पार्थिभाईयों के पश्चात कुषाणों का शासन स्थापित हुआ जो यूयी कहलाते थे। यूयी एक कबीला था जो पांच कुलो में बंटा था उनमे ही एक कुषाण थे। कुषाणों का शासन अमुदरिया से गंगा तक, मध्य एशिया के खुरासान से उत्तर प्रदेश के वाराणसी तक फैला था। कुषाणों ने पूर्व

सोवियत गणराज्य में सम्मिलित मध्य एशिया का वृहद् भाग ईरान का हिस्सा अफगानिस्तान और लगभग सम्पूर्ण उत्तर भारत भूभागों को अपने अधीन कर लिया था।

- भारत में सर्वप्रथम कुजुल कडफिसेंस (15–65 ई.) नामक कुषाण शासक ने पश्चिमोत्तर प्रदेश पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकार में कर लिया उसने तांबे के सिक्के चलवाए।
- कुजुल कडफिसेस (65–78 ई.) को मृत्यु के बाद विमकडफिसेस सिंहासन पर बैठा। चीनी ग्रंथ हाऊ–शू के अनुसार उसने लिएन–चु को जीता तथा वहां पर शासन के लिए एक सेनापति को नियुक्त किया।
- कनिष्क (78–105 ई.) ने अपनी राजधानी पुरूषपुर में 400 फीट ऊंचा 13 मंजिलों का मीनार बनवाया उसके ऊपर एक लौह छत्र रखवाया तथा समीप में संघाराम निर्मित करवाया।
- कनिष्क ने पार्श्व के परामर्श पर बौद्धो की चतुर्थ संगीति का कश्मीर के कुण्डलवन बिहार में आयोजन करवाया। जिसकी वसुमित्र ने अध्यक्षता तथा अश्वघोष ने उपाध्यक्षता की। इसी संगीति में अश्वघोष ने बौद्ध धर्म के महायान संप्रदाय को अंतिम रूप दिया।
- कनिष्क कला तथा संस्कृत साहित्य का महान संरक्षक था।
- कुषाण शासकों ने महाराजाधिराज की गौरवपूर्ण उपाधि धारण की। शको ओर कुषाणों ने इस भावना को बढ़ावा दिया तथा राजा को देवता का अवतार माना गया।
- कुषाण शासक देवपुत्र कहलाते थे और उन्होने राज शासन में क्षत्रप प्रणाली चलाई, कुषाण शासकों ने कला की शैलियों का विकास किया। मथुरा कला के प्रथम संरक्षक कुषाण थे बल्कि गांधार कला के सरंक्षक शक एवं कुषाण दोनों थे। गांधार कला यथार्थवादी थी परन्तु मथुरा कला आदर्शवादी थे।
- दक्कन और मध्य भाग में मोर्यो के उत्तराधिकरी सातवाहन हुए। पुराणों में सातवाहनों को आन्ध्र कहा गया है। सातवाहनों के सबसे पुराने अभिलेख ईसा पूर्व पहली सदी के है। सातवाहन का प्रथम शासक सिमुक था। सातवाहन शासक ब्राह्मण थे और उन्होनें ब्राह्मणवाद के विजयाभियान का नेतृत्व किया। वे कृष्ण, वासुदेव आदि के भगत थे।
- सातवाहनों का सबसे मुख्य शासक सातकर्णी था। पुराण एवं स्मृति मौर्योत्तर काल के सम्बन्ध में जानकारी के महत्वपूर्ण स्त्रोत है। मौर्योत्तर काल का समय 200 ई. पू से 300 ई. माना गया है। सातवाहन वंश के शासकों को दक्षिणाधिपति कहा जाता है।

- कुषाण शासक हविष्क ने कश्मीर में हुविष्क पूर्व नामक नगर बसाया। कुषाण शासक वासुदेव प्रथम की कुछ मुद्राओं पर शिव, नंदी व अरदोक्षो की आकृति मिलती हैं कुषाणकाल तक सोने की मुद्राएं प्रचलित थी। कुषाणकाल में हो संस्कृत के प्रथम प्रसिद्ध विद्वान अश्वघोष, पार्श्व और नागार्जुन पाए गए है। कुषाण शासक कुजुल कडफिसस प्रथम के इतिहास का प्रमुख स्त्रोत मुद्रा है। सातवाहन शासक यज्ञश्री शातकर्णी (165–194 ई.) व्यापार और जलयात्रा का प्रेमी था। इसके सिक्के आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश ओर गुजरात में पाए गये है। इन सिक्को पर जहाज का चित्र है, जो जलयात्रा ओर समुन्द्री व्यापार के प्रति उसके प्रेम का परिचायक है। प्लिनी ने लिखा है कि पूर्वी दक्कन के आन्ध्र प्रदेश के लगभग सभी गांवो के अलावा दीवार से घिरे 30 नगर थे। अत्यधिक संख्या में मिल रोमन और सातवाहन सिक्कों से बढ़ते हुए व्यापार का संकेत मिलता है।

5.7 सूचक शब्द (Key words)

शब्द (Words)	अर्थ (Meaning)
• वस्तु विनियम	वस्तु के बदले वस्तु का लेन–देन
• विधवा विवाह	विधवा हो जाने पर किसी के साथ विवाह
• नियोग विवाह	अपने देवर के साथ विवाह
• अपासिनवे	पापहीनता
• बहुकथाने	बहुकल्याण
• सच	सत्यवादिता
• सोच में	पवित्रता है
• मादवे	मृदुता है
• साधवे	सधुता है
• शिलालेख	पत्थर पर लिखे जाने वाले लेख

• गुहालेख	गुफाओं में लिखे जाने वाले लेख
• विघटन	पतन
• अमिट छाप	जो मिट ना सके
• तमसाच्छादित	अंधकार से ढ़का हुआ
• हर्जाना	नुकसान की भरपाई / क्षति–पूर्ति
• सुविख्यात	प्रसिद्ध
• पराक्रमी	शक्तिशाली / प्रतापी
• अद्वितीय	बेजोड़ / जिसकी बराबरी का कोई दूसरा न हो

5.8 स्वमूल्याकंन परीक्षा (Self Assesment Test)

Part – A दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Question) (LAQS)

प्रश्न – 1 मौर्य कालीन प्रशासन व्यवस्था पर निबंध लिखिए। (Write an essay on Administrative system mauryan) (J.U. Hisar DDE 2019)

प्रश्न – 2 अशोक के धम्म पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए।(Write a brief essay on Ashok Dhamma (Bhagelpur Uni. 2010, 2012, 2014, 2016, 2018)

प्रश्न – 3 एक शासक के रूप में अशोक का मूल्यांन करें। (Make an estimate of ashok's as a ruller.)

प्रश्न – 4 मौर्यकालीन प्रशासन के विविध आयामों का विश्लेषण करें। (Analyse the various limensions of the mauryan administration.) (Bhagalpur Univ. 2004, 2006, 2008, 2014, 2016)

प्रश्न – 5 सातवाहन वंश की व्याख्या करें। (Explain the Satavahan)

प्रश्न – 6 मौर्य साम्राज्य के पतन के कारणों की व्याख्या कीजिए। (Explain the reasons for the decline of Mauryan Empire)

प्रश्न – 7 कुषाण वंश पर एक निबंध लिखिए। (Write a brief essay on Kushans)

Part –**B** अति लघु उत्तरीय प्रश्न (Very Short Answer Type Questions)

(1) केन्द्रीय शासन (Central administration)

(2) चन्द्रगुप्त मौय (Chandragupta Mauryan)

(3) अशोक (Ashok)

(4) कुषाण (Kushans)

(5) कुषाण वंश का संस्थापक कौन था (Who Was Founder of Kushans)

(6) अशोक का पुत्र कौन था (who was son of ashoka)

(7) अशोक का धम्म क्या था (What is Ashoka Dhamma)

(8) मौर्य साम्राज्य का संस्थापक कौन था (who was the founder of Mauryan)

Part –C बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple choice Qustions) (MCQS):-

(इनके उत्तर दाहिनी तरफ कोष्ठक में दिए गए है)

(1) नंद वंश का अन्तिम शासक कौन था?

(क) महापद्म नंद (ख) धनानंद उत्तर – (ख)

(ग) शिशुनाग (घ) उदयन

(2) मगध की राजधानी पाटलिपुत्र निम्न मं से किस नदी संगम पर स्थित थी?

(क) गंगा (ख) गंडक उत्तर – (घ)

(ग) सोन (घ) उपरोक्त सभी

(3) मगध साम्राज्य के शक्तिशाली होने के क्या कारण थे?

(क) लोहे के विशाल भण्डार (ख) भौगोलिक स्थिति उत्तर – (घ)

(ग) विशाल शक्तिशाली सेना (घ) उपरोक्त सभी

(4) निम्नलिखित में से किसे मौर्य युग का स्त्रोत माना जाता है?

(क) मुद्रराक्षस (ख) अर्थशास्त्र उत्तर – (घ)

(ग) इंडिका (घ) उपरोक्त सभी

(5) मेगस्थनीज कौन था?

(क) एक ईरानी राजदूत (ख) एक यूनानी राजदूत उत्तर – (ख)

(ग) एक चीनी यात्री (घ) एक धर्म प्रचारक

(6) मेगस्थनीज किस शासक के दरबार में एक यूनानी राजदूत के तौर पर रहा था?

(क) चन्द्रगुप्त मौर्य (ख) अशोक उत्तर – (क)

(ग) समुन्द्रगुप्त (घ) हर्षवर्धन

(7)किस यूनानी शासक ने मेगस्थनीज को एक राजदूत के रूप में चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में भेजा था?

(क) सैल्यूकस निकेटर (ख) सिंकदर उत्तर – (क)

(ग) मेनाण्डर (घ) एंटीआल्कीडस

(8) इंडिका का लेखक कौन था?

(क) फाह्यान (ख) हयूनसांग उत्तर – (ग)

(ग) मेगस्थनीज (घ) कालिदास

(9) मेगस्थनीज के सम्बन्ध में निम्नलिखित में से तथ्य गलत है?

(क) वह एक यूनानी राजदूत था जो समुन्द्रगुप्त के दरबार में रहा। उत्तर – (क)

(ख) उसने इंडिका नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की।

(ग) यह पुस्तक मूल रूप से उपलब्ध नही है।

(घ) इसमे मेगस्थनीज ने आंखों देखी बातों का वर्णन किया है?

(10) मुद्राराक्षस का लेखक कौन था?

(क) विशाखदत्त (ख) देवदत्त उत्तर – (क)

(ग) अतुल (घ) भवभूति

5.9 प्रगति समीक्षा हेतू प्रश्नोत्तर (Check your Progress)

Part (A) रिक्त स्थानों उत्तर

(1) 345 ई. पूर्व. (2) चन्द्रगिरी (3) चाणक्य (4) 294 ई.पू. (5) इंडिका (6) संघमित्र और चारूमति (7) सैल्यूकस (8) उज्जैन (9) आन्ध्र (10) 78

Part (B) सत्य/असत्य कथन के उत्तर :–

(1) सत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) असत्य (6) सत्य (7) असत्य (8) सत्य (9) सत्य(10) असत्य

Part (C) उचित मिलान के उत्तर

(1) 3 (2) 1 (3) 2 (4) 6 (5) 4 (6) 5 (7) 8 (8) 7

5.10 सहायक संदर्भ ग्रंथ एवं अध्ययन सामग्री (Refeneces/Suggested Readings)

- Manjeet Singh sodhi : Themes in Indian Hostory, Modern's publishers, Railway Road, Jalandhar Edition : 2009
- डॉ. विनय कुमार सिंह : यूनिक सामान्य अध्ययन, इलाहबाद (उत्तर प्रदेश)
- स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन : सामान्य अध्ययन, अहीर नगर, (दिल्ली)
- महेश कुमार वर्णवाल : संक्षिप्त इतिहास NCRT सार, Cosmos पब्लिकशन, मूखर्जीनगर, दिल्ली, जनवरी, 2019
- डी.एन.झा. : प्राचीन भारत का इतिहास विविध आयाम, हिन्दी माध्यम कायन्वियन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पुनर्मुद्रन, अक्टूबर, 2016
- रामशरण शर्मा : भारत का प्राचीन इतिहास, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस द्वारा भारत में प्रकाशित – 2/11 भूतल, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली, चौथा हिन्दी संस्करण, 2019
- द्विजेन्द्रनारायण झा एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली : प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 43वां पुनर्मुद्रण : नवम्बर, 2018

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA
LESSON NO. 06	VETTER :
गुप्त साम्राज्य (Gupta Empire)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

6.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

6.2. परिचय (Introduction)

6.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

6.3.1. गुप्तकालीन ऐतिहासिक स्त्रोत (History Source of the Guptas)

6.3.2. गुप्तकालीन राज्य (Guptas State)

6.3.3. गुप्तकालीन प्र"ासन (Administration of the Guptas)

6.4. अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1 गुप्तकालीन समाज (Society of the Guptas)

6.4.2. गुप्तकालीन आर्थिक स्थिति (Economic condition of the Guptas)

6.4.3. गुप्तकालीन नगर केन्द्र (Urban centres of the Guptas)

6.4.4. गुप्तकालीन कला एवं स्थापत्य (वास्तुकला) (Art and Architecture of the Guptas)

6.4.5. गुप्त साम्राज्य का पतन (Decline of the Guptas empire)

6.4.6. विज्ञान एवं तकनीकी (Science and Tenchology)

6.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress)

6.6. सारांश (Summary)

6.7. संकेत–सूचक (Key-Words)

6.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT)

6.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

6.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री (References/Suggested Readings)

6.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात्, आप निम्न योग्य होगें जाएगें :–

- गुप्त साम्राज्य की व"ावली को आप जान जाएगें।
- गुप्तकालीन ऐतिहासिक स्त्रोतों पर आप अपने साथी पाठकों के साथ परिचर्चा कर सकेगें।
- गुप्तकालीन राज्य व प्र"ासन प्रणाली की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- गुप्तकालीन आर्थिक व समाजिक स्थिति से अवगत कराना।
- गुप्तकालीन नगर केन्द्रों के विकास की जानकारी देना।
- गुप्तकालीन कला व स्थापत्य प्राचीन भारत के इतिहास में वि"िष्ट स्थान रखते है से पाठक को अवगत कराना। और एक स्वतंत्र शासक के रूप में गुप्त संवत् (319–20 ई.) चलाया।
- गुप्तकालीन साहित्य, ज्ञान–विज्ञान व कला–संस्कृति के उच्च विकास के कारण इसे प्राचीन भारत का स्वर्ण युग क्लासिक युग/पैराक्लीन युग की संज्ञा से संबोधन के कारणों की समीक्षा कर सकेंगे।
- गुप्तकाल के पतन के कारणों पर प्रका"ा डाल सकेंगे।

6.2 परिचय (Introduction) :- प्राचीन भारत के इतिहास में मौर्चों के बाद कुषाण साम्राज्य के अव"ोष पर तीसरी सदी के अन्त मे जिस वि"ाल नवीन साम्राज्य का उद्य हुआ वह गुप्त साम्राज्य था। गुप्तों के उत्थान से प्राचीन कालीन इतिहास में एक नवीन युग का आरंभ हुआ। गुप्त व"ा के प्रारंभिक दो शासकों –संस्थापक श्रीगुप्त व इनके पुत्र घटोत्कच ने महाराज की उपाधि धारण की जो उस समय सांमत शासकों की होती थी। इससे पता चलता है कि गुप्त कुषाणों के सांमत थे । कुषाणकालीन साहित्य, ज्ञान–विज्ञान, कला–संस्कृति द"ान व व्यापार–वाणिज्य के विस्तार पर आधारित आर्थिक नीति व मजबूत प्र"ासनिक नीति को गुप्त व"ा के शासकों ने चरमोत्कर्ष पर पहुंचा दिया। गुप्तकाल में भारतीय राजनीति और संस्कृति चरमोत्कर्ष पर पहुंच गई

थी। इसीलिए भारतीय इतिहास में गुप्तकाल को स्वर्ण युग या क्लासिकल युग कहा जाता है। गुप्त वं"ा के प्रसिद्ध शासकों ने अपने विस्तारवादी व सुदृढ़ प्र"ासनिक नीतियों के द्वारा इसे भारत के चारों कोनों तक फैला दिया। चन्द्रगुप्त प्रथम गुप्त वं"ा के प्रथम शासक थे जिन्होनें महाराजधिराज की उपाधि धारण की। प्रसिद्ध विस्तारवादी गुप्त शासक समुन्द्रगुप्त के समय इस साम्राज्य का विस्तार – उत्तर भारत में गंगा–जमुना, दो–आव व दक्षिण भारत में कावेरी नदी क्षेत्र तक तथा पूर्व में नेपाल, असम, बंगाल व पि"चम में वल्लभी (गुजरात) तक विस्तृत हो गया। समुन्द्रगुप्त के बाद सांस्कृतिक विकास के लिए प्रसिद्ध गुप्तवं"ाीय शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने सुदृढ़ नीतियों के द्वारा शकों पर विजय प्राप्त करके इस साम्राज्य को अत्यंत मजबूत आधार प्रदान किया। भारत के प्राचीन इतिहास में विक्रमादित्य की उपाधि धारण करने वाले चन्द्रगुप्त द्वितीय का काल साहित्य, संस्कृति, कला, द"ान, खगोल विज्ञान, गणित, चिकित्सा विज्ञान आदि को ि"खर पर पहुंचाने वाले ज्ञानी, विज्ञानी, विद्वतजनों को आश्रय देने वालों के रूप में अग्रगण्य रहे है। विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने शासनकाल में उत्पन्न कई चुनौतियों का साहसपूर्ण तरीके से सामना करते हुए गुप्त साम्राज्य को जो मजबूत आधार प्रदान किया इसका पूरा फायदा उठाते हुए कुमारगुप्त ने वि"वविख्यात नालन्दा वि"वविद्यालय की स्थापना की। जिसमें दे"ा–विदे"ा से जिज्ञासु पाठक ि"क्षा प्राप्त करने के लिए आते थे। जिसका विवरण हमें चीनी यात्री फाहियान के वर्णन से मिलता है। यह वि"वविद्यालय इतना प्रसिद्ध था कि गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद भी 1193 ई. में बख्तियार खिलजी द्वारा नष्ट किये जाने तक अपने अस्तित्व को बनाये रखा। गुप्तवं"ा का अंतिम प्रतापी शासक स्कंदगुप्त ने विदे"ाी शासक हुणों के आक्रमण का सफलतापूर्वक सामना किया और इन्हे परास्त किया। स्कंदगुप्त ने नालंदा वि"वविद्यालय को पर्याप्त संरक्षण प्रदान करके गुप्त वं"ा की द"ान, ज्ञान–विज्ञान, साहित्य रचना व अन्य सांस्कृतिक विकास की परंपरा को बनाये रखा।

स्कन्दगुप्त ने चीन के साथ मित्रतापूर्ण सम्पर्क बनाए रखा तथा व्यापार व वाणिज्य को बढ़ावा देने के लिए 466 ई. में एक राजदूत को चीन के सांग सम्राट के दरबार में भेजा। स्कंदगुप्त के बाद के शासक कमजोर हुए जिन्हे प्राचीन भारत के इतिहास में परवर्ती गुप्त शासक के रूप में जानते है। परवर्ती गुप्त शासकों के कमजोर होते हुए भी पूर्ववर्ती गुप्त शासकों की मजबूती के कारण यह साम्राज्य समाप्त होते–होते भी 550 ई. तक अपने अस्तित्व को बनाये रखा। मौर्य काल में आज के बिहार राज्य में जो नगर उत्थान का केन्द्र बिन्दु था जिसमें पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) प्रसिद्ध था गुप्त साम्राज्य में नगर का यह केन्द्र अपना प्रभाव खोने लगा और गुप्तकाल के अन्तिम दिनों में तो पाटलिपुत्र नगर का अंत ही हो गया। गुप्त अभिलेखों से पता चलता है कि इस वं"ा के शासकों ने नगर केन्द्र के रूप में आज के उत्तर प्रदे"ा में कौ"ाम्बी, प्रयाग, साकेत (आधुनिक अयोध्या), कन्नौज तथा आज के मध्य प्रदे"ा में स्थित विदि"ाा व उज्जैन

को अत्यधिक विकसित किया । ये नगर केन्द्र कला, संस्कृति व व्यापार–वाणिज्य के दृष्टिकोण से गुप्त काल में ि"ाखर पर थे।

गुप्तकालीन प्र"ाासन–पद्धति के अर्न्तगत प्र"ाासनिक इकाइयों का विभाजन, अधिकारियों के विभागीय दायित्व व राजकाज चलाने के लिए राजस्व संग्रह की प्रणाली की एक सुनि"चत व्यवस्था थी। गुप्तकाल में मुद्राप्रणाली के अन्तर्गत चांदी व सोने के सिक्के प्रसिद्ध थे। प्राचीन भारत में स्वर्णमुद्रा की बहुतायत के लिए गुप्तकाल प्रसिद्ध था। नगर में अलग–अलग व्यवसाय को चलाने वाले व्यवसायियों, ि"ाल्पियों व कामगारों के सुसंगठित श्रेणियां थी। गुप्तकालीन व्यापार व कृषिमूलक अर्थव्यवस्था की जानकारी हमें चीनी बौद्ध यात्री फाहियान के विवरण से मिलता है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर आधारित गुप्तकालीन समाज वर्ण, जातियों व उपजातियों मे बंटा था। फाहियान के विवरण से पता चलता है कि गुप्त काल में ब्राह्मणों की श्रेष्ठता बनी रही। जिससे समाज में धार्मिक स्तर पर भागवत् संप्रदाय का उद्भव और विकास ि"ाखर पर था। बौद्ध धर्म का जो उत्कर्ष अ"ोक और कनिष्क के समय में था गुप्तकाल में राज्य का संरक्षण नही मिलने के कारण वह समाप्त हो गया।

ब्राह्मण धर्म की उत्कृष्टता के कारण इस काल में पुराणों स्मृतियों व 'ाड्द"ान के संकलन का महत्वपूर्ण कार्य हुआ। ये संकलन आज भी महत्वपूर्ण धरोहर के रूप में सुरक्षित हैं। इस काल में विष्णु और ि"ाव आराध्य देव के रूप में समाज में अधिक प्रसिद्ध हुए। मन्दिर निर्माण की कला का आरंभ गुप्त काल में हुआ।

कला की इन उत्कृष्टताओं के बावजूद गुप्तकालीन ऐतिहासिक साक्ष्य से पता चलता है कि एक और जहां शुद्रो को, स्त्रियों को रामायण, महाभारत, पुराण व द"ान के पठन–पठान का अधिकार था वही दूसरी और पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, नियोगप्रथा, चाण्डाल को अस्पृ"य मानने की प्रथा आदि स्त्रियों व शूद्रों के दयनीय स्थिति का सूचक था।

6.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main body of Text)

6.3.1. गुप्तकालीन ऐतिहासिक स्त्रोत (Historical sources of the Guptas) :- प्राचीन भारत के इतिहास को जानने के लिए इसके समुचित अध्ययन के लिए शुद्ध ऐतिहासिक साहित्यिक सामग्री अन्य दे"ाों की तुलना में हमारे यहां कम उपलब्ध हैं। ऐसे में अतीत का सही चित्रण प्रस्तुत करने के लिए इतिहासकार एक वैज्ञानिक की भांति उपलब्ध पुरातत्विक सामग्री को वि"ोष महत्व देते हैं। गुप्त काल के संदर्भ में भी इसका अत्यधिक महत्व है। यद्पि गुप्त काल के अध्ययन के लिए पर्याप्त साहित्यिक साधन व विदे"ाी

यात्रियों के वृतांत भी उपलब्ध हैं फिर भी रचनाकारों में दृष्टिकोण की भिन्नता व भारतीय ग्रन्थों का रचना–काल ठीक से ज्ञात नहीं होने के कारण यह सही चित्र प्रस्तुत करने में बाधक हो जाता है। पुरातत्विक सामग्री का वैज्ञानिक महत्व है। प्राचीन भारत के इतिहास को जानने में अधिक योगदान है अतः गुप्तकालीन ऐतिहासिक स्त्रोत के अध्ययन से पूर्व पाठक के लिए यह जानना आव"यक है कि पुरातत्विक स्त्रोत के अन्तर्गत किन–किन साधनों को शामिल किया जाता है।

(क) पुरातत्विक स्त्रोतों :– इन्हें हम निम्न रेखाचित्र के माध्यम से सुविधाजनक तरीके से समझ सकते है

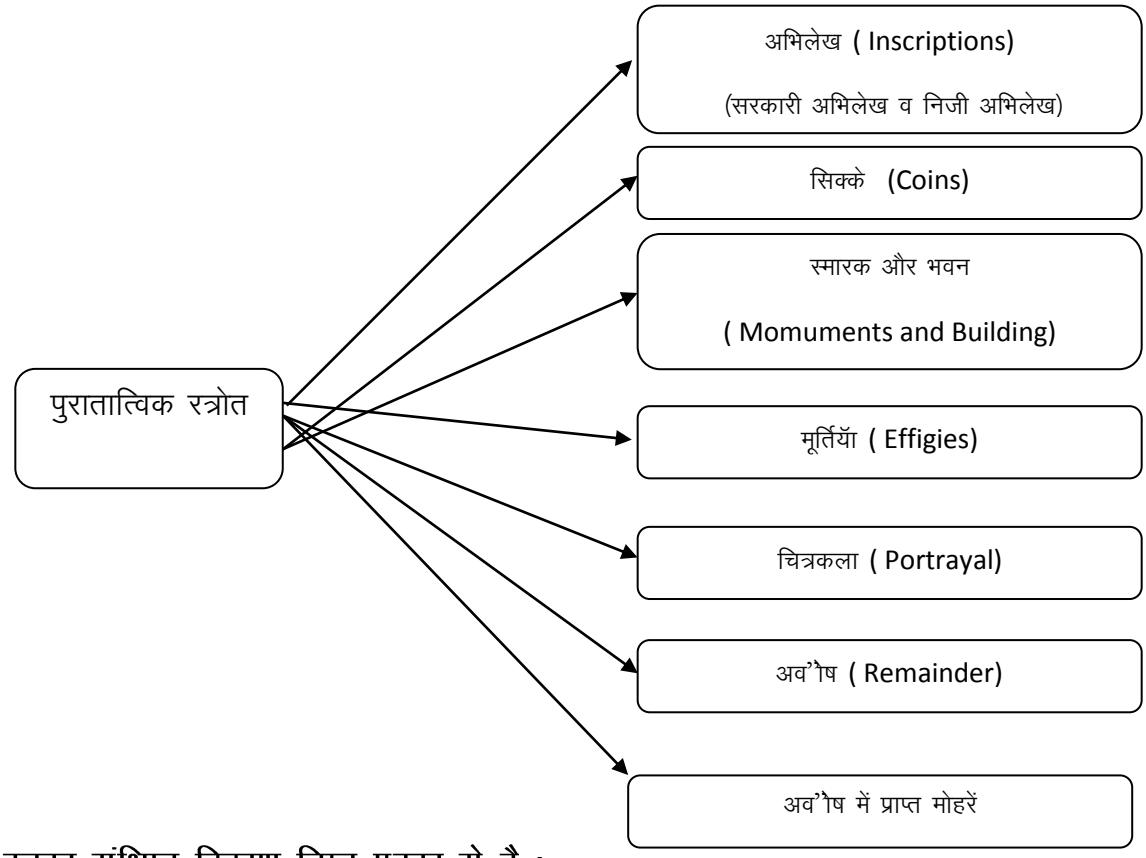

इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :–

(1) अभिलेख (Record) :- गुप्तकालीन इतिहास को जानने के लिए अनेक स्त्रोत उपलब्ध है। इनमें पुरातात्विक स्त्रोत के रूप में अभिलेख एक अति महत्वपूर्ण त्रोत है। हमें गुप्त काल के अलग–अलग शासकों के अभिलेख अत्यधिक संख्या में प्राप्त हुए है। ये अभिलेख ि"लाओं, स्तंभों एवं ताम्रपत्रों पर खुदे मिलते है। गुप्तकालीन इन अभिलेखों की भाषा संस्कृत है। इन अभिलेखों से हमें गुप्ताकालीन अतीत के विभिन्न प्र"नों–राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि की बहुमूल्य जानकारी प्राप्त होती है। उदाहरणार्थ समुन्द्रगुप्त का इलाहबाद स्तंभ अभिलेख जिसे प्रयाग प्र"ास्ति के नाम से भी जाना जाता

है से हमें समुन्द्रगुप्त को भरी सभा में चन्द्रगुप्त प्रथम द्वारा राज्य प्रदान करने तथा समुद्रगुप्त की राज्य विस्तार व राज्य को मजबूत करने की नीति का पता चलता है। इसे समुन्द्रगुप्त के राजकवि हरिषेण द्वारा लिखा गया था। यह अभिलेख समुद्रगुप्त के पिता व गुप्त साम्राज्य को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में स्थापना करने वाले चन्द्रगुप्त प्रथम के ऊपर भी प्रका"ा डालता है। चन्द्रगुप्त प्रथम ने 319–20 ई. में गुप्त संवत् चलाया इसका सर्वप्रथम प्रयोग चन्द्रगुप्त द्वितीय के मथुरा अभिलेख में हुआ है। यह चन्द्रगुप्त द्वितीय का पहला अभिलेख है। उद्यगिरी गुहा लेख चन्द्रगुप्त द्वितीय के संधिविग्रहक कवि वीरसेन शैव का है। इस अभिलेख से चन्द्रगुप्त द्वितीय के दिग्विजय करने का पता चलता है। गुप्त वं"ा के इस शासक का सबसे महत्वपूर्ण अभिलेख है – मेहरोली लौह स्तम्भ लेख (दिल्ली में)। यह अभिलेख आज भी मौजूद है। इससे चन्द्रगुप्त के विजित क्षेत्र व उत्कृष्ट तकनीकी विकास का पता चलता है। कदम्ब वं"ा– तालगुन्ड अभिलेख से यह पता चलता है कि किस प्रकार चन्द्रगुप्त द्वितीय वैवाहिक संबन्धों द्वारा अपने राज्य को मजबूत आधार प्रदान किया।

कुमारगुप्त के बिलसद, गढ़वा (उत्तर प्रदे"ा), मन्दसौर (मालवा मध्य प्रदे"ा) अभिलेखों से इसके काल के शासनकाल की जानकारी प्राप्त होती है। स्कंदगुप्त के जूनागढ़ (सौराष्ट गुजरात) एवं भीतरी स्तम्भलेख (गाजीपुर उत्तर प्रदे"ा) से हमें स्कंदगुप्त द्वारा हूणों की पराजय संबन्धी पता चलता है। गुप्तकाल के अनेक भूमिदान अभिलेख गुप्त शासकों की दानशीलता को द"ाते हैं। भानुगुप्त का एरण अभिलेख (510 ई.) प्रसिद्ध हैं । इसमें हुण आक्रमण का उल्लेख है जिनसे लड़ते हुए भानुगुप्त का सेनापति गोपराज मर गया था। गोपराज की पत्नी सती हो गयी। यह सती प्रथा का प्रथम अभिलेखीय साक्ष्य है।

(2) सिक्के (Coins) :- गुप्तकाल के इतिहास के लिए सिक्कों का बड़ा महत्व है। कयोंकि गुप्त शासकों ने बड़ी मात्रा में सिक्कें जारी किए। इन सिक्कों मे सर्वाधिक मात्रा सोने के सिक्कों की है। इसके अलावा कुछ सिक्के चांदी व तांबे के भी जारी किए। इन सिक्कों में गुप्त शासकों के नाम उपाधियां, शासनकाल, चरित्र, सफलताएं, कलां, भाषा, धार्मिक तथा आर्थिक स्थिति की प्रामाणिक जानकारी मिलती है। उदाहरणार्थ चन्द्रगुप्त प्रथम के राजा–रानी नामक सिक्कों पर उसकी तथा रानी कुमार देवी की प्रतिमा खदी हुई है। इसी सिक्के के दूसरी तरफ लिच्छवय शब्द खुदा हुआ है। इससे चन्द्रगुप्त के लिच्छवियों के साथ वैवाहिक संबन्ध की जानकारी उपलब्ध होती है। समुन्द्रगुप्त संगीत प्रेमी थे। इस बात की जानकारी उनके द्वारा जारी किए गए सिक्कों पर उत्कीर्ण वीणा के चित्रों से पता चलता है। इस प्रकार पता चलता है कि गुप्त वं"ा की आर्थक स्थिति सुदृढ़ थी।

(3) स्मारक (Monuments) :- गुप्तकाल के स्मारकों से तत्कालीन गुप्त वं"ा के कला के क्षेत्र में हुए विकास एवं गुप्तकालीन शासकों की धार्मिक नीति का ज्ञान प्राप्त होता है। ये स्मारक गुप्तकाल के विभिन्न पक्षों पर प्रका"ा डालने वाले है। गुप्तकाल में निर्मित मंदिरों में देवगढ़ का द"ावतार मंदिर, भूमरा का ि"ाव मंदिर, नचना का पार्वती मंदिर, भीतरगांव मंदिर, लिंगवा का विष्णु मंदिर आदि मंदिर उल्लेखनीय है। ये मंदिर अपनी उत्कृष्ट कला के लिए जाने जाते है। गुप्तकाल मे मथुरा एवं सारनाथ में बनी मूर्तिया गुप्त वं"ा के शासकों की धार्मिक सहिष्णुता की प्रतीक है। अंजता एलोरा एवं बाघ की गुफाओं में बने चित्र तत्कालीन जन–जीवन की झांकी प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार से पुरातात्विक स्त्रोत की अह्म भूमिका है।

(ख) साहित्यिक स्त्रोत (Literary Sources) :-

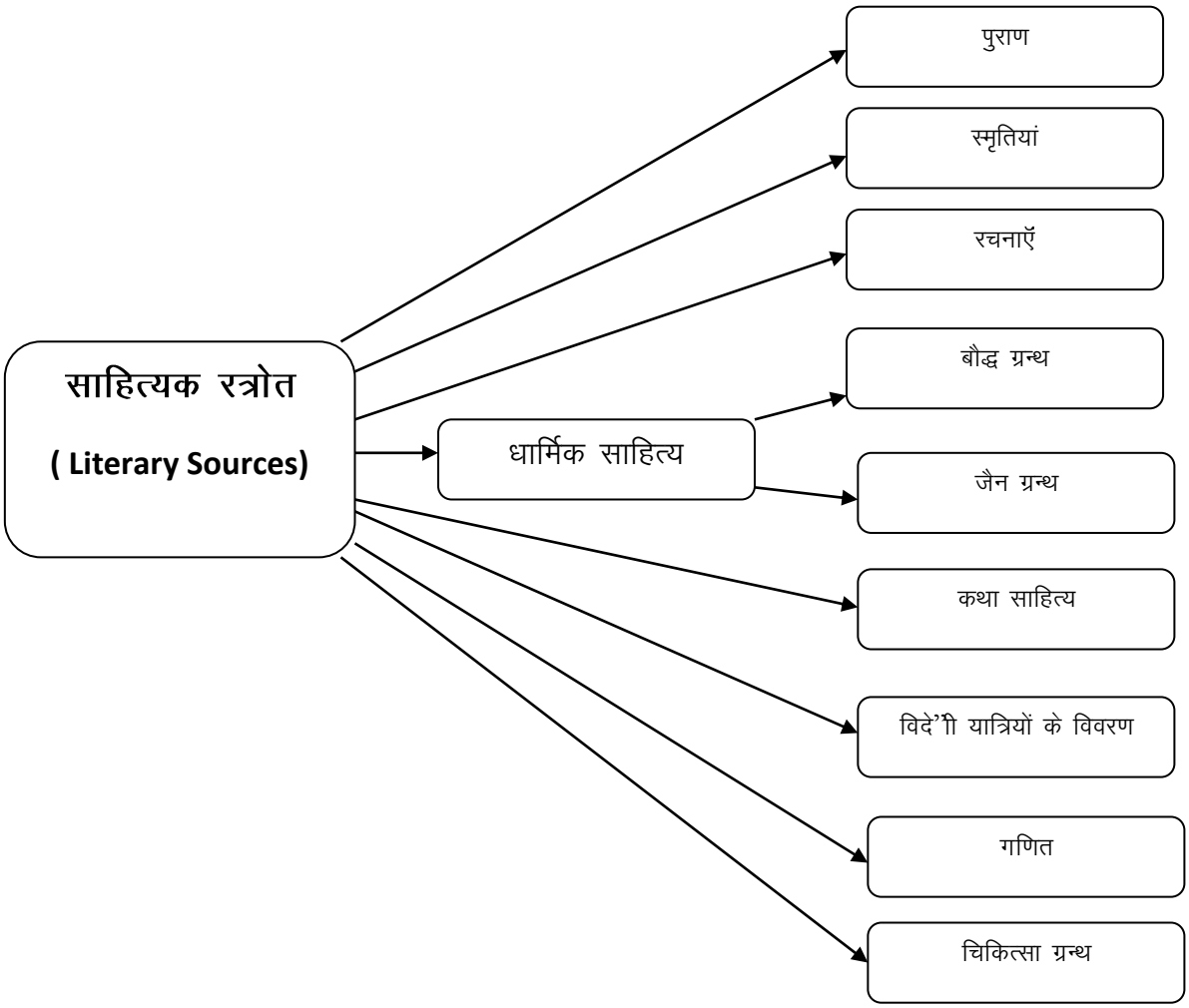

इनकी संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है :–

(1) पुराण (Purans) :- गुप्त वं"ा के इतिहास को जानने के लिए पुराणों का अध्ययन आव"यक है। पुराणों का अन्तिम रूप से संपादन गुप्त काल में ही हुआ था। भारत के दो प्रसिद्ध ग्रंथ रामायण एवं महाभारत गुप्त काल में पूरे हो चुके थे। वायु पुराण, मत्स्यपुराण, ब्राह्मण, विष्णु, भागवत आदि पुराणों के ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्व है इनमें गुप्तकाल की ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है।

(2) स्मृतियां (Smritiyans) :- गुप्तवं"ाीय शासकों के बारे में जानकारी स्मृतियों से भी मिलती है। गुप्तकाल में याज्ञवल्क्य, नारद, कात्यायन, एवं बृहस्पति आदि स्मृतियों की रचना की गई इनमें याज्ञवल्क्य स्मृति सबसे महत्वपूर्ण है। इन स्मृति ग्रन्थों ने आचार, व्यवहार, प्रायि"चत आदि का विस्तार से वर्णन मिलता है। इसी काल में हीनयान शाखा के प्रसिद्ध विद्वान बुद्धघोष ने त्रिपिटकों पर भाष्य लिखा। जैन आचार्य सिद्धसेन ने इसी काल में न्यायद"ान पर 'न्यायावताम' ग्रन्थ की रचना की।

(3) रचनाएँ :- गुप्तकाल को साहित्यिक दृष्टि से भी सुदृढ़ बनाया गया काव्य रचनाओं के साथ नाटकों की भी रचना हुई। साहित्यिक दृष्टि से **इस काल को समृद्ध बनाने में निम्न रचनाकारों का सराहनीय योगदान अविस्मरणीय रहा कालिदास** – मालविकाम्निमित्रम्, अभिज्ञान शाकुन्तलम् मेघदूतम्, कुमारसम्भवम्, रघुवं"ाम्, ऋतुसंहारम्, विक्रमोर्व"ाीयम् **विशाखादत्त**–मुद्राराक्षस, देवीचन्द्रगुप्तम्, **दण्डिन**–द"ाकुमारचरित, काव्यद"ान, **सिद्धसेन** –न्यायावताम्, **भास** – स्वप्नवासवदत्ता, चारूदत्ता, **विष्णुशर्मा**–पंचतंत्र, चरक–सरकसंहिता, **बुद्धघोष**– वि"ुद्धिमग्ग **असंग**–योगाचार, **भारवि**–किरातार्जुनीयम, **अमरसिंह**–अमरकोष, **वत्सभट्टी**–रावणवध, **चन्द्रगोमिन**–चन्द्रव्याकरण, **वराहमिहिर**–वृहत संहिता, पंचसिद्धान्तिका। **आर्यभट**–आर्यभट्टीयम्। **शुद्रक**–मृच्छकटिकम्

(4) धार्मिक साहित्य :- गुप्तकाल में बौद्ध, जैन एवं हिन्दू धर्म के ग्रन्थों की रचना हुई। रामायण, महाभारत, बुद्धघोष, जैनग्रन्थ–तत्वसारिणीत्वार्थ आदि। पाणिनि और पंतजलि के ग्रन्थों के आधार पर संस्कृत व्याकरण की रचना।

(5) कथा–साहित्य :– गुप्तकाल में कथा साहित्य का विकास हुआ। विष्णु"ार्मा ने 'पंचतंत्र' एवं 'दितोपदे"ा' कथा साहित्य की रचना की थी।

(6) गणित एवं विज्ञान :- आर्यभट्ट गुप्त काल के प्रसिद्ध गणितज्ञ थे उन्होनें आर्य भट्टीय, ज्योतिष, आर्यभट्टीय में यह प्रमाणित किया कि पृथ्वी गोल है जो अपनी धुरी के चारों और परिभ्रमण करती है इसी के कारण ग्रहण लगता है। विज्ञान के क्षेत्र में शून्य के सिद्धान्त एवं द"ामलव प्रणाली।

(7) चिकित्साग्रन्थ :- चिकित्सा का विकास भी गुप्तकाल में हुआ वाग्यभट्ट ने आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ 'अष्टांग हृदय' की रचना की थी। शल्य चिकित्सा शास्त्र के प्रवर्तक सुश्रत और नागार्जुन थे। गुप्त काल में अणु सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया। नक्षत्र–विद्या, वनस्पति शास्त्र भौतिक भूगोल आदि।

इस प्रकार से गुप्तकाल के बारे में जानकारी उसके पुरातात्विक एवं साहित्यिक स्त्रोत का अध्ययन करने से प्राप्त होती है।

6.3.2 गुप्तकालीन राज्य (Guptas State)

गुप्त साम्राज्य (Gupta Empire)

↓

श्रीगुप्त (240–280 ई.) (Shri Gupta)

↓

घटोत्कच (280–319 ई.) (Ghatotkach)

↓

चन्द्रगुप्त प्रथम (319–335 ई.) (ChandraGupta 1)

↓

समुद्रगुप्त (335–375 ई.) (Samudra Gupta)

↓

राम गुप्त (Ram Gupta)

↓

चन्द्रगुप्त द्वितीय (380–412 ई.) (Chandra Gupta 2)

↓

कुमार गुप्त (415–454 ई.) (Kumar Gupta)

स्कन्दगुप्त ('ोक्रादित्य) (455–467 ई.) (Sakand Gupta)

↓

पुरूगुप्त 467–476 ई.) (Puru Gupta)

↓

कुमार गुप्त द्वितीय (Kumar Gupta 2)

↓

बुद्ध गुप्त (Budha Gupta)

↓

नरसिंह गुप्त (Narsingh Gupta)

↓

भानु गुप्त (Bhanu Gupta)

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है :–

(1) श्रीगुप्त (Shri Gupta) (240–280 ई.) – प्रभावती गुप्त के पुना स्थित ताम्रपत्र अभिलेख में श्री गुप्त को आदिराज के रूप में में अभिहित किया गया है। इस वं"ा का आरंभिक राज्य उत्तर प्रदे"ा और बिहार में था। गुप्त शासकों के लिए उत्तर प्रदे"ा बिहार की अपेक्षा अधिक महत्व वाला राज्य था। अतएवं गुप्त शासक यहीं से राज्य संचालन करते रहे और आगे बढ़ते गए इनका आधिपत्य प्रयाग, साकेत और मगध पर स्थापित रहा। श्रीगुप्त शासनकाल 240–280 ई तक रहा। श्रीगुप्त ने 'महाराज' की उपाधि धारण की श्रीगुप्त के द्वारा धारण की गई महाराज की उपाधि सामन्तों द्वारा धारण की जाती थी। इससे पता चलता है कि श्रीगुप्त किसी अन्य शासक के अधीन शासन करता था।

(2) घटोत्कच (Ghatotakach) (280–319 ई.) – 280 ई के आस–पास श्री गुप्त ने घटोत्कच को अपना उत्तराधिकारी बनाया। इसने भी महाराज की उपाधि धारण की। प्रभावती के पुना तथा रिद्धपुर स्थित ताम्रपत्र अभिलेखों में इसे गुप्त वं"ा का प्रथम शासक माना गया है।

घटोत्कच का शासन मगध के आस–पास तक ही सीमित रहा। घटोत्कच ने 319 ई. तक शासन किया।

(3) चन्द्रगुप्त प्रथम (Chandra Gupta First) (319–335 ई.) – घटोत्कच के उत्तराधिकरी के रूप में सिंहासन पर विराजमान चन्द्रगुप्त प्रथम एक प्रराक्रमी राजा था। चन्द्रगुप्त प्रथम ने तत्कालीन प्रसिद्ध लिच्छवि कुल की कन्या कुमार देवी से विवाह किया। इसने महाराजधिराज की उपाधि धारण की। चन्द्रगुप्त प्रथम ने एक संवत गुप्त संवत के नाम से चलाया। समुद्रगुप्त को सिंहासन सौंप कर चन्द्रगुप्त ने सन्यास ग्रहण कर लिया।

(4) समुद्रगुप्त (Samudra Gupta) (335–375 ई.) – चन्द्रगुप्त प्रथम के पुत्र और उत्तराधिकारी समुद्रगुप्त (335–375) ने राज्य का अत्याधिक विस्तार किया समुद्रगुप्त के बारे में जानकारी स्वरचित प्रयाग प्र"ास्ति से मिलती है जिसे इलाहाबाद स्तम्भलेख भी कहते है। समुद्रगुप्त का मंत्री एवं दरबारी कवि हरिषेण ने राज्यारोहण, विजय, साम्राज्य विस्तार आदि के विषय में उपयोगी जानकारी मिलती है। महाराजधिराज की उपाधि धारण की और कला का विकास किया। वी.ए.स्मिथ ने समुद्रगुप्त को भारत का नेपोलियन कहा है क्योकि समुद्रगुप्त ने कभी हार का मुंह नही देखा और वह एक अच्छा कु"ाल योद्धा, शासक था। समुद्रगुप्त अपने को लिच्छवी दौहित्र कह कर गर्व का अनुभव करता था। समुद्रगुप्त ने अपने साम्राज्य को पांच भागो में बांट रखा था।

(5) रामगुप्त (Ram Gupta) – समुद्रगुप्त की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र रामगुप्त मगध शासक बना। वह कमजोर शासक था इससे उसके छोटे भाई को ईर्ष्या थी उसने स्त्री के वे"ा में जाकर उसकी हत्या कर दी फिर रामगुप्त की पत्नी ध्रुवदेवी से विवाह कर मगध का सिंहासन अपना लिया।

(6) चन्द्रगुप्त द्वितीय (Chandra Gupta Second) (380–412 ई.) – चन्द्रगुप्त के समय (380–412 ई.) में गुप्त साम्राज्य का विकास बहुत तेजी से हुआ। इसके लिए उसने अपनी पुत्री प्रभावती का विवाह एक ब्राह्मण जाति के वाकाटक राजकुमार से किया जो मध्य भारत का सम्राट था। अपने दामाद की मृत्यु के बाद उसने वहां का साम्राज्य अपने पुत्र अल्पायु को उत्तराधिकारी के रूप में सौंप दिया। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने शकों से युद्ध करके प"िचमी मालवा और गुजरात पर अधिकार किया एवं कुषाणों से मथुरा को जीता था। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण कर रखी थी इसलिए इन्हे विक्रमादित्य के नाम से भी जाना जाता है। गुप्त साम्राज्य की

सीमा काफी दूर फैली होने का प्रमाण ताम्र मुद्राओं तथा महरौली के स्तम्भ के लेख से इसकी जानकारी मिलती है।

उत्तर दक्षिण सीमा में (क"मीर तक)

पूर्व तक सीमा में(बंगाल ↔ पि"चम सीमा में (पंजाब)

दक्षिण सीमा में (काठियावाड़ तथा गुजरात तक)

इस प्रकार चन्द्रगुप्त द्वितीय की गणना भारत के महान सम्राटों में की जाती है। इसलिए इनके शासन काल को प्राचीप भारतीय इतिहास में 'स्वर्णयुग' के नाम से जाना जाता है। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के शासन काल में चीनी यात्री फाहियान (319–414 ई.) तक भारत का भ्रमण किया यहां के लोगों की जीवन"ैली कर काफी विस्तृत चर्चा को अपने विवरण में लिखा। इनके राज्य में महान विद्वान – हरिषेण, कालिदास, अमर सिंह, शंकु, धनवंतरी आदि।

(7) कुमार गुप्त प्रथम (Kumar Gupta) (415 ई.से 455 ई.) – कुमार गुप्त ने लगभग 40 वर्षो तक लगातार शासन किया। इसकी मुद्राओं पर श्रीमहेन्द्र, महेन्द्रादित्य आदि उपाधियां मिलती है। एवं स्वर्ण सिक्कों पर उसे गुप्तकुलामल चन्द्र, गुप्तकुल व्योमरा"ा भी कहा गया है। कुमार गुप्त एक महान योद्धा एंव सफल शासक था। शक्रादित्य को कुमार गुप्त की उपाधि महेन्द्रादित्य के समानार्थी मानी गई है। इससे शत्रुओं को दबाने तथा शांति स्थापित करने के लिए अवमेघ यज्ञ किया। इसने नालंदा वि"वविद्यालय की स्थापना की और विभिन्न प्रकार के सोने के सिक्के जारी किए। कुमार गुप्तवैष्णव मत को मानता था और सभी धर्मो के प्रति सहन"ीलता की नीति अपनाई। कुमार गुप्त के समय सबसे अधिक गुप्तकालीन अभिलेख प्राप्त हुए जो संख्या में 18 है। राजस्थान के भरतपुर जिले से बयाना मुद्रा भण्डार स्वर्ण मुद्राओं का सबसे बडा भण्डार जिसमें 623 मुद्राएं प्राप्त हुई थी। इन मुद्राओं मे मयूर शैली सबसे अधिक महत्वपूर्ण थी।इसने गुप्त साम्राज्य की निरंतरता को बनाए रखा।

(8) स्कन्दगुप्त (Skand Gupta) – कुमार गुप्त प्रथम की मृत्यु के बाद उसका पुत्र स्कन्दगुप्त सिंहासनारूढ़ हुआ। इसका सिंहासन पर बैठना शांतिपूर्ण नही था क्योंकि इसके भाई पुरूगुप्त ने चुनौती दी थी। स्कन्दगुप्त को शक्रादित्य के नाम से भी जाना जाता है इसका शासनकाल 455–467 ई. था स्कन्दगुप्त गुप्त व"ा का अन्तिम सफल शासक था। हूणों का गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण स्कन्दगुप्त के शासनकाल में हुआ था। इन्होनें हिन्दूकु"ा पर्वत को पार करके गन्धार प्रदे"ा पर आक्रमण किया और गुप्त साम्राज्य के कुछ हिस्से पर अधिकार कर लिया। इस परिस्थिति में स्कन्दगुप्त ने बहादुरी के साथ हूणों को पराजित किया। हूण इसके साहस को देखकर दंग रह

गए। यह युद्ध और शान्ति स्थापित करने में महान था। इसके लेख में गिरनार के प्र"ासक चक्रपालित द्वारा सुद"ान झील के बांध की मरम्मत करवाई। जिसका निर्माण मौर्य शासनकाल में किया गया था।

(9) पुरूगुप्त (467 से 476 ई.)(Puru Gupta) – स्कन्दगुप्त की मृत्यु के बाद उसका सौतेला भाई पुरूगुप्त राजगद्दी पर बैठा। यह कुमार गुप्त का प्रथम पुत्र था। स्कन्दगुप्त के संतानहीन होने के कारण सत्ता पुरूगुप्त के हाथों मे आ गई। भीतरी मुद्रालेख में पुरूगुप्त की माता का नाम महादेवी अनंतदेवी तथा पत्नी का नाम चन्द्र देवी मिलता है। वृद्धावस्था में शासक बनने के कारण पुरूगुप्त का शासन अल्पकालीन रहा। पुरूगुप्त के शासन काल ने गुप्त साम्राज्य का पतन आरंभ हो गया।

(10) कुमार गुप्त द्वितीय (Kumar Gupta 2) :- कुमार गुप्त द्वितीय के सारनाथ से गुप्त संवत् (154 ई. अर्थात 473 ई.) का उल्लेख मिलता है । कुमार गुप्त के ही शासन काल मे कुमार गुप्त प्रथम द्वारा निर्मित द"ापुर स्थित सूर्य मंदिर का जीर्णोद्धार हुआ सारनाथ लेख में सुनि"चत कुमार गुप्त उत्कीर्ण मिलता है।

(11) बुद्ध गुप्त द्वितीय (Budha Gupta Second) :- बुद्ध गुप्त ने 20 वर्ष तक शासन किया। का"ी तथा उत्तरी बंगाल के प्रदे"ा इसके साम्राज्य में सम्मिलित थे। गुप्त संवत् 157 अर्थात 477 ई. का उसका सारनाथ से लेख मिलता है यह उनके शासनकाल की ज्ञात तिथि है। स्कन्दगुप्त के उत्तराधिकारियों ने बुद्ध गुप्त सर्वाधिक शक्ति"ाली शासक था जिसने सबसे विस्तृत प्रदे"ा पर शासन किया। स्वर्ण मुद्राओं पर उसकी उपाधि श्रीविक्रम मिलती है।

(12) नरसिंह गुप्त (Narsing Gupta) :- नरसिंह गुप्त बुद्धगुप्त का छोटा भाई था जो उसकी मृत्यु के बाद शासक बना। भीतरी मुद्रालेख में इनकी माता का नाम महादेवी चन्द्रदेवी प्राप्त होता है। इसे बालादित्य के नाम से भी जाना जाता है। हेनसाग के विवरण में उल्लेख मिलता है कि हूण राजा मिहिरकुल बड़ा क्रूर और अत्याचारी शासक था। उसने मगध के शासक नरसिंह गुप्त पर आक्रमण किया पराजित हुआ तथा बन्दी बना लिया किन्तु नरसिंह गुप्त ने अपनी माता के कहने पर मुक्त कर दिया। नरसिंह गुप्त बौद्ध मतावलम्बी था। वह वसुबन्धु का "िाष्य था इसे नालंदा मुद्रलेख में परमभागवत कहा गया है।

(13) भानु गुप्त (Bhanu Gupta) :- इसके शासन काल में गुप्तव"ा का तेजी से पतन हुआ। हूणों के द्वितीय आक्रमण इसके शासनकाल की बड़ी घटना थी। उसी का अन्त करने के लिए

भानुगुप्त ने युद्ध किया। भानुगुप्त को इस युद्ध में अच्छी सफलता मिली। इस युद्ध को स्वतंत्रता संग्राम की संज्ञा दी गई।

(14) वैन्य गुप्त (Vainya Gupta) :- वैन्यगुप्त के बारे में जानकारी बंगलादे"ा के कोमिला में स्थित ताम्रपत्र है जो गुप्त संवत 188 अर्थात 507 ई. का है। इसमें बौद्ध विहार के लिए दी गई दान की भूमि का विवरण मिलते हैं।

(15) कुमार गुप्त तृतीय (Kumar Gupta Third) :- कुमार गुप्त तृतीय की माता का नाम महादेवी, मित्रदेवी था। परमदैवत परमभट्टारक महाराजाधिराज की उपाधि मिली हुई थी। इसके नाम का केवल कु प्राप्त होता है जिसके आधार पर कुमार गुप्त तृतीय माना गया है।

(16) विष्णु गुप्त (Vishnu Gupta) :- नालंदा से प्राप्त एक मुद्रालेख में विष्णु गुप्त का लेख प्राप्त हुआ है जिसमें 550 ई. तक शासनकाल माना गया है। इसके बाद साम्राज्य बिखर गया। यह गुप्त व"ा का अंतिम प्रतापी शासक था।

6.3.3. गुप्तकालीन शासन (Administration of the Guptas) :- गुप्त सम्राटों द्वारा शासन को सुदृढ़ एवं मजबूत बनाने के लिए अनेकों तरीके अपनाए गए। गुप्त शासकों ने वि"ाल साम्राज्य के संचालन के लिए उच्चकोटि की शासन व्यवस्था का प्रबन्ध किया क्योंकि गुप्त शासकों के प्र"ासन का प्रमुख उद्दे"य एवं लक्ष्य जनता की भलाई करना था। गुप्तकालीन शासन की वि"ोषताएं निम्नलिखित थी :–

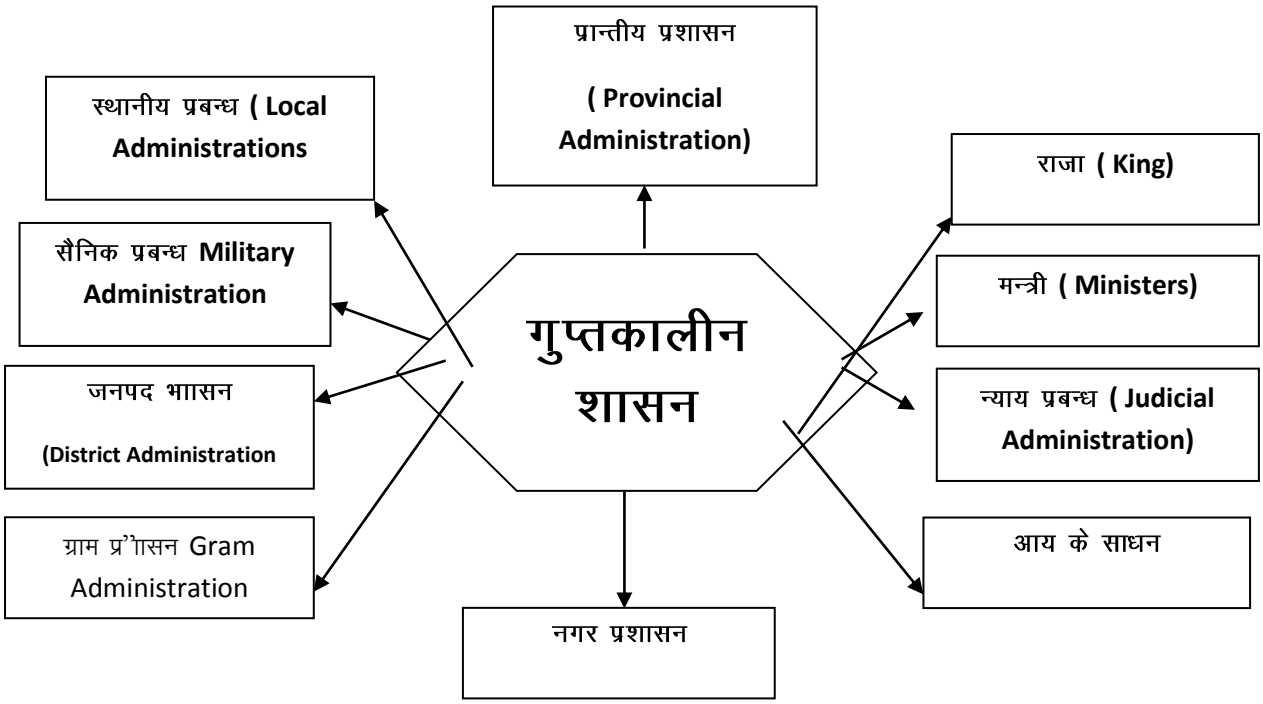

कु"ाल प्र"ाासन के लिए वि"ाल गुप्त साम्राज्य को कई प्रान्तों मे बांटा गया। प्रान्तों को दे"ा भुक्ति कहा जाता था।

इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :–

(1) राजा (King) :- राजा का पद गुप्तकाल में पैतृक होता था। पिता की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र सिंहासन का उत्तराधिकारी होता था। योग्य न होने पर किसी अन्य पुत्र को सत्ता सौंप दी जाती थी। जैसे समुद्रगुप्त चन्द्रगुप्त ज्येष्ठ पुत्र नहीं था। समस्त शक्तियां अधिकार राजा के पास होते थे। ये उपाधियां धारण करके इनके नाम सिक्कों पर उत्कीर्ण करवाते थे। प्रजा का कल्याण राजा का धर्म होता था इसलिए प्रजा राजा की देवता की तरह पूजा करती और सम्मान देती थी।

(2) जनपद शासन (District Administration) :- प्रान्तों (भुक्ति) का विभाजन जनपदों में किया गया। जिसका प्रधान अधिकारी विषयपति होता था। क्योंकि जनपदों को विषय कहा जाता था। विषयपति एक समिति गठित करता था। जिसमें निम्नवर्ग के सदस्य शामिल होते थे – (1) नगर श्रेष्ठ (2) सार्थवाह (3) प्रथम कुलिक (4) कायस्थ।

(3) नगर प्रशासन :- नगर प्र"ाासन नगर महापालिकाओं द्वारा चलाया जाता था। नगर का मुख्य अधिकारी दुर्गपाल होता था। नगर प्र"ाासन के लिए बनाई गई समिति पौर कहलाती थी।

(4) ग्राम प्रशासन (Gram Administration) **:-** यह प्र"ाासक की सबसे छोटी इकाई थी इसका संचालन ग्राम सभा द्वारा किया जाता था। ग्राम सभा का मुखिया ग्रामिक कहलाता था। इसके सदस्य महत्तर कहा जाता था। गुप्तकालीन अभिलेखों से पता चलता है कि ग्राम सभा को 'ग्राम जनपद' या पन्च मंडली' कहा गया है।

(5) प्रांतीय प्रशासन (Provincial Administration) **:-** वि"ाल साम्राज्य होने के कारण गुप्त शासकों ने इसे कई प्रान्तों में बांट दिया था। प्रान्तों को दे"ा भुक्ति अथवा अवनी के नाम से जाना जाता था। भुक्ति के प्र"ाासक को उपरिक व उपरिक महाराज कहा जाता था। इन शासकों को पांच वर्ष के लिए नियुक्त किया जाता था। उपरिक का कार्य अपने क्षेत्र में शांति स्थापित करना एवं विदे"ाी आक्रमणों से रक्षा करना। जनता के लिए जनकल्याण के कार्य करना तथा सम्राट के आदे"ाों को लागू करवाना।

क्र. सं.	प्रान्त	काल	प्रान्तीय प्रशासक
1	तीरभुक्ति	चन्द्रगुप्त द्वितीय	तीरभुक्ति

2	पूर्वी मालवा	कुमारगुप्त	पूर्वी मालवा
3	सौराष्ट्र	स्कन्दगुप्त	सौराष्ट्र
4	उत्तरी बंगाल	कुमारगुप्त	उत्तरी बंगाल

(6) मंत्री (Ministers) :- शासन व्यवस्था को अच्छी तरह चलाने के लिए मंत्री नियुक्त किए हुए थे इन मंत्रियों में योग्य व्यक्ति व उसकी योग्यता के आधार पर नियुक्ति की जाती थी। इन मंत्रियों की सभा को मंत्रिपरिषद् कहा जाता था। राजा समय–समय पर इन मंत्रियों के साथ वार्तालाप करके इनके विचार एवं सुझाव लेते थे।

(7) स्थानीय प्रबन्ध (Local Administration) :- स्थानीय शासन को चलाने के लिए उसे विभिन्न इकाइयों में बांटा गया। इन इकाइयों को विभिन्न अधिकारियों की सहायता से चलाया जाता था :–

क्रम संख्या	**प्रशासनिक इकाई**	**अधिकारी का नाम**
1	दे"ा	गोपत्री (गोरना)
2	भुक्ति	उपरिक
3	विषय	विषयपति
4	पेठ	पेठपति
5	ग्राम	ग्रामपति या महन्तर

इस प्रकार प्रत्येक इकाई का अधिकारी होता था। पूर्वी भारत में प्रत्येक विषय को बीथियों में बांटा गया था और वीथियों ग्रामों में बांटी गई थी।

(8) न्याय प्रबन्ध (Judicial Administration) :- राजा सर्वोच्च न्यायाधी"ा होता था। इसके अतिरिक्त अन्य न्यायाधी"ा भी होते थे। गुप्तकाल में पहली बार दीवानी एवं फौजदारी कानूनों को अलग किया गया। राजा का न्यायालय दे"ा का सर्वोच्च न्यायलय होता था। गुप्तकालीन अभिलेखों में न्यायाधी"ाों का उल्लेख 'महादण्डनायक' सर्वदण्डनायक तथा महासर्वदण्डनायक नामक न्यायाधी"ा होता था। नास्दस्मृति के अनुसार उस समय न्यायालय के चार वर्ग थे (1) राजा न्यायालय (2) पूग (3) श्रेणी (4) कुल।

चोरी को फौजदारी कानून में शामिल किया गया एवं सम्पति से सम्बन्धित विवाद को दीवानी कानून में शामिल किया गया।

(9) सैनिक प्रबन्धन (Military Administration) :- गुप्त सम्राटों ने अपने साम्राज्य के विस्तार एवं सुरक्षा के लिए सेना की तरफ वि"ोष ध्यान दिया और सेना को विभिन्न भागों में बांट दिया था – (1) पदाति सेना (2) गजसेना (3) रथ सेना (4) अ"वारोही सेना (5) जल सेना साधारण सेना को याट कहा जाता था, गजसेना के प्रमुख को 'कटुक' तथा अ"वारोही सेना के प्रमुख को 'भटा"पति' कहा जाता था।

(10) आय के साधन (Sources of Income) :- गुप्तकाल में आय रत्रोत 'कर' थे जो निम्न है – (1) भोग – राजा को प्रतिदिन फूल एवं सब्जियों के रूप में दिया जाने वाला कर। (2) व्यापारिक कर (3) अपराधियों को दंड (4) भूमि, रत्न, खाने, गुप्त धन, नमक आदि। इन पर राजा का सीधा अधिकार होता था। इस प्रकार राज्य के आय के रत्रोत थे।

6.4. अध्याय का आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

6.4.1. गुप्तकालीन समाज (Society of the Guptas)

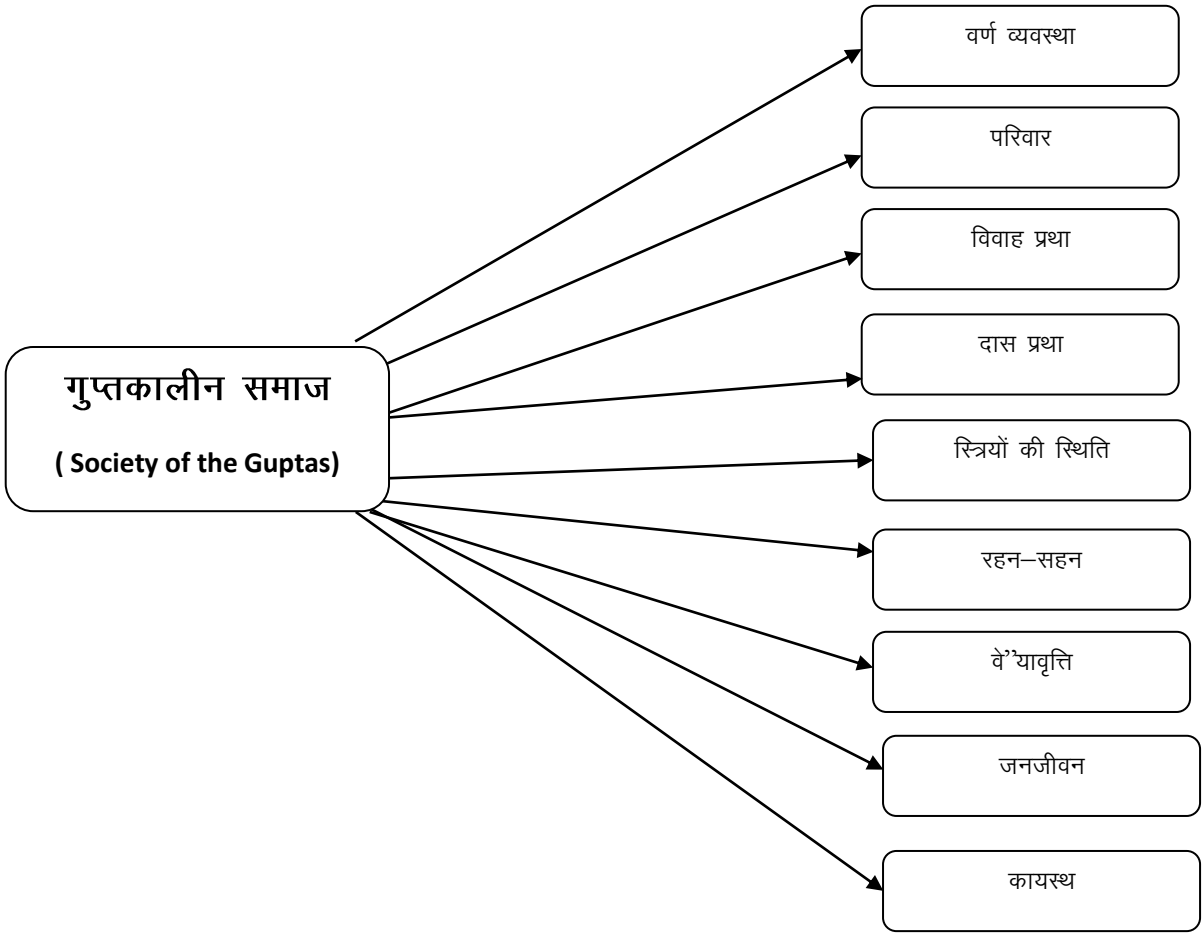

(1) वर्ण व्यवस्था :– गुप्तकाल का समय परम्परागत रूप से चार वर्णो में बंटा हुआ था – (1) ब्राह्मण (2) क्षत्रिय (3) वै"य (4) शूद्र। गुप्तकाल में ब्राह्मणों को बड़े पैमाने पर भूमि दी गई जिससे उनके वर्चस्व में वृद्धि हुई। गुप्त मूल रूप से वै"य थे जिन्हे ब्राह्मणों ने क्षत्रिय कहना शुरू कर दिया था ब्राह्मणों के छः कार्य – अध्ययन, अध्यापन, पूजा–पाठ, यज्ञ करना, दान देना और दान लेना माना जाता था। वर्ण कई जातियों–उपजातियों में बंट गए, जिसके दो कारण थे। बडी संख्या में आए विदे"ी लोग भारतीय समाज में ही घुल–मिल गए, जिससे विदे"ियों के प्रत्येक समूह अलग–अलग जाति बन गऐ। इस काल में शूद्रों की स्थिति में सुधार हुआ। 17 वीं शताब्दी में इनकी पहचान कृषक के रूप में की गई।

(2) परिवार :– संयुक्त परिवार को उच्चतम समझा जाता था जिसमें माता–पिता, भाई बहन, दादा–दादी, ताऊ–ताई, बुआ आदि एक साथ मिलकर रहते थे। संयुक्त परिवार का गुप्त काल में बहुत महत्त्व था।

(3) विवाह प्रथा :– गुप्तकाल में अर्न्तजातीय विवाह भी होते थे। विधवा विवाह और सती प्रथा का प्रचलन था। बहु–विवाह प्रथा भी प्रचलित थी। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह भी प्रचलित थे। जैसे ऊंच जाति का पुरूष नीची जाति की महिला से विवाह करे उसे अनुलोम विवाह एवं ऊंच जाति की स्त्री नीची जाति के पुरूष के साथ विवाह करे तो प्रतिलोम विवाह कहते थे।

(4) दास प्रथा :– गुप्तकाल में दास प्रथा प्रचलित थी। दास कई प्रकार के होते थे – ऋणीदास, क्रय किए गए दास, दास पुत्र, युद्ध बंदी दास, जुए में हारे हुए दास। दासता में ब्राह्मणों को दास नहीं बनाया जाता था। दासता से मुक्ति के लिए अनुष्ठान का उल्लेख नारद स्मृति में मिलता है। नारद ने 18 प्रकार के दासों का उल्लेख किया। गुप्त काल में दासियों का भी उल्लेख मिलता है।

(5) रहन–सहन :– आमतौर पर लोग शुद्ध सात्विक भोजन करते थे। जो लोग मांस मदिरा आदि का प्रयोग करते वे चण्डाल कहलाते थे। शारीरिक सौंदर्य की वृति के लिए आभूषण भी धारण करते थे। सामान्यतः लोग ऋंगारप्रिय थे। भोग विलासिता की वस्तुओं का खूब प्रयोग किया जाता था।

(6) कायस्थ :– कायस्थ एक वर्ग था जिसका पे"ा लेखन कार्य का था। कायस्थ के उद्भव से ब्राह्मण प्रभावित हुए। क्योंकि ब्राह्मणों के लेखन कार्य पर प्रभाव पड़ा। गुप्त अभिलेखों में प्रथम कायस्थ शब्द का उल्लेख पहली बार मिलता है। राजतरंगिणी में कायस्थों के अत्याचार का विवरण मिलता है।

(7) महिलाओं की स्थिति :– इतिहासकार रोमिला थापर ने गुप्तकालीन महिलाओं की स्थिति पर प्रका"ा डालते हुए कहा है कि साहित्य और कला में तो नारी का आद"र्ा रूप झलकता है किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से उसका स्थान गौण था। उस समय समाज पितृ प्रधान था और पत्नी को व्यक्तिगत सम्पति समझा जाता था। दुर्भाग्य से यदि पति पहले मर जाय तो पत्नी को सती होने के लिए प्रेरित किया जाता था। अल्पायु में लड़कियों का विवाह कर दिया जाता था।

(8) वेश्यावृत्ति (Prostitution) :– गुप्तकालीन समाज में वे"यावृत्ति के भी प्रमाण मिलते हैं किन्तु इसे निन्दनीय समझा जाता था। इस काल में वे"यावृत्ति करने वाली महिला को 'गणिका' कहा जाता था। जो वे"याएं वृद्ध हो जाती थी उन्हे कुटनी कहा जाता था। कात्यायन ने महिलाओं को अचल सम्पति की स्वामिनी माना है। बृहस्पति ने महिला को पति की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी माना है।

(9) जनजीवन :– गुप्तकाल के लोगों का जनजीवन सुखी एवं समृद्ध था जिसका मुख्य कारण भोजन, जीवन, आवास आदि में साधारणतः लोगों का आपसी व्यवहार बहुत था एक दूसरे के साथ लोग प्रेम पूर्वक रहते थे। मांस–मदिरा का सेवन केवल चांडाल लोग ही करते थे। लोग आपस में गरीब असहायों की मदद करते थे। इसके साथ–साथ लोग सामाजिक कार्य भी करते थे जैसे मन्दिर, प्याऊ, धर्म"ालाएं आदि का निर्माण करवाते थे। समाज में नैतिकता की भावना कूट–कूट कर भरी हुई थी।

6.4.2. गुप्तकालीन आर्थिक स्थिति (Econimic condition of the Guptas) गुप्तकालीन भारत में आर्थिक स्थिति अच्छी थी। उनके साम्राज्य में शान्तिपूर्वक व्यवस्था चल रही थी। जिसके पीछे निम्न पहलुओं की भूमिका रही –

(1) कृषि (Agriculture) :– गुप्तकाल के लोगों का व्यवसाय कृषि था। कृषि का विकास तेजी से हो रहा था। उस समय तीन फसलों का उल्लेख मिलता है। रवी, खरीफ़ और जायद। अमरकोष में ऐसी फसलों का भी उल्लेख मिलता है जो बहुत कम समय में तैयार हो जाती थी। गुप्तकाल में गेहूं, जौ, चावल, बाजरा, ज्वार, मक्का, कपास, तिलहन, दाल, सरसों, अलसी, मटर, बाजरा, अदरक, काली मिर्च, इलायची, लौंग, सेब, अंगूर, अनार, कटहल आदि फसल होती थी। गुप्तकाल में छोटे–छोटे कृषक होते थे। खेती का कार्य परमपरागत तरीके से किया जाता था। सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर थे। इसके अतिरिक्त कुओं, तालाबों, झीलों तथा जला"ायों से भी

सिचाई की जाती थी। जो भूमि बेकार पड़ी रहती थी वह राज्य की संपत्ति समझी जाती थी। गुप्तकाल के अभिलेखों मे कई प्रकार की भूमि के बारे में चर्चा मिलती है जैसे–

(i) **चरागाह भूमि** :– प"ुओं को चराने के लिए निजी या सरकारी भूमि जो खाली छोड़ी गई हो उसे चरागाह या गोचर भूमि कहते थे।

(ii) **क्षेत्र भूमि** :– खेती करने योग्य भूमि को क्षेत्र कहा जाता था। जिस पर किसान आसानी से खेती कर सके।

(iii) **अपरहत भूमि** :– यह जंगली भूमि होती थी जिस पर प्राकृतिक जड़ी बूटियां उत्पन्न होती थी और मनुष्य की आव"यकताओं को पूरा करने में मदद करती थी।

(iv) **खिल भूमि** :– यह भूमि उबड–खाबड़ होती थी जो कृषि करने योग्य नहीं होती ये टीले या गड्ढे के रूप में हो सकती है

(v) **वास्तु भूमि** :– इस भूमि पर रहने के लिए मकान आदि बनाए जा सकते है अर्थात जिस भूमि पर लोग निवास करते है जिस पर मकान, चिकित्सालय, विद्यालय, धर्म"ालाएं आदि बनाए जाते है।

भूमि मापने की इकाइयों अलग–अलग क्षेत्र में अलग–अलग थी। गुप्तकाल में अनाज का उत्पादन बढ़ाने वाले किसानों को वि"ोष पुरस्कारों से सम्मानित किया जाता था।

(2) उद्योग (Industries) :– गुप्तकाल में लागों का दूसरा मुख्य व्यवसाय उद्योग था। दे"ा के विभिन्न भागों में सूत की कताई एवं कपड़े की बुनाई के कार्य किए जाते थे। इसी के साथ ऊनी वस्त्र व मलमल वस्त्र भी तैयार किये जाते थे। बढ़ई, लुहार, कुम्हार आदि का कार्य करने वाले लोग भी अपने–अपने व्यवसायों में लगे रहते थे। इस काल में धातु उद्योग भी विकास की गति पर था। तांबे एवं कांसे की मूर्तियां तथा बर्तन बनाए जाते थे। सोना, चांदी, मोती आदि के सुन्दर आभूषण तैयार किए जाते थे। दिल्ली के पास का लौह स्तंभ लोहकला का सर्वोत्तम नमूना था। उस समय लोहा व्यवसाय अपने चरम विकास पर था। लोहे का कार्य करने वाले लोहार अपने कार्य में दक्ष थे। उस समय वस्त्र उद्योग कुछ प्रमुख केन्द्र काफी प्रसिद्ध थे जैसे गुजरात, बंगाल, मथुरा, वाराणसी आदि। मेहरौली का लौहस्तंभ उस समय के धातु ि"ाल्पकला के उत्तम नमूनें का एक उदाहरण है। इस काल में रत्न परीक्षा का विज्ञान भी विद्यमान था। इन उद्योगों के अतिरिक्त पोत निर्माण, हाथी दांत तथा चमड़े के उद्योग मुख्य थे।

(3) पशुपालन :– गुप्तकाल में प"ुपालन भी निर्वाह का मुख्य साधन था। 'मन' के अनुसार गोपालन कार्य एवं व्यवसाय वै"यों का था। अमरकोष में पालतु प"ु के रूप में भैंस, ऊंट, भेड़–बकरी, गधा, कुत्ता, घोड़ा आदि थे। इस प्रकार प"ु व्यवसाय भी एक आय का अच्छा स्त्रोत था।

(4) व्यापार (Trade) :– गुप्तकाल में व्यापार उन्नत स्तर पर था। दे"ा के विभिन्न भागों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थल व जल के माध्यम से व्यापार होता था। प्रयाग, बनारस, वै"ाली, कौ"ाम्बी, मथुरा, पे"ावर आदि नगर आपस में एक दूसरे वस्तुओं का व्यापार करते थे। व्यापार के लिए सिंधु, रावी, चैनाब, गंगा, यमुना आदि में नावें चलाते थे। व्यापार के लिए व्यापारिक संघ भी बने हुए थे। सभी को उनके नियमों का पालन करना पड़ता था। बंदरगाहों के द्वारा श्रीलंका, चीन, अरब, ईरान, यूनान, रोम, जावा, बर्मा, सीरिया आदि दे"ों के साथ व्यापार किया जाता था।

इस प्रकार हम कह सकते है कि गुप्त काल की आर्थिक स्थिति मजबूत थी। लोग अपना अच्छे ढंग से जीवन व्यतीत करते थे।

6.4.3. गुप्तकालीन नगर केन्द्र (Urban centres of Guptas) :– प्राचीन भारत में कांस्य युगीन सभ्यता के अर्न्तगत हड़म्पा सभ्यता नगर केन्द्रित सभ्यता थी। इस काल के नगर भारतीय उपमहाद्वीप में भारत से लेकर आज के पाकिस्तान व अफगानिस्तान तक फैले हुए थे। इस सभ्यता के बाद लौह युगीन सभ्यता अर्थात वैदिक काल मूलतः ग्राम केन्द्रित सभ्यता थी। उत्तर वैदिक काल के बाद भारत में महाजनपद युग के अन्तर्गत समस्त भारत में राजतंत्र व गणतन्त्र के रूप में 16 महाजनपदों के होने के प्रमाण मिलते हैं। इनमें सबसे मजबूत मगध महाजनपद के अन्तर्गत एक मजबूत केन्द्रीय सत्ता के द्वारा सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया गया। जिसके फलस्वरूप मगध साम्राज्य का उद्भव हुआ। इस साम्राज्य के अर्न्तगत भारत में गिरिव्रज या राजगृह, वै"ाली, पाटलिपुत्र जैसे प्रसिद्ध नगर तात्कालिक शासकों के राजधानी के रूप में विकसित हुए। प्राचीन भारत के सबसे मजबूत वं"ा मौर्यवं"ा के समय में राजधानी के रूप में पाटलिपुत्र नगर वैभव के चरम ि"खर पर था। मौर्यकाल के बाद के शासकों में से एक मात्र सातवाहन वं"ा के शासकों ने भारत पर लम्बे समय तक शासन किया और दक्षिण भारत में प्रतिष्ठान (महाराष्ट्र) में अपनी राजधानी बनाई और नगर केन्द्रों का विकास किया। मौर्य के बाद आए विदे"ी शासकों में इण्डोग्रीक–"ाक, कुषाण ने भारत में अपने शासन स्थापित किए राजधानी बनाए और नगर के लोगों का विकास किया। इन शासकों में से कुषाणवं"ीय शासक कनिष्क के काल में भारत में

नगर का विकास चरम पर था। कनिष्क काल में कला, संस्कृति, साहित्य ि"ाक्षा, चिकित्सा विज्ञान, आर्थिक विकास तथा दे"ा–विदे"ा के साथ सुनियोजित व्यापारिक संपर्क तथा सुदृढ़ प्र"ाासनिक नीति ने नगर के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गुप्तवं"ा के शासक कुषाण के ही सामंत थे। गुप्तवं"ा के प्रारंभिक दो शासक श्रीगुप्त व घटोत्कच कुषाणवं"ा के अधीनस्थ शासक अर्थात सामंत के रूप में कार्य कर रहे थे। वास्तव में गुप्त वं"ा के शासक चन्द्रगुप्त प्रथम ने गुप्त की स्थापना एक स्वतंत्र साम्राज्य के रूप में किया। चन्द्रगुप्त प्रथम ने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र को बनाया। अपनी राजधानी पाटलिपुत्र में राज्यारोहण के समय स्वतंत्रता की घोषणा करते हुए गुप्त संवत् भी चलाया। चन्द्रगुप्त प्रथम ने लिच्छवि वं"ा की राजकुमारी कुमार देवी से विवाह करके अपने राज्य को मजबूत किया तथा अपने राज्य से लिच्छवि तक नगर केन्द्र के विकास को बढ़ावा दिया। गुप्त"ासकों ने अभिलेखों से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि इस वं"ा के शासकों ने भारत के चारों कोनों में राज्य विस्तार के साथ धीरे–धीरे पाटलिपुत्र से आगे बढ़ते हुए आज के उत्तर प्रदे"ा में कौ"ाम्बी, साकेत, प्रयाग में वैभव को प्राप्त नगर केन्द्रों का विकास किया। समुद्रगुप्त के राजकवि हरिषेन के प्रयाग प्र"ास्ति से हमें इसकी वि"िाष्ट जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार गुप्त शासकों ने मूर्तिकला, स्थापत्य कला, ि"ाल्पकला ि"ाक्षा के केन्द्र, व्यापार के केन्द्र व धर्म–संस्कृति के केन्द्र के रूप में नगर केन्द्रों का विकास किया। जिनमें पाटलिपुत्र, वै"ाली, कौ"ाम्बी, प्रयाग, साकेत (आधुनिक अयोध्या) उज्जायिनी, विदि"ा भडौच, पैठन, ताम्रलिप्ति, मथुरा, पे"ावर, बनारस, गया, नालंदा, बल्लभी एक से बढ़ कर एक वैभव सम्पन्न नगरों का विकास किया।

गुप्त कालीन इन नगरों के उत्थान के कारण निम्नलिखित है :–

(1) लोहे का प्रयोग :– इस काल में लोहे के बड़े पैमाने पर प्रयोग ने नगरों के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। लोहे के प्रयोग द्वारा कृषि के औजार बनने लगे। कृषि कर्म में तकनीक के प्रयोग से कृषि के उत्पादन में वृद्धि हुई और इस कारण उद्योग धन्धों का क्रान्तिकारी विकास हुआ। जिससे नगरों के उद्य का क्रान्तिकारी मार्ग प्र"ास्त हुआ।

(2) बढ़ती जनसंख्या :– बढ़ती जनसंख्या ने लोगों को नए–नए रोजगार तला"ाने के लिए प्रेरित किया। भिन्न–भिन्न व्यवसायों की खोज में लोग एक स्थान से दूसरे स्थान में बसने लगे। इस प्रकार लोगों ने विभिन्न प्रकार की सुविधाएं एक ही स्थान पर जुटायी जिससे नगरों का विकास हुआ।

(3) आर्थिक प्रगति :– प्राचीन काल से लेकर आज तक आर्थिक तरक्की नगरों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। नगरों में बडी संख्या में उद्योगों के कारण अधिक उत्पादन के कारण आवागमन के

साधनों के विकसित होने के कारण व्यापार को बढ़ावा मिला जिससे गुप्तकाल में आर्थिक प्रगति के फलस्वरूप नए नगरों का विकास हुआ।

(4) बढ़ते व्यापार :– बढ़ते व्यापार के कारण आयात–निर्यात के केन्द्र के रूप में नगर केन्द्र विकसित होते गए। व्यापार को सुनि"चत रूप से चलाने के लिए व्यापारिक संगठनों के केन्द्र के रूप में नगरों के उत्थान चरम पर थे।

(5) धार्मिक कारण :– गुप्तकाल में ब्राह्मण धर्म की श्रेष्ठता के कारण मंदिर निर्माण कला का जन्म हुआ। इस काल में शासकों ने अनके स्थानों पर वि"ाल मंदिरों की स्थापना की । इन मंदिरों के साथ अन्य व्यवस्थाएं, ब्राह्मण, ि"ाल्पकार, देवदास–देवदासियों, पुजारी, गायक, यातायात, व्यापार आदि जुड़ते चले गए जिससे नगर केन्द्रों के निर्माण में अभूतपूर्व प्रगति हुई। मथुरा, वै"ाली, श्रावप्ती, सारनाथ, कपिलवस्तु, कु"ीनगर, देवगढ़, उज्जैन आदि धार्मिक आस्था के नगर केन्द्र के रूप में श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त हुए।

(6) शिक्षा गतिविधि के केन्द्र :– ि"ाक्षा गतिविधि के केन्द्र गुप्तकाल में नगरों के उत्थान में काफी सहायक सिद्ध हुए। गप्तकाल में ि"ाक्षा का विकास तेजी से हो रहा था। इस काल में पाटलिपुत्र, मथुरा, साकेत, बनारस, नासिक, बल्लभी आदि ि"ाक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। गुप्तकाल में कुमार गुप्त द्वारा स्थापित नालंदा वि"वविद्यालय वि"व प्रसिद्ध ि"ाक्षा के केन्द्र के रूप में चरम पर था जिसका पता हमें चीनी फाह्यिान के यात्रा वृतान्त से चलता है। इन ि"ाक्षण संस्थाओं में अध्ययनरत अध्यापकों व विद्यार्थियों की आव"यकताओं की पूर्ति में नगर उत्थान की वि"ाष भूमिका रही। गुप्तकाल में इन्ही ि"ाक्षा केन्द्रों के अन्तर्गत ज्योतिष, आयुर्वेद, ि"ाल्प आदि ने नगर के विकास को बढ़ावा दिया।

(7) प्रशासनिक व्यवस्था के रूप में नगर केन्द्र का विकास :– प्र"ासनिक कारणों ने नगरों के उद्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया। राजाओं के बसने के स्थान पर बड़े–बड़े महलों का निर्माण किया गया। इन महलों में विभिन्न स्तरों पर कर्मचारी काम करते थे । इन कर्मचारियों के निवास हेतू विभिन्न प्रकार के भवनों के निर्माण किए गए। राजा एवं उसके परिवार की सुरक्षा हेतू सैनिक छावनियों की स्थापना की गई। सैनिकों व कर्मचारियों की आव"यकतापूर्ति हेतू व्यापारिक प्रतिष्ठान खुले, धार्मिक केन्द्रों की स्थापना की गई अतः नगरों के विकास में तीव्रता आ गई।

6.4.4. गुप्ताकालीन कला एवं स्थापत्य (वास्तुकला) (Art and architecture of the Guptas) :–

गुप्तकाल को प्राचीन भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग अर्थात् क्लासिकी युग कहा जाता है। स्थापत्य एवं कला के क्षेत्र में विकास की चरम सीमा गुप्त काल में प्राप्त होती है लेकिन यह नहीं कहा जा सकता है

कि वास्तुकला सर्वोच्तम रूप गुप्त काल में ही था। दुःख कि यह बात है कि गुप्त काल में कला के क्षेत्र में उपलब्धियों के अव"ोष बहुत कम प्राप्त हुए हैं। गुप्तकाल में कला की विभिन्न विधाओं के उदाहरण देखने को मिलते है जैसे– भवन निमार्ण कला, चित्रकला, मन्दिर निर्माण कला का उदय, वास्तु, स्थापत्य, मूर्तिकला, धातुकला, मुद्राकला, संगीत, नृत्य, अभिनय कला, मृदभांड कला आदि के सर्वोच्च उदाहरण तत्कालीन मंदिर थे।

(1) भवन निर्माण कला :– गुप्तकाल में भवन निर्माण कला में ईंटों और पत्थरों का प्रयोग किया जाता था। इससे पहले भवनों का निर्माण लकड़ियों से किया जाता था। उपलब्ध अभिलेखों से पता चलता है कि गुप्त शासकों ने अनेक नगरों तथा उन नगरों में वि"ाल भवनों के निर्माण करवाए थे। दुर्भाग्य यह रहा कि हूणों से लेकर तुर्कों तक जितने भी आक्रमण भारत पर हुए उनमें गुप्तकालीन स्थापत्यों को भारी क्षति पहुंचाई गई। यद्यपि उन आक्रमणों के कारण गुप्तकाल के अनेक स्थापत्यों का विना"ा हो गया तथापि कुछ नमूने आज भी सुरक्षित है जैसे भुमरा का ि"ाव मंदिर, झांसी जिले का देवगढ़ मंदिर, तिगवा का विष्णु मंदिर, नाचना कुठार का पार्वती मंदिर आदि गुप्तकालीन स्थापत्य के अद्भुत नमूने है। ये मंदिर आकार में छोटे तथा इनकी छतें चपटी है। गुप्तकाल में मठों व स्तूपों का निर्माण किया गया। सॉची तथा गया के स्तूप अनुपम उदाहरण हैं। गुप्तकाल में गुफा कला का चरम विकास हुआ। अजंता की गुफाएं भिलसा के निकट उद्यगिरी का गुफा मंदिर गुफा कला का सर्वोत्तम नमूना है।

(2) चित्रकला :– कामसूत्रकार वात्स्यायन के अनुसार चित्रकला की गणना चौसठ कलाओं में की जाती है। गुप्तकालीन साहित्यों से ज्ञात होता है कि कुलीन तथा सु"िक्षित वर्ग स्त्री–पुरूष सभी इस कला को ग्रहण करते थे। चित्रकला का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन–अध्यापन होता था। गुप्तकालीन चित्रकला का सर्वोत्तम उदाहरण अजंता से प्राप्त भित्तिचित्र है। अंजता के भित्ति चित्रों को सर्वोत्कृष्ट कलाकृतियों का रूप प्रदान किया गया है। अजंता के चित्रों के तीन विषय है।

(i) छतों और कोनों को सजाने हेतु नैसर्गिक सौन्दर्य :– नदी–झरने, प"ु–पक्षी, फूल–वृक्ष खाली स्थानों को सजाने के लिए गन्धर्वों, अपसराओं, यक्षों के चित्रों का प्रयोग किया गया है।

(ii) तथागत तथा बोधिसत्व के चित्र

(iii) जातक कथाओं के वर्णन योग्य दृ"य।

भय, लज्जा, करूणा, मैत्री, चिन्ता, उल्लास, हर्ष, घृणा आदि मानवीय संवेगों को चित्रकला के माध्यम से उत्कीर्ण किया गया है। तकनीकी दृष्टि से ये भित्तिचित्र संसार में सर्वोत्तम स्थान पर आते है। इनमें विविध रंगों, प्राकृतिक दृ"यों, मनुष्य, देवी–देवताओं का चित्रण किया गया है।

अजंता की चित्रकला सर्वोत्तम उदाहरण है पद्मपाणि अवलोकिते"वर, बालक श्रवण के साथ उनके अंधे माता–पिता, मरणासन्न राजकुमारी, ज्ञान प्राप्ति के बाद य"ोधरा–राहुल का मिलन तथागत द्वारा सन्यास की घोषणा , बुद्ध के स्वागत के लिए इन्द्र की उड़ान। छतों के खम्भों, खिड़कियों, दरवाजों तथा चौखटों की सजावट आदि देखते ही बनते हैं। बाघ की गुफाओं के भित्ति चित्रों को भी गुप्तकालीन माना गया है। अजंता की चित्र आकृतियां धार्मिक विषयों पर आश्रित है परन्तु बाघ के चित्रों में लौकिक जीवन को द"ार्या गया है। बाघ गुफा के चित्रों मे के"ा–विन्यास, अलंकार–प्रसाधन की ि"क्षा प्राप्त होती है। बाघ की गुफाओं में विहार, चैत्य, स्तूप तथा सभागृह हैं परन्तु अधिकां"ा चित्र धर्म निरपेक्ष है जैसे नाचगाना, भव्य राजकीय जुलूस, शोकसंतप्त, अंगक्षाएं और हाथियों की दौड़ आदि दृ"य है।

(3) शिल्पकला :– गुप्तकाल में ि"ाल्पकला अपने चरम विकास पर आरूढ़ थी। वि"ोषतः मूर्ति निर्माण कला अद्वितीय थी। गुप्तकाल से पहले प"ुओं की ही मूर्तियां बनाई जाती थी किन्तु गुप्त काल में मूर्तियों के निर्माण पर वि"ोष ध्यान दिया गया। मूर्तियों में नग्नता के चित्रण में कमी आई। इस काल में ज्यादातर मूर्तियां बुद्ध तथा बौद्धिसत्व की बनाई गई। इन मूर्तियों में घुंघराले बाल, अनेक प्रकार के अलंकार तथा आध्यात्मिक भावों की अभिव्यक्ति हुई। विष्णु, सूर्य, ि"ाव आदि की मूर्तियों का भी निर्माण हुआ। गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद भी ि"ाल्प कला का अस्तित्व कायम रहा। इस प्रकार भारत के बाहर बाली, जावा , सुमात्रा, कम्बोडिया, बोनिर्यो, आदि दे"ाों में भी हुआ।

(4) मूर्ति कला :– मूर्तिकला की दृष्टि से गुप्तकाल में बहुत विकास हुआ। गुप्तकाल की मूर्तियां संयमित और नैतिक थी। कुषाणकाल में मूर्तियों में शरीर के सौन्दर्य का जो चित्रण किया गया उस नग्नता का गुप्तकाल की मूर्तियों में कोई स्थान नहीं था। गुप्तकाल की मूर्तियों में मोटे दुपट्टे का प्रद"ान किया गया। सारनाथ की मूर्तियों पर गांधार कला का कोई प्रभाव नहीं था। गुप्तकाल की मूर्तियों में प्रभावमण्डल द"ार्या जाता था। वैष्णव धर्म के विकास के कारण वैष्णव मूर्तियों का बड़ी मात्रा में निर्माण हुआ। गुप्तकाल की ि"ाल्पकला का जन्म मथुरा शैली के मानकों पर आधारित था। प्रमुख रूप से विष्णु के अवतारों की मूर्तियां बनाई गई । ि"ाव संप्रदाय में लिंग पूजा के कारण मूर्तिकला के विकास की कम संभावनाएं थी। विष्णु की प्रसिद्ध मूर्ति देवगढ़ के द"ाावतार मंदिर में है। जिसमें विष्णु को शेषनाग की शैया पर द"ार्या गया है। उद्यगिरि में एक मूर्ति मिली है जिसमें शरीर तो मनुष्य का है पर मुख वराह का। यह मूर्ति गुप्ताकालीन प्रतिमा निर्माताओं का स्मारक है। गुप्तकाल की बौद्ध मूर्तियों में संजीवता और मौलिकता मिलती है।

(5) धातुकला :– धातुकला के अन्तर्गत अनेक धातुओं को पिंघलाकर उन्हें मिलाकर अनके वस्तुएं एवं मूर्तियां बनाई जाती थी। तांबे की प्रतिमाएं बहुतायत मात्रा में बनाई जाती थी। नालंदा की 80 फीट ऊंची कांसे की बुद्ध प्रतिमा और महरौली का लौह स्तंभ गुप्त काल की धातु कला का अनुपम उदाहरण है।

(6) मुद्राकला :– गुप्तकाल में भारतीय ढंग से सोने और चांदी के सिक्के ढालने का काम तीव्र गति से हुए। इन सिक्कों के ऊपर गुप्तवं"ीय नरे"ों की मूर्तियां, लक्ष्मी गरूड़ध्वज और सिंह की आकृतियां अंकित की गई है। इन पर गुप्त सम्राटों का गौरव गाथाएं द"ार्यी गई हैं। इस प्रकार गुप्तकाल में भारतीय समाज कला, साहित्य, द"ान, विज्ञान ललित कला आदि के क्षेत्र में अवर्णनीय उन्नति हुई इसी कारण से गुप्तकाल को स्वर्ण युग की संज्ञा दी गई।

(7) संगीतकला :– गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त स्वयं संगीत प्रेमी और इस कला के संरक्षक थे। प्रयाग प्र"ास्ति से पता चलता है कि समुद्रगुप्त नारद और तुम्बारू से भी सुन्दर वीणावादन करते थे। महिला और पुरूष दोनों गाते व नृत्य करते थे। इस युग में भेरी, झांझ, टिपरी बांसुरी आदि यंत्रों का बहुतायत मात्रा में प्रयोग किया जाता था। रंग मंच और नाट्यकला का विकास भी इस युग में हो चुका था। गुप्तकाल में सम्राट के साथ–साथ साधारण जन–मानस की संगीत में अभिरूचि थी। गुप्तकाल की अनेक ऐसी मुद्राएं मिली है जिसमें सम्राट समुद्रगुप्त को विविध मुद्राओं में वीणावादन करते द"ार्या गया है। सम्राट स्कन्द गुप्त को भी वि"िष्ट संगीतज्ञ माना जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमार गुप्त प्रथम के सिक्के पूर्ण रूप से भारतीय समाज में सिक्कों की सजावट मनोहरी ढंग से की गई। सिक्कों पर चित्रों तथा अक्षरों का सुस्पष्ट उत्कीर्णन होता है।

6.4.5. गुप्त साम्राज्य का पतन :– गुप्त साम्राज्य के काल को भारतीय इतिहास की अधिकतर पुस्तकों में हिन्दू नवजागरण का युग कहा जाता है परन्तु यह पूरी तरह सत्य नहीं है। समुद्रगुप्त एवं चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने अपरिमित पुरूषार्थ से गौरव"ाली राज्य की स्थापना की थी। इसीलिए उनके शासनकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग अर्थात क्लासिकल युग कहा जाता है। इस वि"ाल साम्राज्य का पतन पांचवी शताब्दी में आरंभ हुआ तथा छठी शताब्दी में अंत हो गया। इस शक्ति"ाली साम्राज्य के पतन में अनेक प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कारणों की भूमिका रही है। जो निम्न प्रकार से है :–

(1) अयोग्य उत्तराधिकारी :– महान गुप्त साम्राज्य के पतन का प्रमुख कारण स्कन्दगुप्त के कमजोर व अयोग्य शासक थे। जिन्हे शासन प्रबन्ध का सम्यक ज्ञान नही था और जो सुख सुविधाओं में ही उलझे

रहते थे। वे अपने साम्राज्य में न तो सुख–"ांति स्थापित कर सके और न ही बाह्य आक्रमणों से रक्षा कर सके। शनैः–"ानैः महान गुप्त साम्राज्य दिन–प्रतिदिन पतन की और अग्रसर होता चला गया।

(2) उत्तराधिकारी के संबन्ध में निश्चित नियम न होना :– गुप्तकाल में उत्तराधिकारियों के लिए कोई नि"चत नियम या कानून कायदे नहीं थे इसलिए राजा के स्वर्ग सिधार जाने पर सिंहासनरूढ़ होने के लिए आपस में लड़ते रहते थे। ये परस्पर लड़ना राज्य के पतन का मुख्य कारण रहा क्योंकि बाह्य शासकों ने इस अन्तर्द्वन्द्व का लाभ उठाया।

(3) विस्तृत साम्राज्य :– महान सम्राट समुद्रगुप्त एवं चन्द्रगुप्त द्वितीय जैसे शासकों ने एक वि"ाल गुप्त साम्राज्य की स्थापना की थी। इतने विस्तृत साम्राज्य को चलाना कु"ाल शासक के बिना संभालने की कल्पना उसी प्रकार जिस प्रकार मजबूत नींव के बिना वि"ाल भवन। इस कारण गुप्त साम्राज्य का पतन होना स्वाभाविक था।

(4) आन्तरिक विद्रोह (Internal Revolts) :– गुप्त"ासकों के आन्तरिक विद्रोह के कारण चारों तरफ अ"ान्ति फैल गई। जिससे जगह–जगह पर विद्रोह को बढ़ावा मिला इसके तहत आने वाले दूसरे शासकों ने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी परिणामस्वरूप मालवा, कन्नौज तथा वल्लभी आदि अधीनस्थ राज्य गुप्त साम्राज्य की मुख्य धारा से विलग हो गए। जिसका प्रभाव गुप्त साम्राज्य की शक्ति पर पड़ा और गुप्त साम्राज्य पतन की ओर बढ़ गया।

(5) सीमा सुरक्षा लापरवाही :– गुप्त "ासकों ने सीमा सुरक्षा के कार्य में लापरवाही की जिसके कारण उन्होनें उत्तर–प"चमी सुरक्षा सीमा का नुकसान भोगना पड़ा। बाद में अवसर मिलते ही हूणों ने गुप्त साम्राज्य पर हमला किया।

(6) बौद्ध धर्म का प्रभाव (Effect of Buddhism) :– प्रारंभ गुप्त शासक हिन्दू धर्म में वि"वास रखते थे लेकिन बाद में वे बौद्ध धर्म अनुयायी बन गए। तब उन्होंने अहिंसा का पालन किया। जिसके कारण उनकी सेना ने युद्ध मे भाग लेना कम कर दिया और शान्तप्रिय रहना शुरू कर दिया। यह भी गुप्त साम्राज्य के पतन का मुख्य कारण रहा है।

(7) सेना का कमजोर होना :– लम्बे समय तक गुप्त काल में शान्ति स्थापित होने के कारण सेना ने युद्ध अभ्यास नहीं किया और न ही किसी युद्ध में भाग लिया जिसके फलस्वरूप सेना "िथिल पड़ गई। बाद मे सेना को विदे"ी आक्रमणों का सामना करना पड़ा तो सेना उनके सामने डटकर सामना नही कर पाई। जिससे पतन होना स्वाभाविक था।

(8) बुनकरों का पलायन :– विदे"ाी व्यापार के ह्रास से गुप्त साम्राज्य के आय के रत्रोत काफी कम हो गए। इस कारण रे"ाम बुनकर अर्थात व्यवसायी संघ (रे"ाम का) ने 473 ई. प्लायन कर लिया और गुजरात से मालवा चले गए वहां जाकर कोई कार्य करना प्रारंभ कर दिया।

(9) वित्तीय संकट (Financial crisis) :– प्रारंभ में गुप्त साम्राज्य काफी समृद्ध था। लेकिन गुप्त काल के शासकों ने कलाओं व साहित्य पर अनाव"यक खर्च किया। सेना के विस्तार एवं मजबूत बनाने में कम खर्च किया और इसी के साथ अपने साम्राज्य में छोटे–छोटे व्यवसाय थे उनकी तरफ भी काई वि"ोष ध्यान नहीं दिया। जिसके कारण वस्तुओं का उत्पादन हो कम गया और विदे"ाों में जो वस्तुएं निर्यात करते थे वो कार्य भी प्रभावित हुआ। पररिणामस्वरूप आर्थिक व्यवस्था गड़बड़ा गई। जो पतन को रोकने में असफल रही।

(10) हूणों के आक्रमण (Invasion of Hunas) :– चन्द्रगुप्त द्वितीय के उत्तराधिकारियों को ईसा की पांचवी सदी के उतरार्द्ध में मध्य एि"ाया के हूणों का सामना करना पड़ा। हूण एि"ाया की एक बहुत बड़ी अत्याचारी जाति थी। गुप्त सम्राट स्कन्दगुप्त हूणों को भारत में आगे बढ़ने से रोकने में असफल रहा। क्योंकि हूणों की सेना घुडसवारी में पूर्णतः कु"ाल थी और वे धातु से बने रकाबों का प्रयोग करते थे। 485 ई. में हूणों ने पूर्वी मालवा को और मध्य भारत के बड़े हिस्से को अपने कब्जे में ले लिया। इस प्रकार से छठी शताब्दी में गुप्त साम्राज्य बहुत छोटा हो गया।

डा. बी.पी. सिन्हा के अनुसार, '' हूणों के आक्रमणों ने साम्राज्य की नींव को हिला कर रख दिया था'' (The Huna invasions shook the empire to its roats, " Dr. B.P. Sinha, dynastic History of Magadha, New Delhi, 1977 (P69)

इस प्रकार से वि"ाल गुप्त साम्राज्य का पतन हुआ। उपरोक्त सभी कारणों को गुप्त साम्राज्य के पतन के लिए उत्तरदायी माना जा सकता है। जिन सभी का योगदान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रहा। जिसका परिणाम गुप्त साम्राज्य का पतन रहा।

6.4.6 विज्ञान एवं तकनीक (Science and Technology) :– गुप्तकाल में विज्ञान एवं तकनीकी ने निर्बाध गति से प्रगति की । इसी युग में भारत में 'शून्य' और 'द"ामलव' प्रणाली का विकास हुआ। इस युग के मुख्य गणितज्ञ ज्योतिष विद्या में पारंगत थे। अतः एवं दोनों शाखाओं का सुनियोजित विकास हुआ इस काल के प्रमुख गणितज्ञ व ज्योतिषशास्त्रज्ञ थे–आर्यभट्ट प्रथम, वराहमिहिर भास्कर प्रथम तथा ब्रहमगुप्त।

इस युग में गणित शास्त्र में आर्यभट्ट का विषे"ा स्थान था इसलिए नहीं की उन्होनें सर्वप्रथम गणित व ज्योतिष की समस्याओं को उठाया बल्कि इसलिए कि उनके द्वारा प्रणीत मौलिक सिद्धान्त आने वाली शताब्दियों के गणितज्ञों ने भी उसका अनुसरण किया। आर्यभट्ट को इस युग का प्रमुख वैज्ञानिक माना जाता है। उनका मत था कि पृथ्वी गोल है जो अपनी धुरी पर निरन्तर भ्रमण करती रहती है इसकी छाया चन्द्रमा पर पड़ने के कारण चन्द्रग्रहण होता है। तत्कालीन ज्योतिषियों ने उनके इस मत की आलोचना की क्योंकि वे धर्म और परम्पराओं के विरूद्ध नहीं जाना चाहते थे। इस काल के ज्योर्तिविदों में आर्य भट्ट के सिद्धान्त वैज्ञानिक थे। **'आर्यभट्टीय'** उनका एकमात्र ग्रन्थ है जिसमें रचनाकार का नाम उल्लेखित है।

आर्यभट्ट के सिद्धान्तों पर भास्कर प्रथम ने टीकायें लिखकर उन्हें वि"ोष प्रसिद्धि दे दी। भास्कर प्रथम व्रह्मगुप्त के समकालीन थे और वह स्वयं भी ख्यातिलब्ध खगौलविद् थे। भास्कर प्रथम ने तीन प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की महाभास्कर्य, लघुभास्कर्य ओर भास्य।

इस काल के अन्य ज्योतिषविद वराहमिहिर थे। उन्होनें 'पंचसिद्धान्तिका' की रचना की परन्तु ये महाभाग ज्योतिषी के रूप में कम ज्योतिष के इतिहासकार के रूप में अधिक जाने गए। इनका समय छठी शताब्दी के मध्य माना जाता है। इन्होनें **वृहत्संहिता, वृहज्जातक**, **लघुजातक** नामक तीन ग्रन्थों की रचना की।

गुप्तकाल में चिकित्सा के क्षेत्र में भी अपरिमित उन्नति हुई किन्तु औषधि विज्ञान में अधिक प्रगति नही हो सकी। छठी शताब्दी में वागभट्ट ने आयुर्वेद में **'अश्टांगहृद्यं'** की रचना की। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के राजदरबार में प्रमुख चिकित्सक धन्वन्तरि था जो आयुर्वेद के ख्यातिलब्ध विद्वान थे इसी काल में सुप्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ 'नवनीतम की रचना हुई। पालकाव्य नाम के प्रसिद्ध प"ु चिकित्सक ने 'हस्तायुर्वेद' की रचना की जो हाथियों के रोगों और उनकी चिकित्सा से संबन्धित थी। घोड़ों की चिकित्सा से सम्बन्धित ग्रन्थ भी लिखे गए क्योंकि हाथी और घोड़े सेना के महत्वपूर्ण अंग थे। इस काल में चिकित्सक शल्य चिकित्सा का भी ज्ञान रखते थे।

गुप्तकाल में भौतिक एवं रसायन विज्ञान में भी अपेक्षित प्रगति हुई। बौद्ध दा"ानिक नागार्जुन इस काल के धातुविज्ञानी थे। उन्होंने सिद्ध किया कि सोना, चांदी तांबा आदि खनिज धातुओं के रासायनिक प्रयोग से रोगों की चिकित्सा सम्भव है। तकनीकी एवं वि"ोषीकृत ज्ञान इस युग में श्रेष्ठियों के ही हाथों में था। ि"ाल्पियों की संतानों को व"ाानुगत व्यावसायिक ि"ाक्षा दी जाती थी। इस काल में धातु सम्बन्धी ज्ञान की उन्नति हुई किन्तु दुर्भाग्यव"ा इस काल की अधिक वस्तुएं वर्तमान में अनुपलब्ध है। इस युग का भव्य स्मारक दिल्ली का लौह स्तंभ और बिहार के सुल्तानगंज में प्राप्त महात्माबुद्ध की 7 फीट ऊंची एक टन

वजनी ताम्र प्रतिमा है। सिक्कों तथा मोहरों से भी धातु विज्ञान का अनुमान लगाया जा सकता है। बहुमूल्य धातुओं और पत्थरों से श्रेष्ठ आभूषण बनते थे। धातु विद्या को चौसठ कलाओं में स्थान प्राप्त था। अनके स्थान धातुकला के लिए ख्यातिलब्ध थे।

6.5 प्रगति समीक्षा (Check Your Progress)

भाग (क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

i. गुप्त व"ा का वास्तविक संस्थापक ..... था।

ii. चीनी यात्री फाहियान ने ..... के शासन काल में भारत का भ्रमण किया।

iii. चन्द्रगुप्त द्वितीय ने ..... को द्वितीय राजधानी बनाया।

iv. ..... के शासनकाल में नालन्दा वि"वविद्यालय की स्थापना की गई थी।

v. भीतरी मुद्रालेख में नरसिहं गुप्त की माता का नाम ..... मिलता है।

vi. हल पर लगने वाले कर ..... कहा जाता था।

vii. गुप्तकाल में बनी दो मीटर से भी ऊंची बुद्ध की कांस्यमूर्ति ..... के निकट .... में प्राप्त हुई।

viii. गुप्तव"ा का अंतिम सफल शासक ..... था।

भाग (Part) (ख) निम्न कथनों के उत्तर (हां/नहीं) (Yes/No) में दिजिए

(१) ग्राम प्र"ासन की सबसे छोटी इकाई थी। (हां/नहीं)

(२) खेती करने योग्य भूमि क्षेत्र को अरहत भूमि कहा जाता था। (हां/नहीं)

(३) गुप्तकाल के लोगों का प्रथम व्यवसाय उद्योग था। (हां/नहीं)

(४) गुप्तकाल में पाटलिपुत्र, मथुरा, बनारस, नासिक, बल्लभी, साकेत आदि ि"ाक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। (हां/नहीं)

(५) नालंदा से प्राप्त एक मुद्रालेख में विष्णुगुप्त का लेख प्राप्त हुआ। (हां/नहीं)

(६) मन के अनुसार गोपालन कार्य वै"यों का था। (हां/नहीं)

(७) मृच्छकटिकम् रचना कालिदास की है। (हां / नहीं)

(८) अभिज्ञान"ाकुन्तलम नाटक वि"ाखादत्त की रचना है।
(हां / नहीं)

(९) गुप्तवं"ाीय शासकों के बारे में जानकारी स्मृतियों से मिलती है।
(हां / नहीं)

(१०) गुप्तकाल में भारतीय ढंग से सोने और चांदी के सिक्कों को ढालने का कार्य तीव्रगति से हुआ।
(हां / नहीं)

(११) घटोत्कच का शासनकाल 319–335 ई. तक था। (हां / नहीं)

(१२) गुप्त साम्राज्य का संस्थापक रामगुप्त को माना गया है।
(हां / नहीं)

6.6 सारांश (Summary)

- प्राचीन भारतीय इतिहास में मौर्यो के बाद कुषाण साम्राज्य के अव"ोष पर तीसरी शताब्दी के अन्त में जिस वि"ाल नवीन साम्राज्य का अभ्युदय हुआ वह गुप्त साम्राज्य था। इस साम्राज्य ने सम्पूर्ण उत्तर भारत को 320–455 ई. तक यानि एक सदी से अधिक समय तक राजनैतिक एकता के सूत्र मे पिरोकर रखा।
- प्रभावी गुप्त के पुना स्थित ताम्रपत्र अभिलेख में श्री गुप्त का उल्लेख गुप्त वं"ा के आदि राजा के रूप में किया गया है। इसका शासन काल 240–280 ई. तक रहा। अभिलेखों में इसका गौत्र धारण बताया गया है क्योंकि श्रीगुप्त ने महाराज की उपाधि धारण की थी।
- पुराणों से गुप्त साम्राज्य, उसके विभिन्न प्रान्त तथा सीमाओं की जानकारी प्राप्त होती है स्मृतियों में नारद और बृहस्पति स्मृति से गुप्तकालीन इतिहास की उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है। गुप्तकालीन साहित्यकारों में कालीदास, शूद्रक, वात्स्यायन आदि की अमर कृतियों से गुप्तकालीन इतिहास के विविध पक्षों की जानकारी प्रदान करते है। डां. राय चौधरी व डां. रामगोपाल के अनुसार गुप्त ब्राह्मण थें। डां. जायसवाल के मतानुसार गुप्त शुद्र थे।
- गुप्तवं"ा का सबसे अधिक प्रसिद्ध शासक चन्द्रगुप्त था। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद के वि"ाल ि"ालालेख मे उत्तरी भारत के कम से कम 9 राजाओं के शक्तिपूर्वक उन्नमूलन करने तथा उनके राज्यों को अपने साम्राज्य में शामिल करने का विवरण मिलता है। चन्द्रगुप्त प्रथम में लिच्छवी

राजकुमारी देवी से विवाह किया था। चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती का विवाह वाकाटकों के राजा रूद्रसेन के साथ हुआ था। चन्द्रगुप्त प्रथम का दरबारी शासक हरिषेण था। चन्द्रगुप्त प्रथम ने 320 ई में एक नवीन सम्वत् चलाया था, जो गुप्त सम्वत् के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

- बी.ए. स्मिथ ने समुद्रगुप्त को भारतीय नेपोलियन की संज्ञा प्रदान की हैं समुद्रगुप्त के बाद रामगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमार गुप्त तथा स्कन्दगुप्त शासक हुए। स्कन्दगुप्त गुप्त वं"ा का अन्तिम शक्ति"ाली शासक था। इसके बाद गुप्त वं"ा का पतन हो गया था। गुप्तकालीन समाज चार वर्णो में बंटा हुआ था ।
- गुप्तकालीन समाज में दास प्रथा थी। युद्धबंदियों को दास बनाकर रखा जाता था। गुप्तकाल में कृषक, प"ुपालक, धातुकार, जुलाहे, माली अनेकों जातियां अस्तित्व में आई। गुप्तकाल में सती प्रथा की शुरूआत हुई।
- गुप्त काल में केवल ब्राह्मणों को ही भूमि दान दी जाती थी। नृत्य एवं संगीत में निपुण तथा कामशास्त्र में पारगंत महिलाओं को गणिका कहा जाता था।
- गुप्तकाल में हिन्दू धर्म की दो मुख्य शाखायें प्रचलित थी एक वैष्णव तथा दूसरी शैव।
- गुप्तकाल में दे"ा सम्राटों द्वारा स्वयं शासित क्षेत्रों की सबसे बडी प्रादे"िक इकाई थी। 'अमरकोष' में 13 प्रकार की भूमि का उल्लेख मिलता है। चौथी शताब्दी में मयूर"ार्मन ने 18 बार अ"वमेघ यज्ञ का आयोजन किया।
- गुप्ताकालीन सेना को तीन भागों में बांटा गया था – पैदल सेना, अ"वसेना व ह्स्ति सेना। गुप्तकाल में प्रान्त को दे"ा अथवा भुक्ति कहा जाता था। गुप्तकाल में प्रान्तीय शासक को 'भोगपति' 'योगपति' गोप्ता आदि कहा जाता था। ग्राम प्र"ासन की सबसे छोटी इकाई थी। ग्राम के मुखिया को ग्रामिक अथवा महत्तर कहा जाता था।

6.7 सूचक शब्द (Key Words)

भाब्द (Words)	अर्थ (Meaning)
• अभिहित	संबोधित
• उत्कीर्ण	खुदा हुआ
• संपादन	संकलन
• सिहासनारूढ़	राजगद्दी पर बैठना

- नगर श्रेष्ठ पूंजीपति वर्ग का नेता
- सार्थवाद विषय के व्यापारियों के नेता
- कुलिक ि"ाल्पियों व व्यवसायियों के मुखिया को
- कायस्थ लेखक का कार्य करने वाले

6.8. स्व–मूल्यांकन परीक्षा (Self- Assessment Test)(SAT)

भाग (क) (Part –A) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer types Question) (LAQS)

प्रश्न 1. गुप्तकाल की एक 'स्वर्णयुग' के रूप में विवेचना करें।

(Discuss Gupta period as a 'Goldenage) (M.D. Univ. Rohtak, 2014 , Bhagalpur Univ, 2014, 2016, 2018)

प्रश्न 2. गुप्तकालीन समाज, आर्थिक स्थिति, नगर केन्द्रों की व्याख्या कीजिए।

(Explain the Society of the Guptas, Economic conditions, Urban centres.)

प्रश्न 3. गुप्त साम्राज्य का पतन, प्रशासन, स्त्रोत पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short notes on decline of the Gupta Empire, Administration, Sources)

भाग (ख) लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Question)(SAQS)

(I) न्याय प्रबन्धन (Judicial Administration) (II) नरसिंह गुप्त (Narsingh Gupta)

(III) रामगुप्त (Ram Gupta) (IV) अभिलेख (Record)

(V) समुद्रगुप्त (Samudra Gupta) (VI) सिक्के (Coins)

6.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

भाग (क):– (I) चन्द्रगुप्त (II) चन्द्रगुप्त द्वितीय (III) उज्जैन (IV) कुमार गुप्त प्रथम (महेन्द्रादित्य) (V) महादेवी चन्द्रदेवी (VI) हलदण्ड (VII) भागलपुर, सुल्तानगंज (VIII) स्कन्दगुप्त (Skand Gupta)

भाग (ख):– (I) हां (II) नहीं (III) नहीं (IV) हां (V) हां (VI) हां (VII) नहीं (VIII) नहीं (IX) हां (X) हां (XI) नहीं (XII) नहीं

6.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री (References /Suggested Reading):-

- द्विजेन्द्रनारयण झा एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली : प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेषालय दिल्ली माध्यम कार्यान्वयन निदे"ालय दिल्ली वि"वविद्यालय, नवम्बर, 2018
- महे"ा कुमार वर्णमाल : संक्षिप्त इतिहास –एन.सी.आर.टी. सार, कॉसमोस, पब्लिके"ान, मुखर्जी नगर, दिल्ली, जनवरी, 2019
- स्पेक्ट्रम पब्लिके"ान – सामान्य अध्ययन, राजीव अहिर नगर, नई दिल्ली
- डां. विनय कुमार सिंह, कार्यकारी सम्पादक, यूनीक सामान्य अध्ययन, यूनीक पब्लिके"ान्स नई दिल्ली।
- राम"ारण शर्मा : भारत का प्राचीन इतिहास, ऑक्सबोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस द्वारा भारत प्रका"ित – 2/11 भूतल, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली, चौथा हिन्दी संस्करण, 2019
- Manjeet Singh Sodhi : Themes in Indian History, Modern's Publishers, Railway Road, Jalandhar, first Edition : 2009

Subject -HISTORY	
Course Code: B.A.106	Author: हरि सिंह
अध्याय - 7	Vetter :
गुप्तोत्तर काल: पुष्यभूति, चालुक्य वंश एवं भारतीय सामंतवाद	

अध्याय संरचना (Lesson Structure)

7.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives)

7.2 परिचय (Introduction)

7.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

7.3.1 गुप्तोत्तर काल

7.3.2 उत्तर गुप्त वंश;हूण ,मैत्रक ,मौखरि ,पुष्यभूति एवं गोड़

7.3.3 गुप्तोत्तर काल में व्यापार का ह्रास(Decline of trade in post Gupta period)

7.3.4 पुष्यभूति वंश; शासक, प्रशासन व्यवस्था, धार्मिक, आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था

7.4 मुख्य पाठ का आगे का भाग (Further Main Body Of The Text)

7.4.1 चालुक्य वंश; प्रशासन,आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति

7.4.2 भारतीय में सामंतवाद; एक परिचय

7.4.3 सामंती व्यवस्था का अर्थ

7.4.4 सामंती व्यवस्था की उत्पत्ति

7.4.5 प्रारंभिक सामंतवाद की भूमिका

7.4.6 सामंती करण के परिणाम

7.5 स्वयं प्रगति जांच (Check Your Progress)

7.6 सारांश (Summary)

7.7 संकेतक शब्द (Keywords)

7.8 स्वयं मूल्यांकन परीक्षण (Self Assessment Test)

7.9 अपनी प्रगति की जांच हेतु उत्तर देखें (Answer to Check Your Progress)

7.10 संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (Refrences / Suggested Readings)

7.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

प्रस्तुत अध्याय को अधिगमित करने के उपरांत आप निम्न जानकारियां अर्जित कर पाएंगे-

- गुप्तोत्तर काल के बारे में जान जाएंगे।
- गुप्तोत्तर काल में व्यापार में हुए ह्रास के कारणों को जान पाएंगे ।
- पुष्यभूति वंश की राजव्यवस्था व आर्थिक स्थिति के बारे में जान जाएंगे।
- चालुक्य वंश की राजव्यवस्था व आर्थिक स्थिति के बारे में जान जाएंगे।
- भारतीय सामंतवाद के उद्गम व विकास को समझ पाएंगे।
- भारत में सामंतवादी व्यवस्था के स्वरूप को समझ पाएंगे।

7.2 परिचय (Introduction)

इतिहास की प्रवृत्ति उत्थान और पतन की रही है। यही प्रवृत्ति गुप्त वंश की भी दिखाई देती है। पांचवी शताब्दी यानी 550 ईस्व सन तक गुप्त साम्राज्य का सूर्य अस्त होना शुरू हो गया था। गुप्त साम्राज्य के अंतिम शासक स्कंदगुप्त का शासन हूणों के साथ लड़ते हुए बीत गया और यहीं से गुप्त शासन के अंत की शुरुआत मानी जा सकती है। हालांकि स्कंदगुप्त के बाद उसके उत्तराधिकारियों ने 550 ईस्वी सन तक शासन किया था लेकिन इस बात के न तो कोई ऐतिहासिक प्रमाण है और ना ही प्रलेखों में कुछ मिलता है।

भारत का व्यापार दस्तकारी तथा वाणिज्य इत्यादि ईसा से 2 सदी पूर्व से 300 ईस्वी सन तक चरम सीमा पर पहुंच चुका था। मौर्यों के बाद के काल तथा गुप्त काल के उदय से पूर्व के साहित्य में हमें बहुत से शिल्पों ,हस्तकलाओ ,श्रेणियों ,व्यापारियों , वणिकों आदि का वर्णन मिलता है। रेशमी, सूती वस्त्र बनाने का उद्योग तथा इससे संबंधित रंगाई उद्योग इत्यादि भी इस समय में चरमोत्कर्ष पर था। रोम के लेखको ने भारतीय कपड़े की अधिक कीमत का वर्णन किया है। स्थानीय तथा विदेशी मंत्रियों के लिए बनाए जाने वाली वस्तुओं का बहुत अधिक प्रचलन था। कृषि उत्पादन की बहुलता के कारण इस काल में नगरीकरण काे बहुत बढ़ावा मिला। परंतु तृतीय शताब्दी में उत्तर भारत के बहुत से नगरों का ह्रास प्रारंभ हो गया जैसे मथुरा, हस्तिनापुर, अरजीखेड़ा, सुघ, संघौल इत्यादि मध्य गंगा क्षेत्र के बहुत से स्थलों पर भी जैसे श्रावस्ती, कौशांबी, चिरांद, राजगीर इत्यादि में तथा उड़ीसा के शिशुपालगढ़ बंगाल के तामलुक मे भी यही हाल प्रारंभ हो गया।

गुप्त काल के अंतिम दिनों में भी विदेशी आक्रमणों के कारण हमें उस काल की बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति का पता अभिलेखों एवं सिक्कों से चलता है। स्कंद गुप्त के अभिलेख से उसके द्वारा विचलित कुल लक्ष्मी की रक्षा की बात है,कुमारगुप्त के काल में पुष्यमित्रों के हमले तथा स्कंदगुप्त के काल के हूणों के हमलों से गुप्त साम्राज्य को ठेस लगी। स्कंदगुप्त के काल में स्वर्ण मुद्राएं कम मात्रा में ही

ढाली गई तथा उनमें सोने की मात्रा कम होने लगी। बाद के राजाओं के काल में तो स्थिति और भी गंभीर हो गई। हूणों के आक्रमणों से पश्चिमी व्यापार में तो बहुत बाधा पड़ी ।

7.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

7.3.1 गुप्तोत्तर काल

गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद भारत की राजनीति और भौगोलिक सीमाओं के टुकड़े होने शुरू हो गए थे। इस समय गुप्त शासन में एकजुट हुई राजनीतिक शक्ति के प्रतीक विभिन्न सामंतों और शासकों ने अपने को स्वयंभू शासक घोषित करके अपनी संपोषित स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। इसके साथ ही गुप्त वंश से जुड़े कुछ राजनीतिक अधिकारियों ने अवसर का लाभ उठाते हुए अपने अपने वंश की स्थापना करने का प्रयास किया जिसे उत्तर गुप्त वंश शासकों के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त गुप्त शासन के पतन के बाद प्रमुख रूप से भारत में 5 राजनीतिक शक्तियों का उदय दिखाई देता है। इन शक्तियों को हूण , मौखरि, मैंत्रक, पुष्यभूति और गौड़ के रूप में जाना जाता है।

7.3.2 उत्तर गुप्त वंश, मैत्रक, हूण, मौखरि, पुष्यभूति एवं गौड़

गुप्त वंश की पताका गिरने के बाद मगध और मालवा क्षेत्रों में उत्तर गुप्त वंश ने लगभग दो शताब्दियों तक शासन किया था। इस वंश में कृष्ण गुप्त के बाद, हर्ष गुप्त, जीवित गुप्त, कुमारगुप्त, दामोदर गुप्त, महासेनगुप्त, माधव गुप्त, आदित्य सेन आदि विभिन्न शासकों का उल्लेख मिलता है।

i) मैत्रक

गुप्त काल के एक सैनिक अधिकारी भट्टारक और उसके उत्तराधिकारियों ने सौराष्ट्र में अपना शासन स्थापित कर लिया। बौद्ध धर्म के अनुयाई मैत्रक वंश के शासक शिक्षा और वाणिज्य के विस्तार में सफल हुए थे, ये वंशज अरब शासकों को भारत से दूर रखने में सफल हुए थे।

ii)हूण

कुमारगुप्त के शासनकाल में सबसे पहले मध्य एशिया से हूण जाति का आगमन हुआ था। गुप्त साम्राज्य के कुमारगुप्त और सकंदगुप्त ने हूणों को भारत की सीमा से बाहर रखा था। लेकिन इस वंश के समाप्त होते ही 30 वर्ष के अंदर उन्होंने भारत को जीत कर कम समय के लिए अपना राज्य स्थापित कर लिया। उत्तर भारत में सफलतापूर्वक राज्य करते हुए 530 ईस्वी में अंतिम हूण शासक मिहिरकुल, यशोवर्मन द्वारा पराजित हो गया।

iii)मौखरि

गुप्त साम्राज्य के एक सामंत हरिवर्मा ने मौखरि वंश की नींव रखते हुए, कन्नौज को अपना केंद्र बनाते हुए, अच्छी तरह से राज्य किया था। इस वंश का अंतिम शासक ग्रहवर्मा हुआ क्योंकि इसकी मृत्यु के बाद मौखरि वंश समाप्त हो गया था।

iv)पुष्यभूति

दिल्ली के उत्तरी भाग में पुष्यभूति नाम के सामंत ने अपना साम्राज्य स्थापित किया था। पुष्यभूति वंश का शासक हर्षवर्धन एक प्रमुख शासक के रूप में सामने आया था। इसने बहुत कुशलता से अपने समकालीन सामंतों पर विजय प्राप्त करते हुए समूचे उत्तर भारत को अपने अधीन कर लिया था।

v)गौड़

हर्षवर्धन के समकालीन गौड़ शासकों ने बंगाल पर थोड़े समय ही राज्य किया था। इस वंश के अंतिम शासक शशांक की हत्या हर्षवर्धन ने अपने भाई की हत्या का बदला लेने के लिए कर दी थी।

vi)सामंतवाद

गुप्त वंश के अवसान के निकट सामंतवाद प्रथा ने जन्म ले लिया था। इस समय सामाजिक व्यवस्था वर्ण व्यवस्था के अनुरूप हो गई थी, लेकिन यह व्यवस्था स्थिति अनुरूप थी। जहां वैश्य, कृषक और कृषक शूद्र का जीवन और व्यवसाय अपनाने के लिए मजबूर थे, इस समय जिस नए सामाजिक ढांचे का उदय हुआ, उसे सामंतवाद कहा जाता है। इसके अंतर्गत राजा अपने विश्वास और चुने हुए अधिकारियों को भूदान करता था। यह अधिकारी जागीरदार के रूप में अपनी सुरक्षा के लिए सेना रखते थे। राजा की इस कृपा के बदले राजा का नाम उनके हर निर्माण कार्य में, लगान पर दी गई भूमि पर लिए गए राजस्व के रूप में चुकाना होता था। राजा के समान बलशाली लेकिन अधीनस्थ होते हुए भी कुछ सामंत अपने उपसामंत रखने लगे और सामंतवाद की कड़ी को आगे बढ़ाने लगे ।

गुप्त वंश के बाद का समय केवल हर्षवर्धन के कारण उल्लेखनीय रहा है। हर्ष के शासन काल में साहित्य धर्म और व्यापार अपने चरम सीमा पर था जो उसके अंत के साथ ही समाप्त भी हो गया था।

7.3.3 गुप्तोत्तर काल में व्यापार का ह्रास (Decline of trade in post Gupta period)

गुप्त और गुप्तोत्तर काल में हुए आर्थिक परिवर्तन वह ह्रास था जो छठी सदी में अधिक गहरा हो गया। स्त्रोतों से इस बात की जानकारी मिलती है कि इस काल में पश्चिमी विश्व के साथ संपर्क का अभाव था। रोम साम्राज्य के बिखराव के कारण वहां से भी व्यापारिक संबंध खत्म हो गए और व्यापार में अब अरब और ईरानियों का प्रतियोगी के रूप में उभरना भारतीय सौदागरों के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। रोम साम्राज्य के पतन और बैजतिया साम्राज्य के साथ फारसी साम्राज्य की प्रतिद्वंद्विता के कारण भारत का अंतरराष्ट्रीय व्यापार बहुत कम हो गया और अब उसकी स्थिति ऐसी नहीं थी जो पहली सदी में थी।(जब टिलनी ने रोम का पैसा भारत आने पर नाराजगी जाहिर की थी) इस व्यापार की दो चीजें महत्वपूर्ण थी, एक तो फारसी सौदागरों के जरिए भारत से बाहर भेजा जाने वाला रेशमी कपड़ा और दूसरा मसाले। बैजतिया साम्राज्य में रेशमी कपड़े के व्यापार को इतना महत्वपूर्ण स्थान था

कि फारसी व्यापारी वहां रेशमी वस्त्रों को मनमानी कीमतों पर बेचते थे जिस कारण ज्यादा धन फारसियों के हाथ में चला जाता था। इससे स्पष्ट है कि पहली सदी में भारत जिस तरह मसालों से विदेशी धन प्राप्त कर रहा था, उसी तरह छठी सदी में वह रेशमी वस्त्रों से विदेशी धन प्राप्त करता था, लेकिन इस व्यापार को धक्का उस समय लगा जब रेशम पैदा करने वाले कीड़े स्थल मार्ग से छिपाकर चीन से बैजतिया साम्राज्य में लाए गए, तो उन्होंने स्वयं रेशम बनाने की कला में महारत हासिल कर ली इससे भारत के विदेशी व्यापार को, विशेषकर उत्तर भारत के विदेशी व्यापार को बहुत धक्का लगा, क्योंकि उत्तर भारत में तो विदेशी व्यापार रेशमी वस्त्रों तक ही सीमित था। गुप्त काल तक पश्चिम भारत का विदेशी व्यापार पहले ही बहुत कम था और उस पर बैजतिया साम्राज्य से रेशमी व्यापार बंद होने के कारण इसकी स्थिति और भी खराब हो गई। गुप्तों के पतन के बाद की सदी में चीन के साथ भारत का व्यापार बढा जो तिब्बत, आसाम और चीन के बीच स्थल मार्ग से होता था, लेकिन इस व्यापार में बैजतिया साम्राज्य के साथ व्यापार बंद होने के कारण होने वाली क्षति को कहां तक पूरा किया यह कहना कठिन है।

बैजतिया साम्राज्य के छठी सदी के कुछ सिक्के आंध्र प्रदेश और कर्नाटक से प्राप्त हुए, लेकिन संख्या की दृष्टि से यह बहुत नगण्य है। इनके द्वारा रेशमी वस्त्र बनाने की कला सीखने का एक और परिणाम यह हुआ कि गुजरात में रेशम का कपड़ा बनाने वाले जुलाहे यह स्थान छोड़कर किसी अन्य स्थान पर चले गए और ये व्यवसाय छोड़कर कोई अन्य व्यवसाय अपना लिया। मध्य एशिया के साथ गुप्त शासकों के संबंध कमजोर थे और इस समय मध्य एशिया और पश्चिमी एशिया के साथ जो भी संबंध थे, वे हूणों के आक्रमण के बाद पूर्णत समाप्त हो गए। इस काल के सिक्कों और दूसरी वस्तुओं से संबंधित एक भी प्रमाण ऐसा नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जाए कि कोई विशेष वाणिज्य होता था। छठी सदी में भारतीय व्यापारिक प्रतिनिधिमंडलों को विदेशों में भेजने की परंपरा में भी कमी आई।

विदेशी व्यापार में ही ह्रास नहीं हुआ था बल्कि समुंद्री तटीय नगरों तथा दूरदराज के नगरों के बीच संपर्क कमजोर होने के कारण व्यापार का भी पतन हुआ, जिसका प्रभाव गांवों और नगरों के बीच होने वाले व्यापार पर भी पड़ा। वास्तविक स्थिति क्या थी, इसका अनुमान पश्चिमी भारत के तटवर्ती क्षेत्रों के राजाओं द्वारा व्यापारियों के संघों को दी गई सनदों से लगाया जा सकता है। यह सनदें छठी सदी के अंत और आठवीं सदी के बीच जारी की गई थी। इनसे पता चलता है कि व्यापारी किन वस्तुओं का व्यापार करते थे इनमें मघ, शक्कर, नील, अदरक, तेल, कपड़े, लकड़ी, लोहे और चमड़े आदि का सामान शामिल था। इसमें राज्य मूल्यों और नापतोल का नियमन तो करता था , लेकिन उसका नियंत्रण उतना कड़ा नहीं, जितना कौटिल्य ने लिखा है। व्यापारियों के निकाय को काफी स्वतंत्रता दी गई, उन्हें कई शुल्कों में छूट दी गई और वे अपने श्रमिकों, चरवाहों के साथ इच्छा अनुसार व्यवहार के लिए स्वतंत्र थे , उन्हें लोहारों, बुनकरों, कुम्हारों और अन्य शिल्पियों से बेगार लेने का भी अधिकार था जिस कारण तटवर्ती क्षेत्रों में स्वतंत्र आर्थिक इकाइयां उभर रही थी। इन शब्दों में तीन बातें महत्वपूर्ण थी (1) यह अनुदान शिल्पियों को नहीं बल्कि व्यापारियों को दिए गए और दान दी गई संपत्ति अथवा शहर की व्यवस्था का अधिकार भी इन्हें दिया गया।(2) इन सनदों में व्यापारियों पर गांव के प्रबंध का भी बोझ डाला, इन्हें वो ही सुविधाएं प्राप्त थी जो पुरोहित और सामंतों को थी, लेकिन गांव के प्रबंध में व्यस्त होने के कारण ये अपना ध्यान व्यापार में नहीं लगा पाए थे। इन सनदों से पता चलता है कि व्यापारी भी सामंतवादी सांचे में ढल रहे थे।(3) प्रत्येक श्रेणी की गतिविधियां उसके अपने क्षेत्र तक सीमित थी, जिससे प्रतिस्पर्धा नहीं हो पाई, एक दूसरे के प्रति यह गतिहीन अर्थव्यवस्था की खास विशेषता थी।

इनके अलावा भूमि से प्राप्त लाभकर्ताओं के अधीन असंख्य आत्मनिर्भर इकाइयों के उदय ने भी व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव डाला तथा विशाल और संगठित व्यापार का स्थान घुमक्कड़ छोटे सौदागरों ,

असंगठित और धीमी गति के व्यापार ने ले लिया। इस समय की रचना 'कथासरित्सागर' में उल्लेख है कि करो को अदा कर पाने में असमर्थ अनेक व्यापारी जंगलों की ओर चले गए। इस समय देश में राजाओं सामंतों और समृद्ध वर्ग के लिए आवश्यक और विलास की वस्तुएं देश के विभिन्न भागों में उपलब्ध थी, लेकिन व्यापार के लिए नहीं, बल्कि समृद्ध वर्ग की पूर्ति के लिए, और अर्थव्यवस्था का स्वरूप धीरे-धीरे आत्मनिर्भर इकाइयों ने ले लिया था। उस समय व्यापार में आई गिरावट के सूचक निम्न है

i)सिक्कों की कमी (Scarcity of Coins)

गुप्तोत्तर काल में सिक्कों का उपयोग कम हो गया था, सिक्के इस काल में काफी कम संख्या में मिले हैं, जिनमें मौलिकता और कलात्मक सुंदरता का अभाव है और वे तोल में भी कम है, जबकि कुषाण और गुप्त समय के सिक्के 4.2 ग्राम से अधिक नहीं है। सिक्कों की कमी का मुख्य कारण विदेशी व्यापार में कमी थी। किसानों ने और गुप्त शासक कुमारगुप्त के अलावा अन्य गुप्त शासकों ने तांबे के सिक्के बहुत कम जारी किए जिस कारण फाहियान का कथन सत्य प्रतीत होता है की कौड़ियां विनिमय का आम साधन थी। इससे पता चलता है कि मुद्रा पर आधारित अर्थव्यवस्था की जड़े उखड़ती जा रही थी।

गुप्तोत्तर काल में भूमि अनुदान की प्रथा में तेजी के कारण भी मुद्रा के प्रचलन में कमी आ रही थी। क्योंकि इस समय राजा नगद वेतन के स्थान पर भूमि अनुदान का सहारा लेने लगे थे। जिसका आगे की सदियों में प्रचलन और तेज हो गया। फिर हर्ष उत्तर काल का तो कोई भी सिक्का नहीं मिलता जिसके विषय में निश्चय पूर्वक कहा जा सके कि यह अमुक राजवंश ने जारी किया था। इस काल के मात्र वल्लभी के मैत्रक वंश के ही कुछ सिक्के प्रचलन में थे। अरब यात्रियों के विवरण से भी स्पष्ट है कि व्यापार वस्तु विनिमय के माध्यम से होता था। 10वीं, 12वीं सदी में अनेक राजवंशों के सिक्के

मिले हैं, किंतु जिस विस्तृत क्षेत्र में यह राज्य फैले हुए थे अगर उसे ध्यान में रखें तो सिक्कों की संख्या बहुत कम है। शुद्ध सोने के सिक्के तो बहुत कम मात्रा में मिले हैं। अधिकांश राज्यों में सिक्के चांदी या तांबे के हैं। अतः इनसे इस परिणाम पर पहुंचना कठिन है कि यह व्यापार समृद्धि के कारण थे। महत्वपूर्ण बात यह है कि बंगाल और गुजरात में जहां अनेक बंदरगाहों से विदेशों के साथ व्यापार होता था, बहुत कम सिक्के मिले हैं। पाल और सेन राजाओं में केवल देवपाल के कुछ सोने के सिक्के मिले हैं और गुजरात के चालुक्यों में केवल जयसिंह सिद्धराज के मात्र कुछ सिक्के मिले हैं। अतः मुद्रा के कम उपयोग का प्रश्न पूरे काल की विशेषता है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि व्यापार में बहुत कमी आ गई और शहरी जीवन समाप्त होने लगा।

ii)नगरों का पतन (Decline of Towns)

व्यापार का पतन, सिक्कों की कमी तथा वाणिज्य मोहरों की अनुपस्थिति आर्थिक पतन और निर्मित उत्पादों की मांग में कमी की ओर इशारा करती है। उत्तर भारत में जो नगर कुषाण और गुप्त काल में सक्रिय केंद्र थे, वह अब लगभग समाप्त हो गए थे। वास्तव में नगरीय जीवन का पतन दो चरणों में हुआ। गुप्त काल के दौरान प्रथम चरण के नगरों में संघौल, हस्तिनापुर, अंतरजीतखेड़ा, मथुरा, श्रावस्ती और कौशांबी के उत्खनन से स्पष्ट है की गंगा के ऊपरी और मध्य मैदानों के नगरों का पतन होना शुरू हो गया था। राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र के नगरों का भी ह्रास होना शुरू हो गया था। चौथी शताब्दी ईस्वी सन से छठी शताब्दी ईस्वी सन तक इन प्राचीन केंद्रों के निवास स्थलों की दीवारें प्रारंभिक दीवारों की तुलना में काफी पतली, खस्ता हालात और कम माल प्रयोग किए जाने का संकेत देती है। बहुत से गुप्तकालीन प्राचीन केंद्रों के निर्माण में प्रारंभिक दीवारों की ईटों और कच्चे माल का पुनः प्रयोग किया गया था। नागरिक सुविधाओं की दृष्टि से यह नगर कुषाण युग की तुलना में नगण्य है। अपने पतन के प्रथम चरण में संख्या की दृष्टि से कुछ ही नगर जैसे पाटलिपुत्र, वैशाली,

वाराणसी और भीटा ही अच्छी स्थिति में बच्चे रहे उनके पीछे का कारण था कि यह गुप्त साम्राज्य के मुख्य क्षेत्रों में स्थित थे।

नगरों के पतन का दूसरा चरण छठी शताब्दी के बाद शुरू हुआ, इसके बाद यह केंद्र नगर रह ही नहीं सके। छठी शताब्दी तक के अभिलेखों और मोहरों में नगरीय जीवन में कारीगरों दस्तकारों तथा व्यापारियों के महत्व का उल्लेख है। बंगाल से प्राप्त अभिलेख में वर्णन है कि उन्होंने नगरों के प्रशासन में विशेष योगदान दिया, लेकिन छठी शताब्दी के बाद इस प्रकार के स्त्रोतों से कोई जानकारी नहीं मिलती। बल्कि इस समय श्रेणी शब्द जिसका प्रयोग कारीगरों और व्यापारियों के संगठन के लिए होता था, अब इसका प्रयोग जाति के लिए होने लगा था और निगम का अर्थ गांव से हो गया था। उत्तरी भारत में बौद्ध नगरों के पतन का उल्लेख चीनी यात्री ह्वेनसांग अपने यात्रा विवरण में करता है, इसके समय पाटलिपुत्र मात्र एक ग्राम रह गया था। गुप्तोत्तर काल के साहित्य में भी मुख्यतः ग्रामीण जीवन का ही उल्लेख है। इस काल के दौरान कुछ नगर इसलिए बचे रहे क्योंकि उनका परिवर्तन प्रसिद्ध तीर्थ स्थलों के रूप में हो गया था और गैर कृषि बस्तियों को प्रशासनिक स्थलों सैन्य दुर्गो में भी परिवर्तित कर दिया था। जिन्हें पूरा, पहन, नगर या राजधानी कहा जाता था और ये उत्पादन का केंद्र ना होकर खपत के केंद्र थे।

7.3.4 पुष्यभूति वंश;शासक, प्रशासन व्यवस्था, धार्मिक, आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था

गुप्त वंश के पतन के बाद भारतीय राजनीति के विकेंद्रीकरण एवं क्षेत्रीयता कि भावना का आविर्भाव हुआ। गुप्त वंश के पतन के बाद जिन नए राजवंशों का उद्भव हुआ, मैत्रक, मौखरि , पुष्यभूति, परवर्ती गुप्त और गौड़ प्रमुख है। इन राजवंशों में पुष्यभूति वंश के शासकों ने सबसे विशाल राज्य स्थापित किया।

पुष्यभूति वंश को वर्धन वंश भी कहा जाता है। इनकी राजधानी थानेश्वर थी। वर्धन वंश का संस्थापक पुष्यभूति था। इस वंश को वैश्य जाति से संबंधित बताया गया है। प्रारंभ में पुष्यभूति गुप्तों के सामान थे, हूणों पर आक्रमण के बाद उन्होंने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी। प्रभाकर वर्धन इस वंश का प्रथम प्रभावशाली शासक था। इसने परम भट्टारक महाराजाधिराज की उपाधि धारण की थी। प्रभाकर वर्धन के 2 पुत्र थे- राज्यवर्धन और हर्षवर्धन। गौड़ शासक शशांक द्वारा राज्यवर्धन को मार दिए जाने के बाद हर्षवर्धन शासक बना।

- प्रभाकर वर्धन

प्रभाकर वर्धन, पुष्यभूति वंश का शक्तिशाली राजा था। शासनकाल छठी शताब्दी के अंतिम वर्ष थे। प्रभाकर वर्धन की माता गुप्त वंश की राजकुमारी महासेनगुप्त नामक स्त्री थी। अपने पड़ोसी राज्यों, मालवा, उत्तर पश्चिमी पंजाब के हूणों तथा गुर्जरों के साथ युद्ध करके प्रभाकर वर्धन ने काफी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। अपनी पुत्री राज्यश्री का विवाह प्रभाकर वर्धन ने कन्नौज के मौखरि राजा ग्रहवर्मन से किया था। प्रभाकर वर्धन की मृत्यु 604 ईस्वी में हुई थी। उसके बाद उसका सबसे बड़ा पुत्र राज्यवर्धन उत्तराधिकारी बना।

राज्यवर्धन

राज्यवर्धन थानेश्वर के शासक प्रभाकर वर्धन का जेष्ठ पुत्र था। वह अपने भाई हर्षवर्धन और बहन राज्यश्री से बड़ा था, तीनों बहन भाइयों में अगाध प्रेम था। एक भीषण युद्ध के फलस्वरूप बंगाल के राजा शशांक दवारा राज्यवर्धन का वध कर दिया गया।

राज्यवर्धन की बहन राज्यश्री का विवाह कन्नौज के मौखरि वंश के शासक ग्रहवर्मन से हुआ था। प्रभाकरवर्धन की मृत्यु के उपरांत ही देवगुप्त का आक्रमण कन्नौज पर हुआ और एक भयंकर युद्ध

प्रारंभ हो गया। युद्ध में ग्रहवर्मन मालवा के राजा देव गुप्त के हाथों मारा गया और उसकी पत्नी राज्यश्री को बंदी बनाकर कन्नौज के कारागार में डाल दिया गया। सूचना मिलते ही राज्यश्री के जेष्ठ अग्रज राज्यवर्धन ने अपनी बहन को कारागार से मुक्त कराने के लिए कन्नौज की ओर प्रस्थान किया राज्यवर्धन ने मालवा के शासक देवगुप्त को पराजित करके मार डाला, किंतु वह स्वयं देवगुप्त के सहायक और बंगाल के शासक शशांक द्वारा मारा गया।

इस समय राज्य में व्याप्त भारी उथल-पुथल से राज्यश्री कारागार से भाग निकली और उसने विंध्याचल के जंगलों में शरण ली। बाद में राज्यवर्धन के उत्तराधिकारी सम्राट हर्षवर्धन ने राज्यश्री को विंध्याचल के जंगलों में उस समय ढूंढ निकाला, जब वह निराश होकर चिंता में प्रवेश करने ही वाली थी। हर्षवर्धन उसे कन्नौज वापिस लोटा लाया और आजीवन उस को सम्मान दिया।

- हर्षवर्धन(606 ईस्वी से 647 इसवी)

606 ईस्वी में हर्षवर्धन थानेश्वर के सिहासन पर बैठा। हर्षवर्धन के बारे में जानकारी के स्रोत है- बाणभट्ट का हर्षचरित,ह्वेनसांग का यात्रा विवरण और स्वयं हर्ष की रचनाएं।

हर्षवर्धन का दूसरा नाम शिलादित्य था। हर्ष ने महायान बौद्ध धर्म को संरक्षण प्रदान किया। हर्ष ने 641 ईस्वी में अपने दूत चीन भेजे तथा 643 ईस्वी और 646 ईस्वी में दो चीनी दूत उसके दरबार में आए। हर्ष ने 646 ईस्वी में कन्नौज तथा प्रयाग में दो विशाल धार्मिक सभाओं का आयोजन किया। हर्ष ने कश्मीर के शासक से बुद्ध के दंत अवशेष बल पूर्वक प्राप्त किए। हर्षवर्धन शिव का भी उपासक था, वह सैनिक अभियान पर निकलने से पूर्व रूद्र शिव की आराधना किया करता था। हर्षवर्धन साहित्यकार भी था, उसने प्रियदर्शिका, रत्नावली तथा नागानंद तीन ग्रंथों (नाटक) की रचना की। बाणभट्ट हर्ष का दरबारी कवि था उसने हर्षचरित, कादंबरी, तथा शुकनासोपदेश आदि कृतियों की रचना की।

मालवा के शासक देवगुप्त तथा गौड़ शासक शशांक ने ग्रहवर्मन की हत्या करके कन्नौज पर अधिकार कर लिया। हर्षवर्धन ने शशांक को पराजित करके कन्नौज पर अधिकार करके उसे अपनी राजधानी बना लिया था। हर्षवर्धन को बांसखेड़ा तथा मधुबन अभिलेखों में परम महेश्वर कहा गया है। ह्वेनसांग के अनुसार हर्ष ने पड़ोसी राज्यों पर अपना अधिकार करके अपने अधीन कर लिया था।

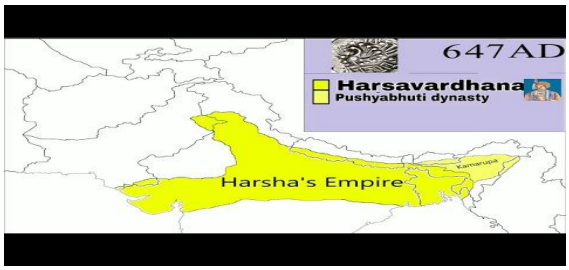

आकृति -1

उपरोक्त आकृति -1 हमें हर्षवर्धन के राज्य विस्तार के बारे में जानकारी प्रदान कर रही है। दक्षिण भारत के अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि हर्ष संपूर्ण उत्तरी भारत का स्वामी था। हर्ष के साम्राज्य का विस्तार उत्तर में थानेश्वर(पूर्वी पंजाब) से लेकर दक्षिण में नर्मदा नदी के तट तथा पूर्व में गंजाम से लेकर पश्चिम में बल्लभी तक फैला हुआ था। भारतीय इतिहास में हर्ष का महत्व इसलिए भी है कि वह उत्तरी भारत का अंतिम महान हिंदू सम्राट था, जिसने आर्यावर्त पर शासन किया।

➢ हर्ष का शासन प्रबंधं

राजा के देवी सिद्धांत का प्रचलन था, लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं कि राजन निरंकुश होता था। वस्तुतः राजा के अनेक कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व होते थे, जिन्हें पूरा करना पड़ता था। हर्ष को एक प्रशासक एवं प्रजा पालक राजा के रूप में स्मरण किया जाता है। नागानंद में उल्लेख आया है कि हर्ष का आदर्श प्रजा को सुखी एवं प्रसन्न देखना था। केंद्रीय शासन का जो नियंत्रण मौर्य युग में दिखाई

देता है वह हर्ष युग में नहीं दिखाई देता। ह्वेनसांग के विवरण में हर्ष की छवि एक प्रजा पालक राजा की उभरती है।

राजहित कादंबरी और हर्षचरित में उसे प्रजा का रक्षक कहा गया है। राजा को राजकीय कार्यों में सहायता देने के लिए एक मंत्री परिषद की व्यवस्था की गई थी। मंत्रियों की सलाह काफी महत्व रखती थी। राजा प्रशासनिक व्यवस्था की धुरी होता था। वह अंतिम न्यायाधीश और मुख्य सेनापति था। हर्ष के प्रशासन में अवंती, युद्ध और शांति का अधिकारी था। हर्ष की प्रशासनिक व्यवस्था गुप्तकालीन व्यवस्था पर आधारित थी। बहुत से प्रशासनिक पद गुप्तकालीन थे, जैसे 'संधिविग्रहिक' अपटलाधिकृत 'सेनापति' आदि। राज्य प्रशासनिक सुविधा के लिए ग्राम, विषय, भुक्ति, राष्ट्र में विभाजित था। भुक्ति का तात्पर्य प्रांत से था, विषय जिले के समान था, शासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी ।

महासामंत, महाराज, दौसाधनिक, प्रभावर, कुमारामात्य, उपरिक आदि प्रांतीय अधिकारी थे। पुलिस विभाग का भी गठन किया गया था। चौरोद्धरजिक, दंडपाशिक आदि पुलिस विभाग के कर्मचारी थे। हर्ष काल के अधिकारियों को वेतन के रूप में जागीरे(भूमि) दी जाती थी। राज्य के विरुद्ध षड्यंत्र करने पर आजीवन कैद की सजा दी जाती थी। इसके अलावा अंग- भंग देश निकाला आर्थिक दंड भी लगाया जाता था। हर्ष ने अपने साम्राज्य की सुरक्षा के लिए एक संगठित सेना का गठन किया था। सेना में पैदल, अश्व रोही, रक्षा रोही और हरित आरोही होते थे।

- ➢ हर्ष की जानकारी के स्रोत

हर्षचरित- लेखक बाणभट्ट(8 अध्याय) - इसे ऐतिहासिक विषय पर गद्य काव्य लिखने का प्रथम प्रयास कहा जा सकता है।

कादंबरी - लेखक बाणभट्ट - हर्ष कालीन सामाजिक धार्मिक जीवन का वर्णन मिलता है।

हर्ष के ग्रंथ(नाटक) - नागानंद, रत्नावली, प्रियदर्शिका।

ह्वेनसांग पुस्तक - 'सी - यू - की'

काओसेग चुवान - चीनी यात्री इत्सिंग की भारत यात्रा का विवरण। इसने बौद्ध धर्म के गहन अध्ययन के लिए 672 ईस्वी से 688 ईस्वी तक भ्रमण किया, उसने बताया कि भारत को आर्य देश कहा जाता है।

बांसखेड़ा ताम्रलेख(628 ईस्वी) , मधुबन ताम्रपत्र लेख(631 ईस्वी) व पुलकेशिन द्वितीय का एहोल का अभिलेख (634 ईस्वी)

मुहरें - नालंदा से मिट्टी की व सोनीपत से तांबे की मुहरें मिली जिसमें हर्ष का पूरा नाम मिलता है

- ➢ सामाजिक व्यवस्था

ह्वेनसांग ने तत्कालीन समाज को चार वर्गों में बांटा है - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वेश्य, शूद्र। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वश्रेष्ठ था। उन्हें क्षत्रिय आचार्य तथा उपाध्याय कहा जाता था। इस काल में वैश्यों की स्थिति में गिरावट आई। मनु और बौद्धायन धर्मसूत्र में वैश्यों को सर्वप्रथम शूद्रों के समकक्ष माना गया। समाज में शूद्रों की संख्या सर्वाधिक थी। उनकी आर्थिक स्थिति में उन्नति हुई थी, परंतु सामाजिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दिया।

इस युग का सर्वाधिक विस्मयकारी परिवर्तन जातियों में वर्णसंकर था। वर्णसंकर जातियों की सबसे लंबी सूची वैजयंती ने दी है जिसमें 64 वर्णसंकर जातियों का उल्लेख है। शुद्र में भी कुछ वर्णसंकर जातियां थी। इन जातियों का जन्म उच्च जाति के पुरुषों का निम्न जाति की स्त्रियों के साथ या प्रतिलोम विवाह से हुआ। इस काल में अस्पृश्य जातियों की संख्या तथा अस्पृश्यता की भावना में वृद्धि हुई। ह्वेनसांग ने अपने यात्रा विवरण में, भारतीयों के रहन सहन, रीति रिवाज आदि का वर्णन किया है। वह

लिखता है, " इस देश का प्राचीन नाम सिंधु था, परंतु अब यह इंदु(हिंद) कहलाता है। इस देश में लोग जातियों में विभाजित हैं, जिसमें ब्राह्मण अपनी पवित्रता एवं शुद्धता के लिए विख्यात हैं, इस काल में स्त्रियों की दशा में गिरावट आई। बाणभट्ट के अनुसार विरोधी विचारों के होते हुए भी सती प्रथा का प्रचलन बढ़ता चला गया, इस प्रथा का प्रचलन राजपूतों में अधिक था। दास प्रथा का अस्तित्व था, लेकिन दासों की सामाजिक स्थिति अस्पृश्य तथा तिरस्कृत जातियों से अच्छी थी। वृहद धर्म पुराण में 36 वर्णसंकर जातियों का उल्लेख है, इन्हें शुद्र स्तर प्रदान किया गया है।

➢ आर्थिक व्यवस्था

गुप्त काल के बाद भारतीय सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। यह परिवर्तन सामंतवाद का उदय है। सामंती व्यवस्था का उदय अधिकारियों, मंदिरों, ब्राह्मणों आदि को उनकी सेवाओं के बदले भू क्षेत्र प्रदान करने से हुआ। आरंभ में यह व्यवस्था ब्राह्मणों और मंदिरों तक सीमित थी। इस युग में अर्थव्यवस्था का आधार कृषि थी, किंतु अधिक उत्पादन के प्रति लोगों में उत्साह नहीं था क्योंकि अतिरिक्त उत्पादन का अधिक भाग जमीदार या सामंत ले लेते थे। मिताक्षरा के अनुसार भूमि दान का अधिकार सिर्फ राजा को था न की सेवा के बदले संपत्ति प्राप्त करने वाले को। राजा द्वारा प्रदत भूमि अनुदानों को आज्ञा पत्र कहा जाता था।

➢ कर व्यवस्था

- भाग= उपज का हिस्सा
- भोग= उपकर(फल, फूल, लकड़ी आदि)
- हिरण्य= नगद के रूप में वसूल किया जाने वाला कर
- प्रत्यय= चुंगी

- कर= नियमित राजस्व
- प्रस्थ= अधिकारियों का हिस्सा
- उद्रन्ग= स्थाई कृषकों पर लगने वाला कर
- उपरिकर= अस्थाई कृषकों पर लगने वाला कर

अग्नि पुराण के अनुसार कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए सिंचाई के साधनों की व्यवस्था का उत्तरदायित्व राजा का था। वह भूमि, जो जोतने वालों के स्वामित्व में रहती थी कौटुम्ब क्षेत्र कहलाती थी । व्यक्तिगत स्वामित्व वाली भूमि को सकता एवं दूसरे लोगों द्वारा जुते क्षेत्र को प्रकृष्ट अथवा कृष्ट कहते थे। हर्ष की आय का प्रधान स्रोत भाग था, जो एक प्रकार भूमि कर था और कृषि उपज का1/6 भाग था। इस काल में व्यापार का ह्रास दिखाई देता है, जिसके अनेक कारण थे। चोर डाकुओं के कारण असुरक्षित मार्ग, केंद्रीय संक्रमण का भाव और चुंगी कर ऐसे कारणों में शामिल थे। इस समय व्यापार के प्रमुख केंद्र बंगाल, मालवा, गुजरात और कलिंग थे, बंगाल मलमल के लिए, मगध एवं कलिंग धान के लिए, मालवा गन्ने के लिए और गुजरात सूती वस्त्र के लिए प्रसिद्ध था। ताम्रलिप्त सप्रग्राम देपल और भड़ौच इस काल के प्रमुख बंदरगाह थे। इस काल में वस्त्र उद्योग उत्कृष्ट था पौधों के रेशों से बना कपड़ा 'दुकूल' कहलाता था। बाणभट्ट ने हर्षचरित में रेशम से बने अनेक प्रकार के वस्त्रों का उल्लेख किया है, जैसे- नाल, तुंज, अंशुक और चीनांशुक। इस काल में सिक्कों का उपयोग कम हो गया था, इसका कारण विदेशी व्यापार का ह्रास होना था। रोमन साम्राज्य से रेशम का व्यापार बंद हो गया था। साधारण लेन-देन और स्थानीय व्यापार कौड़ियों के माध्यम से होता था।

➢ धार्मिक व्यवस्था

इस युग का प्रमुख धर्म वैष्णव था। किंतु इसका गढ़ दक्षिण भारत में था जहां अलवार संतो का आविर्भाव हुआ था। इस युग में बुद्ध को विष्णु का अवतार माना जाने लगा। अवतारवाद जनसाधारण के पुनरुत्थान की आशा एवं आस्था का प्रतीक था। अवतारों में वराह, कृष्ण और राम अधिक लोकप्रिय थे। इस युग में पूजा और भक्ति दोनों ही तांत्रिक धर्म के अभिन्न अंग बन गए। इस युग के धार्मिक संप्रदायों में शैव संप्रदाय अधिक प्रबल था। इस काल में बौद्ध धर्म ने तांत्रिक प्रभाव के कारण, मंत्रयान, वज्रयान आदि रूप धारण कर लिया था। शक्ति पूजा का भी प्रचलन इस काल में बढ़ गया था। ईश्वरीय संप्रदायों में शक्ति मुख्य देवता की अर्धांगिनी के रूप में प्रचलित हो गई । दुर्गा की उपासना प्रचलित करने का श्रेय मार्कंडेय पुराण को है। इस काल में हिंदू धर्म में जितने भी संप्रदाय थे उनमें शैव संप्रदाय सबसे अधिक प्रबल था। दक्षिण में शैव संप्रदाय के संतों को नयनार कहा जाता था।

7.4 मुख्य पाठ के आगे का भाग (Further Main Body Of The Text)

7.4.1 चालुक्य वंश; प्रशासन,आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति

चालुक्य प्राचीन भारत का एक प्रसिद्ध राजवंश रहा है। इनकी राजधानी बादामी(वातापी) थी। अपने महानतम विस्तार के समय(सातवीं शताब्दी) यह वर्तमान समय के संपूर्ण कर्नाटक, पश्चिमी महाराष्ट्र, दक्षिणी मध्य प्रदेश, तटीय दक्षिणी गुजरात तथा पश्चिमी आंध्र प्रदेश में फैला हुआ था।

चालुक्य राजवंश कई शाखाओं में विभक्त था। यह मान्यता है कि वे चालुक्य वंश के ही समरूप थे, क्योंकि वे भी इस रूढ़ि में विश्वास करते थे कि परिवार का अधिष्ठाता ब्रह्मा की हथेली से उत्पन्न हुआ था। यह भी किवदंती है कि चालुक्यों का मूल वास स्थान अयोध्या था,जहां से चल कर उस परिवार का राजकुमार विजयादित्य दक्षिण पहुंचा और वहां अपना राज्य स्थापित करने के प्रयत्न में पल्लवों से युद्ध करता हुआ मारा गया। उसके पुत्र विष्णुवर्धन ने कदंबों और गंगो को परास्त किया और वहां अपने राज्य की स्थापना की। वंश की राजधानी बीजापुर जिले में बसाई थी।

पुलकेशिन प्रथम का एक उत्तराधिकारी कीर्तिवर्मन प्रथम था, जो छठी शताब्दी के उत्तरार्ध में हुआ था। उसने कदंबों , गंगों और मौर्यों को पराजित करके अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित प्रदेश में कुछ और भाग मिला लिए। पुलकेशिन द्वितीय, कुब्ज विष्णुवर्धन और जय सिंह उसके 3 पुत्र थे और छठी शताब्दी के अंत में उसका उत्तराधिकार उसके छोटे भाई मंगलेश को प्राप्त हुआ। मंगलेश ने 602 ईस्वी के पूर्व मालवा के कलचुरीय बुद्धराज को परास्त किया और दक्षिण में कलचुरी राज्य के विस्तार को रोका। उसने अपने पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनाने का प्रयत्न किया, किंतु उसके भतीजे पुलकेशिन द्वितीय ने इसका विरोध किया। फलस्वरूप गृहयुद्ध में मंगलेश के जीवन का अंत हुआ। पुलकेशिन द्वितीय ने जो 609 ईस्वी में सिंहासन पर बैठा, एक बड़ा युद्ध अभियान जारी किया और मैसूर के कदंब , कोंकण के मौर्य, कन्नौज के हर्षवर्धन और कांची के पल्लवों को परास्त किया तथा लाट, मालवा और कलिंग पर विजय प्राप्त की। उसके छोटे भाई विष्णु वर्धन ने अपने लिए आंध्रप्रदेश जीता तो बादामी राज्य में मिला लिया गया। उसने सन 615- 616 ईस्वी में इस राजकुमार को आंध्र का मुख्य शासक नियुक्त किया और तब उसका शासन राजकुमार और उसके उत्तराधिकारियों के हाथ में रहा, जो पूर्वी चालुक्यों के रूप में प्रसिद्ध थे। संभवत: पुलकेशिन द्वितीय ने पल्लव नरसिंह वर्मन से सन 642 में युद्ध करते हुए प्राण दिए। उसके राज्य काल में सन 641 ईस्वी में एक चीनी यात्री युवानच्वा ने उसके राज्य का भ्रमण किया, उसके संस्मरण से उस काल में दक्षिण की आंतरिक स्थिति की झलक प्राप्त हो सकती है।

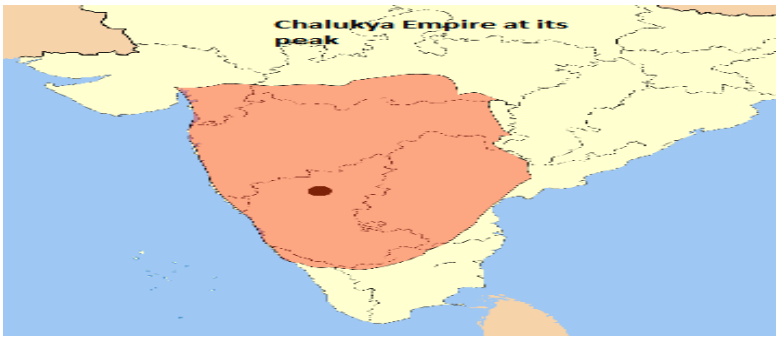

आकृति -2

आकृति -2 में दर्शाया गया मानचित्र हमें चालुक्य राजवंश के सर्वश्रेष्ठ समय को बतलाता है। ऐसा पुलकेशिन द्वितीय के शासन काल में हुआ था। पुलकेशिन द्वितीय की मृत्यु के पश्चात 13 वर्ष तक दक्षिण का प्रांत पल्लवों के अधिकार में रहा। 655 ईस्वी में उसके बेटे विक्रमादित्य प्रथम ने पल्लवों के अधिकार से अपना राज्य मुक्त करवा लिया।उसने अपनी सेनाएं लेकर पल्लवों पर आक्रमण कर दिया और प्रदेश के एक भाग पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया, यद्यपि वह प्रभुत्व बहुत अल्प समय तक ही रहा। उसके प्रपौत्र विक्रमादित्य द्वितीय ने पल्लवों से पुन:बैर ठान लिया और उसकी राजधानी कांची को लूट लिया। विक्रमादित्य द्वितीय के राज्य काल अंतर्गत(733- 745 ईस्वी) चालुक्य राज्य के उत्तरी भाग पर सिंध के अरबों ने आधिपत्य जमा लिया, किंतु अवनिजनाश्रय पुलकेशी नाम के उसके सामंत ने, जो चालुक्य वंश के पार्श्ववर्ती शाखा का सदस्य था तथा जिसका मुख्य स्थान नौसारी में था, आधिपत्यकारियो को खदेड़ कर बाहर कर दिया। उसका पुत्र और उत्तराधिकारी कीर्तिवर्मन द्वितीय आठवीं शताब्दी के मध्य राष्ट्रकूट दानी दुर्ग द्वारा पदच्युत कर दिया गया। पूर्वी चालुक्य वंश को राष्ट्रकूट से दीर्घकालीन युद्ध करना पड़ा। अंत में राष्ट्रकूटों ने चालुक्यों कि बादामी शासक शाखा को अपदस्थ कर दिया और दक्षिण पर अधिकार कर लिया। राष्ट्रकूट राजकुमार गोविंद द्वितीय ने आंध्र पर अधिकार कर लिया और तत्कालीन शासक कुब्ज विष्णुवर्धन के दूरस्थ उत्तराधिकारी, विष्णुवर्धन चतुर्थ को आत्मसमर्पण के लिए बाध्य किया। विष्णुवर्धन चतुर्थ अपने मुखिया गोविंद द्वितीय के पक्ष में राष्ट्रकूट, ध्रुव तृतीय के विरुद्ध बंधुघातक युद्ध लड़ा और उसके साथ पराजय का साझीदार बना। उसने ध्रुव तृतीय और उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी गोविंद तृतीय के प्रभुत्व को मान्यता दे दी। बाद में पुत्र विजयादित्य द्वितीय कई वर्षों तक स्वतंत्रता के लिए गोविंद तृतीय से लड़ा, किंतु असफल रहा। राष्ट्रकूट सम्राट ने उसे अपदस्थ कर दिया और आंध्र के

सिंहासन के लिए भीम सलुक्की को मनोनीत किया। गोविंद तृतीय की मृत्यु के पश्चात उसके उत्तराधिकारी अमोघवर्ष प्रथम के राज्य काल में विजयादित्य ने भीम सलुक्की को परास्त कर दिया, आंध्र पर पुनः अधिकार कर लिया और दक्षिण को जीतता हुआ,कैंबे (खंभात) तक पहुंच गया और उसे ध्वस्त कर दिया गया। तत्पश्चात उसने प्रतिहार राज्य पर आक्रमण किया किंतु प्रतिहार वाग्भट द्वितीय द्वारा पराजित हुआ । इस घटना पश्चात शत्रुओं से तंग आकर उसे अपने देश की शरण लेनी पड़ी। विजयादित्य द्वितीय के पौत्र विजयादित्य तृतीय ने (844- 888 ईस्वी) ने उत्तरी अर्काट के पल्लवों को पराजित किया,तंजोर के कोलाओ को उनके देश के पांडेयों पर पुनर्विजय में सहायता दी ,राष्ट्रकूट कृष्ण द्वितीय और उसके संबंधी दहाल के कलचुरी शंकरगण और कॉलिंग के गंगों को परास्त किया और किरणपुआ तथा चक्रकूट नगरों को जलवा दिया। 10 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में गृहयुद्ध हुआ और बदप ने, जो चालुक्य साम्राज्य का पार्श्ववर्ती भाग था, राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय को सहायता देकर तत्कालीन चालुक्य शासक दानार्णव को परास्त कर दिया। फिर वेगो के सिहासन पर अवैध अधिकार कर लिया, जहां पर उसने और उसके उत्तराधिकारी ने 999 ईस्वी तक राज्य किया। अंत में दानार्णव के पुत्र शक्ति वर्मन ने सभी शत्रुओं को परास्त करने और अपने देश में अपना प्रभुत्व स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। शक्ति वर्मन का उत्तराधिकार उसके छोटे भाई विमलादित्य ने संभाला। उसके पश्चात उसका पुत्र राजराज(1018- 1060 ईस्वी) उत्तराधिकारी हुआ। राजराज ने तंजौर के राजेंद्र चोल प्रथम की कन्या से विवाह किया और उससे उसको कुलोत्तुंग नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ जो अपने जीवन के प्रारंभिक दिनों में चोल राजधानी में अपनी नानी के पास रहा। सन 1060 ईस्वी में राजराज अपने सौतेले भाई विक्रमादित्य सप्तम द्वारा अपदस्थ किया गया जो वेगी के सिहासन पर 1076 ईस्वी तक रहा। सन 1070 ईस्वी में राजराज के पुत्र कुलोतुंग ने चोल देश पर सार्वभौमिक शासन किया और सन 1076 ईस्वी में अपने चाचा विजयादित्य सप्तम को पराजित कर

आंध्र को अपने राज्य में मिला लिया। कुलोतुंग और उसके उत्तराधिकारी,जो "चोल " कहलाना पसंद करते थे, सन 1271 ईस्वी तक चोल देश पर शासन करते रहे।

➢ चालुक्यों की प्रशासन व्यवस्था

बादामी के चालुक्य ने लगभग दो शताब्दियों तक दक्षिणापथ पर शासन किया। वह धर्मनिष्ठ हिंदू थे और उन्होंने धर्म शास्त्रों के अनुसार शासन किया। प्राचीन शास्त्रों में विहित राजतंत्र प्रणाली इस युग में भी सर्व प्रचलित शासन पद्धति थी।

समूचे प्रशासन तंत्र का केंद्र बिंदु सम्राट होता था। इस वंश के सम्राट परमेश्वर, महाराजाधिराज, परम भट्टारक, सत्याश्रय , श्रीपृथ्वीबल्लभ, श्रीबल्लभ जैसी विशाल उपाधियां ग्रहण करते थे। उन्होंने अश्वमेध, वाजपेय आदि अनेक वैदिक यज्ञों का अनुष्ठान किया। राजपद अनुवांशिक होता था। सम्राट प्रशासन की विविध समस्याओं में व्यक्तिगत रुचि लेता था तथा अपने साम्राज्य का दौरा किया करता था वहां उसके स्कन्धावार लगाए जाते थे। इस प्रकार वह नाम मात्र का शासक नहीं होता था अपितु उसकी वास्तविक सत्ता थी।

याज्ञवल्ल महीत्साह को राजा का प्रथम गुण माना जाता था। चालुक्य शासकों में यह गुण विद्यमान था। युद्ध के अवसर पर सम्राट स्वयं सेना का संचालन करता था। सामान्यतः सम्राट के बाद उसका ज्येष्ठपुत्र ही राज सिंहासन का उत्तराधिकारी होता था किंतु उसके अवयस्क होने की स्थिति में सम्राट का भाई शासन का भार ग्रहण करता था। कीर्तिवर्मन प्रथम के भाई मंगलेश ने इसी प्रकार राजसिंहासन प्राप्त किया।

इस युग में रानियों का भी महत्व था। राजकुमारों की शिक्षा दीक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था। उन्हें पुराण, रामायण, महाभारत, दंड नीति सहित समस्त शास्त्रों की शिक्षा दी जाती थी। इन शासकों

के काल में ताम्रपत्र प्रचलित थे व दान देने की प्रथा का भी प्रचलन था। रानियां अपने पतियों के साथ स्कन्धावार में भी जाती थी, वे विदुषी एवं दान शील होती थी। विक्रमादित्य प्रथम के बड़े भाई चंद्रादित्य की रानी विजयाभट्टारिका ने अपने नाम से दो ताम्रपत्र लिखवाए थे। वह एक अच्छी कवयित्री भी थी। विजयादित्य ने अपनी छोटी बहन कुमकुम देवी के कहने पर एक विद्वान ब्राह्मण को दान दिया था। कीर्तिवर्मन द्वितीय की महारानी महादेवी उसके साथ रक्त पुर में स्कन्धावार में उपस्थित थी।

चालुक्य लेखों में किसी मंत्री परिषद का उल्लेख नहीं मिलता। प्रशासन में राजपरिवार के सदस्य ही मुख्यत: शामिल थे । राजा अपने परिवार के विभिन्न सदस्यों को उनकी योग्यता अनुसार प्रशासनिक पदों पर नियुक्त करता था। इससे उसे परिवार के सदस्यों का पूरा समर्थन मिल जाता था। राजा के आदेश प्राय: मौखिक होते थे जिन्हें सचिव लिपिबद्ध कर संबद्ध अधिकारियों या व्यक्तियों के पास भेज देते थे। लेखों में महासंधिविग्रह, विषयपति, ग्रामकूट, महत्तराधिकारिन आदि केंद्रीय पदाधिकारियों के नाम दिए गए हैं। इस युग में सामंतवाद का भी अस्तित्व था। चालुक्य शासकों ने विजित प्रांतों में अपने अधीन सामंतों को शासन करने का अधिकार दिया था। अनुप, सिंद, सेंदक,गंग , बाण, तेलुगू - चोड आदि चालुक्यों के सामंत थे। वे समय-समय पर सम्राट को कर देते थे तथा युद्धों के समय अपनी अपनी सेनाएं लेकर सम्राट की सेवा में उपस्थित होते थे। सामंत अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतंत्रता पूर्वक शासन करते थे। सामंत अपने नाम के आगे कृतपादपदमोपजीवी विरुद् लगाते थे। उनकी अलग राजधानी होती थी या वे अपने दरबार लगाते थे। इनके अपने अलग मंत्री तथा अन्य अधिकारी होते थे। नगर को चट्टण या पुरा कहा जाता था।

'पट्टण स्वामी' तथा 'नगरसेट्टि' का उल्लेख मिलता है। कुछ नगर विशेष महत्व के थे। बड़े नगरों में तीन बड़ी-बड़ी सभाएं होती थी जिनमें प्रत्येक को 'महाजन' कहा जाता था। पहली सभा नगर के सामान्य

कार्यों, दूसरी ब्राह्मण निवासियों तथा तीसरी नगर से सेट्टियों की सभा थी। नगर सभाओं की स्थिति निगमों जैसी थी। इन्हें संपत्ति का क्रय विक्रय करने तथा छोटे-मोटे विवादों को हल करने का अधिकार था। नगर सभाओं में प्रबंध समितियां भी होती थी जो दैनिक प्रशासन चलाती थी। किंतु समितियों के सदस्यों के निर्वाचन अथवा उनकी संख्या के विषय में कोई सूचना नहीं मिलती है। इस प्रकार प्रशासन उत्तरोत्तर विकेंद्रित होता जा रहा था। राजकुल के सदस्यों को विभिन्न भागों में राज्यपाल बनाया जाता था।

ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई थी। कुछ लेखों में ग्राम के अधिकारी को 'गामुंड' कहा गया है। उसकी नियुक्ति केंद्र द्वारा होती थी। कीझिवर्मन द्वितीय के समय के दो गामुंहो के विषय में में सूचना मिलती है जिन्होंने एक- एक जैन मंदिर का निर्माण करवाया था । इसके अतिरिक्त महाजन का भी उल्लेख मिलता है जो ग्राम शासन में सहायता करते थे। वे गांव के प्रशासक तथा सामाजिक आर्थिक गतिविधियों का नियंत्रण करते थे। विजयादित्य के एक लेख से पता चलता है चेनियूर ग्राम का शासन महाजन (महत्तर) ही चलाते थे। विक्रमादित्य के समय के लक्ष्मेश्वर लेख से सरकार तथा ग्राम संस्थाओं के संबंधों की कुछ जानकारी प्राप्त होती है। पता चलता है कि स्थानीय संस्थाओं के शासन में सरकारी हस्तक्षेप बहुत अधिक था तथा उनका संचालन राजाज्ञाओं दवारा ही होता था। ऐसा भी पता चलता है कि समाज के विभिन्न समुदायों में काफी मेलजोल था तथा वे परस्पर सहयोग से कार्य करते थे।

- ➢ आर्थिक स्थिति

अग्रहारों का प्रशासन ब्राह्मणों के जिम्मे था । गांव के कर्मचारियों को पारिश्रमिक के रूप में कुछ जमीन दी जाती थी। कारीगरों तथा व्यापारियों की अपनी श्रेणियां होती थी जो अपनी आर्थिक स्थिति के कारण काफी महत्वपूर्ण थी। लेखों से तत्कालीन कर प्रणाली का भी कुछ संकेत मिलता है। लक्ष्मेश्वर

लेख में भूमि तथा भवन कर का उल्लेख मिलता है, जिनके पास अपने मकान नहीं थे उन्हें भी अपनी स्थिति के अनुसार कर देने पड़ते थे। पुलकेशिन द्वितीय के हैदराबाद दानपात्र में निधि, उप निधि(निक्षेप) विलप्त लगान का बंदोबस्त तथा उपरिकर(अधिभार) का उल्लेख मिलता है। सत्याश्रय शिलादित्य के नौसरी दानपत्र मे उद्रन्ग(तहबजारी) तथा परिकर (चुंगी) का उल्लेख हुआ है। इन करों के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के धार्मिक कर भी लिए जाते थे। सामयिक कर भी होते थे जैसे पुलकेशिन द्वितीय ने बाण राज्य को जीतने के बाद वहां के लोगों पर त्रेरेषोंन कर लगाया था।

विशेष अवसरों पर विद्यालय मंदिर आदि कुछ संस्थानों के निर्वाह के लिए अनाज के रूप में उगाही की जाती थी। कुछ लेखों में सिद्धाय , पन्नाय,दंडाय का उल्लेख मिलता है। परंपरागत करो को सिद्धाय कहते थे। पन्नाय से तात्पर्य पण्य से प्राप्त आय या चुंगी से है। दंडाय जुर्माने के रूप से प्राप्त होने वाली आय को कहते थे। कुछ विशेष अवसरों पर करों में छूट दिए जाने का भी विधान था। चालुक्य नरेश उदार प्रशासक थे तथा उन्होंने विभिन्न नगरों को दान भी दिए थे।

- चालुक्य साम्राज्य के दौरान साहित्य

चालुक्य शासकों के काल में साहित्य, धर्म एवं कला के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। ह्वेनसांग चालुक्य राज्य के लोगों को विद्या का व्यसनी बताता है। चालुक्य लेखों में संस्कृत भाषा का प्रयोग मिलता है और यह उसके अत्यधिक विकसित स्वरूप को प्रकट करता है। महाकूट तथा एहोल के लेख क्रमशः गद्य एवं पद्य के विकसित होने के प्रमाण हैं। महा कूट लेख के गद्य की तुलना बाणभट्ट के गद्य से की जा सकती है। इसी प्रकार एहॉल का प्रशस्तिकार कालिदास तथा भारवि की बराबरी करने का दावा करता है।

पुलकेशिन द्वितीय के सामंत गंगराज दुर्विनीत ने 'शब्दावतार' नामक व्याकरण गद्य की रचना की तथा किरातार्जुनीयम् के 15वें सर्ग पर टीका लिखी। इस काल के अन्य विद्वानों में पंडित उदय देव

तथा सोमदेव सूरी थे। उदय देव जैन मतानुयायी तथा प्रसिद्ध व्याकरण आचार्य थे उनका ग्रंथ जैनेंद व्याकरण कहा जाता है। सोमदेव सूरी ने खशस्तिलकचघ्र तथा दीतिवाक्यामृत नामक प्रसिद्ध ग्रंथों की रचना की, प्रथम ग्रंथ जैन धर्म से संबंधित रचना है तथा दूसरे का संबंध राजनीति से हैं

चीनी यात्री ह्वेनसांग भी महाराष्ट्र के लोगों के विद्या प्रेम की प्रशंसा करता है। विजयादित्य के एक अभिलेख से पता चलता है कि चालुक्यों की राजधानी बादामी में 14 विद्याओं में पारंगत हजारों ब्राह्मण निवास करते थे।

➢ चालुक्य साम्राज्य के दौरान धर्म

चालुक्य ब्राह्मण धर्मानुयायी थे तथा उनके कुल देवता विष्णु थे। इसके अतिरिक्त यह लोग शिव की भी पूजा करते थे। वाराह उनका पारिवारिक चिन्ह् था। चालुक्य राजाओं के अधिकांश लेख विष्णु के वाराह अवतार की आराधना से प्रारंभ होते हैं। विष्णु तथा शिव के साथ-साथ अन्य पौराणिक देवी देवताओं की पूजा का भी व्यापक प्रचलन था। वैदिक यज्ञों का भी अनुष्ठान होता था तथा ब्राह्मणों को दान दिए जाते थे। परंतु स्वयं ब्राह्मण धर्म का अनुयाई होने पर भी चालुक्य वंश के शासक धर्म सहिष्णु थे। उनकी धार्मिक सहिष्णुता की नीति ने दक्षिणापथ में जैन तथा बौद्ध धर्म के विकास को प्रोत्साहन दिया। चालुक्य लेखों से पता चलता है कि उन्होंने जैन साधुओं तथा शिक्षकों को दान दिए। ऐहोल अभिलेख का रचयिता रवि कीर्ति जैन था जिसे विक्रमादित्य द्वितीय ने संरक्षण प्रदान किया था उसने वहां जितेंद्र का एक मंदिर बनवाया था जिसे 'जिगुती' मंदिर कहा जाता है। विजयादित्य, विक्रमादित्य द्वितीय आदि चालुक्य राजाओं ने विद्वानों को पुरस्कृत किया तथा जैन मंदिर के निर्माण अथवा निर्वाह के लिए धन भी दान दिया था ब्राह्मण तथा जैन धर्मों की अपेक्षा बौद्ध धर्म हीन अवस्था में था। फिर भी चालुक्य राज्य में अनेक बौद्ध मठ तथा बिहार थे जिनमें हीनयान तथा महायान दोनों ही संप्रदायों के भिक्षुक निवास करते थे। ह्वेनसांग जो स्वयं पुलकेशिन द्वितीय के समय महाराष्ट्र गया

था ने बादामी में 5 अशोक स्तूप देखे थे। वह चालुक्य राज्य में बौद्ध मठों की संख्या 100 से अधिक बताता है जिनमें 5000 भिक्षुक निवास करते थे।

➢ चालुक्य साम्राज्य की कला और वास्तुकला

चालुक्य शासन में कला और स्थापत्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। इस समय जैनों तथा बोध के अनुकरण पर हिंदू देवताओं के लिए पर्वत गुफाओं को काटकर मंदिर बनाए गए। चालुक्य मंदिरों के उत्कृष्ट नमूने बदामी, एहोल तथा पत्तडकल से प्राप्त होते हैं।

➢ बदामी

बादामी में पाषाण को काटकर चार स्तंभ युक्त मंडप बनाए गए हैं। इनमें से तीन हिंदू तथा एक जैन धर्म से संबंधित है। प्रत्येक स्तंभ युक्त बरामदा मेहराब युक्त हाल तथा एक छोटा वर्गाकार गर्भ गृह पाषाण में गहराई से काटकर बनाए गए हैं। इनमें से एक वैष्णव बरामदे में विष्णु की मूर्तियां एक अनंत पर बैठी हुई तथा दूसरी नरसिंह रूप की मिलती है। इन गुफाओं की वास्तु तथा उकेरी अत्यंत उच्च कोटि की है। प्रत्येक चबूतरे पर उड़ते हुए गणों के विभिन्न मुद्राओं में उतरन चित्र अत्यंत मनमोहक है। दूसरी शैलगुफा है जिसे मालेगिट्टी कहा जाता है। इसका गर्भगृह वर्गाकार है मंडप तथा बरामदे में एक एकाश्म स्तंभ बने हैं जो मूर्ति शिल्प, कोनियों तथा कार्निस से सजाए गए हैं। शैव मंदिरों का बाहरी भाग तो सादा है किंतु भीतरी दीवारों पर विभिन्न प्रकार की सुंदर-सुंदर चित्रकारियां देखने को मिलती है।

➢ एहोल

एहोल को मंदिरों का नगर कहा जाता है और यहां कम से कम 70 मंदिरों के अवशेष प्राप्त होते हैं। इनका निर्माण 450 -600 ईस्वी के बीच हुआ। इसी समय उत्तरी भारत में गुप्त मंदिरों का निर्माण

हुआ तथा आर्य शिखर शैली (नागर) का प्रभाव दक्षिण में पहुंचा। यही कारण है कि ऐहोल मंदिरों में नागर तथा द्रविड़ शैलियों का मिश्रण मिलता है। अधिकांश मंदिर विष्णु तथा शिव के हैं । एहोल का विष्णु मंदिर अभी तक सुरक्षित अवस्था में है। यहां के हिंदू गुहा मंदिरों में सबसे प्रसिद्ध सूर्य का एक मंदिर है जो 'लाढ खां' के नाम से प्रसिद्ध है। यह 50 वर्ग फीट में बना है तथा इसकी छत चपटी है। छत में एक छोटा वर्गाकार गर्भगृह तथा द्वारमंडप बने हुए हैं। मंदिर पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण में दीवारों से घिरा हुआ है। पूर्व में स्तंभ युक्त खुला बरामदा है। गर्भगृह पिछली दीवार से जुड़ा है। गर्भगृह के सामने स्तंभों पर टिका हुआ बरामदा तथा एक विशाल सभा-कक्ष है। छत बड़े पत्थरों से बनाई गई है।इस मंदिर में शिखर नहीं है। पर्सी गाउन का विचार है कि मूलत: यह विशाल सभामंडप रहा होगा जिसे बाद में मंदिर का रूप दे दिया गया। मंदिर के बीच में नंदी की विशाल मूर्ति स्थापित है किंतु अन्य भाग वैष्णव लक्षणों से युक्त है।

एक अन्य मंदिर दुर्गा का मंदिर है जो 60'×36' के आकार का है। इसे बौद्ध चैत्य ब्राह्मण मंदिर के रूप में परिवर्तित करने का प्रयास माना जा सकता है। इस मंदिर का निर्माण एक ऊंचे चबूतरे पर किया गया है तथा इसकी चपटी छत जमीन से 30 फीट ऊंची है। गर्भगृह के ऊपर एक शिखर है तथा बरामदे में दक्षिणापथ बनाया गया है। बाहरी स्तंभों में अनेक देव मूर्तियां बनी हुई है। इस प्रकार नागर शैली के शिखर तथा द्रविड़ वास्तुकला के विभिन्न तत्वों से बना यह मंदिर उत्तर तथा दक्षिण की वास्तुकला के समन्वय का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करता है। मूर्तिकार की दृष्टि से यह 'लाढ़ खां' से अधिक सुंदर है।

एहोल हच्चामल्लीगुड्डी मंदिर अधिकांशत दुर्गे मंदिर के समान ही है लेकिन यह छोटे आकार का है इसके गर्भ गृह तथा मंडप के बीच बना हुआ अंतराल इसकी नवीन विशेषता है। एहोल के सबसे बाद का मंदिर 'मेगुती' मंदिर है इसे रवि कीर्ति ने 634 ईस्वी में बनवाया था।

➢ पत्तडकल

बादामी तथा ऐहोल के मंदिरों के अतिरिक्त पत्तडकल में भी चालुक्य मंदिरों के सुंदर नमूने मिलते हैं यहां 10 मंदिरों के नमूने मिले हैं जिनमें चार उतरी(नागर) तथा 6 दक्षिणी (द्रविड़) शैली में बने हैं। इनका विवरण इस प्रकार है:

- उत्तर(नागर) शैली के मंदिर- पापनाथ, जबू, लिंग, कर सिद्धेश्वर तथा काशी विश्वनाथ।
- दक्षिणी(द्रविड़) शैली के मंदिर - संगमेश्वर, मल्लिकार्जुन, विरुपाक्ष, सुमेश्वर , गल्पनाथ तथा जैन मंदिर।

वास्तुकला के साथ-साथ चालुक्य काल में मूर्तिकला का भी विकास हुआ। मूर्तियों पर गुप्त तथा पल्लव शैली का प्रभाव दिखाई देता है। अधिकांश मूर्तियों का निर्माण मंदिरों को सजाने के लिए किया गया। गुफा स्तंभों तथा छतों पर बड़ी संख्या में मूर्तियां चित्रित की गई। इनमें पौराणिक कथाएं हैं।

अजंता तथा एलोरा दोनों ही चालुक्यों के राज्य में विद्यमान थे। संभवत: यहां की कुछ गुफाएं इसी काल की है। अजंता के गुहा चित्र में पुलकेशिन द्वितीय को पारसी दूत का स्वागत करते हुए दिखाया गया है। बादामी गुहा मंडलों में भी चित्रकारियां प्राप्त होती है जिनमें अजंता शैली का अनुपालन किया गया है।

7.4.2 भारतीय सामंतवाद;एक परिचय

भारतीय प्रसंग में सामंतवाद का प्रथम आत्मसात करण कर्नल जेम्स टॉड के हाथों हुआ, तत्कालीन यूरोपीय इतिहासकारों की भांति टॉड ने भी सामंतवाद को भू स्वामियों के दासों के रूप में परिभाषित किया। मध्यकालीन यूरोप में भूस्वामी ही अपने दासो की सुरक्षा और भरण पोषण का ध्यान रखता था और बदले में वे भू स्वामियों को सैन्य व अन्य सेवाएं प्रदान करते थे। एक प्रकार की निष्ठा की भावना

भी दासो और भू स्वामियों को अटूट बंधन में बांधती थी। टॉड ने अपने समय के राजस्थान में यूरोपीय सामंतवाद की इन संस्थाओं और पैटर्न को पूर्ण रूप से प्रचलित पाया ।

सामंतवाद शब्द का प्रयोग भारत में इतिहास की पुस्तकों में यंत्र तंत्र, प्राय: उससे जुड़े अस्पष्ट अर्थों के साथ प्रयुक्त होता रहा है। 1950 ईस्वी और 1960 ईस्वी के दशक के मध्य लिखे गए भारतीय इतिहास लेखन पर बढ़ते मार्क्सवादी प्रभाव के साथ ही इस शब्द की भूस्वामी दास संबंधों के साथ सबद्धता की विचारधारा में बदलाव आया और इसका प्रयोग एक आर्थिक अर्थ में, अर्थात इसे भारतीय वर्ग संरचना के विकास के संदर्भ में वर्णित किया गया। परंतु यह विरोधाभास था कि भारतीय सामंतवाद के प्रमुख लक्षणों में एक पूर्व औपनिवेशिक भारतीय इतिहास को मार्क्स द्वारा 'उत्पादन की एशियाई पद्धति' की श्रेणी में रखने पर मार्क्सवादी इतिहासकारों का असंतोष। हालांकि मार्क्स ने इस श्रेणी को स्वयं ही जन्म दिया था। इस परिकल्पना के निर्माण में प्रयुक्त काफी कुछ धारणाएं 18वीं और 19वी सदियों के पश्चिमी विचारकों के बीच आम थी। मार्क्स ने 'उत्पादन की एशियाई पद्धति' को वर्ग संघर्ष के माध्यम से इतिहास की सामान्य गति के प्रति एक अपवाद के रूप में ही लिया था। उसने बहुत से अन्य विचारकों की भांति ही यह माना कि एशिया में वर्ग नहीं थे क्योंकि सारी संपत्ति या तो राजा की थी या फिर समुदाय की अतः वहां कोई वर्ग संघर्ष नहीं था और ना ही समय के साथ परिस्थितियों में कोई परिवर्तन आया। इस प्रकार अपरिवर्तनशील पूर्व संबंधी धारणा बैरो द मान्टेसक्यू, जेम्स मिल; फ्रेडरिक हेगेल व अन्य प्रतिष्ठित विचारकों के दृष्टिकोण से मेल खाती है। उनके अनुसार वास्तव में गतिशीलता औपनिवेशिक शासन प्रणालियों की स्थापना के साथ ही आई, जब वे परिवर्तन संबंधी अवधारणाओं और विचारों को यूरोप से पूर्वी देशों में लाए। 1950 और 1960 के दशकों के भारतीय मार्क्सवादी इतिहासकार यह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे कि भारत या वास्तव में संपूर्ण एशिया की मानव जाति इतने बड़े काल खंडों तक अपरिवर्तनशील ही रही। उन्होंने उत्पादन की एशियाई पद्धति संबंधी

धारणा के प्रति अपनी नाराजगी पहले ही व्यक्त कर दी थी। उनमें से कुछ नए सामंतवाद की धारणा को अपनाया और उसे भारत पर लागू किया। इस काल के मार्क्सवादी इतिहासकारों में अग्रणी इरफान हबीब भारतीय सामंतवाद की धारणा से अपने आप को दूर रखते हैं। साथ ही उन्होंने उत्पादन की एशियाई पद्धति की मार्क्सवादी धारणा की तीव्र आलोचना भी की।

डी० डी० कोसांबी ने सामाजिक आर्थिक इतिहास के प्रसंग में सामंतवाद को एक महत्वपूर्ण स्थान दिया। उन्होंने 1956 ईस्वी में अपनी प्रथम प्रकाशित उल्लेखनीय पुस्तक एन इंट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ इंडियन हिस्ट्री में भारतीय इतिहास मैं सामंतवाद के विकास को एक द्विमार्गी प्रक्रिया के रूप में व्यक्त किया : उर्ध्वगामी सामंतवाद(Feudalism From above) और अधोगामी सामंतवाद(Feudalism From below) । उर्ध्वगामी सामंती आधार राजकर्मियों और ब्राह्मणों को भूमि और अधिकार प्रदान कर राजकीय निर्णयों का परिणाम थे; वहीं अधोगामी सामंतवाद अनेक व्यक्ति और लघु समूह दवारा सत्ता के ग्राम स्तरों से राजाओं के अधीन जमीदार और सामंत बनने का परिणाम था।

7.4.3 सामंती व्यवस्था का अर्थ

सामंती व्यवस्था गुप्तोत्तर काल को प्राचीन भारत के अन्य कालों से अलग करती है। सामंत का मूल अर्थ पड़ोसी होता है ,तथा इसका प्रयोग मौर्य काल में पड़ोसी शासकों के लिए कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा अशोक के अभिलेख में प्रयोग किया गया है। गुप्त काल के पहले इस शब्द का प्रयोग नीतिकारो द्वारा पड़ोस की भूमि संपत्ति के लिए किया जाता था। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद प्रशस्ति में वर्णित सीमावर्ती राजा भी सामंत के मूल अर्थ में आते हैं। गुप्त काल के समाप्त होते-होते तथा निश्चित रूप से छठी शताब्दी तक इसका एक नया अर्थ सामने आया। अब सामंत का अर्थ एक पराजित पर पुनर्स्थापित भेंट देने वाला राजा हो गया जो राज्य की सीमाओं के अंदर था।

7.4.4 सामंती व्यवस्था की उत्पत्ति

सामंतों की उत्पत्ति तथा विकास सामंतवादी व्यवस्था के विकास में एक महत्वपूर्ण कड़ी थी। जहां प्रारंभिक काल में प्रशासन का काम केंद्र द्वारा नियुक्त व्यक्ति देखता था, वही गुप्त काल के बाद यह काम पराजित पर पुनर्स्थापित राजाओं के पास आ गया, जो राजा के प्रति वफादार होते थे तथा भेंट भेजते थे। गुप्तोत्तर काल में यह प्रशासन व्यवस्था सीमांत प्रांतों में देखी जा सकती थी जबकि हर्ष तथा उसके बाद के काल में यह राज्य के केंद्र में भी पाई जाने लगी। सामंत अपने क्षेत्र में काफी स्वतंत्र होता था। शीघ्र ही उसने पुराने नायाबों को संपत्ति तथा सम्मान में पीछे छोड़ दिया ।

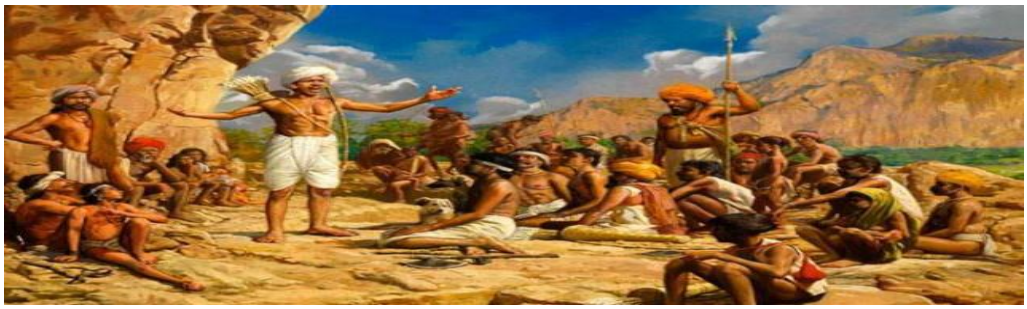

आकृति -3

आकृति -3 के द्वारा सामंती व्यवस्था को दर्शाता हुआ एक चित्र दिखया गया है जिसमें एक सामंत अपने अधीन लोगों को निर्देश दे रहा है। इन शक्तिशाली तत्वों को राज्य का अंग बनाने के उद्देश्य से इन्हें(सामंतों को) राजा के दरबार में ऊंचे पद दिए जाते थे। अतः वल्लभी के राजा जिसे हर्ष ने पराजित किया था न सिर्फ महा सामंत बने बल्कि महाप्रतिहार तथा महादंडनायक जैसे उच्च पदों पर भी गए। केंद्रीय दरबार के अधिकारियों ने भी इन पराजित राजाओं के बराबर सम्मान की मांग की तथा उन्होंने प्राप्त भी किया परंतु सिर्फ पदवियों से संतुष्ट न होकर इन अधिकारियों ने क्षेत्र की भी मांग की। यह भारत के सामंतीकरण की प्रक्रिया थी जिसे भारतीय सामंती स्वरुप माना जा सकता है।

सामंतीकरण की प्रक्रिया को निम्न दो बातों ने तेज किया-

- वेतन में देने के लिए मुद्रा का अभाव तथा

- यह विचार की राजा का सम्मान उसके सामंतचाकर के आकार पर निर्भर करता था।

अर्थशास्त्र जैसी पुरानी संहिता अधिकारियों के वेतन का विस्तृत ब्यौरा देती है तथा ह्वेनसांग बताते हैं की सातवीं शताब्दी में कुछ उच्च अधिकारी अपना वेतन नकद पाते थे। इसके बाद विश्व व्यापार में आई मंदी तथा मुद्रा के प्रचलन में कमी के कारण यह आवश्यक हो गया कि अधिकारियों को वेतन के स्थान पर गांव अथवा जिले का राजस्व प्रदान कर दिया जाए। कुछ समकालीन स्रोत हमें बताते हैं कि राजा ऐसे दान को रद्द करने में प्रसन्न होते थे खासकर अगर उस अधिकारी ने राजा को नाराज किया हो। परंतु आम तौर पर सामंतीकरण की प्रक्रिया केंद्रीय शासक से ज्यादा मजबूत थी।

सामंतवाद का उदय एवं विकास प्रथम शताब्दी के बाद ब्राह्मणों को दिए जाने वाले भूमि अनुदानों में देखा जा सकता है। गुप्त काल में उत्तर भारत में इनकी संख्या में वृद्धि हुई जो बाद के काल में और बढ़ती गई। हर्ष के काल में नालंदा बौद्ध विहार को 200 गांव का स्वामित्व प्राप्त था। ब्राह्मणों तथा मंदिरों को भूमि कर सौंपने का उद्देश्य अपने सरक्षकों के प्रति नागरिक एवं सैनिक सेवा नहीं बल्कि आध्यात्मिक सेवा प्रदान करना था। उन्हें वित्तीय अधिकार एवं कानून व्यवस्था तथा अपराधियों से जुर्माना वसूलने जैसे प्रशासनिक अधिकार सौंपे जाते थे। ह्वेनसांग के अनुसार राज्य के उच्च अधिकारियों का वेतन भूमि अनुदान के रूप में दिया जाता था लेकिन ऐसे साक्ष्य प्राप्त नहीं हुए हैं। संभवत : वे ऐसी वस्तु पर अंकित किए गए होंगे जो नष्ट हो गई होगी।

भूमिपतियों के एक वर्ग के निर्माण की यह प्रक्रिया पूरे देश में असामान्य थी। यह रिवाज सर्वप्रथम पहली सदी के लगभग महाराष्ट्र में प्रारंभ हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि चौथी शताब्दी में भूमि अनुदान मध्यप्रदेश के एक बड़े भाग में होता था। पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश में पांचवी छठी शताब्दी में, उड़ीसा में छठी सातवीं सदी में, आसाम में सातवीं सदी में, तमिलनाडु में आठवीं सदी में, तथा केरल में नवमी दसवीं सदी में, यह प्रथा महत्वपूर्ण हो गई थी। ब्राह्मणों के लिए आय के अतिरिक्त

स्रोत का पता लगाने के लिए तथा नए क्षेत्रों में कृषि के विस्तार के लिए भूमि अनुदान की प्रथा सबसे पहले सुदूर पिछड़े तथा कबीलाई क्षेत्रों में प्रारंभ की गई। उपयोगी पाने पर इसका विस्तार मध्य भारत या मध्य प्रदेश में किया गया जो देश का सभ्य भाग था तथा ब्राह्मणवादी समाज तथा सभ्यता का केंद्र था।

प्रारंभिक भारतीय सामंतवाद की एक और विशेष बात यह थी कि 10, 12 या 16 गांव या उनके गुणकों की आर्थिक इकाई की व्यवस्था करना। पहली दूसरी शताब्दी के मनु के नियम पुस्तक में यह कहा गया है कि 10 गांवों के संग्राहक को भूमि दान द्वारा वेतन देना चाहिए। ये इकाई राष्ट्रकूट तथा कुछ हद तक पाल राज्य में भी थी।

भारत में सामंतवाद का सामाजिक -आर्थिक पक्ष गुप्त काल से बाद के(जिन्हें ऊपर के तीन वर्णों का सेवक माना जाता था) कृषक के रूप में परिवर्तन के साथ जुड़ा हुआ है। पुराने बसाये गये क्षेत्रों में संभवत: शूद्रों को जमीन दी गई। पिछड़े क्षेत्रों में अनेक जनजातीय कबीलों को ब्राह्मणवादी व्यवस्था में भूमि अनुदान के द्वारा सम्मिलित किया गया तथा उन्हें शूद्र कहा गया। इसी कारण से ह्वेनसांग ने शूद्रों को किसान कहा तथा लगभग 4 शताब्दी के बाद अलबरूनी ने भी इसी बात को दोहराया।

7.4.5 प्रारंभिक सामंतवाद की भूमिका

प्रारंभिक सामंतवाद की ऐतिहासिक भूमिका कई कारणों से महत्वपूर्ण थी। सर्वप्रथम भूमि अनुदान द्वारा मध्य भारत, उड़ीसा तथा पूर्वी बंगाल में नए क्षेत्रों में कृषि का विस्तार संभव हो पाया। यही स्थिति दक्षिण भारत की भी थी, कुल मिलाकर प्रारंभिक सामंतवाद के काल में कृषि का काफी विस्तार हुआ। उद्यमी ब्राह्मणों ने पिछड़े तथा आदिवासी क्षेत्रों में कृषि के नए तरीकों को पहुंचाया। पुजारियों द्वारा कुछ परंपरा तथा विश्वासों को बढ़ावा देने से कबीलाई लोगों की प्रगति हुई। पुजारियों ने आदिवासियों को हल चलाने खाद का प्रयोग करने मौसम तथा पौधों का ज्ञान देकर खेती के विकास को मदद दी

विशेषकर बरसात के ज्ञान द्वारा। इसमें से अधिकांश बातें कृषि पराशर में अंकित है जो इस समय की रचना थी।

दूसरा भूमि अनुदान के द्वारा दान में दिए गए क्षेत्र का प्रशासन चलाने के लिए एक व्यवस्था मिली क्योंकि यह कार्य दान प्राप्त करने वाले का होता था। स्थापित तथा पिछड़े क्षेत्रों में धार्मिक दान से लोगों में स्थापित व्यवस्था के लिए वफादारी के भाव का विकास हुआ। दूसरी तरफ धर्मनिरपेक्ष सामंत युद्ध के समय सैनिकों द्वारा तथा क्षेत्र के प्रशासन द्वारा स्वामी की सेवा करते थे।

तीसरा भूमि अनुदान के द्वारा कबीलाई क्षेत्रों का ब्राह्मणीकरण हुआ तथा उन्हें उन्नत जीवन के लाभ मिले। इस अर्थ में सामंतवाद ने देश को जोड़ने का काम किया। ब्रह्मविवर्त पुराण के अनुसार सैकड़ों जातियों में तथा मिश्रित जातियों में चार वर्णों के विभाजन होने का मुख्य कारण इन कबीलाई लोगों का ब्राह्मणवादी व्यवस्था से सीधा संपर्क भूमि दान द्वारा स्थापित होना था।

अतः भारतीय सामंतवाद अनेक विकास चरणों से गुजरा। गुप्तकाल तथा उसके बाद की दो शताब्दियों में ब्राह्मणों तथा मंदिरों को भूमि अनुदान देने की परंपरा प्रारंभ हुई जिसका स्वरूप तथा संख्या पाल, प्रतिहार तथा राष्ट्रकूट राज्य में परिवर्तित होती रही। प्रारंभिक काल में सिर्फ आर्थिक अधिकार दिए जाते थे पर आठवीं शताब्दी के बाद मालिकाना हक भी दिया जाने लगा। ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दी में यह प्रक्रिया पूर्ण हुई, जब पूरा उत्तर भारत आर्थिक व राजनीतिक टुकड़ों में बट गया तथा किसी न किसी धार्मिक अथवा धर्मनिरपेक्ष व्यक्तियों को दान में दिया गया था जो इसे जागीर की तरह भोग रहे थे।

7.4.6 सामंतीकरण का परिणाम

सामंतीकरण के परिणामत: राजा का प्रभाव उसके केंद्रीय क्षेत्र में धीरे-धीरे कम होने लगा क्योंकि राजस्वदायक भूमि केंद्रीय प्रशासन के प्रभाव से दूर होने लगी। केंद्रीय शक्ति के कमजोर होने की

प्रक्रिया अन्य देशों में भी हुई पर भारत में यह राजस्व का अभिन्न अंग बन गया था। सामंतचक्र पर विशेष जोर से यह आवश्यक अंग बन गया था। समकालीन स्रोतों में राजा के दरबार में सामंतों के वैभव के प्रदर्शन का विशेष तरीका बन गया। सामंत तथा महासामंतों की संख्या से राजा के वैभव का पता चलता है परंतु इस तरह का सामंतचक्र अस्थिर था। केंद्रीय शक्ति के कमजोर पड़ते ही महासामंत स्वतंत्रता या सामंतचक्र के केंद्र में आने का प्रयास करने लगता था।

7.5 स्वयं प्रगति जांच (Check Your Progress)

i. पुष्यभूति वंश का महान शासक..... था।

ii. चालुक्यों की राजधानी.....थी।

iii. हर्षवर्धन की बहन का नाम..... था।

iv. हर्षवर्धन ने..... बौद्ध शाखा को संरक्षण प्रदान किया।

v. चालुक्य वंश का सबसे प्रतापी शासक..... था।

7.6 सारांश (Summary)

गुप्त काल भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग कहलाता है, क्योंकि इस युग में भारत देश प्रत्येक क्षेत्र जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, कला, वास्तुकला, व्यापार, वाणिज्य, धर्म, संस्कृति एवं साहित्य में उन्नति के शिखर पर था। किंतु इस काल के अंतिम शासकों के शासन के समय भारत पर विदेशी आक्रमणों की संख्या में बढ़ोतरी होती गई,और अंतिम गुप्त शासक अपने राज्य की रक्षा में विदेशी आक्रमणकारियों से निपटने में ही व्यस्त रहे जिससे आम जनजीवन तथा व्यापार वाणिज्य आदि अनेक क्षेत्रों में गिरावट देखी गई। स्कंद गुप्त के काल में हूणों ने आक्रमण किए जिससे वह अपने पूरे शासनकाल में उन्ही से निपटने में लगा रहा। गुप्तोत्तर काल में व्यापार में भारी गिरावट देखी गई। चीन से रेशम की तकनीक चुराकर ले जाने से भारतीय रेशम व्यापार में भी गिरावट आई। गुप्तोत्तर काल में सिक्कों का प्रचलन

भी बहुत कम हो गया था, तथा नगरों का पतन होना शुरू हो गया था। उत्तर गुप्त वंशों में प्रमुख रूप से मौखरि ,हूण,मैत्रक ,पुष्यभूति,गौड़ आदि राजवंश थे।

पुष्यभूति वंश के शासकों में सबसे प्रतापी हर्षवर्धन हुए, जिन्होंने 606 ईस्वी सन में राज सिहासन संभाला था। हर्षवर्धन के काल में शासन प्रबंध, आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति उत्तरी भारत में अच्छी थी। हर्षवर्धन की राजधानी तात्कालिक पूर्वी पंजाब के थानेश्वर नामक स्थान पर थी। उसी समय दक्षिण -पश्चिम भारत में चालुक्य वंश का उदय हुआ। चालुक्यों की राजधानी बादामी (वातापी) थी।इस वंश का सबसे प्रतापी शासक पुलकेशिन द्वितीय था। इन्होंने पुष्यभूति वंश के महान शासक हर्षवर्धन को हराया, उनको दक्षिणी अभियान के दौरान नर्मदा नदी पार नहीं करने दी। हर्षवर्धन को दक्षिण की ओर राज्य विस्तार नहीं करने दिया। चालुक्यों का शासन प्रबंध काफी कुछ गुप्तकालीन राजवंश से मिलता जुलता था। चालुक्य शासकों ने सामंती व्यवस्था को बढ़ावा दिया। इस काल में सामंतों ने अपने आप को काफी शक्तिशाली बना लिया था। कई सामंतों ने तो केंद्रीय सत्ता की कमजोरी का लाभ उठाकर अपने आप को स्वतंत्र भी घोषित कर दिया, जैसे दन्तिदुर्ग नामक सामंत ने अपने को स्वतंत्र शासक घोषित करके राष्ट्रकूट वंश की नींव रखी थी। चालुक्यों के समय में संस्कृति, धर्म तथा साहित्य के क्षेत्र में काफी उन्नति हुई। गुप्तोत्तर काल में सामंती करण ने भी अपने पांव पसारने शुरू कर दिए थे।

7.7 संकेतक शब्द (Keywords)

- **सामंतवाद**- एक ऐसी व्यवस्था जिसमें शासक अपने मातहत अधिकारियों, राजाओं व अन्य लोगों को उनकी सेवा के बदले में भूमि प्रदान करता है। इसके बदले ये लोग राजा को भू -राजस्व, सेना आदि अन्य सेवाएं प्रदान करते थे।

- **सहिष्णुता** - ऐसी उदारवादी विचारधारा जिसके अंतर्गत सभी धर्मों, जातियों को समान दृष्टि से देखा जाता है और किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता।
- **उपरिकर** - अस्थाई कृषकों पर लगने वाला कर उपरिकर कर कहलाता था।

7.8 स्वयं मूल्यांकन परीक्षण (Self- Assessment Test)

- गुप्तोत्तर काल में व्यापार का ह्रास हुआ। समझाइए।
- पुष्यभूति वंश की शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालिए।
- भारतीय इतिहास में हर्षवर्धन को अंतिम महान हिंदू सम्राट कहा जाता है। क्यों?
- चालुक्य वंश की उत्पत्ति पर संक्षिप्त नोट लिखें।
- चालुक्य वंश के समय की प्रशासनिक व्यवस्था को समझाइए।
- चालुक्य शासकों के समय भारत की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों पर प्रकाश डालिए।
- सामंतवाद का उदय क्यों हुआ? विस्तार पूर्वक समझाइए।
- सामंतवाद के परिणामों पर चर्चा कीजिए।

7.9 अपनी प्रगति की जांच हेतु उत्तर देखें (Answers to Check Your Progress)

i. हर्षवर्धन

ii. 2.बदामी

iii. राज्यश्री

iv. महायान

v. पुलकेशिन द्वितीय

7.10 संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (Refrences / Suggested Readings)

- Russel,Jesse;Cohn,Ronald (2013).Chalukya Dynasty.
- भारतीय सामंतवाद (रामशरण शर्मा)- राम कमल प्रकाशन।
- भारतीय इतिहास का परिचय(राजबलि पांडेय)चौखंभा विद्या भवन।
- भारत का इतिहास (के.कृष्ण)राजकमल प्रकाशन।
- डब्लू डब्लू डब्लू डॉट गूगल डॉट कॉम।

Subject -HISTORY	
Course Code: B.A.106	Author: हरि सिंह
अध्याय - 8	Vetter :
त्रिपक्षीय संघर्ष; पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट तथा चोल साम्राज्य	

अध्याय संरचना (Lession Structure)

8.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives)

8.2 परिचय (Introduction)

8.3 विषय- वस्तु के मुख्य बिंदु (Main Body of Text)

8.3.1 कन्नौज के लिए संघर्ष का कारण

8.3.2 त्रिपक्षीय संघर्ष के चरण

8.3.3 पाल वंश की उत्पत्ति

8.3.4 बंगाल का पाल राजवंश

8.3.5 पाल कालीन संस्कृति

8.3.6 गुर्जर प्रतिहार राजवंश (Gurjar- Pratihar Dynasty)

8.3.7 गुर्जर प्रतिहार वंश की उत्पत्ति (Origin of Gurjar- Pratihar Dynasty)

8.3.8 गुर्जर प्रतिहार वंश का राजनीतिक इतिहास (Political History of Gurjar Pratihar Dynasty)

8.3.9 गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य का पतन (Decline of Gurjar Pratihar Empire)

8.3.10 राष्ट्रकूट राजवंश का इतिहास (History of Rashtrakuta Dynasty)

8.3.11 राष्ट्रकूट राजवंश की उत्पत्ति तथा मूल स्थान (Origin and Prime location of Rashtrakuta Dynasty)

8.3.12 विभिन्न राष्ट्रकूट शाखाएं

8.3.13 राष्ट्रकूट साम्राज्य की स्थापना (Establishment of Rashtrakuta Empire)

8.3.14 राष्ट्रकूट राजवंश का शासन प्रबंध (Administration of Rashtrakuta Empire)

8.4 मुख्य पाठ के आगे का भाग (Further Main Body of The Text)

8.4.1 दक्षिण का चोल साम्राज्य

8.4.2 चोलों की प्रशासन प्रणाली

8.4.3 राज्य का स्वरूप

8.4.4 कार्यक्षेत्र

8.4.5 सेना

8.4.6 अर्थव्यवस्था/ आर्थिक तंत्र

8.4.7 प्रशासनिक तंत्र

8.4.8 न्याय व्यवस्था

8.4.9 स्थानीय स्वशासन

8.4.10 ग्रामीण संस्थाएं

8.5 स्वयं प्रगति जांच (Check Your Progress)

8.6 सारांश (Summary)

8.7 संकेतक शब्द (Keywords)

8.8 स्वयं मूल्यांकन परीक्षण (Self Assessment Test)

8.9 अपनी प्रगति की जांच हेतु उत्तर देखें (Answers to Check Your Progress)

8.10 संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (Refrences / Suggested Readings)

8.1 अधिगम उद्देश्य(Learning Objectives)

प्रस्तुत अध्याय को अधिगमित करने के उपरांत निम्न जानकारियों को अर्जित कर पाएंगे-

- भारतीय इतिहास में त्रिदलीय संघर्ष के बारे में जान पाएंगे।
- गुर्जर प्रतिहार, पाल एवं राष्ट्रकूट राजवंश के बारे में जान जाएंगे।
- दक्षिण भारत के चोल साम्राज्य की जानकारी हासिल कर पाएंगे।
- चोल शासकों की प्रशासन व्यवस्था को समझ पाएंगे।
- चोल राज्य की आर्थिक व्यवस्था को समझ पाएंगे।
- चोल काल में दक्षिण भारत में वे हुए धार्मिक, सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक सुधारों के बारे में जान जाएंगे।

8.2 परिचय (Introduction)

750 और 1000 ईस्वी के मध्य उत्तर भारत और दक्षिण भारत में कई शक्तिशाली साम्राज्यों का उदय हुआ। इनमें से तीन पक्ष ऐसे थे, जिन्होंने आपस में संघर्ष किया यह संघर्ष कन्नौज पर आधिपत्य के लिए हुआ। इनमें से एक था पाल वंश, जिसका नवीं सदी के मध्य तक पूर्वी भारत में एक शक्तिशाली राज्य था, पश्चिमी भारत और उतरी गंगा की घाटी में 10 वीं सदी तक प्रतिहार राजवंश का प्रभुत्व था। उधर दक्षिण भारत में राष्ट्रकूटों का वर्चस्व था, जो समय-समय पर उत्तर भारत के प्रदेशों में भी अपना आधिपत्य स्थापित कर लेते थे। वस्तुतः इन तीनों शक्तिशाली साम्राज्यों के मध्य संघर्ष चलता रहा। इनमें राष्ट्रकूट न केवल उस काल का सबसे शक्तिशाली साम्राज्य था बल्कि उसने आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में उत्तर और दक्षिण भारत के मध्य सेतु का भी काम किया। सातवीं सदी के पूर्वार्द्ध से ही कन्नौज भारत की राजधानी का केंद्र बिंदु रहा था। उस काल में उतरी भारत पर आधिपत्य का कोई भी दावा कन्नौज पर अधिकार के बिना निरर्थक था। कन्नौज तथा मध्यदेश का सामरिक महत्व भी था, क्योंकि पालों के लिए मध्य भारत तथा पंजाब और प्रतिहारों एवं राष्ट्रकूटों के लिए गंगा दोआब में पहुंचने के मार्ग पर कन्नौज से ही नियंत्रण होता था। इसके अतिरिक्त गंगा- यमुना दोआब जो प्रचुर मात्रा में राजस्व का स्त्रोत था। अतः इस पर बिना नियंत्रण किए कोई भी साम्राज्य शक्तिशाली नहीं हो सकता था।

सातवीं शताब्दी में भारत में हर्षवर्धन का शासन था और उस समय कन्नौज पर कब्जा ही उत्तरी भारत का मुख्य नियंत्रक माना जाता था। उस समय भारत में तीन महत्वपूर्ण शक्तियां शासन कर रही थी, जो गुर्जर प्रतिहार, राष्ट्रकूट और पाल के नाम से जानी जाती थी। इन तीनों महा शक्तियों ने कन्नौज पर अपना आधिपत्य करने के लिए जो 200 वर्षों तक संघर्ष किया उसे त्रिपक्षीय संघर्ष कहा जाता है। अंतिम रूप से इस संघर्ष में गुर्जर प्रतिहार जो गुजरात का प्रतिनिधित्व करते थे, विजयी हुए।

आकृति - 1

आकृति एक में दिये गये मानचित्र द्वारा कनौज की स्थिति को दर्शाया गया है। मानचित्र से हमे पता चल रहा है कि तीनों दलों (गुर्ज्जर प्रतिहार ,पाल एवं राष्ट्रकूटों) के लिये कनौज का महत्व कितना अधिक था। हर्षवर्धन के शासनकाल से ही कन्नौज पर नियंत्रण उतरी भारत पर प्रभुत्व का प्रतीक माना जाता था। अरबों के आक्रमण के उपरांत भारतीय प्रायद्वीप के अंतर्गत तीन महत्वपूर्ण शक्तियां थी गुजरात एवं राजपूताना के गुर्जर- प्रतिहार दक्कन के राष्ट्रकूट एवं बंगाल के पाल। इन तीनों ही पक्षों के आपसी टकराव के कारण इन तीनों की शक्तियां कमजोर होती गई और भारत पर विदेशियों को आक्रमण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आपसी झगड़े में तीनों दल आंतरिक रुप से कमजोर होते गए तथा बाह्य आक्रमणों को नहीं झेल पाये।

दक्षिण भारत में जनजीवन पर पहले पहल संगम साहित्य से ही स्पष्ट प्रकाश पड़ता है। संगम साहित्य दक्षिण भारत के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, इतिहास तथा संस्कृति के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण

स्त्रोत है। ऐसा लगता है कि ईसा पूर्व प्रथम सदी तक जहां उत्तर पश्चिम दक्षिण में सातवाहन तथा वाकाटका का, वहां सुदूर दक्षिण में तीन प्रमुख राज्यों पांड्य, चेर और चोलों का उद्भव हो चुका था जैसा कि संगम साहित्य से स्पष्ट हैं। कलिंग के शासक खाखेल के प्रसिद्ध हाथी गुफा अभिलेख में भी तमिल प्रदेश के 3 राज्यों के संग (त्रामिर देश संघटम) को खाखेल शासक द्वारा पराजित करने का वर्णन आता है। किंतु इससे भी पहले चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में मेगस्थनीज ने पांड्यों के राज्यों का उल्लेख किया है। संगम कवियों ने इन तीन राज्यों की प्राचीनता तथा सम्मानित परंपरा प्रदान करने के लिए इनका संबंध महाभारत के कौरव पांडवों से जोड़ा है। उदाहरण स्वरूप इस साहित्य में प्रथम चेर शासक उदयनजेरल द्वारा कुरुक्षेत्र के युद्ध में भाग लेने वाले सभी योद्धाओं को भोजन कराने की बात कही गई है, वह बात दूसरी है कि इन घटनाओं का ऐतिहासिक तथ्यों से कोई मेल नहीं खाता। इन तीन बड़े राज्यों के अतिरिक्त अनेक छोटे छोटे राज्य भी इस क्षेत्र में विद्यमान थे जो परिस्थिति अनुरूप इन तीन बड़े राज्यों में से किसी न किसी राज्य की युद्ध में सहायता करते रहते थे। संगम कवियों ने इन छोटे राज्यों की उनके राजाओं की उदारता के कारण काफी प्रशंसा की है तथा इन राजाओं के लिए उन कवियों ने वेल्लल (संरक्षक) नाम प्रयुक्त किया है।

दक्षिण भारत के इन राज्यों के उद्भव की एक विशेषता यह है कि ये 'राज्य कुल संघ' प्रतीत होते हैं। इस प्रकार के राज्य उत्तरी भारत में भी रहे हैं। जिन्हें कौटिल्य ने 'कुल संघ' कहां है। ऐसे राज्य में कुल के विभिन्न परिवारों के व्यस्क पुरुष राज्य कार्य में भाग लेते थे। संगम कवियों ने लंबे गृह युद्ध का वर्णन किया है। चोल राज्य में उत्तराधिकार के युद्ध में नव शासकों की मृत्यु हो गई थी। प्रस्तुत अध्याय में हम गुर्जर-प्रतिहार,राष्ट्रकूट ,पाल व दक्षिण भारत के चोल शासकों के बारे में विस्तार से जानेंगे।

8.3 विषय- वस्तु के मुख्य बिंदु (Main Body of Text)

8.3.1 कन्नौज के लिए संघर्ष का कारण

छठी शताब्दी में गुप्त साम्राज्य के पतन के साथ ही पाटलिपुत्र राज्य के अस्तित्व का महत्व भी समाप्त हो गया था। इस कारण कन्नौज को यह स्थान लेने में ज्यादा देर नहीं लगी। कन्नौज के प्रति आकर्षण का कारण, इसका गंगा- यमुना के बीच में स्थित होने के कारण उत्तरी भारत का सबसे अधिक उपजाऊ क्षेत्र का होना था, इसके अतिरिक्त गंगा के किनारे बसा होने के कारण, और रेशम उद्योग का केंद्र होने के कारण, इस क्षेत्र का व्यापारिक महत्व भी काफी अधिक था, इसलिए कन्नौज उस समय की राजनीतिक महत्वाकांक्षा पूरा करने का एकमात्र माध्यम था। इसके अतिरिक्त हर्षवर्धन की राजधानी होने के कारण उत्तर भारत में कन्नौज को एक महत्वपूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त था।

8.3.2 त्रिपक्षीय संघर्ष के चरण

प्रतिहार शासक वत्सराज द्वारा कन्नौज पर आक्रमण के साथ ही संघर्ष की शुरुआत हुई। कन्नौज का शासक इंद्रायुद्ध पराजित हुआ तथा उसने वत्सराज का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। प्रतिहार गंगा-यमुना के संगम तक पहुंच गए थे और पालों का प्रभाव प्रयाग तक बढ़ गया था। परिणाम स्वरूप युद्ध अवश्यंभावी हो गया। प्रतिहार नरेश वत्सराज एवं पाल नरेश धर्मपाल के मध्य उत्तर भारत पर विस्तार के लिए संघर्ष आरंभ हो गया। राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव ने इस संघर्ष मे हस्तक्षेप किया एवं सबसे पहले वत्सराज को पराजित किया। त्रिपक्षीय संघर्ष में राष्ट्रकूट ही दक्षिण भारत की ऐसी पहली शक्ति थी जिसने उत्तर भारत की राजनीति में हस्तक्षेप किया तथा दक्षिण से उत्तर भारत पर आक्रमण किया। संभवतः धर्मपाल ने भी ध्रुव का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। फिर ध्रुव दक्षिण को लौट गया। इन घटनाओं से अंततः धर्मपाल लाभान्वित हुआ। धर्मपाल ने इन घटनाओं का लाभ उठाते हुए कन्नौज पर आक्रमण कर इंद्रायुद्ध को अपदस्थ कर दिया तथा उसकी जगह चक्रायुद्ध को कन्नौज का शासक

नियुक्त किया। चक्रायुद्ध ने धर्मपाल का आधिपत्य स्वीकार कर लिया तथा धर्मपाल ने 'उत्तरपथस्वामिन' की उपाधि धारण की हालांकि इन घटनाओं के बारे में स्पष्ट तिथि का अभाव है।

त्रिपक्षीय संघर्ष के द्वितीय चरण में दो शक्तियां ही विद्यमान रही। बंगाल का धर्मपाल और गुर्जर-प्रतिहार का वत्सराज। कन्नौज क्षेत्र में इस समय आयुध वंश के दोनों भाई इन्द्रायुद्ध और चक्रायुद्ध आपस में संघर्षरत थे। कन्नौज नरेश चक्रायुद्ध को पाल नरेश के सरंक्षण के कारण स्वामित्व प्राप्त हुआ था।

त्रिपक्षीय संघर्ष के तृतीय चरण में प्रतिहार शासक नागभट्ट द्वितीय ने 806-807 ईस्वी के आसपास कन्नौज पर आक्रमण किया तथा चक्रायुद्ध और धर्मपाल को पराजित कर 810 ईस्वी में कन्नौज को अपनी राजधानी बना लिया। धर्मपाल अब राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय से मिल गया तथा गोविंद तृतीय ने कन्नौज पर आक्रमण किया तथा नागभट्ट द्वितीय को पराजित किया। इसके पश्चात गोविंद तृतीय दक्षिण वापस चला गया। प्रतिहार और पालों की प्रतिद्वंदिता पुनः प्रारंभ हो गई जिसमें पालों का पक्ष मजबूत था।

इस समय प्रतिहार वंश के शासन की बागडोर एक अत्यंत पराक्रमी शासक मिहिरभोज के हाथों में थी तथा इसी ने प्रतिहार शक्ति का पुनरुत्थान किया, उसने 836 ईस्वी में कन्नौज पर आक्रमण किया किंतु देव पाल द्वारा पराजित हो गया 850 ईस्वी में देवपाल की मृत्यु के बाद पाल शक्ति का पतन होने लगा। इसी बीच मिहिरभोज ने अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली तथा अंततः 854 ईस्वी के आसपास कन्नौज पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। इस समय राष्ट्रकूट शासक अमोघवर्ष ने हस्तक्षेप नहीं किया क्योंकि चालुक्य शासक से उसका संघर्ष चल रहा था। कन्नौज पर अब प्रतिहार शासक शासन करने लगे।

आकृति - 2 त्रिपक्षीय संघर्ष के तीन पक्ष

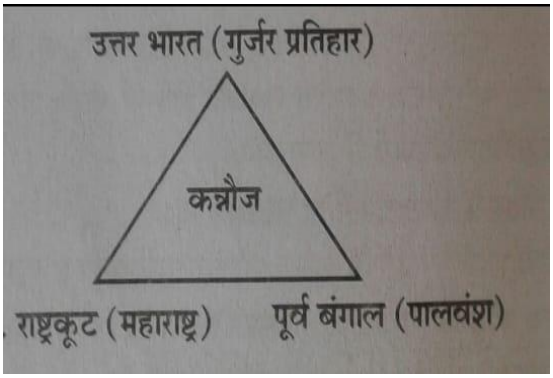

8.3.3 पाल वंश की उत्पत्ति

मध्यकालीन भारत के इतिहास में पाल साम्राज्य का एक महत्वपूर्ण शासन था। पाल वंश ने पूर्वी भारत में कई वर्षों (750-1174 ई.)तक शासन किया। पाल वंश की उत्पत्ति के संबंध में कुछ प्रलेखों से सूचनाएं प्राप्त हुई है जिनसे उनके सूर्यवंशी होने की जानकारी मिलती है। किंतु संध्याकार नंदी द्वारा रचित ग्रंथ रामपाल चरित में पाल शासकों को समुंदर देव की संतान बताया गया है। अतः यह कहा जा सकता है कि पाल वंश की उत्पत्ति को लेकर इतिहासकारों में मतभेद है।

8.3.4 बंगाल का पाल राजवंश

पाल वंश की स्थापना संभव है 750 ईस्वी के आसपास बंगाल(गौड़) में हुई थी। शशांक की मृत्यु के पश्चात लगभग एक शताब्दी तक बंगाल में अराजकता और अव्यवस्था का माहौल बना हुआ था। उसी समय क्षेत्र में फैली अराजकता से तंग आकर वहां के प्रमुख लोगों ने गोपाल को शासक चुना। यह पहला राजा था जिसका जनता के द्वारा निर्वाचन हुआ। उसने गौड़ में फिर से सुव्यवस्था स्थापित की तथा करीब 2 दशकों तक शासन किया। वह बौद्ध धर्म का अनुयाई था तथा उसने ओदंतपुरी (आधुनिक बिहार शरीफ)की स्थापना की थी। 770 ईस्वी में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र धर्मपाल राजा बना।

धर्मपाल ने बंगाल पर 770 ईस्वी से 810 ईस्वी तक शासन किया। उसने सर्वप्रथम राज्य का विस्तार किया। कुछ समय के लिए उसने कन्नौज पर अपना अधिकार स्थापित किया तथा उसने 'उत्तरपथस्वामिन' की उपाधि धारण की। वह बौद्ध धर्म का अनुयायी था, वह अन्य धर्मों के प्रति भी सहिष्णु था। बिहार और आधुनिक पूर्वी उत्तर प्रदेश पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के लिए पालों और प्रतिहारों के मध्य संघर्ष चलता रहा। यद्पि बंगाल के साथ-साथ बिहार पर पालों का ही अधिक समय तक नियंत्रण कायम रहा।

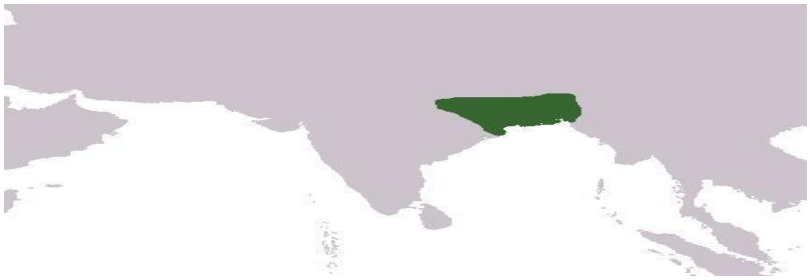

आकृति - 3

आकृति 3 में दर्शाया गया मानचित्र हमें पाल साम्राज्य की स्थिति को स्पष्ट कर रहा है। धर्मपाल का उत्तराधिकारी उसका पुत्र देवपाल अगला शासक बना। देवपाल ने 810 से 850 ईस्वी तक शासन किया तथा इसने भी साम्राज्य विस्तार की नीति जारी रखी। उसने मुंगेर को अपनी राजधानी बनाया तथा प्राग- ज्योतिषपुर(असम) और उड़ीसा के कुछ हिस्सों को अपने साम्राज्य में मिला लिया। संभवतः आधुनिक नेपाल के एक हिस्से पर भी पाल प्रभुत्व स्थापित हो गया तथा उसने तिब्बत तथा दक्षिण पूर्व एशिया के शैलेंद्र साम्राज्य(सुमात्रा) से अपना सांस्कृतिक एवं व्यापारिक संबंध बनाए रखा। सुमात्रा के एक शासक बलपुत्रदेव ने उससे नालंदा में एक मठ की स्थापना की अनुमति भी प्राप्त की। अरब यात्री सुलेमान ने देव पाल के शक्ति का वर्णन एवं साम्राज्य विस्तार की जानकारी दी है। देवपाल की मृत्यु के बाद पाल वंश का पतन शुरू हो गया। उसके उत्तराधिकारी नारायणपाल को प्रतिहार शासन

मिहिरभोज तथा महेंद्र पाल के हाथों पराजय का सामना करना पड़ा तथा उसने उनके हाथों मगध का क्षेत्र भी खो दिया। उसके उत्तराधिकारी राज्यपाल ने राष्ट्रकूटों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करके खोए हुए क्षेत्र को पुनः प्राप्त किया। अंतिम पाल शासकों के बारे में निम्न जानकारियां मिलती है-

- पाल वंश का पुनरुद्धार महीपाल के द्वारा हुआ किंतु चोल शासन राजेंद्र प्रथम के आक्रमण (1022-23) से राज्य को सामाजिक आर्थिक क्षति भुगतनी पड़ी। महीपाल का उत्तराधिकारी नयपाल था जिसने प्रारंभ में कलचुरियों से युद्ध किया किंतु बाद में कलचुरी राजकुमारी से विवाह कर लिया।
- नयपाल की मृत्यु के बाद अव्यवस्था फैल गई जिसका अंत रामपाल ने किया। उसने बंगाल असम उड़ीसा पर पुनः नियंत्रण स्थापित किया किंतु सेन शासकों के हाथों पूर्वी बंगाल तथा मिथिला को खो दिया । संध्याकर नंदी के रामपाल चरित का नायक वही है।
- पाल वंश का अंतिम शासक गोविंद पाल था। यह संभवत: बख्तियार खिलजी के आक्रमण के समय बंगाल में शासन कर रहा था, हालांकि यह नाम मात्र का शासक था तथा 12 वीं शताब्दी के अंत में बंगाल का पाल राज्य सेन वंश के अधिकार में चला गया।

8.3.5 पाल कालीन संस्कृति

मूर्ति कला: पाल काल में कांस्य एवं प्रस्तर मूर्ति कला की एक नवीन शैली का उदय हुआ। धीमन और वित्त पाल ने मूर्ति कला के क्षेत्र में अपना विशेष योगदान दिया जो धर्मपाल और देव पाल के समकालीन थे। इस समय की कांस्य मूर्तियां ढ़लवा किस्म की है। इसके साक्ष्य नालंदा तथा कुकी हार(गया के निकट) से मिले हैं, यह मूर्तियां मुख्य रूप से बुद्ध , बोधिसत्व, मंजुश्री, मैत्रेय तथा तारा की है। हालांकि इस काल की विष्णु, बलराम, सूर्य ,उमा, महेश्वर, गणेश आदि हिंदू देवी देवताओं की मूर्तियां

भी मिलती है। बोध गया में अवस्थित चतुर्भुज महादेव की मूर्ति धर्मपाल के शासन काल में निर्मित हुई।

शिक्षा एवं साहित्य: पाल वंश के शासकों ने नालंदा,, ओदंतपुरी, सोमपुरी आदि में बौद्ध विहार एवं भवन बनवाएं। गोपाल ने नालंदा में बौद्ध विहार बनवाया था। धर्मपाल ने विक्रमशिला और सोनपुर के विहारों की स्थापना तथा नालंदा महाविहार को 200 गांव दान में दिए थे। पाल शासकों ने तिब्बत चीन और दक्षिण पूर्व एशिया के शैलेंद्र राज्य (सुमात्रा) से मित्रता की थी। बौद्ध विद्वान अतीशदीपकर ने तिब्बत जाकर वहां महायान मत का प्रचार प्रसार किया।

पाल स्थापत्य एवं चित्रकला: इस काल में वास्तुकला मुख्यत: ईट पर आधारित थी। नालंदा विश्वविद्यालय ईटों से निर्मित है। बिहार एवं बंगाल में मिले अवशेषों में चैत्यो और बिहारों के साथ-साथ तालाबों का भी निर्माण करवाया गया था।

इस काल के चित्र मुख्यतः ताड़ पत्र पर बने हुए हैं। इनमें काले, नीले, लाल, बैंगनी तथा हल्के गुलाबी रंगों का प्रयोग हुआ है। पाल कालीन चित्रकला पर तांत्रिक प्रभाव स्पष्टत: परिलक्षित होता है नालंदा से कुछ भिन्न चित्र भी प्राप्त हुए हैं।

दक्षिण पूर्व एशिया के साथ पाल शासकों के व्यापारिक और सांस्कृतिक संबंध थे दक्षिण पूर्व एशिया के साथ व्यापार काफी लाभदायक था।

8.3.6 गुर्जर प्रतिहार राजवंश(Gurjar- Pratihar Dynasty)

गुर्जर प्रतिहार वंश के इतिहास के साधन(tools of history for Gurjar- pratihar dynasty)

अग्निकुल के राजपूतों में सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रतिहार वंश था जो गुर्जरों की शाखा से संबंधित होने के कारण इतिहास में गुर्जर प्रतिहार कहा जाता है। इस वंश की प्राचीनता पांचवी सदी तक जाती हैं।

पुलकेशिन द्वितीय के एहोल लेख में गुर्जर जाति का उल्लेख सर्वप्रथम हुआ है। बाण के हर्षचरित में भी गुर्जरों का उल्लेख किया गया है। चीनी यात्री ह्वेनसांग कु- चे- लो (गुर्जर) देश का उल्लेख करता है जिसकी राजधानी पि- लो- मो- ली अर्थात भीनमल मे थी।

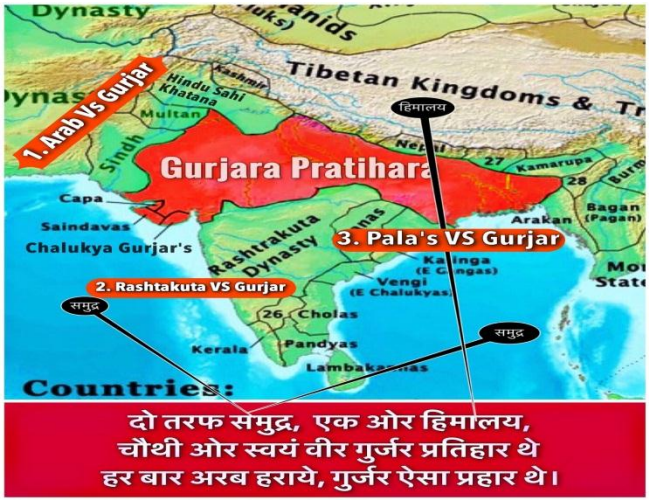

आकृति - 4

उपरोक्त आकृति 4 से हमें गुर्ज्जर प्रतिहार वंश द्वारा शासित क्षेत्रों का पता चलता है। इनका साम्राज्य दो तरफ से समुंदर से तथा एक ओर से हिमालय पर्वत से घिरा हुआ था। गुर्जर प्रतिहार वंश के इतिहास के प्रमाणिक साधन उसके बहुसंख्यक अभिलेख हैं। इनमें सर्वाधिक उल्लेखनीय मिहिर भोज का ग्वालियर अभिलेख हैं जो एक प्रशस्ति के रूप में है। इसमें कोई तिथि अंकित नहीं है। यह प्रतिहार वंश के शासकों की राजनीतिक उपलब्धियों तथा उनकी वंशावली को ज्ञात करने का मुख्य साधन है। इसके अतिरिक्त इस वंश के राजाओं के अन्य अनेक लेख मिलते हैं जो न्यूनाधिक रूप में उनके काल की घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं। प्रतिहारों के समकालीन पाल तथा राष्ट्रकूट वंश के लेखों से प्रतिहार शासकों का उनके साथ संबंधों का ज्ञान होता है। उनके सामंतों के लेख भी मिलते हैं जो उनके साम्राज्य विस्तार तथा शासन संबंधी घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं।

प्रतिहार युग में अनेक साहित्यिक कृतियों की रचना हुई। इनके अध्ययन से भी तत्कालीन राजनीति तथा संस्कृति का ज्ञान होता है। संस्कृत का प्रसिद्ध विद्वान राजशेखर प्रतिहार राजाओं महेंद्र पाल प्रथम तथा उसके पुत्र महीपाल प्रथम के दरबार में रहा था। उसने काव्यमीमांसा, कर्पूरमंजरी, विद्धशालभंजिका, बाल रामायण भुवनकोश आदि ग्रंथों की रचना की थी। इनके अध्ययन से तत्कालीन समाज एवं संस्कृति का ज्ञान होता है। जयानक कवि द्वारा रचित 'पृथ्वीराजविजय' से पता चलता है कि चाहमान शासक दुर्लभराज प्रतिहार वत्सराज का सामंत था, तथा उसकी ओर से पालों के विरुद्ध संघर्ष किया था। जैन लेखक चंद्रप्रभुसूरि के ग्रंथ 'प्रभावकप्रशस्ति' से नागभट्ट द्वितीय के विषय में कुछ सूचनाएं मिलती है।

कश्मीरी कवि कल्हण की 'राजतरंगिणी' से मिहिर भोज की उपलब्धियों का ज्ञान प्राप्त होता है। समकालीन अरब लेखकों के विवरण भी प्रतिहार इतिहास पर कुछ प्रकाश डालते हैं। इनमें सुलेमान का विवरण उल्लेखनीय हैं। वह मिहिर भोज की शक्ति एवं उसके राज्य की समृद्धि की प्रशंसा करता है। दूसरा लेखक अलमसूदी का है जो 10 वीं शताब्दी के प्रारंभ में पंजाब आया था। उसके विवरण से महीपाल प्रथम के विषय में कुछ सूचनाएं प्राप्त होती है। प्राय: सभी मुसलमान लेखक प्रतिहारों की शक्ति, देशभक्ति तथा समृद्धि की प्रशंसा करते हैं। इस प्रकार अभिलेख, साहित्य तथा अरब लेखकों के विवरण, इन तीनों का उपयोग हम प्रतिहार वंश के इतिहास का अध्ययन करने के लिए करते हैं।

8.3.7 गुर्जर प्रतिहार वंश की उत्पत्ति(Origin of Gurjar- Pratihar Dynasty)

विभिन्न राजपूत वंशों की उत्पत्ति के सम्मान गुर्जर प्रतिहार वंश की उत्पत्ति भी विवाद ग्रस्त हैं। राजपूतों की उत्पत्ति के विदेशी मत के समर्थन में विद्वान जनों ने उसे 'खजर' नामक जाति की संतान कहा है जो हूणों के साथ भारत आई थी। इस मत का समर्थन सबसे पहले कैंपबेल तथा जैक्सन ने किया और बाद में भंडारकर तथा त्रिपाठी आदि भारतीय विद्वानों ने भी इसे पुष्ट कर दिया। किंतु यह

मत कोरी कल्पना पर आधारित है क्योंकि विदेशी आक्रमणकारियों में खजर नामक किसी भी जाति के विषय में हमें भारतीय अथवा विदेशी साक्ष्य से कोई भी सूचना नहीं मिलती। खजर तथा गुर्जर या गुर्जर में शब्दों के अतिरिक्त कोई भी साम्य नहीं लगता।

सी. वी. वैद्य, जी. एस. ओझा, दशरथ शर्मा जैसे अनेक विद्वान गुर्जर प्रतिहारों को भारतीय मानते हैं। वे इस शब्द का अर्थ गुर्जर देश का प्रतिहार अर्थात शासक लगाते हैं। के. एम. मुंशी ने विभिन्न उदाहरणों से यह सिद्ध किया है की गुर्जर शब्द स्थान वाचक है जातिवाचक नहीं। गुर्जर शब्द का उल्लेख पांचवी छठी सदी से मिलने लगता है।

इन विद्वानों का विचार है कि यदि गुर्जर जाति विदेशों से आकर भारतीय क्षत्रिय समाज में समाहित होती तो उसका पुराना नामोनिशान बिल्कुल समाप्त नहीं होता। भारत के शास्त्रकारों ने विदेशियों को सदा पद प्रदान किया है। हूणों को म्लेच्छ कहा गया है। किंतु जहां तक गुर्जरों का प्रश्न है उन्हें सर्वत्र ब्राह्मण कहा गया है।

ह्वेनसांग गुर्जर नरेश को क्षत्रिय बताता है। पृथ्वीराजरासो में अग्निकुल के राजपूतों की जो कथा मिलती है उसकी ऐतिहासिकता संदिग्ध है। दशरथ शर्मा, ओझा आदि ने बताया है कि इस कथा का उल्लेख रासो की प्राचीन पांडुलिपियों में अप्राप्य है। इस प्रकार खजर जाति से गुर्जरों की उत्पत्ति सिद्ध नहीं होती है।

साहित्य अथवा इतिहास में कहीं भी उन्हें विदेशियों से नहीं जोड़ा गया है। उनके लेखों से जो संकेत मिलते हैं उनके आधार पर हम उन्हें ब्राह्मण मूल का स्वीकार कर सकते हैं, जिन्होंने कालांतर में क्षत्रिय धर्म ग्रहण कर लिया था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्रतिहारी नामक वैदिक याजकों का उल्लेख मिलता है। लगता है उन्होंने ही बाद में अपनी कमियों को छोड़कर क्षत्रियों की वृत्ति अपना ली तथा अपने को राम के भाई लक्ष्मण से संबद्ध कर लिया। गुर्जर प्रतिहारों ने आठवीं शताब्दी से लेकर 11 वीं

शताब्दी के प्रारंभ तक शासन किया। ग्वालियर अभिलेख में इस वंश के शासक राम के भाई लक्ष्मण जो उनके प्रतिहार(द्वारपाल) थे, का वंशज होने का दावा करते हैं।

कुछ विद्वानों के अनुसार इस वंश का आदि शासक राष्ट्रकूट राजाओं के यहां पर प्रतिहार के पद पर काम करता था अतः इन्हें प्रतिहार कहा गया। गुर्जर प्रतिहारों का मूल स्थान निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। स्मिथ, ह्वेनसांग के आधार पर उनका आदि स्थान आबू पर्वत के उत्तर पश्चिम में स्थित भीममल मानते हैं। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार उनका मूल निवास स्थान उज्जैनी(अवंती) था।

8.3.8 गुर्जर प्रतिहार वंश का राजनीतिक इतिहास (Political History of Gurjar Pratihar Dynasty)

नागभट्ट प्रथम

गुर्जर प्रतिहार वंश का संस्थापक नागभट्ट प्रथम (730-756 ईस्वी) था। वह एक पराक्रमी शासक था। ग्वालियर अभिलेख से पता चलता है कि उसने एक शक्तिशाली म्लेच्छ शासक की विशाल सेना को नष्ट कर दिया। यह म्लेच्छ संभवतः सिंध का अरब शासक था। इस प्रकार नागभट्ट ने अरबों के आक्रमण से पश्चिमी भारत की रक्षा की तथा उनके द्वारा रोंदे गये अनेक प्रदेशों को पुनः जीत लिया। ग्वालियर लेख में कहा गया है कि म्लेच्छ राजा की विशाल सेनाओं को दूर करने वाला मानो नारायण रूप में वह लोगों की रक्षा के लिए उपस्थित हुआ था।

ऐसा प्रतीत होता है कि नागभट्ट ने अरबों को परास्त कर भड़ौच के आसपास का क्षेत्र छीन लिया तथा अपनी ओर से चाहमान शासक भतृवड़ढ द्वितीय को वहां का शासक नियुक्त किया। हांसोट लेख से इसकी पुष्टि होती है, जो नागभट्ट के समय में जारी करवाया गया था। इसके पहले अरवी ने जयभट्ट को पराजित कर भड़ौच पर अपना अधिकार कर लिया था। किंतु नागभट्ट ने पुनः वही अपना अधिकार स्थापित कर भतृवड़ढ को शासक बनाया। नागभट्ट का समकालीन अरब शासक जुनैद था। मुस्लिम

लेखक अलबिलादुरी के विवरण से पता चलता है कि जुनैद को मालवा(उज्जैन) के विरुद्ध सफलता नहीं मिली थी। इस प्रकार गुजरात तथा राजपूताना के एक बड़े भाग का वह शासक बन बैठा।

वत्स राज

नागभट्ट प्रथम के पश्चात उसके दो भतीजों-कुक्कुक तथा देवराज ने शासन किया। वे दोनों निर्बल शासक थे जिनकी किसी भी उपलब्धि के विषय में में ज्ञात नहीं है। इस वंश का चौथा शासक वत्सराज(775-800 ईस्वी) हुआ जो देवराज का पुत्र था। वह एक शक्तिशाली शासक था जिसे प्रतिहार साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक माना जा सकता है। उसने कन्नौज पर आक्रमण कर वहां के शासक इन्द्रायुद्ध को हराया तथा उसे अपने अधीन कर लिया। ग्वालियर अभिलेख से पता चलता है कि उसने प्रसिद्ध भण्डी वंश को पराजित कर उसका राज्य छीन लिया। कुछ विद्वान इस वंश की पहचान हर्ष के ममेरे भाई भण्डि द्वारा स्थापित वंश से करते हैं। लेकिन यह संदिग्ध है क्योंकि हम यह निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि भण्डि ने कोई स्वतंत्र वंश अथवा राज्य स्थापित किया था । कुछ अन्य इतिहासकार इसे जोधपुर लेख में उल्लेखित भट्टीकुल बताते हैं। इस प्रकार इस विषय में कुछ निश्चित नहीं हो पाता।

वत्सराज को सर्वाधिक महत्वपूर्ण सफलता गोंड़ों के विरुद्ध प्राप्त हुई। राष्ट्रकूट नरेश गोविंद तृतीय के राधनपुर से प्राप्त अभिलेख से ज्ञात होता है की वत्सराज ने गौड़ देश के शासक को पराजित किया था। इसके अनुसार 'मदांध वत्सराज ने गौड़ की राजलक्ष्मी को आसानी से हस्तगत कर उसके दो राजछत्रों को छीन लिया था।'

जयानक कृत पृथ्वीराज विजय से पता चलता है कि उसके सामंत दुर्लभराज ने गौड़ देश पर आक्रमण कर विजय प्राप्त किया था। मजूमदार का विचार है कि प्रतिहारो तथा पालों के बीच युद्ध दोआब में कहीं

हुआ तथा प्रतिहार सेनाएं बंगाल में नहीं घुसी। यह वत्सराज की सबसे बड़ी सफलता थी। यह पराजित नरेश पालवंशी शासक धर्मपाल था।

इस प्रकार वत्सराज उत्तर भारत के एक विशाल भूभाग का स्वामी बन बैठा। परंतु राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव ने उस पर आक्रमण किया तथा युद्ध में बुरी तरह परास्त कर दिया। भयभीत होकर वत्सराज राजपूताना के रेगिस्तान की ओर भाग गया। राष्ट्रकूट लेखों- राधनपुर तथा बनी दिंदोरी से पता चलता है कि ध्रुव ने वत्सराज को पराजित करने के साथ-साथ उन दोनों श्वेत राजछत्रों को भी हस्त गत कर लिया जिन्हें उसने गौड़ नरेश से छीना था। ध्रुव का आक्रमण एक धावा मात्र था।

उत्तर में अपनी शक्ति का एहसास कराने के उपरांत वे स्वदेश लौट गया। ध्रुव के वापस लौटने के बाद भी वत्सराज अवंती पर अधिकार नहीं कर पाया तथा उसकी शक्ति निर्बल बनी रही। इसका लाभ उठाते हुए उसके पाल प्रतिद्वंदी धर्मपाल ने भी वत्सराज को परास्त किया। उसने कन्नौज से वत्सराज द्वारा मनोनीत शासक इन्द्रायुद्ध को हटाकर उसके स्थान पर चक्रायुद्ध को शासक बनाया। उसने कन्नौज में एक दरबार किया। जिसमें उत्तर भारत के अधीनस्थ राजाओं ने भाग लिया। इसमें वत्सराज को भी उपस्थित होने के लिए बाध्य होना पड़ा तथा उसकी स्थिति अधीन शासक जैसी हो गई।

नागभट्ट द्वितीय

वत्सराज के पश्चात उसका पुत्र नागभट्ट द्वितीय(800-833 ईस्वी) गुर्जर प्रतिहारों का राजा हुआ। वह अपने वंश की खोई प्रतिष्ठा पुन: स्थापित करने में जुटा। ग्वालियर लेख में उसकी उपलब्धियों का वर्णन मिलता है। उसके अनुसार उसने कन्नौज पर आक्रमण कर चक्रायुद्ध को यहां से भगा दिया तथा कन्नौज को अपनी राजधानी बनाया।

नागभट्ट ने सिंध, विदर्भ तथा कलिंग को भी जीता। लेख में कहा गया है कि इन देशों के राजाओं ने उसके सम्मुख उसी प्रकार आत्मसमर्पण कर दिया जिस प्रकार से पतंगे दीपशिखा के समक्ष करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व में पालों तथा दक्षिण में राष्ट्रकूटों की शक्ति से भयभीत होकर ही इन राज्यों ने प्रतिहार नरेश के समक्ष समर्पण किया होगा।

रामभद्र

नागभट्ट द्वितीय के बाद उसका पुत्र रामभद्र गद्दी पर बैठा। वह अत्यंत दुर्बल शासक था जिसने मात्र 3 वर्षों तक राज्य किया। उसके समय में प्रतिहारों को पालों के हाथों पराजय उठानी पड़ी। नारायण पाल के बादल लेख से सूचित होता है कि देवपाल ने गुर्जर राजाओं के घमंड को चूर चूर कर दिया था। यहां तात्पर्य रामभद्र से ही प्रतीत होता है। किंतु साम्राज्य के कुछ दूरस्थ प्रदेशों पर उसका अधिकार बना रहा।

मिहिर भोज प्रथम

रामभद्र का पुत्र और उत्तराधिकारी मिहिर भोज प्रथम(836-885 ईस्वी) इस वंश का सर्वाधिक महत्वपूर्ण शासक हुआ। वह उसकी पत्नी अप्पादेवी से उत्पन्न हुआ था। लेखों से उसके दो अन्य नाम प्रभास तथा आदिवराह भी मिलते हैं। उसके शासनकाल की घटनाओं की सूचना अनेक लेखों से प्राप्त होती है जिनमें से कुछ स्वयं उसी के तथा कुछ उसके उत्तराधिकारियों के हैं। उसका सर्व प्रमुख लेख ग्वालियर से मिलता है जो प्रशस्ति के रूप में है। लेखों के अतिरिक्त कल्हण तथा अरब यात्री सुलेमान के विवरणों से भी हम उसके काल की घटनाओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। राजा बनने के उपरांत मिहिर भोज का पहला महत्वपूर्ण कार्य साम्राज्य का सुदृढ़ीकरण था।

सर्वप्रथम उसने अपने पिता के निर्बल शासनकाल में स्वतंत्र हुये प्रांतों को पुनः अपनी अधीनता में किया। उसने मध्य भारत तथा राजपूताना में पुनः अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली। उसने कलचुरिचेदि तथा गुहिलोत वंशों के साथ मैत्री संबंध स्थापित किया। इन वंशों के राजाओं ने उसके अभियानों में सहायता दी। ग्वालियर लेख में कहा गया है कि 'अगस्त्य ऋषि ने तो केवल विंध्य पर्वत का विस्तार अवरुद्ध किया था किंतु इसने(भोज ने) कई राजाओं पर आक्रमण कर उसका विस्तार रोक दिया।'

उत्तर भारत में किए गए उसके अभियानों में गुहिल वंशी हर्षराज, जो उसका एक सामंत था, ने भोज की सहायता की थी। चाट्सू लेख के अनुसार उसने उत्तर भारत के राजाओं को परास्त कर भोज को घोड़े उपहार में दिए थे। यह भी वर्णित है कि उसने गौड़ नरेश को पराजित किया तथा पूर्वी भारत के शासकों से कर प्राप्त किया था।

कलचुरि वंशी गुणाम्बोधिदेव भी उसका सामंत था। पेहवा(पूर्वी पंजाब) लेख से सूचित होता है कि हरियाणा प्रदेश उसके राज्य में शामिल था। भोज का एक खंडित लेख दिल्ली में पुराना किला से मिलता है जो वहां उसके अधिकार का सूचक है।

बी. एन. पुरी का मत है कि उणा लेख में उल्लेखित बलवर्मा मिहिरभोज का काठियावाड़ में सामंत था जिसने अपने स्वामी की ओर से लड़ते हुए हूणों को हराया था। देवगढ़(झांसी) तथा ग्वालियर के लेखों से भोज का मध्य भारत पर अधिकार पुष्ट होता है। इस प्रकार अपने राज्यारोहण के पश्चात मिहिरभोज ने अपनी राजनीतिक स्थिति विभिन्न क्षेत्रों में काफी सुदृढ़ बना ली थी।

मिहिर भोज के समय में भी प्रतिहारों की पालों तथा राष्ट्रकूटों के साथ पुरानी प्रतिद्वंदिता चलती रही। मिहिर भोज दो पाल राजाओं देवपाल तथा विग्रहपाल का समकालीन था। एक और जहां पाल लेख प्रतिहारों पर विजय का विवरण देते हैं, वहीं दूसरी ओर प्रतिहार लेख पालों पर विजय का दावा प्रस्तुत करते हैं।

महेंद्र पाल प्रथम

मिहिर भोज प्रथम के बाद उसकी पत्नी चंद्रभट्टारिका देवी से उत्पन्न पुत्र महेंद्र पाल प्रथम(885-910 ईस्वी) शासक बना। उसने न केवल अपने पिता से उत्तराधिकार में प्राप्त साम्राज्य को अक्षुण्ण बनाए रखा, अपितु पूर्व में उसका विस्तार भी किया।

महेंद्र पाल प्रथम के शासनकाल से संबंधित घटनाओं की सूचना देने वाले लेख भोज से अधिक है। उसके कई सामंतों के लेखों में भी उसका उल्लेख मिलता है। लेखों में उसे परम भट्टारक, महाराजाधिराज, परमेश्वर कहा गया है। दक्षिणी बिहार तथा बंगाल के कई स्थानों से उसके लेख मिलते हैं

महीपाल

महेंद्र पाल के पश्चात प्रतिहार वंश के उत्तराधिकारी का प्रश्न कुछ विवाद ग्रस्त है। उसकी दो पत्नियां थी जिनसे 2 पुत्र भोज द्वितीय तथा महीपाल थे। महेंद्र पाल के बाद संभवत कुछ समय के लिए भोज द्वितीय ने शासन किया। उसे अपने सामंत चेदि नरेश कोकक्लदेव प्रथम से काफी सहायता मिली थी तथा संभवत: उसी की सहायता से भोज ने सिंहासन पर अधिकार जमा लिया था।

इसका संकेत कोकक्लदेव के बिल्हारी लेख में हुआ है जहां बताया गया है कि समस्त पृथ्वी को जीतकर उसने दो कीर्ति स्तंभ स्थापित किए दक्षिण में कृष्णराज तथा उत्तर में भोजदेव। बनारस दान पत्र में कहा गया है कि कोकक्ल ने भोज को अभय दान दिया था। किंतु भोज मात्र 2 वर्षों तक शासन कर पाया तथा शीघ्र ही उसका सौतेला भाई महीपाल शासक बना। उसे चंदेल वंश के राजा हर्षदेव से काफी सहायता मिली। संभवत:उसने भोज को पराजित किया तथा शासन पर अधिकार कर लिया। खजुराहो

लेख से पता चलता है कि 'हर्षदेव ने क्षितिपाल को सिंहासन पर पुनर्स्थापित किया था' यहां क्षितिपाल से तात्पर्य महीपाल से ही हैं।

उसने 912 ईस्वी से 944 ईस्वी तक शासन किया। उसका शासनकाल शांति एवं समृद्धि का काल रहा। उसने अपने साम्राज्य को अक्षुण्ण बनाए रखा तथा उसका कुछ विस्तार भी किया। गुजरात जैसे दूरवर्ती प्रदेश पर भी उसका अधिकार बना रहा तथा वही उसका सामंत धरणिवराह शासन करता था।

ऐसा प्रतीत होता है कि महीपाल की सफलताओं के बावजूद राष्ट्रकूटों के आक्रमण से प्रतिहारों को जो आघात पहुंचा उससे वे संभल नहीं सके। महीपाल के समय में ही प्रतिहार साम्राज्य का विघटन प्रारंभ हो गया। चंदेल, परमार तथा चेदि लोगों ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। ऐसे संकेत मिलते हैं कि उसके शासन के अंत में कालंजर तथा चित्रकूट के दुर्गों पर से महीपाल का अधिकार जाता रहा। संभव है इसकी चिंता में उसकी मृत्यु 945 ईस्वी में हो गई हो। निसंदेह उसकी गणना प्रतिहार वंश के महानतम शासकों में की जा सकती है।

8.3.9 गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य का पतन (Decline of Gurjar Pratihar Empire)

महीपाल के पश्चात उसका पुत्र महेंद्र पाल द्वितीय राजा बना जिसने 945 से 948 ईस्वी तक शासन किया। इतिहासकार आर. डी. बनर्जी का विचार है कि राष्ट्रकूट शासक इंद्रतृतीय के आक्रमण के फलस्वरूप प्रतिहार साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। किंतु महेंद्र पाल का एक लेख दक्षिणी राजपूताने के प्रतापगढ़ नामक स्थान से मिलता है जिसमें दशपुर(मंदसौर) में स्थित एक ग्राम को दान में दिए जाने का उल्लेख है इससे स्पष्ट है कि महेंद्र पाल के समय तक प्रतिहारों का मालवा क्षेत्र पर अधिकार पूर्ववत बना रहा। वहां उसका सामंत चाहमान वंशी इंद्रराज शासन करता था। इसके बाद 960 ईस्वी तक प्रतिहार वंश में चार शासक हुए - देव पाल(948-49 ईस्वी), विनायक पाल द्वितीय(953-54 ईस्वी), महीपाल द्वितीय(955 ईस्वी) तथा विजयपाल(960 ईस्वी) ।

इन शासकों के समय में प्रतिहार साम्राज्य की निरंतर अवंती होती रही। देव पाल के समय में चंदेलों ने कालंजर का दुर्ग प्रतिहारों से छीन लिया। खजुराहो लेख में चंदेल यशोवर्मन को 'गुर्जरों के लिए जलती हुई अग्नि के समान' कहा गया है। इससे यह भी सूचित होता है कि अब चंदेल तथा दूसरे सामंत भी बड़ी तेजी से सिर उठाते जा रहे थे जिन्हें नियंत्रित करने में कोई भी प्रतिहार शासक सक्षम नहीं था। विजयपाल के समय तक आते-आते प्रतिहार साम्राज्य कई भागों में बंट गया तथा प्रत्येक भाग में स्वतंत्र राजवंश शासन करने लगे। इनमें कन्नौज के गहड़वाल, जेजाक-भुक्ति (बुंदेलखंड) के चंदेल,ग्वालियर के कच्छपघात, शाकंभरी के चाहमान, मालवा के परमार, दक्षिणी राजपूताना के गुहिलोत ,मध्य भारत के कलचुरीचेदि तथा गुजरात के चालुक्य प्रमुख है।

10 वीं सदी के मध्य में प्रतिहार साम्राज्य पूर्णतया छिन्न-भिन्न हो गया। अब यह कन्नौज के आसपास ही सीमित रहा। राज्यपाल, जो विजयपाल का पुत्र था, ने 1018 ईस्वी तक कन्नौज पर शासन किया। उसने महमूद गजनवी के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया तथा कन्नौज पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। राज्यपाल अपना शरीर लेकर भाग खड़ा हुआ तथा महमूद ने कन्नौज को खूब लूटा। राज्यपाल की इस कायरता पर तत्कालीन भारतीय शासक अत्यंत कुपित हुए। चंदेल नरेश विद्याधर ने राजाओं का एक संग तैयार कर उसे दंडित करने का निश्चय किया। दूबकुंड लेख से पता चलता है की विद्याधर ने सामंत कछवाहा वंशी अर्जुन ने राज्यपाल पर आक्रमण कर उसकी हत्या कर दी थी। राज्यपाल के उत्तराधिकारी त्रिलोचन पाल तथा यशपाल के नाम से मिलते हैं जिनके विषय में हमारा ज्ञान अत्यल्प है। लगभग 1090 ईस्वी तक वह किसी न किसी रूप में कन्नौज अथवा उसके किसी भाग पर शासन करते रहे। इसके बाद गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य पूर्णरूपेण विलुप्त हो गया तथा कन्नौज में उसके स्थान पर गहड़वाल वंश की स्थापना हुई।

उत्तर भारत के इतिहास में प्रतिहारों के शासन का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। हर्ष की मृत्यु के बाद प्रतिहारो ने प्रथम बार उत्तरी भारत में विस्तृत साम्राज्य की स्थापना की तथा लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक साम्राज्य के अधिष्ठाता बने रहे। उन्होंने अरब आक्रमणकारियों से सफलतापूर्वक देश की रक्षा की। मुसलमान लेखक भी उनकी शक्ति एवं समृद्धि की प्रशंसा करते हैं। वे मातृभूमि के सजग प्रहरी थे और इस रूप में उन्होंने अपना प्रतिहार नाम सार्थक कर दिया। शांति काल में भी उनकी उपलब्धियां कम सराहनीय नहीं रही। उन्होंने कन्नौज को उसका प्राचीन वैभव न केवल वापिस दिया अपितु उसमें इस सीमा तक अभिवृद्धि कर दी कि आचार - विचार, सुसंस्कार एवं सभ्यता की दृष्टि से देश के अन्य भागों के लोग यहां के निवासियों का अनुकरण करने लगे। शक्ति तथा सौंदर्य में इसकी बराबरी करने वाला कोई दूसरा नगर नहीं रहा। कुछ विद्वान हर्ष के स्थान पर प्रतिहार शासक महेंद्र पाल प्रथम को ही हिंदू भारत का अंतिम महान शासक स्वीकार करते हैं।

8.3.10 राष्ट्रकूट राजवंश का इतिहास (History of Rashtrakuta Dynasty)

राष्ट्रकूट राजवंश का इतिहास हम मुख्य रूप से उसके शासकों द्वारा खुदवाये गए बहुसंख्यक अभिलेखों तथा दान पात्रों से ज्ञात करते हैं जो उनके साम्राज्य के विभिन्न भागों से प्राप्त किए गए हैं।

प्रमुख राष्ट्रकूट लेखों का विवरण इस प्रकार है-

- दन्तिदुर्ग के एलोरा तथा सामंत गढ़ के ताम्रपत्र अभिलेख
- गोविंद तृतीय के राधनपुर, वनी, दिंदोरी तथा बड़ौदा के लेख
- अमोघ वर्ष प्रथम का संजन अभिलेख
- इंद्र तृतीय का कमलपुर अभिलेख
- गोविंद चतुर्थ के काम्बे तथा संगली के लेख

- कृष्ण तृतीया के कोल्हापुर, देवली तथा कर्नाट के लेख

उपरोक्त लेखों में से अधिकांश तिथि युक्त है। इनसे राष्ट्रकूट राजाओं की वंशावली, उनके सैनिक अभियानों, धार्मिक अभिरुचि, शासन व्यवस्था आदि सभी बातों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। लेख राष्ट्रकूट इतिहास के प्रामाणिक साधन है। राष्ट्रकूट काल में कन्नड़ तथा संस्कृत भाषा में अनेक ग्रंथों की रचना हुई थी। इनमें जिनसेन का आदि पुराण, महावीराचार्य का गणितसारसंग्रहण , अमोघवर्षा कविराजमार्ग, आदि उल्लेखनीय हैं। उनसे अमोघवर्ष के धार्मिक जीवन के विषय में सूचनाएं मिलती है। साथ ही इनके अध्ययन में तत्कालीन समाज और संस्कृति की दशा का भी बौद्ध होता है।

8.3.11 राष्ट्रकूट राजवंश की उत्पत्ति तथा मूल स्थान (Origin and Prime location of Rashtrakuta Dynasty)

दक्षिणापथ में बादामी के चालुक्य वंश का विनाश राष्ट्रकूटों दवारा हुआ। राष्ट्रकूटों की उत्पत्ति के विषय में अनेक मत दिए जाते हैं इस वंश के कुछ लेखों में इन्हें 'रट्ट' कुल का बताया गया है। इंद्र तृतीय के नौसारी लेख में कहा गया है कि 'अमोघवर्ष ने रट्टकुलसक्मी' का उद्धार किया था।

कृष्ण तृतीया के देवली और करहड लेखों से पता चलता है कि राष्ट्रकूट तुंग के वंशज थे तथा उनका आदि पुरुष रट्ट था। वर्धा ताम्रपत्र राष्ट्रकूटों को 'रट्टा' नामक राजकुमारी से संबंधित करते हैं। इस आधार पर आर. जी. भापडारकर का निष्कर्ष है कि राष्ट्रकूट तुंग कुल के थे। तुंग का पुत्र रट्ट था। इसी का वंश राष्ट्रकूट कहा गया। किंतु यह निष्कर्ष असंगत लगता है क्योंकि हमें किसी भी तुंग लिया रट्ट नाम के शासक की जानकारी नहीं है। एलीट ने राष्ट्रकूटों का संबंध राजपूताना के राठौड़ों से स्थापित किया है। वी, एन, रेउ के अनुसार ये गहड़वालों से संबंधित है। किंतु ये बात मान्य नहीं है क्योंकि दोनों ही वंशों का उदय राष्ट्रकूटों के बहुत बाद हुआ।

इसी प्रकार बर्नेल नामक विद्वान ने राष्ट्रकूटों को आंध्र के रेड्डियों से संबंधित किया है। किंतु यह मत भी उचित नहीं लगता क्योंकि राष्ट्रकूटों का मूल स्थान आंध्र नहीं था। इतिहासकार सी.वी. वैद्य का अनुमान है की राष्ट्रकूट मराठों के पूर्वज थे जिनकी मातृभाषा मराठी थी। किंतु अलतेकर इनकी भाषा मराठी न मानकर कन्नड़ मानते हैं।

अलतेकर, नीलकंठ शास्त्री, एच. सी. राय, ए. के. मजूमदार आदि विद्वानों का विचार है की 'राष्ट्रकूट' शब्द किसी जाति का सूचक न होकर पद का सूचक है। वस्तुतः राष्ट्रकूट पहले प्रशासनिक अधिकारी थे। इस शब्द का अर्थ है 'राष्ट्र(प्रांत) का कूट अर्थात प्रधान।'

प्राचीन काल मे साम्राज्य का विभाजन कई राष्ट्रों में किया जाता था। जिस प्रकार ग्राम का अधिकारी ग्राम कूट होता था उसी प्रकार राष्ट्र का अधिकारी राष्ट्रकूट था। इन अधिकारियों की कालांतर में एक विशिष्ट जाति बन गई। इस प्रकार कुछ अन्य जातियां प्रतिहार, पेशवा आदि हैं।

प्राचीन काल के अभिलेखों में राष्ट्रकूट नामक पदाधिकारियों का उल्लेख मिलता है। अशोक के लेखों में 'रठिक' ' नामक पदाधिकारियों का उल्लेख है। सातवाहन युगीन नानाघाट लेख से महारथी अधिकारी का उल्लेख मिलता है।

एक लेख में दन्तिदुर्ग को यदुवंश की सात्यिकि शाखा से उत्पन्न बताया गया है। कुछ लेख इन्हें चंद्रवंशी क्षत्रिय बताते हैं। राधनपुर के लेख इस वंश के गोविंद तृतीय की तुलना यदुवंशी कृष्ण से की गई है। इस प्रकार राष्ट्रकूटों को क्षत्रिय मानना ही अधिक समीचीन लगता है। बादामी के चालुक्यों को अपदस्थ करने वाले राष्ट्रकूट मूलतः लट्टलूर(महाराष्ट्र के उस्मानाबाद जिले में वर्तमान लादूर) के निवासी थे। लेखों में उन्हें जट्टकपुरवराधीश्वर कहा गया है। यह स्थान पहले कर्नाटक में था। इस कुल के लोग चालुक्यों के राज्य में जिला अधिकारी(राष्ट्रकूट) थे। उनकी मातृभाषा कन्नड़ थी। इस वंश के कुछ पूर्वज बरार में जाकर बस गए और 640 ईस्वी में वहां उन्होंने सामंत पद प्राप्त कर लिया।

8.3.12 विभिन्न राष्ट्रकूट शाखाएं

लेखों से हमें राष्ट्रकूटों की कई शाखाओं के विषय में जानकारी होती है जो छठी सातवीं शताब्दी में दक्षिणापथ के विभिन्न भागों में सामंत के रूप में निवास करते थे। उदिंडवाटिका लेख(सातवीं शताब्दी) में अभिमन्यु नामक एक राष्ट्रकूट सामंत का उल्लेख है जो मानपुर का शासक था। उसके तीन पूर्वजों मानाक, देवराज तथा भविष्य के नाम भी दिए गए हैं। यह महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश के बेतूल-मालवा क्षेत्र में शासन करते थे। राष्ट्रकूटों की दूसरी शाखा अचलपुर, में निवास करती थी। इस शाखा के चार शासकों के नाम मिलते हैं दुर्गराज, गोविंदराज, स्वामीकराज तथा नवराज।

यह कुल पहले बादामी के चालुक्यों के अधीन था किंतु बाद में स्वतंत्र हो गया। इसी वंश की एक शाखा उत्तर दक्षिणापथ में सातवीं सदी के मध्य विद्यमान थी जिसका पहला शासक दंतीवर्मा था। वह भी बादामी के चालुक्य का सामान था। 760 ईस्वी में चालुक्य शासककीर्ति वर्मा द्वितीय को पराजित कर उसने कर्नाटक पर अधिकार कर लिया तथा मान्यखेट (मालखेड़ ,गुलबर्गा ,कर्नाटक) को अपनी राजधानी बनाई। राष्ट्रकूटों की इसी शाखा ने इतिहास में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त किया।

8.3.13 राष्ट्रकूट साम्राज्य की स्थापना (Establishment of Rashtrakuta Empire)

राष्ट्रकूट वंश की स्वतंत्रता का जन्मदाता प्रथम शासक दन्तिदुर्ग था। वह इंद्र की भवनागा नामक चालुक्य राजकन्या से उत्पन्न पुत्र था । उसकी उपलब्धियों के विषय में हम उसके समय के दो लिखो दशावतार 742 ईस्वी तथा समनगढ़ का लेख 753 ईस्वी से जानकारी प्राप्त करते हैं। बाद के कुछ अन्य लेख भी उसकी उपलब्धियों की चर्चा करते हैं।

आकृति - 5

आकृति - 5 से हमें राष्ट्रकूटों के द्वारा शासित क्षेत्रों का पता चलता है। दन्तिदुर्ग ने बादामी के चालुक्य शासक विक्रमादित्य द्वितीय के सामंत के रूप में अपना जीवन प्रारंभ किया। इसी रूप में उसने कुछ विजय कर अपनी शक्ति एवं प्रतिष्ठा को बढ़ाया। इतिहासकार अलेकर का विचार है की दन्तिदुर्ग ने अपने स्वामी की आशा से गुजरात के चालुक्य राजा जनाश्रय पुलकेशिन की और से अरबों से युद्ध किया तथा उन्हें पराजित किया था उसकी इस सफलता से प्रसन्न होकर विक्रमादित्य ने उसे 'पृथ्वीवल्लभ' तथा 'खडवालोक' की उपाधियों से सम्मानित किया था। इसके बाद उसने युवराज कीर्ति वर्मा द्वितीय के साथ कांची के पल्लव के विरुद्ध अभियान में भाग लिया तथा उन को पराजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वापसी में उसने करनूल में श्रीशैल के शासक को भी जीता।

इन युद्धों में प्राप्त सफलताओं से उसकी महत्वाकांक्षा स्वाभाविक रूप से बढ़ गई होगी। अतः 744 ईस्वी में कांची की वजह से वापस लौटने के पश्चात दन्तिदुर्ग ने स्वतंत्र साम्राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से अपना अभियान प्रारंभ कर दिया। सौभाग्य से चालुक्य वंश में विक्रमादित्य की मृत्यु हो गई तथा उसका उत्तराधिकारी कीर्ति वर्मा द्वितीय उतना योग्यता तथा अनुभवी नहीं था। इस परिस्थिति में दन्तिदुर्ग का कार्य सरल हो गया। उसने अपना विजय अभियान पूर्व तथा पश्चिम दिशा से प्रारंभ किया ताकि चालुक्य सम्राट के कम से कम प्रतिरोध का सामना करना पड़े। सर्वप्रथम नंदी पुरी के गुर्जरों तथा नौसारी के चालुक्यों को पराजित कर उसने उनके राज्य पर अधिकार कर लिया। तत्पश्चात उसने मालवा के प्रतिहार राज्य पर आक्रमण किया। उज्जैन के ऊपर उसका अधिकार हो गया यहां उसने यज्ञ किया जिसमें प्रतिहार राजा ने द्वारपाल का काम किया था। यह आक्रमण एक धावा मात्र

था। दन्तिदुर्ग ने प्रतिहार राज्य पर अपना अधिकार नहीं किया तथा उसे अपने प्रभाव में लाकर ही संतुष्ट हो गया।

दन्तिदुर्ग कुशल प्रशासक तथा योद्धा था। वह महान विजेता तथा कूटनीतिज्ञ शासक था। व राष्ट्रकूट साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक था। दन्तिदुर्ग ब्राह्मण धर्मावलंबी था। उसने शास्त्रों के आदर्शानुसार शासन किया तथा कई गांव दान में दिए थे। उज्जैनी में उसने बड़ी मात्रा में स्वर्ण तथा रत्नों का दान किया था।

कृष्ण प्रथम

दन्तिदुर्ग ने 756 ईस्वी के लगभग तक शासन किया। वह निसंतान मरा, अतः उसके बाद उसका चाचा कृष्ण प्रथम शासक बना था। कृष्ण दन्तिदुर्ग के समान एक साम्राज्यवादी शासक था। राज्यारोहण के पश्चात सभी दिशाओं में उसने अपने साम्राज्य का विस्तार प्रारंभ किया। उसके राजा बनते ही लाट प्रदेश का शासक जो उसका भतीजा था ने विद्रोह कर दिया तथा अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया। कृष्ण ने वही आक्रमण कर उसे पराजित किया तथा लाट प्रदेश में अपनी स्थिति मजबूत बना ली।

गंग वंश के विरुद्ध सफलता

कृष्ण प्रथम ने गंगो की राजधानी मान्यपुर(बंगलुरू स्थित मंनपुर) के उपर अधिकार कर लिया। गंग नरेश श्री पुरुष को एक छोटे भाग पर सामंत रूप में शासन करने की अनुमति प्रदान कर 769 ईस्वी में कृष्ण अपनी राजधानी वापस लौट आया वहां आकर उसने कृष्ण के सामंत के रूप में शासन करना स्वीकार किया।

वेंगी के चालुक्य राज्य पर अधिकार

कृष्ण ने अपने बड़े बेटे गोविंद को युवराज बनाया था तथा उसे वेंगी के पूर्वी चालुक्यों पर आक्रमण करने के लिए भेजा। गोविंद को सफलता मिली और उसने अपनी सेना के साथ कृष्णा और मुसी नदियों के संगम पर शिविर डाल दिया। यहां से वेंगी की दूरी मात्र 100 मील थी।

वेंगी के चालुक्य नरेश विष्णुवर्धन चतुर्थ ने बिना लड़े ही उसकी अधीनता मान ली। उसने राष्ट्रकूट युवराज को न केवल अपने राज्य का एक बड़ा भाग तथा हर्जाना दिया अपितु अपनी कन्या शीलभट्टारिका का विवाह भी गोविंद के छोटे भाई ध्रुव से कर दिया। इस विजय के फलस्वरूप वेंगी राज्य का अधिकांश भाग राष्ट्रकूट साम्राज्य में मिला लिया गया। विजेता होने के साथ-साथ कृष्ण प्रथम कला प्रेमी भी था। उसने एलोरा के प्रसिद्ध कैलाश मंदिर का निर्माण करवाया था। वह एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति भी था, जिसने ब्राह्मणों को प्रचुर धन दान में दिया था। उसने 773 ईस्वी तक शासन किया।

गोविंद द्वितीय

कृष्ण प्रथम के 2 पुत्र थे गोविंद द्वितीय तथा ध्रुव। गोविंद अपने पिता के समय में ही अनेक युद्धों में ख्याति प्राप्त कर चुका था, अतः वही कृष्ण प्रथम के बाद राजा बना। उसने अपने छोटे भाई ध्रुव को नासिक का राज्यपाल नियुक्त किया। ऐसा प्रतीत होता है कि राजा होने के बाद गोविंद विलासी हो गया तथा प्रशासनिक कार्यों के प्रति उदासीन हो गया। अतः उसकी अकर्मण्यता का लाभ उठाते हुए उसके छोटे भाई ध्रुव ने गोविंद के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। फल स्वरूप दोनों भाइयों के बीच एक युद्ध लड़ा गया। गोविंद द्वितीय ने कांची, वेंगी तथा मालवा के राजाओं से सहायता प्राप्त की। परंतु ध्रुव विजयी हुआ और गोविंद संभवत मार डाला गया। ध्रुव ने राजगद्दी पर अधिकार कर लिया गोविंद द्वितीय ने 773 ईस्वी से लेकर 780 ईस्वी तक शासन किया।

ध्रुव 'धारावर्ष'

गोविंद द्वितीय के पश्चात राष्ट्रकूट शासन की बागडोर उसके सुयोग्य तथा यशस्वी भाई ध्रुव के हाथ में आई। राजा होने पर ध्रुव ने निरुपमकालीवल्लभ, श्रीवल्लभ तथा धारावर्ष की उपाधियां ग्रहण की। उसकी गणना प्राचीन इतिहास के महानतम विजेता एवं साम्राज्य निर्माता शासकों में की जाती है। उसके काल में राष्ट्रकूटों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा का चतुर्दिक विस्तार हुआ। उसने अपनी शक्ति का विस्तार संपूर्ण भारत में कर दिया। सातवाहन वंश के पतन के बाद प्रथम बार ध्रुव के नेतृत्व में ही किसी दक्षिणी शक्ति ने मध्य भारत में अपनी शक्ति का विस्तार किया था। ध्रुव ने कुल 13 वर्षों तक राज्य किया उसकी मृत्यु 793 ईस्वी में हुई।

गोविंद तृतीय

ध्रुव के 4 पुत्र थे कर्क, स्तंभ, गोविंद तथा इंद्र । इनमें से कर्क अपने पिता के जीवन काल में ही मर गया। सबसे बड़ा होने के कारण स्तंभ ही राज्य का वैधानिक उतराधिकारी था, किंतु ध्रुव अपने पुत्र गोविंद की योग्यता एवं कर्मठता पर मुग्ध था, अतः उसने उसी को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया तथा स्तम्भ को गंगवाडी तथा इंद्र को गुजरात और मालवा का राज्यपाल नियुक्त कर दिया इस प्रकार गोविंद तृतीय अपने पिता का उत्तराधिकारी बना। सूरत लेख से पता चलता है कि स्वयं ध्रुव ने अपने सुयोग्य पुत्र गोविंद को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया था। गोविंद तृतीय ने 793 ईस्वी से 814 ईस्वी तक शासन किया उसने अपने जीवन के अंतिम कुछ वर्षों को शांति पूर्वक व्यतीत किया। अपनी मृत्यु के पूर्व उसने अपने एकमात्र पुत्र अमोघवर्ष को गुजरात के अपने राज्यपाल कर्क के संरक्षण में डाल दिया।

अमोघवर्ष

गोविंद तृतीय के बाद उसका पुत्र अमोघवर्ष 814 ईस्वी में गद्दी पर बैठा। उस समय वह अवयस्क था, अतः गुजरात के वायसराय कर्क ने उसके संरक्षक के रूप में कार्य करना प्रारंभ किया। 817 ईस्वी के

लगभग उसके विरुद्ध एक भीषण विद्रोह हुआ। इस विद्रोह का नेतृत्व वेंगी के चालुक्य शासक विजयादित्य द्वितीय ने किया तथा इसमें कुछ अन्य सामंतों एवं अधिकारियों ने भाग लिया।

अमोघवर्ष घबरा गया और वह भागने वाला था लेकिन कर्क ने स्थिति को संभाल लिया। 821 ईस्वी तक उसने विद्रोहियों को दबा दिया तथा अमोघवर्ष की स्थिति पुनः सुदृढ़ हो गई। धीरे- धीरे अमोघवर्ष ने राज्य में शांति और व्यवस्था स्थापित कर ली तथा 830 ईस्वी में पूरी शक्ति के साथ उसने वेगी के चालुक्य शासक विजयादित्य पर आक्रमण किया। अमोघवर्ष ने 64 वर्षों 878 ईस्वी तक राज्य किया । अमोघ वर्ष में अपने पिता जैसी सैनिक क्षमता नहीं थी। वह शांत प्रकृति का मनुष्य था जिसकी युद्ध की अपेक्षा धर्म और कला में अधिक अभिरुचि थी। उसने मान्यखेट (हैदराबाद के समीप मालखेद) नामक एक नया नगर बसाया तथा अपनी राजधानी वही ले गया। वह कला और संस्कृति का महान उन्नायक था। उसकी मृत्यु 878 ईस्वी के लगभग हुई।

कृष्ण द्वितीय

अमोघ वर्ष प्रथम की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र कृष्ण द्वितीय शासक बना। उसका मालवा के प्रतिहार शासक भोज प्रथम तथा वेंगी के चालुक्य नरेश विजयादित्य तृतीय के साथ संघर्ष हुआ। मालवा के प्रतिहारों तथा राष्ट्रकूटों के बीच पुरानी शत्रुता थी। कृष्ण द्वितीय के राजा बनने के बाद प्रतिहार शासक मिहिर भोज ने उसके राज्य पर आक्रमण किया। संभवत: नर्मदा नदी के किनारे दोनों की सेनाएं टकराई जिसमें विजय श्री प्रतिहारों के हाथ लगी। तत्पश्चात मिहिर भोज ने सेना के साथ गुजरात की ओर प्रस्थान किया। इस बार कृष्ण ने अधिक शक्ति के साथ उसका सामना किया। इस युद्ध में लाट प्रदेश के राष्ट्रकूट सामंत तथा चेदि के राजा ने उसकी सहायता की। विजय कृष्ण को मिली। उत्साहित होकर उसने प्रतिहारों की राजधानी उज्जैनी पर आक्रमण कर वहां अपना अधिकार कर लिया।

कृष्णा द्वितीय ने 878 ईस्वी से लेकर 914 ईस्वी तक शासन किया। यद्यपि उसमें गोविंद तृतीय तथा ध्रुव के समान सैनिक कुशलता नहीं थी तथापि उसने राष्ट्रकूट साम्राज्य को सुरक्षित बनाए रखा, अपने पिता के सम्मान वह भी जनमत का पोषक था प्रसिद्ध जैन आचार्य गुण चंद्र उसके गुरु थे। किंतु राजा के रूप में व अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णु था।

इंद्र तृतीय

कृष्ण द्वितीय के पश्चात उसका पौत्र इंद्र तृतीय 914 से 922 ईस्वी राजा बना क्योंकि उसके पुत्र जगतुंग की मृत्यु पहले ही हो गई थी। वह एक सैनिक योग्यता वाला शासक था। इतिहासकार अल्तेकर का विचार है कि इंद्र के राज्यरोहण के ठीक पहले या ठीक बाद प्रतिहारों के सामंत, मालवा के परमार शासक उपेंद्र ने नासिक के ऊपर आक्रमण कर गोवर्धन को घेर लिया था। संभवतः यह प्रतिहार शासक के इशारे पर हुआ था। अतः इंद्र ने सर्वप्रथम उपेंद्र को पराजित कर गोवर्धन का उद्धार किया। उसने परमारो की राजधानी उज्जैनी पर अधिकार कर लिया तथा उपेंद्र उसका सामंत बन गया। यहीं से उसने उत्तरी भारत में सैनिक अभियान की शुरुआत की। इंद्र तृतीया ने एक बार पुनः राष्ट्रकूट वंश के गौरव को प्रतिष्ठित कर दिया तथा अपनी शक्ति से उतरी भारत के राजाओं को आतंकित कर दिया। वह 929 ईस्वी में अकाल मृत्यु का शिकार हुआ।

अमोघवर्ष द्वितीय

इंद्र तृतीय का पुत्र तथा उत्तराधिकारी अमोघवर्ष द्वितीय हुआ। उसके शासनकाल की किसी भी घटना के विषय में हमें ज्ञात नहीं है, राजा बनने के 1 वर्ष के भीतर ही वह मृत्यु का शिकार हुआ। उसकी मृत्यु की परिस्थितियां अज्ञात है। उसके बाद उसका छोटा भाई गोविंद चतुर्थ 930 ईस्वी में राजा बना।

गोविंद चतुर्थ

वह अयोग्य तथा दुराचारी शासक था। उसकी विलासप्रियता के कारण शासन शिथिल पड़ गया। कन्नौज के ऊपर प्रतिहारों का अधिकार हो गया। उसे चालुक्य शासक भीम द्वितीय के हाथों पराजित भी होना पड़ा। अतः उसके सामंतों, अधिकारियों तथा मंत्रियों ने उसे पद मुक्त करने का षड्यंत्र रचा। उन्होंने इंद्र तृतीय के सौतेले भाई तथा गोविंद के चाचा अमोघवर्ष तृतीय को सिहासन देने का निश्चय किया। फलस्वरूप 936 ईस्वी में एक राज्य क्रांति हुई इसमें प्रमुख भूमिका वेमुलवाड के चालुक्य सामंत केसरी ने निभाई। गोविंद तथा अरिकेसरिन के बीच युद्ध हुआ जिसमें गोविंद मार डाला गया था तथा राजमुकुट अमोघवर्ष को मिला।

अमोघवर्ष तृतीय

उसका वास्तविक नाम पड्डेग़ था तथा पहले वह त्रिपुरी में निवास करता था। यहीं से उसने मान्यखेट को प्रस्थान किया तथा मंत्रियों और सामंतों के सहयोग से 936 ईस्वी में राष्ट्रकूट सिहासन पर अधिकार कर लिया। उसने केवल 3 वर्षों तक शासन किया। अमोघवर्ष तृतीय धार्मिक प्रवृत्ति का शासक था और वह शासन में बहुत कम रुचि रखता था।

कृष्ण तृतीय

राज्यारोहण के समय उसने 'अकालवर्ष' की उपाधि ग्रहण की। 'चल्लभनरेंद्र' 'पृथ्वीवल्लभ' जैसी कुछ अन्य उपाधियां भी उसकी मिलती है। कांची और तंजौर को जीतने के बाद उसने कांचीयुमतंजेयमकोंड़(कांची तथा तंजौर का विजेता) की भी उपाधि ग्रहण की थी। कृष्ण तृतीय कुशल सैनिक तथा साम्राज्यवादी शासक था। राजा बनने के बाद कुछ वर्षों तक उसने अपनी आंतरिक स्थिति को सुदृढ़ किया। तत्पश्चात उसने दिग्विजय की एक व्यापक योजना तैयार की इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम उसने चोलों के विरुद्ध सैनिक अभियान किया। 943 ईस्वी में उसने अपने साले गंगनरेश के साथ चोल शासक परांतक के ऊपर आक्रमण कर दिया। उसका अभियान सफल रहा तथा कांची और तंजौर के ऊपर उसने

अधिकार कर लिया। कृष्ण तृतीय अपने वंश के योग्यतम शासकों में से अंतिम शासक था। वह विद्वानों का आश्रयदाता भी था जिसकी राज्यसभा में कन्नड़ भाषा का कवि पोत निवास करता था। उसने शांति पुराण की रचना की थी। उसकी सभा का दूसरा विद्वान पुष्पदंत था जिसकी रचना लामालिनीकल्प है। उसने 967 ईस्वी तक शासन किया।

खोट्टिंग

कृष्ण तृतीय नि:संतान मरा। उसका भाई खोट्टिंग उसके बाद राष्ट्रकूट वंश का राजा बना। वह अत्यंत दुर्बल शासक था उसके काल में मालवा के परमार नरेश सीयक ने राष्ट्रकूट राज्य पर आक्रमण किया। परमार सेना राजधानी मान्यखेट तक आ गई। 972 ईस्वी में उन्होंने मान्यखेट पर अधिकार कर उसे खूब लूटा।

कर्क द्वितीय

खोट्टिग का उत्तराधिकारी उसका भतीजा कर्क द्वितीय बना। वह भी एक अयोग्य तथा निर्बल शासक था। वह केवल 2 वर्षों 972 से 974 ईस्वी तक शासन कर सका। इस काल में सामंतों के विद्रोह हुये जिसे वह दबाने में असमर्थ रहा। कर्क द्वितीय राष्ट्रकूट वंश का अंतिम शासक था। उसके साथ ही दक्षिणापथ से राष्ट्रकूटों का लगभग 2 सदियों का राज्य तथा शासन समाप्त हुआ।

8.3.14 राष्ट्रकूट राजवंश का शासन प्रबंध (Administration of Rashtrakuta Empire)

राष्ट्रकूट शासन में राजा की स्थिति सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सर्वोच्च होती थी। महाराजाधिराज, परमभट्टारक जैसी उच्च सम्मान परक उपाधियों के अतिरिक्त राष्ट्रकूट शासक धारावर्ष, अकालवर्ष, सुवर्णवर्ष, विक्रमावलोक, जगतुंग जैसी व्यक्तिगत उपाधियां भी धारण करते थे। राजपद अनुवांशिक होता था। राजा का बड़ा पुत्र युवराज बनता था जो राजधानी में रहते हुए अपने पिता की प्रशासनिक

कार्य में सहायता करता था। सैनिक अभियानों में वह पिता के साथ जाता था। छोटे पुत्र प्रांतों में राज्यपाल बनाए जाते थे।

युवराज ही प्राय: सम्राट की मृत्यु के बाद राज्य का उत्तराधिकारी बनता था किंतु कभी-कभी दूसरे योग्य व्यक्ति को भी शासक बना दिया जाता था। शासक अपनी राजधानी में रहता था जहां उसकी राजसभा तथा केंद्रीय प्रशासन के कर्मचारी रहते थे राज्यसभा ऐश्वर्य तथा वैभव से परिपूर्ण होती थी।

सामंत, राजदूत, मंत्री, सैनिक तथा असैनिक अधिकारी, कवि, वैद्य, ज्योतिषी आदि नियमित रूप से राजसभा में उपस्थित होते थे। सम्राट अपनी मंत्रिपरिषद की परामर्श से शासन करता था। राष्ट्रकूट लेखों में मंत्रियों के विभागों के नाम नहीं मिलते हैं। अधिकांश मंत्री सैनिक पदाधिकारी भी होते थे। कुछ सामंत स्थिति के थे जिन्हें जागीरे दी जाती थी। लेखों में मंत्री को राजा का दाहिना हाथ कहा गया है।

राष्ट्रकूट शासन में सामंतवाद की पूर्ण प्रतिष्ठा हो चुकी थी। कुछ भागों का प्रबंध सामंत ही करते थे दक्षिणी गुजरात आदि प्रदेशों के सामंत तो पूरी स्वायत्तता का उपभोग करते थे तथा नाम मात्र के लिए ही सम्राट की अधीनता स्वीकार करते थे। प्रमुख सामंत अपने अधीन छोटे सामंत रखते थे जिन्हें राजा कहा जाता था। सामंतगण सम्राट की राजसभा में समय-समय पर उपस्थित होते थे उसे उपहार देते थे, युद्धों के समय सैनिक भेजते थे, तथा स्वयं भी सम्राट के साथ सैनिक अभियान पर जाया करते थे।

राष्ट्रकूट शासक वस्तुतः अपने अधीनस्थ अन्य राजाओं तथा सामंतों के द्वारा ही प्रशासन चलाते थे। सामंत हमेशा स्वतंत्र होने की ताक में लगे रहते थे। इस कारण उनका राजा के साथ प्रायः युद्ध होता था। राष्ट्रकूट राजाओं को वेगी तथा कर्नाटक के अपने सामंतों के साथ कई बार संघर्ष करना पड़ा। सम्राट के सीधे नियंत्रण वाले क्षेत्र को कई राष्ट्रों में बांटा गया था। जो आधुनिक कमिश्नरियों के समान थे। राष्ट्र को मंडल भी कहा जाता था। कुल राष्ट्रों की संख्या 2 से 25 के लगभग थी इसका प्रधान अधिकारी राष्ट्रपति कहलाता था। राज्य की आय का प्रमुख साधन भूमि कर था जिसे उद्रग अथवा

भोगकर कहा जाता था यह उपज का चौथा भाग होता था और पराए अनाज के रूप में लिया जाता था। जो भूमि अनुदान में दी जाती थी वह सभी करों से मुक्त होती थी।

राष्ट्रकूट सम्राट साम्राज्यवादी थे तथा अपने साम्राज्य का विस्तार करने के नियत से अपने पास एक विशाल तथा शक्तिशाली सेना रखते थे। राजधानी में स्थाई सेना रहती थी तथा युद्धों के समय सामंत अपनी सेनाएं भेजते थे। कुछ सम्राट जैसे गोविंद तृतीय, इंद्र तृतीय, कृष्ण तृतीय आदि उच्च कोटि के सैनिक विजेता थे जिन्होंने दक्षिण भारत के अतिरिक्त उत्तरी भारत को भी अपने सैन्य बल से जीता था।

8.4 मुख्य पाठ का आगे का भाग (Further Main Body of The Text)

8.4.1 दक्षिण का चोल साम्राज्य

चोल राज्य बहुत प्राचीन राज्य था। इसका उल्लेख महाभारत, मेगास्थनीज के यात्रा- वृतांत और अशोक के शिलालेखों से प्राप्त होता है। संगम साहित्य में अनेक चोल राजाओं का वर्णन है। इस राज्य में मद्रास, उसके आसपास का क्षेत्र और कर्नाटक के कुछ क्षेत्र सम्मिलित थे। संगम साहित्य में करिकाल को चोल वंश का संस्थापक कहा गया है। उसका अभ्युदय-काल दूसरी शताब्दी माना जाता है। उसने अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए सक्रिय प्रयास किए। उसकी बढ़ती हुई शक्ति से चिंतित पांड्यों और चेरों आदि ने उन के विरुद्ध संघ बनाया किंतु करिकाल के सामने वे ठहर न सके। उसने अपनी पुत्री आदिनन्दि का विवाह चेर राजकुमार अति के साथ कर दिया था। करिकाल एक सफल विजेता होने के साथ ही कुशल शासक भी था। उसके शौर्य की गाथाओं को कवियों ने ओजस्वी स्वर दिए हैं। 'पट्टूपट्टू' नामक काव्य संग्रह में उसके शौर्य की गाथाएं संकलित है। करिकाल के बाद उसका पुत्र नेद्युदीकिल्ल राज सिहासन पर बैठा। वह एक अशक्त शासक था। फलत: उसके शासनकाल में चोल राजवंश पतन के गर्त में चला गया। उसे पतन के गर्त से निकालने में लंबा समय लगा। नवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में उस

राजवंश का पुनः उत्कर्ष हुआ। इसका श्रेय चोल वंशी शासक विजयालय को है। विजयालय पल्लवों का एक सामंत था। पल्लव और पांड्यों के युद्ध के समय उसने तंजौर पर अधिकार बनाया। वहां उसने निशुभसूदनी का मंदिर बनवाया। इस प्रकार 850 ईस्वी के आस-पास उसने स्वतंत्र चोल राज्य की स्थापना की। उसे चोल साम्राज्य का द्वितीय संस्थापक भी कहा जाता है। विजय के अवसर पर उसने नर केसरी की उपाधि धारण की थी।

आदित्य प्रथम(871-907 ईस्वी)

विजयालय के बाद उसका पुत्र आदित्य प्रथम 871 ईस्वी में राजा बना। उसने चोल राज्य की शक्ति और सीमा का विस्तार किया। उसने 'कोंदराम' की उपाधि ली। आदित्य प्रथम के पश्चात उसका पुत्र परांतक प्रथम शासक बना उसने 907 ईस्वी से 955 ईस्वी तक राज्य किया और दक्षिण भारत में चोल शक्ति को बढ़ाया। उसने पांड्य राजा का राज्य जीतकर अपने राज्य में मिला लिया और इस विजय के उपलक्ष में 'मदुराई कोंड' की उपाधि धारण की। परांतक प्रथम को राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय से घमासान युद्ध करना पड़ा और परांतक प्रथम पराजित हुआ और चोल राज्य के कुछ भागों पर कृष्ण तृतीय का अधिकार हो गया। इस पराजय से चोल शक्ति को आघात पहुंचा। उसका उत्तराधिकारी गुंडारादित्य और फिर परांतक द्वितीय हुआ। परांतक दितीय उत्तम चोल के नाम से भी जाना जाता है।

राजराजा महान(985-1014 ईस्वी)

चोल साम्राज्य का सबसे शक्तिशाली शासक राजराजा महान था जिसने 985 ईस्वी से 1014 ईस्वी तक राज्य किया। राजराजा एक महान विजेता और साम्राज्य निर्माता था। उसने वेंगी के पूर्वी चालुक्य राजा, मदुरा के पांड्य राजा और मालाबार तट के सामंतों को हराकर अपने अधीन कर लिया। उसने लंका का उत्तरी भाग जीत कर अपने राज्य में मिला लिया। उसने उनकी राजधानी अनुराधापुर को नष्ट कर

दिया। लंका के जीते भाग का मामुंडीचोल पुरम नाम रखा। उसने नई राजधानी पोलोन्नरूवा बनाई जिसका बाद में नाम जंजातमंगलम रखा। उसने कलिंग को विजय किया। उसने एक शक्तिशाली जहाजी बेड़े द्वारा लक्ष्यदीप और मालदीप टापुओं पर अधिकार किया और पूर्वी दीप समूह पर आक्रमण किया। उसने वेंगी को जीतकर अपने पक्ष के शक्ति वर्मा को वहां का शासक बनाया। ऐसा करने से उसका प्रयोजन यह था कि चोल वंश के विरुद्ध पश्चिमी तथा पूर्वी चालुक्य मिलकर एक हो जाए। इस मैत्री को और घनिष्ट बनाने के लिए उसने अपनी पुत्री का विवाह शक्ति वर्मा के छोटे भाई से कर दिया।

राजराजा के राज्य काल में चोल साम्राज्य समस्त सुदूर दक्षिण में फैल गया। इसके अतिरिक्त लक्ष्यदीप, मालद्वीप और उत्तरी लंका का भाग उसके साम्राज्य में शामिल था। राजराजा एक महान विजेता ही नहीं था, बल्कि एक योग्य प्रशासक भी था। उसने अपने राज्य में स्थानीय स्वशासन को प्रोत्साहन दिया। वह कला प्रेमी था और विद्वानों का आश्रयदाता था। वह शिव का भक्त था और उसने भव्य शिव मंदिरों का निर्माण करवाया। उसने तंजौर में राजराजेश्वर शिव मंदिर का निर्माण कराया। राजराजा प्रथम शैव था जिसने शिवपाद शेखर की उपाधि ली। अपने शासन के दौरान उसने ऐतिहासिक प्रशस्ति के साथ चोल अभिलेखों का निर्माण करवाने की प्रथा शुरू की। उसने सुमात्रा के विजय साम्राज्य के सम्राट भार विजयोतुंग वर्मन को नागपट्टम में चूड़ामणि बौद्ध विहार बनाने की आज्ञा दी।

राजेंद्र प्रथम (1014-1044 ईस्वी)

राजराजा महान के पश्चात उसका पुत्र राजेंद्र प्रथम राजा बना। राजराजा ने अपने शासनकाल में ही उसे युवराज घोषित कर दिया था और उसने प्रशासन और सैनिक अभियानों का अच्छा अनुभव प्राप्त किया था। उसने 1014 ईस्वी तक राज्य किया और अपने पिता से प्राप्त साम्राज्य को और भी अधिक सुदृढ़ एवं विस्तृत बनाया। राजराजा ने उत्तरी लंका को जीतकर अपने राज्य में मिलाया था परंतु राजेंद्र प्रथम ने सन 1018 ईस्वी में समस्त लंका को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। उसके राज्य काल

में लक्ष्यदीप और मालद्वीप पर चोलों का अधिकार बना रहा। पश्चिमी चालुक्य राजा जयसिंह द्वितीय के साथ उसका संघर्ष हुआ, परंतु राजेंद्र प्रथम को कोई निर्णायक सफलता नहीं मिली और तुंगभद्रा तट के प्रदेशों पर जयसिंह द्वितीय का अधिकार बना रहा। राजेंद्र प्रथम ने एक विशाल सेना पूर्वी भारत की और भेजी जो उड़ीसा होते हुए बंगाल पहुंची और गंगा प्रदेश में अपनी विजय पताका फहरायी। इस विजय की खुशी में उसने गंगेकोंडचोलपुरम नामक नई राजधानी की स्थापना कर गंगेकोडचोल की उपाधि ग्रहण की। उसकी अन्य उपाधियां थी ' मुंडकोड ' तथा ' पंडित '। सिंचाई हेतु चोलगंगम नामक झील बनवाई। उसने मुंडीकोड चोल, उत्तम चोल एवं पंडित चोल की उपाधि ली। उसने पूर्वी दीप समूह में भी सफल सैनिक अभियान भेजें।

राजेंद्र प्रथम को अपने शासनकाल के अंतिम चरण में आंतरिक विद्रोहो का सामना करना पड़ा। लंका ने अपनी स्वतंत्रता के लिए विद्रोह कर दिया। पांड्य और केरल राज्य में भी विद्रोह हो गया परंतु राजेंद्र प्रथम के पुत्र राजाधिराज प्रथम ने इन विद्रोहियों को कुचल दिया।

आकृति - 6

आकृति -6 हमें चोल साम्राज्य के विस्तार के बारे में बतला रहा है। राजेंद्र प्रथम के समय में चोल साम्राज्य का बहुत विस्तार हुआ। 1044 ईस्वी में उसकी मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र राजाधिराज प्रथम

शासक बना। उसने 1052 ईस्वी तक राज्य किया। चालुक्य शासक सोमेश्वर को पराजित कर उसने विजय राजेंद्र तथा वीराभिषेक की उपाधि ली। उसने अश्वमेध यज्ञ किया जो प्राचीन भारत में यज्ञ का अंतिम उदाहरण है। 1052 ईस्वी में राजाधिराज तथा चालुक्य नरेश सोमेश्वर की सेनाओं से कोप्पम में भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में राजाधिराज वीरगति को प्राप्त हुआ, किंतु उसके अनुज राजेंद्र द्वितीय ने चालुक्यों के साथ युद्ध जारी रखा और अंत में सोमेश्वर को परास्त करने में सफल हुआ। राजेंद्र द्वितीय(1052- 1063) का संघर्ष चालुक्यों से चलता रहा। सिंहल द्वीप के शासन से भी उसका संघर्ष हुआ। राजेंद्र द्वितीय अपने साम्राज्य की सीमाओं की रक्षा करने में सफल रहा। वीर राजेंद्र प्रथम(1063- 1070 ईस्वी) राजेंद्र द्वितीय का उत्तराधिकारी हुआ। उसने चालुक्य नरेश सोमेश्वर प्रथम को पराजित किया। चोलों और चालुक्यों का दूसरा संघर्ष ' कुंडलशंकरगम ' नामक स्थान में हुआ। वीर राजेंद्र ने इस विजय की उपलब्धि में तुंगभद्रा नदी के तट पर अपना विजय स्तंभ स्थापित किया। उसने चालुक्यों पर विजय के उपलक्ष्य में 'आइवभल्लाकुलकाल' की उपाधि धारण की। उसने भूमि दान द्वारा 40000 विद्वानों तथा वेदशास्त्री ब्राह्मणों को संतुष्ट किया। उसके समय में बुद्ध भित्त ने 'वीर सोवियम' नामक तमिल ग्रंथ की रचना की। 1070 ईस्वी में वीर राजेंद्र की मृत्यु के उपरांत अधिराजेंद्र सिंहासन पर बैठा।

वीर राजेंद्र की मृत्यु के उपरांत अधिराजेंद्र सिंहासन पर बैठा किंतु उसकी विद्रोहियों ने हत्या कर दी। इस प्रकार उसकी हत्या से चोल नरेश की प्रधार परंपरा का अंत हो गया। उसकी मृत्यु के उपरांत राजराजा प्रथम का प्रपौत्र कुलोत्तुंग प्रथम (1070-1118 ईस्वी) राज सिंहासन पर बैठा। उसने पांड्य राज्य और केरल के नरेश को पराजित किया। उसने अपनी पुत्री का विवाह सिंहल युवराज से किया। इसके साथ ही उसने कन्नौज, कंबोज, चीन तथा वर्मा से अपने दौत्य संबंध स्थापित किए। उसने 1077 ईस्वी में 72 व्यापारियों को चीन भेजा था। उसके शासन में चोल साम्राज्य की समृद्धि को

नए आयाम मिले। उसने दो बार भूमि की पैमाइश कराई। उसने करो को हटाकर 'शुंगतवित्र्त'(करो को हटाने वाला) की उपाधि धारण की। उसके समय में कांची की भी बड़ी उन्नति हुई। उसके समय में 'गंगकोड चोलपुरम' चोल राज्य की राजधानी थी।

कुलोत्तुंग प्रथम के उपरांत क्रमशः विक्रम चोल, कुलोत्तुंग द्वितीय, राजराजा द्वितीय, राजाधिराज द्वितीय,कुलोत्तुंग तृतीय, राजराजा तृतीय तथा राजेंद्र तृतीय सिंहासन पर बैठे। इनका राजत्वकाल लगभग 200 वर्षों तक रहा। परंतु चोल साम्राज्य उत्तरोत्तर पतन के गर्त में गिरता गया। इसका मुख्य कारण आंतरिक कलह तथा काकतीयों, होयसलों, और पांड्यों के आक्रमण थे। अंत में 1258 ईस्वी में पांड्य शासक सुंदर ने चोल नरेश राजेंद्र तृतीय को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार चोल राज्य के स्वतंत्र अस्तित्व का अंत हो गया।

8.4.2 चोलों की प्रशासन प्रणाली

भारतीय राज्य के विकास क्रम में प्रारंभिक मध्ययुगीन इतिहास का समय अनेक महान प्रांतीय राज्य और नृपतन्त्रों के उदय और विस्तार कर रहा था । सुदूर दक्षिण के राज्यों में पांड्य, चेर तथा चोरों के राज्य उल्लेखनीय रहे हैं। 10वीं,11वीं शताब्दी के आते-आते राजराजा और उसके उत्तराधिकारियों के अधीन चोल साम्राज्य दक्षिण की प्रमुख शक्ति के रूप में स्थापित हुआ। चोलों के राज्य का स्वरूप भले ही राजतंत्रात्मक था परंतु स्थानीय इकाइयों जैसे ग्राम सभाओं को काफी स्वायत्तता दी गई थी।

8.4.3 राज्य का स्वरूप

संगम साहित्य से हमें यह जानकारी मिलती है कि दक्षिण भारत में भी राज्य का स्वरूप राजतंत्रीय था, जिसमें राजा सर्वशक्तिमान था। वह समाज और राज्य का मुखिया था। विधि का सर्वोच्च प्रशासक था। राजा जन संरक्षक तथा न्याय का प्रतीक था। उसकी निरंकुशता को मान्य परंपरा, बुद्धिमान मंत्री,

संगठित अधिकारी तंत्र या राजा के कवि मित्र ही सीमित कर सकते थे। साधारणत: राजतंत्र वंशानुगत था तथापि उत्तराधिकार के लिए युद्धों का भी उल्लेख मिलता है। प्रजा सुखी तथा राजा के प्रति निष्ठावान थी। राजा का व्यवहार सबके लिए अनुकरणीय माना जाता था अतः उसके व्यवहार में नैतिकता परम आवश्यक थी। राजा कला, साहित्य तथा धर्म का संरक्षक था, प्रजा को संतान के समान मानते हुए हर दिन अपनी सभा (नालवै) अथवा आवइ में प्रजा के कष्टों को सुनता था तथा पक्षपात रहित होकर शासन तथा न्याय कार्य संपन्न करता था। संगम साहित्य में राज्य संचालन में राजा के अत्यंत कठिन उत्तरदायित्व को समझते हुए राजा को प्रजा के लिए प्राण स्वरूप माना गया है। राजा अपने दिन प्रतिदिन के नित्य कर्म तथा राज कार्य के संचालन में योग्य ब्राह्मण सहायकों पर निर्भर था। राज्य में ब्राह्मणों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी तथा किसी राजा के लिए प्रशंसा के सर्वोच्च शब्द यह हो सकते थे कि वह ब्राह्मणों को कष्ट नहीं पहुंचाता।

8.4.4 कार्यक्षेत्र

राजा केवल राज्य का ही प्रमुख नहीं था अपितु समाज में भी उसको उच्च स्थान प्राप्त था। राजा द्वारा विभिन्न ललित कलाओं को प्रोत्साहन तथा सरंक्षण प्रदान किया जाता था। इस उद्देश्य से प्राय: राजा कवियों तथा कलाकारों को धनराशि वितरित करता था।

यथा प्रारंभिक चोल राजाओं में से प्रमुख करिकाल द्वारा पट्टिनप्पालै के रचयिता को 16 लाख सोने की मुद्राएं प्रदान करने के विवरण उपलब्ध है। कवियों और गायकों को विशेष रूप से दरबार में प्रश्रय दिया जाता था। इसके अतिरिक्त दक्षिण भारतीय राज्य/ राजा मंदिरों के उदार संरक्षक भी थे। अधिकांश अभिलेखों के अनुसार राजा तथा राजपरिवार मंदिरों को प्रचुर मात्रा में भेंट में दान देते थे जिनका उद्देश्य ब्राह्मणों के अनुष्ठानों, बलि, यज्ञ, पूजा इत्यादि को सहायता प्रदान करना था। मुख्यतः यह भेंट अलंकृत देवी स्थल, मूर्तियां बहुमूल्य आभूषण इत्यादि के रूप में होती थी। कहीं-कहीं पर दान कृषि

भूमि को कर से मुक्ति के रूप में भी होता था जिसमें प्राय: एक सम्मानित व्यक्ति औपचारिक रूप से राजा से किसी निश्चित कृषि भूमि के कर के स्थगन और उस कर को निश्चित मंदिर के अनुष्ठान/ कर्मकांड के खर्च के लिए हस्तांतरित करने की प्रार्थना करता था। राजा इस प्रार्थना को स्वीकार करते हुए कर स्थगन की अनुमति देते और साथ ही कर को औपचारिक तौर पर मंदिर के रखरखाव के लिए हस्तांतरित करने के निर्णय को सार्वजनिक रिकॉर्ड में चढ़ाने का आदेश भी देते थे। यह परंपरा 11 वीं शताब्दी में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई जो चोल राजाओं का भी चरमोत्कर्ष का समय था।

8.4.5 सेना

राजा में विजेता होने की आकांक्षा होती थी और इसके लिए वे युद्ध के लिए तत्पर भी रहते थे। संपूर्ण भारत की विजय (दिग्विजय) करना दक्षिण भारतीय शासकों के लिए एक आदर्श था। संगम साहित्य में भी चक्रवर्ती राजा का उल्लेख मिलता है। स्वाभाविक ही, सभी शासक पेशेवर सैनिकों की सेना रखते थे। सेना के कप्तान की उपाधि ' एनाड़ी ' थी। परंपरागत चतुरगिणी सेना संगठित की जाती थी जिसमें रथ, हाथी, घोड़े तथा पैदल सैनिक सम्मिलित होते थे। चोल राज्य में सेना की 31 टुकड़ियों का उल्लेख शिलालेखों से मिलता है जिनके प्रशिक्षण व अनुशासन पर विशेष ध्यान दिया जाता था। संपूर्ण सेना की संख्या लगभग 150000 थी जिसमें 60000 हाथी थे। घुड़सवार सेना के लिए अरबी घोड़े मंगवाए जाते थे। सेनाध्यक्षों में नायक, सेनापति और महादंडनायक होते थे । असीम शौर्य प्रदर्शन करने पर ' क्षत्रियशिखामणि ' जैसी पदवियां प्रदान की जाती थी । अस्त्र-शस्त्र में तलवार, धनुषबाण, बाघबर का कवच, बर्छे, भाले, ढाल इत्यादि का उल्लेख मिलता है। सैनिकों के आह्वान के लिए नगाड़े तथा शंख की ध्वनि प्रयोग में लाए जाते थे। राजा के आवास पर सशस्त्र महिलाएं रक्षक के रूप में नियुक्त की जाती थी। परांतक प्रथम के समय के शिलालेखों से यह जानकारी मिलती है कि राजा के व्यक्तिगत अंग रक्षकों की एक टुकड़ी भी सेना का भाग थी जो साम्राज्य की सेवा के साथ-साथ राजा की

व्यक्तिगत सुरक्षा के लिए सदैव तत्पर रहती थी। राजा स्वयं भी युद्ध के मैदान में सैनिकों के साथ लड़ते थे। युद्ध में मृत्यु स्वर्ग के द्वार के रूप में मान्य थी। युद्ध में वीरगति प्राप्त सैनिकों की पत्थर की मूर्तियां बनाई जाती थी। वैदिक व मौर्यकालीन परंपरा से भिन्न दक्षिण भारतीय राज्यों में युद्ध में शत्रु के खेतों तथा फसल व नागरिक जनसंख्या को भी नष्ट कर दिया जाता था। सैनिक के रूप में 'बेलालर' लोगों का काफी महत्व था। यह संपन्न कृषक थे, फिर भी युद्ध में भाग लेते थे। इनके अतिरिक्त ब्राह्मण भी सेना में नियुक्त होते थे।

8.4.6 अर्थव्यवस्था/ आर्थिक तंत्र

चोल राज्य का अस्तित्व कृषि पर ही आधारित था, यद्यपि राज्य की आय के प्रमुख स्त्रोत कृषि व्यापार दोनों थे। कृषि उत्पाद में राज्य का कितना भाग होता था इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता फिर भी राजराजा प्रथम के समय में यह उत्पादन का एक तिहाई प्रतीत होता है। विदेशी व्यापार का भी अत्यंत महत्व था क्योंकि इससे सीमा शुल्क के रूप में भी राज्य को भारी धनराशि प्राप्त होती थी। आंतरिक व्यापार में भी चुंगी ली जाती थी तथा अनुबंधित व्यापार की रोकथाम के लिए सैनिकों द्वारा विभिन्न मार्गों की दिन रात निगरानी की जाती थी। कर वसूली में संयम तथा नरमी बरतने की परंपरा थी। युद्ध में लूट की सामग्री भी आय का एक स्रोत था। चीन, सुमात्रा, जावा तथा अरब राष्ट्रों के साथ व्यापारिक अंतःक्रिया के प्रमाण उपलब्ध है जो व्यापार के उन्नत स्तर की ओर संकेत करते हैं। कुछ व्यापारिक श्रेणियां बड़े आकार के अंतरराष्ट्रीय संगठन थे। उद्योग उन्नत व फल फूल रहे थे विशेषत: आभूषण, धातु उद्योग व बुनाई का कार्य।

भूमि पर व्यक्तिगत व सामुदायिक दोनों प्रकार के स्वामित्व का अस्तित्व था। कृषि की संपन्नता हेतु केंद्रीय व स्थानीय शासन द्वारा सिंचाई की सुविधा का विशेष ध्यान रखा जाता था। कावेरी व अन्य नदियों के जल के उचित उपयोग हेतु बड़े बड़े तालाब बनाए गए थे। ग्राम सभाएं इनके रखरखाव के

लिए तथा वन्य अनुपयोगी भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए उत्तरदायी थी। कृषि उत्पाद में राज्य का हिस्सा विस्तृत भू- सर्वेक्षण व भूमि के श्रेणियों में विभाजन के बाद निश्चित किया जाता था जिसका समय समय पर संशोधन व नवीकरण किया जाता था। सार्वजनिक व्यय के प्रमुख क्षेत्र, राजा, दरबार, सेना, नौसेना, नागरिक प्रशासन, सड़क, सिंचाई सुविधाएं, तथा मंदिर में धार्मिक विधियां थी।

चोल राज्य की वित्त व्यवस्था का ज्ञान भी तत्कालीन अभिलेखों से प्राप्त होता है जिनमें भू-उत्पाद के अधिकारों के हस्तांतरण का लेखा-जोखा अंकित है। चोल कालीन राज्य व्यवस्था में मुख्यतः दो प्रकार की भूमि -शुल्कों का वर्णन मिलता है। प्रथम, स्थानीय स्तर पर भूमि के नियंत्रकों पर अनेक प्रकार के शुल्क देय थे जो सिंचाई सुविधाओं और ग्रामीण -स्वशासन की स्थानीय प्रक्रियाओं के रख-रखाव के वार्षिक खर्च के लिए थे। द्वितीय, उच्चतर अभिक्रमों के कृषि उत्पाद के भाग के रूप में लिए जाने वाले अनेक प्रकार के शुल्क थे। इनमें से एक भू -शुल्क 'कदमाई' था जो प्राय: चोल राजा के केंद्रीय प्रांत में भू -शुल्क विभाग द्वारा निर्धारित अवधि पर वस्तु रूप में देय था। इनके अतिरिक्त शुल्क नगद अथवा वस्तु के रूप में देय थे जो शुल्क संग्रह करने वाले अभिकर्ताओं के रखरखाव का भार वहन करने के लिए होते थे। कृषि उत्पादन शुल्क के दो विभाजन 'मैलवारम'(उच्च अधिकारियों का भाग) और 'किलवारम'(निम्न अधिकारियों का भाग) थे। कृषि उत्पाद और भू -शुल्क के अतिरिक्त ग्रामीण शासन हेतु कर, नाडु शासन हेतु कर(नाटाची), हल चलाने हेतु शुल्क(उरप पोन), विवाह शुल्क(कणाकल काणम) तथा कानूनी शुल्क (विवास्ताई) स्थानीय व्यक्तिक श्रम हेतु शुल्क(विनियोगम) अंतर्वर्ती आयकर(अन्तरायम) पके चावलों में अधिकारियों का हिस्सा(इकोरू) विशेष 'सुरक्षा' शुल्क(पाड़िकावल) इत्यादि का भी उल्लेख मिलता है।

कड्डपाह जिले के चिडिपिरल्ला में प्राप्त 1578 ईस्वी के एक अभिलेख में अनेक प्रकार के भु -राजस्व और काश्तकारी व्यवस्था के उल्लेख मिलते हैं। विभिन्न प्रकार के लोगों को उनकी सेवाओं के बदले में

देवदाय, ब्रह्मदेय,वृत्ति तथा मान्य भूमि देने के अतिरिक्त शासक अथवा प्रांतीय प्रशासक काश्तकारों को पट्टे पर भूमि देते थे जिसका निश्चित वार्षिक किराया देय होता था। काश्तकारों(कपुओं) को अनेकश: नई तथा कृषि के अयोग्य बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु भी भूमि दी जाती थी। अधिकांशत: जमीन को पट्टे पर देने वाले जन महामंडलेश्वर(मंदिर प्रमुख) कार्यकर्ता(राज अधिकारी) मठ, तथा नायक प्रमुख(प्रांतीय शासक) होते थे तथा पट्टे पर लेने वाले कंपु, करणम, रेड्डी, गौड़ तथा कुछ अन्य व्यक्ति होते थे। प्रायः राजाओं से भूदान मंदिरों को प्राप्त होता था जो उसे नायकों को पट्टे पर देते थे और नायक अंततः उसे काश्तकारों को खेती के लिए देते थे। उससे प्राप्त होने वाले उत्पाद में मंदिर का भाग मंदिर के कोष में भेज कर थोड़ा सा भाग काश्तकारों को देकर शेष स्वयं नायक रखते थे और इस प्रकार वे सबसे बड़े भू-बिचौलिये भी कहे जा सकते थे जो अपनी संपत्ति में इस अतिरिक्त भू-उत्पाद से निरंतर वृद्धि करते थे।

8.4.7 प्रशासनिक तंत्र

चोल राज्य के अधिकारियों की पहचान उसके नाम और पदवियों के मिश्रण के कारण जटिल है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि अधिकांश अतिरिक्त पदवियां व नाम इन अधिकारियों की राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था में अवस्थिति की और संकेत करते हैं। जबकि बर्टन स्टीन का मानना है कि सभी अतिरिक्त पदवियां मात्र सम्मानजनक और राजा द्वारा प्रदत थी तथा वे प्रशासनिक कार्यों की ओर संकेत नहीं करती। तथापि इन दोनों दृष्टिकोणो को ध्यान में रखते हुए भी उपलब्ध सामग्री से चोल कालीन प्रशासनिक अधिकारियों के विषय में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। उदाहरण के रूप में 10वीं और 11वीं शताब्दी के अभिलेखों में अधिकारियों के एक ऐसे समूह का उल्लेख मिलता है जो 'नाडु' के रखरखाव में सलंग्न थे जिनमें मुख्य निरीक्षक, प्रशासक तथा सेनापति उल्लेखनीय है। मुख्य निरीक्षक प्रायः विभिन्न गांव और सभाओं की वार्षिक देय राशि तथा मंदिरों के विभिन्न देवी-देवताओं

के लिए सुनिश्चित राशि के निर्धारण का कार्य संपन्न करते थे। प्रशासक अथवा अधिकारी न्यायालयों में उपस्थित होने तथा दूर दराज के इलाकों में विभिन्न कार्यो के निरीक्षण के लिए उत्तरदायी थे। अनेक अधिकारी राजकीय परिवार के साथ जुड़े थे और अनेकश: दानियों के रूप में भी उनका उल्लेख आता है। प्राय:ये विस्तृत राज परिवार का ही अंग माने जाते थे जिनमें राजा के सचिव, मित्र, अंतरंग, पदाधिकारी, चोलकुल से जुड़े श्रेष्ठ कुलों के वंशज तथा राज परिवार के निकट संबंधी सम्मिलित थे। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में जिन कुशल राज्यों को 'कुलसंघ' का नाम दिया है वह ऐसे ही प्रतीत होते हैं।

चोल राज्य तंत्र के अधिकांश पदाधिकारी स्थानीय विवादों में मध्यस्थता का कार्य भी करते प्रतीत होते थे। किसी भूमि से ईश्वर अथवा मंदिर के लिए देय राशि के विषय में उत्पन्न विवादों में ऐसे अधिकारी इस गांव में जाते, संबंधित कागजों को देखते, प्रासंगिक गवाही सुनते, और स्थानीय सभाओं की उपस्थिति में निर्णय देते जिसकी मान्यता कानून के समान थी। उदाहरणार्थ, तिरुविदाईमेरादुर में मंदिर में श्री कार्य (धार्मिक कार्य) करने वाले एक अधिकारी की मध्यस्थता का वर्णन मिलता है। वह अधिकारी स्थानीय समुदाय द्वारा मंदिर को देय राशि से संबंधी विविध तर्क सुनता था, समुदाय के अग्रणी लोगों को संबंध दस्तावेज/ कागज दिखाने का आदेश देता था और उनके आधार पर देय राशि की सीमा निर्धारित करता था । ऐसे ही कार्य विस्तृत राजपरिवार से जुड़े अधिकारी भी करते थे । तदर्थ हस्तक्षेप व मध्यस्थता का कार्य होने के बावजूद ये राज- प्रतिनिधि स्थानीय मामलों में राजकीय पैठ के प्रतीक थे और इस रूप में केंद्रित नौकरशाही की संरचना के बाहर रहते हुए भी राजकीय प्रभाव के विस्तार की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। परंतु यह भी स्पष्ट है कि यह अधिकारी एक प्रशासनिक अधिकारी तंत्र का हिस्सा नहीं थे। इसी आधार पर जेम्स हिट्जमैन इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इन अधिकारियों के नामों के विश्लेषण से चोल राज्य के शासन के लिए शाखाओं में विभाजित नौकरशाही की व्यवस्था के बहुत कम संकेत मिलते हैं।

बाद के अभिलेखों में राजकीय प्रतिनिधियों के एक निम्न समुदाय के उल्लेख मिलते हैं जिन्हें 'भूमि शुल्क विभाग' के सदस्य के रूप में वर्णित किया गया है। यह सदस्य विशेषत: एक उद्देश्य हेतु कार्य करते थे। वह उदेश्य था भूमि के माप -तोल व उस पर देय शुल्क राशि का हिसाब- किताब रखना और अनेक बड़े अभिलेखों में भी इस विभाग की राजा की इच्छा व आदेश क्रियान्वित करने और अन्य राजनीतिक संस्थाओं के साथ उन को जोड़ने की भूमिका का वर्णन मिलता है। भूमि शुल्क विभाग के अधिकारियों के कार्यों में विभाग का पर्यवेक्षण, रिकॉर्ड की नकल रखना, उस पर राजकीय मोहर लगाना, तथा स्थानीय जनता और राज महल के अन्य लेखा विभागों की गतिविधियों के साथ संबंध जोड़े रखना इत्यादि शामिल है। इस विभाग के अधिकारी विशिष्ट व श्रेणी पदों पर कार्यरत थे तथा राजा के आदेशों को स्थानीय इकाई तक हस्तांतरित करने के विशिष्ट कार्य में सलंग्न थे अतः इस विभाग को एक अधिकारी तंत्रीय राज्य का अंग माना जा सकता है जिसमें अधिकारी तंत्र के अनेक गुण देखे जा सकते थे जैसे प्रणालीबद्धता , केंद्रीयकृत निर्णय, कार्य विशिष्टता ,श्रेणीबद्धता,विभिन्नीकृत आदेशों व भूमिकाओं की कड़ी तथा अधीनस्थता इत्यादि। जहां प्रारंभिक चोल राज्य में विस्तृत राज परिवार के अधिकारियों की विशालतम संख्या थी, वही 11वीं शताब्दी के प्रारंभ तक इनकी संख्या घटती गई और उनका स्थान भूमि शुल्क विभाग के नौकरशाह लेते गए।

चोल राज्य में लगाए जाने वाले प्रमख करों के अध्ययन से एक निरंतर ढांचा उभर कर आता है जिससे यह जानकारी मिलती है कि धीरे-धीरे ग्रामीण प्रशासन द्वारा निर्धारित और संग्रहित करों और शुल्कों के महत्व में कमी आई और कर संग्रह के अधिकार उच्चतर अभिकरणों के हाथों में केंद्रित होते गए। इनसे यह भी ज्ञात होता है कि धीरे-धीरे चोल राजाओं के अधीनस्थ अधिकारियों की ग्रामीण प्रशासन में पैठ बढ़ती गई जो चोल राज्य की बढ़ती सत्ता का भी सूचक है। जैसे-जैसे चोल राजाओं की सत्ता बढी स्थानीय सभाओं जैसे नाटार दहमजजहमत (नाडु नेताओं की सभा) की प्राथमिकता और सत्ता कम

होती गई और जैसे ही चोल राजाओं की शक्ति क्षीण हुई ये स्थानीय सभाएं फिर से सत्ता में स्थापित होने लगी। चोल राज्य की बढ़ती हुई सत्ता का एक अन्य प्रमाण मंदिरों के निर्माण और उन को दान में मिली भूमि व अन्य संपत्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि था। परंतु जैसे-जैसे केंद्रीय राज्य की सत्ता कमजोर हुई मंदिरों की स्थाई धर्म निधि में विस्तार होता गया और अंततः मंदिर स्वयं ही मुख्य भूमि- पति और राजनीतिक शक्ति बनकर दक्षिण भारत की महानतम संस्थाएं बन गए। हिट्जमैन चोल राज्य को एक प्रारंभिक राज्य की श्रेणी में रखते हैं क्योंकि इसका कृषिगत आधार और राजनीतिक शक्ति विस्तार की प्रारंभिक अवस्था में थे तथापि चोल राजाओं ने उपजाऊ नाडुओं में शासकीय प्रवेश की नई सीमाएं स्थापित की। ऐसा उन्होंने आर्थिक क्रियाओं के निरीक्षण राजकीय अधिकारियों की मध्यस्थता और कराधान व संग्रह के विस्तार के माध्यम से किया। परिणाम स्वरूप चोल राज्य ने विस्तार, शहरीकरण और स्थानीय मामलों में केंद्रीय अंत प्रवेश की जो विरासत छोड़ी वह पांड्य और विजयनगर साम्राज्य निर्माण की अवधि में भी लुप्त नहीं हुई अपितु अधिक प्रभावी तौर पर क्रियान्वित हुई।

चोल शासन तंत्र में अधिकारियों को भुगतान भू- अनुदानों अथवा भू- प्रबंधन के अधिकार के माध्यम से किया जाता था तथा उन्हें सम्मान व प्रोत्साहन पदवियों के माध्यम से दिया जाता था। उच्च अधिकारियों को 'पैरुन्दारम' तथा निम्न अधिकारियों को 'सिरुतारम' की अवस्थिति प्राप्त थी। राजा के द्वारा विभिन्न स्थानों के भ्रमण की प्रक्रिया से प्रशासन की कुशलता व निपुणता बनी रहती थी।

चोल राज्य में स्थायी मंत्री परिषद का उल्लेख नहीं मिलता परंतु कार्यकारी अधिकारियों की संस्था उड़न- कुट्टम निरंतर राजा की सहायता में तत्पर रहती थी। चोल अधिकारियों का उच्च व निम्न श्रेणियों में विभाजन था जिसे उनकी पदवियों से पहचाना जा सकता था। राजकीय भूमि अनुदान के लिए एक जटिल प्रशासन तंत्र व प्रक्रिया निर्धारित थी। राजा के आदेश पहले एक सचिव को लिखित में सूचित किए जाते थे फिर उस पर तीन प्रमुख सचिवों द्वारा हस्ताक्षर किए जाते, तत्पश्चात राज्य के

लेखा विवरण में नियुक्त तीन अधिकारियों द्वारा दर्ज किए जाते उसके बाद 38 राजकीय अधिकारियों की सभा होती थी जहां चार अधिकारी आदेश दर्ज करने का आदेश देते, एक आदेश को पढ़ते, एक अन्य अधिकारी उसे दर्ज करते, तथा एक अन्य संशोधित लेखा विवरण को जारी करते।

8.4.8 न्याय व्यवस्था

राजा का सर्वोच्च न्यायालय राजा की सभा (मंरम) ही होती थी। सभासदों से यह अपेक्षा की जाती थी कि न्याय संबंधी विवादों में वे निष्पक्ष रहेंगे। ऐसे उल्लेख भी मिलते हैं कि सभा में राजा अन्य प्रशासकीय विषयों पर भी परामर्श करता होगा जैसे संगम काल के बाद की एक कृति कुरल में सभा को सभी कार्यों को संपादित करने वाली साधारण परिषद कहा गया है। प्रशासन तथा न्याय व्यवस्था के अंतर्गत बंदीगृह स्थापित थे। न्याय समिति अर्थात 'न्यायाट्टार' विवादों के निपटारे, अपराध की घोषणा, व स्थापना तथा दंड देने के अधिकारों से युक्त थी। अपराधी के अपराध की जांच एक जन समिति द्वारा करने की व्यवस्था के संकेत भी मिलते हैं जिससे यह कहा जा सकता है कि चोल कालीन व्यवस्था में जूरी पद्धति का अस्तित्व था। मृत्युदंड बहुत कम मामलों में दिया जाता था। दुर्घटना में मृत्यु की स्थिति में अपराधी को गांव के मंदिर में स्थाई दीप का दान देने का दंड किया जा सकता था जिससे मृत आत्मा को धार्मिक पुण्य प्राप्त हो सके। उत्तरामेरुर शिलालेखों से ज्ञात होता है कि अवैध संबंध, चोरी, धोखाधड़ी तथा कौटुंबिक व्यभिचार जैसे गंभीर अपराधों के लिए भी 'गधे की सवारी' जैसे दंड दिए जा सकते थे। इससे यह प्रतीत होता है कि चोल न्याय व्यवस्था काफी उदार थी।

8.4.9 स्थानीय स्वशासन

प्रशासनिक सुविधा के लिए चोल राज्य प्रांतों, मंडलों, नाडुओ व नगरों में विभाजित था। राजराजा का साम्राज्य 8 मंडलों अथवा प्रांतों में विभाजित था जो आगे वेलनाडु और नाडुओ तथा कुर्रमों अथवा

कोटटमों में उप विभाजित थे जो स्वायत्त गांवों की एक निश्चित संख्या से बने थे तथा प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। अनेकश: प्रांतों का शासन युवराजों द्वारा नियंत्रित था।

दक्षिण भारत की उर्वर नदी घाटियों की एक प्रादेशिक इकाई को 'नाडु' के नाम से जाना जाता था। एक नाडु में प्राय: 300 के लगभग गांव शामिल थे। एक ऐसी प्रादेशिक इकाई जिसमें निवासियों के जीवन निर्वाह के पर्याप्त साधन हो, और मुखिया के लिए पर्याप्त आय के स्रोत हो, एक श्रेष्ठ नाडु समझा जाता था। इससे यह संकेत मिलते हैं कि पहले बिखरी हुई विखंडित इकाइयों का एकीकरण हो चुका था और धीरे-धीरे अनेक विशिष्टकृत स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं का नाडु की नई प्रादेशिक इकाई में एकीकरण हो रहा था।

इतिहासकार बर्टन स्टीन ने नाडुओं को मध्यकालीन दक्षिणी भारत के आंतरिक रुप से विभिन्नीकृत स्थानीय सामाजिक संरचनाएं मानते हुए यह तर्क दिया है कि इस समय की राजनीतिक व्यवस्था ऐसे विखंडित तथा स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था पर आधारित थी। ये नाडु उनके अनुसार स्तरीकृत श्रेणीबद्ध व्यवसायिक विविधता युक्त सांस्कृतिक आधार पर विभिन्नीकृत प्रादेशिक इकाइयां थी जिनमें प्राय: परस्पर पूरक विपक्षी प्रवृत्तियों का प्रदर्शन भी मिलता था। इसी तर्क को आगे बढ़ाते हुए बर्टन स्टीन व नीलकांत शास्त्री जैसे इतिहासकारों द्वारा चोल राज्य के प्रभावी स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों से युक्त केंद्रीकृत राज्य के रूप में वर्णन को अस्वीकार किया और यह मत दिया कि चोल राज्य वेलाल वर्ग के नेतृत्व के अधीन नाडु पर आधारित पिरामिडी राज्य था। नाडु मंदिरों की परंपराओं तथा शैव संप्रदाय को राजकीय सरंक्षण के कारण चोल युगीन राज्य इन नाडुओ को एक सांस्कृतिक सूत्र में बांध सका था और इसी संदर्भ में यह नाडु चोल साम्राज्य को सैनिक सप्लाई करते थे। संगम साहित्य में उपलब्ध विवरण के अनुसार भी इन नदी घाटियों की उर्वर इकाइयों नाडुओ का राजनीतिक नेतृत्व 'वेलिर' समुदाय के हाथ में था। संगम रचनाओं में कृषि में संलग्न जन समुदाय को वेलालर कहां गया है और

उनके प्रमुखों को वेलिर। 'वेलिर' कृषि भूमि के बड़े भाग्य के स्वामी थे इसलिए वेलिर वर्ग को दक्षिण भारत का प्रारभकीय कृषि गत विशिष्ट वर्ग कहा जाना अनुचित नहीं होगा। न केवल यह समुदाय धनी एवं संपन्न था अपितु इनकी नियुक्ति राज्य के उच्च पदों पर होती थी वे युद्ध तथा शिकार में राजा के साथ जाते थे तथा राज परिवारों से इनके वैवाहिक संबंध होते थे।

ग्रामीण जीवन की सामाजिक तथा धार्मिक समस्याओं के समाधान के लिए मनोरम नामक सभास्थल का उल्लेख मिलता है यह जानकारी भी संगम साहित्य में प्राप्त है कि प्रत्येक गांव में सामाजिक क्रियाकलापों, खेलकूद मनोरंजन के कार्यक्रमों आदि के लिए एक विशेष स्थान होता था। कभी-कभी उसका वृक्षों के नीचे होने का उल्लेख भी मिलता है। इस प्रकार के स्थलों पर होने वाले सामूहिक आयोजनों में राजनीतिक विचार विमर्श तथा निर्णय भी होते होंगे जिनका आगे चलकर ग्रामीण स्वशासन की संस्था के रूप में विकास हुआ क्योंकि बाद में चोल शासकों के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन अत्यंत सुसंगठित संस्था के रूप में विकसित और प्रचलित हुआ।

8.4.10 ग्रामीण संस्थाएं

यद्यपि चोल राज्य अनेक प्रादेशिक इकाइयों जैसे मंडल, नाडु, कुर्रम, नगरम इत्यादि में विभाजित था ग्रामीण सभाओं की भूमिका और गतिविधियां सर्वाधिक व्यापक व उल्लेखनीय थी। ग्राम सभाएं प्राथमिक सभाएं थी जिनमें ग्राम के सभी व्यस्क पुरुष सदस्य होते थे। दो प्रकार की सभाओं का उल्लेख चोल कालीन शिलालेखों में मिलता है- ऊर, यंत तथा महासभा। इनमें से प्रथम सामान्य श्रेणी की सभा थी जबकि द्वितीय अग्रहर और ब्राह्मण समुदायों की सभा थी जिसका विवरण चोलमंडलम के शिलालेखों में सर्वाधिक प्राप्त होता है ये सभाएं कुछ क्षेत्रों में सकेंद्रित थी यथा कांची तथा मद्रास क्षेत्र। इनके अतिरिक्त नगर में व्यापारियों की सभा थी। इन्हीं शिलालेखों में चोल राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में समिति व्यवस्था 'वारियम' के भी स्पष्ट संकेत मिलते हैं

919 और 921 ईस्वी के परांतक प्रथम के शिलालेखों में वारियम अथवा कार्यकारी समिति के संविधान के बारे में महासभा द्वारा पारित प्रस्तावों के उल्लेख मिलते हैं। संविधान के प्रावधानों संबंधी विवरण से तत्कालीन राजनीतिक परिपक्वता व समझ का आभास सरलता से हो जाता है। 921ईस्वी के प्रस्ताव के अनुसार गांव के 30 वार्डो (कुडंबस) में से प्रत्येक को निम्नलिखित योग्यताओं से युक्त व्यक्तियों को चयन हेतु मनोनीत करना था:

- ¼ वेली(लगभग1. 5 एकड़) से अधिक भूमि का स्वामित्व
- अपनी भूमि पर बनाए घर में निवास
- 35 से 70 के बीच आयु
- वैदिक मंत्र व ब्राह्मण ग्रंथों का ज्ञान अथवा विकल्प के रूप में1/8 वेली भूमि का स्वामित्व तथा एक वेद और एक भाष्य का ज्ञान

साथ ही निम्नलिखित व्यक्तियों को मनोनीत नहीं किया जा सकता था

- जो पिछले 3 वर्षों से किसी समिति के सदस्य थे
- जो किसी समिति के सदस्य थे परंतु उसके हिसाब- किताब का ब्यौरा नहीं देय सके
- जो कौटुंबिक व्यभिचार अथवा ऐसे ही किसी बड़े पाप के दोषी थे
- जो स्वयं अथवा उनके संबंधी दूसरों की संपत्ति चुराने के अपराधी थे इत्यादि।

इस प्रकार नियमानुसार मनोनीत व्यक्तियों में से प्रत्येक 30 वार्डो में से एक व्यक्ति को 1 वर्ष के लिए लॉटरी की प्रक्रिया से चुना जाता था। इस प्रकार चुने गए 30 व्यक्तियों में से, 12 जो ज्ञान और आयु में परिपक्व थे यथा तालाब समिति और उद्यान समिति के सदस्य रह चुके थे को वार्षिक समिति

अथवा संवत्सर वारियम का सदस्य नियुक्त किया जाता था, 12 को उद्यान समिति अथवा 'टोट्टावारियम' का सदस्य तथा 6 को तालाब समिति अथवा' एरिवारियम' का सदस्य नियुक्त किया जाता था। अन्य समितियों- पंचवार वारियम(स्थाई समिति) पोन वारियम(स्वर्ण समिति) धर्म वारियम (धर्म समिति) न्याय समिति, वार्ड समिति, क्षेत्र समिति इत्यादि के भी इसी प्रकार चयन का उल्लेख शिलालेखों में मिलता है। चयन की प्रक्रिया इस प्रकार थी वार्डों में मनोनीत व्यक्तियों में से योग्य व्यक्तियों के नाम ताड़ के पत्तों पर लिखकर एक घड़े में से निकालने को कहा जाता था जितने सदस्य चुने जाने थे। समितियों व उनके सदस्यों की संख्या प्रत्येक गांव में भिन्न-भिन्न थी तथा उन्हें किसी प्रकार के वेतन दिए जाने का उल्लेख भी नहीं मिलता। समितियों के सदस्यों को 'वारियाप्परूमक्कल' महासभा को पेरुंगूरी तथा उसके सदस्यों को पेरुमक्कल कहा जाता था। साधारणतया सभा की बैठक गांव के मंदिर में होती थी। कभी-कभी बैठक एक वृक्ष के नीचे अथवा तालाब के किनारे होने के भी उल्लेख मिलते हैं।कोरम व मतदान के संकेत शिलालेखों में प्राप्त विवरण में उपलब्ध नहीं है। सभाओं में सामान्य विषयों पर चर्चा होती थी तथा प्रस्ताव पास किए जाते व अंकित किए जाते थे।

इन सभाओं द्वारा किए जाने वाले कार्यों से ग्रामीण स्वायत्तता की सीमा का अनुमान लगाया जा सकता है। महासभा सामुदायिक भूमि पर स्वामित्व तो रखती ही थी अपने क्षेत्र की निजी भूमि पर भी उसका नियंत्रण था वन्य तथा अनुपयोगी भूमि को कृषि योग्य बनाने का कार्य भी महासभा का था। गांव की भूमि पर देय शुल्क तथा कृषि उत्पाद का भाग निश्चित करने में सभा राज्य के अधिकारियों के साथ सहयोग भी करती थी। यह राजस्व वसूल भी करती थी तथा राजस्व न मिलने की स्थिति में उस भूमि को सार्वजनिक नीलामी के माध्यम से बेचने का अधिकार भी रखती थी। भूमि तथा सिंचाई संबंधी विवादों पर निर्णय का अधिकार भी सभा रखती थी और विशेष मामलों में एक से अधिक सभाएं

मिलकर निर्णय लेती थी। सामान्य सर्वेक्षण केंद्रीय सरकार द्वारा किए जाते थे परंतु महासभा के क्षेत्र में आने वाली भूमि के वर्गीकरण में कोई भी परिवर्तन करने से पहले सभा की सहमति आवश्यक थी।

महासभा को ग्राम से संबंधित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कराधान तथा विशिष्ट कारणों पर कराधान को छोड़ देने अथवा उसमें छूट देने की शक्ति प्राप्त थी। भू - राजस्व की शर्तों को आसान बनाना किश्तों में राजस्व वसूली का निर्णय लेने का अधिकार भी सभा को था। महासभा के अन्य कार्यों में सड़कों व सिंचाई सुविधाओं का रखरखाव धार्मिक व चिकित्सा संबंधी विधियों का निरीक्षण, शिक्षा व ज्ञान प्रसार हेतु प्रबंध करना इत्यादि उल्लेखनीय है।

इस प्रकार चोल कालीन राजनीतिक संगठन का विश्लेषण करने के पश्चात साथिआंतैएर (sathianthaier) इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि केंद्रीय सरकार बाह्य सुरक्षा आंतरिक शांति व्यवस्था के रखरखाव तथा साम्राज्य की सामान्य संपदा व सांस्कृतिक प्रगति के मामलों पर नियंत्रण रखती थी तथा शेष मामले ग्राम सभाओं पर छोड़ देती थी। केंद्र सरकार ग्राम सभाओं पर सामान्य नियंत्रण रखती थी तथा केवल विवाद की स्थिति में अथवा अपवाद की परिस्थितियों में ही हस्तक्षेप करती थी। ग्रामीण प्रशासन जनप्रिय आधार पर कुशलतापूर्वक संगठित था तथा ग्राम वासियों की प्रगति व संपन्नता में सहायक था। गांव का इस प्रकार का निगमित जीवन ही उन्हें 'लघु गणराज्य' की श्रेणी में खड़ा कर देता था, जो 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में आए ब्रिटिश प्रशासकों की प्रशंसा का पात्र बने।

ग्रामीण प्रशासन के कुशलता पूर्वक संचालन हेतु समिति व्यवस्था का जो उल्लेख चोल शिलालेखों में मिलता है उससे यह भी स्पष्ट होता है कि इन समितियों की सदस्यता के लिए आयु, संपत्ति, ज्ञान, कार्य कुशलता तथा नैतिक शुचिता संबंधी अति उच्च योग्यता अपेक्षित थी। ये अपेक्षाएं केवल स्व ही नहीं अपितु संबंधियों तक भी विस्तृत थी। समिति की सदस्यता तब तक नहीं मिल सकती थी जब तक की पिछली सदस्यता को समाप्त हुए 3 वर्ष न हो जाते। इस प्रकार के सदस्यों की उपलब्धता इस ओर

भी संकेत करती है कि चोल राज्य के गांव संपन्न, ज्ञान युक्त व स्वायत्त तथा स्थानीय शासन को कुशलता पूर्वक चलाने की योग्यता रखते थे। यह ग्रामीण समुदाय ही ग्रामीण गणराज्यों की संकल्पना को साकार करते थे तथा बाद में ब्रिटिश इतिहासकारों की अथक प्रशंसा और अनुशंसा का पात्र बने। परंतु दक्षिण भारत में राज्य निर्माण की प्रक्रिया जैसे-जैसे साम्राज्य निर्माण में परिवर्तित हुई इन गांवों की स्वायत्तता भी प्रभावित हुई। विजयनगर साम्राज्य के काल में शासकों ने प्रशासनिक व सैनिक केंद्रीकरण की जो नीति अपनाई उसके फलस्वरूप ग्रामीण स्वायत्तता व स्वशासन तो प्रभावित हुए ही चयन का स्थान वंशानुगत सदस्यता और कुशलता का स्थान राजकीय चाटुकारिता और संरक्षण ने ले लिया जिसके परिणाम स्वरूप धीरे-धीरे ग्रामीण सामुदायिक जीवन की स्वायत्तता लुप्त हो गई।

8.5 स्वयं प्रगति जांच (Check Your Progress)

रिक्त स्थान भरो:--

i. त्रिपक्षीय संघर्ष में तीन पक्ष..... शामिल थे।

ii. मान्यखेट ..... की राजधानी थी।

iii. त्रिपक्षीय संघर्ष... .....के लिए हुआ।

iv. चोल साम्राज्य का संस्थापक..... था।

v. चोलों की राजधानी..... थी।

vi. राष्ट्रकूट साम्राज्य का संस्थापक..... था।

कृपया उत्तर की पड़ताल पाठ के अंतिम हिस्से 8.9 में करें ।

8.6 सारांश (Summary)

गुप्तोत्तर काल के पश्चात उत्तर एवं दक्षिण भारत में कई शक्तिशाली साम्राज्यों का उदय हुआ। हर्षवर्धन के समय से ही उत्तर भारत के शहर कन्नौज का महत्व काफी बढ़ गया था। हर्षवर्धन ने 606 ईसवी से 647 ईसवी तक शासन किया था। हर्ष के बाद प्रत्येक शासक का कन्नौज पर विजय पाना एक लक्ष्य बन गया था नहीं तो उसके लिए उत्तरी भारत का शासक कहलाना ही निरर्थक था। जैसे ही पाटलिपुत्र का गौरव कम होना शुरू हुआ उसका स्थान तुरंत कन्नौज ने ले लिया था। यह अत्याधिक उपजाऊ इलाका था क्योंकि यह दो नदियों गंगा व यमुना के बीच में पढ़ता है। इसका सामरिक महत्व भी है। दो नदियों का इलाका होने के कारण इसे दोआब कहा जाता है। कन्नौज के लिए जो तीन पक्ष आपस में लंबे समय तक संघर्ष करते रहे उनमें गुर्जर प्रतिहार, पाल एवं राष्ट्रकूट थे। उसी समय दक्षिणी भारत में एक अन्य महत्वपूर्ण साम्राज्य की नीव चोल राजाओं ने रखी, चोल साम्राज्य के बारे में हमें संगम साहित्य से पता चलता है। उस समय के शासक राज्यारोहण के समय तथा युद्ध विजय के उपरांत बड़ी-बड़ी उपाधियां भी धारण करते थे। चोल काल के बारे में हमें जो जानकारी मिलती है उसका प्रमुख स्रोत उस समय के शासकों द्वारा लिखवाए गए अभिलेख,ताम्र पत्र एवं उस समय के कवियों व लेखकों के द्वारा लिखे गए ग्रंथ है। चोल काल में बनी काँसें की नटराज की मूर्ति और तंजौर का वृहदेश्वर मंदिर उस समय की कला एवं वास्तुकला के अनुपम नमूने हैं। चोल शासकों की सत्ता विकेंद्रीकृत थी। चोल शासक काफी उदार एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे, उनकी धार्मिक सहिष्णुता, उनके द्वारा लिखवाए गए शासकीय अभिलेखों में स्पष्ट झलकती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 7वीं से 11 वीं शताब्दी तक का काल उत्तर व दक्षिण भारत में छोटे-छोटे राजवंशों का काल था।

8.7 संकेतक शब्द (Keywords)

- **त्रिपक्षीय संघर्ष:** ऐसा संघर्ष जिसमें तीन पक्ष शामिल हो ।

- **दोआब:** दो का अर्थ है दो और आब का अर्थ है पानी अर्थात दो नदियों के पानी का इलाका दोआब कहलाता है।
- **जनप्रिय:** ऐसा व्यक्ति या शासक जिसको जनता पसंद करती है वह जनप्रिय कहलाता है।
- **भाष्य :**सूत्र ग्रंथों का विस्तृत विवरण या व्याख्या।बोलचाल में किसी गूढ़ बात या वाक्य की विस्तृत व्याख्या को भाष्य कहा जाता है।
- **काश्तकार:** कृषि योग्य भूमि पर वास्तविक रूप में खेती करने वाले कृषकों को काश्तकार कहा जाता है।

8.8 स्वयं मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

i. तृतीय संघर्ष में पाल, गुर्जर प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट शासकों की भूमिका के बारे में संक्षिप्त विवेचन कीजिए।

ii. पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट शासकों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

iii. 3.संगम साहित्य चोल साम्राज्य की जानकारी का प्रमुख स्त्रोत है, समझाइए।

iv. 4 .चोल कालीन शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालिए।

v. 5.राष्ट्रकूट साम्राज्य का संस्थापक कौन था ? उसके जीवन पर प्रकाश डालिए।

vi. 6. चोल कालीन वास्तुकला उस समय की सर्वश्रेष्ठ वास्तु कला में से एक थी, समझाइए।

vii. 7. गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य के पतन के कारणों पर प्रकाश डालिए।

viii. 8 . राष्ट्रकूट साम्राज्य के पतन के कारणों को समझाइए।

ix. 9 . पाल कालीन संस्कृति और वास्तु कला पर प्रकाश डालिए।

x. 10. त्रिपक्षीय संघर्ष के कारण और परिणामों को विस्तार पूर्वक समझाइए।

8.9 अपनी प्रगति की जांच हेतु उत्तर देखें (Answers to Check Your Progress)

i. **पाल, गुर्जर प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट।**

ii. **राष्ट्रकूटों ।**

iii. **कन्नौज।**

iv. विजयालय ।

v. तंजौर।

vi. दन्तिदुर्ग।

8.10 संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (Refrences / Suggested Readings)

- Russel,Jesse;Cohn,Ronald (2013).Chalukya Dynasty.
- भारतीय सामंतवाद (रामशरण शर्मा)- राम कमल प्रकाशन।
- भारतीय इतिहास का परिचय(राजबलि पांडेय)चौखंभा विद्या भवन।
- भारत का इतिहास (के.कृष्ण)राजकमल प्रकाशन।
- डब्लू डब्लू डब्लू डॉट गूगल डॉट कॉम।

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA
LESSON NO. 9	VETTER :
भक्ति व सूफी आंदोलन (Bhakti & Sufi Movement)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

9.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

9.2. परिचय (Introduction)

9.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text)

9.3.1. भक्ति आंदोलन प्रभावी सामाजिक व सांस्कृतिक कारक : अवधारणात्मक समझ। (Bhakti Movement Conceptual understanding) Effective social & cultural factors)

9.3.2. धार्मिक आस्था का स्वरूप (Nature of Religious belief or Faith)

9.3.3. भक्ति आंदोलन : परंपराएं (Bhakti Movements : Traditions)

9.3.4. भक्ति आंदोलन के उदय के कारण (Causes of origin of Bhakti Movements)

9.3.5. भक्ति आंदोलन की महत्वपूर्ण वि"ोषताएं (Important Characteristics of Bhakti Movement)

9.4. मुख्य पाठ के आगे का भाग (Further Main body of the text)

9.4.1 भक्ति आंदोलन का महत्त्व व प्रभाव (Important and effect of Bhakti movement)

9.4.2. सूफी आंदोलन : आवधारणात्मक समझ (Sufi Movement : Conceptual understanding)

9.4.3. सूफी आंदोलन : सामाजिक–सांस्कृतिक आधार (Sufi Movement : Social-Cultural Bases)

9.4.4. सूफी मत की ि"ाक्षाएं (Teachings of Sufism)

9.4.5. सूफी आंदोलन का महत्व एंव प्रभाव (Importance & effect of suffi movement)

9.5. प्रगति समीक्षा **(Check your progress)**

9.6. सारांश **(Summary)**

9.7. संकेत–सूचक **(Key-Words)**

9.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा **(Self Assessment Test)(SAT)**

9.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर **(Answers to check your Progress)**

9.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री **(References/Suggested Reading)**

9.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय क अध्ययन के उपरांत्, आप निम्न विषय वस्तुओं (contents) को समझने योग्य हो जाएगें :–

- भक्ति से हम क्या समझते है।
- भक्ति आंदोलन के इतिहास की समझ विकसित कर पाएगें।
- भक्ति आंदोलन की परंपराओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- भक्ति आंदोलन के कारण व प्रभाव की सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ में समीक्षा कर पाएगें।
- भक्ति आंदोलन की वि"ोषताओं पर परिचर्चा कर सकेगें।
- सूफी मत की अवधारणा को जान सकेंगे।
- सूफी आंदोलन की ि"ाक्षाओं को आत्मसात कर सकेंगे।
- विभिन्न सूफी सिलसिलों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगें।
- भारत के प्रसिद्ध सूफी संतों के बारे में जान सकेंगे।

9.2. परिचय (Introduction) :- मध्यकालीन भारत में मुस्लिम सत्ता की स्थापना के साथ ही सामाजिक व सांस्कृतिक स्तर पर दो परस्पर विरोधी आस्थाओं एवं वि"वासों के खिलाफ धार्मिक सुधार अति आव"यक हो गया था। इस समय का समाज एक तरफ जहां ब्राह्मण धर्म के कर्मकाण्ड से ग्रस्त था तो दूसरी और

मुस्लिम सत्ता पर उलेमा के प्रभाव के कारण इस्लामिक कट्टर पंथियों के प्रभाव से भी ग्रस्त था। इस परिस्थिति में 8वीं सदी से 18वीं सदी के दौरान इन परम्परागत रूढ़िवादी प्रवृतियों पर अंकु"ा लगाने के लिए इस्लाम एवं हिन्दू धर्म में दो महत्वपूर्ण आंदोलनों – सूफी एवं भक्ति आंदोलन का शुभारंभ हुआ। इन आंदोलनों ने निरर्थक कर्मकाण्ड, आडम्बर एवं कट्टरपंथ के स्थान पर सत्य, प्रेम व करूणा आधारित भक्ति–भावना को अपना आद"ा बनाया। यद्दपि आंदोलन के प्रणेताओं की परंपरा अलग–अलग रही किन्तु फिर भी सरलता, सहयोग, दया, उदारता, सद्भावना व प्रेम–प्यार, आदर–भाव सबके लिए केन्द्र बिन्दु रहा। सबों ने मानव धर्म व मानवता को समान रूप से महत्व दिया। दक्षिण भारत में वैष्णव संत अलवार व शैव संत नयनार को भक्ति आंदोलन का संस्थापक माना जाता है। इन दोनों परंपराओं के संतों ने जनसामान्य की भाषा तमिल मं साहित्य व भक्ति–भाव से युक्त गीतों की रचना कर सामाजिक धार्मिक कुरीतियों का जोरदार शब्दों में खण्डन किया। इनमें पुरूष व स्त्री दोनों संत शामिल थे। अलवार की अंडाल एवं नयनार की कराइक्काल अम्मइयार स्त्री संतों ने समाज को नवीन दि"ा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। दक्षिण भारत के शासकों–पल्लव, पांड्य, चोल, चालुक्य एवं राष्ट्रकूट ने इन संतों व इनके मतों को अपना संरक्षण प्रदान किया तथा अनेक भव्य मंदिरों का निर्माण करवाया। ये मंदिर ि"ाक्षा के केन्द्र के रूप में भक्ति–भावना के प्रचार में सहायक होते थे। नयनारों की संख्या 63 जबकि अलवारों की संख्या 12 थी और इनमें अनेक जातियों व भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि तथा पे"ाों के लोग शामिल थे। नयनारों में सर्वाधिक प्रसिद्ध थे – अप्पार, संबंदर, सुंदरार और मणिक्कवसागार। प्रसिद्ध तमिल ग्रंथ – तेवरम् और तिरूवाचकम् में हमें इनके गीतों के संकलन प्राप्त होते है। अलवार संतों में सर्वाधिक प्रसिद्ध थे – पेरियअलवार उनकी पुत्री अंडाल, तोंडरडिप्पोडी अलवार और नम्मालवार। प्रसिद्ध ग्रंथ दिव्य प्रबंधम् में इनके गीत संकलित हैं। अद्वैतवाद के प्रवर्तक आदिगुरू शंकराचार्य का जन्म केरल के कलादी गांव में आठवीं शताब्दी में हुआ था। इन्होनें एक मात्र निर्गुण और निराकार ब्रह्म को ही सव्य माना तथा जीवात्मा और परमात्मा दोनों एक ही हैं का ज्ञान दिया। यह संसार मिथ्या या माया है और यह ब्रह्म का ही विस्तार है। गाविंदाचार्य के ि"ाष्य आदिगुरू शंकराचार्य ने उस समय की परिस्थिति के अनुसार जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति के लिए ज्ञान के मार्ग को अपनाने का उपदे"ा दिया। यह रहस्य की बात है कि ज्ञानमार्गी होते हुए भी शंकराचार्य ने प्रबल भक्ति भावना के व"ाीभूत होकर देवी शक्ति और कृष्ण के भक्तिपरम गीत की रचना किया तथा भारत के चारों कोनो में चार मठ स्थापित किये जो भक्ति आंदोलन के दौरान और आज भी उत्तर व दक्षिण भारत को एक सूत्र में जोड़ने का कार्य करते हैं। आदिगुरू शंकराचार्य के प्रस्थानत्रयी भाष्य ज्ञान और भक्ति को बढ़ावा देने के रूप में उत्तर–दक्षिण सम्पूर्ण भारत में लोकप्रिय है।

वि"ाष्टाद्वैत के प्रवर्तक रामानुज ग्यारहवीं शताब्दी में तमिलनाडू में पैदा हुए थे। उन्होनें मोक्ष प्राप्ति का साधन भगवान विष्णु के प्रति अनन्य भक्ति को बताया। इन्होनें अपने वि"ाष्टाद्वैत सिद्धांत में बतलाया कि जीवात्मा, परमात्मा के साथ एकाकार होने पर भी अपना अलग अस्तित्व बनाए रखती है। तमिल भक्ति आंदोलन और मंदिर पूजा से प्रभावित होकर बारहवीं शताब्दी के मध्य में कर्नाटक में बसवन्ना और उनके सहयोगियों अल्लमा प्रभु तथा अक्कमहादेवी द्वारा वीर"ौव अथवा लिंगायत मत की स्थापना किया गया। वासवन्ना द्वारा कन्नड़ में रचे गये पद जिन्हे वचन कहा जाता है लिंगयात मत पर काफी प्रका"ा डालते हैं। इन्होनें धार्मिक व सामाजिक कुरीतियों का खंडन किया और स्त्री, पुरूष व जातिवाद से ऊपर उठकर सभी व्यक्तियों की समानता पर बल दिया।

वसवन्ना ने अपनी रचनाओं के माध्यम से कर्मकांड व मूर्तिपूजा का विरोध करते हुए मानव शरीर को ही तीर्थ व मंदिर के रूप में प्रस्तुत किया। यही कारण है कि यह मत आज भी दक्षिण भारत में बहुत लोकप्रिय है और समाज की दि"ा तय करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

तेरहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के मध्य महाराष्ट्र में अनेकानेक संत कवियों ने अपने सरल मराठी भाषा में लिखे अभंग गीतों के माध्यम से जन–सामान्य के बीच भक्ति–भावना का प्रचार–प्रसार किया। ये अभंग गीत आज भी जन–जन को प्रेरित कर रहे हैं। इनमें प्रमुख थे – ज्ञाने"वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, रामदास, तथा सक्कूबाई जैसी स्त्री संत तथा चोखमेला का परिवार। इन सभी संतों ने एक स्वर से सामाजिक व धार्मिक कुरीतियों, कट्टरपन जातिभेद का खंडन किया और गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए दूसरों के दुःखों को समझना और उसे बांट लेना असली भक्ति बतलाया। इन संतों की भक्ति भावना के प्रचार–प्रसार से एक नवीन मानवतावादी विचार का उद्भव हुआ। जैसा कि सुप्रसिद्ध गुजराती संत नरसी मेहता ने कहा था –''वैष्णव जन तो तेने कहिए पीर पराई जाने रे।'' बाद में नरसी मेहता का यहीं भजन गांधीजी का प्रिय भजन बन गया।

उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन का प्रारंभ और इसके प्रचार–प्रसार भारत के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस आंदोलन को दक्षिण से उत्तर भारत में लाने का श्रेय रामोपासक गुरू रामानंद को जाता है। इनके ि"ाष्य समाज के भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि व पे"ा से थे जिन्होनें समाज के निम्न से उच्च हर वर्ग के बीच भक्ति आंदोलन को अत्यंत लोकप्रिय बना दिया। इनके ि"ाष्यों में रहस्यवादी कबीर 'जुलाहा' संत रैदास 'चर्मकार', भक्त धन्ना 'जाट किसान', भक्त सेना 'नाई' व भक्त पीपा 'राजपूत' अत्यंत प्रसिद्ध हुए।

इस काल में अनके धार्मिक समूह जिनमें नाथपंथी, सिद्ध व योगी महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है ने अपने साहित्य रचना व योगासन, प्राणायाम व चिंतन–मनन जैसे क्रिया–कलापों के प्रचार–प्रसार द्वारा समाज में व्याप्त रूढ़िवादी धर्म की आलोचना किया और भक्ति मार्गीय धर्म के लिए आधार तैयार किया जो आगे चलकर उत्तरी भारत में लोकप्रिय शक्ति बना।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में 13वीं शताब्दी के बाद भक्ति आंदोलन को इस्लाम की राजसत्ता तथा उसके प्रति भारतीय जनमानस की प्रतिक्रिया ने सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से काफी प्रभावित किया। इस इस्लाम की स्थापना सातवीं शताब्दी में पैगंबर मुहम्मद ने अरब में की और इसके माध्यम से उन्होंने लोगों को एक अल्लाह, आपसी भाई–चारे, सादा एवं पवित्र जीवन व्यतीत करने एवं स्त्रियों का सम्मान करने का संदे"ा दिया। मुहम्मद साहब के कथनों का संकलन 650 ई. में अरबी में किया गया था। पवित्र ग्रंथ कुरान से हमें पता चलता है कि इस्लाम को मानने वालों के लिए पांच सिद्धांतों का पालन करना अनिवार्य है। मुहम्मद बिन कासिम द्वारा 711–12 ई. में सिंध विजय के फलस्वरूप इस्लाम की भारत में नींव पड़ी। 1206 ई. में दिल्ली सल्तनत की स्थापना एवं 1526 ई. में मुगल साम्राज्य की स्थापना के कारण भारत में इस्लाम का तीव्रता से प्रसार हुआ।

भारत में अधिकां"ा लोग गैर–मुस्लमान थे जबकि मुस्लिम शासकों पर मुस्लिम धर्मगुरू उलमा का प्रभाव था जिसके फलस्वरूप दो आस्थाओं के बीच टकराव हुआ जिससे भक्ति आंदोलन को काफी बढ़ावा मिला। मध्यकाल में इस्लाम के अंतर्गत प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए उत्सुक लोगों द्वारा एक रहस्यवादी आंदोलन के रूप में सूफीमत का विकास हुआ। यह सूफीमत तात्कालिक भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक परंपराओं से बहुत प्रभावित था इस कारण इसकी सफलता और लोकप्रियता का इतिहास बहुत दिलचस्प है।

सूफियों ने भारत की गुरू ि"ाष्य परंपरा के अनुरूप एक अल्लाह की शक्ति में वि"वास रखते हुए प्रेम को बढ़ाने के लिए सौन्दर्य एवं संगीत को अधिक महत्त्व दिया। उन्होंने अपने जीवन से भौतिक भोग विलास से दूर रहने का संदे"ा देते हुए मानव सेवा व अन्य धर्मों के आदर को सूफीमत में महत्वपूर्ण स्थान दिया। इसीलिए आज भी सर्व"ाक्तिमान के प्रति लौ लगाने के सूफियों की महत्त्वपूर्ण संगीत विधा कव्वाली गायन भारतीय समाज में लोकप्रिय है।

सूफी संत पीर कहलाते थे और उनके ि"ाष्य मुरीद कहे जाते थे और वे जिस आश्रम या मठ में रहते थे उन्हें खनकाह कहा जाता था। सूफी मत के इस पीर–मुरीद पंरपरा में दाता गंज बख्श, ख्वाजा मुइनुद्दीन चि"ती, शेख कुतुबुद्दीन बख्तियार काफी, शेख फरीद, शेख निजामुद्दीन औलिया तथा

बहाउद्दीन जकारिया प्रसिद्ध सूफी संत हुए। यह सूफीमत कई सिलसिलों में विभाजित था। इनमें चि"ती तथा सुहरावर्दी सिलसिले बहुत प्रसिद्ध हैं। भारत में चि"ती सिलसिला अधिक लोकप्रिय हुआ। सूफीसन्तों ने भारत की योग पद्वति को भी अपनाया तथा जनसामान्य की भाषा में धार्मिक सहिष्णुता, लोक बंधुत्व की भावना का संदे"ा देते हुए हिन्दू–मुस्लिम के बीच भेद–भाव का कड़ा विरोध किया। जिसका भारतीय समाज पर व्यापक और दूरगामी प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार संतों तथा सूफियों के प्रयासों से यह भक्ति–भावना मध्य भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में एक नवीन एवं गति"ीलता का संचार किया और यह एक आंदोलन का रूप ले लिया जिसे भारतीय इतिहास में भक्ति आंदोलन के नाम से जाना जाता है। इसे भक्ति आंदोलन इसलिए कहा जाता था क्योंकि इस आंदोलन के सभी प्रचारक अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति के लिए निष्काम व अनन्य भाव युक्त मन, बुद्धि के समर्पण आधारित भक्ति पर बल देते थे।

भक्ति आंदोलन का उदय हिन्दू धर्म एवं समाज में सुधार करके इनमें प्रचलित कुप्रथाओं को दूर करने तथा इसे इस्लाम से उत्पन्न हुए खतरे से सुरक्षित रखने के लिए हुआ। इस आंदोलन से इस्लाम एवं हिन्दू धर्म के समन्वय द्वारा सामाजिक सद्भावना का मार्ग प्र"ास्त हुआ। शंकराचार्य, रामानुज, रामानंद, ज्ञाने"वर या ज्ञानदेव, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, वल्लभाचार्य, चैतन्य महाप्रभु, संत रविदास, मीराबाई, कबीर, गुरूनानक देव जी, शंकर देव, तुलसीदास, सूरदास आदि भक्ति आंदोलन के प्रमुख प्रचारक थे। इन सभी संतों ने सर्व"ाक्तिमान तथा सर्वव्यापक एक सच्चिदानंद परमात्मा की उपासना पर बल दिया। इन सभी संतों ने भारत के सनातक संस्कृति की उपनिषदीय परंपरा के अंतर्गत गुरू–ि"ाष्य परंपरा पर आधारित भक्ति–भावना के द्वारा परम लक्ष्य की प्राप्ति पर बल दिया। वे परमात्मा तक पहुंचने के लिए गुरू का होना आव"यक समझते थे। उन्होनें भारत के कोने–कोने में यात्रा करके अपने प्रवचनों व उपदे"ाों के द्वारा लोगों को पवित्र जीवन व्यतीत करने तथा आपसी भाईचारे का संदे"ा दिया। गुरूनानक देव जी ने तो भारत के बाहर दूर दे"ाों तक यात्रा करके जन सामान्य को परस्पर सहयोग आधारित साद्गीपूर्ण जीवन जीने के लिए प्ररित किया। इन संतों ने लोकभाषा में साहित्य रचना द्वारा अपने प्रवचनों व उपदे"ाों को स्थायी रूप दिया जो आज भी न केवल भारतवासियों के लिए अपितु सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक अनमोल धरोहर है। उन्होंने समाज एवं धर्म में प्रचलित अंध–वि"वासों जैसे जाति–प्रथा, पर्दा–प्रथा, सती–प्रथा, मूर्ति–पूजा, निरर्थक यज्ञीय कर्मकांड, बलि आदि का जोरदार शब्दों में खंडन किया। इस कारण भक्ति आंदोलन के दूरगामी परिणाम निकले। नि"चत रूप से भक्ति भावना का यह आंदोलन हिन्दू धर्म एवं समाज को एक नई दि"ाा प्रदान की। प्रो. रानाडे के अनुसार, लोकभाषाओं में साहित्य रचना का आरंभ, इस्लाम के साथ

सहयोग के परिणामस्वरूप सहिष्णुता की भावना का विकास जिसकी वजह से जाति व्यवस्था के बंधनों में ि"िथलता आई और विचार तथा कर्म दोनों स्तरों पर समाज का उन्नयन हुआ। भक्ति आंदोलन की जानकारी के हमारे प्रमुख स्त्रोत इस आंदोलन के प्रचारकों या उनके ि"िष्यों द्वारा लिखित व संकलित रचनाएं है। इनमें से प्रमुख है – कबीर की साखी, शबद व रमैनी का संग्रह 'बीजक' सिखों का आदि ग्रंथ साहिब, चैतन्य महाप्रभु के ि"िष्यों द्वारा संकलित ि"िक्षाष्टक, मीराबाई के भक्ति गीत पदावली, बल्लभाचार्य के भक्तिगीत मधुराष्टक, गोस्वामी तुलसीदास जी की रामचरित मानस, सूरदास की सूरसागर, सूरसारावली व साहित्य लहरी, गुजरात के संत नरसी मेहता रचित कृष्ण भक्तिपदक गीत, तथा महाराष्ट्र के संतों के भक्तिपरक मराठी गीत जिन्हे अभंग के नाम से जानते है। ये सभी रचनाएं आज भी जनसामान्य के बीच भक्ति भावना की लौ जगाने के लिए लोकप्रिय हैं। इन रचनाओं से न केवल भक्ति भावना का विकास होता है बल्कि सामाजिक सांस्कृतिक स्तर पर सद्भावनापूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है। इन संतों की रचनाएं, परम्पराएं स्थानों व भाषाओं में भिन्नता होते हुए भी इन सबमें मूलमंत्र व बीजमंत्र अपने इष्ट के प्रति सर्व सर्म्पण प्रेम कूट–कूट कर भरा है। भक्ति आंदोलन का यह प्रेम उत्तर–दक्षिण से लेकर पूरब–पि"चम तक सम्पूर्ण भारत के अनेकता में एकता का मूल मंत्र है और इसीलिए दुनिया भर के लोग ज्ञान, द"ान, भक्ति व अध्यात्क की ि"िक्षा के लिए आज भी वसुधैव कुटुंबकम् के रूप में भारत को जानते मानते और प्यार करते हैं। अंततः सार रूप में हम कह सकते है कि मध्यकालीन भारतीय इतिहास में भक्ति आंदोलन मनुष्य की आंतरिक शक्तियों को बढ़ाने वाले खान के रूप में सामाजिक और सांस्कृतिक क्रान्ति के वाहक के रूप में उभरकर सामने आए।

9.3.1 भक्ति आन्दोलन, प्रभावी सामाजिक व सांस्कृति कारक : अवधारणात्मक समझ (Bhakti Movement Conceptual understanding) Effective social & cultural factors)

:– मध्यकालीन भारतीय इतिहास में प्रभावी सामाजिक व सांस्कृतिक उत्थानो–कारक के रूप में आंदोलन का बहुत ही वि"िष्ट स्थान है। ई"वर से वि"ोष अनुरक्ति लगाव या अनुराग को भक्ति कहते है। यह अनुराग ई"वर के प्रति अनन्य, निष्काम व लगातार हो ऐसी अपेक्षा भक्ति में की जाती है। संसार के वस्तु व व्यक्ति से परे जब परम शक्ति के लिए तड़प होती है, व्याकुलता होती है और हम इतने भाव–विभोर हो जाते है कि हमारी आंखों में आंसू भर आते है, रोम–रोम खड़े हो जाते है तो ई"वर के प्रति इस प्रेम भाव को ही भक्ति की संज्ञा देते है। ई"वर के प्रति ऐसा प्रेम–भाव या गहरी भक्ति को 8वीं सदीं से 18 वीं सदी के दौरान संतों व प्रचारकों ने जन–मानस को उन्ही की भाषा में सरल शब्दों में अपने उपदे"ाों, प्रवचनों, गीतों व साहित्य रचनाओं के माध्यम से एक आंदोलन के रूप में तीव्रता से उपलब्ध कराया। इसीलिए इसे

भक्ति आंदोलन कहा जाता है। यह दक्षिण भारत से आरंभ होकर उत्तर भारत सहित सम्पूर्ण भारत में व्याप्त हो गया। भारत का कोई भी भाग इससे अछूता नहीं रहा। विभिन्न आस्थाओं व धर्मों को लेकर जो टकराव था उसमें कमी आई और इसके स्थान पर सामाजिक सद्भावना का माहौल बना। मुस्लिम शासकों और उन पर उलेमा के प्रभाव के कारण जो कट्टरतापन दे"ा के जनजीवन में घुटन का जहर घोल रहा था तब भक्ति आंदोलन के संतों व प्रचारकों ने सामाजिक संदे"ा फैलाने एवं सुधारवारी राजनीति का ज्वार पैदा करने का काम किया।

ऐतिहासिक दृष्टि से भक्ति आंदोलन के प्रथम चरण में दक्षिण भारत में वैष्णव संत अलवार और शैव संत नयनार के द्वारा इसका प्रादुर्भाव होता है। अलवार और नयनार संत जनसामान्य की भाषा तमिल मे अपने रचनाओं, उपदे"ाों, प्रवचनों व गीतों के द्वारा इसको फैलाते हैं। दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य में ही वीर शैव अथवा लिंगायत मत के प्रचारकों ने भक्ति आंदोलन को स्थानीय भाषा कन्नड़ में आगे बढ़ाया। यह समय लगभग 8वीं से 12वी. सदी के बीच का है।

भक्ति आंदोलन के दूसरे चरण में 12वी. या 13वीं सदी के लगभग इसे दक्षिण भारत से उत्तर भारत में लाने का श्रेय गुरू रामानंद को जाता है। उत्तरी भारत में यह आंदोलन इसी समय इस्लाम के संपर्क में आया और इसकी चुनौतियों को स्वीकार करता हुआ इससे प्रभावित, उत्तेजित और आंदोलित हुआ। भारतीय जीवन शैली में हमारे आध्यात्मिक और भौतिक कर्म के आद"ार्, विचार व द"ान का केन्द्र बिन्दु सदियों से वेद व वैदिक ग्रन्थों की मान्यता पर आधारित रहे हैं। अतः भारत में जो चिंतक–विचारक, ऋषि–मुनि और संत हुए उन पर वेद का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में वैदिक कर्मकांड के विरूद्ध बौद्ध व जैन धर्म आंदोलन का रूप लिया था। लेकिन समय के साथ जैसे–जैसे बौद्ध धर्म प्राचीन होता गया वैसे–वैसे उसमें वैदिक कर्मकांड का प्रवे"ा होता गया और उसका प्रभाव भारत में कम होते–होते लगभग समाप्त हो गया। भक्ति आंदोलन के दौरान आठवीं–नौवीं शताब्दी में दक्षिण भारत के केरल के कलादी गांव में जन्में आदि गुरू शंकराचार्य ने बौद्धों के प्रभाव को घटाने तथा वेदों–ब्राह्मणों की महत्ता को स्थापित करने के लिए अद्वैतवाद मत की स्थापना की। अपने इस सिद्धान्त में इन्होंने एकमात्र ब्रह्म को ही सत्य माना और जगत को मिथ्या बतलाया है। आत्मा परमात्मा ही है वह इससे भिन्न या पृथक नहीं है। सांसारिक माया रूपी अविद्या के कारण मानव आत्मा–परमात्मा की अभिन्नता को पहचानने की भूल करता है। इन्होनें अपने सिद्धान्त में ज्ञान पर वि"ोष बल दिया और ब्रह्म के स्वरूप को निर्गुण, निर्वि"ोष व निराकार बतलाया। इस प्रकार ज्ञानमार्गी शंकराचार्य ने चिदानंदरूपः ि"ावोअह्म ि"ावोअह्म के प्रचार के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से सगुणोपासना का विरोध किया। उनका यह सिद्धान्त लोगों की निरा"ाा को दूर करने में

असफल रहा। उनके बाद के जगतगुरूओं ने थोड़े बहुत अंतर के साथ सगुण भक्ति की प्रवृति को स्वीकार किया और शंकराचार्य के अद्वैत और ज्ञान–मार्ग का विरोध किया। इनके बाद चारों वैष्णव संप्रदायों के आचार्यो ने ब्रह्म और जीव की पूर्ण एकता को अस्वीकार किया।

अद्वैतवाद के विरोध में वैष्णव संतों द्वारा जिन चार मतों की स्थापना हुई वे निम्नलिखित है –

	मत	संस्थापक	काल
1.	वि"ाष्टाद्वैतवाद	रामानुजाचार्य	12वी. शताब्दी
2.	द्वैतवाद	मध्वाचार्य	13वीं शताब्दी
3.	शुद्धाद्वैतवाद	विष्णुस्वामी	13वीं शताब्दी
4.	द्वैताद्वैतवाद	निम्बार्काचार्य	13वी. शताब्दी

शंकर के ज्ञानमार्ग की गूढ़ता जनसामान्य के समझ से परे था। इस परिस्थिति में वैष्णवों की सगुण भक्ति का साधारण जनता पर व्यापक प्रभाव पड़ा। इन वैष्णवों के प्रचार–प्रसार से भगवद्गीता के अवतारवाद व भगवान के साकार रूप प्रतिमा पूजन के माध्यम से ब्राह्मण व उच्च वर्ग के अधिकार कायम रहा। वहीं निम्न वर्ग को भी पूजा के अधिकार ने उनको निरा"ा नहीं किया। इतना होने के बावजूद भी तात्कालीन सामाजिक तथा धार्मिक असमानता समाज में मौजूद रहे तथा दूसरी और इस्लाम सत्ता का भारत में आगमन ने धार्मिक आस्था के टकराव को और बढ़ा लिया।

इन विपरीत परिस्थितियों में 14वीं तथा 15वीं सदी के लगभग जनसाधारण की वि"वास और भक्ति के भीतर से एक व्यापक आंदोलन उठ खड़ा हुआ और यह देखते ही देखते सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैल गया। भारतीय इतिहास और सांस्कृतिक जीवन में यहीं आंदोलन भक्ति आंदोलन के नाम से जाना जाता है। इस आंदोलन ने तात्कालिक समाज की आव"यकता के अनुरूप संतों के एक ऐसे वर्ग को जन्म दिया जिन्होनें भक्ति के आधारभूत तत्वों के बीच सामंजस्य तथा सद्भाव स्थापित किया और दूसरी ओर भारतीय रहस्यवादी धारणाओं और सूफी मत की धारणाओं के बीच सामंजस्य की सृष्टि की। जिसके फलस्वरूप समाज में व्याप्त उच्च व निम्न जातियों तथा हिन्दू व मुस्लिम के भेदभाव को समाप्त कर दिया। इनमें रामानंद, नामदेव, कबीर, नानक, दादू, रविदास, तुलसीदास चैतन्य महाप्रभु के नाम प्रमुख हैं।

वैष्णव संत आचार्य रामानुज की परंपरा में स्वामी रामनंद राम की उपासना के द्वारा जन–जन को भक्ति का नया मार्ग दिखाया। स्वामी रामानंद के ि"ाष्यों में अलग–अलग जाति व

व्यवसाय के थे जिनमें कबीर 'जुलाहा' संत रविदास 'चर्मकार', भक्त धन्ना 'जाट किसान', भक्त सेना 'नाई' व भक्त पीपा 'राजपूत' अत्यंत प्रसिद्ध थे। इस प्रकार स्वामी रामानंद ने उच्च वर्ग की श्रेष्ठता का खंडन करते हुए भक्ति का द्वार सबके लिए खोल दिया। इस प्रकार गुरू रामानंद ने भक्ति आंदोलन के अर्न्तगत नवीन विचारधारा को जन्म दिया। उसे ऊंचाई तक पहुंचाने का कार्य कबीर, नानक, दादू आदि संतों ने किया।

मध्यकालीन इतिहास में भक्ति काल के अंतर्गत निर्गुण भक्ति धारा में प्रगति"ील तथा क्रान्तिकारी विचारधारा के कबीर ने एक ओर जहां बौद्धो, सिद्धों व नाथों की साधना तथा सुधार परंपरा के साथ वैष्णव संप्रदायों की भक्ति भावना को ग्रहण किया वहां दूसरी और सामान्य गृहस्थ जीवन जीते हुए श्रम की प्रतिष्ठा को जीवन की सफलता का आधार बताया। कबीर ने निर्भयतापूर्वक तात्कालिक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक असमानता तथा धर्म के क्षेत्र में व्याप्त बाह्य आडंबर के विरूद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त की व सच्ची भक्ति का संदे"ा देते हुए कहा कि राम घट–घट व्यापी हैं इनकी प्राप्ति के लिए मन्दिर–मस्जिद की आव"यकता नहीं है। इसे किसी भी नाम से पुकार सकते हैं। इसको प्राप्त करने में जाति–पाति तथा कुल–धर्म का कोई महत्व नहीं है। इस प्रकार वर्ण व्यवस्था पर कुठाराघात, सांप्रदायिक तत्वों के बहिष्कार और भक्ति की सादगी एवं व्यापकता के प्रचलन द्वारा कबीर ने भक्ति आंदोलन को एक नवीन दि"ा प्रदान की।

निर्गुणमार्गी संतों में कबीर की तरह नानकदेव ने तात्कालिक सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक बुराईयों पर प्रहार किया और उसके सुधार के उपाय बताते हुए स्वयं के परिश्रम से सरल व सादा जीवन जीते हुए भक्ति का मार्ग दिखाया। इसका प्रभाव पंजाब के साथ–साथ दे"ा के अन्य भागों पर भी पड़ा और भक्ति आंदोलन को नई दि"ा मिली तथा समानता, बंधुता, ईमानदारी तथा परिश्रम के द्वारा जीविकोपार्जन पर आधारित नवीन समाज–व्यवस्था स्थापित हुई। इसी प्रकार मध्यकालीन भक्ति–आंदोलनों के विकास तथा लोकप्रियता में महाराष्ट्र के संतों–ज्ञाने"वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम आदि का महत्वपूर्ण योगदान है। इन संतों ने भक्ति आंदोलन के अन्य संतों की तरह सामान्य गृहस्थ जीवन जीते हुए भक्ति भावना पर बल दिया तथा एक भगवान की संतान होने के नाते सबकी समानता के सिद्धान्त को प्रतिष्ठित किया। इन संतों ने जनसामान्य की भाषा मराठी में अपने संदे"ा, उपदे"ा व प्रवचन का प्रचार–प्रसार किया। महाराष्ट्र के इन सन्तों के भक्तिपरक मराठी गीत जिन्हें अभंग के नाम से जानते हैं के द्वारा भक्ति–भावना एक आंदोलन के रूप में घर–घर व जन–जन तक पहुंच गया। इन अभंगों का प्रभाव आज भी वहां के समाजों में व्याप्त है।

इन संतों ने समाज में व्याप्त बुराईयों का खंडन करते हुए आध्यात्मिक क्षेत्र में आचरण की शुद्धता, भक्ति की पवित्रता तथा सरसता और चरित्र की निर्मलता पर बल दिया। इस प्रकार महाराष्ट्र के इन संतों के प्रयासों के द्वारा यह भक्ति–भावना वहां आंदोलन का रूप ले लिया जिसका समारात्मक प्रमाण न केवल धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति पर बल्कि राजनीतिक उत्थान पर भी पड़ा।

इन समस्त विवरणों से स्पष्ट है कि मध्यकाल में एक प्रभाव"ाली, सामाजिक–सांस्कृतिक परिर्वतनकारी कारक के रूप में भक्ति आंदोलन एक अत्यन्त व्यापक आंदोलन का रूप ले लिया। इस व्यापक आंदोलन ने सम्पूर्ण दे"ा को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बांधने का कार्य किया। दे"ा के अलग–अलग भागों में निर्गुण व सगुण दोनों ही परंपरा वाले संतों ने ई"वर के प्रति प्रेम व समर्पण की व्यापक भावना के द्वारा जन सामान्य को आंदोलित कर दिया।

दोनों ही परंपरा वाले संतों ने समन्वय पर बल देते हुए जाति–पाति, कुल–धर्म की श्रेष्ठता जैसे समस्त सामाजिक बुराईयों की निंदा की और प्रेम व समर्पण युक्त भक्ति भावना पर बल दिया। निर्गुण संतों, कबीर, नानक, दादू, रविदास आदि ने प्रभु की भक्ति निराकार रूप में करने पर बल दिया, जबकि बल्लभ, तुलसी, सूर, मीरा, चैतन्य आदि ने राम या कृष्ण की पूजा सगुण रूप में करने पर बल दिया। निर्गुण संतों में कबीर व नानक के क्रांतिकारी विचारों ने ई"वर की एकता के बल पर हिंदूओं और मुसलमानों के बीच समानता का प्रतिपादन करते हुए पारस्परिक विरोध को कम करने का प्रयास किया।

सगुण संतों में राजस्थान में जन्मी मीराबाई का वि"िष्ट स्थान है। मीराबाई ने निंदा व प्रहार की प्रवृति को परिष्कृत करते हुए अपने पदावली के माध्यम से सरल गीतों द्वारा भक्ति–भावना की जो लहर पैदा की उसमें सभी जाति–धर्मो के लोग द्वैष भाव को छोड़कर रम गए और इसका राजनीति पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

जन–जन में लोकप्रिय सगुण परंपरा के विख्यात संत तुलसीदास ने पूर्ण समर्पण की भावना के माध्यम से अपने प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरितमानस के द्वारा एक ओर जहां विभिन्न परंपराओं के बीच समन्वय स्थापित करने पर बल दिया तो दूसरी ओर भक्ति के लिए जाति–पाति, कुल–धर्म, सम्मान श्रेष्ठता को कोई महत्व नही दिया तथा लोकमंगल की भावना को प्रतिष्ठित किया। यही कारण है कि आज भी तुलसी की रामचरितमानस जन–जन में लोकप्रिय है और रामायण के नाम से प्रसिद्ध है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि भक्ति आन्दोलन मध्यकालीन भारत में एक परिर्वतन का आन्दोलन था। इसका स्वरूप सरल एवं पवित्र था। ई"वर के प्रति सच्चे हृदय से भक्ति ही इसका मुख्य आधार था। इस आन्दोलन ने मूर्तिपूजा बहुदेववाद आदि का विरोध किया तथा ई"वर की एकता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। इस आन्दोलन ने ऊंच–नीच, छुआ–छूत की भावना का त्याग कर समानता के भाव का प्रतिपादन किया।

9.3.2. धार्मिक आस्था का स्वरूप (Nature of Religious belief or faith) :– प्राचीन भारत के इतिहास में ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर धार्मिक आस्था पर आधारित भक्ति भावना के अंकुर सिंधु सभ्यता में उपलब्ध हो जाते है। सिंधु सभ्यता के प्राप्त अव"ोषों से पता चलता है कि उस युग के लोग मूर्तिपूजक थे। वैदिक युग के आर्य विविध प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करते थे। पौराणिक युग से लेकर गुप्त काल तक समाज में व्याप्त भिन्न–भिन्न परम्पराओं पर आधारित धार्मिक आस्था के कारण भक्ति भावना का अलग–अलग स्वरूप सामने आने लगा। महान धर्म सुधारक शंकराचार्य ने तर्क और बुद्धि के आधार पर हिन्दू अद्वैतवाद की श्रेष्ठता स्थापित की और बौद्ध धर्म का विरोध किया। इन्होनें ज्ञान मार्ग को प्राथमिकता दी। ज्ञानमार्गी शंकराचार्य से अलग अन्य आचार्यो ने जिनमें वि"िष्टाद्वैतवारी रामानुज, द्वैतवादी मध्वाचार्य व द्वैताद्वैतवादी निम्बार्काचार्य प्रसिद्ध हैं आदि ने थोड़े बहुत अंतर के साथ अद्वैतवाद का खण्डन करते हुए सगुण आस्था पर आधारित भक्ति पर बल दिया। इसी समय मध्यकालीन भारत में इस्लाम का प्रवे"ा हुआ और मुस्लिम सत्ता की स्थापना हुई जो भारतीय धर्म और संस्कृति के बहुत से मूल्यों और मान्याताओं क लिये बड़ी चुनौती साबित हुआ। तमाम चुनौतियों के बावजूद समकालीन साहित्य एवं मूर्तिकला से इसके स्पष्ट उदाहरण मिलते है कि 8वीं से 18वीं शताब्दी के दौरान भारत में विष्णु, ि"ाव एवं देवी उपासना की परंपरा न केवल जारी रही अपितु इसका अधिक विकास भी हुआ। भक्ति आन्दोलन के संतों व सुधारकों के कारण यह काल विभिन्न धार्मिक आस्था व पूजा प्रणालियों के समन्वय एवं भेद तथा संघर्ष के लिए भी जाना जाता है।

इनका संक्षिप्त वर्णन हम निम्नलिखित रूप में कर सकते है:–

1. **धार्मिक आस्था आधारित पूजा प्रणालियों का समन्वय** :– इस काल में भी पौराणिक ग्रंथों की रचना, संकलन तथा परिरक्षण द्वारा गुप्तकाल से चली आ रही ब्राह्मणीय विचारधारा का प्रचार–प्रसार जोरों पर था। इन ग्रंथों का संकलन अब सरल संस्कृत छंदों में किया जाने लगा था। युगीन परिस्थितियों के अनुरूप इन्हे सर्वसुलभ बनाने की परंपरा पर बल दिया जा रहा

था। अब इन्हें उन स्त्रियों एवं शुद्रों द्वारा भी पढ़ा जा सकता था जिन्हे वैदिक विद्या से दूर रखा गया था। इस प्रकार एक तरफ वर्ण व्यवस्था की श्रेष्ठता से परे धार्मिक आस्था व वि"वास में ब्राह्मण वर्ग ने ज्ञान व भक्ति को महत्व दिया जो कहीं भी किसी में प्रकट हो सकता है। वहीं दूसरी और ब्राह्मण व अन्य उच्च वर्गो के द्वारा स्त्रियों, शुद्रों एवं अन्य सामाजिक वर्गो के वि"वासों एवं प्रथाओं को स्वीकार किया जाना एवं उसे एक नया समाजोपयोगी रूप प्रदान करना। सम्पूर्ण भक्ति आंदोलन इस प्रकार के उदाहरणों से भरे पड़े हैं गुरू रामानंद के ि"ाष्य अलग–अलग जाति एवं अलग–अलग व्यवसाय से हुये। इनकी परंपरा को बिना भेदभाव के समाज के सभी वर्गो में अपनाया गया। दक्षिण भारत में अलवार वैष्णव संत थे तो नयनार शैव संत थे। एक ही स्थान पर एक ही भाषा में जनसामान्य ने दोनों परंपराओं के वि"वासों का स्वागत किया।

उधर मुस्लिम धर्म में एक नवीन मत सूफी मत प्रचलन में आया जिसने हिन्दूओं के गुरू ि"ाष्य परंपरा पर आधारित आस्था व वि"वास को अपनाया, योग साधना व ई"वर की भक्ति के लिए संगीत को अपनाया। इन सभी प्रवृतियों ने इस काल में हिन्दू समाज में विभिन्न वि"वासों के बीच व हिन्दू व मुस्लमानों के मध्य समन्वय को जन्म दिया। जिसे 20वीं शताब्दी के समाज"ास्त्री राबर्ट रेडफील्ड ने महान् पंरपरा की संज्ञा दी है।

इस प्रकार हिन्दू समाज में सभी वर्गो के बीच विष्णु, ि"ाव व देवी की उपासना का प्रचलन रहा।

2. **धार्मिक आस्था के स्वरूप में भेद एवं संघर्ष** :– इस काल में देवी की आराधना तांत्रिक पूजा के रूप में भारत के कई भागों में प्रचलित थी। इसमें स्त्री एवं पुरूष दोनों ही सम्मिलित हो सकते थे। तांत्रिक पद्वति के इस विचार से शैव व बौद्ध मत भी प्रभावित थे। भारतीय समाज में अलग–अलग परंपरा व मान्यताओं के बीच तांत्रिक पूजा कुछ भेद के साथ प्रचलित थे। आज भी यह मत पूर्वी, उत्तरी एवं दक्षिणी हिस्सों में स्पष्टतः देखा जा सकता है। इन सभी वि"वासों का वर्गीकरण हिन्दू के रूप में ही किया गया है। इस काल में कर्मकांडों के संदर्भ में वर्ग एवं वर्ण के भेद की अवहेलना की जाती थी। वैदिक काल के प्रसिद्ध देवताओं इंद्र अग्नि एवं सोम का महत्व हमें इस काल में देखने को नहीं मिलता है। इसके बावजूद वैदिक कला के विष्णु, ि"ाव एवं देवी की पूजा का प्रचलन इस काल में भी जारी रहा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि साधना पद्धति की भिन्नता के कारण कभी–कभी वैदिक पंरपरा के प्र"ांसक तथा इसके विपरीत तांत्रिक साधना वालो के बीच संघर्ष की स्थिति बन जाती थी। इसके अतिरिक्त ई"वर

की भक्ति–भावना में तल्लीन कुछ विष्णु को तो कुछ ि"ाव को सर्वोच्च मानते थे। अन्य परंपराओं में बौद्ध अथवा जैन के संबंध भी कभी–कभी विचारधारा भेद के कारण तनावपूर्ण हो जाते थे। इसके बावजूद स्पष्ट संघर्ष के उदाहरण न के बराबर थे।

इस काल में भक्ति गीतों के माध्यम से मंदिरों में देवी–देवताओं की उपासना से लेकर उपासकों का प्रेम–भाव में तल्लीन हो जाना दिखाई पड़ता है।

9.3.3 भक्ति आंदोलन : परंपराएँ (bhakti Movement : Traditions) :– जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भक्ति, ज्ञान, कर्म, धर्म आदि के आचार्यो या गुरूओं के द्वारा अपने अनुयायियों के लिए साधना का जो सैद्धांतिक व व्यावहारिक तौर–तरीका आस्था, वि"वास व मान्यता के रूप में प्रचलन में आ जाता है उसे परंपरा के नाम से जानते है। भक्ति आंदोलन के दौरान मध्यकालीन भारतीय इतिहास में ऐसे कई परंपराएं प्रचलन में रही। प्रांरभिक भक्ति पंरपराओं का उदय दक्षिण भारत में अलवारों एवं नयनारों की परंपराओं के द्वारा हुआ **जिसका विवरण निम्नलिखित है** :–

(1) अलवार परंपरा :– अलवार संतों ने दक्षिण भारत में वैष्णव मत को लोकप्रिय बनाया। अलवार संतों में विष्णु भक्त के रूप में 12 संत बहुत प्रसिद्ध थे। इसमें दक्षिण भारत की मीरा के रूप में प्रसिद्ध स्त्री संत अंडाल भी एक प्रसिद्ध संत थी। इन संतों ने अपनी ि"ाक्षाओं का प्रचार लोगों की जनभाषा तमिल में किया। दसवीं शताब्दी तक अलवार संतों की रचनाओं का एक काव्य संकलन तमिल भाषा में नलयिरादिव्यप्रबंधम नामक भक्तिगीत रचना में किया गया। इसमें चार हजार भक्ति गीत दिए गए है। अलवार पंरपरा की यह भक्ति रचना तमिल वेद के रूप में आज भी लोकप्रिय है। इन संतों ने बिना किसी भेद–भाव के स्त्री–पुरूष सब को सादा जीवन जीने की प्रेरणा देते हुए मोक्ष प्राप्ति के लिए भक्ति गीतों के माध्यम से भजन कीर्तन द्वारा भक्ति का सरल मार्ग बताया। उनका कथन था कि कोई भी व्यक्ति अपने कर्मो के आधार पर छोटा अथवा बड़ा बनता हे। अलवार संतों ने वैष्णव मंदिरों के द्वार सभी जातियों के लिए खोल दिए। इन संतों ने ब्राह्मणों की प्रभुता व श्रेष्ठता को नकारते हुए सभी जातियों के लोगों को एक समान समझने की ि"ाक्षा दी। अलवार संतो ंके इस क्रान्तिकारी कदम का समाज के हर वर्ग पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। इन संतो ंके प्रभाव में आकर अनेक पल्लव तथा चालुक्य शासकों ने वैष्णव मत को ग्रहण किया। उन्होनें अनेक वि"ाल मंदिरों एवं भव्य मूर्तियों का निर्माण करवाया। इनमें पल्लव शासक सिंह विष्णु द्वारा महाबलीपुरम में बनाया गया आदिवराह मंदिर, नरसिंहवर्मन द्वितीय द्वारा कांची में बनाया गया

बैकुंठ पेरूमल मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। चालुक्य शासकों ने वादामी में अनेक विष्णु मंदिरों का निर्माण करवाया।

(2) नयनार परंपरा :– नयनार संतों ने दक्षिण भारत में शैव मत को लोकप्रिय बनाया। शैव भक्त नयनार संतों की कुल संख्या 63 बताई गई है। इनमें से अप्पार, संबंदर तथा सुंदरार के नाम प्रसिद्ध है। इन संतो ंके भक्ति गीतों को दसवीं शताब्दी में तमिल ग्रंथ 'तवरम्' में संकलित किया गया है। अनके भक्ति गीतों की रचना करने वाली कराईक्काल अम्मइयार नामक स्त्री संत नयनार संतों में बहुत प्रसिद्ध थीं। ये सभी संत ि"ाव को सर्वोच्च मानते थे। इन सभी संतों ने अपनी ि"ाक्षाओं का प्रचार जनसामान्य की भाषा तमिल में किया। इन्होनें अपने भक्ति गीतों के माध्यम से ि"ाव की उपासना द्वारा भवसागर से पार उतरने का सरल मार्ग लोगों को बतलाया। वेदों के समान पवित्र तमिल ग्रंथ 'आगम' में नयनार संतो ंके भक्ति गीत संकलित किये गये है। ि"ाव देवता को समर्पित ये गीत आज भी दक्षिण भारत में लोकप्रिय है। इन संतों ने समाज में व्याप्त स्त्री व पुरूष असमानता वर्णो की श्रेष्ठता, दोषपूर्ण जाति प्रथा, बाल–विवाह जैसी बुराईयों का विरोध किया और इसके स्थान पर सबों के समानता, सामाजिक सद्भाव, विधवा विवाह, अहिंसा में वि"वास जैसे सामाजिक गुणों को बढ़ावा दिया। किसी भी जाति के लोग बिना किसी भेदभाव के शैव मत में आ सकते थे। इन संतों के प्रभाव में आकर दक्षिण भारत के चोल एवं राष्ट्रकूट शासकों ने शैव मत को अपनाया। चोल काल में कांस्य से बनी ि"ाव की मूर्ती जिसे नटराज के नाम से जाना जाता है आज भी सम्पूर्ण भारत में प्रसिद्ध है। नयनार संतों को दक्षिण भारत के समाज में काफी सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त थी। अतः ये शासक सामाजिक लोकप्रियता पाने के उद्दे"य से शैव मत को अपने राज्य में बढ़ावा दिया। इस उद्दे"य से उन्होनें चिदंबरम, तंजावुर तथा गंगैकोण्डचोलपुरम में वि"ाल ि"ाव मंदिरों का निर्माण करवाया। चोल शासक परांतक ने नयनार संतों के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए प्रसिद्ध नयनार संतों अप्पार, संबंदर एवं सुंदरार की धातु प्रतिमाएं चिंदबरम के नटराज मंदिर में स्थापित की। राष्ट्रकूट शासक कृष्ण प्रथम ने एलौरा (महाराष्ट्र) में एक ही चट्टान को काटकर वि"ाल कैला"ा मंदिर का निर्माण करवाया था। इन शासकों ने मंदिरों के निर्माण व इसके रख–रखाव के लिए भूमि अनुदान दिए।

(3) कर्नाटक की वीरशैव परंपरा :– 12वीं शताब्दी में भगवान ि"ाव के लिंग रूप के उपासक बासवन्ना ने कर्नाटक में वीर शैव परंपरा को लोकप्रिय बनाया जो लिंगायत के नाम से आज भी कर्नाटक में लोकप्रिय है। स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी उन्होंने ब्राह्मण की श्रेष्ठता को अस्वीकार किया

और सामाजिक बुराईयों जाति–प्रथा, स्त्री–पुरूष भेदभाव, बाल–विवाह, झूठ, चोरी, न"ीले पदार्थो का सेवन निम्न जातियों का शोषण आदि का विरोध किया तथा स्त्री ि"ाक्षा, विधवा विवाह, सामाजिक सद्भावना, कर्म की श्रेष्ठता का प्रचार किया। इस प्रकार वासवन्ना ने अपने विचारों द्वारा सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में एक नवीन परिवर्तन ला दी थी। वासवन्ना ने पूर्व के अलवार व नयनार संतों की भांति अपने विचारों का प्रचार जनसामान्य की भाषा कन्नड़ में किया। उनके द्वारा रचे गए पदों को 'वचन' कहा जाता है जो आज भी कर्नाटक के लिंगायत समुदाय में बहुत लोकप्रिय है।

(4) आठवीं–नौवीं भाताब्दी :– 8वीं–9वीं शताब्दी में दक्षिण भारत के केरल में जन्में आदि गुरू शंकराचार्य ने अपने अद्वैतवाद मत के द्वारा ब्रह्म और जीव की अभिन्नता पर बल देते हुए ज्ञानमार्ग की परंपरा को बढ़ावा दिया। इन्होंने ब्रह्म के निर्गुण, निवि"ोष, निराकार स्वरूप की पंरपरा को अपने ज्ञान व उपदे"ा का मुख्य हिस्सा बनाया। इसके बावजूद इन्होंने भारत के चारों कोनों में भगवान ि"ाव की मूर्ति की स्थापना की जो आज भी सम्पूर्ण भारत के हिन्दू समाज में अत्यंत लोकप्रिय है। इनके बाद के आचार्यो ने थोड़े बहुत अंतर के साथ वैष्णव मत के प्रचार–प्रसार के साथ जनसामान्य के लिए सरल भगवान के सगुण रूप की भक्ति परंपरा को बढ़ावा दिया।

(5) रामोपासक गुरू रामानंद की परंपरा :– दक्षिण भारत से भक्ति आंदोलन को उत्तर भारत में लाने वाले व यहां के समाज में इसे लोकप्रिय बनाने वाले गुरू रामानंद ने बिना किसी भेदभाव के भक्ति का मार्ग सबके लिए खोल दिया। इनके ि"ाष्यों में अलग–अलग जाति व व्यवसाय ही नही बल्कि भगवान के साकार व निराकार स्वरूप को मानने वाले भी शामिल थे। इस प्रकार गुरू रामानंद ने समन्व के द्वारा सर्वथा एक नवीन व क्रांतिकारी परंपरा को जन्म दिया।

(6) निर्गुणोपासक परंपरा :– भक्तिकालीन निर्गुण परंपरा में कबीर, नानक, दादू, रविदास आदि बहुत प्रसिद्ध हुए। इन संतों ने भगवान को घर–घर का वासी बताया और इसे कोई भी सरल, शुद्ध जीवन के द्वारा कहीं भी प्राप्त कर सकता है। इन संतों ने तमाम सामाजिक बुराईयों पर प्रहार करते हुए सामाजिक सद्भावना व समन्वय के द्वारा जनसामान्य की भाषा में उपदे"ा देते हुए भक्ति आंदोलन को ि"ाखर पर पहुंचा दिया।

(7) सगुणोपासक पंरपरा :– भक्तिकालीन सगुण परंपरा में चेतन्य, बल्लभ, सूर, तुलसी, मीरा, नरसी मेहता, नामदेव, ज्ञाने"वर, तुकाराम आदि प्रसिद्ध हुए। इन्होंने भगवान के साकार रूप प्रतिमा पूजन व भजन कीर्तन, नृत्य के द्वारा अत्यंत सरल तरीके से जो किसी को भी समझ में आ जाये

के द्वारा भक्ति के लिए प्रेरित किया। प्रसिद्ध संत तुलसी ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'रामचरितमानस' द्वारा सगुण–निर्गुण व शैव–वै"णव मतों के बीच समन्वय स्थापित किया। यही कारण है कि तुलसी का रामचरितमानस आज भी समाज के हर वर्ग, धर्म व भक्ति की हर परंपरा के बीच लोकप्रिय है।

9.3.4 भक्ति आन्दोलन के उदय के कारण (Causes of origin of Bhakti-Movement)

प्रभावी सामाजिक व सांस्कृतिक कारक के रूप में भक्ति आंदोलन मध्यकालीन भारतीय इतिहास की एक क्रान्तिकारी घटना थी। यह आंदोलन कई कारणों का परिणाम था जो इस प्रकार है –

(1) सामाजिक कारण (Social Cause) :– भारत में इस्लाम के आगमन के साथ निरंकु"ा मुस्लिम शासक ने हिन्दूओं को राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक प्रत्येक सुविधाओं से वंचित कर दिया। हिन्दुओं के साथ बदसलूकी का व्यवहार किया जाता और वे अपने ही दे"ा में विदे"ाी बनकर रह गये। इधर समाज में जातीय कट्टरता व ऊॅच–नीच की भावना ने निम्न वर्ग की स्थिति को और अधिक दयनीय बना दिया था। उनके लिए मन्दिर, ि"ाक्षा, ऊॅचें पद, सम्मान सभी की प्राप्ति के मार्ग बन्द थे। ऐसे में ये निरा"ा हिन्दू जनता ने सही मार्ग खोजने के लिए सर्व"ाक्तिमान ई"वर व इनके प्रति भक्ति भावना जगाने वाले तथा समाज सुधारक आचार्य गुरू की शरण लेना ही उचित समझा तथा भक्ति को इसका माध्यम बनाया जिसने सम्पूर्ण समाज को परिवर्तन के लिए आंदोलित कर दिया जिसे भक्ति आंदोलन के नाम से जाना जाता है।

(2) धार्मिक कारण (Religious Cause) :– भक्ति आंदोलन के उदय के धार्मिक कारण में एक ओर जहां हिन्दू धर्म की जटिलता था वहीं दूसरी ओर मुस्लिम आक्रमणकारियों का हिन्दू जनता पर अत्याचार था। हिन्दू धर्म मे बाह्य आडम्बर ब्राह्मणों की श्रेष्ठता, निरर्थक कर्मकाण्ड से गरीब जनता पिस रही थी ऐसे में उन्हें एक परिवर्तन की आव"यकता महसूस हुई जो सरल, स्वाभाविक और सद्भावना को बढ़ाने वाला हो और ऐसी परिस्थिति में प्रेम मिश्रित भक्ति आंदोलन को प्रोत्साहन मिला। कट्टर मुस्लिम शासकों ने अनेक मन्दिरों एवं देव मूर्तियों को नष्ट कर दिया। जिससे हिन्दूओं की आस्था व वि"वास को चोट पहुंची। इस भावना के विरूद्ध भक्ति आंदोलन को बल मिला।

(3) इस्लाम धर्म से खतरा (Danger from Islam) :– शासक वर्ग से संबन्धित मुस्लमान हिन्दूओं को बलपूर्वक मुस्लमान बनाना आरंभ कर दिया था। तो दूसरी ओर हिन्दू समाज के निम्न जाति अपने ही समाज के लोगों से घृणा का ि"कार होकर इस्लाम को स्वीकार करने लगे थे। इससे हिन्दू धर्म के अस्तित्व को एक बहुत बड़ा खतरा उत्पन्न हो गया था। इस खतरे के विरूद्ध तथा हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए भक्ति आंदोलन आरंभ हुआ।

(4) सूफी मत का प्रभाव (Impact of Sufism) :– सूफी मत ने भक्ति आंदोलन की उत्पत्ति में बहुत सहयोग दिया। उनके सूफी संतों ने उदारता तथा प्रेम के साथ एके"वरवादी इस्लाम का प्रचार किया तो हिन्दूओं पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा। ये सूफी संत उदारता, सहिष्णुता तथा प्रेम से अपने धर्म का प्रचार करते थे। अतः हिन्दूओं में अपने धर्म में बाह्य आडम्बरों तथा निरर्थक कर्मकाण्डों को दूर करने की इच्छा बलवती हुई जिसने भक्ति आंदोलन को प्रोत्साहित किया।

(5) महान सुधारकों का जन्म (Birth of Great Reformers) :– मध्य काल में भारत के अलग–अगल प्रदे"ाों में कई महान् सुधारकों ने जन्म लिया। इनमें रामानुज, रामानंद, आचार्य शंकर, चैतन्य महाप्रभु, नामदेव, शंकर देव, तुलसी, कबीर, नानक, रविदास, दादू दयाल आदि के नाम वि"ोष रूप से प्रसिद्ध है। उन्होनें हिन्दू धर्म में प्रचलित बुराईयों का डटकर विरोध किया तथा लोगों को सामाजिक सद्भावना व प्रेम आधारित एक नया मार्ग दिखलाया। जिससे इन महान् सुधारकों के प्रयास के फलस्वरूप भक्ति आंदोलन का उदय हुआ।

9.3.5 भक्ति आंदोलन की महत्वपूर्ण विशेषताएं (Important Chacteristics of Bhakti Movement):-

(1) एक परम सत्ता अर्थात् ईश्वर में विश्वास (Faith in one God) :– भक्ति आंदोलन के सभी संतों, प्रचारकों व सुधारकों ने एक परमात्मा की भक्ति पर बल दिया। सर्वव्यापक व सर्व"ाक्तिमान् परमात्मा ही संसार का रचियता, इसका पालकर्त्ता व संहारकर्त्ता है। इस परमात्मा की तुलना किसी अन्य देवी देवताओं से नहीं की जा सकती है। इसे हम किसी भी नाम से राम, कृष्ण, अल्लाह, खुदा आदि से पुकार सकते है। इसलिए भक्ति आंदोलन के संतों ने बहुत से देवी–देवताओं के चक्कर से परे एक ही ई"वर की प्रेम भावना के साथ भक्ति पर बल दिया।

(2) गुरू सत्ता में विश्वास (Faith in Guru) :– आदिगुरू शंकराचार्य, रामानुज, रामानंद, तुलसी, कबीर, गुरू नानक देव जी, नामदेव आदि सभी संतों ने एक मत से स्वीकार किया कि गुरू के द्वारा बताये साधना पथ पर चलकर ही हम भक्ति के द्वारा ई"वर को प्राप्त कर सकते हैं। प्रभु की कृपा से प्राप्त सच्चा गुरू ही हमें अंधकार रूपी भवसागर से पार उतारता है। यह गुरू दिखता तो सामान्य व्यक्ति की ही तरह परंतु वास्तव में उसके अंदर प्रभु की सत्ता ही सब कार्य करती है।

(3) आत्म–समर्पण (Self –Surrender) :– भक्ति के मार्ग पर चलने के लिए व्यक्ति को पंच विकार काम, क्रोध, लोह, मोह तथा अंहकार को छोड़कर हरि व गुरू के प्रति मन व बुद्धि का समर्पण करना पड़ता है। मन–बुद्धि सदैव हरि–गुरू में ही रहे और संसार में हम अपना केवल कर्तव्य निभायें। भक्ति आंदोलन के संतों ने इसे ही आत्म–समर्पण बतलाया है। इस प्रकार के आत्म–समर्पण से ही हम उसकी कृपा से उसकी भक्ति को प्राप्त कर सकते है।

(4) सादा–सच्चा जीवन पर बल (Stress on pure life) :– भक्ति आंदोलन के प्रचारकों ने ईमानदारी से परिश्रमपूर्वक अर्जित धन से गृहस्थ जीवन जीते हुए दया व प्रेम की भावना से भरकर ई"वर की भक्ति करने पर बल दिया। उन्होंने सत्य बोलने, निर्धनों व दुःखियों की सहायता करने, व्यावहारिक जीवन में पवित्रता पर आधारित गृहस्थ आश्रम को सर्वोत्तम बताया। वे सामाजिक कर्त्तव्य के पालन को मोक्ष प्राप्ति का साधन मानते थे।

(5) हिन्दूओं और मुस्लमानों के समन्वय पर बल (Attempts to synthesise Hinduism and Islam) :– मुस्लमानों द्वारा हिन्दूओं को बलपूर्वक मुस्लमान बनाए जाने के कारण दोनों एक दूसरे को घृणा की दृष्टि से देखते थे। इन दोनों धर्मों के परस्पर मतभेदों को दूर करने के लिए कबीर और गुरू नानक देव जी ने उन सभी विचारों का जोरदार शब्दों में खण्डन किया जो हिन्दूओं और मुस्लमानों में परस्पर भेद की भावना को उत्साहित करते थे। उन्होंने राम और रहीम को एक ही परमात्मा के दो नाम बताया। उन्होंने बताया कि हिन्दू और मुस्लमान दोनों ही एक ही परमात्मा की रचना है।

(6) जाति–प्रथा में अविश्वास (Disbelief in caste system) :– हिन्दू समाज में जाति–प्रथा की बुराई के कारण निम्न जातियों के साथ बडा दुर्व्यवहार किया जाता था। भक्ति आंदोलन के संत प्रचारकों ने इसका जोरदार शब्दों में खंडन किया तथा बताया कि प्रत्येक मनुष्य में एक ही परमात्मा का प्रका"ा विद्यमान है। इसलिए सभी मनुष्य समान हैं। मनुष्य को मुक्ति उसके

कर्मो के अनुसार मिलेगी न कि जाति के अनुसार। गुरू रामानंद जी का कहना थ '' **जाति–पाति पूछे नहिं कोयए हरि को भजै सो हरि का होय।** ''

गुरू नानक देव जी ने जाति–प्रथा को समाप्त करने के उद्दे"य से लंगर प्रथा को आरंभ किया। इसमें सभी जातियों के लोग एक साथ मिलकर लंगर पकाते और खाते थे।

(7) जन–सामान्य की भाषा में प्रचार (Preaching in the Language of the People) :– भक्ति आंदोलन के संतों प्रचारकों ने जन–सामान्य की भाषा में अपना प्रचार किया। उन्होंने यह बतलाया कि हम परमात्मा की भक्ति किसी भी भाषा में कर सकते हैं। वे केवल संस्कृत भाषा की पवित्रता में वि"वास नहीं रखते थे। उन्होंने अपने उपदे"ाों के लिए तमिल, हिन्दी, पंजाबी, मराठी, बंगाली, गुजराती, राजस्थानी इत्यादि प्रादे"िक भाषाओं का प्रयोग किया। यही कारण है कि यह आंदोलन जन–सामान्य के बीच बड़ी तेजी से लोकप्रिय हुआ।

(8) मूर्ति–पूजा में अविश्वास (Disbelief in Idol Worship) :– भक्ति आंदोलन के प्रचारकों ने मूर्ति–पूजा का जोरदार शब्दों में खण्डन किया। कबीर व गुरू नानक देव जी ने लोगों को केवल मूर्ति पूजा जैसे बाह्य साधन को ही भक्ति मानने के अंधवि"वास से बचाने के लिए और वास्तविक भक्ति का ज्ञान कराने के लिए मूर्ति–पूजा का खण्डन किया। वस्तुतः उनका उद्दे"य मूर्ति के पीछे कण–कण में व्याप्त परम सत्ता की उपस्थिति से लोगों को अवगत कराना था।

(9) खोखले रीति–रिवाजों में अविश्वास (Disbelief in Empty Rituals) :– भक्ति आंदोलन के संतों ने जन–सामान्य को अपने उपदे"ाों प्रवचनों, "िक्षाओं व भक्ति–गीतों के द्वारा मन व बृद्धि के समर्पण युक्त ई"वर की भक्ति पाने के लिए समस्त बाह्य आडंबरों को छोड़कर आंतरिक पवित्रता वाले जीवन जीने पर बल दिया। समाज में व्याप्त निरर्थक रीति–रिवाजों को उन्होंने सिरे से खारिज कर दिया। सच्चे और सरल मन वाले को ही परमात्मा प्राप्त होते है।

9.4. मुख्य पाठ के आगे का भाग (Further Main body of the text)

9.4.1. भक्ति आंदोलन का प्रभाव एवं महत्व (Impact and importance of Bhakti Movement) :– भक्ति आंदोलन मध्यकालीन भारतीय इतिहास की एक युग परिवर्तनकारी घटना है। भक्ति आंदोलन ने सम्पूर्ण भारत को सामाजिक व सांस्कृतिक उत्थान सहित जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया तथा इसका प्रभाव सदियों तक कायम रहा।

इसके निम्नलिखित प्रभाव पडे :– (1) भक्ति आंदोलन ने हिन्दू धर्म में व्याप्त कमियों को दूर करने में महत्वपूर्ण भमिका निभाई। इसने हिन्दू धर्म की कठोरता, विषमता, जटिलता और कर्मकाण्ड के महत्व को कम कर दिया।

(2) इस आन्दोलन ने लोगों को जाति–पाति के बंधन से ऊपर उठकर सोचने के लिए अवसर प्रदान किया। इससे मोक्ष प्राप्ति में, भक्ति में सभी सम्प्रदाय, ऊॅच–नीच सभी जाति को समान हकदार माना।

(3) मुस्लमान भी इस आंदोलन से प्रभावित हुये। उनकी कट्टरता मे कमी आई। वे अब हिन्दू धर्म के सिद्धांतों का सम्मान एवं आदर करने लगे। अनेक मुस्लमान कवियों ने राम एवं कृष्ण की भक्ति कविता की रचना की।

(4) हिन्दू और इस्लाम के समन्वय को बल मिला। भारत में ऐसे पन्थ भी निकले जिनमें हिन्दू और मुस्लमान दोनों ही थे, जैसे सत्यपीर, नारायणी, सतनामी आदि। ये पन्थ हिन्दू और मुस्लमानों में कोई भेदभाव नहीं मानते थे।

(5) हिन्दूओं ने उदारतापूर्वक मुस्लमान के पीरों और कब्रों की पूजा आरंभ की जिसका प्रभाव आज भी देखने को मिलता है।

(6) इसका प्रभाव राजनीति व शासन पर भी पड़ा। मुस्लमान शासकों ने हिन्दूओं को ऊॅचे पदों पर नियुक्त करना आरम्भ किया दूसरी ओर हिन्दू शासक भी मुस्लमान को अपने राज्य में महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त करने लगे।

(7) हिन्दू और मुस्लमानों का यह सम्मिश्रण धर्म और समाज व राजनीति तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि कलां, संगीत और वास्तुकला पर भी इसका प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि भक्ति आंदोलन मध्यकालीन भारत की एक महत्वपूर्ण घटना थी। इस आंदोलन का सामाजिक–सांस्कृतिक उत्थान सहित हर क्षेत्र में अत्यधिक महत्व रहा। इस आन्दोलन ने हिन्दू समाज में एक प्रकार से नये प्राणों का संचार किया तथा उनमें आत्म वि"वास की भावना उत्पन्न की। इससे जनसाधारण का नैतिक स्तर ऊॅचा उठा और लोगों में व्याप्त अंधवि"वास की भावना दूर होने लगी। हिन्दू धर्म में आई जटिलताओं को कम करते हुए सभी सन्तों ने जाति–पाति, वर्ग–भेद और ऊॅच–नीच की भावनाओं का खण्डन करते हुये सामाजिक सामानता पर वि"ोष बल दिया। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि समूचे दे"ा पर इस आंदोलन का

व्यापक प्रभाव पड़ा और यह प्रभाव शताब्दियों तक कायम रहा। भक्ति आंदोलन ने समूचे दे"ा में एक नये वातावरण का सृजन किया। भक्ति आंदोलन ने सामाजिक कुरीतियों का ना"ा कर समाज को संगठित और दृढ़ बनाया। इस आंदोलन ने हिन्दू और मुस्लमानों में आपसी एकता, सद्भावना एवं मैत्री को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जिससे राजनीतिक जागरण का भी मार्ग प्र"ास्त हुआ।

9.4.2 सूफी आंदोलन (Sufi Movement) : अवधारणात्मक समझ (Conceptual Understanding)

इस्लाम धर्म और समाज को परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकूल बनाने के लिये मध्यकालीन भारत में सूफी मत एक प्रभाव"ाली आंदोलन के रूप में उभरा। यद्यपि सूफी मत इस्लाम से ही संबन्धित था किन्तु यह इस्लाम में आई कट्टरता के विरूद्ध था। सूफी चिंतक इस्लाम का अनुसरण करते थे परन्तु वे कर्मकाण्ड का विरोध करते थे। उस समय मुस्लिम शासकों पर उलेमा (मुस्लिम धर्मनेता) का प्रभाव अधिक था। उलेमा वर्ग में लोगों के कट्टरपंथी दृष्टिकोण की प्रधानता थी। सल्तनतकालीन सुल्तान सुन्नी मुस्लमान होने के कारण सुन्नी धर्मनेताओं के आदे"ाों का पालन करते थे और साथ ही ि"ाया सम्प्रदाय के लोगों को महत्व नहीं देते थे। सूफियों ने इनकी प्रधानता को चुनौती दी तथा उलेमाओं के महत्व को नकारा। उन्होंने रूढ़िवादी विचारधारा, निरर्थक, कर्मकाण्ड, आडम्बर एवं कट्टरपंथ के स्थान पर सामाजिक सद्भावना, समन्वय, प्रेम, उदारवाद एवं गहन भक्ति के आद"ा द्वारा जन सामान्य को सुधार के लिए प्रेरित किया। फलस्वरूप यह एक आंदोलन का रूप ले लिया जिसका व्यापक प्रभाव इस्लाम धर्म के साथ–साथ हिन्दू समाज पर भी पड़ा।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में इस्लाम के रहस्यवाद के रूप में इसी आंदोलन को सूफी आंदोलन के नाम से जाना जाता है। भक्ति आंदोलन के संतों की तरह सूफियों ने मुक्ति की प्राप्ति के लिए एक परमात्मा की प्रेमपूर्ण भक्ति पर बल दिया। उन्होंने पैंगबर मुहम्मद को इंसान–ए–कामिल (Perfect human being) बताया तथा उनकी पवित्र ि"ाक्षाओं पर चलने की अपील की।

सूफी शब्द के अर्थ एवं उत्पत्ति के विषय में अलग–अलग विद्वानों में अलग–अलग मत है। अबू नसर अल सराज की पुस्तक 'किताब अल लुमा'' में किये गये उल्लेख के आधार पर माना जाता है कि सूफी शब्द की उत्पत्ति अरबी शब्द 'सूफ' (ऊन) से हुई जो एक प्रकार से ऊनी वस्त्र पवित्रता

का सूचक था, जिसे प्रारंभिक सूफी लोग पहना करते थे। यह ऊनी वरत्र पवित्रता का सूचक था जिसका प्रभाव आज भी भारतीय समाज में हिन्दू और मुसलमान दोनों में वि"वास के रूप में प्रचलित है। अतः ऊनी वरत्र को पहनने वाले आचार–व्यवहार से पवित्र लोग सूफी कहलाये। 'सफा' शब्द से भी सूफी की उत्पत्ति मानी जाती है। सफा का अर्थ पवित्रता या वि"ुद्धता से है। एक अन्य मत के अनुसार हजरत मुहम्मद साहब द्वारा मदीना में निर्मित मस्जिद के बाहर सफा अर्थात मक्का की एक पहाड़ी पर कुछ लोगों ने शरण लेकर अपने को खुदा की आराधना में लीन कर लिया इसलिए वे सूफी कहलाये। प्रारंभिक सूफियों में रबिया (8वीं सदी) एवं मंसूर हल्लाज (10वीं सदी) का नाम महत्वपूर्ण है। मंसूर हल्लाज ऐसे पहले सूफी साधक थे जो स्वयं को अनलहक घोषित कर सूफी विचारधारा के प्रतीक बने। अनलहक वैदिक मंत्र 'अहम् ब्रह्मास्मि' **(मै ही ब्रह्म हूँ)** का अरबी रूपांतरण है। सूफी संत इब्नुल अरबी ने उलेमाओं के ब्रह्म तथा जीव के मध्य मालिक एवं गुलाम के रि"ते की अवहेलना करते हुए यह कहा कि ई"वर एक है और व संसार की सभी वस्तुओं का निमित्त है। सूफी संत ई"वर को प्रियतमा एवं स्वयं को प्रियतम मानते थे। सूफियों ने ई"वर की प्राप्ति में हिन्दूओं की भक्ति की तरह सौन्दर्य एवं संगीत को अधिक महत्व दिया। भारत के उपनिषदीय परंपरा की तरह सूफी गुरू को अधिक महत्व देते थे क्योंकि वे गुरू को ई"वर प्राप्ति के मार्ग का पथ प्रद"ाक मानते थे। सूफी परंपरा में गुरू को 'पीर' तथा ि"ाष्य को 'मुरीद' कहा जाता था। सूफी जिन आश्रमों में निवास करते थे, उन्हें 'खनकाह' (मठ) कहा जाता था। सूफी संत भौतिक एवं भोग विलास से दूर सरल, सादे, संयमपूर्ण जीवन मे आस्था रखते थे। इन्ही वि"ोषताओं से प्रभावित होकर हिन्दू व मुसलमान दोनों उनकी ओर आकर्षित हुए फलस्वरूप सूफी मत मध्यकालीन इतिहास में सामाजिक–सांस्कृतिक उत्थान का एक आंदोलन बन गया। सूफी आंदोलन का ही यह प्रभाव रहा कि भक्ति व प्रेम के रूप में कव्वाली संगीत भारतीय सहित वि"व भर आज भी लोकप्रिय है। भारत में सूफियों का प्रवे"ा अरबों की सिन्ध विजय के बाद से ही होने लगा था। परन्तु दिल्ली सल्तनत की स्थापना के बाद सूफियों का प्रवे"ा भारत मे बड़े पैमाने पर होने लगा। सूफी संत सिलसिलों में संगठित थे। सूफियों के 14 सिलसिलों में भारत में कुल 12 सूफी सिलसिले स्थापित हुए। इनमें से चि"ती, सुहरावर्दी, कादरी, नक"ाबंदी सिलसिले भारत में अधिक लोकप्रिय रहे।

भारत में चि"ती सिलसिला ही सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ जिसका भारतीय समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। इस सिलसिला के सूफी संतों ख्वाजा मोइनुद्दीन चि"ती, कुतुबद्दीन वख्तियार काकी, बाबा फरीद निजामुद्दीन औलिया (अमीर खु"ारो के गुरू), शेख नसीरूदीन चिराग, शेख सलीम

चि"ती आदि भारतीय समाज में अत्यधिक लोकप्रिय रहे। इन सूफी संतों ने सामाजिक, सांस्कृतिक व आध्यात्मिक रूप से भारतीय जनमानस को आंदोलित किया। इसलिए मध्यकालीन भारतीय इतिहास में भक्ति आंदोलन की तरह हिन्दू–मुस्लिम के समन्वय द्वारा सामाजिक सद्भावना की स्थापना में सूफी आंदोलन का अपना वि"ाष्ट महत्व रहा है।

9.4.3. सूफी आंदोलन (Sufi Movement) : सामाजिक सांस्कृतिक आधार (Social Cultural Bases) :–

भारत में इतिहास के मध्यकाल में मुस्लिम शासकवर्ग के अत्याचारों व भेदभावपूर्ण नीति के कारण भारतीयों को इस्लाम के प्रति जो घृणा सी हो गई थी उसे सूफियों ने अपनी प्रेमपूर्ण वाणी और जनकल्याणकारी गतिविधियों से कम कर दो संस्कृतियों के समन्वय में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मध्यकालीन भारतीय इतिहास के संक्रमण व अव्यवस्था के उस दौर में सूफियों ने सामाजिक विघटन को बचाया और सुलह कुल अर्थात वि"वबंधुत्व का सिद्धांत प्रस्तुत किया। उन्होंने सामान्य जीवन जीते हुए जन सामान्य को उच्च नैतिकता का पाठ पढ़ाया। सूफी आंदोलन से मुस्लिम शासकवर्ग की धर्माधता में कमी आई। इससे सामाजिक सद्भावना का माहौल बना। हिन्दू व इस्लाम दोनों संस्कृतियों का मेलजोल बढ़ा। सूफियों ने भारतीय द"ान से अपनी साधना प्रणाली में योग व भक्ति भावना को बढ़ाने के लिए संगीत को अपनाया। भारतीयों की भी सूफियों में रूचि बढ़ी।

एक और जहां जनसाधारण के स्तर पर भक्त कवियों ने धार्मिक सहिष्णुता की बातें प्रसारित की वहीं दूसरी ओर शासक वर्ग के स्तर पर सूफियों ने धार्मिक सहिष्णुता के अनुकूल नीतिगत परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इससे मध्यकालीन इतिहास के इस दौर में मजबूत प्रेम व सद्भावना आधारित सामाजिक–सांस्कृतिक आधार कायम हुआ। वास्तव में भारत में इस्लाम की लोकप्रियता सूफी–संतो ंके वजह से ही संभव हुई थी न कि शासकवर्ग के प्रभाव से। सूफियों ने इस्लाम और मुस्लमानों का भारतीयकरण कर भारत में उनकी स्थिरता सुनि"चत की। महत्वपूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक उत्थान के अन्तर्गत भक्ति आंदोलन ओर सूफी आंदोलन ने परस्पर एक दूसरे को प्रभावित किया व सहयोग दिया।

मध्यकालीन भारत में सूफी आंदोलन का सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सूफी खानकाह, "िाक्षा व संगीत के प्रमुख केन्द्र थे। क्षेत्रीय भाषाओं और उनके साहित्य के विकास में भी सूफियों की प्रमुख भूमिका रही । उर्दू भाषा का विकास खानकाहों में ही हुआ। पंजाबी भाषा के

विकास में भी सूफी आंदोलन का उल्लेखनीय योगदान रहा। इस प्रकार भक्ति आंदोलन की तरह सूफी आंदोलन भी भारत में सकारात्मक सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण कारक साबित हुआ।

9.4.4. सूफी मत की शिक्षाएं (Teachings of Sufism)

इस्लाम में सूफीमत का विकास एक रहस्यवादी आंदोलन की तरह सफलता तथा लोकप्रियता का महत्वपूर्ण और दिलचस्प इतिहास है। सूफी संतों ने जीवन के परम चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो सिद्धान्त व द"ान दिए उसके आधार पर सूफी मत की ि"ाक्षाओं का सार निम्नलिखित है :–

(1) एक अल्लाह में विश्वास (Faith in one Allah) :– सूफियों के अनुसार सृष्टि के सर्जक, पालक व संहारक के रूप में एक ही परमात्मा है जिसको अल्लाह के नाम से जानते हैं। वह सर्व"ाक्तिमान तथा सर्वव्यापक है। अतः हमें एक अल्लाह की ही पूजा करनी चाहिये।

(2) पूर्ण आत्म त्याग (Complete self-Surrender) :– सूफियों के अनुसार अल्लाह की दया प्राप्त करने व अपनी बिगड़ी बनाने के लिए सांसारिक मोह–माया व अपनी इच्छाओं से परे अल्लाह के समक्ष पूर्ण आत्म त्याग सबसे जरूरी ि"ाक्षा है।

(3) पीर में विश्वास (Faith in Pir) :– भारत की गुरू–ि"ाष्य परंपरा की तरह सूफी मत की ि"ाक्षा में पीर अर्थात गुरू को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। पीर ही अपने मुरीदों अर्थात ि"ाष्यों की रूहानी अर्थात आध्यात्मिक उन्नति पर पूर्ण दृष्टि रखते हुए साधना का उचित मार्ग बताता है और उसे भवसागर से पार उतारता है अर्थात अंधकार से प्रका"ा की ओर ले जाता है।

(4) इबादत (Worship) :– सूफियों के अनुसार शुद्ध हृदय से एकमात्र अल्लाह की इबादत करने से ही मनुष्य इस संसार से मुक्ति प्राप्त कर सकता है। उनके अनुसार अल्लाह ही इबादत अर्थात पूजा नमाज़ द्वारा रोजे रखकर, दान करके तथा मक्का की यात्रा करके की जा सकती है। इसके लिए उन्होंने आचरण की पवित्रता पर अत्यधिक बल दिया।

(5) नमाज (Prayer) :– अपनी आत्मा की आवाज परमात्मा तक पहुंचाने के लिए सूफियों ने प्रतिदिन नमाज को अपने आचरण का हिस्सा बनाना सर्वोत्तम कर्तव्य बताया है। इसके लिए उन्होने हृदय की सच्चाई पर बहुत अधिक बल दिया।

(6) रोजे रखना (Fasting) :– सुफियों की रोजे रखना ि"ाक्षा का अभिप्राय केवल खाने–पीने की वस्तुओं से परहेज करना ही नही था, बल्कि इसका मुख्य उद्दे"य एकमात्र अल्लाह से लौ लगाने के लिए मन की बुराईयों को समाप्त करना था। उनका पक्का वि"वास था कि ऐसा करने वाले व्यक्ति की आत्मा शुद्ध होती है।

(7) दान (Charity) :– अपने व अपने परिवारों के नितांत आव"यकताओं की पूर्ति के बाद हमारे पास जो कुछ भी बचता है या उसमें से बचाकर कुछ धन निर्धनों तथा जरूरतमंदों में बॉटने की ि"ाक्षा सभी धर्मो में है। कुरान में भी निर्धनों की सेवा करने तथा गुलामों को आजाद करने को बहुत अच्छा बताया गया है। मनुष्यों से प्रेम व सहानुभूति करने का भाव भी धन के अतिरिक्त दान का ही एक भाग समझा गया है। सूफियों ने प्रत्येक व्यक्ति व परिवार के लिए इसे आव"यक माना है।

(8) मक्का की यात्रा (Pilgrimage of Mecca) :– सभी धर्मो में किसी न किसी रूप में भक्ति, ज्ञान व वैराग्य को बढ़ाकर भवसागर से पार उतरने के लिए तीर्थ यात्रा का वर्णन मिलता है। अल्लाह से एकरूप होने के लिए मन की एकाग्रता, हृदय की पवित्रता तथा विचारों की श्रेष्ठता हेतु सूफियों ने मक्का की यात्रा को अपनी ि"ाक्षा में वि"िष्ट स्थान दिया है।

(9) तरक–ए–दुनिया (Rejection of the world) :– अल्लाह से एकाकार होने के लिए यह आव"यक है कि हम सिर्फ नितांत आव"यकताओं के अर्थ में ही संसार का उपयोग करें व संबन्ध रखें अन्यथा अनाव"यक रूप से हम अपने मन को सांसारिक भोग–विलास से सदैव दूर रखें। प्रत्येक सूफी के लिए यह अति आव"यक ि"ाक्षा रही है।

(10) भक्ति संगीत (Devotinal Music) :– मानवीय हृदय में अल्लाह के प्रति प्रेम उत्पन्न करने के लिए सूफियों ने भक्ति संगीत पर बहुत जोर दिया। सूफियों की धार्मिक संगीत सभाओं को सभा कहा जाता है। सूफियों द्वारा प्रचलित भक्ति संगीत कव्वाली गायन आज भी बहुत लोकप्रिय है।

(11) मनुष्य जाति से प्रेम (Love of Mankind) :– जाति–पाति, रंग या नस्ल, ऊॅच–नीच, स्त्री–पुरूष समस्त भेदभावों से ऊपर उठकर सभी मनुष्य अल्लाह के संतान है की भावना से भरकर मानव मात्र से प्रेम की ि"ाक्षा सूफियों की सर्वप्रमुख ि"ाक्षा है।

सार रूप में सूफी यह मानते थे कि अल्लाह से एकरूप हो हो जाना सभी ि"क्षाओं की ि"क्षा है। इस एकाकार होने के दस चरण बताए गए है – तौबा (अफसोस), वं"ा (संयम), जुहद (निष्ठा), फक्कर (दीनता), सब्र (धैर्य), शुक्र (कृतज्ञता), खौफ (भय), रजा (आ"ा), तवक्कुल (संतोष) और रिजा (दैवी लक्ष्य के प्रति पूर्ण समर्पण)

9.4.5. सूफी आंदोलन का महत्व एवं प्रभाव :– (Importance and impact of Sufi Movement) :–

मध्यकाल में हिन्दू धर्म में जिस प्रकार का महत्त्व भक्ति आंदोलन का है ठीक उसी प्रकार इस्लाम में सूफी आंदोलन का है। सूफियों ने अपने प्रेम व सदाचार के आद"ा से इस्लाम को गति"ील एवं उदार बनाकर हिन्दू–मुस्लिम एकता को प्रोत्साहित किया। सूफी आंदोलन का भारतीय समाज व संस्कृति पर व्यापक प्रभाव पडा जो इस प्रकार हैः–

(1) हिन्दू एवं इस्लाम में समन्वय स्थापित करना :– सूफियों ने अपनी साधना प्रणाली में अनेक हिन्दू सिद्धान्तों को अपनाया। उन्होनें सामाजिक सेवा को परमात्मा की सेवा का एकमात्र साधन बताया। सूफियों के प्रेम, सदाचरण व सादगीपूर्ण जीवन से हिन्दू व मस्लिम दोनों प्रभावित हुए। इससे दोनों संस्कृतियों के बीच मेलजौल बढ़ा और सामाजिक सद्भावना की स्थापना में बल मिला।

(2) पारस्परिक प्रेम और समाज सेवा की भावना पर बल :– सूफी मत की ि"क्षा में प्रेम पर बहुत बल दिया गया। उन्होंने अपनी उदारता की भावना के द्वारा मानव मात्र की सेवा व एक दूसरे के प्रति आदर भाव के आद"ा के लिए लोगों को प्रेरित किया। सूफियों ने परमात्मा की प्राप्ति के लिए निर्धनों व जरूरतमंदों की सहायता करना अर्थात समाज सेवा को अति आव"यक माना। सूफी संतों ने अपने ि"ष्यों को समाज सेवा, सद्व्यवहार, क्षमा आदि गुणों की ि"क्षा दी।

(3) नैतिक आचरण को बढ़ाना :– सूफी संत किसी भी प्रकार के भोग–विलास से अपने आप को दूर रखते हुए संयम व सादगीपूर्ण जीवन जीने में वि"वास रखते थे। उनका पूर्ण वि"वास था कि नैतिकता के मार्ग पर ही चलकर हम परमात्मा को प्राप्त कर सकते है। उनकी इस ि"क्षा का प्रभाव हिन्दू व मुसलमान दोनों पर पड़ा।

(4) आध्यात्मिकता पर बल :– सूफी संतों ने ई"वर की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक उन्नति को आव"यक बताया। आध्यात्मिक उन्नति का अर्थ आन्तरिक विकास से है अर्थात् मन में विकार को

समाप्त करना, हृदय को पवित्र करना और अपने आपको प्रेम, सद्भावना व समाज सेवा की भावना से भरकर सादगीपूर्ण जीवन जीते हुए एकमात्र परमात्मा (अल्लाह) से एकाकार होने का प्रयास करना। सूफियों के इस आद"ा से प्रभावित होकर लोगों ने धार्मिक आडम्बरों के बजाय अपने जीवन को शा"वत सत्ता की ओर उन्मुख किया।

(5) एकेश्वरवाद पर बल :– सूफी संतों ने एके"वरवाद के सिद्धान्त के द्वारा हिन्दू–मुस्लिम सम्प्रदायों में एकता की भावना उत्पन्न की। इससे सामाजिक सद्भावना को बढ़ावा मिला।

(6) भाषा व साहित्य का विकास :– सूफी संतो ंके उपदे"ा की भाषा जन–सामान्य की भाषा थी। सूफी खानकाह, ि"क्षा व संगीत के प्रमुख केंद्र थे। क्षेत्रीय भाषाओं और उनके साहित्य के विकास में सूफियों की प्रमुख भूमिका रही। उर्दू भाषा का विकास खानकाहों में ही हुआ। सूफियों ने अपने उपदे"ा, संगीत व रचना में हिन्दुस्तानी शब्दों का खूब प्रयोग किया। जिसके फलस्वरूप उर्दू के अतिरिक्त पंजाबी, गुजराती, सिंधी व अन्य क्षेत्रीय भाषाओं और उनके साहित्य के विकास को बल मिला।

(7) राजनीति व शासन में शामिल लोगों को जनकल्याण की प्रेरणा :– यद्दपि सूफी सन्त स्वयं सदैव राजनीति से अलग रहे तथापि उन्होंने अपने सादगीपूर्ण जीवन से जन–सामान्य को समाज सेवा के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अपने प्रेम व उदारता के द्वारा शासक वर्ग को जनकल्याण के लिए प्रेरित किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि उन गरीब लोगों की सेवा करे जो प्र"ासकीय लोगों के अत्याचारों से पीड़ित है। इन संतों ने शासकों को प्रजा की सेवा करने को कहा।

इस प्रकार हम कह सकते है कि सूफी आंदोलन का भारतीय संस्कृति को उन्नत व सम्पन्न बनाने में प्र"ांसनीय योगदान रहा।

9.5 प्रगति समीक्षा (Check your progress) :–

(क) निम्नलिखित प्रश्नों के खाली स्थान में सही उत्तर लिखें :–

(1) भक्ति आंदोलन का विकास सर्वप्रथम भारत के ..... भाग में हुआ था।

(2) ..... सूफी संत का ि"ाष्य अमीर खुसरो था।

(3) अद्वैत सम्प्रदाय की स्थापना का श्रेय ..... को है।

(4) दक्षिण में अण्डाल नाम की महिला संत का सम्बन्ध ..... संप्रदाय से था।

(5) कबीरदास की रचनाओं के संकलन को ..... नाम से जानते है।

(6) तुलसीदास द्वारा विरचित रामचरितमानस ..... भाषा में लिखा गया है।

(7) भक्ति आंदोलन के ..... संत के विभिन्न जातियों से सम्बन्धित 12 ि"ाष्य थे।

(8) बासवन्ना ने अपना प्रचार ..... भाषा में किया।

(9) सूफी संतो ंके निवास स्थान को ..... कहते थे।

(10) ..... व"ा के शासकों ने ि"ाव की नटराज प्रतिमा का निर्माण करवाया।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के सही कथन के लिए 'सत्य' व गलत कथन के लिए 'असत्य' भाब्द लिखकर प्रतिक्रिया दें :–

1. भक्ति आंदोलन को दक्षिण भारत से उत्तर भारत तक प्रचारित करने का श्रेय गुरू रामानंद को दिया जाता है। ( )
2. सूफियों ने उलेमा को चुनौती देते हुए उसके महत्त्व को नकारा। ( )
3. महाराष्ट्र में भक्ति आंदोलन को लोकप्रिय बनाने में संत ज्ञाने"वर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ( )
4. संत रैदास निर्गुण भक्ति–परम्परा का प्रतिनिधित्व करते थे। ( )
5. रामानुज ने कृष्ण को आराध्य बनाकर वि"िाष्टाद्वैत सिद्धान्त की स्थापना की।( )
6. कर्नाटक वीर"ैवों को लिंगायत नाम से भी जाना जाता था। ( )
7. भारत में स्थित सूफी सम्प्रदायों में सर्वाधिक लोकप्रिय सम्प्रदाय चि"ती था।( )
8. भक्ति आंदोलन की प्रसिद्ध महिला संत मीराबाई निम्न जाति में जन्मी थी।( )
9. संत एकनाथ का जन्म गुजरात में हुआ था। ( )
10. सूफी संतों का वि"वास था कि ई"वर की प्राप्ति प्रेम और संगीत से की जा सकती है। ( )

(ग) सूची I को सूची II से सुमेलित कीजिए।

1. **सूची I** **सूची II**

(A) वि"ाष्टाद्वैतवाद	(i) रामनुजाचार्य
(B) द्वैतवाद	(ii) मध्यवाचार्य
(C) शुद्वाद्वैतवाद	(iii) विष्णु स्वामी
(D) द्वैताद्वैतवाद	(iv) निम्बार्काचार्य

	A	B	C	D
(क)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)
(ख)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(ग)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(घ)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)

9.6. सारांश / संक्षिप्ति का (Summary) :–

भारत में भक्ति आंदोलन सारांश रूप में प्रस्तुतीकरण :–

- **शंकराचार्य (Shankaracharya) (788– 820 ई.)**
  - जन्म स्थल – 788 ई. को केरल के अलवर नदी के तटवर्ती ग्राम कलादी में।
  - पिता – ि"ाव गुरू माता – आर्यम्बा (सुभद्रा)
  - दीक्षा गुरू – गोविन्द योगी या गोविंदाचार्य
  - दीक्षा के उपरान्त उपाधि – परमहंस
- **दार्शनिक मत** :– ज्ञानमार्गी शंकराचार्य ने अद्वैतवाद मत की स्थापना की। शंकराचार्य जगत को मिथ्या तथा ब्रह्म (ई"वर) को सत्य मानते थे। ब्रह्म प्राप्ति के लिए ज्ञान मार्ग पर बल दिया। शंकराचार्य शैव तथा बौद्ध द"ान से भी प्रभावित थे। बौद्ध धर्म के महायान शाखा से प्रभावित होने के कारण उन्हें प्रच्छन्न बौद्ध कहा गया है।
- **रचनाएँ** :– शंकराचार्य ने उपनिषदों, भगवद्गीता एवं ब्रह्मसूत्र पर भाष्य लिखे हैं। उपनिषद, ब्रह्मसूत्र एवं गीता पर लिखे गये शंकराचार्य के भाष्य को 'प्रस्थानत्रयी ' के अंतर्गत रखते हैं।
- **शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार मठ / पीठ**

	मठ / पीठ	**स्थान**	**राज्य**
1.	ज्योतिर्मठ (विष्णु)	बद्रीनाथ	उत्तराखण्ड

2. गोवर्धनपीठ (बलभद्र व सुभद्रा) पुरी उड़ीसा
3. शारदापीठ (कृष्ण) द्वारिका गुजरात
4. श्रृंगेरीपीठ (ि"ाव) मैसूर कर्नाटक

- हिंदू धर्म को सुव्यस्थित करने के लिए शंकराचार्य ने स्मृति संप्रदाय की स्थापना की जिसमें पंचदेवोपासना का विधान है

- **रामानुजाचार्य (1017–1137 ई.)**
  - सगुण ई"वर में वि"वास रखने वाले रामानुज को दक्षिण भारत में विष्णु का अवतार मानते है।
  - वि"िष्टाद्वैत द"र्न की स्थापना करके वैष्णव धर्म को एक दा"र्निक आधार प्रदान किया।
  - वर्ण भेद से ऊपर उठकर सभी जाति के लोगों को भक्ति का उपदे"ा दिया।
  - दक्षिण भारत मे भक्ति आंदोलन को फैलाया।
  - इनके ि"ाष्य व अनुगामी प्रयाग में जन्में रामोपासक गुरू रामनंद ने भक्ति आंदोलन को दक्षिण भारत से उत्तर भारत में लोकप्रिय बनाया।

- **रामानंद (14–15 वीं सदी)**
  - सगुण परंपरा के संत।
  - राम की उपासना करने वाले।
  - व्यावहारिक जीवन में जाति की समानता पर वि"वास।
  - जनसामान्य की भाषा हिन्दी में उपदे"ा दिया।
  - दक्षिण भारत से भक्ति आंदोलन को उत्तर भारत मे लाने वाले।
  - इन्होंने जाति धर्म व व्यवसाय से ऊपर उठकर ि"ाष्य बनाये।

गुरू ग्राम रामानंद के 12 प्रमुख ि"ाष्य :–

1. कबीर (जुलाहा) 2. रैदास (चर्मकार) 3. धन्ना (जाट किसान)

4 सेना (नाई) 5 पीपा (राजपूत) 6 सदना (कसाई)

7 नर हरि 8 अनंतनंद 9 भनंतनंद

10 भवानंद 11 सुरसर 12 पद्मावती एवं सुरसीर

- **कबीर (1398–1510 ई.) (Kabir 1398-1510 A.D.)**

- निर्गुण परंपरा के संत।
- जीवन काल सामान्यतः पंद्रहवीं सदी। का"ी (वाराणसी) में
- इनका पालन पोषण नीमा और नीरू दम्पत्ति ने किया।
- पत्नी –लोई पुत्र– कमाल पुत्री– कमाली
- दिल्ली सल्तनत के शासक सिकंदर लोदी के समकालीन।
- समस्त धार्मिक बाह्य आडंबरों व सामाजिक भेदभावों पर तीव्र प्रहार।
- सच्चे गृहस्थ जीवन द्वारा ई"वर की प्राप्ति को संभव बताया।
- कबीर की प्रमुख रचनाएँ – साखी, सबद, रमैनी, दोहा, मंगल, होली, बसंत, रेखताल आदि हैं।
- कबीर दास की रचनाओं के संग्रह को 'बीजक' के नाम से जानते हैं।
- कबीरदास की भाषा – सधुक्कड़ी अथवा खिचड़ी अर्थात् मिली–जुली भाषा है।
- कबीरदास की बीजक में अधिकां"ातः 'अवधी' भाषा का प्रयोग हुआ है।

♦ **संत रैदास (रविदास) (Ravidas)**:–

- निर्गुण परंपरा के संत।
- कबीर के समकालीन थे।
- कबीर ने इन्हें संतों का संत कहा है।
- मीराबाई इन्हे अपना गुरू मानती थीं।
- 15वीं–16वीं सदी में वाराणसी (का"ी) मे जन्में संत रैदास का वि"वास था कि सभी में हरि है और सभी हरि में है।
- इनके अनुयायियों द्वारा रैदासी सम्प्रदाय की स्थापना हुई थी।

♦ **दादू दयाल (1544–1603 ई.)**

- निर्गुण भक्ति परंपरा के दादू दयाल कबीर पंथी थे।
- गुजरात में जन्मे दादू दयाल का अधिकां"ा जीवन राजस्थान में बीता।
- दादू के द्वारा चलाया संप्रदाय दादू पंथी कहलाया।
- दादू की ि"ाक्षा – 'विनय"ील बनो और अहम से मुक्त रहो' थी।
- उनके द्वारा रचित ग्रन्थ को 'दादू दयाल जी की वाणी' कहा जाता है।

- दादू दयाल के प्रसिद्ध ि"ष्य रज्जब हुए।

♦ **गुरू नानक देव जी (1469–1539 ई.)(Guru Nanak Dev 1469-1539 A.D.)** :–

- गुरू नानक का जन्म 15 अप्रैल 1469 ई. मे रावी नदी के तट पर तलवंडी (अब ननकाना) नामक गांव जो अब पाकिस्तान में स्थित है में एक खत्री परिवार में हुआ था।
- सिक्ख धर्म के प्रवर्तक।
- नानक ने लंगर प्रथा को प्रारम्भ किया।
- जीवन में 'सच्चा सौदा' की ि"क्षा गुरू नानक ने ही थी।
- इनके द्वारा आरंभ किये गये सिक्ख धर्म में दस गुरू हुए।
- सिक्खों के दसवें व अन्तिम गुरू– गुरू गोविन्द सिंह जी हुये जिन्होंने खालसा पथ की स्थापना 1697 ई. में की।
- सिक्खों के दूसरे गुरू – गुरू अंगद पंजाबी भाषा की लिपि गुरूमुखी लिपि के जनक माने जाते है।
- चौथे गुरू – गुरू रामदास ने अमृतसर नगर की स्थापना की।
- पांचवे गुरू – गुरू अर्जुनदेव ने अमृतसर में स्वर्ण मंदिर की स्थापना की तथा सिक्खों के पवित्र ग्रंथ गुरूग्रंथ साहिब का संकलन किया।

♦ **चैतन्य महाप्रभु (1486 – 1533 ई.)**

- सगुण कृष्णोपासक।
- जन्म स्थान –नवद्वीप (नदिया) पं. बंगाल।
- वास्तविक नाम – वि"वम्भर।
- बचपन का नाम – निमाई।
- दीक्षा गुरू – ई"वरपुरी।
- दीक्षा के बाद नाम – चैतन्य।
- स्थापित सम्प्रदाय – गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय।
- दा"निक सिद्धान्त – अचिन्त्यभेदाभेद द"न।
- बंगाल व उड़ीसा में वैष्णव धर्म को लोकप्रिय बनाया।
- कृष्ण भक्ति को बढ़ावा देने के लिए इन्होंने 'कीर्तन' परंपरा की नींव रखी।

- ➢ कीर्तन परंपरा – इनके अनुयायी नाचते–गाते हुए कृष्ण भक्ति का प्रचार करते थे।
- ➢ 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कविराज कृष्णदास द्वारा रचित 'चैतन्य चरित' में उनके जीवन चरित्र का वर्णन है।
- ➢ डनके समय में बंगाल का शासक – अलाउद्दीन हुसैन शाह था।

♦ **निम्बार्काचार्य (12वीं भाताब्दी)**

- ➢ कृष्ण को शंकर का अवतार मानने वाले निम्बार्काचार्य सगुण भक्ति के समर्थक थे।
- ➢ द्वैताद्वैतवाद द"ान के संस्थापक।
- ➢ इनका सम्प्रदाय सनक या सनकादी सम्प्रदाय के नाम से विख्यात है। जिसमें राधाकृष्ण युगल सरकार की उपासना की जाती है।
- ➢ निम्बार्काचार्य को सुद"ान चक्र का अवतार माना जाता है।

♦ **माध्वाचार्य (1199 –1278 ई.)**

- ➢ सगुण परंपरा के विष्णु उपासक संत।
- ➢ स्थापित द"ान – द्वैतवाद द"ान
- ➢ उन्होंने मोक्ष के तीनों मार्ग – कर्म, ज्ञान व भक्ति को अपने में पूर्ण न होकर एक दूसरे के पूरक है ऐसा बताया।
- ➢ ई"वर का एक ही रूप माना। इनका सम्प्रदाय 'ब्रह्म सम्प्रदाय' के नाम से प्रसिद्ध है।

♦ **सूरदास (1478–1583 ई.) (Surdas 1478–1583 A.D.)**

- ➢ सगुण परंपरा के कृष्णोपासक संत।
- ➢ गुरू – बल्लभाचार्य।
- ➢ गुरू से प्रेरणा पाकर कृष्ण लीला को अपनी रचनाओं का आधार बनाया।
- ➢ रचनाएँ – सूरसारावली, साहित्य लहरी तथा सूरसागर प्रमुख है।
- ➢ इनकी भाषा ब्रज भाषा थी।
- ➢ सूरदास को ' पुष्टिमार्ग' का जहाज कहा गया है।

♦ **बल्लभाचार्य (1479–1531 ई.)**

- ➢ शुद्धाद्वैतवाद में वि"वास रखने वाले सगुणोपासक वल्लभाचार्य श्रीनाथ जी के नाम से भगवान कृष्ण की उपासना करते थे।

- पुष्टिमार्ग संप्रदाय के संस्थापक।
- पुष्टि का अर्थ – कृपा व मार्ग का अर्थ –पथ या पन्थ है।
- कृष्ण की कृपा पर आश्रित होने के कारण वल्लभ और इनके अनुयायी पुष्टिमार्गी कहलाये।

♦ तुलसीदास (1532–1623 ई.) (Tulsidas 1532-1623 A.D.)

- सगुण भक्ति के समर्थक रामोपासक संत।
- जन्म स्थान – उत्तर प्रदे"ा में प्रयाग के पास चित्रकुट जिले में राजापुर नामक ग्राम।
- पिता – आत्माराम दूबे माता – हुलसी
- बचपन का नाम – रामबोला गुरू – नर हरिदास
- पत्नी – रत्नावली
- तुलसीदास को शैव और वैष्णव संप्रदायों के बीच एकता स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है।
- इन्होंने मुगल"ासक अकबर के समय में 1575 ई. में रामचरितमानस की रचना की।
- इसकी भाषा अवधी है।
- इनकी अन्य प्रमुख रचनाएँ है – विनय पत्रिका, श्रीकृष्ण गीतावली, गीतावली, कवितावली, दोहावली, रामाज्ञा प्र"न, जानकी मंगल, पार्वती मंगल, बरवै रामायण, वैराग्य संदीपनी, रामललानहछू व हनुमान चालीसा आदि।

♦ मीरा बाई (1498–1546) (Mirabai 1498-1546 A.D.)

- जन्म स्थान – कुड़की ग्राम मेड़ता, राजस्थान
- पिता – रत्नसिंह राठौर माता – वीर कुमारी/वीर कुंवरी
- विवाह – 1516ई. में मेवाड़ के सिसोदिया वं"ाीय महाराणा सांगा के बड़े पुत्र युवराज भोजराज से।
- कृष्ण के सगुण रूप की उपासिका।
- मीरा बाई ने कृष्ण की भक्ति में अनेक पद और गीतों की रचना राजस्थानी और ब्रजभाषा में की। मीराबाई के भक्ति गीत को पदावली कहा जाता है।
- मीरा ने अपने काव्य में कृष्ण को प्रेमी, सहचर और पति मानकर चित्रित किया है।

- **शंकरदेव (1499–1569 ई.) (Shankaradev 1499-1569 A.D.)**
  - कृष्ण के सगुण रूप के उपासक संत।
  - शंकरदेव ने निष्काम भक्ति पर बल देते हुए – एक"रण सम्प्रदाय की स्थापना की।
  - एकमात्र कृष्ण की भक्ति में लीन होने के कारण इन्हें – 'असम के चैतन्य' के नाम से जाना जाता है।
- **नरसी मेहता (15वीं सदी) :–**
  - राधा कृष्ण के सगुण रूप के उपासक संत नरसी मेहता गुजरात के प्रमुख संत थे।
  - इनके भक्ति गीत ' सूरत–संग्राम' में संकलित है।
  - वैष्णव जन तो तेनो कहिये, पीर पराई जाने रे इनका प्रसिद्ध भजन है।
  - नरसी मेहता द्वारा रचित यह भजन गांधी जी को बहुत प्रिय था
- **महाराष्ट्र के भक्तिकालीन संत :–**

  मध्यकालीन भक्ति आंदोलन में महाराष्ट्र में वैष्णववादी भक्ति परंपरा में मुख्य देवता विठोवा थे व इसका मुख्य केन्द्र पण्ठरपुर था। भक्ति आंदोलन के दौरान महाराष्ट्र में मुख्यतः दो संप्रदायों – धरकरी व बारकरी प्रमुख था। इसके अंतर्गत प्रमुख संत थे – संत ज्ञाने"वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम और रामदास।
- **ज्ञानेश्वर (1211 – 1296 ई.) :–**
  - महाराष्ट्र में भक्ति आंदोलन को आरंभ करने वाले ज्ञाने"वर या ज्ञानदेव ने मराठी भाषा में गीता पर ज्ञाने"वरी टीका लिखी।
- **नामदेव (1270 – 1350 ई.) :–**
  - दर्जी परिवार में जन्म।
  - बारकरी संप्रदाय की स्थापना में प्रमुख भूमिका।
  - नामदेव के भक्तिपदक मराठी गीत को 'अभंग' के नाम से जानते है।
  - इनमें कुछ गीत गुरूग्रंथ साहिब में संगृहीत है।
  - इनके गुरू बिसोबा खेचड़ थे।
- **एकनाथ (1538 – 1599 ई.) :–**
  - इनका जन्म पैठन (औरगाबाद) में हुआ था।

- ➢ भगवद्गीता पर टीका लिखी।
- ➢ इन्होंने महाराष्ट्र में भक्ति के लिए कीर्तन, गायन को लोकप्रिय बनाया।

♦ **तुकाराम (1598 – 1650 ई.) :–**

- ➢ ि"ावाजी के समकालीन तुकाराम जन्म से शूद्र थे।
- ➢ हिन्दू – मुस्लिम एकता पर बल दिया।
- ➢ बारकरी संप्रदाय को लोकप्रिय बनाया।
- ➢ अनेक अभंगों की रचना की।

♦ **रामदास (1608–1681 ई.) :–**

- ➢ ि"ावाजी के आध्यात्मिक गुरू।
- ➢ धरकरी संप्रदाय के प्रमुख संत।
- ➢ इनकी रचनाएं – दासबोध, आनंद भुवन इत्यादि है।
- ➢ मराठा शक्ति (17वीं शताब्दी) को नैतिक और आध्यात्मिक बल प्रदान करने के लिए प्रसिद्ध संत माने जाते है।
- ➢ इनकी स्तुतियां गुरूग्रंथ साहिब में संकलित है।

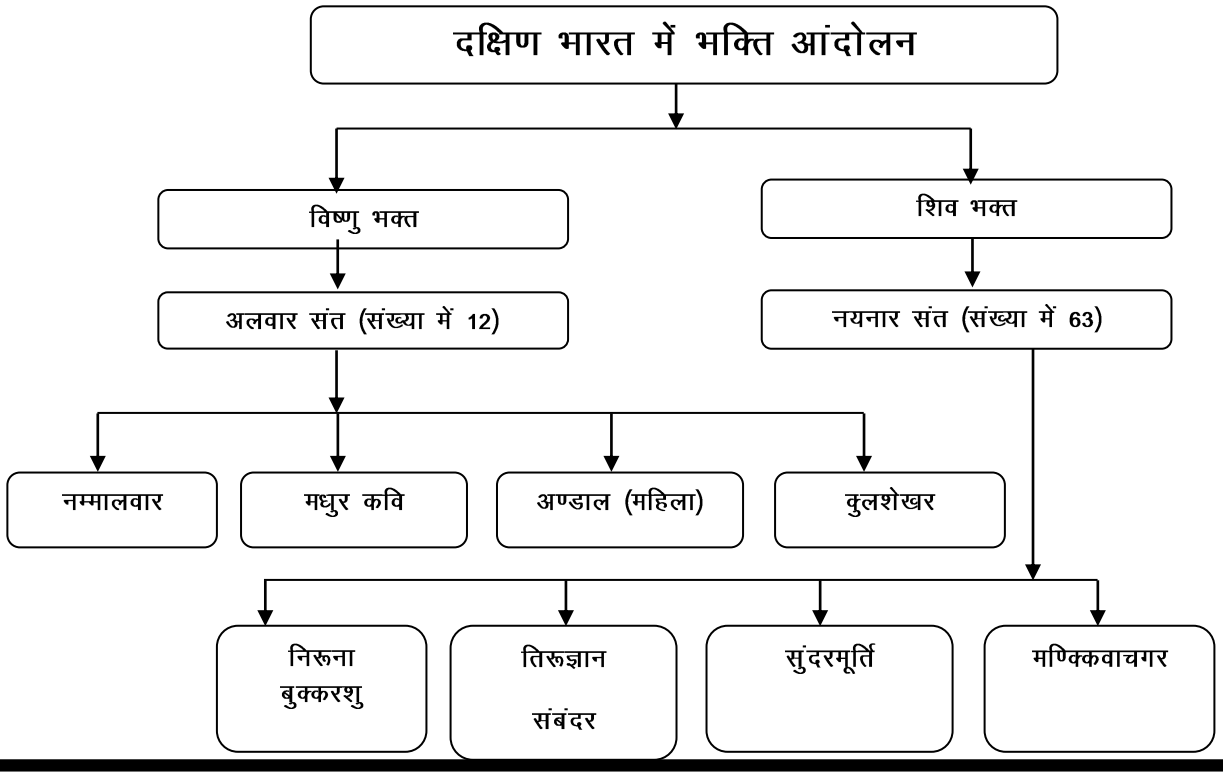

- अलवार का अर्थ ज्ञानी व्यक्ति होता है।
- अलवार संत एके"वरवादी थे।
- ि"व भक्त नयनार के भक्ति गीत तिरूपाडुयम कहे जाते है। इनकी संख्या 11 है।

❖ **सूफी आंदोलन : संक्षिप्त विवरण :–**

- इस्लाम धर्म के अंतर्गत एक रहस्यवादी आंदोलन के रूप में सूफी आंदोलन का जन्म हुआ।
- सातवी शताब्दी मे अरब में पैगंबर मुहम्मद द्वारा इस्लाम की स्थापना की गयी।
- भारत में सर्वप्रथम अरब के मुहम्मद बिन कासिम ने 712 ई. में सिंध पर आक्रमण कर इस्लामी सत्ता की स्थापना का प्रयास किया।
- तुर्क मूल के महमूद गजनी ने 1000 से 1026 ई. के बीच भारत पर 17 बार आक्रमण किया।
- मुहम्मद गोरी के गुलाम कुतुबद्दीन ऐबक द्वारा दिल्ली सल्तनत के नाम से 1206 में इस्लामी सत्ता की स्थापना के बाद सूफियों का प्रवे"ा भारत में बड़े पैमाने पर हुआ।
- इस्लामी कानून के समर्थक सूफी सम्प्रदाय को बा–"ारा के नाम से जानते है।
- इस्लामी कानून से मुक्त सूफी सम्प्रदाय को बे–"ारा कहते है।
- इस्लामी कानून के चार महत्वपूर्ण स्त्रोत है – कुरान, हदीस, इजमा और कयास।
- कुरान इस्लाम की पवित्र पुस्तक है। इसे सम्मान से कुरान शरीफ कहा जाता है इसकी रचना अरबी भाषा में की गई है।
- हदीस में पैगम्बर के कार्यो एवं कथनों का उल्लेख है।
- इजमा में मुस्लिम विधि"ास्त्रियों द्वारा व्याख्यायित कानून है।
- कयास में तर्क के आधार पर वि"लेषित कानून है।
- दिल्ली सल्तनत काल के आस–पास सूफी बारह पंथों या सिलसिलों में संगठित थे।
- प्रत्येक सिलसिले का नेतृत्त्व सामान्य रूप से एक प्रसिद्ध सूफी संत करता था, जो पीर कहलाता था और अपने मुरीदों अर्थात् ि"ाष्यों के साथ खानकाह अर्थात् आश्रम में रहता था।
- पीर और मुरीदों का सम्बन्ध सूफी धर्मव्यवस्था का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग था।
- ई"वर, आत्मा एवं भौतिक तत्व के पारस्परिक संबन्धों के विषय में सूफियों और हिन्दू योगियों व रहस्यवादियों के विचारों में बहुत सी समानताएँ थी।
- सूफी संतों ने भारतीय भक्ति द"ान से तप, उपवास, प्राणायाम, संगीत व सौन्दर्य को अपनाया।
- भारत मे कुल 12 सूफी सिलसिले स्थापित हुए।

- भारत में चि"ती सिलसिला सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ।
- भारत में चि"ती सिलसिले की स्थापना ख्वाजा मुईनुद्दीन चि"ती ने की थी।
- चि"ती संप्रदाय के प्रमुख सूफी संत है – कुतुबदीन बख्तियार काकी, हमीदुद्दीन नागौरी, फरीदुद्दीन गज–ए–शकर, निजामुद्दीन औलिया, नासिरूद्दीन चिराग–ए–देहलवी, शेख बुरहानुद्दीन गरीब, बंदा नवाज, शेख सलीम चि"ती आदि।
- कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी इल्तुतमि"ा के शासनकाल में भारत आए। इन्होंने दिल्ली को अपना केन्द्र बनाया।
- हमीदुद्दीन नागौरी को सन्यासियों का सुल्तान के नाम से जाना जाता है। उनका केन्द्र राजस्थान के नागौर में था।
- फरीदुद्दीन गज–ए–"ाकर, बाबा फरीद के नाम से प्रसिद्ध थे। इनकी गतिविधियों का केन्द्र हांसी (हरियाणा) व अजोधन (पंजाब) था।
- गुरू अर्जुन देव ने गुरू ग्रंथ साहिब (आदि ग्रंथ) में बाबा फरीद के कथनों को संकलित किया है।
- बाबा फरीद ने अपने उपदे"ों के लिए पंजाबी भाषा का प्रयोग किया।
- चि"ती संतों में सबसे प्रसिद्ध निजामुद्दीन औलिया ने दिल्ली सल्तन्त के सात सुल्तानों का कार्य काल देखा, परन्तु कभी किसी के दरबार में नहीं गए।
- उन्हें महबूब–ए– इलाही (ई"वर का प्रिय) व सुलतान–उल–औलिया (संतों का राजा) भी कहा जाता है।
- निजामुद्दीन औलिया ने सुलह–ए–कुल का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था।
- अमीर खु"ारों निजामुद्दीन औलिया का प्रिय ि"ाष्य था।
- निजामुद्दीन औलिया का दरगाह दिल्ली स्थित निजामुद्दीन में है।
- दक्षिण भारत में चि"तया संप्रदाय की नींव सूफी संत शेख बुरहानुद्दीन ने रखी थी।
- सूफी संत बंदा नवाज ने बह्मनी साम्राज्य के अंतर्गत कर्नाटक में गुलबर्गो को अपना प्रमुख केन्द्र बनाया।
- अकबर के समकालीन सूफी संत शेख सलीम चि"ती ने आगरा में सीकरी नामक स्थान पर अपनी खानकाह स्थापित की।
- इन्ही के आ"ीर्वाद से अकबर के पुत्र सलीम का जन्म हुआ था। इनका मकबरा फतेहपुर सीकरी में स्थित है।

- चि"ती संप्रदाय के बाद भारत में दूसरा सर्वाधिक लोकप्रिय संप्रदाय सुहरावर्दी सम्प्रदाय था। इसका सम्बन्ध समाज के उच्च वर्ग से ही था। इसका प्रभाव भारत में उत्तर–पि"चमी सीमा प्रांत क्षेत्र में था। भारत में इसके संस्थापक मुलतान के संत शेख बहाउद्दीन जकारिया थे।
- फिरदौसिया सिलसिला सुहरावर्दी सिलसिले की एक शाखा थी। इसकी स्थापना शेख बदरूद्दीन समरकंदी ने बिहार के राजगीर में की थी। फिरदौसी का प्रमुख केन्द्र बिहार ही था।
- कादिरिया सिलसिला भी भारत में लोकप्रिय रहा। भारत में इसके संस्थापक अब्दुल कादिर जिलानी थे। मुगल शासक शाहजहॉ का पुत्र द्वारा ि"ाकोह इसी सिलसिले का अनुयायी था।
- इस सिलसिला का मुख्य केन्द्र मध्य भारत थां
- अब्दुल्ला शत्तारी द्वारा स्थापित शत्तारी सिलसिला का केन्द्र भी मध्य भारत में ही था पर यह उतना लोकप्रिय नही हो सका।
- बहाउद्दीन नक"ाबंद द्वारा स्थापित नक"ा बंदी सिलसिला मुगलकाल में बहुत प्रसिद्ध था। बाबर ने इसे लोकप्रिय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस सिलसिले के संत संगीत के विरोधी थे। मुगल वं"ा के अन्य शासकों से भी इसका सम्बन्ध रहा। औरंगजेब के समय में इस सम्प्रदाय का प्रभाव बहुत बढ़ गया। इसका मुख्य प्रभाव क्षेत्र पंजाब व दिल्ली के आस–पास का इलाका था।
- 'मसनवी' सूफियों द्वारा अल्लाह के प्रति मानवीय प्रेम को प्रकट करने वाली लंबी कविताऍ थी।
- 'मक्तुबात' सूफी संतों द्वारा अपने अनुयायियों एवं सहयोगियों को लिखे गए पत्र थे। इन पंत्रों से धार्मिक सत्य के बारे में सूफी संतो ंके अनुभवों के बारे में जानकारी मिलती है।
- सूफियों की धार्मिक संगीत सभा को 'समा' कहते थें।

9.7. संकेत सूचक (Key Words)

शब्द (Words)	अर्थ (Meaning)
• उलेमा –	मुस्लिम धर्मनेत्ता
• कर्मकाण्ड –	धर्म के क्षेत्र में किये जाने वाले बाहरी क्रिया–कर्म।
• आडम्बर –	दिखावा/वास्तविकता से परे।
• प्रणेता –	संस्थापक/प्रधान/मुख्य प्रचारक।
• आलवार –	दक्षिण भारत में वैष्णव संत।

- नयनार – दक्षिण भारत में शैव संत।
- निराकार – कोई नि"चत आकार नही होना।
- अभंग – भक्तिपरक मराठी गीत।
- रहस्यवाद – किसी विषय वस्तु के अंदर की बात या भेद को प्रकट करने से संबन्धित विचारधारा।
- पैगंबर – ई"वर/अल्लाह का संदे"ा सुनाने वाला/किसी नए धर्म, संप्रदाय का प्रवर्तक।
- रूढ़िवाद – बंधे–बंधाये पुराने विचारों से जकड़े रहने की विचारधारा।
- सल्तनत – बाद"ाही/राज्य
- पीर – सूफी संत के लिए
- मुरीद– ि"ाष्य
- खनकाह – आश्रम या मठ
- सिलसिला – संप्रदाय/परंपरा
- समन्वय – मेलजोल
- सहिष्णुता – सहनशील आचारण।
- निष्काम – कामना/इच्छा से परे।
- अनन्य – न अन्य अर्थात दूसरा कोई नहीं।
- उपनिषदीय – उपनिषद काल से सम्बन्धित।
- उपनिषद – वेद के अंतिम भाग जिसका शाब्दिक अर्थ है – गुरू के समीप बैठकर विद्या ग्रहण करना।
- खंडन – किसी मत, विचार या तर्क का भेद खोलना अर्थात अच्छे–बुरे, पक्ष का विवेचन करना।
- साखी – आंखों देखी कबीर की वाणी।
- शब्द – कबीर द्वारा प्रवचन के रूप में प्रकट किए गए शब्द।
- रमैनी – कबीर द्वारा अनुभव या महसूस किये गये उपदे"ा।

- बीजक – साखी, शब्द व रमैनी के रूप में दोहों व चौपाइयों का कबीर की वाणी का संग्रह।
- अवधारणा – सुनियोजित विचार/चिंतन
- लिंगायत – दक्षिण भारत कर्नाटक में एक संप्रदाय वीर शैव संप्रदाय को लिंगायत संप्रदाय भी कहते थे, क्योकि व लिंग धारण करते थे।
- चिदानंदरूप – चेतन युक्त आनंद रूप/जीवंत आनंद
- चिदानन्दरूपः ि"वोअहम् ि"वोअहम् – चैतन्य और आनन्द स्वरूप मै ि"व (कल्याणमय तत्व) हूं, मैं ि"व हूँ।
- सगुणोपासना – ई"वर के साकार रूप अर्थात मूर्ति की उपासना आराधना या पूजा।
- निर्गुण – ई"वर के निराकार स्वरूप अर्थात आकृति वि"ोष की मान्यता नहीं।
- सम्प्रदाय – परंपरा से चला आया हुआ सिद्धान्त या मत।
- आदिगुरू – प्रथम गुरू।
- आदिगुरू शंकराचार्य :– शंकराचार्य की परंपरा में प्रथम गुरू होने के कारण इन्हें सम्मान से आदिगुरू शंकराचार्य कहा जाता है।

9.8 स्व मूल्यांकन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT)

1. **भक्ति आंदोलन की उत्पत्ति एवं विकास का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत कीजिए?**
   (Give a brief History of the Origin and development of the Bhakti Movement)

   ---

2. **भक्ति आंदालन ने लोगों के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन को कैसे प्रभावित किया?**

   (How does the Bhakti Movement effect the political, Social, Cultural and religious life of Indians?)

---

3. सूफी आंदोलन से आप क्या समझते है इसके सिद्धान्तों एव प्रभावों का विवेचन कीजिए ?

(What do you know about Sufism ? Give an analysis of the teaching and effects of Suffism.)

---

4 निम्नलिखित पर नोट लिखें ?**(Write note on Following) :-**

कबीर, नानक, चैतन्य, रामानंद, चिश्ती सम्प्रदाय, सुहरावर्दी सम्प्रदाय, नक्शबंदो एवं कादरी संप्रदाय ।

(Kabir, Nanak, Chaitanya, Ramanand, Chisti Silsila, Suharavardi Silsila, Nakshbandi and Kadri Silsila)

9.9 प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर

9.5 **(क)** (1) दक्षिण भाग में (2) निजामुद्दीन औलिया (3) आदिगुरू शंकराचार्य (4) अलवार (5) बीजक (6) अवधी (7) रामानंद (8) कन्नड़ (9) खनकाह (10) चोल

9.5 **(ख)** (1) सत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) असत्य (6) सत्य (7) सत्य (8) असत्य (9) असत्य (10) सत्य

9.5 (ग) 1 (क)

9.10 संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक अध्ययन सामग्री (Refrences/Suggested Readings):-

1. मध्यकालीन भारत खंड 1 (750–1540 ई.) संपादक–हरि"ाचन्द्र वर्मा हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदे"ालय, दिल्ली वि"वविद्यालय : 1985
2. सामन्य अध्ययन – यूनिक प्रका"ान, इलाहाबाद (उत्तर प्रदे"ा)
3. संक्षिप्त इतिहास एन.सी.ई.आर.टी सार (कक्षा छठी – सातवीं) लेखन व संपादन – महे"ा कुमार वर्णवाल कॉसमोस पब्लिके"ान मुखर्जी नगर, दिल्ली, जनवरी, 2019
4. सामान्य अध्ययन – Specturm पब्लिके"ान दिल्ली

5- Prof. Manjeet Singh Sodhi : Modern Publication, Railway Road Jalandhar First Edition : 2009

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA
LESSON NO. 10	VETTER :
गुप्तोत्तर काल : सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास (Post Gupta Period : Social, Economic & Cultural Development)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

10.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

10.2. परिचय **(Introduction)**

10.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

10.3.1. गुप्तोत्तरकालीन समाज : अवधारणात्मक समझ

(Post Gupta Period Society : Conceptual Understanding)

10.3.2. गुप्तोत्तरकालीन समाज : मुख्य बिन्दु एवं इनकी विशेषताएँ / गुप्तोत्तरकालीन सामाजिक स्थिति **(Post Gupta Period : Main Point and its Characteristics/Post Gupta Period Social-Condition)**

10.3.3. गुप्तोत्तरकालीन : आर्थिक दशा।

(Post Gupta Period : Economic Conditions)

10.3.4. गुप्तोत्तरकालीन सांस्कृतिक विकास : अवधारणात्मक समझ।

(Post Gupta Period cultural development : Conceptual understanding)

10.4. मुख्य पाठ के आगे का भाग **(Further Main body of the text)**

10.4.1 गुप्तोत्तरकालीन : धर्म **(Post Gupta Period : Religion)**

10.4.2. गुप्तोत्तरकालीन मंदिर : सामाजिक धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन में योगदान।

(Post Gupta Period Temple : Contribution in social religious and Cultural Life)

10.4.3. गुप्तोत्तरकालीन मंदिर : शिक्षा का केन्द्र।

(Post Gupta Period Temple: Educational Centre)

10.4.4. गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला । **(Post Gupta Period Indian Art)**

10.5. प्रगति समीक्षा **(Check your progress)**

10.6. सारांश **(Summary)**

10.7. संकेत–सूचक **(Key-Words)**

10.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा **(Self Assessment Test)(SAT)**

10.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर **(Answers to check your Progress)**

10.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री **(References/Suggested Readings)**

10.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस पाठ के अध्ययन के बाद विद्यार्थी निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त कर लेंगे :–

- गुप्तोत्तरकालीन समाज व संस्कृति की अवधारणात्मक समझ को विकसित कर लेंगें।
- गुप्तोत्तरकालीन समाज की महत्वपूर्ण विषेषताओं का अपने साथी पाठकों के साथ चर्चा कर सकेंगे।
- गुप्तोत्तरकालीन धर्म की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे।
- षिक्षा के केन्द्र के रूप में गुप्तोत्तरकालीन मंदिर का जीवन के विविध क्षेत्रों में योगदान पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला की समीक्षा कर सकेंगे।

10.2. परिचय (Introduction) :– प्राचीन भारत के इतिहास में मगध साम्राज्य के अंतर्गत व्यापक स्तर पर राजनीतिक एकीकरण का जो प्रयास चन्द्रगुप्त मौर्य एवं अ"ोक के द्वारा सफलतापूर्वक किया गया वह मौर्य वंश के बाद के दे"ी व विदे"ी शासकों में देखने को नहीं मिलता है। मौर्योत्तरकालीन विदेशी शासकों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कुषाण व"ा के शासक खास्कर कनिष्क का काल भी यद्यपि वाणिज्य–व्यापार, शिक्षा, कला, साहित्य व सांस्कृतिक विकास की दृष्टिकोण से उन्नति का काल रहा। परन्तु ये भी क्षेत्र विशेष में ही सिमट कर रह गये थे। कुषाण वंश के सांमत के रूप में रहे गुप्त काल के शासकों में से चन्द्रगुप्त प्रथम ने स्वतंत्र रूप से गुप्त वंश की स्थापना करके एक बार फिर से भारत में सत्ता के एकीकरण का प्रयास किया। इस एकीकरण में समुद्रगुप्त की महत्त्वपूर्ण भूमिका

रही जिसे आगे चलकर प्रसिद्ध गुप्तवंशीय शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय ने मजबूत आधार प्रदान किया। मौर्य वंश के बाद राजनीतिक एकीकरण देने वाले इस शक्तिशाली गुप्त साम्राज्य का लगभग 550 ई. में पूर्णरूपेण अस्तित्व मिट गया। गुप्त काल के बाद फिर से एक बार राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो गई। गुप्तोत्तरकालीन इतिहास में एकमात्र अंतिम शासक पुष्यभूति वंश का हर्षवर्धन ने उत्तर भारत की राजनीतिक स्थिति को स्थिरता प्रदान करने का प्रयास किया। इस प्रकार गुप्तकाल के समाप्त हो जाने के बाद भारतीय राजनीति में पुनः विकेंद्रीकरण एवं क्षेत्रीयता की प्रवृत्तियां तेज हुई। अनेक स्थानीय सांमतों एवं शासको ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा करके क्षेत्रीय स्तर पर सत्ता की स्थापना करने लगे। यद्यपि इनमें कुछ शक्तिशाली शासक भी सामने आये लेकिन ये अखिल भारतीय स्तर पर स्थिरता प्रदान करने के बजाय सदैव अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये संघर्षरत रहे। इस तरह उत्तर से लेकर दक्षिण तक भारत के हर भाग में क्षेत्रीय स्तर पर छोटे–बड़े राज्य का आविर्भाव हो रहा था। दूसरी तरफ भारत में अरब के मुहम्मद कासिम के आक्रमण से इस्लाम धर्म का प्रवेश गुप्तोत्तरकालीन भारत की एक अन्य महत्वपूर्ण गतिविधि थी। दक्षिण भारत में 550 ई. के मध्य से लेकर 9 वीं शताब्दी तक चालुक्यों एवं पल्लवों तथा पल्लवों के अवशेषों पर स्थापित चोलों (9वीं से 12वीं शताब्दी तक) के काल में गुप्तोत्तरकालीन महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिर्वतन देखने को मिलते हैं।

इन वंशों के शासकों ने दक्षिण भारत में स्थापत्य कला के क्षेत्र में उत्कृष्ट नमूनों का प्रदर्शन किया जो मंदिरों के रूप में आज भी मौजूद हैं। दक्षिण भारत में मंदिरों ने सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ये मंदिर शिक्षा के केन्द्र के रूप में कार्य करते थे।

गुप्तोत्तरकाल में हर्ष की मृत्यु के उपरांत जिन महान शक्तियों का उदय हुआ उनमें अधिकांश राजपूत वर्ग के अन्तर्गत ही आते थे। इसीलिए 7 वीं से 12 वीं शताब्दी के उत्तर भारत के इतिहास को राजपूत काल के नाम से जाना जाता है। इन राजपूत वंशों में गुर्जर– प्रतिहार, राष्ट्रकूट, चालुक्य, चौहान, चंदेल, परमार, गहड़वाल आदि आते हैं। इन शासकों का अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए आपसी संघर्ष हुआ तथा इन्होंने मुस्लिम आक्रमणकारियों का भी सामना किया। इन्होंने अपने–अपने क्षेत्र में कला–संस्कृति व साहित्य के विकास में भी योगदान दिया। इन सबका प्रभाव सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में भी पड़ा।

गुप्तोत्तर काल में 800–1200 ई. के मध्य कश्मीर में क्षेत्रीय शासक के रूप में हिन्दूशाही राजवंशों ने राज किया। इनके विषय में हमें कल्हन के राजतरंगिणी से जानकारी मिलती है। कश्मीर में क्षेत्रीय शासक के रूप में इन्होंने महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन किये।

इस प्रकार गुप्तोत्तरकालीन भारत के सामाजिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन वर्ण व्यवस्था के निर्दिष्ट नियमों का टूट जाना तथा कायस्थों का एक जाति के रूप में आविर्भाव था। कायस्थ राज व्यवस्था के अन्तर्गत दस्तावेजों

को सुरक्षित रखने का कार्य करते थे। आर्थिक क्षेत्र में सामन्तवादी व्यवस्था के प्रचलन के फलस्वरूप अनेक सांमतीय ओहदों का सृजन भारी परिवर्तन लाया। इनसे सामंतो के अलग–अलग श्रेणियों का जन्म हुआ। इसने समाज में अलग–अलग वर्गो को जन्म दिया। गुप्तोत्तर काल में एक तरफ जहां प्रचलित धर्मो के स्वरूप में परिवर्तन आया वहां दूसरी और नवीन सम्प्रदायों का अभ्युदय हुआ। गुप्तोत्तर काल में भाषा तथा साहित्य के विकास के अंतर्गत संस्कृत भाषा के अतिरिक्त कुछ अन्य क्षेत्रीय स्तर की भाषायें भी विकसित हुई। गुप्तोत्तरकालीन भारतीय स्थापत्य कला की मुख्य कृतियां मंदिर हैं। मंदिर निर्माण की सर्वथा नवीन शैली का विकास क्षेत्र–विशेष के आधार पर इस काल में हुआ।

10.3.1. गुप्तोत्तरकालीन समाज : अवधारणात्मक समझ (Post Gupta Period Society : Conceptual Understanding) :-

गुप्तोत्तरकाल में आर्थिक व्यवस्था के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर सामन्तवादी व्यवस्था के प्रचलन के फलस्वरूप सर्वथा नवीन सामाजिक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इस काल में भूमि दान जोरों पर था। यह भूमि दान धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष दोनों वर्ग के लोगों को किया जाता था। यद्यपि भूमि दान का यह सिलसिला मौर्य के बाद सत्ता में आये सातवाहन वंश के शासकों ने आरंभ किया था तथापि उस समय इसका स्वरूप बहुत ही सीमित था। लेकिन गुप्तोत्तर काल में इसका स्वरूप बहुत व्यापक हो गया। भूमि दान ने जमीन पर अधिकार को लेकर सामंतवाद की प्रथा को जन्म दिया। भूमि के असमान वितरण की समस्या उत्पन्न हुई। सैनिक शक्ति के अंतर्गत पदो ंके हौड़ को लेकर भूमि पर अपने अधिकार बनाये रखने को लेकर अनेक सामंतीय ओहदों का जन्म हुआ। सांमतीय ओहदें पाने के लिए लोग परंपरागत वर्ण नियमों को तोड़ने लगे। पदों व भूमि पर अधिकार के हिसाब से सामंतों की अलग–अलग श्रेणियां बनने लगे। ऐसे सामंतों की नौ श्रेणियों का वर्णन हमें भट्टभुवनदेवकृत अपराजितपृच्छा से मिलती है। इन सामंतों के सामाजिक श्रेष्ठता के अनुसार इनका निवास स्थान भी भिन्न–भिन्न आकार–प्रकार के होते थे। सांमतीय ओहदें पाने का यह हौड केवल क्षत्रिय वर्ग तक ही सीमित नहीं था। राज्य से संबंधित और भी कई वर्गो के लोग पंरपरागत वर्ण–व्यवस्था से हटकर इसमें शामिल थे। भूमि के दान और विभाजन ने गुप्तोत्तरकालीन समाज में सर्वथा एक नवीन और शिक्षित वर्ग कायस्थ को जन्म दिया। यद्यपि यह गुप्त काल में भी था तथापि गुप्त काल के बाद ही इतने बडे रूप में कायस्थ उभकर आये।

इस काल में परंपरागत वर्ण व्यस्था के भेद टूट जाने से हर वर्ग के लोग किसी भी व्यवसाय में आने लगे। इससे कृषकों का शुद्रों के रूप में परिवर्तन तथा वैश्यों के स्तर में शुद्र स्तर तक की गिरावट से वर्ण व्यवस्था में भारी परिवर्तन हुआ।

बंगाल एवं दक्षिण भारत में नवीन ब्राह्मणीय व्यवस्था के अंतर्गत मुख्य रूप से केवल ब्राह्मणों एवं शुद्रों का प्रावधान किया गया था।

गुप्तोत्तर काल का सर्वाधिक आश्चर्यकारी बदलाव जातियों एवं प्रजातियों में मनमाना वृद्धि थी, जिसने परंपरागत चारों वर्णो – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वै"य और शूद्रों सभी को प्रभावित किया। सामंतीय व्यवस्था के अंतर्गत भूमिदान के माध्यम से कबायली लोगों को ब्राह्मणीय व्यवस्था में शामिल किया जा रहा था। इसने सर्वथा नवीन सामाजिक परिर्वतन को जन्म दिया जो पहले कभी देखने को नहीं मिला था। वर्ण व्यवस्था के निर्दिष्ट कर्म या व्यवस्था का बंधन शिथिल हो गया। इससे समाज में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ।

10.3.2. गुप्तोत्तरकालीन समाज : मुख्य बिन्दु एवं इनकी विशेषताएँ / गुप्तोत्तरकालीन सामाजिक स्थिति (Post Gupta Period : Main Point and its Characteristics/Post Gupta Period Social-Condition) :-

(i) वर्ण व्यवस्था (Varna System) :- अभिलेखों तथा साहित्यिक ग्रंथों के अनुसार परंपरागत वर्ण–व्यवस्था के अंतर्गत समाज चार वर्णो – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वै"य और शूद्र में बंटा था। परंपरागत चार वर्णों के अतिरिक्त इस काल में कई जातियां एवं प्रजातियां अस्तित्व में आई। परंपरागत चार वर्णो के अंतर्गत भी अनेक जातियां बन गये तथा अनेक जातियां भी इनमें शामिल कर लिये गये। धार्मिक ग्रंथों एवं विदेशी यात्रियों ह्वेनसांग, अलमसूदी, अलबरूनी आदि के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोच्च था। विशेषाधिकार प्राप्त ब्राह्मणों को किसी भी अपराध के लिए मृत्युदंड नहीं दिया जा सकता था। दण्ड के रूप में देश निकाला अथवा विशेष प्रकार के चिन्हों से दागने का प्रावधान था। मेधातिथि के अनुसार विद्वान एवं अच्छे चरित्र के ब्राह्मण को जुर्माने तथा शारीरिक दण्ड से मुक्त किया जा सकता था। बुद्धचरित, मत्स्य पुराण एवं विश्वरूप में वर्णन के अनुसार दुष्ट प्रवृत्ति के ब्राह्मण एवं युद्धरत ब्राह्मण का वध करने से कोई भी पाप का भागीदार नहीं होता था।

गुप्तोत्तर काल में ब्राह्मणों का मुख्य कार्य अध्ययन–अध्यापन यज्ञ करना और यज्ञ करवाना (अर्थात यजन–याजन), दान ग्रहण करना आदि होता था। वेद–वेदांग तथा अन्य शास्त्रों में पांरगत तथा शास्त्रोक्त आचरण करने वाले ब्राह्मण श्रोत्रिय, आचार्य तथा उपाध्याय कहे जाते थे। स्मृतिकार पाराशर के अनुसार ब्राह्मण सामान्य व्यवसाय के रूप में कृषि को बदलती हुयी परिस्थितियों के अनुसार अपना सकते थे। सवर्त स्मृति के अनुसार ब्राह्मणों को हल एवं बैल दान में मिलने चाहिए। यद्यपि स्मृतिकार पाराशर ब्राह्मणों द्वारा कृषि व्यवसाय अपनाने की स्थिति में दूसरों से कृषि कार्य करवाने की बात करते हैं तथापि मध्यदेश, प्राच्च एवं कुछ और जगहों पर ब्राह्मण खुद अपने हाथ से खेती करता था। चीनी यात्री

ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार टक्क देश के ब्राह्मण स्वयं कृषि कार्य करते थे। कृषि कार्य के अलावा आपातकाल में स्मृतिकारों ने ब्राह्मणों को व्यापार से भी आजीविका चलाने की अनुमति दी है। प्रतिहारों के समय के पेहोवा अभिलेख में घोड़ों के व्यापारी के रूप में ब्राह्मण का उल्लेख मिलता है।

प्राचीन क्षत्रियों के स्थान को ग्रहण करने वाले राजपूतों की उत्पत्ति गुप्तोत्तर काल की एक महत्वपूर्ण घटना के रूप में माना जाता है। इस काल में राजपुत्र तथा राजपूत शब्द युद्धप्रिय लड़ाकू जाति तथा सामंत वर्ग के लिए प्रयुक्त होता था। इस समय राजपूतों के अनेक राजवंशों का उदय हुआ। 700–1200 ई. के मध्य राजपूतों की लगभग 36 जातियां प्रकाश में आई जिनमें मुख्य थी – प्रतिहार, चौहान, चालुक्य, परमार, गहडवाल, चंदेल, कछवाहा मेद आदि। इस काल में परंपरागत वर्ण व्यवस्था से हटकर कुछ गैर क्षत्रिय शासकों का भी विवरण मिलता है। ह्वेनसांग ने कामरूप में ब्राह्मण शासक मनिपुर एवं सिंध में शुद्र शासक के होने की बात कही है। दक्षिण में शासन कार्य चलाने वाले नायक एवं रेड्डी अपने आपको शूद्र शासक के रूप में मानते थे। मेधातिथि के विवरण के अनुसार राज्य का स्वामी होने की स्थिति में गैर क्षत्रिय क लिए भी राजा शब्द का प्रयोग किया जा सकता था। राजकाज से अलग कृषि व व्यापार द्वारा भी क्षत्रिय आजीविका चला सकते थे। इब्न खुर्दादब ने सवूकफूरिया तथा कतरिया नाम के दो क्षत्रिय वर्गो का वर्णन किया है। अल्तेकर ने अपने विवरण में सवूकफूरिया को सत् क्षत्रिय बतलाया है और इनका संबंध राजवंश तथा सामंत वर्ग और योद्धा क्षत्रिय वर्ग से जोड़ा है। जबकि कतरिया को साधारण क्षत्रिय बताते हुए इनका संबंध कृषि, व्यापार आदि व्यवसायों से आजीविका चलाने वालों में रखा। अलबरूनी के विवरण से हमें पता चलता है कि राजपूत क्षत्रिय ब्राह्मण के समान मान्यता रखते थे किन्तु खेतिहर क्षत्रिय को वैश्य का दर्जा प्राप्त था और इन्हे शूद्रों की भांति वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। इनके धार्मिक कृत्य भी ब्राह्मण व क्षत्रिय से इतर पुराण पर आधारित था।

धर्मशास्त्रों की मान्यता के अनुसार वैश्य वर्ण के लोगों का मुख्य पेशा व्यापार, कृषि, पशुपालन आदि होता था। पाराशर स्मृति के विवरण के अनुसार वैश्य 'कुसीद वृति' अर्थात् ब्याज पर रूपया उधार देने का कार्य भी करते थे। गुप्तोत्तर काल में बौद्ध, जैन एवं वैष्णव धर्म में प्रतिपादित अंहिसा सिद्धान्त के प्रभाव में आकर कृषि व पशुपालन को छोड़कर वैश्यों ने अधिकांशतः व्यापार को ही अपना पेशा बनाया। इससे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई तथा आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। इस काल के उपलब्ध अभिलेखों से पता चलता है कि बंगाल, बिहार, गुजरात और मालवा में आर्थिक समृद्धि व प्रभावशाली सामाजिक स्थिति को प्राप्त वैश्य वर्ग के लोग राजनीतिक पदो ंके लिए स्पर्द्धा करते थे। वैश्य कई गांवों के कर राजा को अदा करते थे जिससे गांवों की प्रजा उन्हें अपना स्वामी मानने लगी। इससे वैश्यों का टकराव शासन वर्ग के साथ बढ़ा। फलतः दण्ड स्वरूप इन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया गया।

इसके बावजूद कई समृद्ध व्यापारी राज्य में मंत्रीपद व सांमत के ओहदे प्राप्त करने में सफल हुए। वैश्यों की इतनी अच्छी स्थिति प्राप्त करने के बावजूद भी अलबरूनी के विवरण से हमें पता चलता है कि वैश्यों की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। ये विवरण वैश्यों और शूद्रों के सामाजिक स्तर में कोई भेद नहीं बताते हैं। दोनों को वेद के पाठ–श्रवण से वंचित रखा गया था। इसके उल्लंघन की स्थिति में जीभ काटने तक के कठोर दण्ड का प्रावधान था।

इस काल में स्मृतियौं के विवरण के अनुसार शूद्र सेवावृति के अलावा कृषि, पशुपालन, वाणिज्य एवं शिल्प जैसे व्यवसायों को अपना सकते थे। अत्रि, देवल एवं पाराशर ने भी इसका स्पष्ट उल्लेख किया है। ह्वेनसांग एवं इब्न खुर्दादव के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि गुप्तोत्तर काल में कृषि शूद्रों के व्यवसाय के अन्तर्गत पूर्ण रूप से आ गयी थी। व्यास, पाराशर एवं वैजयंती में 'कुटम्बी' एवं कीनाश' जैसे कृषक वर्ग का उल्लेख मिलता है। इनमें कुटुंबी कृषक शूद्र वर्ग से संबंधित थे तथा कीनाश कृषक वैश्य वर्ग से संबंधित होते थे। पर 8वीं शताब्दी के नारद स्मृति के टीकाकार असहाय ने कीनाशों को शुद्ध कृषक वर्ग के अंतर्गत रखा है। कुटुंबी किसान के पास अपनी निजी भूमि होती थी जिस पर वे राजा को कर दिया करते थे। बटाई पर खेती करने वाले कृषकों को इस काल में 'त्रयधसीरिन' या 'सीरिन' कहा जाता था। असहाय के विवरण से पता चलता है कि शूद्र आपातकाल में क्षत्रियों क कर्म को अपना सकते थे। इस काल में दासों की स्थिति बदलकर कृषिदास की हो गई थी। हर्षचरित में आदिवासी कृषक का उल्लेख मिलता है जिन्हें शूद्र वर्ण में रखने का उल्लेख मिलता है। पाराशर स्मृति (600 से 900 ई.) में पहली बार फसल बटाई करले वाले आर्धीक जाति का उल्लेख मिलता है। गुप्तोत्तर काल में शूद्र के दो वर्ग सत् और असत् में बंटे होने का उल्लेख मिलता है। सत् वर्ग के शूद्र पौराणिक विधि के अनुसार संस्कार एवं पंचमहायज्ञ का पालन कर सकते थे पर असत् को इससे वंचित कर दिया गया था। शूद्र तांत्रिक पूजा को अपना सकते थे। वेदाध्ययन तथा वैदिक यज्ञ के संबंध में शूद्रों पर प्रतिबंध पूर्ववत् बने रहे किंतु विष्णु और शिव का नाम स्मरण, तीर्थयात्रा, दान जैसे कर्म शूद्रों के लिए स्वर्ग प्राप्ति एवं मोक्ष के सुलभ साधन उपलब्ध कराये गये।

(ii) कायस्थ (Kayastha) :- गुप्तोत्तर काल में एक जाति के रूप में कायस्थों की उत्पत्ति महत्वपूर्ण सामाजिक घटना मानी जाती है। सर्वप्रथम कायस्थों का उल्लेख याज्ञवल्क्य स्मृति में मिलता है जब कि जाति के रूप में कायस्थों का उल्लेख सबसे पहले ओशनम्स्मृति में मिलता है। याज्ञवल्क्य स्म ृति के विवरण के अनुसार राजा का यह दायित्व बताया गया है कि वह शोषित प्रजा की खासकर कायस्थों से रक्षा करे। राज्य के अंतर्गत कायस्थ गणक व लेखक के रूप में राजस्व संबंधी दस्तावेज तथा हिसाब–किताब रखने का प्रमुख कार्य करते थे। इस पद का अनुचित लाभ उठाकर वे प्रजा पर अत्याचार

करते थे। कालांतर में भू–राजस्व व्यवस्था , भूमि दान, भूमि के क्रय–विक्रय, भूमिसीमा– निर्धारण संबंधी दस्तावेज के कार्यो आदि में वृद्धि होने के कारण इनके करों व राजस्व संबंधी हिसाब किताब के कार्य निपटाने के लिए कायस्थों के महत्व बढ़े एवं इनकी संख्या में वृद्धि हुई। न्यायालयों में न्याय के निर्णय को लिखने का कार्य करने वाले करणिक भी जाति से कायस्थ ही होते थे।

इन्हे कायस्थ, करणिक, पुस्तपाल, अक्ष पाटलिक, दीविर, लेखक आदि कहा जाता था। अंतिम रूप से ये सभी अपने मूल वर्णो से संबंध तोड़कर एक नया वर्ग बना लिया और एक कायस्थ जाति के रूप में सिमट गये थे। कुछ ब्राह्मण ग्रंथों में इन्हें शूद्र भी कहा गया है। बाद में कायस्थ स्थान व क्षेत्र के आधार पर उपजातियों में बंट गये जिनमें बंगाल के गौड़ कायस्थ, बल्लभीय कायस्थ, माथुर, श्रीवास्तव निगम आदि का उल्लेख मिलता है। कालांतर में कायस्थों ने केवल दस्तावेज रखने वाले कार्य तक ही अपने आपको सीमित नहीं रखा बल्कि राज्य के अंतर्गत मंत्री, सेनापति, कोषाधिकारी आदि पद को प्राप्त करके समाज में अपनी स्थिति ऊँचा बनाया। फलतः ये ब्राह्मणों के कोपभाजन बने।

(iii) **अस्पृश्यता (Untouchability)** :- गुप्तोत्तर काल में रूढ़िवादी भारतीय समाज में अस्पृश्यता की भावना बहुत अधिक बढ़ गई थी। इस काल में अस्पृश्यों के अन्तर्गत चाण्डालों के अतिरिक्त स्मृति में कुछ अन्य जातियों जैसे –रजक (धोबी), चर्मकार, नट, वरूड़ (चटाई, टोकरी आदि बनाने वाले), कैवर्त्त, धीवर भेद (आदिवासी जाति), भिल्ल आदि का उल्लेख मिलता है। व्यास स्मृति में अंत्यजों के अंतर्गत कोली, पुष्कर एवं वराट जाति को रखा गया था। अस्पृश्य जातियों की संख्या में हुई वृद्धि से स्पष्ट हो जाता है कि गुप्तोत्तर काल में अस्पृश्यता की भावना अपने चरमोत्कर्ष पर थी। अस्पृश्यता संबंधी विचार इतने कट्टर थे कि स्पर्श दोष निवारण के लिए शुद्धि–क्रियाएं करनी पड़ती थी। ब्रह्मपुराण के विवरण के अनुसार बौद्ध, पाशुपत, जैन, लोकायत और कापालिकों को स्पर्श करना भी दोष माना जाता था तथा इसके शुद्धि के लिए व्यक्ति को सवस्त्र स्नान करना पड़ता था। विशेष आपातकालीन स्थिति में अस्पृश्यता संबंधी कट्टरतापन को उदार रूप भी दिया गया था। जैसे गाय दुहते समय, देवयात्रा, विवाह, यज्ञोत्सव के समय, देश पर आक्रमण, घर में आग लग जाने की स्थिति में।

(iv) **स्त्रियों की स्थिति (Status of women)** :- पूर्व की तुलना में इस काल में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आ गई थी। वात्स्यायन कृत कामसूत्र तथा मध्यकालीन साहित्य के विवरण से पता चलता है कि उच्च वर्ण की स्त्रियां तथा समृद्ध वैश्य परिवारों की स्त्रियां ही शिक्षित होती थी। इस समय इन्द्रलेखा, मोरिक, पद्यश्री, मदालसा एवं सुभद्रा जैसी संस्कृत की विदुषी कवयित्रियों का उल्लेख मिलता है। इस युग के समाज में व्याप्त सती एवं जौहर प्रथा, पुत्री बाल हत्या, बहुपति विवाह, देवदासी एवं वेश्यावृति जैसी

कुप्रथाओं ने निःसन्देह स्त्रियों की स्थिति को कमजोर किया। गुप्त काल में विवाह की आयु 16–17 वर्ष थी। इसकी तुलना में गुप्तोत्तर काल के स्मृति तथा निबंध ग्रंथों में स्त्री के विवाह की उम्र 8 से 10 वर्ष बताई गई है। इससे बाल–विवाह को प्रोत्साहन मिला । इस काल में 8 वर्ष की लड़की को 'गोरी' तथा 10 वर्ष की लड़की को 'कन्या' संज्ञा से संबोधित करते थे। अधिकतम कन्यावस्था तक लड़की के विवाह को उचित माना जाता था। वैसे 8 वर्ष की अवस्था में विवाह को आदर्श विवाह मानते थे। मेधातिथि के विवरण के अनुसार पुनर्विवाह या विधवा विवाह समाज में मान्य नहीं था। अग्निपुराण, नारद तथा पाराशर स्मृति इसकी अनुमति उन स्थितियों में देते थे जबकि पति लापता हो या मृत्यु हो गई हो या फिर संन्यासी हो गया हो। उस समय के रूढ़िवादी समाज में व्याप्त वैधव्य जीवन की कठोरता से विधवा स्त्रियां कष्टों से मुक्ति पाने के लिए सती हो जाना अच्छा समझती थीं। इस कारण पूर्वकाल में जहां सती प्रथा के कुछ उदाहरण मिलते है वहां इस काल में सती प्रथा अत्यधिक प्रचलित हो गई।

(v) **अंतर्जातीय विवाह (Interracial marriage)** :- गुप्तोत्तर काल में परंपरागत समाज में विवाह एवं खान–पान के नियम अत्यधिक कठोर थे। रक्तशुद्धि की भावना उच्च जातियों में अत्यधिक प्रबल थी। क्षत्रियों में बाह्य तथा आदिवासी जातियों के समावेश के खतरे के कारण इसे और अधिक कठोर बना दिया गया। औशनम् तथा व्यास स्मृतियों, पूर्व मध्यकालीन अभिलेखों तथा अलबरूनी के विवरण से पता चलता है कि समाज में अंतर्जातीय विवाह को हतोत्साहित करने के लिए यह नियम बना दिया गया था कि अनुलोम अंतर्जातीय विवाह से उत्पन्न संतान की जाति माता पर आधारित होगी, पिता पर नहीं।

(vi) **दास–प्रथा (Slavery-System)** :- पूर्व मध्यकालीन भारत में (गुप्तोत्तर काल में) दास प्रथा का क्षेत्र राजा, सामंत और गृहस्थ से बढ़कर बौद्ध मठों, वैष्णव, शैव और शाक्त मंदिरों तक जा पहुंचा। इसीलिए इस काल में दासों की संख्या में वृद्धि हुई। विज्ञानेश्वर ने मीताक्षरा में नारद द्वारा बताये गये 15 प्रकार के दासों का वर्णन किया है। जैन ग्रन्थ समराइच्छकहा तथा प्रबंधचिन्तामणि और इस काल के लेखपद्धति के विवरण से पता चलता हे कि दासों का क्रय–विक्रय तथा निर्यात किया जाता था। लेख पद्धति में स्पष्ट विवरण है कि पश्चिमी देशों से वस्तुओं के आयात के बदले समुद्र मार्ग से दासों का निर्यात किया जाता था। इस युग में दास–दासियों को दान में भी दिया जाता था। इस समय दास को घरेलु कार्यों के अतिरिक्त कृषि कर्म में भी लगाया जाता था। मठों और मंदिरों में दास अन्दर के कार्यों के साथ–साथ बड़ी संख्या में कृषिकार्य के लिए उपयोग में लाए जाते थे।

मनु पर मेधातिथि की टीका तथा लेखपद्धति के विवरण से पता चलता है कि ऋण नहीं चुका पाने की स्थिति में बहुत से लोग अपने आपको दास के रूप में बेच देते थे।

इस काल में दास प्रथा का सबसे विकृत और घिनोना रूप यह था कि समाज में दासों के जान–माल के अधिकारों की रक्षा के लिए कोई नियम नहीं थे। फलतः पूर्व काल की अपेक्षा इस काल में दासों की स्थिति में और अधिक गिरावट आई। इसके विपरीत यह नियम था कि स्वामी का दास के जीवन पर पूरा अधिकार था और दासता काल में यदि दास के साथ कुछ हादसा हो जाता है तो स्वामी न तो इसके लिए दोषी होगा और न ही उसे किसी प्रकार का दंड दिया जाएगा। इस काल में दास–दासी का स्वामी से मुक्त होने का कोई उपाय नहीं था। यह दास प्रथा के अत्यंत निम्न व घृणित रूप का सूचक है।

10.3.3. गुप्तोत्तरकालीन : आर्थिक दशा :–

(Post Gupta Period : Economic Conditions) :-

(1) कृषि (Agriculture) :- पूर्व की तरह गुप्तोत्तरकालीन भारत की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि ही थी। नीतिवाक्यामृत ग्रंथ के विवरण से हमें यह सूचना प्राप्त होती है कि उस काल में अनेक प्रकार के संग्रहों में धान्य संग्रह को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है। अभिधानरत्नमाला नामक ग्रंथ में तत्कालीन समय में बोये एवं उपजाये जाने वाले विभिन्न अनाजों का वर्णन मिलता है। इस काल के ग्रंथों से खेती की विकसित अवस्था का पता चलता है। उत्पादकता के हिसाब से भूमि का वर्गीकरण किया जाता था जिसक विवरण निम्न प्रकार से है –

वाहीत – भूमि, जिसमें बोया जाता हो।

अकृष्ट – जिसमें खेती न की गई हो।

ऊसर – जहाँ बीज न उगता हो।

खिल–परती – जिस भूमि को जोता नहीं जाता।

साक्त – व्यक्तिगत स्वामित्व वाली भूमि।

कृषिकार्य के लिए हल, फावड़ा, दरांती आदि उपकरणों का वर्णन मिलता है। अच्छी खेती के लिए गोबर का ऊर्जा के रूप में तथा हल में लोहे के फाल का प्रयोग करते थे। इस समय सिंचाई के मुख्य साधन के रूप में झील, नहर, तालाब, व रहट का प्रयोग किया जाता था। संस्कृत के ग्रंथो में रहट को अरघट्ट कहा गया है। चन्देल राजाओं द्वारा बनवाये गये जलाशय साहित्य सागर एवं कीरित सागर का उल्लेख मिलता है। भुंज सागर तथा भोज सागर नामक जलाशय परमार राजाओं द्वारा निर्मित कराये गये। इस काल की स्मृतियों में कृषि से आजीविका प्राप्त करने की अनुमति सभी वर्णों को दी गयी है किन्तु ह्वेनसांग, खुर्दादब और अल इद्रिसी के विवरण से स्पष्ट है कि खेती करना शूद्रों का ही व्यवसाय था।

गुप्तोत्तर काल में अधिकारियों, मंदिरों, ब्राह्मणों आदि को उनकी सेवाओं के बदले भू–क्षेत्र प्रदान करने के कारण अर्थव्यवस्था में सामंती प्रथा का प्रचलन जोरों पर था। इन भूमियों पर खेती शूद्र कृषकों द्वारा बंटाई पर होती थी।

इस काल के लेखकों ने इन कृषकों की तुलना यूरोप के कृषिदासों के रूप में की है। भूमि कर सिद्धान्त जमीन की उत्पादन क्षमता एवं वास्तविक उत्पादन के आधार पर 1/12 से लेकर 5/6 भाग तक निर्धारित होता था। करों का संग्रह गांव का मुखिया करता था। इस काल के प्रमुख कर ये थे –

भाग – उपज का हिस्सा (भूमिकर)

भोग – फल–फूल, लकड़ी आदि उपहारस्वरूप राजा को प्रदान करना।

हिरण्य – नकद रूप में वसूल किया जाने वाला अतिरिक्त कर।

प्रस्थ – अधिकारियों का हिस्सा।

उपरिकर – अस्थायी कृषकों पर लगने वाला कर।

भूमि मापन के लिये कुछ लोक प्रचलित मापक प्रयोग में लाये जाते थे जिन्हे कई अलग–अलग नामों से सूचित करते थे।

निर्वतन, पट्टिकल, पातक, खरिवाप, कूल्यवाप, द्रोणवाप, आढ़वाप, खंडूकवाप, नालिकवाप आदि।

इस काल में कृषि व्यवस्था के अंतर्गत साहूकारों, विचौलिओं, जागीरदारों, राज्य कर्मचारियों के कर व्यवस्था व दुर्भिक्ष आदि से उत्पन्न कृषक की दयनीय स्थिति और कई बार अत्याचार व उत्पीड़न के कारण कृषक द्वारा हल–बैल तथा अन्य उपकरण के साथ संतान बेचने को बाध्यता के कारण गाँव को छोड़कर भाग जाने का वर्णन मिलता है।

(2) व्यापार (Trade) :- आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कारण गुप्तोत्तर काल में व्यापार की स्थिति अच्छी नहीं थी। ग्रामीण स्तर पर ही लोग अपनी आवश्यकताओं की समस्त वस्तुओं का उत्पादन कर लेते थे और फिर जमींदारों के उत्पीड़न के कारण कृषकों की अतिरिक्त उत्पादन में कोई रूचि नहीं थी। अतः अतिरिक्त उत्पादन के अभाव में व्यापार को प्रोत्साहन नहीं मिल पा रहा था। किन्तु उस समय के उपलब्ध साहित्यिक तथा अभिलेखों के विवरण से पता चलता है कि देश के विभिन्न भागों में व्यापार होता रहता था। इस समय बंगाल मलमल, सुपाड़ी तथा सन के लिए, कलिंग अच्छे धान की किस्म के लिए मालवा गन्ना, अफीम एवं नील के लिए द्वारका शंख तथा सीपी के लिए गुजरात सूती कपड़े, नील एवं चमड़े द्वारा निर्मित वस्तुओं के लिए एवं दक्षिण भारत मोती, कीमती पत्थर, चंदन, लवंग, काली मिर्च, इलायची आदि के लिए प्रसिद्ध था।

गुप्तोत्तरकालीन भारत के समृद्ध तटों पर कई बंदरगाह थे। पश्चिमी भारत के समुद्र तटों पर देवल, खम्भात, थाना, सोपारा, भडोंच, सोमनाथ एवं पूर्वी भारत के समुद्र तटों पर ताम्रलिप्ति, सप्तग्राम, पुरी, कलिंग, शिकाकोस आदि महत्वपूर्ण बंदरगाह थे। मनुस्मृति के टीकाकार मेधातिथि, कुवलयमाला कथा सरित्सागर तथा समराइच्छकहा से पता चलता है कि व्यापारी पण्य वस्तुओं को एक नगर से दूसरे नगर में ले जाकर बेचते थे और बिक्री से प्राप्त धन से अपने नगर के लिए आवश्यक चीजों का क्रय करते थे। कुवलयमाला के विवरण से स्पष्ट होता हे कि उत्तरापथ से घोड़े खरीदे जाते थे। पेहोवा अभिलेख में देश के विभिन्न भागों से आने वाले घोड़ों के क्रय–विक्रय करने वालों की गोष्ठी का उल्लेख है।

इस समय व्यापार अनेक मार्गो से होता था। अलबरूनी द्वारा बताये गये 15 मार्गो में प्रमुख थे – कन्नौज से प्रयाग के रास्ते ताम्रलिप्ति, ताम्रलिप्ति से कलिंग के रास्ते कांची तक। दूसरा मार्ग कन्नौज से पानीपत, कटक एवं काबुल होते हुए गजनी तक जाता था। कन्नौज एक ऐसा व्यापारिक केन्द्र था जहां से अनेक दिशाओं के लिए रास्ते जाते थे। कन्नौज से ही एक मार्ग कामरूप, नेपाल तथा तिब्बत जाता था। कन्नौज से एक अन्य मार्ग राजोरी होते हुए बयाना तक जाता था।

उस समय के विद्वानों के विवरण से पता चलता है कि गुप्तोत्तर काल में व्यापार का ह्रास हुआ, जिसके कई कारण थे – चोर–डाकुओं के कारण मार्गो का असुरक्षित होना, सामंतवादी प्रवृति बढ़ने के कारण केन्द्रीय शक्ति का ह्रास तथा व्यापारियों के एक राज्य से दूसरे राज्य में आने–जाने पर अधिक चुंगी कर, व्यापारियों के जीवन की सुरक्षा आदि।

इस समय नदी मार्ग से होने वाला व्यापार स्थल मार्ग की अपेक्षा अधिक सुरक्षित समझा जाता था। नदी मार्ग से व्यापार करने पर 'तर शुल्क' देना पड़ता था और इस शुल्क को वसूल करने वाले को तारिक कहा जाता था।

(3) विदेशी व्यापार (Foreign Trade) :- गुप्तोत्तर काल में व्यापार पश्चिमी तथा पूर्वी देशों में स्थल एवं जल दोनों मार्गों से होता था। स्थल मार्ग द्वारा तिब्बत के रास्ते भारत का चीन से व्यापार होता था। इसी समय अफगानिस्तान एक बड़े व्यापारिक केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध था। इस समय अरबों के आक्रमण के कारण भारत का पश्चिमी एशिया के साथ होने वाला व्यापार प्रभावित हुआ। अरब सागर से होने वाले व्यापार पर अरबों ने अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया था। 8 वीं शताब्दी से उत्तरी पश्चिमी दरों से होकर मध्य एशिया तथा चीन के साथ क्रमशः कम हो रहा था। मार्ग की कठिनाइयों के अतिरिक्त सुरक्षा का अभाव था क्योंकि अरब तिब्बत और चीन में मध्य एशिया पर प्रभुत्व के लिए संघर्ष चल रहा था।

9वीं–10 वीं शताब्दी तक चीनियों का प्रभुत्व भी समुद्री व्यापार में बढ़ रहा था। इनकी जहाजें बडी होती थी। 11 वीं शताब्दी में चीनियों द्वारा कुतुबनुमा की खोज कर लेने के बाद इन्हे समुद्री व्यापार में बड़ी सुविधा होने लगी। अल मूसरी ने पूर्वी समुद्री रास्ते से कान–फू (कैंस) के मध्य व्यापार होने की बात कही है। इस प्रकार पूर्व मध्यकाल के प्रथम चरण में पि"चम एि"ाया से अवनति को प्राप्त भारत का व्यापार 10 वीं शताब्दी के बाद पि"चमी दे"ाों से बढ़ा। भारत के व्यापारी बसरा, सिराज, अदन तक जाते थे। फारस की खाड़ी में स्थित कि"ा एवं होर्मुज स्थान को भारतीय निर्यात की वस्तुओं का बड़ा केन्द्र माना जाता था। पूर्वी समुद्र तट पर स्थित ताम्रलिप्ति, जिसका स्थान कालान्तर में सप्तग्राम ने ले लिया। सबसे बड़ा बंदरगाह था। इस काल के ऐतिहासिक विवरण से पता चलता है कि चीन के साथ भारत का व्यापार अरबों और हिन्द एि"ाया के व्यापारियों की प्रतिद्वंद्विता के कारण कम हो रहा था किन्तु दक्षिण भारत के चोल सम्राट राजेन्द्र चोल की श्रीविजय, सुमात्रा तथा केद पर विजय के फलस्वरूप चीन के साथ व्यापार मार्ग खुल गया। अब दक्षिण भारत से निर्यात की गई वस्तुओं के बदले चीन से बड़ी मात्रा में सोना और चांदी भारत आता था। चीन से सोने और चाँदी की बडे पैमाने पर निकासी के कारण 1296 ई. में चीनी शासक को नियम बनाने पड़े।

इस समय भारत विदे"ाों को चंदन की लकड़ी, कपूर, लौंग, नारियल, नील, अंगूर, कस्तुरी, देवदार की लकड़ी, भोजपत्र, हाथी दांत, जानवर की खाल, चंवर, रे"ाम, के"ार, ऊनी कपड़े, इत्र आदि का निर्यात करता था। जबकि आयात की प्रमुख वस्तुएं थीं – अच्छी किस्म के घोड़े (मध्य एि"ाया एवं पि"चमी दे"ाों से), अच्छी शराब (बसरा से) चीन से रे"ाम (चीनां शुक), दक्षिण पूर्वी एि"ाया से कीमती रत्न, कम्बोडिया से अगरू की लकड़ी आदि।

(4) उद्योग (Industry) :- गुप्तोत्तरकालीन स्मृतियों में शूद्रों के लिए ि"ाल्प और उद्योग आव"यक व्यवसाय माने गए हैं। इस समय के महत्वपूर्ण उद्योग थे – सूत बुनाई, वस्त्र निर्माण, धातु निर्माण, हाथी दांत की बनी कलाकृतियां, मिट्टी एवं चमड़े के सामान का निर्माण आदि।

भारत का सबसे प्राचीन उद्योग–वस्त्र उद्योग इस समय उत्कृष्ट अवस्था में था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अनेक प्रकार के रे"ामी एवं सूती वस्त्रों का वर्णन किया है जो कौ"ाय तथा क्षौम के नाम से जाने जाते थे। क्षौम राण के रे"ाों से बना हुआ कपड़ा होता था। पौधों के रे"ाों से बना हुआ कपड़ा 'दुकूल' के नाम से जाना जाता था। बाणभट्ट ने अपनी रचना हर्षचरित में लालांतुज अं"ाुक एवं चीनां शुक जैसे अनेक प्रकार के वस्त्रों का उल्लेख किया है जो रे"ाम के धागों से बने होते थे। रे"ाम के वस्त्र इतने महीन होते थे जो आंख से दिखाई नहीं देते थे, केवल स्प"ार्ा से ही मालूम किए जा सकते थें अल इदरीसी के विवरण के अनुसार मुल्तान वस्त्र उद्योग का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था।

भारत के अलग–अलग क्षेत्रों में वस्त्र निर्माण की अलग–अलग कारीगरी थी। भडौच में निर्मित वस्त्र 'वरोज' के नाम से प्रसिद्ध थे। जबकि खंभात में बने वस्त्र खंबायात के नाम से जाने जाते थे। मध्य दे"ा 'चुनारी' वस्त्र की कला के लिए प्रसिद्ध था। ह्वेनसांग के अनुसार क"मीर सफेद लिनन नाम के वस्त्र के लिए जाना जाता था।

गुप्तोत्तर काल के भारतीय तथा विदे"ाी प्रमाण यह बताते है कि धातुओं की कलाकारी अर्थात् ि"ाल्प उद्योग सिर्फ पैतृक व्यवसाय क रूप में चलता रहा। इसमें कोई तरक्की उन्नति की बात नहीं थी इस काल में तांबे, कांसे व पीतल के बर्तन बनाए जाते थे। तांबा का उपयोग सिक्के बनाने और पूजा के बर्तन बनाने में किया जाता था। कांसा का उपयोग बर्तन बनाने के अतिरिक्त मूर्तियां बनाने में किया जाता था। चोल काल में कांस्य निर्मित नटराज ि"ाव की मूर्ति बहुत प्रसिद्ध थे जो आज भी हिन्दू समाज में बहुत प्रचलित है। ह्वेनसांग हर्षकालीन सोने की मूर्ति का उल्लेख करता है तो महमूद गजनवी के द्वारा सोमनाथ के मंदिर से सोने–चांदी की मूर्तिया लूटकर ले जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। हर्षचरित में हाथी दांत निर्मित शालभंजिकाओं का उल्लेख है। कुछ चीनी वृतांत यह बताते है कि बंगाल से चीन को हाथी दांत भेजे जाते थे। इस प्रकार धातुओं व हाथी दांत की ि"ाल्पकारी उस काल में भी मौजूद थी।

(5) श्रणी संगठन (Division Orgarisation) :- एक ही व्यवसाय से जुड़े लोगों के संगठन को श्रेणी कहते थे। इसके मुखिया को महत्तक या माहर कहा जाता था। जातकों में श्रेणी के मुखिया को जेट्ठक या फिर प्रमुख कहा गया है। वणिकों की श्रेणी के मुख्य को श्रेष्ठि कहते थे। श्रेणी संगठन के कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने के लिये एक कार्य समिति होती थी, जिन्हे स्मृतियों में कार्यचिंतक कहा गया है।

श्रेणियेां द्वारा जमा की गयी स्थायी पूंजी को 'अक्षयनीवी' कहा जाता था। स्थायी पूँजी जमा करने की प्रथा की शुरूआत सातवाहनों ने की थी। सांमती अर्थव्यवस्था के प्रचलन में आ जाने से तथा मंदिर के स्थायी संस्था के रूप में श्रेणी संगठन से अधिक वि"वसनीय हो जाने के कारण पूर्व काल की अपेक्षा श्रेणियों का दे"ा की आर्थिक व्यवस्था में इतना महत्व नहीं रहा।

(6) मुद्रा (Coins) :- गुप्तोत्तर काल में सिक्कों का प्रयोग कम हो गया था। कुषाण एवं गुप्त काल की तुलना में इस युग में प्रचलित सिक्के बहुत कम वजन के होते थे। सिक्कों के प्रचलन में कमी का महत्वपूर्ण कारण था – सामंतीय व्यवस्था के अन्तर्गत कर्मचारियों का वेतन भुगतान मुद्रा में न कर भूमि के रूप में करना। अरब यात्रियों के विवरण से स्पष्ट होता है कि गुप्तोत्तर काल में आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार वस्तु–विनियम के माध्यम से किये जाते थे। चीनी यात्री फाहियान के

विवरण से हमें पता चलता है कि दैनिक लेन–देन एवं साधारण व्यापार में इस समय कौड़ियों का प्रयोग होता था। प्रतिहार अभिलेखों में इन कौड़ियों को 'कपर्दक' कहा गया है। भारत में इण्डो–ग्रीक शासकों ने सोने के सिक्के आरंभ किये। कुषाण काल में सर्वाधिक शुद्ध सोने के सिक्कों के प्रयोग का प्रमाण प्राप्त होता है। जबकि गुप्त काल में सर्वाधिक मात्रा में सोने के सिक्कों का प्रयोग हुआ इसके प्रमाण मिलते हैं। जबकि गुप्तोत्तर काल में सोने के सिक्के खासकर सोने के शुद्ध सिक्के तो बहुत ही कम मिले हैं। इस काल के पाल और सेन राजाओं में केवल देवपाल के 6 सोने के सिक्के मिले हैं और गुजरात के चालुक्यों में केवल जयसिंह सिद्धराज का एक सोने का सिक्का मिला है। अधिकां"ा राज्यों में जो थोड़े–बहुत सिक्के मिले भी हैं वे सिक्के चांदी या तांबे के हैं। अतः मुद्रा के कम उपयोग लगभग पूरे पूर्व मध्यकाल की वि"ोषता है।

10.3.4. गुप्तोत्तरकालीन सांस्कृतिक विकास : अवधारणात्मक समझ।

(Post Gupta Period cultural development : Conceptual understanding)

विकेन्द्रीकरण की प्रवृति व क्षेत्रीयता की भावना गुप्तोत्तरकालीन शासन–प्र"ासन की सर्वप्रमुख वि"ोषता रही है। इसका प्रभाव इस काल में हर क्षेत्र में दृष्टिगोचर होता है। सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से क्षेत्रीयता का प्रभाव और भी अधिक दिखाई पड़ता है। क्षेत्रीय सांस्कृतिक इकाइयों का आविर्भाव होने लगा। आंध्र, आसाम, बंगाल, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, उडीसा, तमिलनाडु आदि सभी स्पष्टता के साथ क्षेत्रीयता की भावना को बढ़ावा देते हुए स्वयं के वि"ाष्ट सांस्कृतिक शैली का वातावरण बना रहे थे। इन क्षेत्रों की एक भौगोलिक सीमा के अन्दर अपनी वि"ोषता के कारण जैन ग्रन्थ कुवलयमाला इन्हे अलग–अलग राष्ट्र के रूप में सूचित करता है। ऐसे 18 प्रमुख राष्ट्रों तथा 16 प्रकार के लोगों की नृवं"ाात्मक वि"ाष्टताओं का वर्णन हमें इस जैन ग्रन्थ से प्राप्त होता है।

भाषा और साहित्य की दृष्टि से भी हमें गुप्तोत्तर काल में क्षेत्रीयता की भावना चरम पर दिखाई पड़ता है। जटिल संस्कृत के स्थान पर अपभ्रं"ा भाषा के विकास के फलस्वरूप आद्य–हिन्दी, आद्य बंगाली, आद्य–राजस्थानी, आद्य–गुजराती, आद्य–मराठी आदि के रूप में भाषाओं का विकास हुआ। इस प्रकार क्षेत्रीय स्तर पर उत्पन्न इन भाषाओं के साहित्यिक रूप देने के लिए क्षेत्रीय लिपियों का विकास होने लगा। सातवाहन में भूमिदान की प्रथा के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ सामंती व्यवस्था का इस काल में और अधिक फैलाव हो गया। अधीनस्थ शासकों राज्य में अधीन कर्मचारियों से लेकर मठ व मंदिरों तक के गांव व भूमि दान देने की प्रथा गुप्तोत्तर काल में पूर्व की तुलना में और भी अधिक बढ़ी। इस प्रकार सांमती वि"ोषताओं का प्रभाव अर्थव्यवस्था से आगे निकलकर समाज में धार्मिक रीति–रिवाजों पर भी पड़ते हुए दिखाई पड़ता है। भू–दान तथा स्वामी भाव के उत्कर्ष से भक्ति तथा पूजा में नवीन परिवर्तन का

दृष्टिगोचर होना इस काल की प्रमुख वि"ोषता है। अब भक्ति तथा पूजा में तंत्र–मंत्र व जादू–टोना का प्रभाव बढ़ गया। इस युग के ि"ाक्षित ब्राह्मणों एवं उनके धनाढ्य ग्राहकों ने औपचारिक रूप देकर इसका पोषण किया और इसे अपने ही तरीके से तोड़–मरोड़कर लोगों को तन्त्र–मंत्र के प्रभाव में लाकर इसकों बढ़ाया। गुप्तोत्तरकालीन तांत्रिक पुरोहित, चिकित्सक या ज्योतिषी के रूप में काम करते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार इस काल में हमें तांत्रिक पूजा और उपासना का प्रभाव वैष्णव, शैव, बौद्ध आदि अनेक प्राचीन धर्मो में दृष्टिगोचर होता है।

सांस्कृतिक विकास के अन्तर्गत कला और स्थापत्य क्षेत्र में भी क्षेत्रीय शेलियों का विकास हमें इस काल में देखने को मिलता है। बंगाल, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु, उड़ीसा आदि सभी क्षेत्रों में कला और स्थापत्य की अपनी–अपनी वि"िाष्ट शैलियां दृष्टिगोचर होती हैं। गुप्तोत्तरकालीन मूर्तिकला में पद सोपान का प्रयोग सामंती मूल्यों के प्रभाव को द"र्ाता है । इस काल में विष्णु, ि"ाव, दुर्गा आदि सभी देवी–देवता छोटे–छोटे देवों पर स्वामित्व व्यक्त करते हुए प्रदर्"ित किए गए है।

10.4. विषय वस्तु का पुनः प्रस्तुतीकरण (Further Main body of the text) :-

तांत्रिक पूजा और उपासना की प्रबलता ने इस युग में प्रचलित सभी धर्मो के स्वरूप को बदलकर रख दिया। इससे कोई भी धर्म अछूता नहीं रहा। लगभग सभी धर्मो में नवीन सिद्धान्तों एवं धार्मिक क्रियाओं को अपनाया गया। खासकर ब्राह्मण और बौद्ध धर्म का नवीन दि"ा में विस्तार हुआ। इस प्रवाह में आने से जैन धर्म भी नहीं बच सका, यद्यपि इसमें परिवर्तन की गति धीमी रही। इस काल में तांत्रिक विचारों के प्रवाह ने ब्राह्मण धर्म के विभिन्न संप्रदायों में भी प्रवे"ा किया और उनके आधारभूत विचारों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। विभिन्न धार्मिक संप्रदायों ने एक दूसरे को प्रभावित किया। वैष्णव और शैव धर्म की तरह बौद्ध और जैन धर्मों में ई"वरवादी प्रवृतियां गुप्तोत्तर काल की धार्मिक परिवर्तन की महत्वपूर्ण वि"ोषता रही है। बुद्ध और जिन् को विष्णु का अवतार मानकर भक्तिमय गीतों के द्वारा उनकी मूर्तियों की पूजा मंदिर में होने लगी। हरिहर तथा बुद्धि"ाव की मूर्तियां इस काल में धर्म में समन्वयवादी प्रवृति के उदाहरण को प्रस्तुत करती है।

गुप्तोत्तरकालीन धर्म/संप्रदाय/मत/पूजा–पद्धति को निम्न रेखाचित्र के द्वारा दिखा सकते है :–

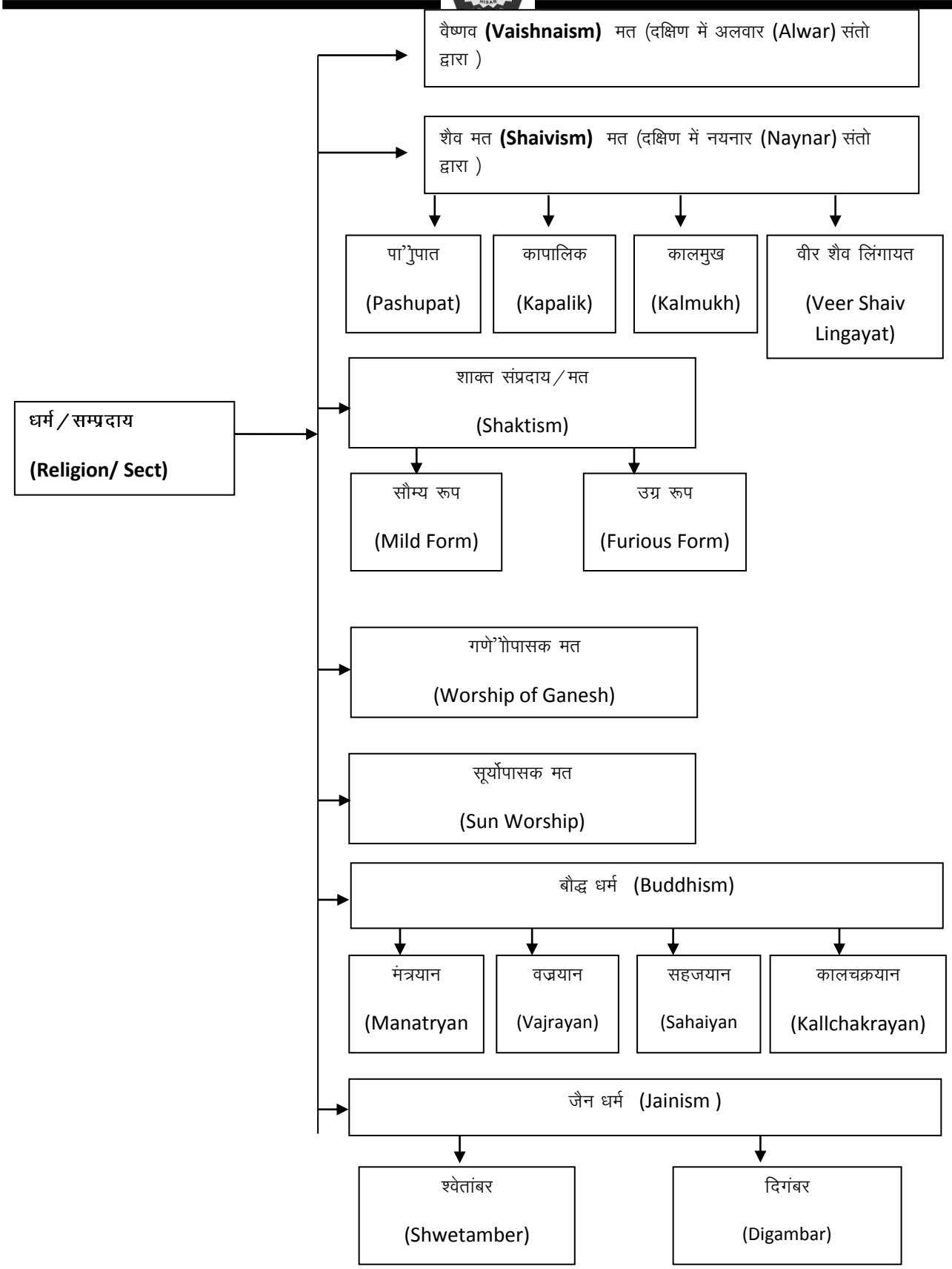
धर्म / सम्प्रदाय
(Religion/ Sect)
वैष्णव (Vaishnaism) मत (दक्षिण में अलवार (Alwar) संतो द्वारा)
शैव मत (Shaivism) मत (दक्षिण में नयनार (Naynar) संतो द्वारा)
पा'ुपात
(Pashupat)
कापालिक
(Kapalik)
कालमुख
(Kalmukh)
वीर शैव लिंगायत
(Veer Shaiv Lingayat)
शाक्त संप्रदाय / मत
(Shaktism)
सौम्य रूप
(Mild Form)
उग्र रूप
(Furious Form)
गणे'ोपासक मत
(Worship of Ganesh)
सूर्योपासक मत
(Sun Worship)
बौद्ध धर्म (Buddhism)
मंत्रयान
(Manatryan
वज्रयान
(Vajrayan)
सहजयान
(Sahaiyan
कालचक्रयान
(Kallchakrayan)
जैन धर्म (Jainism)
श्वेतांबर
(Shwetamber)
दिगंबर
(Digambar)

उपयुर्क्त रेखाचित्र के आधार पर गुप्तोत्तर काल में धर्म/संप्रदाय/मत अथवा पूजा–पद्धति व समाज में प्रचलित विभिन्न प्रकार की उपासना के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार है–

इस समय उत्तरी एवं दक्षिणी भारत में हिन्दू धर्म के अंतर्गत अवतारवाद एवं भक्ति मार्ग का व्यापक प्रचलन था। इससे पूर्व गुप्त काल में विष्णु के अवतारवाद के सिद्धान्त की स्थापना के द्वारा वैष्णव धर्म का विकास पूर्ण रूप से हो चुका था। विष्णु मुख्य देवता के रूप में स्थापित थे। इसके साथ ही ि"ाव का महत्वपूर्ण स्थान था। इस काल में भी हिन्दू देवताओं में विष्णु और ि"ाव सर्वाधिक महत्वपूर्ण बने रहे परन्तु इनके साथ सूर्य, गणे"ा, ब्रह्मा, इन्द्र, अग्नि, दुर्गा, लक्ष्मी व भगवती के अन्य नामों व रूपों की उपासना भी की जाती थी।

इस समय वैष्णव मत के समर्थक अलवारों एवं शैव मत के समर्थक नयनारों ने दक्षिण भारत के तमिल प्रदे"ा में विष्णु और ि"ाव की भक्ति के द्वारा क्रम"ाः वैष्णव एवं शैव मत के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । इन संतों ने वैदिक कर्मकांडों से परे सहज प्रेम भाव पर आधारित भक्ति लोगों को उनकी अपनी ही भाषा में सर्वसुलभ करवाया। जिससे इन दोनों मतों को वहां फलने–फूलने का पर्याप्त अवसर मिला। जनता का वि"वास प्राप्त करने के लिए शासकों ने दक्षिण भारत में इन दोनों मतों को अपनाया और खूब प्रश्रय दिया। 9 वीं और 10 वीं शताब्दी का अंतिम चरण अलवारों के धार्मिक पुनरूत्थान का उत्कर्ष काल रहा। इस भक्ति आंदोलन में तिरूमंगाई, पेरिय अलवार, स्त्री संत अंडाल तथा नाम्मलवार के नाम वि"ोष रूप से उल्लेखनीय है।

अलवार संतो ंके बाद में आचार्यो ने भक्ति की इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए वेद, उवनिषद् गीता तथा तमिल प्रबंधम् ग्रंथों के बीच सामंजस्य स्थापित किया। जिससे वैष्णव धर्म को और अधिक बढ़ावा मिला। इसके अतिरिक्त दक्षिण भारत में शंकराचार्य, कुमारिल भट्ट, रामानुजाचार्य एवं माधवाचार्य जैसे महान विद्वानों ने अपने द"ान शास्त्र के ज्ञान से हिन्दू धर्म एवं द"ान को एक नई दि"ा प्रदान की। वैष्णव मत के अन्तर्गत लगभग 12 वीं शताब्दी में अवतारों में वराह, कृष्ण एवं राम की लोकप्रियता अधिक थी। आदि वराह की मूर्तिया बादामी की गुहाओं, महाबलिपुरम गुजरात, राजस्थान, बंगाल, उड़ीसा एवं उत्तर प्रदे"ा से मिली है।

प्रतिहार नरे"ा भोज ने आदि वराह की उपाधिधारण की थी और इसी शैली के सिक्के भी जारी किए थे। इस समय एक आधुनिक श्री वैष्णव सम्प्रदाय का भी प्रचलन हुआ जिसके प्रथम आचार्य नाथमुनि थे।

दे"ाी–विदे"ाी विवरणों में जिसमें चीनी यात्री ह्वेनसांग तथा बाणभट्ट रचित हर्षचरित प्रमुख हैं से पता चलता है कि गुप्तोत्तरकाल में हिन्दू धर्म के अंतर्गत प्रचलित संप्रदायों में शैव मत सबसे अधिक प्रबल था। जनसाधारण के अतिरिक्त अनेक राजवं"ाों ने शैव धर्म को अपनाया और मंदिर बनवाए। गुप्तोत्तरकालीन शासकों में प्रतिहार, परमार, चंदेल, चेदि, कलचुरी सेन आदि ि"ाव के उपासक थे। पालसेन एवं चन्देल शासकों के अभिलेखों की शुरूआत **'ओम नमः शिवाय'** ि"ाव मंत्र से की गई है। परमार राजा भोज स्वयं शैव धर्म के अनुयायी थे। उनकी लिखी कृति 'तत्व

परीक्षा' शैव धर्म से सम्बन्धित है। परमार वं"ाीय राजा भोज ने उदयपुर में नीलकंठे"वर मंदिर बनवाया। इनकी राजधानी धारानगरी उज्जैन शैव धर्म का गढ़ था। शैव धर्म के अनेक मतों में लकुलौ"ा द्वारा प्रवर्तित अर्थात् शुरू किया गया पा"ुपत मत सबसे प्राचीन था।

इस मत के आचार्य भाव बृहस्पति को परमार नरे"ाों के यहां अत्यंत सम्मान मिलता था। पा"ुपत मत के मानने वाले लोग ि"ावलिंग की पूजा करते थे। ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार जलंधर, मालवा, महे"वरपुर इत्यादि राज्यों में पा"ुपत संप्रदाय प्रचलित था। इसी काल में नवीन तांत्रिक साधना पर आधारित शैवों का अतिमार्गी रूप – कापालिक व कालमुख भी अस्तित्व में आया। इनके धार्मिक कृत्यों में अनेक तांत्रिक क्रियाएं सम्मिलित थी। नरमुंडमाला पहनना, श्मसान के समीप निवास करना, मदिरापान, भक्ष्याभक्ष्य ग्रहण करना, चमत्कारिक शक्ति पैदा करना आदि मान्यताएं इनमें प्रचलित थीं। किन्तु वास्तव में ये विचार मनुष्य की बुद्धि और आत्मा की पथभ्रष्टता मतिभ्रम और नैतिक पतन के सूचक हैं।

दक्षिण भारत में वैष्णव अलवारों के समान शैव नयनारों ने सबको ि"ाव भक्ति बिना किसी भेदभाव के उपलब्ध कराये। नयनारों की संख्या 63 थी। ये ि"ाव की गीत गाते नाचते और लोगों को उनकी भाषा में ही उपदे"ा देते थे। बौद्ध एवं जैन धर्मो की स्पष्ट शब्दों में आलोचना करते थे।

नयनारों के प्रमुख संतों में – संत अप्पार, नान सबंदर तथा सुंदर मूर्ति का नाम सर्वप्रमुख है। इन संतो ंके प्रयासों से सारे दक्षिण में धार्मिक उत्साह की लहर फैल गई । इनसे प्रभावित होकर चोल शासकों ने शैव धर्म को अपनाया और दक्षिण भारत के तमिल प्रदे"ा में एक से बढ़कर एक मंदिरों का निर्माण करवाये।

गुप्तोत्तर काल के अंतिम चरण में दक्षिण भारत के कर्नाटक प्रदे"ा में शैव मत के एक क्रांतिकारी संप्रदाय के रूप में वासवराज के द्वारा वीर शैव मत को चलाया गया। इस मत के अनुयायी लिंगायत कहलाते थे।

वासव ने वर्ण, आश्रम व जाति–भेद से परे तथा जप–तप व संन्यास की कठोरता से ऊपर उठकर अंहिसा पर वि"वास करते हुये प्रत्येक व्यक्ति को श्रम से आजीविका अर्जित करने का उपदे"ा उनकी ही भाषा में दिया। जिससे यह मत कर्नाटक में अत्यधिक लोकप्रिय हो गया और इसका प्रभाव आज भी मौजूद है। इस संप्रदाय में गुरू, जंगम एवं लिंग को अधिक महत्व दिया गया। आध्यात्मिक ज्ञान देने वालों को गुरू व पारि"ाव से ऐक्य स्थापित कर लेने वालों को जंगम कहा जाता था।

इस काल में भारतीय हिन्दू समाज में अनेक जनजातियों तथा आदिवासियों का समावे"ा होने से शक्ति पूजा के व्यापक प्रचलन देखने को मिलता है। यद्यपि सृष्टि में धारण एवं संहार में ई"वर की शक्ति के रूप में प्राचीन काल से ही शाक्त संप्रदाय के अन्तर्गत शक्ति की पूजा का प्रचलन रहा है। सांस्कृतिक संक्रमण के

फलस्वरूप आदिवासियों में व्यापक रूप से प्रचलित यह शक्ति पूजा अन्य धर्मों पर भी अपना प्रभाव डाला आदिवासियों की यह मातृदेवी हिन्दू तथा बौद्ध धर्म में शक्ति या तारा के रूप में ग्रहण की गई। बाद में इसका और अधिक फैलाव हो गया। नवीन ब्राह्मण धर्म के अंतर्गत मातृ देवियों के मंदिर बनाये गये। मध्यप्रदे"ा और उड़ीसा में चौंसठ योगिनियों के मंदिर है जिनमें मातृदेवी चौंसठ रूपों में दिखाई गई हैं।

इस काल में शक्ति के दो रूप–सौम्य और उग्र देखने को मिलते है। सौम्य रूप में ि"ाव की शक्ति के रूप में उमा गौरी पार्वती, अर्द्धनारी"वर दुर्गा है और उग्र रूप में काली भैरवी, रक्त, दंतिका, चंडिका इत्यादि।

इस काल में सिद्धि देने वाला तथा उद्दे"यों की पूर्ति में सहायक देवता के रूप में गणे"ा पूजा का प्रचलन भी दृष्टिगोचर होता है। वि"ोषकर पि"चमी भारत में गणपति पूजा बहुत प्रचलित हो गई और गणपत्य संप्रदाय का जन्म हुआ जो कि गणपति को सब देवताओं में श्रेष्ठ मानने लगे। गणे"ा के उपलक्ष्य में गणे"ा चतुर्द"ाी के व्रत का विधान प्रचलित हुआ जिसकी मान्यता आज भी समाज में है। इस व्रत का माहात्म्य अग्नि पुराण में दिया गया है।

गुप्तोत्तर काल में प्राचीन काल से लोक प्रचलन में रहे सूर्य पूजा का विधान भी देखने को मिलता है। इस काल के कई शासकों ने सूर्य मंदिर बनवाये व इसके लिए भूमिदान दिये। वल्लभी नरे"ा ि"ालादित्य प्रथम ने सूर्य मंदिर के लिए भूमिदान दी। हर्ष के पूर्वज प्रभाकर वर्धन और आदित्य वर्धन सूर्य के उपासक थे। प्रतिहार व पाल नरे"ा सूर्य की उपासना करते थे। बंगाल के सेन शासक वि"वरूपसेन तथा के"ाव सेन सूर्योपासक होने के कारण 'परमसोर' पदवी से विभूषित किए गए। क"मीर के शासक ललितादित्य ने सूर्य का प्रसिद्ध मार्तण्ड मंदिर बनवाया था। ह्वेनसांग आवूजइद, अलमसूदी तथा अलबरूनी आदि विदे"ाी यात्रियों के विवरण से पता चलता है कि मुल्तान सूर्य पूजा का प्रसिद्ध केन्द्र था।

गुप्तोत्तर काल में तांत्रिक संप्रदाय का 7 वीं शताब्दी के लगभग व्यापक प्रचार–प्रसार हुआ। तत्कालीन भारत के क"मीर, पंजाब, नेपाल, कामरूप, बंगाल, उडीसा, मध्य एवं दक्षिण भारत में यह संप्रदाय सर्वाधिक लोकप्रिय था। इस संप्रदाय के अंतर्गत तंत्र–मंत्र एवं यंत्र अर्थात् रहस्यमय चक्रों पर ध्यान करना का वि"ाष महत्व था। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत ध्यान योग तथा चर्या की व्यवस्था थी। यह संप्रदाय जाति एवं वर्ण के बंधनों से पूर्णतः मुक्त था। इस काल में तांत्रिक संप्रदाय का प्रभाव वैष्णव, शैव, बौद्ध आदि अनेक धर्मों में दृष्टिगोचर होता है। इससे पूर्व मध्य युग/गुप्तोत्तर काल में तांत्रिक संप्रदाय की व्यापक लोकप्रियता का पता चलता है। तांत्रिक संप्रदाय में पंच मकार – मद्य, मांस, मत्स्य, मैथुन एवं मुद्रा तथा मातृदेवी पंथ पर बल दिया गया है। कालांतर में विकृत यौन संबंध के कारण शाक्तों की निंदा की गयी और आज भी समाज में इस कारण इसकी अवहेलना की जाती है।

गुप्तोत्तर काल में बौद्ध धर्म का अत्यंत बदला हुआ रूप सामने आया। यह धर्म तांत्रिक संप्रदाय के प्रभाव में आ गया। इसमें जादू–टोना, तंत्र–मंत्र, अंधवि"वास का प्रभाव बढ़ गया। और इसका स्वरूप बदलकर महायान से मंत्रयान, वज्रयान, सहजयान, कालचक्रयान का रूप ले लिया। इस समय बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा के अंतर्गत अवलोकिते"वर एवं तारा की पूजा अर्चना की जाती थी। इस शाखा के लोग नैतिक दृष्टि से भ्रष्ट हो गये थे क्योंकि बौद्ध संघों में स्त्रियों के प्रवे"ा से भिक्षुओं का चारित्रिक पतन हुआ। शंकराचार्य जैसे दा"ानिकों ने अपने अद्वैतमत के प्रभाव से बौद्धमत के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया। तुर्क आक्रमणकारियों द्वारा बौद्ध मठों को नुकसान पहुँचाया गया। इस काल में ये ऐतिहासिक कारण बौद्ध धर्म के पतन हेतु जिम्मेदार थे। गुप्तोत्तर काल में एक मात्र बंगाल के पाल शासकों ने ही बौद्ध धर्म को संरक्षण एवं प्रोत्साहन दिया।

बौद्ध धर्म के विपरीत जैन धर्म को इस काल में अधिक प्रोत्साहन मिला। 7वीं शताब्दी का ऐहोल में निर्मित जैन मंदिर प्रसिद्ध है। दक्षिण भारतीय शासकों में चालुक्य एवं राष्ट्रकूट के अमोघवर्ष प्रथम, इन्द्र चतुर्थ, कृष्ण द्वितीय, इन्द्र तृतीय जैसे शासकों ने जैन धर्म को संरक्षण प्रदान किया । प"चमी भारत में शासन करने वाले गंग व"ा के शासकों ने लगभग 931 ई. में श्रवणवेलगोला (कर्नाटक) में गोमते"वर की आकर्षक मूर्ति की स्थापना करवायी। चालुक्य नरे"ा कुमार पाल जैन आचार्य हेमचन्द्र सूरि से काफी प्रभावित था। उसके समय में जैन धर्म की काफी उन्नति हुई।

उत्तर भारत में संरक्षण के अभाव में जैन धर्म का उतना विकास नहीं हो सका जितना कि अन्य भागों में हुआ। राजपूताना में गुर्जर–प्रनिहार नरे"ा भोज ने एक जैन मंदिर का निर्माण करवाया। खुजराहों में चंदेल शासकों ने तीर्थकरों के 5 मंदिरों का निर्माण करवाये। नयनार और अलवारों के प"चात् शैव और वैष्णव आचार्यो ने तमिल प्रदे"ा में शैव व वैष्णव मत का प्रचार जोरों से जारी रखा इस कारण तमिल प्रदे"ा में जैन धर्म का विकास नहीं हो पाया। दक्षिण भारत में कर्नाटक राज्य में जैन धर्म का विकास देखने को मिलता है जहां इसे गंग राजाओं का संरक्षण मिला।

10.4.2. गुप्तोत्तरकालीन मंदिर : सामाजिक धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन में योगदान।

(Post Gupta Period Temple : Contrilution in social religious and Cultural Life)

प्राचीन भारत में सातवाहन व"ा के शासकों ने भूमि दान की प्रथा को आरंभ किया। गुप्तोत्तर काल में भू–दान की प्रथा में अत्यधिक वृद्धि हुई। इस काल में राज्य के अंतर्गत कार्य करने वाले अधिकारी, अधीनस्थ शासक व कर्मचारी को वेतन के बदले भूमि अथवा गांव दान में देने की प्रथा थी। इसके अलावा इस काल में मठ व मंदिरों को भी भू–दान अथवा ग्राम दान बहुत अधिक देने की प्रथा थी। इस कारण गुप्तोत्तर काल में मंदिरों

का निर्माण बड़ी संख्या में होने लगा। भक्ति आंदोलन के दौरान जनसाधारण में मूर्तिपूजा की लोकप्रियता बढ़ी। खासकर दक्षिण भारत के तमिल प्रदे"ा में अलवार और नयनार संतों ने जनसामान्य में भक्ति भावना का संचार किया। जनसामान्य के बीच अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए शासकों ने धर्म वि"ोष को बढ़ावा देने के लिए मंदिर बनाये और उसके सम्पूर्ण व्यवस्था के लिए भूमि व गांव के गांव दान देने लगे। इससे मंदिर राज–व्यवस्था के समानांतर जन सामान्य के बीच सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक भूमिका में प्रमुखता से आ गये। भू–दान के कारण अर्थव्यवस्था व प्र"ासनिक व्यवस्था में जो सामंतवाद प्रचलन में आया था वि"ाल मंदिरों तथा मठों का अस्तित्व इस और अनुकूल बनाया। इस प्रकार मंदिर एक तरफ जहां भक्ति व धर्म के प्रचार करने वाले संत व प्रचारक तथा जन सामान्य से संबंधित था तो दूसरी ओर व्यवस्था के दृष्टिकोण से ग्राम दान व भूमि–दान को लेकर इसका संबंध शासन व प्र"ासन से भी उतना ही था। इस कारण मंदिर गुप्तोत्तर काल में जीवन के हर क्षेत्र में महत्वूपर्ण भूमिका में थे।

इस काल में मंदिर की भूमिका को निम्न बिंदुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है –

(i) भक्ति भावना के संस्थानिक आधार के रूप में मंदिर की भूमिका इस काल में महत्वपूर्ण रही। दक्षिण भारत में वैष्णव संत अलवार और शैव संत नयनार ने विष्णु और ि"ाव की मूर्ति पूजा के द्वारा बिना किसी भेदभाव के सभी वर्गो में भक्ति–भावना को बढ़ाया। इससे जन–सामान्य के बीच प्रेम व सद्भावना का प्रसार हुआ। ये संत इन्ही मंदिरों को भक्ति के केन्द्र के रूप में सबके लिए खोल दिया। इस प्रकार भक्ति भावना के साथ–साथ हर वर्गों के लोगों के लिए मंदिर मिलने–जुलने का स्थान हो गया।

(ii) विचारधारा के निर्माण में मंदिर ने इस काल में महत्वपूर्ण कार्य किया। मंदिर की व्यवस्था के अंतर्गत ही संत व प्रचारक अपना संपूर्ण कार्य करते थे। वे चिंतन के द्वारा साहित्य व संगीत का सृजन करते थे। जन–सामान्य को उन्हीं की भाषा में उपदे"ा देते थे। इससे उनमें सकारात्मक विचार उत्पन्न होता था। अतः सकारात्मक विचारधारा की उत्पत्ति में मंदिरों ने इस युग में सराहनीय कार्य किया।

(iii) मंदिर व्यवस्था ने इस युग में क्षेत्रीय भाषाओं का खूब विकास किया। क्षेत्रीय भाषाओं में साहित्य का सृजन हुआ। इस काल में ही 10 वीं शताब्दी के लगभग काव्य की दुनिया में 'चंपू' नाम की नवीन शैली का प्रचलन हुआ। ललित काव्य की रचना हुई। ललित काव्य के अंतर्गत सर्वोत्कृष्ट कृति 'गीतगाविन्द ' राधा–कृष्ण के प्रणय से संबंधित है। इसकी रचना राजा लक्ष्मण सेन के दरबारी कवि जयदेव ने की।

(iv) इस काल में जैन मंदिरों ने साहित्य और ि"ाक्षा में अपूर्व योगदान दिया। जैनों ने अपभ्रं"ा भाषा में साहित्य लिखकर साहित्य की अमूल्य सेवा की। जैन समाज में यह धार्मिक कर्त्तव्य के रूप में प्रचलित था कि समृद्ध जैनों को पुस्तकों की प्रतिलिपि करवाकर उन्हें संतों और विद्वानों में वितरित करना है। इस प्रकार जैन मंदिर का सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में गुप्तोत्तर काल में अच्छा योगदान रहा जिसका प्रभाव आज भी देखने को मिलता है।

(v) यद्यपि गुप्तोत्तर काल में बौद्ध धर्म में तांत्रिक प्रभाव के कारण व्यापक परिवर्तन हो गया फिर भी बौद्ध मठ ि"ाक्षा के प्रमुख केन्द्र के रूप में कार्य करते रहे। इस समय भी नालंदा, ओदंतपुरी व विक्रमि"ाला जैसे बौद्ध ि"ाक्षा केन्द्र न केवल द"ान, चिकित्सा व धातु विज्ञान की ि"ाक्षा का प्रसार कर रहे थे बल्कि विभिन्न प्रकार की कलाओं का भी प्रसार कर सांस्कृतिक विकास में अपना योगदान दे रहे थे।

(vi) मंदिरों को दान में प्राप्त भूमि को बटाई पर खेती करने के लिए दिया जाता था। मंदिर की इस व्यवस्था ने समाज में शूद्रों के अंतर्गत एक अलग वर्ग भू–दास को जन्म दिया।

(vii) इस काल में मंदिरों को गांव भी दान में मिलते थे। इन गांवों से पैदावार का राजकीय भाग जिसे 'मेलबार' कहते थे मंदिर को प्राप्त होती थी। इसके अलावा मंदिर को गांवों से कर वसूलने का भी अधिकार था। इस प्रकार मंदिरों को शासन का अधिकार इस काल में प्राप्त था और इस व्यवस्था ने केन्द्रीय सत्ता के दुर्बल होने की स्थिति में समाज में सांमतीय व्यवस्था को जन्म दिया। जिससे समाज के स्वरूप में भारी परिवर्तन गुप्तोत्तर काल में देखने को मिलता है।

(viii) दक्षिण भारत के चोल शासकों के विवरण से पता चलता है कि ग्राम पंचायतों के विभिन्न मामलों को सुलझाने के लिए ग्राम सभा का आयोजन मंदिरों के प्रांगन मे ही वृक्षों के नीचे किये जाते थे। इस प्रकार ये मंदिर आज के पंचायत भवन की तरह उस काल में भूमिका निभा रहे थे। ये मंदिर ग्रामसभा के लिए ऋण देने वाली संस्था के रूप में भी कार्य करती थी।

(ix) मंदिर की सम्पूर्ण व्यवस्था को चलाने के लिए कई प्रकार की कर्मचारियों की आव"यकता होती थी। इससे स्थानीय लोगों को आजीविका का आधार मिला। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी हुई और इससे उनके सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई।

(x) गुप्तोत्तरकालीन मंदिरों में खासकर दक्षिण भारत में एक ऐसी प्रथा जिसे देवदासी प्रथा के नाम से जानते है व्याप्त थी जिसकी इतिहासकारों ने आलोचना की है। यह एक ऐसी प्रथा थी जिसमें महिलाओं को भगवान को सौंपकर आस्था के नाम पर उनका शोषण किया जाता था। इस काल के

सामाजिक और धार्मिक ताने बाने की वजह से महिलाओं को मजबूरी में देवदासी बनना पड़ता था। इसे गुप्तोत्तरकालीन मंदिर व्यवस्था के अंतर्गत एक धब्बा के रूप में समझा जाता है।

(xi) वास्तव में गुप्तोत्तरकालीन भारतीय स्थापत्य कला की मुख्य कृतियां मंदिर है। इस काल में मंदिर निर्माण की सर्वथा नवीन शैली का विकास हुआ। मंदिरों के प्रभाव के कारण उस काल के शासकों ने इसे खूब प्रोत्साहन दिया। आज इसके नमूने तमिलनाडु, महाराष्ट्र, उडीसा व मध्यप्रदे"ा में हमे देखने को मिलता है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि कुछ नकारात्मक पक्ष को छोड़कर अधिकां"ातः गुप्तोत्तर काल के मंदिरों ने सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

10.4.3. गुप्तोत्तरकालीन मंदिर : शिक्षा का केन्द्र।

(Post Gupta Period Temple: Educational Centre) :-

गुप्तोत्तर काल में दक्षिण भारत में चोल वं"ा के शासकों के अभिलेखों से यह पता चलता है कि वहां मंदिर ि"ाक्षा के केन्द्र के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। चोल शासक राजेन्द्र चोल के एन्नारियम अभिलेख से पता चलता है कि ब्राह्मणों का गांव एन्नारियम जिसे 'चतुर्वेदी मगंलम्' के नाम से जानते थे में मंदिर व्यवस्था के साथ एक विद्या मंदिर था। इस विद्या मंदिर को 'गंगैकोण्ड चोलमंडप' कहा गया है। इनमें विभिन्न वेदों का अध्ययन करने वाले निर्धारित विद्यार्थियों की संख्या 340 थी। इनके खर्च की व्यवस्था के लिए ग्राम सभा ने मंदिर को 300 एकड़ भूमि दान में दी थी। प्रत्येक विद्यार्थी के वस्त्र तथा अन्य खर्चो के लिए एक सेर चावल प्रतिदिन तथा 1/4 तोला सोना वार्षिक देने का प्रावधान था। इसी प्रकार विद्या मंदिर में निर्धारित 16 अध्यापकों के लिए ग्राम सभा की ओर से प्रतिदिन 16 सेर चावल तथा अन्य खर्चो के लिए 45 वेलि भूमि पृथक निर्धारित थी। विद्या मंदिर के अन्य सांस्कृतिक कार्यो व उत्सवों के लिए अलग से खर्च की व्यवस्था थी यहाँ प्रतिदिन 4 व्यक्ति पवित्र तिरूवयमोलि का पाठ करते थे। मंदिर के सुव्यवस्थित ि"ाक्षा केन्द्र का पता इस बात से चलता है कि यहाँ 16 श्रीवैष्णवों तथा एक सहस्र वैष्णवों और दासों के भोजन की सुनि"चत व्यवस्था थी।

इसी प्रकार चिंगलपट जिले के अंतर्गत वेंकटे"ा पेरूमल के मंदिर में 60 विद्यार्थियों के पठन–पाठन की व्यवस्था थी। इसी जिले के तिरूवेरिपूर स्थान पर ि"ाव मंदिर की व्यवस्था के साथ वि"ाल व्याकरण विद्यापीठ था, जहाँ 400 विद्यार्थी अध्ययन करते थे। इसके लिए खर्च की व्यवस्था कई गांवों के आय से

होती थी। ऐसे ही ि"क्षा–संस्थान के प्रमाण हमें मलकापुरम्, तिरूमुक्कडव व बीजापुर के मंदिरों से प्राप्त होते है।

इन मंदिरों में विभिन्न वेदों व वेद आधारित ग्रंथों, व्याकरण शास्त्र, विभिन्न द"र्ानों आदि के अध्ययन–अध्यापन का कार्य बखूबी चलता था। इस से यह प्रमाणित होता है कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से दक्षिण के मंदिरों की यह वि"ोषता थी कि वे ि"क्षा के केन्द्र थे।

इन वि"ाल मंदिरों ने गुप्तोत्तर काल में विभिन्न प्रकार के कलाओं को प्रोत्साहन दिया। इन कलाओं में वास्तुकला, ि"ाल्प कला, मूर्तिकला, नाट्य तथा संगीत कला, नृत्य कला आदि प्रसिद्ध हैं। स्थापत्य कला के अन्तर्गत मंदिर निर्माण की तीन शैलियों का विकास इसी काल में हुआ। जिन्हें नागर, वेसर तथा द्रविड़ शैली के नाम से जानते है। चोल काल में निर्मित नटराज ि"ाव की कांस्य मूर्ति आज भी वि"व प्रसिद्ध है। रामायण, महाभारत व पुराणों की कहानियों पर आधारित नाटकों का मंचन किया जाता था। कुलोतुंग चोल के समय एक नानाविधनाट्य"ाला बनाई गई जिनमें नाटय व गायन का मंचन होता था। शास्त्रीय संगीत व शास्त्रीय नृत्य के विकास व जनसामान्य को इसके पंरपरागत ज्ञान से अवगत कराने की व्यवस्था राज्य की ओर से थी। इन कलाओं को प्रोत्साहन देने के लिए मंदिर की ओर से देवदासियों नर्तकों व गायकों के लिए भूमि तथा आवास की व्यवस्था थी। चोल शासक राजेन्द्र चोल के समय मंदिर के मंडप पर राजराजे"वर नाटक का अभिनय कराया गया। इस प्रकार गुप्तोत्तरकाल में दक्षिण के मंदिरों ने ि"क्षा के केन्द्र के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

10.4.4. गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला । (Post Gupta Period Indian Art):-

गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला कला की प्रौढ़ता की चरमावस्था है। इस काल की कला में पूर्व की पंरपरा को कायम रखते हुए कुछ नवीन बातों का समावे"ा भी किया गया। कला की विभिन्न विधाओं–वास्तुकला, तक्षण कला तथा चित्रकला आदि में शास्त्रीय नियमों का अनुकरण करते हुए इस युग में कलाकरों ने मौलिकता का परिचय दिया। गुप्तोत्तरकालीन राजनीति की वि"ोषता विकेन्द्रीकरण की प्रवृति व क्षेत्रीयता की भावना का प्रभाव कला पर भी स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। इस कारण इस काल के कलाकृति में एकरूपता के स्थान पर विविधत अधिक है। गुप्तोत्तरकालीन कला में हमें प्रोद"िक भावना सर्वत्र देखने को मिलता है। इस काल में मंदिर व्यवस्था के अंतर्गत वास्तुकला/स्थापत्य कला, नाट्यकला संगीत कला, नृत्य कला, ि"ाल्प कला, मूर्तिकला आदि कलाओं का विकास हुआ। परंतु गुप्तोत्तरकालीन कला की सर्वप्रमुख वि"ोषता भारतीय स्थापत्य कला या वास्तु कला ही है। जिसकी मुख्य कृतियां मंदिर हैं। इनकी विविध शैलियों का द"र्ान हमें अलग–अलग क्षेत्रों में निर्मित मंदिरों में देखने को

मिलते हैं। भौगोलिक आधार पर इस समय मंदिर निर्माण की तीन शेलियाँ प्रचलित थीं। इसे निम्न रेखाचित्र द्वारा द"ार्या जा सकता है।

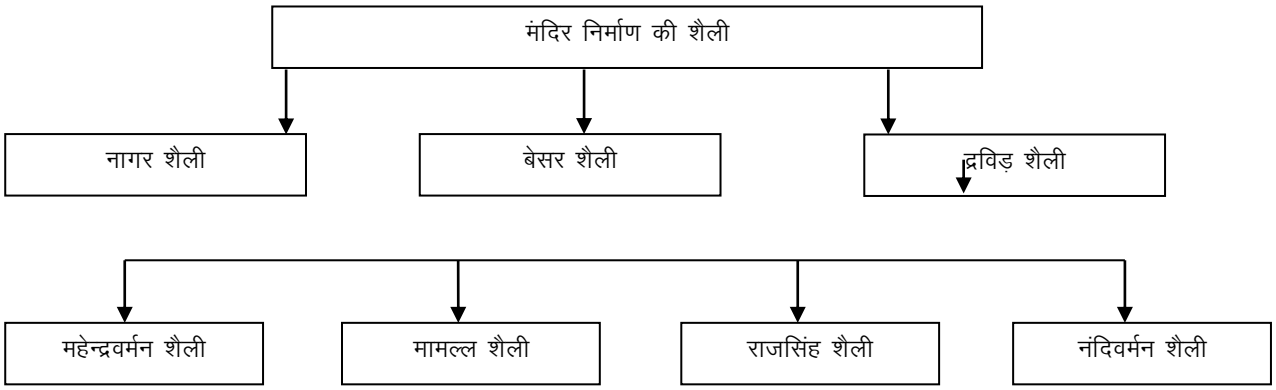

(पल्लपकालीन वास्तुकला की चार मुख्य शैलियाँ) रेखा चित्र में दर्शायें गये गुप्तोत्तरकालीन मंदिर निर्माण की शैलियों का विवरण इस प्रकार है।

(i) **नागर शैली** :– यह शैली उत्तर भारत में हिमालय से विंध्य प्रदे"ा के भू–भाग में विकसित हुई। नागर शैली के मंदिर चतुष्कोणीय होते हैं। इस शैली के मंदिरों के ि"खरों में खड़ी रेखा की प्रधानता होने के कारण इसे रेखीय ि"खर कहते हैं। वर्गाकार तथा ऊपर की ओर वक्र होते हुए ि"खर इन मंदिरों की वि"ोषताएं हैं। इन मंदिरों में मुख्य रूप से दो भाग थे –

गर्भगृह (टेबुलनुमा) जिसके ऊपर ि"खर होता था तथा सामने की तरफ मण्डप एवं मण्डप के ऊपर पिरामिडनुमा नीची छत होती थी। गर्भगृह के चारों और वर्गाकार छत से ढका हुआ बाड़ा होता है जिसे प्रदक्षिणापथ कहते हैं।

नागर शैली के प्रसिद्ध मंदिर हैं – लिंगराज मंदिर (भुवने"वर), सूर्य मंदिर (खुजराहो), सूर्य मंदिर (मोढेरा), दिलवाड़ा जैन मंदिर (माउंटआबू) आदि।

नागर शैली को विकसित करने में गुजरात के चालुक्य व सौलंकी शासकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यहां पर निर्मित प्रसिद्ध सोमनाथ का मंदिर इसी शैली में बना था। इस शैली को सोंलकी शैली भी कहा गया।

यद्यपि राजस्थान के अन्य मंदिरों में पंचायतन शैली का प्रयोग किया गया है फिर भी इनमें नागर शैली की तरह गर्भगृह मंडप तथा खुला द्वार मंडप देखने को मिलता है।

(ii) **बेसर शैली** :– बेसर शैली का विस्तार विंध्य और कृष्णा के बीच में है, इसे 'दक्षिणावर्त' भी कहा जाता है। बेसर शैली में नागर और द्रविड़ शैली के तत्व मिश्रित हैं। बेसर शैली के मंदिरों की मुख्य वि"ोषताएं है – देउल, गर्भगृह और जगमोहन अर्थात् सभा मंडल का होना। इस शैली के मंदिर अर्द्ध गोलाकार होते थे। होयसल राजाओं के मंदिर राष्ट्रकूट काल के ऐहोल मंदिर, कैला"ा मंदिर (ऐलोरा) आदि बेसर शैली से निर्मित है।

(iii) **द्रविड़ शैली** :– द्रविड़ शैली का विस्तार कृष्णा तथा कन्याकुमारी अंतरीप के बीच अर्थात् आधुनिक तमिलनाडु प्रदे"ा में है। इस शैली के मंदिरों के बनावट की वि"ोषता है – वर्गाकार गर्भगृह पर पिरामिडनुमा अर्थात् ऊपर की ओर आकार में छोटी हुई मंजिलों का बना ि"ाखर। इसका शीर्ष आठ या छह कोणों के गुबंद के आकार का होता है।

पल्लव, चालुक्य, चोल एवं पांड्य शासकों के शासन काल में मुख्यतः इस शैली के मंदिरों का निर्माण हुआ।

7वीं से 10 वीं शताब्दी के मध्य बने कुछ पल्लवकालीन मंदिरों में कांचीपुरम, महाबलीपुरम एवं तंझवूर के मंदिर प्रसिद्ध है। पल्लव कलाकारों ने वासतुकला को धीरे–धीरे तक्षण कला अर्थात् काष्ठ कला और कंदराकला (गुफा कला) के प्रभाव से मुक्त करना जिसका प्रभाव हमें महाराष्ट्र में देखने को मिलता है। पल्लवकालीन वास्तुकला की चार मुख्य शैलियां है जो प्रमुख पल्लव नरे"ाों के नाम पर है – महेन्द्रवर्मन शैली, मामल्ल शैली, राजसिंह शैली, एवं नंदिवर्मन शैली। महेन्द्रवर्मन शैली के मंदिरों को मंडव कहा गया है। मामल्ल शैली के रथ सप्त पगोडा के नाम से विख्यात है। इनकी संख्या 8 है जिनमें द्रोपदी रथ, अर्जुन रथ, भीम रथ, धर्मराज रथ, सहदेव रथ इत्यादि प्रमुख हैं। पल्लव नरे"ा नरसिंह वर्मन राजसिंह ने एक नवीन शैली राजसिंह शैली का प्रचलन किया। **इस शैली के मुख्य मंदिर थे** – मामल्लपुरम का तटवर्ती मंदिर, कांचीपुरम का कैला"ानाथ एवं बैकुंठ पेरूमल का मंदिर आदि। नंदिवर्मन शैली के मंदिर नंदिवर्मन एवं उसके उत्तराधिकारियों के राज्यकाल में बने। **इस शैली के प्रसिद्ध मंदिर है** – कांचीपुर का मुक्ते"वर मंदिर, मांगते"वर मंदिर तथा गुडीमल्लम का पर"ुरामे"वर मंदिर द्रविड़ शैली का चरमोत्कर्ष चोलों के काल में हुआ। चोल सम्राटों ने अपनी शक्ति और ऐ"वर्य का प्रद"ान भव्य तथा उतुंग ि"ाखरों के निर्माण में किया। इस काल के मंदिरों की मुख्य वि"ोषता – विमान शैली है। इस मंदिर निर्माण कला का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है – तंजोर का वृहदी"वर मंदिर जिसे राजराज चोल ने 1000 ई. में बनवाया था। दूसरा मंदिर है राजेन्द्र चोल द्वारा बनवाया गया गगैकोंड चोलपुरम का मंदिर।

चोलों के प"चात् तमिल प्रदे"ा में पांडयों का शासन स्थापित हुआ। पांड्यों के राज्यकाल में द्रविड़ शैली जैसे–तैसे आगे बढ़ती रही परन्तु कोई महत्वपूर्ण मंदिर नहीं बने और चोलों से मिली भव्य विरासत की परंपरा को सहेजने की कोई सुनि"चत प्रयास नहीं किया गया। पांड्यकालीन मंदिरों की मुख्य वि"ोषता – गोपुरम् अर्थात बड़े ऊँचे और भव्य प्रवे"ा द्वार है।

तिरूमलाई मंदिर, चिंदबरम् मंदिर, कुबकोणम् मंदिर, इस काल की कुछ प्रसिद्ध कृतियां है।

10.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress):-

(क) रिक्त स्थानों पर उचित उत्तर लिखिये :–

(1) गोपुरम् ..... वं"ा के शासकों के वास्तुकला की वि"ोषता थी।

(2) विमान ..... शैली की वि"ोषता थी।

(3) एलोरा के कैला"ानाथ मंदिर का निर्माण ..... वं"ा के शासक ने किया।

(4) साधारण लेन–देन और व्यापार में प्रयुक्त कौड़ियों को प्रतिहार अभिलेखों में ..... कहा गया है।

(5) गुप्तोत्तर काल में व्यक्तिगत स्वामित्व वाली भूमि को ..... कहते थे।

(6) गुप्तोत्तर काल में सहजयान का उदय ..... धर्म के अंतर्गत हुआ था।

(7) पुरी स्थित जगन्नाथ मंदिर का निर्माण ..... शैली में हुआ है।

(8) पा"ुपात का सम्बंध ..... मत से है।

(9) गुप्तोत्तर काल में उपज का हिस्सा जो भूमिकर के रूप में लिया जाता था उसे ..... कहते थे

(10) गुप्तोत्तर काल में पौधों के रे"ो से निर्मित कपड़ा ..... कहलाता था।

(ख) प्रत्येक प्रश्न के सामने सही कथन के लिए 'सत्य' तथा गलत कथन के लिए 'असत्य' शब्द अंकित करें। :–

(1) बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा के अंतगर्त अवलोकिते"वर एवं तारा की पूजा अर्चना की जाती थी।

( )

(2) गुप्तोत्तर काल में एक मात्र बंगाल के सेन शासकों ने ही बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया।

( )

(3) गुप्तोत्तर काल में एक जाति के रूप में कायस्थों का उल्लेख सर्वप्रथम मनुस्मृति में मिलता है। ( )

(4) पेहोवा अभिलेख में दे"ा के विभिन्न भागों से आने वाले घोड़ों के क्रय–विक्रय करने वालों की गोष्ठी का उल्लेख है। ( )

(5) स्मृतियों में स्त्री विवाह की उम्र 8 से 10 वर्ष बताई गई है। ( )

(6) गुप्तोत्तरकाल में मगध एवं कलिंग चावल के लिए म"ाहूर थे। ( )

(7) गुप्तोत्तरकाल में ताम्रलिप्ति, सप्तग्राम, पुरी, कलिंग पि"चम भारत के समुद्र तटों पर स्थित बंदरगाह थे। ( )

(8) गुप्तोत्तरकालीन भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि थी। ( )

(9) गुप्तोत्तरकाल में दासों की संख्या में कमी आई। ( )

(10) गुप्तोत्तरकाल से पूर्व सातवाहन वं"ा के शासकों ने भूमिदान की प्रथा की शुरूआत की थी। ( )

10.6 सारांश / संक्षिप्तिका (Summary) :-

- गुप्तोत्तरकाल में भारत में दो प्रबल सामाजिक धाराएँ प्रवाहित हुई – प्रथम विदे"ाी जातियों का आत्मसातीकरण तथा द्वितीय जाति प्रथा की कठोरता।
- पंरपरागत रूप से समाज मुख्यतः चार वर्णो में विभाजित था। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वश्रेष्ठ था।
- गुप्तोत्तरकाल में अध्ययन–अध्यापन, यज्ञ करवाना, दान ग्रहण करना आदि ब्राह्मणों का मुख्य कार्य बताया गया है। ऐसे ब्राह्मण को श्रोत्रिय आचार्य एवं उपाध्याय कहा गया है।
- इस काल में आजीविका हेतु ब्राह्मण द्वारा भी खेती करने का वर्णन मिलता है।
- इस युग की महत्वूपर्ण घटना राजपूतों का अभ्यूदय है, जिन्होंने प्राचीन क्षत्रियों का स्थान ले लिया।
- 700–1200 ई0 के मध्य राजपूतों की लगभग 36 जातियां प्रका"ा में आई जिनमें मुख्य थी – प्रतिहार, चौहान, चालुक्य, परमार, गहड़वाल, चंदेल, कछवाहा, मेद आदि।

- इस काल में सवूकफरिया तथा कतरिया क्षत्रियों के दो वर्ग थे।
- सवुकफूरिया सत् क्षत्रिय थे जिनके अंतर्गत राजव"ा तथा सांमत वर्ग और योद्धा क्षत्रिय वर्ग शामिल थे
- कतरिया साधारण क्षत्रिय थे जो कृषि व्यापार इत्यादि व्यवसायों से आजीविका चलाते थे।
- वाणिज्य व्यापार में गिरावट के कारण वै"यों की स्थिति में गिरावट आई। उनके लिए कृषि व्यापार, प"ुपालन जैसे व्यवसाय नि"चत किये गए।
- इस काल में वै"यों का शूद्रों के रूप में मूल्याकंन तथा कृषकों के रूप में परिवर्तन हुआ।
- समाज में शुद्रों की संख्या सर्वाधिक थी। इस काल में अस्पृ"य जातियों की संख्या तथा अस्पृ"यता की भावना में वृद्धि हुई।
- कृषि कार्य मुख्यतः शूद्रों के द्वारा किया जाता था। शूद्रों में कुछ वर्ण संकर जातियां भी थी।
- कुटंबी कृषक वर्ग था जिन्हे शूद्रों के अन्तर्गत रखा गया था।
- 'कीना"ा' भी कृषक वर्ग था जिन्हे वै"य अथवा शूद्रों के अन्तर्गत रखा गया था।
- सीरिन वे किसान थे जो बंटाई पर खेती करते थे।
- गुप्तोत्तरकाल में बालविवाह, बहुविवाह, सती प्रथा, जौहर प्रथा, गणिकाओं, वे"याओं व देवदासियों जैसी कुप्रथा के कारण स्त्रियों की द"ा में गिरावट आई।
- गुप्तोत्तरकाल में सती प्रथा का अत्यधिक विकास हुआ। अपरार्क विज्ञाने"वर आदि निबंधकारों ने सती प्रथा की प्र"ंसा की है। जबकि मेधातिथि ने सती प्रथा की कड़ी आलोचना की है।
- पूर्व मध्यकाल/ गुप्तोत्तरकाल में दास प्रथा में वृद्धि हुई। इन्हें किसी सामाजिक वर्ग का दर्जा नहीं था।
- बौद्ध मठों और मंदिरों में को दास/दासियां दान के रूप में दिये जाते थे।
- कायस्थों का सर्वप्रथम उल्लेख याज्ञवल्क्य स्मृति में है।
- कायस्थों का एक जाति के रूप में सर्वप्रथम उल्लेख ओ"ानम स्मृति में मिलता है।
- न्यायाधिकरण में न्याय–निर्णय लिखने का काम करने वाले 'करणिक' कहलाते थे।
- गुप्तोत्तर काल में कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार थी।
- नीतिवाक्यामृत धान्य को सर्वश्रेष्ठ संग्रह बताया गया है।

- भूमिदान की प्रथा का आरंभ सातवाहन काल से माना जाता हैं।
- गुप्तोत्तर काल में अधिकारियों, मंदिरों, मठों, ब्राह्मणों आदि को उनकी सेवाओं के बदले भू–क्षेत्र प्रदान करने से सामंतवाद का उदय हुआ।
- उत्पादकता के हिसाब से भूमि को बांटा गया था।
- भूमि कर वास्तविक उत्पादन का 1/12 से लेकर 5/6 भाग तक था।
- भूमि मापक के लिए प्रचलित मापक का प्रयोग होता था जिन्हें कई नामों से जानते थे।
- सिंचाई के रूप में प्रयुक्त रहट के लिए अरघट्ट शब्द का प्रयोग किया गया है।
- चंदेल एवं परमार शासकों ने सिंचाई हेतु बडी–बडी झीलों एवं तालाबों का निर्माण करवाया।
- गुप्तोत्तर काल में सूद पर रूपया उधार देने को कुसीदवृत्ति कहा गया।
- सर्वप्रथम विदे"ाी यात्री एवं लेखक ह्वेनसांग ने कृषि को शूद्रों का व्यवसाय बताया।
- इस समय मूर्तिपूजा से जीविकोपार्जन करने वाली ब्राह्मणों को 'देवलक' कहा गया।
- :मल्लक' एवं तुरूष्क नामक दण्ड कर अ"ाान्ति फैलाने वाली जातियों से निपटने के लिए लगाया जाता था।
- गुप्तोत्तर काल का सर्वाधिक प्रसिद्ध बंदरगाह ताम्रलिपि (बंगाल) था, कालांतर में इसका स्थान सप्तग्राम ने ले लिया।
- पि"चमी तट पर प्रसिद्ध बंदरगाह देवल, खंभात एवं भडौच था।
- इस समय दुकूल पौधो के रे"ो से बनने वाले वस्त्र को 'वरोज' भडौच में बनने वाले एवं 'चुनारी' मध्य दे"ा में बनने वाले वस्त्र को कहा गया।
- गुप्तोत्तर काल में श्रेणी के प्रमुख को महत्तक एवं वणिकों की श्रेणी के मुखिया को 'श्रेष्ठि' कहा जाता था।
- गुप्तोत्तर काल में बंगाल – मलमल, पान, सुपाड़ी एवं सन के लिए प्रसिद्ध था।
- कलिंग – अच्छे किस्म के धान के लिए प्रसिद्ध था।
- मालवा– गन्ना, नील एवं अफीम हेतु प्रसिद्ध था।
- गुजरात – सूती कपड़े एवं चमड़े द्वारा निर्मित वस्तुओं हेतु प्रसिद्ध था।
- 'चीना"ाुक' चीनी रे"ाम को कहा जाता था।

- कुतुबनुमा का अविष्कार– चीनियों के द्वारा 11 वीं शताब्दी में किया गया जिससे समुद्री व्यापार में वृद्धि हुई।
- चोल सम्राट राजेन्द्र चोल ने चीन के साथ व्यापारिक संबंधों को बढ़ाया।
- राजतरगिणी के अनुसार खूया इंजीनियर कर्मचारी था जिसने झेलम नदी के तट पर बांध बनवाया और नहर निकलवाई
- गुप्तोत्तर काल में भोगपति जागीरदार को कहा जाता था जिसके अत्याचार से पीड़ित होकर किसानों ने गांव ही छोड़ दिया।
- नदी मार्ग से व्यापार करने पर तर"ुल्क देना पड़ता था।
- तर"ुल्क को वसूल करने वाले को 'तारिक' कहा जाता था।
- श्रेणियों द्वारा जमा की गयी स्थायी पूँजी को 'अक्षयनीवी' कहा जाता था।
- गुप्तोत्तर काल में व्यापार की प्रणाली–वस्तुविनियम प्रणाली थी।
- फाह्यान के अनुसार दैनिक लेन–देन एवं साधारण व्यापार में कौड़ियों का प्रयोग होता था।
- कौड़ियों को प्रतिहारों के अभिलेख में 'कपर्दक' कहा गया है।
- अलवार – दक्षिण भारत में वैष्णव मत के संत थे।
- नयनार – दक्षिण भारत में शैव मत के संत थे।
- गुर्जर–प्रतिहार/प्रतिहार व"ा का सर्वाधिक प्रतापी एवं महान शासक राजा भोज प्रथम जिसे मिहिर भोज के नाम से भी जानते है की उपाधि 'आदिवराह ' थी।
- मिहिर भोज विष्णु के उपासक थे।
- मिहिर भोज के काल में विदे"ाी यात्री सुलेमान (अरबी) व अलमसूदी (बगदादी) भारत की यात्रा पर आया था।
- विद्या एवं कलां का सरंक्षक परमार व"ाीय राजा भोज की उपाधि 'कविराज' थी।
- कविराज भोज ने अपनी राजधानी धारानगरी/उज्जैन में सरस्वती मंदिर का निर्माण करवाया।
- धारानगरी में कविराज भोज ने भोजपुर नगर व भोजसेन नामक तालाब का भी निर्माण करवाया।
- कविराज भोज के महत्वपूर्ण ग्रंथ है – समरांगणसूत्रधार, सरस्वतीकंठाभरण आदि।
- गीतगोविन्द के रचनाकार जयदेव बंगाल में सेन व"ा के शासक लक्ष्मणसेन के काल में हुये।

- गुजरात के चालुक्य जिन्हें सोलंकी व"ा के नाम से जानते है के शासक भीम प्रथम ने महमूद गजनवी के आक्रमण से नष्ट हुये सोमनाथ मंदिर का पुनर्निमाण करवाया।
- सौलंकी शासक भीम प्रथम के ही सामंत विमल"ाह ने माउंट आबू में दिलबाड़ा का प्रसिद्ध जैन मंदिर बनवाया।
- गुप्तोत्तर काल में क"मीर में तीन व"ों – कार्कोट, उत्पल एवं लोहार व"ा ने राज किया।
- लोहार व"ा के प्रसिद्ध शासक हर्ष के दरबारी कवि कल्हण थे जिनकी प्रसिद्ध रचना राजतंरगिणी है।
- कल्हण की राजतरंगिणी में क"मीर के इतिहास का वर्णन है।
- क"मीर का अकबर जैनुल अबीदीन (तुर्क शासक) को कहा जाता है।
- कार्कोट व"ा के शासक ललितादित्य मुक्तापीड ने सूर्य का प्रसिद्ध मंदिर मार्तण्ड मंदिर का निर्माण क"मीर में करवाया।
- गुप्तोत्तर काल में आज के असम/असोम को कामरूप के नाम से जानते थे जिसकी राजधानी प्राज्यज्योतिषपुर थी।
- खुजराहों के प्रसिद्ध मंदिर का निर्माण चंदेल व"ा के शासकों ने करवाया। यहां का वि"ाल विष्णु मंदिर, कंदरिया महादेव मंदिर, चतुर्भुज मंदिर प्रसिद्ध है।
- गुप्तोत्तर काल में पाल व"ा के प्रसिद्ध शासक धर्मपाल ने बौद्ध ि"ाक्षा केन्द्र विक्रमि"ाला वि"वविद्यालय की स्थापना की जिसके अव"ोष आज भागलपुर (बिहार) में मौजूद है।
- कल्याणी के चालुक्य व"ाीय शासक तैल/तैलप द्वितीय के दरबारी कवि –बिल्हण व विज्ञाने"वर थे।
- बिल्हण की प्रसिद्ध रचना – विक्रमाकंदेवचरित है।
- विज्ञाने"वर की प्रसिद्ध रचना – मिताक्षरा (हिन्दू विधि की पुस्तक) है।
- दक्षिण भारत में पल्लव व"ा वाले सातवाहन के सामंत थे।
- दक्षिण भारत में कर्नाटक में 12 वीं शताब्दी में वीर शैव मत जिसे लिंगायत के नाम से भी जानते है का आविर्भाव हुआ।
- इसके प्रवर्तक बासव एवं उसके भतीजे चन्नाबासव थे।
- गुप्तोत्तर काल में शैव धर्म में सबसे प्राचीन मत पा"ुपत मत था।

- पा"ुपत मत के प्रवर्तक लकुनी"ा थे।
- पा"ुपत मत के मानने वाले लोग ि"वलिंग की पूजा करते थे।
- इस मत का सबसे बड़ा केन्द्र मालवा था।
- गुप्तोत्तर काल में शैवों का अतिमार्गी रूप – कापालिक और कालमुख था
- गुप्तोत्तर काल में जनजातियों तथा आदिवासियों में शक्ति पूजा अधिक प्रचलित थी।
- इस काल में पि"चमी भारत में गणपति पूजा का वि"ोष प्रचलन था।
- इस काल में सूर्य पूजा का प्रसिद्ध केन्द्र मुल्तान था।
- तांत्रिक धर्म में सभी के लिए स्थान था। इसमें स्त्री व शूद्रों को भी जगह दिया गया।
- 9 वीं शताब्दी में दक्षिण और तमिल प्रदे"ा में ब्राह्मणों की बस्ती को अग्रहार कहते थे।
- मध्य प्रदे"ा, उडीसा व बंगाल में आदिवासी को शबर और पुलिंद के नाम से जानते थे।
- गुप्तोत्तर काल में एकमात्र पालवं"ा के शासकों ने बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया।
- इस काल में बोध गया, नांलदा, ओदतपुरी, विक्रमि"ाला बौद्ध धर्म की प्राचीन परंपरा को बनाए हुए थे।
- नालंदा वि"वविद्यालय का संस्थापक – कुमार गुप्त (गुप्तवं"ा)।
- ओदतपुरी का संस्थापक – गोपाल (पालवं"ा)
- विक्रमि"ाला का संस्थापक – धर्मपाल (पालवं"ा)
- गुप्तोत्तर काल में तांत्रिक संप्रदाय के प्रभाव में आकर बौद्ध धर्म के अंतर्गत मंत्रयान, वज्रयान, सहजयान, व कालचक्रयान अस्तित्व में आया जिससे धीरे–धीरे बौद्ध धर्म पतन की ओर अग्रसर हो गया।
- श्वेतांबर और दिगंबर जैन धर्म के दो संप्रदाय थे जिनका आविर्भाव चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में हुआ था।
- गुप्तोत्तर काल में जैन धर्म का प्रभाव–गुजरात, राजस्थान व दक्षिण भारत में कर्नाटक राज्य में सिमट कर रह गया।
- दक्षिण भारत में जैन धर्म को गंग राजाओं ने आश्रय प्रदान किया।

- इसके फलस्वरूप कर्नाटक में श्रवण बेलगोला प्रसिद्ध जैन तीर्थ बन गया और यह आज भी प्रसिद्ध हैं।
- यहाँ जैन मुनि गोमते"वर बाहुबली की 59 फीट ऊँची प्रतिमा है।
- गुप्तोत्तर काल में दे"ा के सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन में मंदिर का योगदान उल्लेखनीय रहा।
- 'बेलि' भूमि माप की इकाई थी। (चोल काल में)
- 'कलम' अनाजों के तोल की इकाई थी (चोल काल में)
- एक कलम तीन मन के बराबर होता था।
- गांव के पैदावार के राजकीय भाग जो मंदिर को प्राप्त होता था उसे मेलबार कहते थे।
- 'परिहार' का अर्थ था – देवदान भूमि की राज्यकरों से मुक्ति।
- नाडात्ची, उरात्बी तथा नाडुकावप्न इत्यादि कर जिले के शासन तथा चौकीदारी के लिए गांवों से वसूल किए जाते थे।
- सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से दक्षिण के मंदिरों की यह वि"ोषता थी कि वे ि"ाक्षा केन्द्र थे।
- गंगैकोण्ड चोलमंडप' राजेन्द्र चोल के समय में ब्राह्मणों के गांव एन्नारियम में विद्या मंदिर था।
- इस गांव को 'चतुर्वेदी मंगलम्' कहा गया है।
- विद्या मंदिर के सभी खर्च ग्राम सभा द्वारा की जाती थी।
- चोल काल में सोने के सिक्के को 'का"ा' कहा जाता था।
- गुप्तोत्तर कालीन भारतीय कला में वास्तु कला/स्थापत्य कला उच्च कोटि की थी।
- गुप्तोत्तर कालीन भारतीय स्थापत्य कला की मुख्य कृतियां मंदिर है।
- इस समय मंदिर निर्माण की मुख्यतः तीन शैलियां प्रचलित थी।
- ये शेलियां है – नागर, द्रविड़ और वेसर
- नागर शैली उत्तरी भारत में हिमालय से लेकर विध्य तक फैली थी।
- द्रविड़ शैली कृष्णा नदी के दक्षिण में कन्याकुमारी अंतरीय तथ अर्थात् आधुनिक तमिलनाडु प्रदे"ा में फैली थी।

- वेसर शैली विंध्य से कृष्णा के बीच जिसे दक्षिणावर्त भी कहा जाता है तक फैली हुई थी। इस शैली में नागर और द्रविड़ शैली के तत्व मिश्रित है।
- नागर शैली के मंदिर चतुष्कोण होते हैं।
- आधार से लेकर सिरे तक द्रविड़ शैली के मंदिरों का आकार अष्टभुज होता है।
- वेसर शैली के मंदिर अर्द्धगोलाकार होते हैं।
- चोलकालीन द्रविड़ शैली की वि"ोषता 'विमान शैली' है।
- पांड्यकालीन द्रविड़ शैली की वि"ोषता गोपुरम् है।
- गोपुरम् मंदिर के प्रवे"ाद्वार को कहते हैं।
- द्रविड़ शैली की शुरूआत करने वाले पल्लव शासक थे।
- पल्लवकालीन वास्तुकला की चार मुख्य शेलियां थी – महेन्द्रवर्धन शैली, मामल्ल शैली, राजसिंह शैली तथा नंदिवर्मन शैली।
- 'मंडप' तथा 'रथ' पल्लवकालीन वास्तुकला की वि"ोषता है।
- चोल काल में द्रविड़ शैली का विकास चरमोत्कर्ष पर था।
- रथ मंदिर (पुरी) लिंगराज का मंदिर (भुवने"वर) तथा खुजराहों के मंदिर नागर शैली के सर्वोत्कृष्ट मंदिर है।
- महाराष्ट्र के एलोरा राष्ट्रकूट वं"ा के शासन कृष्ण प्रथम द्वारा एक ही चट्टान को काटकर बनवाया गया कैला"ा नाथ मंदिर वेसर शैली का सर्वोत्तम उदाहरण है।

10.7. संकेत–सूचक (Key-Words)

- गुप्तोत्तर – गुप्त काल के बाद का समय। इसे पूर्व (Post Gupt Period) मध्य काल के नाम से भी जानते हैं।
- विकेंद्रीकरण (Decentralisation) – फैलाव, बांटना राजनीतिक क्षेत्र में शक्ति या सत्ता का केन्द्र एक व्यक्ति में निहित न होकर अनेक अंस्थाओं या व्यक्तियों में थोड़े–थोड़े अं"ाों में निहित होना।

- सामंतवाद (Feudalism) :- वह शासन प्रणाली जिसके अंतर्गत सांमतों या जमीदारों आदि को कृषि भूमि एवं किसानों से सम्बन्धित बहुत अधिक अधिकार प्राप्त होते थे और इसके बदले में वे राज्य को आर्थिक एवं सैन्य सहायता देते थे।
- सामंत (Feudal) - अधीनस्थ शासक।
- स्मृति (Smriti) - विधि व निषेध से संबंधित नियमों वाला ग्रंथ। अतः इन्हें धर्म"ास्त्र भी कहा जाता है।
- विधि (Legal) - करने योग्य।
- निषेध/अवैध (illegal) – न करने योग्य।
- पुराण (Puran) - प्राचीन आंख्यानों (उदाहरणों, दृष्टांतों) से युक्त ग्रंथ को पुराण कहते है। (संख्या – 18)
- निबंध (Essay) गद्य लेखन की एक विधा/तकनीक।
- अस्पृ"यता (Untouchablity)- छुआछुत की भावना
- टीकाकार (Tikakar)- किसी ग्रंथ का अर्थ लिखने वाला।
- जागीरदार (Grantee) - जागीर का स्वामी।
- जागीर (Estate) - पुरस्कार स्वरूप राजाओं–महाराजाओं द्वारा दी गई भूमि/ जमीन।
- अभिलेख (Abhikekh) - महत्वपूर्ण लेख, दस्तावेज, रिकार्ड। (ताम्रपत्र, पत्थर आदि पर खुदा हुआ लेख)
- कुतुबनुमा (Quora) - एक वि"ोष छोटी डिबिया के आकार का यंत्र जिससे दि"ा का ज्ञान होता है। इसके भीतर लोहे की एक सुई रहती है जो सदैव उत्तर दि"ा की ओर रहा करती है।
- मौलिकता (Originality) - स्वयं की कृति/स्व–रचित।
- तक्षण कला – काष्ठ कला/ लकड़ी के साथ कलाकारी।
- ललित कला (Fine Art) - सौंदर्य या साहित्य से व्यक्त होने वाली कलाएँ जिसकी सृष्टि मुख्यतः मनोविनोद के लिए हो। जैसे गीत, संगीत, नृत्य, नाट्य तथा विभिन्न प्रकार की चित्रकलाएँ।
- गर्भगृह – मंदिर का वह भाग जिसमें देवमूर्ति की स्थापना की जाती है।

- वास्तुकला/स्थापत्य कला (Architecture) – भवन निर्माण से संबंधित कला।

10.8. स्व–मूल्यांकन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT) :-

(क) वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions) :- चार विकल्पों में से एक सही उत्तर का चयन करें :– (इनके उत्तर दायीं ओर कोष्ठक में दिए हुए है)

1. किस प्रतिहार व"ा के शासक ने आदिवराह की उपाधि ग्रहण की?

(i) नागभट्ट द्वितीय (ii) वत्सराज (iii)

(iii) महिरभोज (iv) महेन्द्रपाल

2. गीत गोविन्द ग्रन्थ का लेखक जयदेव किस शासक का दरबारी कवि था ?

(i) लक्ष्मण सेन (ii) बल्लाल सेन (i)

(iii) सामंत सेन (iv) उपयुर्क्त में से कोई नहीं

3. सोमनाथ के मंदिर पर 1025 में महमूद गजनवी के आक्रमण के समय गुजरात का शासक कौन था ?

(i) भीमदेव प्रथम (ii) मूलराज द्वितीय (i)

(iii) भीम द्वितीय (iv) मूलराज प्रथम

4. परमारव"ाी शासक भोज परमार के बारे में क्या असत्य है ?

(i)इसने उज्जैन के स्थान पर धारा को अपनी राजधानी बनाया। (iv)

(ii) इसने भोजपुर नामक नगर एवं भोजसेन/भोजसर तालाब का निर्माण करवाया।

(iii) इसने समरांगणसूत्रधार सरस्वतीकंठाभरण, आयुर्वेदर्सवस्व राजमार्तण्ड, विद्याविनोद आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की जिसके कारण भोज को कविराज की उपाधि मिली।

(iv) इसने राष्ट्रकूट नरे"ा को परास्त किया।

5. गुप्तोत्तरकालीन भारतीय इतिहास में 750 से 1200 तक का समय मुख्यतः माना जाता है। ?

(i) संक्रमण काल (ii)

(ii) राजपूत काल

(iii) भारत पर तुर्की आक्रमण का काल

(iv) उपयुर्क्त सभी

6. कायस्थों का एक जाति के रूप में प्रथम उल्लेख कहां से मिलता है?

(i) याज्ञवल्कय स्मृति (ii) परा"ार स्मृति (iii)

(iii) औ"ानम् स्मृति (iv) स्कन्द पुराण

7. गुप्तोत्तरकालीन प्रसिद्ध बंदरगाह ताम्रलिप्ति किस तट पर स्थित था ?

(i) पूर्वी तट (ii) पा"चमी तट (i)

(iii) दक्षिणी तट (iv) दक्षिण–पा"चम तट

8. गुप्तोत्तर काल में कन्या विवाह की आयु थी ?

(i) 6–7 वर्ष (ii) 8–10 वर्ष (ii)

(iii) 12–13 वर्ष (iv) 16–17 वर्ष

9. गुप्तोत्तर काल में किस स्थान के वस्त्र 'बुकरम' विदे"ाों को निर्यात होते थे ?

(i) खंभात (ii) मध्य दे"ा (i)

(iii) भडोच (iv) मालवा

10. 'गोपुरम्' किस शासन वं"ा के वास्तु कला की वि"ोषता रही ?

(i) चोल (ii) पल्लव (iv)

(iii) चालुक्य (iv) पांडय

10.8. (ख) लघु उत्तरीय प्रश्न (short answer type Questions) :-

(1) सामंती व्यवस्था के प्रचलन से गुप्तोत्तरकालीन अर्थव्यवस्था में हुए परिवर्तनों का उल्लेख करें।

(Mention Changes in Economy of Post gupta Period due to prevailing of feudal system)

(2) गुप्तोत्तरकालीन भारत में कायस्थों का आविर्भाव एक महत्वपूर्ण सामाजिक घटना थी, कैसे वर्णन करें ?

(Describe How the Emergence of Kayasths was an important incident in Post gupta Period)

(3) संक्षिप्त नोट लिखें (Write short Notes) :-

(i) सहजयान (Sahajyan) (ii) द्रविड़ शैली (Dravir stayle) (iii) गोपुरम् (Gopuram)

(iv) देवदासी प्रथा (SDevdasi System) (v) पा"ुपत मत (PashuPat)

10.8. (ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long answer type Questions) :-

(1) गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला की विवेचना करें।

(Discuss Indian art of Post gupta Period)

(2) गुप्तोत्तरकालीन भारतीय समाज की वि"ोषताओं का वर्णन करें।

(Describe the Characteristics Indian Society of Post gupta Period)

(3) गुप्तोत्तरकालीन आर्थिक द"ा का वर्णन करें।

(Describe the Economic Conditions of Post gupta Period)

10.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

10.5 (क) का उत्तर :–

(1) पांड्य (2) द्रविड़ (3) राष्ट्रकूट (4) कपर्दक

(5) साक्त (6) बौद्ध धर्म (7) नागर (8) शैव

(9) भाग (10) दुकूल

10.5 (ख) का उत्तर :–

(1) सत्य (2) असत्य (3) असत्य (4) सत्य

(5) सत्य (6) सत्य (7) असत्य (8) सत्य

(9) असत्य (10) सत्य

10.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें / सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Readings) :-

(1) प्राचीन भारत का इतिहास – झा एवं श्रीमाली, 43 वां पुनमुर्दण – नवम्बर, 2018

(2) यूनीक सामान्य अध्ययन – प्रयाग पुस्तक भवन, 20–ए, युनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद – (211002)

(3) भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय आन्दोलन – दृष्टि पब्लिकेषन्स, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली – द्वितीय संस्करण : जून, 2018

(4) सामान्य अध्ययन – स्पेकट्रम पब्लिकेषन, अहीर नगर, दिल्ली

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	AUTHOR : MOHAN SINGH BALODA
LESSON NO. 11	VETTER :
बहमनी और विजयनगर साम्राज्य (Bahmani and vijaynagar kingdoms)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

11.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

11.2. परिचय **(Introduction)**

11.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

11.3.1. विजयनगर साम्राज्य (1336–1565) का उत्थान।

(Emergence of vijaynagar kingdoms)

11.3.2. बहमनी साम्राज्य (1346–1518 ई.) का उदय।

(Rise of Bahmani kingdom)

11.3.3. बहमनी साम्राज्य का पतन

(Downfall of Bahmani Kingdom)

11.3.4. विजयनगर–बहमनी के बीच संघर्ष।

(Struggle between Vijaynagar and Bahmani)

11.4. विषय वस्तु का पुनः प्रस्तुतीकरण **(Further Main body of the text)**

11.4.1 विजयनगर साम्राज्य : राज्य व्यवस्था व प्र"ाासन

(Polity and Administratation of Vijaynagar kingdom)

11.4.2. विजय नगर साम्राज्य की अर्थव्यवस्था।

(Economy of Vijaynagar kingdom)

11.4.3. विजय नगर साम्राज्य : सामाजिक द"ा

(Vijaynagar kingdom : social condition)

11.4.4. विजयनगर साम्राज्य का पतन। **(Downfall of vijaynagar empire)**

11.5. प्रगति समीक्षा **(Check your progress)**

11.6. सारांश **(Summary)**

11.7. संकेत–सूचक **(Key-Words)**

11.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा **(Self Assessment Test)(SAT)**

11.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर **(Answers to check your Progress)**

11.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Readings)

11.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives) :-** इस अध्याय के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी निम्न योग्यता को प्राप्त कर लेगें :–

(i) विजयनगर व बहमनी साम्राज्य की स्थापना व इनके उत्थान की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(ii) बहमनी साम्राज्य के पतन के कारणों को बता सकेंगे।

(iii) विजयनगर –बहमनी के बीच संघर्ष क्रम का वर्णन कर सकेंगे।

(iv) विजयनगर साम्राज्य के प्र"ासन व राज्य–व्यवस्था का विस्तार से व्याख्या कर सकेंगे।

(v) विजयनगर साम्राज्य के समाज पर पाठक आपस में चर्चा कर सकेंगे।

(vi) विजयनगर साम्राज्य के पतन के कारणों को गिना (Count) सकेंगे।

11.2. परिचय (Introduction) :- दक्षिण भारत में प्रांतीय राजवं"ाों के उदय के क्रम में दो तरह के स्वतंत्र राज्यों का उदय हुआ। इस क्रम में प्रथम चरण के अंतर्गत वे राज्य शामिल है जिनका उदय चालुक्य एवं चोल जैसे साम्राज्यों के पतन के फलस्वरूप हुआ। जब चालुक्य एवं चोल जैसे केन्द्रीय सत्ता कमजोर हुई तो इनके अधीनस्थ शासक अर्थात जो सामंत के रूप में कार्य कर रहे थे ने मौका पाकर अपने स्वतंत्र राज्य की घोषणा कर दी। इन राज्यों के अवशेष पर दक्षिण भारत में जिन चार स्वतंत्र राज्यों का उदय हुआ वे थे – देवगिरी के यादव, वारगंल के काकतीय, द्वार समुद्र के होयसल एवं मदुरई के पाड्ंय।

स्वतंत्र राज्यों की उदय के दूसरे चरण के अंतर्गत 1325–1350 ई. के बीच मुहम्मद बिन तुगलक की गलत नीतियों के कारण दिल्ली सल्तनत का विघटन होने लगा। केन्द्रीय सत्ता कमजोर होने लगी। लगातार अत्याचार बढ़ रहे थे। इससे दक्षिण भारत में निरंतर विद्रोह और अशांति का वातावरण बन रहा था। ऐसे में क्षेत्रीय राज्यों ने अपनी स्वतंत्र पहचान बनानी शुरू कर दी। इस समय दक्षिण में चार स्वतंत्र राज्यों –माबर, खानदेश बहमनी एवं विजयनगर का आविर्भाव हुआ। इनमें से बहमनी एवं विजयनगर अत्यंत प्रमुख राज्य थे। जिनका दक्षिण भारत के राज्यों में विशेष महत्व है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि बहमनी साम्राज्य की स्थापना मुहम्मद बिन तुगलक के काल में दक्षिण में निरंतर विद्रोह और अंशाति का परिणाम थी। मुहम्मद बिन तुगलक के शासनकाल में व्याप्त अत्याचारों के विद्रोहस्वरूप दक्षिण भारत में उसके एक अधिकारी जफर खां अराजकता की स्थिति का लाभ उठाकर विद्रोह कर दिया। जफर खां ने दिल्ली की शाही सेना को पराजित कर अलाउद्दीन बहमन शाह की पदवी धारण की और इस प्रकार एक स्वतंत्र बहमनी साम्राज्य की स्थापना हुई। बहमनी साम्राज्य की स्थापना 1346–47 ई. में हुई। इस दौरान उसने कोलगिरी, कल्याणी और बीदर को जीतकर अपने साम्राज्य का विस्तार किया। इसने गुलबर्गा को अपनी राजधानी बनाया। वारंगल के शासक को भी उसने अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया। बहमनशाह राज्य विस्तार के लिए उदार नीति अपनाते हुए अपने राज्य में जजिया कर की वसूली पर रोक लगा दी। बहमनशाह ने आर्थिक विकास की प्रक्रिया के अंतर्गत वाणिज्य एवं व्यापार को बढ़ावा दिया। बहमनी राजवंश में बहमनशाह के अतिरिक्त 13 अन्य सुल्तानों ने राज किया। बहमनी की प्रारंभिक राजधानी गुलबर्गो को कालातंर में स्थानांतरित कर बीदर में स्थापित कर दिया गया था। बहमनी साम्राज्य का अंतिम शासक शिहाबुद्दीन महमूद था जिसने 1518 ई. तक राज किया। इसकी मृत्यु के बाद बहमनी साम्राज्य 5

राज्यों–बीजापुर, अहमदनगर, बरार, गोलकुण्डा तथा बीदर में विभाजित हो गया। बहमनी राज्य की प्र"ासनिक व्यवस्था का मूल आधार निरकुं"ा राजतंत्र की व्यवस्था था। इस राज्य के अंतर्गत सुल्तान केन्द्रीय शासन के साथ–साथ न्याय विभाग व सैन्य विभाग का भी पदेन प्रधान होता था। बहमनी साम्राज्य के आरंभिक सुल्तानों ने इस्लामी ि"ाक्षा को प्रोत्साहन दिया। कालांतर में शासकों ने परिस्थितियों को समझते हुए इसमें सुधार किया और हिन्दुओं को भी महत्व देना आरंभ किया। बहमनी साम्राज्य के प्रारंभिक शासकों ने मुस्लिम स्थापत्य कला को महत्व दिया लेकिन 1397 ई. के बाद शासकों ने हिंदू–मुस्लिम मिश्रित स्थापत्य को प्रोत्साहन दिया। दक्षिण भारत में बहमनी साम्राज्य के समानांतर मुहम्मद बिन तुगलक के काल में ही स्थापित विजयनगर साम्राज्य का शासन भी चल रहा था। बहमनी साम्राज्य वाले निरंतर विजयनगर साम्राज्य के साथ संघर्षरत रहे। बहमनी और विजयनगर साम्राज्य का मध्य कालीन भारत के इतिहास में दिलचस्प इतिहास रहा है।

विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक हरिहर और बुक्का दोनों भाई वारंगल के काकतीयों के सामंत थे। तुगलकों ने 1323 ई. में वारंगल पर आक्रमण कर उसे अपने कब्जे में कर लिया। इस कारण दोनों भाई कांपिली में आकर बस गए। इन दोनों भाईयों ने मुहम्मद बिन तुगलक के एक विद्रोही को शरण दिया था जिससे क्रोधित होकर मुहम्मद बिन तुगलक कांपिली पर आक्रमण कर दिया और हरिहर तथा बुक्का को बंदी बनाकर दिल्ली ले जाया गया जहाँ इन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर सुल्तान के वि"वास पात्र बन गये। इसके बाद हरिहर और बुक्का को विद्रोहियों के दमन के लिए सल्तनत की सेना के साथ दक्षिण भारत भेजा गया। यहां इनका संपर्क गुरू विधारण्य से हुआ। इनके प्रभाव में आकर हरिहर और बुक्का ने दक्षिण भारत में फैली अराजकता और तुर्क सत्ता विरोधी लहर का फायदा उठाते हुए स्वतंत्र राज्य विजयनगर साम्राज्य की घोषणा कर दी। और इस प्रकार हरिहर और बुक्का ने अपने पिता की स्मृति में संगम वं"ा की नींव रखी। जिससे 1336 ई. में विजय नगर साम्राज्य की स्थापना हो गई जिसका प्रथम वं"ा संगम वं"ा था। विजयनगर साम्राज्य पर 4 राजवं"ाों संगम वं"ा, सालुव वं"ा, तुलुव वं"ा और अराविडु वं"ा ने 300 वर्षो से अधिक समय तक राज किया। विजयनगर के शासकों में कृष्णदेव राय जो तुलुव वं"ा से संबंधित था। इस साम्राज्य का सबसे प्रसिद्ध एवं शक्ति"ाली शासक था। उसने 1509 ई. से 1529 ई. तक शासन किया। कृष्णदेव राय ने अपने शासनकाल के दौरान न केवल विजयनगर साम्राज्य का विस्तार ही किया अपितु इसे अच्छी प्रकार से संगठित भी किया। इसके शासन काल में विजयनगर साम्राज्य अपनी उन्नति के ि"ाखर पर था। 1565 ई. में अहमनगर, बीजापुर, गोलकुंडा एवं बीदर की संयुक्त सेनाओं ने तालीकोटा अथवा राक्षसी तांगडी की लडाई में विजयनगर साम्राज्य की सेना को करारी पराजय दी। वास्तव में यह लड़ाई विजयनगर साम्राज्य के लिए बहुत घातक साबित हुई।

इसके बाद ही इस साम्राज्य के अंतिम वं"ा अराविडु ने जैसे–तैसे राज किया और अंततः 1674 ई. में इस महान साम्राज्य का अंत हो गया।

विजय नगर साम्राज्य के शासकों जिन्हें राय कहा जाता था ने एक कु"ाल शासन व्यवस्था की स्थापना की थी। इसका प्रमुख उद्दे"य प्रजा की भलाई करना था। विजयनगर साम्राज्य की राजधानियाँ भी बदलती रहीं जिनका क्रम है –

आनेगोंडी, विजयनगर (हम्पी), पेनुकोंडा और चंद्रगिरी। विजयनगर का वर्तमान नाम हम्पी है जो कर्नाटक में स्थित है। विजयनगर साम्राज्य के शासकों ने सुव्यवस्थित शासन प्रणाली के साथ–साथ समृद्ध वाणिज्य–व्यापार की नीति के द्वारा सुदृढ़ आर्थिक विकास की नीति को अपनाया तथा सामाजिक–सांस्कृतिक विकास को बढ़ावा दिया। कृषि इनकी अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार था। विजयनगर साम्राज्य के सबसे प्रतापी शासक कृष्णदेवराय के दरबार में ही तेलगु साहित्य के आठ विद्वान अष्टदिग्गज को आश्रय प्राप्त था। इस काल में क्षेत्रीय भाषा तेलुगू के साथ–साथ संस्कृत भाषा का भी उत्थान हुआ। कृष्णदेव राय ने एक से बढ़कर एक मन्दिर के निर्माण के द्वारा स्थापत्य कला के विकास को भी बढ़ावा दिया।

कृष्णदेवराय को उसकी सांस्कृतिक उपलब्धियों के कारण आंध्रभोज कहा जाता है। उसका काल तेलुगू साहित्य का कलासिकल युग माना जाता है। इस प्रकार स्वतंत्र प्रांतीय राज्य के विकास क्रम में विजयनगर साम्राज्य का दक्षिण भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा यही कारण है कि विजयनगर साम्राज्य की राजधानी हम्पी वि"व विरासत स्थल में शामिल है जिसके द"ान के लिए दे"ा–विदे"ा से कला प्रेमी आते है। यह भारत का महत्वपूर्ण विरासत स्थल है।

11.3.1. विजयनगर साम्राज्य (1336–1565) का उत्थान। (Emergence of vijaynagar kingdoms):- विजयनगर साम्राज्य की स्थापना हरिहर और बुक्का नामक दो भाईयों द्वारा अपने गुरू विधारण्य की सहायता से 1336 ई. में की गई थी। इस साम्राज्य के चार राजवं"ाों व उनके शासकों को निम्न रेखाचित्र द्वारा दिखा सकते है।

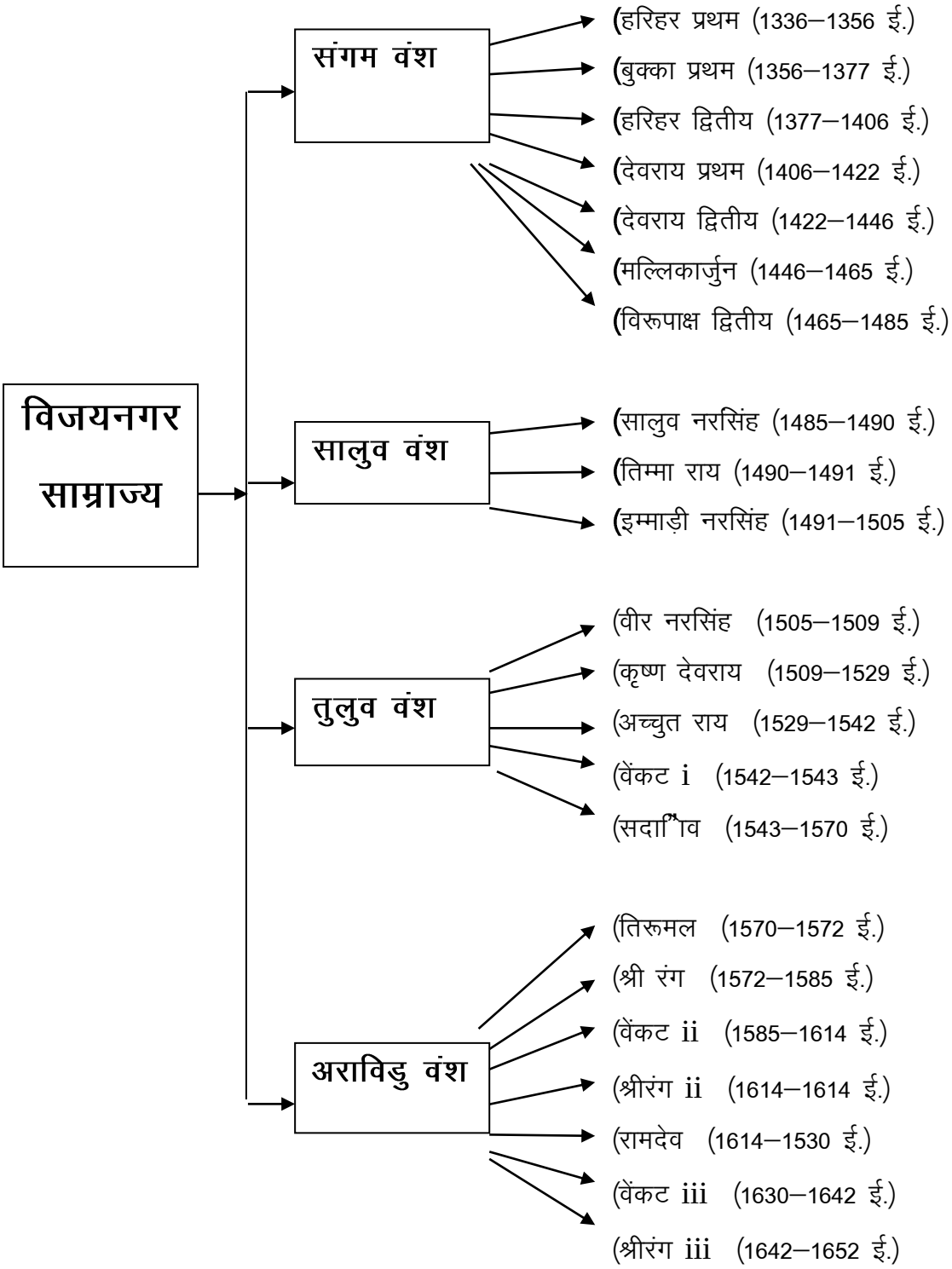

विजयनगर साम्राज्य के चार वंशों और उनके शासकों का वर्णन इस प्रकार है –

संगम राजवंश (1336–1485 ई.) :– इसके प्रमुख भासक –

(i) हरिहर प्रथम (1336–1356 ई.) :–अपने भाई बुक्का प्रथम की सहायता से हरिहर प्रथम ने विजयनगर साम्राज्य की स्थापना की थी। हरिहर प्रथम ने विजय एवं विस्तार की नीति के तहत 1346 ई. में होयसल तथा 1347 ई. में कदंबों के प्रदे"ाों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। 1352–53 ई. में इसने मदुरै के सुल्तान पर आक्रमण किया। हरिहर प्रथम के काल में ही विजयनगर बहमनी संघर्ष प्रारंभ हुआ, जो अगले दो सौ वर्षो तक चलता रहा। अपने शासन काल के सातवें वर्ष में वह अपनी राजधानी आनेगोंडी से विजयनगर (हम्पी) ले आया। इसने राजा या महाराजाधिराज की उपाधि धारण नहीं की। 1347 ई में बहमनी साम्राज्य की स्थापना के बाद विजयनगर साम्राज्य का विस्तार रूक गया। 1356 ई. में हरिहर प्रथम की मृत्यु के बाद बुक्का प्रथम अगला शासक हुआ।

(ii) बुक्का प्रथम (1356–1377 ई.) :–इसने वेदमार्ग प्रतिष्ठापक' की उपाधि धारण की तथा विजयनगर के उभरते हुये साम्राज्य को सुदृढ़ और विस्तृत किया। इसने मदुरै को विजयनगर साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। सर्वप्रथम बुक्का ने ही बहमनी और विजयनगर साम्राज्य के मध्य बने विवाद के कारण कृष्णा नदी को बहमनी तथा विजयनगर साम्राज्य के मध्य की सीमा माना। इसने अपनी वैदे"िक नीति का विस्तार करने के लिए एक दूतमंडल चीन भेजा। 1377 ई. में उसकी मृत्यु हो गई।

(iii) हरिहर द्वितीय (1377–1406 ई.) :–बुक्का प्रथम के बाद गद्दी पर बैठने वाला हरिहर द्वितीय ने विजयनगर साम्राज्य को संगठित करते हुये बहमनी शासक मुजाहिद"ाह के आक्रमण को विफल कर दिया। इसने कनारा मैसूर त्रिचिनापल्ली तथा काँची को जीत कर अपने राज्य में मिला लिया। इसने बहमनी से गोवा व बेलगांव को छीन लिया। साम्राज्य विस्तार की नीति के तहत श्री लंका पर भी आक्रमण किया। अपने पूर्ववर्ती शासकों के विपरीत इसने 'राजपरमे"वर' व 'महाराजाधिराज' जैसी उपाधियाँ धारण की। ऋग्वेद के प्रसिद्ध टीकाकार सायण इसके प्रधानमंत्री थे। इसके शासनकाल में ही विजयनगर साम्राज्य में व्यापार को बढ़ावा मिलने लगा। हरिहर द्वितीय ि"ाव के विरूपाक्ष रूप का उपासक था किंतु अन्य धर्मो के प्रति सहिष्णु था। 1406 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। इसकी मुत्यु के बाद उसके पुत्रों में सत्ता के लिये संघर्ष छिड़ गया जिसमें अंततः देवराय प्रथम सफल रहा।

(iv) देवराय प्रथम (1406–1422 ई.) :– देवराय प्रथम अपने शासन काल में तुंगभद्रा– दोआब में वर्चस्व के लिये बहमनी सुल्तान फिरोज"ाह के आक्रमण का सामना करना पड़ा। इसके अतिरिक्त देवराय प्रथम को आंतरिक विद्रोह का भी सामना करना पड़ा। इसके अतिरिक्त देवराय प्रथम को आंतरिक विद्रोह का भी सामना करना पड़ा, परन्तु अंततः वह सफल रहा। देवराय प्रथम ने राज्य में सिंचाई की सुविधा के लिए तुंगभद्रा नदी पर बाँध बनाकर नहरें निकाली। उसके शासनकाल में ही इटली का यात्री निकोलो काण्टी 1420 ई. में विजयनगर की यात्रा पर आया। 1422 ई. में देवराय प्रथम की मृत्यु हो गई। देवराय प्रथम की मृत्यु के बाद वीर विजय और रामचंद्र थोड़े समय के लिये शासक बने। इसके बाद देवराय द्वितीय शासक बना।

(v) देवराय द्वितीय (1422–1446 ई.) :– देवराय द्वितीय को संगम वं"ा सबसे महानतम शासक माना जाता है। इसने अनेक उपाधियाँ जैसे – गजबटेकर (हाथियों का ि"ाकारी) तथा इम्मादि देवराय आदि धारण की। इसके दरबार में 'हरविलासम्' पुस्तक के लेखक तेलुगू विद्वान श्री नाथ रहते थे जिनकी उपाधि कवि सार्वभौम (कवियों का राजा) था। देवराय द्वितीय ने सेना तथा प्र"ाासन का पुनर्गठन किया और भारी संख्या में मुसलमानों को अपनी सेना में शामिल किया। इसने कोदाविदु साम्राज्य को अधिगृहीत किया, उडीसा के गजपतियों के साम्राज्य पर आक्रमण किया तथा केरल के कुछ छोटे शासकों का दमन किया। इसने कृष्णा–तुंगभद्रा दोआब का क्षेत्र भी जीता।

फारसी (ईरानी) यात्री अब्दुर्रज्जाक ने इसी के शासनकाल में विजयनगर की यात्रा की थी। उसे खुरासान के सुल्तान मिर्जा शाहरूख ने अपने दूत के रूप में भेजा था। अब्दुर्रज्जाक विजयनगर को संसार के देखे और सुने नगरों में सबसे भव्य मानता है। 1446 ई. में देवराय की मृत्यु के बाद संगम व"ा का पतन शुरू हो गया। देवराय द्वितीय का उत्तराधिकारी मल्लिकार्जुन था।

(vi) मल्लिकार्जुन (1446–1465 ई.) :– मल्लिकार्जुन गद्दी पर बैठा जिसे प्रौढ देवराय भी कहा जाता है। इसके काल में बहमनी के शासक अलाउद्दीन द्वितीय एवं उड़ीसा के कपिले"वर गजपति ने विजयनगर पर आक्रमण कर दिया। इनका युद्ध 1463 ई. तक चलता रहा। 1465 ई. में मल्लिकार्जुन की मृत्यु के बाद विरूपाक्ष द्वितीय गद्दी पर बैठा।

(vii) विरूपाक्ष द्वितीय (1465–1485 ई.) :– संगम वंष का अन्तिम शासक था। इसके समय में विजयनगर राज्य में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई जिसका लाभ उठाकर चंद्रगिरी के गर्वनर सालुव नरसिंह ने एक नये व"ा सालुव व"ा की स्थापना की।

- **सालुव वंश (1485–1505 ई.)** :–

  सालुव नरसिंह (1485–1490 ई.) :– इस व"ा का संस्थापक था वह योग्य एवं प्रतिभा सम्पन्न शासक था। उसने विजयनगर के वे क्षेत्र जो संगम व"ा के समय बहमनी और उड़ीसा द्वारा हड़प लिये गए थे को पुनः प्राप्त कर लिया। उसने अरब से होने वाले घोड़े के व्यापार को पुनः प्रारंभ किया। 1490 ई. में सालुव नरसिंह की मृत्यु हो गई। सालुव नरसिंह की मृत्यु के बाद उसका अल्प वचस्क पुत्र इम्माड़ि नरसिंह (1490–1505ई.) शासक बना। जिसका सरंक्षक नरसा नायक था। इम्माड़ि नरसिंह को नरसा ने पेनुकोंडा के किले में कैद कर दिया और सत्ता की जिम्मेदारी अपने हाथों में ले लिया। अपने 12–13 वर्ष के शासन काल में नायक ने रायचूर दोआब के अनेक किलों पर अधिकार कर लिया। इसके अतिरिक्त नरसा नायक बीजापुर, बीदर, मदुरा, श्रीरंगपट्टम के शासकों के विरूद्ध किये गये अभियान में सफल रहा। उसने बीजापुर के शासक यूसुफ आदिल खान एवं उड़ीसा के शासक प्रताप रूद्रदेव गजपति को भी परास्त किया। नरसा नायक ने चोल–पाण्डय एवं चेर शासकों को भी विजयनगर की अधीनता स्वीकार करने के लिए विव"ा किया। 1505 ई. में नरसा नायक के पुत्र वीर नरसिंह ने इम्माड़ि नरसिंह की हत्या करके सालुव व"ा का अंत कर दिया और एक नवीन व"ा का तुलुव व"ा की स्थापना की।

- **तुलुव वंश (1505–1565 ई.)** :– 1505 ई. में वीर नरसिंह तुलुव व"ा का प्रथम शासक हुआ। उसका पूरा शासनकाल आन्तरिक विद्रोह एवं बाह्य आक्रमणों से प्रभावित था। 1509 ई. में नरसिंह की मृत्यु हो गई। यद्यपि उसका शासनकाल अल्प रहा, परंतु फिर भी उसने सेना को सुसंगठित किया, अपने नागरिकों को युद्धप्रिय बनाया। पुर्तगाली गर्वनर अलमीडा द्वारा लाये गये सभी घोड़ों को खरीदने के लिए उसने एक समझौता किया। उसने विवाह कर को हटाकर एक उदार नीति को आरंभ किया। पुर्तगाली यात्री नूनिज द्वारा वीर नरसिंह का वर्णन एक धार्मिक राजा के रूप में किया गया है, जो पवित्र स्थानों पर दान किया करता था।

  1509 ई. में उसकी मृत्यु के बाद उसका सौतेला भाई कृष्णदेव राय (1509–1529) शासक बना जो तुलुववं"ा का ही नहीं बल्कि विजयनगर साम्राज्य का महानतम और सबसे प्रसिद्ध शासक था।

- **कृष्णदेव राय (1509–1529 ई.)** :– विजयनगर के महानतम शासक कृष्णदेव राय 1509 ई. में गद्दी पर बैठा। उसके शासन काल में विजयनगर ऐश्वर्य एवं शक्ति के दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि सामाजिक

एवं सांस्कृतिक विकास के दृष्टिकोण से भी चरमोत्कर्ष पर था। कृष्णदेव राय ने अपने शासन के प्रारंभ में ही सफल सैनिक अभियान के द्वारा 1509–10 ई. में बीदर के सुल्तान महमूदशाह को अदोनी के समीप हराया। 1510 ई. में उसने उम्मूतूर के विद्रोही सामन्त को पराजित किया। 1512 ई. में कृष्णदेव राय ने बीजापुर के शासक यूसुफ आदिलशाह को परास्त कर रायचूर दोआब पर अधिकार कर लिया। इसके बाद गुलबर्गा के किले को अपने कब्जे में कर लिया। कृष्णदेव राय ने बीदर पर फिर से आक्रमण कर वहाँ के बहमनी सुल्तान महमूदशाह को बरीद के कब्जे से छुड़ा कर पुनः सिंहासन पर बैठाया और साथ ही 'यवन राज स्थापनाचार्य' की उपाधि धारण किया।

1513–18 ई. के बीच कृष्णदेवराय ने उड़ीसा के गजपति शासक के विरूद्ध कई बार युद्ध अभियान किये। उड़ीसा शासक प्रताप रूद्रदेव ने कृष्णदेवराय से संधि कर उससे अपनी पुत्री का विवाह कराया। 1520 ई. में कृष्णदेवराय ने गोलकुंडा को हराकर बारंगल पर अधिकार कर लिया। अतः मात्र दस वर्षो में कृष्णदेवराय ने अपने सभी विरोधियों को पराजित कर दक्षिण भारत में स्वयं एवं विजयनगर की प्रभुसत्ता को सिद्ध भी कर दिया।

कृष्णदेवराय के पुर्तगाली व्यापारियों से संबंध मैत्रीपूर्ण थे। इन संबंधों से मिलने वाली सुविधाओं एवं लाभों के द्वारा पुर्तगालियों ने पश्चिमी समुद्र में अपनी नौसेना का विकास भी कर लिया था। कृष्णदेवराय के समय में पुर्तगाली यात्री डोमिगोस पायस विजयनगर की यात्रा पर आया। बारबोसा ने भी समकालीन सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का बहुत सुन्दर वर्णन किया है।

कृष्णदेवराय तेलुगू साहित्य का महान विद्वान था। उसने तेलुगू के प्रसिद्ध ग्रंथ 'अमुक्त माल्यद् की रचना की। उसके दरबार में तेलुगू साहित्य के 8 सर्वश्रेष्ठ कवि रहते थे, जिन्हें अष्टदिग्गज कहा जाता था। अष्टदिग्गज में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अल्लसानि पेद्दल को तेलुगू कविता के पितामह की उपाधि प्रदान की गई। कृष्णदेवराय ने संस्कृत भाषा में एक नाटक जाम्बुवती कल्याणम् की रचना की। साहित्य के क्षेत्र में कृष्णदेवराय के काल को तेलुगू साहित्य का 'क्लासिकी युग' कहा गया। कृष्णदेव राय ने आन्ध्र भोज, अभिनव भोज, आन्ध्र पितामह आदि उपाधि धारण की। कृष्णदेवराय के काल में संगीत पर लक्ष्मीनारायण के संगीत–सर्वोदय के अतिरिक्त संगीतसार ग्रंथ भी लिखा गया था।

प्रशासक के रूप में कृष्णदेव राय की धार्मिक सहिष्णुता की प्रंशसा पुर्तगाली यात्री बारबोसा ने की है। स्वयं वैष्णव धर्म के प्रति आस्था रखते हुए भी उसने सभी धर्मो का अपने राज्य में आदर किया। कृष्णदेवराय की सांस्कृतिक गतिविधियों ने उसे समस्त भारत के मध्य युगीन इतिहास में विशेष स्थान दिया है। चोलों के स्थापत्य कला में अपनी सोच से नवीनता का समावेश कर कृष्णदेवराय ने एक सांस्कृतिक आदर्श प्रस्तुत किया। कृष्णदेवराय की सांस्कृतिक अभिरूचियां स्थापत्य और मूर्तिकला के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है।

इस समय चोल स्थापत्य की पृष्ठभूमि में नवीन विशेषताएं – अलंकार, स्तंभों की विविधता, कल्याणमंडप आदि जोडे गये। स्थापत्य कला के क्षेत्र में कृष्णदेवराय ने अपनी माता की स्मृति में 'नागलपुर' नामक नये नगर की स्थापना की। इस नगर में जलापूर्ति हेतु नए जलाशय की व्यवस्था की गई।

कृष्णदेवराय ने अपनी राजधानी हंपी में हजारा एवं विटठलस्वामी नामक मंदिर का निर्माण करवाया। कृष्णदेवराय के समय में मूर्तियां धातु और पत्थर दोनों से बनाई गई।

इस प्रकार कृष्णदेवराय के समय में सांस्कृतिक विकास उत्कर्ष पर था। सांस्कृतिक विकास के साथ–साथ सुव्यवस्थित प्रशानिक नीति के द्वारा उसके आर्थिक एवं सामाजिक विकास भी उल्लेखनीय रहे। इसके काल में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि ही था। कृष्णदेवराय ने अपने राज्य में कृषि योग्य भूमि का विस्तार किया और सिंचाई के उचित प्रबंध हेतु तालाबों एवं नहरों का निर्माण करवाये। जिससे साम्राज्य के राजस्व में भी वृद्धि हुई।

सामाजिक विकास के अंतर्गत उसने विवाह कर जैसे अलोकप्रिय करों को समाप्त करके अपनी प्रजा को करों से राहत दी। इस प्रकार उपयुर्क्त विवरण से यह स्पष्ट है कि सफल प्रशासक होने के साथ–साथ वह महान्, विद्वान, विद्याप्रेमी एवं कला का संरक्षक भी था। इसीलिए बाबर ने अपनी आत्मकथा 'तुजूके बावरी' में कृष्णदेवराय को भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक बताया है। विजयनगर साम्राज्य के इस महान शासक की 1529 ई. में मृत्यु हो गई।

कृष्णदेवराय ने अपने जीवन काल में ही अपने चचेरे भाई अच्युत को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया था क्योंकि उसका अल्पव्यस्क पुत्र सिंहासन के योग्य नहीं था। अतः कृष्णदेव राय के बाद अच्युतदेव राय (1529–42 ई.) तुलुव वंश का शासक बना।

- **अच्युतदेव राय (1529–1542 ई.)** :– अच्युतदेव राय ने अपने शासन काल में बीजापुर के शासक इस्माइल आदिल खान से रायचूर एवं मुद्गल के किले छीन लिया। उसने गजपति शासक के आक्रमण को असफल किया और साथ ही 1530 ई. में गोलकुण्डा के सुल्तान को पराजित किया। 1542 ई. में उसकी मृत्यु के बाद अच्युत के साले सलक राज तिरूमल ने अच्युत के अल्पायु पुत्र वेंकट प्रथम को सिंहासन पर बैठाया, उसका शासन काल मात्र 6 महीने तक रहा। इसके बाद विजयनगर की सत्ता अच्युत के भतीजे सदाशिव के हाथों में आ गई।
- **सदाशिव (1542–1570 ई.)** :– यह नाममात्र का ही शासक था। उसके शासन काल में वास्तविक सत्ता रामराय के हाथ में रही। रामराय ने विजयनगर की परंपरा के विपरीत पड़ोसी मुस्लिम राज्यों की आन्तरिक राजनीति में हस्तक्षेप किया जिसका परणिाम अंततः विजयनगर साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुआ।

परन्तु रामराय जो एक महान राजनीतिज्ञ एवं कुशल सेनापति था ने अपनी कुशल नीति के द्वारा 1560 ई. तक दक्षिण भारत में विजयनगर की स्थिति को उत्कर्ष पर पहुँचा दिया। अहमदनगर गोलकुंडा और बीदर तीनों की शक्ति को कुचल दिया गया था और बीजापुर का अस्तित्व विजयनगर की दया पर आश्रित था। विजयनगर की इस बढ़ती हुई शक्ति से दक्षिणी राज्यों अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुण्डा और बीदर ने आपसी शत्रुता का भूलाकर विजयनगर के विरूद्ध एक संघ का गठन किया। इस महासंघ के नेता अली आदिलशाह ने रामराय से रायचूर एवं मुद्गल के किलों को वापस मांगा। रामराय द्वारा मांग ठुकराये जाने पर दक्षिण में चारों राज्यों की संयुक्त सेना ने राक्ष्सी–तंगडी अथवा तालीकोटा के युद्ध में 1565 ई. में रामराय को परास्त किया और पकड़कर उसकी हत्या कर दी। इस युद्ध को बन्नीहट्टी के युद्ध के नाम से भी जाना जाता है। यद्यपि इस युद्ध के बाद विजयनगर साम्राज्य लगभग 100 वर्षो तक जैसे–तैसे चलता रहा तथापि उसके वैभव और शक्ति में कमी आ गई।

इस युद्ध के बाद तिरूमल के सहयोग से सदाशिव ने पेनुकोंडा को अपनी राजधानी बनाकर शासन करना प्रारंभ किया। बाद में तिरूमल ने सदाशिव को अपदस्थ कर विजयनगर के चौथे राजवंश अरावीडु वंश की स्थापना की।

- **अरावीडु वंश (1570–1650 ई.)** :– अराविडु वंश की स्थापना **1570 ई.** के लगभग तिरूमल ने पेनुकोंडा में की थी। यह दक्षिण भारत के महान् विजयनगर साम्राज्य का चौथा ओर अंतिम वंश था।

  इस वंश के शासक वेंकट द्वितीय ने चंद्रगिरी को अपनी राजधानी बनाई। इस वंश का अंतिम शासक श्रीरंग तृतीय था जिसके राज्य में तंजौर, मैसूर, मदुरा आदि स्वतंत्र राज्यों का निर्माण हुआ और विजयनगर साम्राज्य का पतन हो गया।

11.3.2. बहमनी साम्राज्य (1346–1518 ई.) का उदय (Rise of Bahmani kingdom) :-मुहम्मद बिन तुगलक के शासनकाल में व्याप्त अत्याचारों के विद्रोहस्वरूप दक्षिण भारत में सम्राट द्वारा नियुक्त 'अमीर–ए–सादा जफर खाँ ने सल्तनत की सेना को पराजित कर अलाउद्दीन हसन बहमनशाह की पदवी धारण कर एक स्वतंत्र राज्य बहमनी साम्राज्य की स्थापना की। इस प्रकार बहमनी राजवंश की स्थापना 1346–47 ई. में हुई जिसका संस्थापक व प्रथम शासक बहमनशाह था। बहमनशाह के अतिरिक्त 13 अन्य सुल्तानों/शासकों ने बहमनी साम्राज्य के शासक के रूप में राज्य किया। इन सुल्तानों/शासकों को निम्न रेखाचित्र के द्वारा दर्शाया जा सकता है।

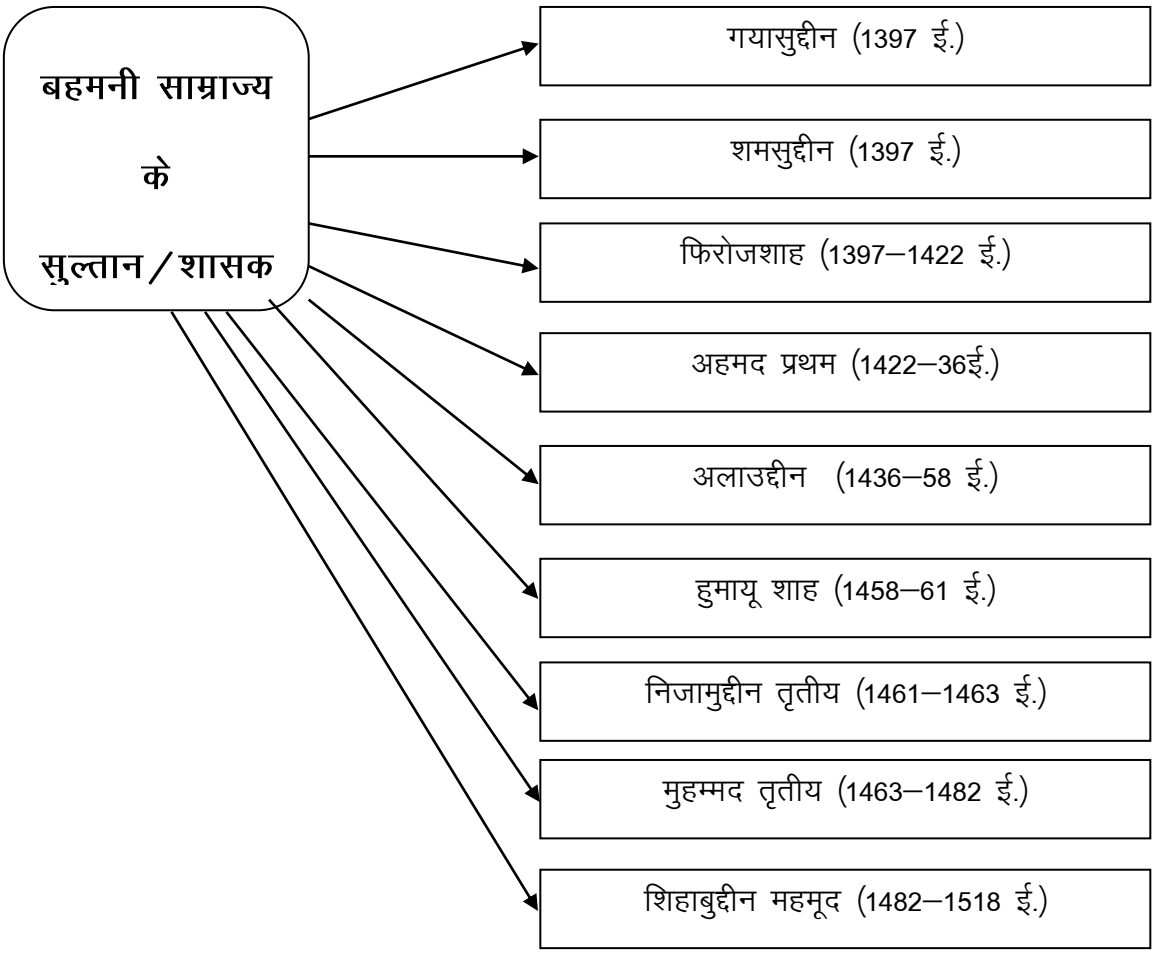

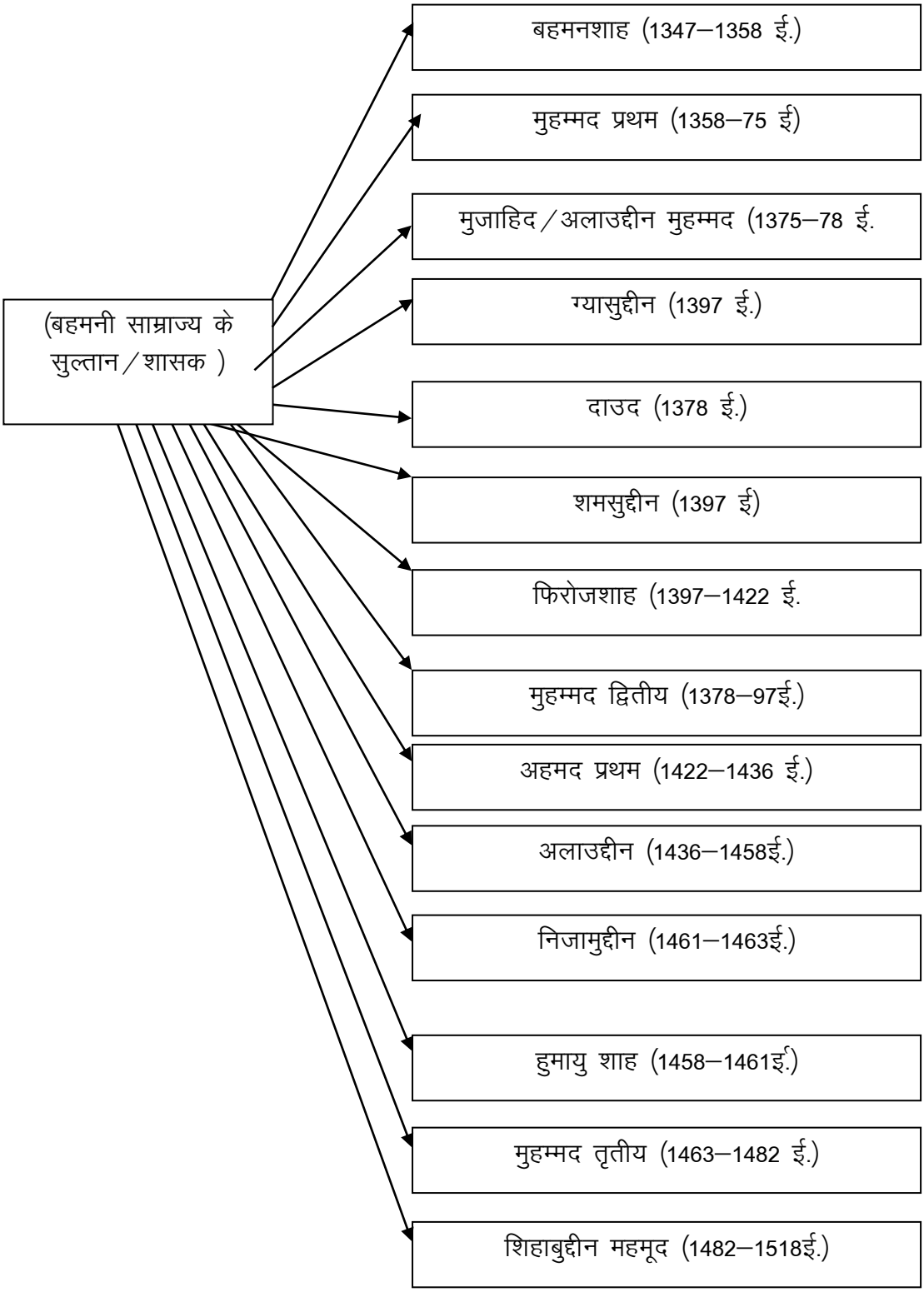
(बहमनी साम्राज्य के सुल्तान/शासक)
बहमनशाह (1347–1358 ई.)
मुहम्मद प्रथम (1358–75 ई)
मुजाहिद/अलाउद्दीन मुहम्मद (1375–78 ई.
ग्यासुद्दीन (1397 ई.)
दाउद (1378 ई.)
शमसुद्दीन (1397 ई)
फिरोजशाह (1397–1422 ई.
मुहम्मद द्वितीय (1378–97ई.)
अहमद प्रथम (1422–1436 ई.)
अलाउद्दीन (1436–1458ई.)
निजामुद्दीन (1461–1463ई.)
हुमायु शाह (1458–1461ई.)
मुहम्मद तृतीय (1463–1482 ई.)
शिहाबुद्दीन महमूद (1482–1518ई.)

- **बहमनी सुलतान और उनका शासन**
- **अलाउद्दीन हसन बहमन शाह (1347–1358 ई)** :– बहमनशाह ने 1347 ई से 1358 ई. तक शासन किया। सिहांसन पर बैठने के पश्चात् विस्तावरदारी नीति अपनाते हुए उसने कंधार, कोटगिरी, कल्याणी और बीदर को जीतकर अपने साम्राज्य मे ंमिला लिया। अपने पराक्रम से उसने वारंगल के शासक को भी अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया। इसने गुलबर्गा को अपनी राजधानी बनाया तथा इसका नाम अहसानाबाद रखा। अलाउद्दीन ने अपने शासन के अंतिम दिनों में दाबुल पर अधिकार कर लिया।

  इस प्रकार दाबुल पश्चिमी समुद्र तट पर बहमनी साम्राज्य का महत्वपूर्ण बंदरगाह बन गया जिससे विदेशी व्यापार में उसे काफी सहायता मिलती थी। उसने हिन्दूओं के प्रति उदार नीति अपनाते हुये अपने राज्य में जजिया कर पर प्रतिबंध लगा दिया। 1358 ई. में इसकी मृत्यु हो गई।

  - **मुहम्मद शाह प्रथम/मुहम्मद प्रथम (1358–1375 ई)** :– अलाउद्दीन हसन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र मुहम्मद शाह प्रथम शासक बना। उसने तेलंगाना के शासक को पराजित किया तथा गोलकुण्डा को भी जीत लिया। मुहम्मद शाह प्रथम का सम्पूर्ण शासनकाल विजयगनर और वारंगल से युद्ध एवं विजय से संबंधित रहा। इसने अपने शासनकाल में प्रशासनिक व्यवस्था को सुसंगठित करते हुये अपने राज्य को चार अतराफों (प्रांतों) में विभक्त किया और वहां तरफदारों की नियुक्ति की जो प्रांतीय शासन के प्रति उत्तरदायी थे। उसने अपने राज्य में समस्त सार्वजनिक मद्य गृह को बंद कर दिये और अपने कठोर प्रबंधन से राज्य की अनुशासनहीनता को समाप्त कर दिया। उसके काल में चार प्रांत या अतराफ थे –गुलबर्गा, दौलताबाद, बरार, बीदर। इसी के काल में पहली बार बारूद का प्रयोग हुआ जिससे सैन्य प्रणाली व रक्षा संगठन में एक नवीन क्रांति आयी। 1375 ई. में मुहम्मदशाह प्रथम की मृत्यु हो गई।
  - **मुहम्मद शाह प्रथम के उत्तराधिकारी** :– 1375 ई. में मुहम्मदशाह प्रथम की मृत्यु के बाद अगले 22 वर्षो में बहमनी साम्राज्य के अंतर्गत 5 सुल्तानों ने शासन किये। अलाउद्दीन मुहम्मद (1375–78), दाउद (1378), मुहम्मदशाह द्वितीय (1378–97), गयासुद्दीन (1397) और सम्सुद्दीन दाउद (1397) क्रमशः गद्दी पर बैठे। परंतु बहमनी साम्राज्य में बने इन शासकों का शासन कोई विशेष महत्व नहीं रखता है।
  - **ताजुद्दीन फिरोजशाह(1397–1422 ई.)** :– यह बहमनी वंश का महत्वपूर्ण शासक था। इसने 1397 से 1422 ई. तक राज किया। फिरोजशाह ने खेरला के शासक नरसिंह राज को हराकर बरार का प्रांत जीता। इसका विजयनगर साम्राज्य के देवराय प्रथम से युद्ध हुआ था जिसमें देवराय

पराजित हो गया तो देवराय ने अपनी पुत्री का विवाह ताजुद्दीन के साथ कर दिया। इस युद्ध को सोनार की बेटी का युद्ध कहा जाता है। फिरोजशाह बहमनी वंश का एक योग्य, विद्वान व कला प्रेमी शासक था। उसे अरबी, फारसी और तुर्की के अलावा तेलुगू, मराठी एवं मलयालम भाषा का अच्छा ज्ञान था। दक्षिण भारत में भीमानदी के तट पर एक नवीन नगर फिरोजाबाद का निर्माण उसी ने कराया था। उसका अंतिम समय काफी कष्टप्रद रहा। उसके भाई अहमद 1422 ई. में उसे गद्दी से हटा दिया।

- **शिहाबुद्दीन अहमद प्रथम/अहमदशाहवली (1422–1436 ई.)** :– इसने अपनी राजधानी गुलबर्गा से स्थानांतरित कर बीदर को बनाया। उसने बीदर का नया नाम मुहम्मदाबाद रखा। इसने अपने सैनिक अभियान के अंतर्गत विजयनगर, वारंगल एवं मालवा पर सफल आक्रमण किया। विनम्र एवं उदार शासक के रूप में अहमदशाह का शासनकाल न्याय तथा धर्मनिष्ठता के लिए प्रसिद्ध था। अतः उसे इतिहास में अहमदशाहवली या संत अहमद भी कहा जाता है।
- **अलाउद्दीन अहमद द्वितीय (1436–1458 ई.)** :– यह अपने पिता की तरह योग्य एवं विद्वान शासक था। इसका संपूर्ण शासनकाल तेलंगाना, गुजरात, खानदेश, विजयनगर, मालवा और उड़ीसा के साथ युद्ध में व्यतीत हुआ। इसी के काल में महमूद गवाँ को राज्य की सेवा में लिया गया। महमूद गवाँ को नलगोंडा के विद्रोह का दमन करने के लिए नियुक्त किया गया था। 1458 ई. में इसकी मृत्यु हो गई। अहमद द्वितीय ने अपने जीवनकाल में ही अपने सबसे बड़े पुत्र हुमायूँ को अपना उत्तराधिकारी नामजद (मनोनित) किया था।
- **हुमायूँशाह (1458–1461 ई.)** :– अलाउद्दीन द्वितीय के बाद उसका पुत्र हुमायूँ गद्दी पर बैठा। सत्ता पर बैठते ही उसने महमूद गवाँ को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। इसके शासनकाल की समस्त सफलताओं का श्रेय महमूद गवाँ को है और इन सफलताओं ने उसे इतिहास में प्रसिद्ध होने का अवसर दिया।

  हुमायूँ को उसके क्रूर स्वाभाव के कारण जालिम कहा जाता था। इसे दक्कन का नीरो भी कहा गया।

हुमायूँ की मृत्यु के समय उसके पुत्र निजामुद्दीन की आयु केवल आठ वर्ष की थी। इस कारण से हुमायूँ ने शासनव्यवस्था को चलाने के लिए अपने जीवन काल में ही एक प्रशासनिक परषिद् की स्थापना की थी। इसमें राजमाता और महमूद गवाँ सहित चार सदस्य थे।

अतः हुमायूँ की मृत्यु के बाद 1461ई. में निजामुद्दीन को गद्दी पर बैठाकर राजमाता मकदूमे में जहाँ ने सत्ता की बागडोर अपने हाथ में रखी। सम्पूर्ण सत्ता के प्रबंधन की जिम्मेदारी महमूद गवाँ सँभाल रहा

था। इसके काल में प्रशासनिक परिषद् की उदारवादी एवं समझौतावादी नीति का लाभ उठाकर उड़ीसा के गजपति शासक व मालवा के खलजी शासक ने बहमनी साम्राज्य पर आक्रमण कर दिया। परंतु महमूद गवाँ ने अपनी कूटनीति के द्वारा परिस्थिति को बहमनी साम्राज्य के पक्ष में कर लिया।

अचानक 1463 ई. में अल्पायु में ही सुल्तान निजामशाह की मृत्यु हो गई।

- **सुल्तान शम्सुद्दीन मुहम्मद तृतीय (1463–1482 ई.)** :– निजामुद्दीन का अनुज मुहम्मद तृतीय 9 वर्ष की अवस्था में सिहांसन पर बैठा। उसके शासनकाल में महमूद गवाँ का व्यक्तित्व प्रभावशाली ढंग से सामने आया। उसे 'ख्वाजा जहाँ की उपाधि से नवाजा गया और प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। बहमनी वंश का आगे का 20 वर्ष का इतिहास महमूद गवाँ के चारों तरफ घूमता रहा।

उसने बहमनी साम्राज्य का विस्तार कोरोमंडल से अरब सागर के तट तक किया, जिनसे उसके राज्य की सीमा उत्तर में उड़ीसा की सीमा एवं दक्षिण में कांची तक फैल गई। महमूद गवाँ ने मालवा, संगमेश्वर, कोंकण एवं गोवा पर सफल सैनिक अभियान किया। गोवा पर आधिपत्य, जो विजयनगर साम्राज्य का सर्वाधिक उत्तम बंदरगाह था, को महमूद गवाँ ने अपनी सर्वोत्कृष्ट सफलता कहा। विजयनगर के भेल्लार एवं कांची प्रदेशों पर आक्रमण महमूद गवाँ का अन्तिम सैनिक अभियान था। 1482 ई. में दक्खनियों ने षड्यंत्र द्वारा सुल्तान शम्सुद्दीन मुहम्मद को भड़का कर महमूद गवाँ की हत्या करवा दी। महमूद गवाँ ने नये जीते गये प्रदेशों के साथ बहमनी साम्राज्य को 8 प्रान्तों में विभाजित किया। उसने भूमि की नाप जोख गांव की सीमाओं का निर्धारण एवं लगान के निर्धारण के लिए जाँच का आदेश दिया।

महमूद गवाँ एक पराक्रमी योद्धा के साथ–साथ विद्वान एवं विद्वानों का सरंक्षक था। वह बड़ा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सुरूचि–संपन्न व्यक्ति था। उसने बीदर में एक महाविद्यालय की भी स्थापना की। उसने अपनी राजनीतिक गतिविधियों को केवल बहमनी साम्राज्य तक ही सीमित नहीं रखा, वरन् भारत और उसके बाहर ईरान, ईराक और मिश्र व टर्की के सुल्तानों के साथ पत्र–व्यवहार किया। 'रियाजुल–इन्शा' के नाम से महमूद के पत्रों को संग्रह किया गया।

महमूद गवाँ की मृत्यु के बाद 22 मार्च 1482 को सुल्तान शम्सुद्दीन मुहम्मद तृतीय की भी मृत्यु हो गई। इसके बाद शिहाबुद्दीन महमूद/महमूदशाह (1482–1518ई.) बहमनी का शासक बना। वह एक अयोग्य शासक था। उसके समय में बहमनी राज्य राजधानी के आस–पास ही सिमट कर रह गया। महमूदशाह एवं उसके शेष उत्तराधिकारी दक्कन की लोमड़ी कहे जाने वाले तुर्क सरदार 'बरीद–उल–मुमलिक' के कठपुतली शासक बन कर रह गये। अर्थात महमूदशाह व इसके बाद के अन्य बहमनी शासक नाम मात्र के शासक रह गये जिनका इतिहास में कोई महत्व नहीं है।

अतः बहमनी वंश का अंतिम महत्वपूर्ण शासक मुहम्मद तृतीय की मृत्यु के बाद अंततः दो–तीन दशकों के बीच ही बहमनी साम्राज्य 5 स्वतंत्र राज्यों में विभक्त हो गया, जो निम्न है –

(i) बीजापुर का आदिलशाही राज्य (1489 ई.), संस्थापक – युसूफ आदिलशाह

(ii) अहमदनगर का निजामशाही राज्य (1490ई.) संस्थापक – मलिक अहमद

(iii) बरार का इमादशाही राज्य (1484 ई. स्वतंत्रता की घोषणा एवं 1490 ई. में स्वतंत्र)
संस्थापक – फतह उल्लाद इमाद

(iv) गोलकुंडा का कुतुबशाही राज्य (1518 ई.), संस्थापक – कुली कुतुबशाह

(v) बीदर की बरीदशाही राज्य (1526 ई.) संस्थापक – अमीर अली बरीद

11.3.3. बहमनी साम्राज्य का पतन (Downfall of Bahmani Kingdom) :-

बहमनी साम्राज्य के पतन के प्रमुख कारण निम्नलिखित थे –

(i) बहमनी राज्य की प्रशानिक व्यवस्था का मूल आधार निरंकुश राजतंत्र की व्यवस्था था। इसके शासक स्वेच्छाचारी एवं निरंकुश थे। उनके अधिकारों पर कोई अकुंश नही था। मंत्रिपरिषद की व्यवस्था थी तथा प्रांतीय अधिकारी भी थे लेकिन तालमेल का अभाव था। प्रांत स्तर पर शासकों को नियुक्ति की शक्ति का अधिकार प्राप्त था। अतः निरंकुश केन्द्रीय शासक व प्रांतीय शासन व्यवस्था के अंतर्गत अधिकारियों को दिए गए अधिकारों की अतिशयता भी बहमनी साम्राज्य के विघटन का एक महत्वपूर्ण कारण सिद्ध हुई।

(ii) अधिकांश सुल्तान धर्मांध भोग–विलासी तथा अत्याचारी प्रवृति के थे अतः बहमनी सुल्तानों ने अपनी प्रजा की उन्नति के लिए कोई ठोस नीति नहीं अपनाई। जिस कारण शासकों को लेकर प्रजा में अविश्वास व असंतुष्टि का भाव व्याप्त था। यह भी एक कारण था जिससे बहमनी साम्राज्य पतन की ओर चला गया।

(iii) बहमनी सुल्तानों की असहिष्णु धार्मिक नीति के कारण हिंदुओं में असंतोष व्याप्त था। उन शासकों धार्मिक असहिष्णुता की यह नीति भी उनको ले डूबी।

(iv) अपनी स्थापना से लगभग 175 वर्ष तक पूरे अस्तित्व काल में बहमनी सुल्तानों को आंतरिक कलह तथा बाहरी शत्रुओं का निरंतर सामना करना पड़ा। इस आंतरिक कलह का प्रमुख कारण दरबार में मुस्लिम अमीरों के दो दलों के मध्य ईर्ष्या, प्रतिस्पर्द्धा तथा शत्रुता का होना था। इस शत्रुता के कारण धीरे–धीरे बहमनी साम्राज्य पतन की ओर अग्रसर हो गया।

(v) बहमनी साम्राज्य के शासक महमूद गवाँ जैसे योग्य राजनीतिज्ञ की पहचान कर उसका राज्य के हित में सही उपयोग करने में असफल रहे। महमूद गवाँ जैसे योग्यता वाले प्रधानमंत्री को भी आंतरिक कलह

का रोष भुगतना पड़ा। वास्तव में उसकी हत्या के साथ हो बहमनी साम्राज्य का पतन सुनिश्चित हो गया था।

11.3.4. विजयनगर–बहमनी के बीच संघर्ष।

(Struggle between Vijaynagar and Bahmani) :-

दक्षिण भारत में तुगलक सत्ता के पतन के बाद स्वतंत्र राज्यों के उदय के क्रम में चौदहवीं शताब्दी के मध्य में विजयनगर एवं बहमनी साम्राज्य दोनों लगभग एक ही समय पर अस्तित्व में आए। स्थापना के प्रांरभ से ही इन दोनों साम्राज्यों के बीच कृष्णा एवं तुंगभद्रा नदियों के मध्य स्थित प्रसिद्ध रायचूर दोआब संघर्ष का केन्द्र बिन्दु बना रहा। जिस प्रकार पूर्व मध्यकाल में उत्तर भारत में पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट के बीच गंगा–यमुना के दोआब में स्थित कन्नौज को लेकर लगभग दो सौ वर्षो तक संघर्ष चलता रहा जिसे त्रि–पक्षीय संघर्ष के नाम से जानते है। उसी प्रकार ये दोनों साम्राज्य रायचूर दोआब संघर्ष केन्द्र को लेकर लगभग दो सौ वर्षो तक उलझे रहे। इसीलिए इतिहास में इसे रायचूर दोआब की समस्या भी कहा जाता है।

यद्यपि सामान्य रूप से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इन दोनों साम्राज्यों के बीच संघर्ष का मुख्य कारण विवादग्रस्त रायचूर दोआब पर अधिकार को ही लेकर था। परंतु समकालीन इतिहासकारों ने संघर्ष का वास्तविक कारण इससे परे कई कारणों को बताया है जिनमें धार्मिक या सांप्रदायिक, भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामरिक आदि को महत्वपूर्ण मानते है। उस समय के इतिहासकारों का कहना है कि रायचूर दोआब तो मात्र संघर्ष का क्रीड़ास्थल था।

कृष्णा एवं तुंगभद्रा के बीच का भौगोलिक क्षेत्र दोनों साम्राज्यों के संयुक्त अधिकार क्षेत्र में पड़ता था। कोई स्पष्ट विभाजन करना कठिन था। पीछे भी इसको लेकर पल्लव, राष्ट्रकूट, चालुक्य व चोल आपस में संघर्षरत रहे। अतः इस समय भी रायचूर दोआब की समस्या पूर्ववर्ती संघर्ष की पुर्नावृति मात्र थी।

इस संघर्ष का दूसरा प्रमुख कारण राजनीतिक रूप से दोनों साम्राज्यों की विस्तावरवादी नीति थी। बहमनी एवं विजयनगर दोनों क्रमंशः तुंगभद्रा के दक्षिणी एवं उत्तरी छोर पर अपने साम्राज्यवाद का विस्तार करना चाहते थे, क्योंकि बहमनी साम्राज्य तीन ओर से तीन शक्तिशाली राज्यों –मानवा, गुजरात और उड़ीसा से घिरा था जबकि विजयनगर साम्राज्य तीन तरफ से समुद्र से घिरा हुआ था और उसके विस्तार का मार्ग केवल तुंगभद्रा के उत्तर में था। अतः रायचूर दो आब में इन दोनों राज्यों के बीच संघर्ष राजनीतिक विस्तारवाद को लेकर बहुत ही स्वाभाविक था।

इस संघर्ष का तीसरा महत्वपूर्ण कारण आर्थिक कारण को माना जाता है। दोनों की साम्राज्य में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। कृषि क्षेत्र के दृष्टिकोण से कृष्णा का दक्षिणी भाग अधिक उपजाऊ

था और साथ ही वाणिज्य एवं व्यापार की तरक्की के अर्थ में अधिकांश बड़े बंदरगाह इसी भाग में स्थित थे। अधिकांश निर्यात योग्य माल का उत्पादन भी इसी क्षेत्र में होता था। विवादग्रस्त रायचूर दोआब हीरा और लोहे जैसे बहुमूल्य खनिज पदार्थ के लिए प्रसिद्ध थे। अतः दोनों साम्राज्यों के आर्थिक हित उपजाऊ कृषि क्षेत्र, वाणिज्य–व्यापार के लिए बंदरगाह व समृद्ध खनिज क्षेत्र को लेकर यह क्षेत्र महत्वूपर्ण केन्द्र बना था। किसी भी स्थिति में दोनों इस पर अपना अधिकार चाहते थे। ऐसे में आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा ने दोनों के बीच संघर्ष को जन्म दिया और ये दोनों इसके लिए निरंतर संघर्षरत रहे।

प्रारंभ में कुछ इतिहासकार इस संघर्ष के कारणों में एक कारण धार्मिक या सांप्रदायिक कारण को भी बता रहे थे। परंतु सामंप्रदायिक कारण इस संघर्ष में कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता है। वास्तव में आर्थिक–राजनीतिक एवं सामरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही ये दोनों साम्राज्य इस क्षेत्र में लगातार संघर्षरत रहे।

विजयनगर–बहमनी संघर्ष के क्रम में प्रथम बहमनी सुल्तान बहमनशाह ने अपनी सेना को रायचूर के किले पर घेरा डालने को भेजा। इस पर विजयनगर नरेश हरिहर प्रथम ने परिस्थिति को समझाते हुये घोड़े और धन देकर समझौता कर लिया। इसके बाद बहमनशाह के पुत्र मुहम्मदशाह प्रथम एवं बुक्का प्रथम के समय में दोनों सेनाओं के बीच तीन युद्ध हुए। जिसका कोई परिणाम नहीं निकला। चौदहवीं शताब्दी के अंत में बहमनी शासक फिरोज और विजयनगर नरेश देवराय प्रथम के बीच भयंकर संघर्ष हुआ जिसमें विजयनगर साम्राज्य की काफी क्षति हुई। यहां तक कहा जाता है कि देवराय प्रथम को फिरोजशाह के साथ अपनी पुत्री का विवाह करके समझौता करना पड़ा। समझौता के बाद भी दोनों के बीच युद्ध हुये लेकिन इसका कोई परिणाम नहीं निकला।

बहमनी के शासक अहमद प्रथम और विजयनगर साम्राज्य के प्रसिद्ध शासक देवराय द्वितीय के बीच चार युद्ध लड़े गये। जिनमें प्रथम दो युद्ध में विजयनगर पराजित हुआ किंतु तीसरे युद्ध में विजयनगर नरेश देवराय द्वितीय को सफलता मिली। अंततः चौथे युद्ध के बाद दोनों राज्यों के मध्य समझौता हो गया।

देवराय द्वितीय की मृत्यु के बाद विजयनगर–बहमनी संबंधों में एक नया मोड़ आया। इस समय परिस्थितयां बिल्कुल बदल चुकी थी। विजयनगर साम्राज्य को उड़ीसा के गजपति शासकों के आक्रमण का भी सामना करना पड़ रहा था। तात्कालिक विजयनगर के शासक इतने मजबूत नहीं थे वे कि एक साथ दो मोर्चे पर युद्ध लड़ सके। दूसरी ओर महमूद गवाँ के युग में बहमनी साम्राज्य की स्थिति श्रेष्ठ हो गई। 1471 ई. में महमूद गवाँ ने गोआ पर अधिकार कर लिया तथा इससे आगे बढ़कर नेल्लोर और कांची तक विजयनगर के प्रदेशों पर प्रहार किया। इसके बाद 1485 ई. में विजयनगर के प्रथम वंश का पतन हो गया

और इसके दो दशकों के भीतर ही बहमनी साम्राज्य भी पांच राज्यों में विभक्त हो गया। परंतु रायचूर दोआब की समस्या यथावत बनी रही सिर्फ युद्ध करने वाले बदल गये।

11.4.1 विजयनगर साम्राज्य : राज्य व्यवस्था व प्रशासन

(Polity and Administratation of Vijaynagar kingdom):-

विजयनगर साम्राज्य से पूर्व दक्षिण भारत के चार प्रादेशिक राज्यों चोल, चालुक्य, पल्लव व पांड्य काल में भी राज्य व्यवस्था व प्रशासन में हमें विकेन्द्रीकृत प्रणाली देखने को मिलता है। इस काल में भी केन्द्रीय प्रांतीय से लेकर स्थानीय स्तर तक की प्रशासनिक व्यवस्था राजकाज चलाने के लिए मौजूद थी। चोल काल में स्थानीय स्तर ग्राम पंचायत व्यवस्था अत्यंत सुदृढ़ व उनको काफी स्वायत्तता थी। परंतु इन प्रादेशिक राज्यों की तुलना में विजयनगर साम्राज्य बहुत विशाल और शक्तिशाली था तथा इसका स्वरूप भी उन राज्यों से काफी भिन्न था। यद्यपि विजयनगर साम्राज्य के राज्य व्यवस्था व प्रशासन के बारे में अलग–अलग मत मिलते है तथापि पूर्व की भांति थोडे बहुत परिवर्तन के साथ यहां भी केन्द्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय स्तर की विकेन्द्रीकृत शासन प्रणाली मौजूद रही। चोल–चालुक्य युग में ग्राम्य–प्रशासन में जो काफी स्वायन्तता थी विजयनगर युग में उसमें कमी आई। विजयनगर काल में ग्राम्य प्रशासनिक संस्थाओं क ऊपर नौकरशाही एवं सामंती व्यवस्था को आरोपित किया गया जिससे उनकी स्वायन्तता पर बुरा प्रभाव पड़ा। पूर्व के शासन प्रणाली से अलग एक महत्वपूर्ण तथ्य हमें इस साम्राज्य में देखने को मिलता है और वह यह कि इस काल में विजयनगर के बड़े–बड़े सेनानायकों, अधिकारियों और नौकरशाहों ने भू–स्वामित्व के साथ अपने को जाड़ने की कोशिश की। ये अधिकारी सामान्यतः बड़े–बड़े सेनानायक थे जो नायक कहलाते थे और स्थानीय नौकरशाह आयंगार कहलाते थे।

आधुनिक काल की सामान्य भाासन व्यवस्था की तरह विजयनगर की भाासन व्यवस्था तीन भागों – केन्द्रीय, प्रांतीय व स्थानीय स्तर पर विभक्त थी। इसका विवरण निम्न प्रकार है :–

केन्द्रीय शासन व्यवस्था (Central Government System): किसी भी राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली की तरह विजयनगर में भी राज्य एवं शासन का केन्द्र बिन्दु राजा ही होता था इस काल में राजा की उपाधि 'राय' थी। राज्य व्यवस्था में प्राचीन राज्य की सप्तांग विचारधारा का ध्यान रखा जाता था। राजा के चयन में राज्य के मंत्रियों एव ंनायकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। राज्यभिषेक भव्य दरबार का आयोजन करके होता था जिसमें अनेक नायक, अधिकारी तथा जनता के प्रतिनिधि सम्मिलित होते थे। इसमें राजा को प्रजापालन एवं निष्ठा की शपथ लेनी पड़ती थी। युवराज राजा का बड़ा पुत्र व राज्य परिवार का कोई भी योग्य पुरूष बन सकता था युवराज काल में उसे विद्या साहित्य, कला, ललित कलाओं

व युद्ध आदि की ि"क्षा भी दी जाती थी युवराज के राज्यभिषेक को युवराज पट्टाभिषेक कहते थे। विजयनगर साम्राज्य में संयुक्त शासन की परंपरा भी मौजूद थी, जैसे– हरिहर एवं बुक्का तथा विजय राय एवं देवराय। युपराज के अल्पायु होने की स्थिति में राजा अपने जीवन काल में ही स्वयं किसी मंत्री को उसका संरक्षक नियुक्त करता था। इस काल के कुछ महत्वपूर्ण संरक्षक थे –

वीर नरसिंह, नरसा नायक एवं रामराय आदि। बाद में यही संरक्षक व्यवस्था ही विजयनगर के पतन में बहुत कुछ जिम्मेदार रही। विजयनगर के शासकों ने अपने व्यक्तिगत धर्म होते हुये भी धार्मिक सहिष्णुता को अपने राज्य में लागू किया। इस काल में राजा निरंकुश होने पर भी बर्बर नही होता था। उसकी निरंकु"ाता पर नियन्त्रण हेतु व्यापारिक निगम, ग्रामीण संस्थाये एवं धार्मिक संस्थाओं से जुड़ी जन समितियां एवं मंत्रिपरिषदें थी। राज्य परिषद राजा को सलाह देती थी तथा उसका राज्याभिषेक करती थी। राजा को सलाह देने के लिए बनी एक अन्य परिषद में प्रांतीय गर्वनर, बडे–बडे नायक, सामंत, शासक, व्यापारिक निगमों के प्रतिनिधि सदस्य होते थे।

प्र"ासनिक कार्यो में सहयोग करने के एक ' मंत्रिपरिषद' की व्यवस्था थी जिसमें प्रधानमंत्री, मंत्री, उपमंत्री, विभागों के अध्यक्ष तथा राजा के कुछ नजदीक के संबंधी होते थे। मंत्रिपरिषद के मुख्य अधिकारी को प्रधानी या महाप्रधानी कहा जाता था। इसकी स्थिति प्रधानमंत्री जैसी थी। यह राजा एवं युवराज के बाद तीसरे स्थान पर आता था। मंत्रिपरषिद् में कुल 20 सदस्य होते थे। मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष को सभानायक कहा जाता था। कभी–कभी प्रधानमंत्री भी मंत्रिपरिषद की अध्यक्षता करता था। राजा इस मंत्रिपरिषद की राय लेता था पर वह उसे मानने के लिए बाध्य नहीं था।

विद्वान, राजनीति में निपुण, पचास से सत्तर वर्ष के आयु वाले और स्वस्थ व्यक्तियों को ही इस मंत्रिपरिषद का सदस्य बनाया जाता था।

टी.वी. महालिंगम ने विजयनगर प्र"ासक की राजपरिषद् और मंत्रिपरिषद में अंतर स्पष्ट किया है। राजपरिषद् प्रान्तों के नायकों, सामन्त शासकों, विद्वानों, प्रमुख धर्माचार्यो, संगीतकारों, कलाकारों, व्यापारियों और यहां तक कि विदे"ाी राज्यों के राजदूतों को शामिल करके गठित किया गया एक वि"ाल संगठन होता था। केन्द्र में दण्डनायक नाम का उच्च अधिकारी होता था।

यह दण्डनायक प्र"ासन का प्रमुख तथा सेनाओं का नायक होता था। दण्डनायक को न्यायधी"ा, सेनापति, गर्वनर या प्र"ासकीय अधिकारी आदि का कार्यभार सौंपा जा सकता था। कुछ अन्य अधिकारियों को 'कार्यकर्त्ता' कहा जाता था।

केन्द्र में एक सचिवालय की व्यवस्था होती थी जिसमें विभागों का वर्गीकरण किया जाता था। इन विभागों में 'रायसम' या सचिव 'कर्णिकम' अर्थात् एकाउन्टेंट जैसे अधिकारी होते थे। अन्य विभाग एवं उनके अधिकारी जैसे मनिय प्रधान, गृहमंत्री, मुद्राकर्ता, शाही मुद्रा को रखने वाला अधिकारी आदि थे।

प्रांतीय प्रशासन (Provincial administration) :- वि"ाला साम्राज्य विजयनगर अनेक प्रांतों में विभक्त किया गया था। ये प्रांत राज्य या मंडल कहलाते थे। कृष्णदेव राय के शासनकाल में प्रांतों की संख्या सबसे अधिक थी।

प्रांतों में गवर्नर के रूप में राज परिवार के सदस्य या अनुभवी दण्डनायकों की नियुक्ति की जाती थी। इन्हें सिक्कों को प्रसारित करने, नये कर लगाने, पुराने कर माफ करने एवं भूमिदान करने आदि की स्वतंत्रता प्राप्त थी। प्रांत के गवर्नर को निर्धारित भू–राजस्व का एक नि"चित हिस्सा केन्द्र सरकार को देना होता था।

प्रांत को 'मंडल एव मंडल को' कोट्टम' या जिले में विभाजित किया गया था। कोट्टम को 'वलनाडु' भी कहा जाता था। कोट्टम का विभाजन नाडुओं में हुआ था जिसकी स्थिति आज के परगना एवं ताल्लुका जैसी थी। नाडुओं को मेलग्राम में बांटा गया था। एक मेलग्राम के अर्न्तगत लगभग 50 ग्राम होते थे। उर या ग्राम प्र"ासन की सबसे छोटी इकाई थी। इस समय गांवों के समूह को 'स्थल' एवं 'सीमा' भी कहा जाता था।

विभाजन के क्रम को निम्न रेखाचित्र द्वारा दिखाया जा सकता है –

प्रांत → मंडल → कोट्टम/वलनाडु → नाडु → मेलग्राम उर/ग्राम

नायंकार व्यवस्था (Nayankar system) :- विजयनगर की नायंकार व्यवस्था की उत्पति के बारे में इतिहासकारों के बीच मतभेद है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार सेना के सेनानायकों को नायक कहा जाता था। तो कुछ का मानना है कि नायक भू–सामन्त होते थे जिन्हे वेतन के बदले एवं स्थानीय सेना के खर्च चलाने के लिए वि"ोष भू–खण्ड दिया जाता था, जिसे 'अमरम' कहते थे। अमरम भूमि का प्रयोग करने वाले भू–सामन्त 'अमरनायक' भी कहलाते थे। अमरम भूमि की आय का एक हिस्सा केन्द्रीय कोष के लिए देना होता था एवं इसी आय में से राजा की सहायता के लिए एक सेना का रख–रखाव करना होता था। नायक को अमरम भूमि में शांति, सुरक्षा एवं अपराधों को रोकने के दायित्व का भी निर्वाह करना होता था। इसके अतिरिक्त उसे जंगलों को साफ करवाना एवं कृषि योग्य भूमि का विस्तार भी करना होता था।

राजधानी में नायकों के दो सम्पर्क अधिकारी एक नायक की सेना का सेनापति और दूसरा प्र"ासनिक अभिकर्ता स्थानपति रहते थे। विजयनगर शासक अच्चुत देव राय ने नायकों की उच्छृंखलता को रोकने के लिए महामंडले"वर या वि"ोष कमि"नरों की नियुक्ति की थी।

आयंगार व्यवस्था (Ayangar system) :- प्र"ासन को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए प्रत्येक ग्राम को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में संगठित किया गया था। इन संगठित ग्रामीण इकाइयों पर शासन हेतु 12 प्र"ासकीय अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी जिनको सामूहिक रूप से आयंगर कहा जाता था। ये आयगंर अवैतनिक होते थे। इनकी सेवाओं के बदले सरकार इन्हें पूर्णतः कर मुक्त एवं लगान मुक्त भूमि प्रदान करती थी। इनका पद आनुवं"ाक होता था। यह अपने पद को किसी दूसरे व्यक्ति को बेच या गिरवी रख सकता था। ग्राम स्तर की कोई भी सम्पत्ति या भूमि इन अधिकारियों की इजाजत के बगैर न तो बेची जा सकती थी और नही दान दी जा सकती थी। 'कर्णिक' नामक आयंगर के पास जमीन के क्रय एवं विक्रय से संबंधित समस्त दस्तावेज होते थे।

स्थानीय शासन (Local Government) :- सम्पूर्ण दक्षिण भारत के लगभग सभी राजवं"ाों में शासन व्यवस्था की जो प्रणाली सदैव मौजूद रही वह थी – स्थानीय शासन। विजयनगर काल में चोलकालीन सभा को कहीं–कहीं महासभा उर एवं महाजन कहा जाता था। गांव को अनेक वार्डो या मुहल्लों में विभाजित किया गया था। 'सभा' में विचार विम"ार्ा के लिए गांव या क्षेत्र वि"ोष के लोग भाग लेते थे। 'सभा' नई भूमि या अन्य प्रकार की सम्पत्ति उपलब्ध कराने गांव की सार्वजनिक भूमि को बेचने, ग्रामीणों की तरफ से सामूहिक निर्णय लेने गांव की भूमि को देने के अधिकार अपने पास सुरक्षित रखती थी। न्यायिक अधिकारों के अन्तर्गत सभा के पास दीवानी मुकदमों एवं फौजदारी के छोटे–मोटे मामलों का निर्णय करने का अधिकार होता था। नाडु गाँव की बडी राजनीतिक इकाई के रूप में प्रचलित थी। नाडु की सभा को नाडु एवं सदस्यों को नात्तवार कहा जाता था। इनमें अधिकार ग्राम सभा की तरह होते थे परंतु इसका अधिकार क्षेत्र काफी बड़ा होता था। लेकिन इसे शासकीय नियंत्रण में रहना पड़ता था। चोल युग में बहुत शक्ति"ाली स्थानीय संस्थाएं इस काल में पतन की ओर अग्रसर होती गई। विजयनगर काल में इनकी जीवंतता लगभग समाप्त हो गई। विजयनगर सम्राटों द्वारा स्थानीय शासन हेतु गठित आचंगार – व्यवस्था ने स्थानीय स्वायत्तता और इन ग्रामीण गणतंत्रों के मुक्त जीवन का गला घोंट दिया।

विजयनगर साम्राज्य में गांव के आय–व्यय की देखभाल करने वाले को 'सेनेटेयवा' कहते थे। गांव में चौकीदारी का कार्य करने वाले चौकीदार को 'तलस' कहा जाता था। 'बेगरा' गाँव में बेगार, मजदूरी आदि की देखभाल का कार्य करता था।

इस काल में स्थानीय शासन के अंतर्गत आय के प्रमुख जरिया थे – लगान, सम्पत्ति कर, व्यावसायिक कर, उद्योगों पर कर, सिंचाई कर, चारागाह कर, उद्यान कर एवं अनेक प्रकार के अर्थ दण्ड।

भू–राजस्व व्यवस्था (Land Revenue System) :- विजयनगर साम्राज्य में कई प्रकार के कर वसूले जाते थे जिनके नाम इस प्रकार मिलते है – कदमाई, मगमाई, कनिकई, कत्तनम, कणम्, वरम्, भोगम्, वारि, पत्तम, इराई और कत्तायम।

विजयनगर राज्य की आय का प्रमुख एवं सबसे बड़ा स्त्रोत 'ि"ाष्ट' नामक भूमिकर था। राज्य उपज का 1/6 भाग कर के रूप में वसूल करता था। कर निर्धारण से पूर्व भूमि का वर्गीकरण देवरान, ब्रह्मदेय आदि में किया जाता था। कृष्णदेव राय ने अपने शासनकाल में भूमि का व्यापक सर्वेक्षण कराकर भूमि की उर्वरता के अनुसार उपज का 1/3 या 1/6 भाग कर के रूप में निर्धारित किया था। संभवतः विभिन्न प्रांतों में राजस्व की दर अलग–अलग थी। राज्य प्रजा को सिंचाई की सुविधा के ऊपर सिंचाई कर वसूल करती थी। तमिल प्रदे"ा में इसे दासावन्दा एवं आन्ध्र प्रदे"ा व कर्नाटक में कट्टकोडेज के नाम से जानते थे। सिंचाई कर सिंचाई के साधनों का उपयोग करने वालों से ही लिया जाता था। ब्राह्मणों के अधिकार वाली भूमि से उपज का 20 वां भाग तथा मंदिरों की भूमि से उपज का 30 वां भाग लगान के रूप में वसुला जाता था।

सामाजिक एवं सामुदायिक कर के रूप में विवाह कर का भी प्रचलन विजयनगर साम्राज्य में था। परंतु विधवा विवाह इस कर से मुक्त था। परंतु कृष्णदेव राय के काल में विवाह कर को समाप्त कर दिया था।

राजस्व वस्तु एवं नकद दोनों ही रूपों में वसूले जाते थे 'भंडारवाद' ग्राम से राज्य को सीधे कर प्राप्त होता था। ये वे ग्राम थे जिनकी भूमि सीधे राज्य के नियंत्रण में थी। इस भूमि को उपयोग में लाने वाले किसान सीधे राज्य को कर देते थे। इस प्रकार करों की अधिकता से ऐसा प्रतीत होता है कि विजयनगर साम्राज्य में प्रजा के ऊपर करों का बहुत अधिक बोझ था। परंतु इसके साथ यह भी सच्चाई है कि इस साम्राज्य में समाज के लगभग सारे वर्ग आर्थिक रूप से समृद्ध थे और फिर करों की अधिकता तो थी लेकिन उसके दर कम थे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि विजय नगर के शासक अपनी प्रजा के आर्थिक समृद्धि का ध्यान रखते थे। आपात स्थिति में उदारता का परिचय देते हुये करों को माफ कर देते थे।

अतः इससे स्पष्ट होता है कि विजयनगर कालीन राजतंत्र और शासन व्यवस्था में शासकों के सम्मुख प्रजा का कल्याण और समृद्धि शासन का मूल–मंत्र था। उन्होंने अपनी प्रजा के हितों का बलिदान करके राज्य के उद्दे"यों और हितों की पूर्ति नहीं की।

सैन्य व्यवस्था (Military system) :- विजयनगर की सेना में पैदल, अ"वारोही, हाथी तथा ऊँट शामिल थे। सैन्य विभाग को कन्दाचार कहा जाता था। इस विभाग का उच्च अधिकारी दण्डनायक या सेनापति होता था।

विजयनगर साम्राज्य में बिना किसी भेदभाव के मजबूत सैन्य व्यवस्था के लिए योग्यता के आधार पर हिन्दू अथवा मुस्लिम किसी को भी भर्ती करने का प्रावधान था।

न्याय व्यवस्था (Judicial system) :- विजयनगर साम्राज्य में राज्य का प्रधान न्यायाधी"ा राजा होता था। राज्य में अपराध को रोकने व शांति व्यवस्था कायम रखने के लिए प्रांतों से लेकर गांवों तक समुचित न्याय की व्यवस्था थी। भयंकर अपराध के लिए शरीर के अंग विच्छेदन तक का दंड दिया जाता था।

प्रान्तों में प्रान्तपति तथा गांवों में आयंगर न्याय करता था। इस काल में न्याय व्यवस्था हिन्दू धर्म पर आधारित थी। पुलिस विभाग का खर्च वे"याओं पर लगाये गये कर से चलता था।

11.4.2. विजय नगर साम्राज्य की अर्थव्यवस्था (Economy of Vijaynagar kingdom) :-

(i) कृषि (Agriculture) :- विजयनगरकालीन अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। इस काल में अधिका"ा जनसंख्या कृषि पर आश्रित थी। दक्षिण के पूर्व के राजव"ोंं की अपेक्षा विजयनगर साम्राज्य अधिक विस्तृत था। इस काल में ग्रामों की संख्या में काफी वृद्धि हो गई। अतः चोल काल की तुलना में विजयनगर काल में कृषिजन्य अर्थव्यवस्था में बहुत बड़ा परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। इस समय चोलकालीन 'नाडु' घटकर ग्राम के रूप में अब एक छोटी इकाई मात्र रह गया। गांवों में बाहर से आये लोग भू–स्वामित्व रूप में काफी संख्या में स्थापित हो गये । इन तेलुगू और दूसरे क्षेत्रों से आये बाहरी भू–स्वामियों को कृषि उत्पादन विकास में सहयोग देने के बदले में अतिरिक्त उत्पादन में हिस्सा दिया गया। इस काल में कृषि अर्थव्यवस्था के विकास में मंदिरों की भूमिका बढ़ गई। भूमि पर प्रभाव"ाली कृषक समूहों का अधिकार था तथा कृषकों का राज्य में खूब सम्मान था। विजयनगर साम्राज्य के शासन व राज्य संस्थायें कृषि योग्य भूमि के विस्तार में खूब रूचि लेती थी। इससे कृषक वर्ग में खूब उत्साह था। इसका फायदा समाज के हर वर्ग को मिल रहा था। इस काल में समाज के हर वर्ग में समृद्धि थी। विजयनगर काल में भू–धारण (Land tenure) पद्धति बड़ी व्यापक थी जिनका विवरण निम्न प्रकार है :–

(ii) भंडारवाद ग्राम :- जिन ग्रामों की भूमि राज्य के सीधे नियंत्रण में थी, ऐसे ग्रामों को 'भंडारवाद' ग्राम कहा जाता था। इन ग्रामों के किसान सीधे राज्य को कर देते थे।

(iii) ब्रह्मदेय/देवदेय/मठापुर भूमि :- राज्य द्वारा धार्मिक सेवाओं के रूप में जो भूमि ब्राह्मणों, मंदिरों और मंठों को दान में दे दी जाती थी उन्हें क्रम"ाः ब्रह्मदेय, देवदेय व मठापुर भूमि के नाम से जानते थे। इस प्रकार की भूमि कर मुक्त होती थी।

(iv) अमरम् भूमि :- नायंकार व्यवस्था के अंतर्गत विजयनगर के शासन सैनिक एवं असैनिक अधिकारियों को उनकी वि"ोष सेवाओं के बदले जो भूमि प्रदान करते थे उस भूमि को अमरम् भूमि कहते थे। इस भूमि को प्राप्त करने वाले अमर नायक कहलाते थे। प्रारंभ में यह भूमि केवल सेवा शर्त के रूप में ही थी लेकिन कालांतर में यह आनुवं"ाक हो गई और सांमती व्यवस्था का रूप धारण कर लिया। अमरनायकों की इस भूमि का एक अं"ा राज्य को भी देना पड़ता था।

(v) उबलि भूमि :- ग्राम में वि"ोष सेवाओं के बदले दी जाने वाली लगान मुक्त भूमि को उबलि भूमि कहते थे।

(vi) रत्त (खत्त) कोडगे भूमि :- युद्ध में शौर्य का प्रद"ान करने वाले या अनुचित रूप से युद्ध में मृत लोगों के परिवार को दी गई भूमि रत्त(खत्त) कोड़गे भूमि कहलाती थी।

(vii) कुट्टगि भूमि :- ब्राह्मण, मंदिर एवं बड़े भू–स्वामी जो स्वयं खेती नहीं कर सकते थे, वे खेती के लिए किसानों को पट्टे पर भूमि देते थे। इस तरह पट्टे पर खेती के लिए दी गई भूमि को कुट्टगि कहते थे।

भू–स्वामी एवं पट्टीदार के मध्य उपज की हिस्सेदारी को 'वारम' व्यवस्था कहते थे। इस काल में कृषि का व्यापक विस्तार था। अंतः जनसंख्या का वह भाग जो कृषक मजदूरों के रूप में कार्य करते थे उन्हें 'कुर्दि' के नाम से जानते थे। भूमि के क्रय–विक्रय के साथ इन कृषक मजदूरों का हस्तांतरण हो जाता था। राज्य में ऐसी व्यवस्था कि इन कृषक मजदूरों को मनमाने ढंग से सेवामुक्त नहीं किया जा सकता था।

विजयनगर काल में हमें सिंचाई का कोई विभाग प्र"ाासनिक स्तर पर देखने को नहीं मिलता है। सिंचाई साधनों के विस्तार में मंदिरों, मठों, व्यक्तियों और संस्थाओं का समान रूप से योगदान था। समाज में सिंचाई विस्तार के कार्य को पुण्य का कार्य माना जाता था तथा राज्य सिंचाई के साधनों का विकास करने वाले व्यक्ति को कर मुक्त भूमि देकर इसका प्रोत्साहन करती थी। सिंचाई के लिए नदी पर बांध बनाकर नहरें निकालने व तालाबों के विस्तार के प्रमाण मिलते है।

राज्य में जिस संपत्ति का कोई मालिक नहीं होता था उसका उपयोग सिंचाई साधनों के मरम्मत के लिए किया जाता था। विजयनगर काल में इस प्रकार का प्रमाण मिलता है कि जब सिंचाई साधनों के नष्ट हो जाने पर रैयत (किसान) गांव छोड़कर चली जाती थी राज्य स्वयं के प्रयासों से सिंचाई साधनों का पुनःनिर्माण करके इन्हे बसाने का कार्य करती थी। कभी–कभी सिंचाई के साधनों के पुनःनिर्माण के लिए राज्य स्थानीय करों को भी माफ कर देता था।

खेतों की नियमित पैमाइ"ा की व्यवस्था थी और उनके सीमांकन के लिए पत्थर लगाए जाते थे। खेती की सुविधा को ध्यान में रखते हुए भूमि को दो भागों– सिंचाई की सुविधायुक्त भूमि तथा सिंचाई की सुविधाहीन या शुष्क भूमि के रूप में विभाजित किया गया था। सिंचाई की सुविधा वाले भूमि में दो या तीन फसलें तक उगाई जाती थी।

इस समय चावल, दालें, चना, जौ, तिलहन, नील एवं कपास की खेती की जाती थी। प"िचमी तटवर्ती क्षेत्रों में काली मिर्च एवं अदरक तथा कर्नाटक के क्षेत्र में इलायची पैदा की जाती थी। नारियल का तो सारे तटवर्ती क्षेत्रों में उत्पादन होता था।

(viii) व्यापार (Trade) :- विजयनगर काल में वाणिज्य एवं व्यापार का भी अच्छा विकास हुआ था। इस काल में मलाया, बर्मा, चीन, अरब, ईरान, अफ्रीका, अबीसीनिया एवं पुर्तगाल से व्यापार होता था। निर्यात की मुख्य वस्तुएं थीं – कपड़ा, चावल, गन्ना, इस्पात, मसाले, इत्र, शोरा, चीनी इत्यादि। आयात की जाने वाली वस्तुएं थीं – अच्छी नस्ल के घोड़े, हाथी दांत, मोती, बहुमूल्य पत्थर, नारियल पॉम, नमक आदि। मोती फारस की खाड़ी से तथा बहुमूल्य पत्थर पेगू से मंगाये जाते थे।

पुर्तगाली यात्री नूनिज ने ऐसे हीरों के बन्दरगाह की चर्चा की है जहाँ वि"वभर में सर्वाधिक हीरों की खानें पायी जाती थी।

(ix) मुद्रा व्यवस्था (Monetary system) :- विजयनगर साम्राज्य की मुद्रा प्रणाली भारत की सर्वाधिक प्र"ांसनीय मुद्रा प्रणालियों में से थी। विजयनगर का सर्वाधिक प्रसिद्ध सिक्का स्वर्ण का 'वराह' था जिसका वजन 52 ग्रेन था। विदे"ाी यात्रियों ने स्वर्ण के वराह सिक्कों का उल्लेख –हूण, परदौस या पगोडा के रूप में किया है। चाँदी के छोटे सिक्के तार कहलाते थे।

विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक हरिहर के स्वर्ण वराह सिक्कों पर हनुमान एवं गरूड़ की आकृतियाँ अंकित है। तुलुव वं"ा के सिक्कों पर सामान्यतः उमा–महे"वर, वेकंटे"ा, बालकृष्ण की आकृतियाँ अंकित है। सदा"िव राय के सिक्कों पर लक्ष्मीनारायण की आकृति अंकित है। आरवीडु वं"ा के शासक वैष्णव धर्मानुयायी थे। अतः उनके सिक्कों पर वेंकटे"ा, शंख एवं चक्र अंकित हैं।

11.4.3. विजय नगर साम्राज्य : सामाजिक दशा (Vijaynagar kingdom : social condition):-

विजयनगर साम्राज्य के अभिलेखों में राज्य–कर्त्तव्यों से संबंधी जो विवरण दिये गये है उनसे पता चलता है कि इस समय सामाजिक व्यवस्था सैद्धान्तिक रूप से शास्त्रीय परंपराओं पर आधारित थी। समाज में ब्राह्मणों को चारों वर्णों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। क्षत्रियों के बार में विजयनगरकालीन समाज में कोई जानकारी नही

मिलती है। ब्राह्मणों को सर्वाधिक वि"ोषाधिकार प्राप्त थे। इन्हें शासन के उच्च पदों पर नियुक्त किया जाता था। अभिलेखों में विजयनगर की सेना में अनेक सफल ब्राह्मण सेनानायकों का उल्लेख मिलता है। ब्राह्मणों को मृत्युदंड से मुक्त रखने का प्रावधान था।

मध्यवर्गीय लोगों में शेट्टियों एवे चेट्टियों का महत्वपूर्ण स्थान था। अधिका"ा व्यापार इन्ही के द्वारा किया जाता था। व्यापार के अतिरिक्त ये लोग लिपिक एवं लेखाकार्यों में भी निपुण थे। इनकी अनेक शाखाएँ एवं अप"ाखाएँ थी। अतः चेट्टियों का विजयनगर साम्राज्य में बहुत प्रभाव था। चेट्टियों की तरह व्यापार में निपुण दस्तकार वर्ग के लोगों को 'वीर पांचाल' कहा जाता था।

कैकोल्लार (जुलाहे), कंबलत्तर अर्थात चपरासी और शास्त्रवाहक, नाई तथा आंध्र क्षेत्र में रेड्डी कुछ महत्वपूर्ण समुदायों में माने जाते थे। इस काल में उत्तर भारत से दक्षिण भारत में आकर बसे लोगों को 'बडवा' कहा गया।

निम्न व छोटे समूह के अंतर्गत लोहार, बढई, मूर्तिकार, स्वर्णकार व अन्य धातुकर्मी तथा जुलाहे आते थे। जुलाहे मंदिर क्षेत्र में रहते थे और साथ ही मंदिर प्र"ासन व स्थानीय घरों के आरोपण में उनका सहयोग होता था।

दास प्रथा (Slavery system) :- इस काल में दास प्रथा का प्रचलन था। महिला एवं पुरूष दोनों वर्ग के लोग दास हुआ करते थे। विजयनगर युग से पहले चोल काल में भी यह दास प्रथा प्रचलित थी। मनुष्यों के खरीदे एवं बेचे जाने को 'वेस–वग' कहा जाता था। लिये गये ऋण को न दे पाने एवं दिवालिया होने की स्थिति में ऋण लेने वालों को दास बनना पड़ता था।

स्त्रियों की स्थिति (Status of Women) :- समस्त समाज के दृष्टिकोण से स्त्रियों की स्थिति इस युग में भी अच्छी नहीं थी। उन्हें सामान्यतः भोग की वस्तु समझा जाता था। राजपरिवार की स्त्रियां तथा राज्य–व्यवस्था से जुड़ी स्त्रियों को उच्च सुविधायें उपलब्ध थी। अभिजात वर्ग की कन्याओं के लिए भाषा, संगीत व नृत्य की ि"ाक्षा उपलब्ध थी। लेकिन साहित्यिक क्षेत्र में महिलाओं का योगदान देखने को नहीं मिलता है।

इस काल में राज्य–व्यवस्था के अंतर्गत महिलाएँ निम्न भूमिका निभाती थी–

(i) राजा के कार्यों को लिखना ।

(ii) आय–व्यय की गणना करने में।

(iii) मल्ल युद्ध में भाग लेने के रूप में।

(iv) ज्योतिष के कार्य में।

(v) अंगरक्षक व पहरेदार की भूमिका में।

(vi) न्यायाधी"ा के रूप में।

(vii) नृत्य व गायन–वादन का कार्य।

इससे स्पष्ट है कि संपूर्ण भारतीय इतिहास में विजय नगर ही ऐसा एकमात्र साम्राज्य था, जिसने वि"ाल संख्या में स्त्रियों को राजकीय पदों पर नियुक्त किया था। यद्यपि समाज में कुछ कुप्रथायें विद्यमान थी जैसे बाल–विवाह, देवदासी एवं सती प्रथा आदि।

मंदिरों में देवपूजा के लिए रहने वाली स्त्रियों को देवदासी कहा जाता था। इन्हें आजीविका के लिए या तो भूमि दे दी जाती थी अथवा नियमित वेतन दिया जाता था।

गणिकाओं का समाज में महत्वपूर्ण स्थान था। ये गणिकाएँ दो तरह की होती थी – मंदिरों से संबंधित और स्वतंत्र रूप से जीवन यापन करने वाली। अधिकां"ा गणिकाएँ पर्याप्त ि"ाक्षित, धनाढ्य और वि"ोषधिकार प्राप्त होती थी। सार्वजनिक उत्सवों पर समस्त गणिकाएँ अनिवार्यतः उत्सव में भाग लेती थी। राजा एवं सामन्त लोग बिना किसी आपत्ति के इनसे सम्बन्ध बनाते थे।

समाज में पर्दा प्रथा प्रचलित नहीं थी और परिवार में महिलाओं की उपयोगी भूमिका मानी जाती थी। पूर्व की भांति इस काल में भी समाज में विधवाओं का जीवन बहुत हेय और अपमानजनक माना जाता था।

सती प्रथा (Satipratha) :- विजयनगर साम्राज्य के अभिलेखों एवं विदे"ाी वृतांत दोनों समाज में सती प्रथा के प्रचलन का उल्लेख करते हैं। विजयनगर के 1354 ई. के एक अभिलेख में माला गौडा नामक महिला का सती होने का प्रमाण मिलता है। सती को मुक्ति एवं स्वर्गारोहन से जोड़कर देखने की भावना इस प्रथा का और प्रोत्साहित करती थी। यह एक तरह से समृद्ध विजयनगर साम्राज्य पर काला धब्बा था। लगभग समस्त विदे"ाी यात्रियों ने इस क्रूर प्रथा का बड़े विस्तार के साथ उल्लेख किया है। यह प्रथा केवल नायकों और राजपरिवार तक ही सीमित थी। विदे"ाी यात्री डुआर्ट बार्बोसा के विवरण से पता चलता है कि यह प्रथा लिगायतों, चेट्टियों और ब्राह्मणों में प्रचलित नहीं थी।

विधवा विवाह करने वाले युगल विवाह कर से मुक्त थे। इससे पता चलता है कि राज्य व्यवस्था व्यावहारिक दृष्टि से सती प्रथा को प्रश्रय नहीं देता था।

वस्त्राभूषण :- इस काल में सामान्य वर्ग के पुरूष धोती और सफेद सूती या रे"ामी कमीज पहनते थे तथा कंधे पर दुपट्टा डालते थे। सिर पर टोपी या पगड़ी पहनने का भी प्रचलन था। विदे"ाी यात्रियों के विवरण अधिकां"ातः अभिजात वर्ग के वस्त्राभूषणों का विस्तार से वर्णन करते हैं। इनके विवरण से पता चलता है कि राजपरिवार के पुरूष एवं स्त्रियां दोनों कीमती एवं जरीदार कपड़े पहनते थे। सामान्य लोग जूते नही पहनते थे किंतु अभिजात एवं राजपरिवार के लोग रोमन शैली के जूते पहनते थे। राजपरिवार की स्त्रियाँ पावड (एक प्रकार का पेटीकोट), दुपट्टा और चोली पहनती थी। इनके वस्त्र कीमती एवं जरीदार होते थे। सामान्यवर्ग की स्त्रियाँ साड़ी और चोली पहनती थी। स्त्री और पुरूष दोनों आभूषणप्रिय थे।

युद्ध में वीरता दिखाने वाले पुरूषों को सम्मान के रूप में पैर में 'गंडपेद्र' नाम का कडा पहनाया जाता था। यह सम्मान का प्रतीक था। बाद में यह सम्मान असैनिक सम्मान के रूप में मंत्रियों, विद्वानों एवं अन्य सम्मानीय व्यक्तियों को भी दिया जाने लगा।

शिक्षा एवं मनोरंजन (Education and Recreation) :- विजयनगर साम्राज्य में ि"ाक्षा के मामले में शासकों में रूचि और प्रोत्साहन का अभाव दृष्टिगोचर होता है। पूर्व के राजव"ाों चोल व पल्लव की भांति प्रत्यक्ष रूप से विजयनगर शासकों ने विद्यामंदिरों को बढ़ावा नहीं दिया फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने विद्या को प्रोत्साहन दिया। अभी भी मंदिर, मठ एवं अग्रहार मुख्य ि"ाक्षा के केन्द्र थे। अग्रहारों में मुख्य रूप से वेदों की ि"ाक्षा दी जाती थी।

इतिहास, काव्य, नाटक, आयुर्वेद और शास्त्र एवं पुराण अध्ययन के लोकप्रिय विषय थे। तुलुवव"ा के शासकों ने विद्या एवं ज्ञान को पर्याप्त प्रश्रय दिया। राजकीय सेवा के इच्छुक विद्यार्थियों के लिए वि"ाष विद्यालय होते थे जहाँ उन्हें भाषा और गणित की ि"ाक्षा दी जाती थी।

मनोरंजन के क्षेत्र में नाटक और यक्षगान (जिसमें मंच पर संगीत और वाद्यों द्वारा अभिनय किया जाता था) इस काल में बहुत लोकप्रिय थे। बोमलाट (छाया–नाटक) समाज में बहुत लोकप्रिय था। अभिजात वर्ग के पुरूष एवं स्त्री के बीच मनोरजंन के रूप में शतरंज, पासा और यहाँ तक कि जुआ खेलने तक के प्रचलन के प्रमाण मिलते हैं।

उत्तर भारत से दक्षिण भारत में आकर बसने वाले लोगों से उत्पन्न स्थिति, सामाजिक कुरीतियों एवं रूढ़ियों के कारण उत्पन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए विजयनगर साम्राज्य के शासकों ने बिना किसी भेदभाव व पक्षपात के सदैव प्रयत्न"ाील रहे। इस काल में शासकों ने सामाजिक समरूपता व एकता को बहुत अधिक महत्व दिया। इस अर्थ में जनता के प्रयासों को राज्य द्वारा पर्याप्त समर्थन मिलता था। इसका प्रमाण मिलता है कि

बाल–विवाह के कारण उत्पन्न दहेज की कुरीति की अधिकता को जब ब्राह्मण समुदाय ने अवैध घोषित किया तो राज्य ने इसे स्वीकृति देकर विधान का रूप दिया।

जाति संबंधी विवाद उत्पन्न हो जाने पर नगर प्र"ासन जातियों के बीच उचित पराम"र्ा की व्यवस्था द्वारा इसका समाधान निकालती थी। सामाजिक अपराध करने वालों को जाति बहिष्कृत करने का प्रावधान था। इससे ब्राह्मण भी वंचित नहीं थे। समाज में दस्तकार समुदायों – बढ़ई, लोहार, स्वर्णकार आदि को पूर्ण सुरक्षा प्राप्त थी ताकि वे स्वतंत्रता पूर्वक अपनी सेवा कर सके।

सामाजिक नियमों की अवहेलना या इसे तोड़ने की स्थिति में पर्याप्त व कठोर दंड की व्यवस्था थी।

सांप्रदायिक मामलों में राज्य तटस्थ दृष्टिकोण अपनाकर सामाजिक सद्भावना व एकता को प्रोत्साहन देता था। श्रवणबेलगोला के अभिलेखों में जैन एवं वैष्णव संप्रदाय के विवाद में राज्य द्वारा जैन–संप्रदाय के हितों की रक्षा करने का उल्लेख है।

11.4.4. विजयनगर साम्राज्य का पतन। (Downfall of vijaynagar empire):-

विजयनगर साम्राज्य के पतन के लिए अनेक कारण जिम्मेदार थे। इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है

(i) कमजोर केन्द्रिय सरकार (Weak central government):- विजयनगर साम्राज्य के अंतर्गत शासन केन्द्र, प्रांत से लेकर स्थानीय स्तर तक विकेन्द्रीकरण प्रणाली के रूप में थी। इसमें प्रांतों को अधिक शक्तियाँ प्रदान की गई थी। प्रांत के गवर्नरों को सेना रखने, नियुक्तियाँ करने, सिक्के जारी करने तथा कर लगाने के अधिकार प्राप्त थे। कालांतर में प्रांतीय सरकार और भी मजबूत होती गई और केंद्रीय शक्ति कमजोर होते गये जिससे विजयनगर साम्राज्य पतन की ओर अग्रसर हो गया।

(ii) भिन्न–भिन्न राजवंश (Different Dynasties):- विजयनगर साम्राज्य वि"ाल था। इसके स्थायित्व एवं शक्ति"ाली होने के लिए यह आव"यक था कि राज्य की सत्ता मजबूती के साथ किसी एक राजवं"ा के हाथ में होता। परंतु दुर्भाग्यव"ा इस साम्राज्य पर अलग–अलग चार राजवं"ाों ने राज्य किया। प्रत्येक वं"ा द्वारा अपना राज्य स्थापित करने के चक्कर में यह वि"ाल साम्राज्य 'ाड्यंत्र का ि"ाकार हो गया। अतः भिन्न–भिन्न राजवं"ाों का राज भी पतन का एक कारण बना।

(iii) निर्बल सेना (Weak Army) :- विजयनगर साम्राज्य के पतन में उसकी सेना की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। विजयनगर साम्राज्य के शासक अपनी सैनिक शक्ति के लिए सामंतों पर निर्भर रहते थे। ये

सैनिक राजा की अपेक्षा सामंतों के प्रति अधिक निष्ठावान होते थे। इसके अलावा इन सैनिकों में परस्पर तालमेल भी नही था। ऐसे में विजयनगर साम्राज्य का अंत नि"चत था।

(iv) बहमनी साम्राज्य के विरूद्ध संघर्ष (Struggle against Bahamani Empire) :- लगभग विजयनगर साम्राज्य के साथ ही इसके समांतर दक्षिण भारत में बहमनी साम्राज्य की स्थापना हुई ये दोनों साम्राज्य स्थापना के साथ ही साम्राज्य विस्तार, सामरिक शक्ति, सुरक्षा आदि कारणों से लगातार एक दूसरे के विरूद्ध संघर्ष करते रहे। इस लंबे संघर्ष के कारण विजयनगर साम्राज्य की वित्तीय स्थिति तथा सैनिक शक्ति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। निरंतर लड़ाईयों के कारण राज्य की शासन व्यवस्था भी "िाथिल पड गई। ये बातें विजयनगर साम्राज्य को पतन की ओर ले गई।

(v) कृष्णदेव राय के दुर्बल उत्तराधिकारी (Weak Successors of Krishnadev Raya) :- कृष्णदेव राय विजयनगर के महानतम शासक हुए। कु"ाल प्र"ाासन के साथ–साथ विद्या एवं कलां के भी संरक्षक थे। कृष्णदेवराय ने अपने कौ"ाल से विजयनगर साम्राज्य को "िाखर पर पहुँचा दिया था। परंतु कृष्णदेव राय के उत्तराधिकारी निर्बल तथा अयोग्य निकले और वे इस विरासत को संभालने में विफल रहे। अतः यह भी विजयनगर साम्राज्य के पतन का एक कारण साबित हुआ।

(vi) लोगों का विलासी जीवन (Lexurios Life of the People) :- विजयनगर साम्राज्य अपने समय का समृद्ध समाज था। यह समृद्धि समाज के हर वर्ग में थी। धन की अधिकता के कारण लोग ऐ"वर्य का जीवन व्यतीत करते थे। समकालीन ऐतिहासिक विवरणों से पता चलता है कि समाज में खुले रूप से गणिकाओं (वे"याओं) का कारोबार चलता था। सरायों में तो उनकी भरमार रहती थी।

इस प्रकार समस्त समाज विलासपूर्ण जीवन जीने को उत्सुक था। ऐसे समाज का पतन कोई आ"चर्य की बात नही थी।

(vii) तालीकोटा की लड़ाई (Battle of Talikota) :- कृष्णदेव राय के बाद के विजयनगर के शासकों ने मुसलमानों पर भारी अत्याचार करने आरंभ कर दिये। इससे समाज का यह वर्ग असंतुष्ट था। दूसरी ओर बहमनी साम्राज्य के पतन के फलस्परूप बने मुस्लिम राज्य विजयगनर साम्राज्य के आक्रमण से परे"ाान थे। बहमनी साम्राज्य के विघटन के फलस्वरूप बने 5 मुस्लिम राज्यों में से कोई भी अलग–अलग विजयनगर साम्राज्य का सामना करने में असमर्थ नहीं था। ऐसे में इन मुस्लिम राज्यों ने अपने परस्पर शत्रुता को भुलाकर एक महासंघ बनाने का निर्णय लिया। इसमें बरार को छोड़कर बाकी सभी मुस्लिम राज्य–अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा एवं बीदर शामिल थे। इस महासंघ ने 1565 ई. में तालीकोटा अथवा

राक्षसी तांगड़ी की लड़ाई में विजयनगर को कड़ी पराजय दी। इस लड़ाई में रामराय मारा गया। मुसलमानों ने विजयनगर में भयंकर लूटपाट की और समस्त नगर को नष्ट–भ्रष्ट कर डाला। मुसलमानों ने विजयनगर साम्राज्य के बहुत बड़े भाग पर अधिकार कर लिया था। इस युद्ध के बाद विजयनगर साम्राज्य फिर नहीं संभल पाया और अंततः 1674 ई. में इस वं"ा के अंतिम शासक श्रीरंग तृतीय की मृत्यु के साथ ही विजयनगर साम्राज्य का अस्तित्व समाप्त हो गया।

11.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress):-

(क) रिक्त स्थानों को भरने पर आधारित प्रश्न (Question based on filling in the blanks) :-

(1) विजयनगर साम्राज्य की स्थापना..... सन् में की गई थी

(2)) विजयनगर साम्राज्य का महान शासक कृष्णदेव राय ..... वं"ा से संबंधित थे

(3) बहमनी साम्राज्य का संस्थापक अलाउद्दीन बहमन"ाह ने ..... को अपनी राजधानी बनाया।

(4) बहमनी साम्राज्य के अंतर्गत 'ख्वाजा जहाँ' की उपाधि से ..... को प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया।

(5) बहमनी साम्राज्य के ..... योग्य एवं विद्वान शासक ने दक्षिण में भीमानदी के तट पर नवीन नगर फिरोजाबाद की स्थापना की।

(6) तुंगभद्रा और कृष्णा नदियों के बीच का क्षेत्र ..... कहलाता था।

(7)) विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक ..... थे।

(8) हजारा एवं विट्ठल स्वामी मंदिर का निर्माण ..... ने करवाया।

(9)) विजयनगर साम्राज्य में प्रांत को ..... कहा जाता था।

(10)) विजयनगर का सर्वाधिक प्रसिद्ध सिक्का स्वर्ण का ..... था।

(ख) सत्य–असत्य आधारित प्रश्न (True-False based Question) :-

प्रत्येक कथन के सामने उपयुक्त उत्तर सत्य या असत्य भाब्द लिखकर अंकित करें :–

(1) अष्टदिग्गज कृष्णदेव राय के दरबार में आठ तमिल भाषा के महान कवि थे। ( )

(2) बहमनी साम्राज्य का विघटन 5 मुस्लिम राज्यों अहमदनगर, गोलकुंडा, बीजापुर, बरार व बीदर में हो गया था

( )

(3) विजयनगर साम्राज्य के महान् शासक कृष्णदेव राय की उपाधि आन्ध्र भोज, अभिनव भोज, आन्ध्र पितामह आदि थी ( )

(4) तालिनकोटा का युद्ध (1565 ई. में विजयनगर विरोधी महासंघ में अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा और बरार शामिल था। ( )

(5) विजयनगर साम्राज्य में प्र"ासन की सबसे छोटी इकाई 'उर' या 'ग्राम' थी। ( )

(6) विजयनगर साम्राज्य को उन्नति के ि"खर पर पहुँचाने में महमूद गवाँ का बहुत बडा योगदान था।

( )

(7) विजयनगर की राजधानी हंपी को यूनेस्को द्वारा 1986 ई. में वि"व विरासत स्थल घोषित किया गया।

( )

(8) विजयनगर साम्राज्य का संस्थापक हरिहर एवं बुक्का ने अपने गुरू विद्यारण्य की प्रेरणा से संगम वं"ा की स्थापना की थी। ( )

(9) बहमनी राज्य का संस्थापक अलाउद्दीन हसन बहमन"ाह ने गुलबर्गा को अपनी राजधानी बनाया तथा उसका नाम बदलकर अहसनाबाद कर दिया। ( )

(10) बहमनी साम्राज्य का प्रधानमंत्री महमूद गवाँ जिसने ईरान, ईराक, मिस्त्र एवं टर्की के शासकों को स्वयं पत्र लिखा के पत्रों को 'रियाजुल–इन"ा' के नाम से संग्रहित किया गया। ( )

11.6. सारांश (Summary) :-

- विजयनगर साम्राज्य की स्थापना 1336 ई. में हरिहर और बुक्का नाम के दो भाइयों ने की थी।
- ये दोनों वारंगल (तेलंगाना) के काकतीय राजा के सामंत थे और बाद में कांपिली (आधुनिक कर्नाटक में) नामक राज्य में मंत्री बन गए।
- कांपिली पर मुहम्मद–बिन–तुगलक ने आक्रमण कर उसे जीत लिया और इन दोनों भाइयों को बंदी बनाकर दिल्ली ले गया और इस्लाम में दीक्षित कर दिया गया।
- अपने गुरू विधारण्य की प्रेरणा से वे फिर से हिन्दू धर्म में दीक्षित हुए तथा उन्होंने विजयनगर में अपनी राजधानी स्थापित की।
- विजयनगर साम्राज्य पर चार राजवं"ाों ने राज किया।

- **चार राजवंशों का वर्णन निम्न प्रकार है –**

वं"ा	संस्थापक	समय	अंतिम शासक
संगम	हरिहर प्रथम	1336–1485 ई.	विरूपाक्ष द्वितीय
सालुव	सालुव नरसिंह	1485–1505 ई.	इम्माड़ी नरसिंह
तुलुव	वीर नरसिंह	1505–1570 ई.	सदा ि"ाव राय
आरविडु	तिरूमल	1570 के बाद	श्रीरंग तृतीय

- हरिहर और बुक्का ने अपने पिता के नाम पर संगम वं"ा की स्थापना की।
- संगम वं"ा के प्रथम शासक हरिहर प्रथम की पहली राजधानी अनेगोण्डी थी, जो तुंगभद्रा नदी के तट पर स्थित थी
- हरिहर प्रथम ने विजयनगर (हम्पी) को अपनी द्वितीय राजधानी बनाया।
- विजयनगर साम्राज्य के अव"ोष आज हम्पी (कर्नाटक में) विद्यमान हैं।
- हंपी को भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय महत्त्व का स्थल 1976 ई. में घोषित किया गया।
- हंपी को यूनेस्को द्वारा वि"व पुरातत्व स्थल/अंतरराष्ट्रीय धरोहर 1986 ई. में घोषित किया गया।
- हरिहर प्रथम के बाद गद्दी पर बैठने वाला संगम वं"ाीय शासक बुक्का प्रथम को 'सागरों' का स्वामी' कहा गया है।
- बुक्का प्रथम के समय में ही एक अफगान अलाउद्दीन हसन, जिसका उत्थान गंगू नामक एक ब्राह्मण की सेवा में रहते हुए हुआ, जिसे हसन गंगू के नाम से भी जाना जाता है। उसने अलाउद्दीन हसन बहमन"ाह के नाम से बहमनी साम्राज्य की स्थापना 1347 ई. में की थी।
- विजयनगर के शासकों और बहमनी सुल्तानों के हितों का टकराव तीन अलग–अलग क्षेत्रों तुंगभद्रा के दोआब, कृष्णा–गोदावरी के डेल्टा–क्षेत्र और मराठवाड़ा प्रदे"ा में था।
- हरिहर द्वितीय विजयनगर साम्राज्य का प्रथम शासक था, जिसने महाराजाधिराज और राजपरमे"वर की उपाधि धारण की।
- वेदों के प्रसिद्ध टीकाकार सायणाचार्य हरिहर द्वितीय के मुख्यमंत्री थे।
- जैन धर्म का अनुयायी और नानार्थ रत्नमाला का लेखक ईरूगांपा उसका सेनापति था।

- विजयनगर साम्राज्य के संगमवं"ाीय शासक देवराय प्रथम ने ही सबसे पहले विजयनगर की सेना में दस हजार मुस्लिमों को भर्ती किया।
- देवराय प्रथम के शासनकाल में इटैलियन यात्री निकोलो डी कॉण्टो ने 1430 ई. में विजयनगर की यात्रा की थी।
- कॉण्टी कहता है कि इस नगर की परिधि साठ मील है। इसकी दीवारें पहाड़ों तक चली गई हैं और इन पहाड़ों की तराई में पहुँचकर उन्होंने घाटियों के गिर्द घेरा बना दिया है।
- देवराय द्वितीय ने गजबटेकर (हाथियों का ि"ाकारी), इम्माडि, देवराय (प्रौढ़ देवराय) की उपाधि धारण की।
- फारसी यात्री अब्दुर्रज्जाक देवराय द्वितीय के शासनकाल में ही विजयनगर पहुँचा था।
- अब्दुर्रज्जाक ईरान (प्राचीन नाम फारस) के शासक मिर्जा शाहरूख के दूत के रूप में भारत आया था।
- अब्दुर्रज्जाक मानता था कि उसने दुनिया में जितने भी नगर देखे या जितने नगरों के बारे में सुना था, विजयनगर उनमें से सबसे भव्य नगरों में से था।
- देवराय द्वितीय ने तेलुगू के प्रसिद्ध कवि श्रीनाथ को कवि सार्वभौम की उपाधि से सम्मानित किया।
- संगमवं"ाीय शासक मल्लिकार्जुन ने भी अपने पिता देवराय द्वितीय की भाँति गटबटेकर की उपाधि धारण की थी।
- विजयनगर साम्राज्य का सबसे महान् शासक तुलुव वं"ाीय शासक कृष्णदेवराय था।
- वह स्वयं तेलुगू और संस्कृत का प्रकांड विद्वान था।
- उसने 'अभुक्तमाल्यद', 'जाम्बवतीकल्याण' एवं उषा परिणय की रचना की।
- कृष्णदेव राय के दरबार में रहनेवाले तेलुगू साहित्य के आठ कवियों को 'अष्टदिग्गज' कहा गया।
- कृष्णदेव राय का राजकवि 'पेद्दाना' था, जो संस्कृत एवं तेलुगू दोनों भाषाओं का ज्ञाता था।
- कृष्णदेव राय ने 'यवन राज स्थापनाचार्य' आन्ध्र भोज, अभिनव भोज, आन्ध्र पितामह आदि उपाधि धारण की।
- कृष्णदेव राय एक महान् निर्माता भी था। उसने राजधानी के दक्षिणी सीमांत पर अपनी माता के नाम पर नागलपुर नामक नया नगर बसाया।
- कृष्णदेव राय ने हास्पेट नामक नगर अपनी पत्नी की स्मृति में बसाया था।
- उसने अपनी राजधानी में हजारा एवं विट्ठलस्वामी नामक मंदिर का निर्माण करवाया।
- कृष्णदेवराय के काल में डोमिगोस पायस और बारबोसा दोनों पुर्तगाली यात्री का आगमन हुआ था।

- पुर्तगाली यात्री बारबोसा कहता है– राजा इतनी आजादी देता है कि कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार आ जा सकता है तथा अपने धर्म के अनुसार जीवन व्यतीत कर सकता है।
- कृष्णदेव राय बाबर के समकालीन थे।
- बाबर ने अपनी आत्मकथा 'तुजूके बाबरी' में कृष्णदेव राय को भारत का सर्वाधिक शक्ति"ाली शासक बताया है।
- कृष्णदेव राय की मृत्यु 1529 ई. में हो गयी।
- कृष्णदेव राय के बाद तुलुव व"ा का शासक अच्युतदेव राय बना।
- अच्युतदेव राय ने महामण्डले"वर नामक एक नये अधिकारी की नियुक्ति की।
- तुलुवव"ीय शासक सदा"िवराय के शासन काल में वास्तविक सत्ता रामराय के हाथों में थी।
- तालिकोटा या राक्षसतंगड़ी का युद्ध 1565 ई. में हुआ था।
- तालिकोटा के युद्ध को बन्नीहट्टी के युद्ध के नाम से भी जाना जाता है।
- बन्नीहट्टी तालिकोटा के ही निकट एक जगह का नाम है।
- तालिकोटा के युद्ध क्षेत्र में राक्षस व तांगड़ी दोनों गाँव पड़ता है।
- इसलिए तालिकोटा के युद्ध को इन नामों से भी जानते है।
- तालिकोटा के युद्ध 1565 ई. में विजयनगर के विरूद्ध बने महासंघ में अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुण्डा व बीदर शामिल थे।
- इस युद्ध में रामराय की हत्या कर दी गयी।
- तालिकोटा के युद्ध को सामान्यतः विजयनगर के महान् युग का अंत माना जाता है।
- विजयनगर के चौथे राजव"ा आरविडु व"ा के संस्थापक तिरूमल ने पेनुकोण्डा को अपनी राजधानी बनाया।
- विजयनगर का शासन राजतंत्रात्मक था। राजा को राय की उपाधि से संबोधित किया जाता था।
- राजा के चयन में नायकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी।
- युवराज के राज्यभिषेक को 'युवराज पट्टाभिषेकम्' कहा जाता था।
- राज्य संबंधित कार्यो के संचालन के लिए राजपरिषद् होती थी।
- राजपरिषद् के बाद शासन संचालन के लिए केंद्रीय मंत्रिपरिषद् होती थी।
- मंत्रिपरिषद् के प्रमुख अधिकारी को प्रधानी या महाप्रधानी कहा जाता था।

- मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष को सभानायक कहा जाता था।
- केन्द्र में अधिकारियों की वि"ोष श्रेणी को दंडनायक कहा जाता था।
- शासन प्रबंधन के लिए विजयनगर साम्राज्य बहुत से प्रांतों में बँटा था।
- प्रांतों में जो इकाई का क्रम मिलता है, उसमें राज्य या मंडलम् कोट्टम या वलनाडु, नाडु, मेलाग्राम और उर या ग्राम होते थे
- प्र"ासन की सबसे छोटी इकाई 'उर' या ग्राम होती थी।
- 'मेलाग्राम' 50 ग्रामों के समूह को कहते थे।
- ग्रामीण प्र"ासन के संचालन के लिए 'आयंगार' व्यवस्था थी।
- प्रत्यक्ष राजकीय नियंत्रण की भूमि को 'भंडारवाद ग्राम' के नाम से जानते थे।
- ब्रह्मदेय – ब्राह्मणों को दान में दी गई भूमि।
- देवदेय – मंदिरों को दान में दी गई भूमि।
- मठापुर – मठों को दान में दी गई भूमि।
- ब्रह्मदेय, देवदेय, मठापुर भूमि कर–मुक्त भूमि होती थी।
- नायकों को प्रदान की जाने वाली भूमि को 'अमरम्' कहते थे।
- रत्तकोडगै – युद्ध में शोर्य प्रद"ान करने वालों को दी जाने वाले भूमि जो कर मुक्त होती थी।
- विजयनगर शासक कृष्णदेव राय ने भूमि का सर्वेक्षण कराया था।
- राज्य की आय का मुख्य स्त्रोत भूमि कर था जिसे 'रया रेखा' कहा जाता था।
- सिंचाई व्यवस्था में पूंजी निवे"ा द्वारा भी आय प्राप्त की जाती थी, जिसे तमिल क्षेत्र में 'दासवंदा' तथा आंध व कर्नाटक में 'कोट्टकुडगै' कहा जाता था।
- विजयनगर साम्राज्य द्वारा घोड़ों का आयात अरब और मध्य ए"ाया से किया जाता था।
- विजयनगर साम्राज्य में घोड़ों के व्यापारियों को 'कुदिरई चेट्टी कहा जाता था।
- विजयनगर साम्राज्य द्वारा आयात की जाने वाली वस्तुएं थीं –घोड़ा, हाथी दाँत, बहुमूल्यरत्न, आभूषण आदि।
- विजयनगर साम्राज्य द्वारा निर्यात की जाने वाली वस्तुएं थीं – गर्म मसाले, वस्त्र, सफेद चावल, लोहा, हीरा आदि।
- विजयनगर का सर्वाधिक प्रसिद्ध सिक्का सोने का 'वराह' था।

- चाँदी के छोटे सिक्के को 'तार' कहते थे।
- विजयनगर साम्राज्य में जुलाहे को 'कैकोल्लार' एवं दस्तकारों को 'वीर पांचाल' कहा जाता था।
- गीली भूमि को 'नन्जाई' कहते थे।
- नकद लगान को 'सिद्दम' कहते थे।
- उम्बलि – गांवों में वि"ोष सेवाओं के लिए दी गई लगान मुक्त भूमि।
- कुट्टगि – बड़े भूस्वामियों तथा मन्दिरों द्वारा पट्टे पर दी गई भूमि।
- बोमलाट – छाया नाटक को कहते थे।
- विजयनगर के शासक शैव एवं वैष्णव धर्म के अनुयायी थे।
- अराविडु राजव"ा की दो राजधानियां थीं – पेनुकोंडा एवं चंद्रगिरी।
- विजयनगर साम्राज्य में सैनिक कमांडर को 'अमर नायक' कहा जाता था।
- विजयनगर साम्राज्य का मुख्य त्यौहार – 'महानवमी' था।
- विजयनगर साम्राज्य का सर्वाधिक प्रसिद्ध जला"ाय कमलपुरम् था।
- तुंगभद्रा और कृष्णा नदियों के बीच का क्षेत्र रायचुर दोआब कहलाता था।
- 'विरूपाक्ष' मंदिर हंपी में स्थित है।
- विजयनगर साम्राज्य के शासक 'विरूपाक्ष' के नाम पर शासन चलाते थे।
- विजयनगर साम्राज्य की स्थानीय देवी – पंपा देवी थी।
- विजयनगर साम्राज्य की राजकीय भाषा –कन्नड़ थी।
- मंदिरों में बना वि"ाल खुला हॉल – 'मंडप' कहलाता था।
- मंदिरों के प्रवे"ा द्वार को – गोपुरम् कहते थे।
- कृष्णदेव राय द्वार निर्मित विट्ठल मंदिर –विष्णु देवता को समर्पित है।
- समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन नहीं था।
- सती प्रथा का वर्णन मिलता है।
- कृष्णदेव राय ने विधवा विवाह को कर मुक्त कर दिया था।
- देवदासी प्रथा का प्रचलन था।
- मनुष्यों के क्रय–विक्रय को 'वेस–वग' कहा जाता था।

- युद्ध में वीरता दिखाने वाले पुरूष को 'गंडपेड' नामक आभूषण पैरों में पहनाया जाता था।
- 'यक्षगान' नृत्य शैली का विकास इस काल में ही हुआ था।
- विजयनगर साम्राज्य में शतरंज और पासा अत्यंत लोकप्रिय खेल थे।
- उत्तर भारत से दक्षिण भारत में आकर बसने वाले लोगों को 'बडवा' कहा जाता था।
- मंठों, मंदिरों व अग्रहारों में ि"ाक्षा प्रदान की जाती थीं।
- 'अग्रहारों' में मुख्यतः वेदों की ि"ाक्षा दी जाती थी।
- **विजयनगर साम्राज्य में आये विदेशी यात्रियों का विवरण** :–

यात्री	**देश**	**शासक**	**विवरण**
अब्दुर्रज्जाक	फारस (ईरान)	देवराय प्रथम	विजयनगर सचिवालय का वर्णन
निकोलो कॉण्टो	इटली	देवराय प्रथम	विजयनगर शहर का वर्णन
पायस	पुर्तगाली	कृष्णदेव राय	विजयनगर के ि"ाल्प व व्यापार का वर्णन
बारबोसा	पुर्तगाली	कृष्णदेव राय	सती प्रथा का वर्णन
सीजर फ्रेडरिक	पुर्तगाली	तालिकोटा युद्ध के बाद आया	विजयनगर का वर्णन किया
नूनीज	पुर्तगाली	अच्युत देवराय	सती प्रथा का उल्लेख
निकितीन	रूस	मुहम्मद तृतीय (बहमनी व"ाीय सुल्तान)	विजयनगर की असमानता का वर्णन

- बहमनी साम्राज्य का संस्थापक अलाउद्दीन हसन बहमन"ाह था।
- अलाउद्दीन हसन बहमन"ाह ने गुलबर्गा को राजधानी बनाया।
- अलाउद्दीन हसन बहमन"ाह ने सम्पूर्ण साम्राज्य को चार तराफों (प्रांतों) – गुलबर्गा, दौलताबाद, बीदर, बरार में विभाजित किया।
- बहमनी साम्राज्य के शासक मुहम्मद शाह प्रथम का मुदकल के किले पर अधिकार को लेकर विजयनगर शासक बुक्का प्रथम से 1367 ई. में युद्ध हुआ था जिसमें पहली बार युद्ध में तोपखाने का प्रयोग किया गया।
- फिरोज"ाह बहमनी साम्राज्य का विद्वान सुल्तान था।

- उसे कई भाषाओं का ज्ञान था।
- उसने खगोल"ास्त्र के अध्ययन के लिए दौलताबाद में एक वेध"ाला का निर्माण करवाया।
- बहमनी शासक ि"हाबुद्दीन अहमद प्रथम ने गुलबर्गा की जगह बीदर को राजधानी बनाया और इसका नाम 'मुहम्मदाबाद' रखा।
- अहमद प्रथम का शासनकाल न्याय तथा धर्मनिष्ठता के लिए प्रसिद्ध था तथा उसका संपर्क सूफी संत गेसूदराज से था। अतः उसे इतिहास में अहमद"ाह 'वली' या 'संत' अहमद भी कहा जाता है।
- बहमन सुल्तान हुमायूँ को इसकी क्रूरता के कारण जालिम शाह के नाम से जाना जाता है। इसे 'दक्कन' का 'नीरों' भी कहा जाता था।
- बहमनी साम्राज्य के सुल्तान मुहम्मद तृतीय के शासन काल में ख्वाजा जहाँ इसका मंत्री बना।
- इसके समय में ईरानी व्यापारी महमूद गवाँ को शासन में सेवा दिया गया तथा इसे 'मलिक–ए–तुज्जार' की उपाधि दी गयी।
- **महमूद गवाँ** –
- जन्म से ईरानी था
- प्रारंभ से वाणिज्य–व्यापार में लगा था।
- बहमनी साम्राज्य के अंतर्गत उसे मलिक–ए–तुज्जार (व्यापारियों का प्रधान) की उपाधि दी गयी।
- सुल्तान का प्रधानमंत्री बनाया गया।
- महमूद गवाँ ने प"िचमी तट के प्रदे"ाों दाभोल और गोवा पर विजय प्राप्त की थीं।
- महमूद गवाँ ने बहमनी राज्य को आठ प्रांतों या तराफों में विभाजित किया था।
- महमूद गवाँ विद्या तथा कला का बहुत बड़ा सरंक्षक था।
- उसने राजधानी बीदर में एक भव्य महाविद्यालय की स्थापना की।
- महमूद गवाँ ने भूमि की व्यवस्थित पैमाइ"ा, ग्रामों के सीमा– निर्धारण और लगान –निर्धारण की जाँच कराई।
- उसने अपनी राजनीतिक गतिविधियों को केवल बहमनी साम्राज्य तक ही सीमित नहीं रखा, वरन भारत और उसके बाहर ईरान, इराक मिस्त्र, टर्की के सुल्तानों के साथ पत्र–व्यवहार किया।
- महमूद–गवाँ के पत्रों का संग्रह – 'रियाजुल–इन"ाा' नाम से किया गया है।

- बहमनी सुल्तान की एक बड़ी समस्या अमीरों के मध्य होने वाले झगड़े थे। अमीर लोग पूर्वागंतुकों दक्कनियों तथा अफाकियों (नवोगंतकों) में बँटे हुए थे।
- महमूद गवाँ अफाकी अर्थात् नावगंतुक था।
- उसके विरोधियों ने युवा सुल्तान को भड़का दिया तथा 1482 ई. में उसने महमूद गवाँ को मृत्युदंड दे दिया।
- इसके कुछ वर्षो के बाद ही बहमनी साम्राज्य पाँच छोटे–छोटे राज्यों – गोलकुंडा, बीजापुर, अहमदनगर, बरार और बीदर में बंट गया।

11.7. संकेत–सूचक (Key-Words) :-

- **दोआब** – दो नदियों के बीच का क्षेत्र। जैसे – तुंगभद्रा और कृष्णा के बीच का क्षेत्र रायचूर दो आब।
- **शाही** – केंद्रीय/राज्य शासन से संबंधित। –राजा अथवा शासक से संबंधित।
- **अतराफ** – प्रांत (बहमनी साम्राज्य में)
- **आफाकी** – नवागंतुक अर्थात् बाहर से आये अमीर। (बहमनी साम्राज्य में)
- **वली** –संत
- **अष्टदिग्गज** – आठ महान् व्यक्तियों का समूह। (विजयनगर साम्राज्य में तेलुगू साहित्य के विद्वान)
- **गणिका** – वे"या (Prostitute)
- **हंपी** – विजयनगर साम्राज्य की राजधानी जो वर्तमान में कर्नाटक में स्थित है।
- **रया रेखा** – भूमि कर
- **राय** – राजा/"ासक (विजयनगर काल में)

11.8. स्व–मूल्यांकन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT) :-

भाग (क) बहु विकल्पी प्रश्न (Multiple choice based Questions) :- चार विकल्पों में से एक सही उत्तर का चयन करें :–

(इनके उत्तर दायीं ओर कोष्ठक में दिए हुए है)

11. विजयनगर साम्राज्य की राजधानी थी?

(ii) हंपी (ii) काँची (i)

(iii) मदुरा (iv) तालीकोटा

12. विजयनगर साम्राज्य की स्थापना किस नदी के किनारे हुई थी ?

(ii) कृष्णा (ii) तुंगभद्रा (ii)

(iii) कांवेरी (iv) गोदावरी

13. विजयनगर साम्राज्य पर शासन करने वाला प्रथम शासक कौन था ?

(ii) बुक्का (ii) हरिहर (ii)

(iii) देवराय प्रथम (iv) कृष्णदेव राय

14. विजयनगर साम्राज्य के किस शासक ने सर्वप्रथम महाराजाधिराज की उपाधि धारण की ?

(iii) हरिहर (ii) बुक्का (iii)

(iii) हरिहर द्वितीय (iv) देवराय प्रथम

15. विजयनगर साम्राज्य में प्रांत को कहा जाता था ?

(i) मंडलम (ii) नाडु (i)

(iii) स्थल (iv) मुक्ति

16. तेलुगू भाषा की महत्वपूर्ण कृति 'अमुक्तमाल्यद' की रचना विजयनगर के किस शासक ने की ?

(i) कृष्णदेव राय (ii) देवराय प्रथम (i)

(iii) हरिहर राय (iv) विरूपाक्ष

17. कृष्णदेव राय के शासनकाल में अष्ट–दिग्गज किसे कहा गया ?

(i) आठ मंत्रियों वाले परिषद् को (iii)

(ii) विजयनगर साम्राज्य के आठ बहादुरों को

(iii) तेलुगू भाषा के आठ विद्वानों को

(iv) कृष्णदेव राय द्वारा लिखी गयी एक पुस्तक को

18. उत्तर भारत से बड़ी संख्या में दक्षिण भारत आकर बसे हुए लोगों को कहा गया ?

(i) वेसबाग (ii) बड़्वा (ii)

(iii) गंडपेंद्र (iv) अफाकी

19. सर्वप्रथम विजयनगर के किस शासक ने विजयनगर की सेना में मुसलमानों की भर्ती आरंभ की ?

(i) कृष्णदेव राय (ii) विरूपाक्ष (iii)

(iii) देवराय द्वितीय (iv) अच्युतराय

20. जिस समय विजयनगर एवं बहमनी साम्राज्य की नींव पड़ी उस समय पर कौन शासन कर रहा था ?

(i) मुहम्मद–बिन–तुगलक (ii) गयासुद्दीन तुगलक (i)

(iii) फिरोज तुगलक (iv) नासिरूद्दीन मुहम्मद तुगलक

भाग (ख) निबंधात्मक प्रश्न (Essay based Questions) :-

(1) विजयनगर साम्राज्य के प्र"ाासन की प्रमुख वि"ोषताएँ लिखिए।

(Write down the main characteristics of Vijaynagar administration.)

(2) विजयनगर साम्राज्य की सामाजिक एवं आर्थिक द"ाा का वर्णन कीजिए ?

(Describe the social and economic condition of vijaynagar kingdom)

(3) कृष्णदेव राय की प्रमुख उपलब्धियों पर प्रका"ा डालें।

(Highlight on the main achievements of Krishnadeva Raya)

भाग (ग) संक्षिप्त उत्तर वाले प्रश्न (Short Answer type Questions) :-

(1) बहमनी साम्राज्य के पतन के कारण बताएं।

(Explain the cause of downfall of Bahmani kingdom)

(2) संक्षिप्त नोट लिखें। (Write short notes) :-

(i) नायंकार व्यवस्था (Nayankar System)

(ii) आयुगांर व्यवस्था (Ayangar System)

(iii) महमूद गवाँ (Mahmud Ganwa)

(iv) तालीकोटा की लड़ाई (Battle of Talikota)

11.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

11.5 (क) का उत्तर :–

(1) 1336 ई. में (2) तुलुव (3) गुलबर्गा

(4) महमूद गवाँ (5) फिरोज"ाह (6) रायचूर दोआब

(7) हरिहर और बुक्का (8) कृष्णदेव राय

(9) मंडलम् (10) वराह

11.5 (ख) का उत्तर :–

(1) सत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) असत्य

(5) सत्य (6) असत्य (7) सत्य (8) सत्य

(9) सत्य (10) सत्य

11.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Readings) :-

(1) मध्यकालीन भारत (खंड –1 (750–1540) – हरिशचन्द्र वर्मा – हिन्दी माध्यम, कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, द्वितीय , संस्करण : 20 फरवरी 1985

(2) Modern's abc of themes in Indian History Prfo. Manjeet Singh Sodhi- Modern Publishers, Railway Road, Jalandhar

(3) भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय आंदोलन – द्वितीय संस्करण : जून, 2018, दृष्टि पब्लिकेशन्स, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली – 110009

(4) यूनीक सामान्य अध्ययन – प्रयाग पुस्तक भवन – 20–ए यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

(5) संक्षिप्त इतिहास **NCERT** सार कक्षा **VI-XII,** महेश कुमार वर्णवाल **Cosmos Publication,** प्रथम संस्करण : 2019, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	**AUTHOR : Mr. Mohan Singh Baloda**
LESSON NO. 12	**VETTER :**
भारत पर तुर्कों का आक्रमण : महमूद गजनवो एवं मुहम्मद गौरी **(Invasion of turks in india : Mohmud' Ghanjani and Mohammad Ghori)**	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

12.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

12.2. परिचय **(Introduction)**

12.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

12.3.1. भारत में तुर्कों का आगमन या तुर्कों का आक्रमण।

(The arrival of thurks in indial or invasion of truks in india)

12.3.2. महमूदकालीन भारतीय राजनीतिक परिस्थितियाँ।

(Indian political circumstances during mahmud)

12.3.3. महमूद गजनवी के आक्रमणों के उद्दे"य या कारण।

(Motives of Mahmud's invasions or causes)

12.3.4. महमूद गजनी के भारत पर आक्रमण।

(Mahmud's invasion of India)

12.4. विषय वस्तु का आगे का भाग **(Further Main body of the text)**

12.4.1 महमूद गजनी के आक्रमणों का भारत पर प्रभाव या परिणाम

(Result or effects of Mahmud's invasions)

12.4.2. भारत पर मुहम्मद गौरी के आक्रमण एवं कारण।

(Mohammad Ghori's invasions of india and causes)

12.4.3. मुहम्मद गौरी के भारतीय आक्रमण के परिणाम या प्रभाव।

(Result or effects of Mohammad Ghori's invasions)

12.4.4. तुर्को (मुसलमानों) के विरूद्ध राजपूतों की पराजय के कारण।

(Casues of the defeat of the Rajputs against the Muslims/Turks)

12.4.5. भारत में तुर्को की सफलता के कारण।

(Causes of the success of the Turks in india)

12.4.6. महमूद गजनी एवं मुहम्मद गौरी का मूल्यांकन।

(Evaluation of Mahmud and Ghori)

12.4.7. भारत पर तुर्कों की विजय का प्रभाव या परिणाम ।

(Results or Effects of the success of the Truks in India)

12.5. प्रगति समीक्षा **(Check your progress)**

12.6. सारांश **(Summary)**

12.7. संकेत–सूचक **(Key-Words)**

12.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा **(Self Assessment Test)(SAT)**

12.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर **(Answers to check your Progress)**

12.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Readings)

12.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस अध्याय के अध्ययन के उपरांत आप निम्न तथ्यों के योग्य हो जाएगें :–

- भारत में तुर्को का आगमन किस प्रकार हुआ।
- महमूदकालीन भारजीय राजनैतिक परिस्थितियों से अवगत करवाना।
- महमूद गजनवी के आक्रमणों की पाठक परिचर्चा कर सकेंगे।
- महमूद गजनवी के आक्रमणों का भारत पर क्या प्रभाव पड़ा।
- मुहम्मद गौरी के भारतीय आक्रमण के परिणामों पर चर्चा करना।
- भारत पर मुहम्मद गौरी का आक्रमण एवं कारण पर मूल्यांकन करना।

- भारतीय सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, प्र"ासनिक व अन्य क्षेत्रों पर क्या प्रभाव पड़ा।
- जिज्ञासु पाठकों को इस बात से रूबरू करवाना कि भारत में तुर्कों की सफलता के क्या कारण थें।
- इतिहास के प्रति रूचि विकसित करना।

12.2. परिचय (Introduction) :- तुर्की शासन व्यवस्था जनजातीय संगठन पर आधारित थी और उसमें कुल का एक प्रधान होता था। मुहम्मद ने मुस्लिम समाज को एक राजनीतिक संगठन का रूप दिया। अनेक कबीलों के प्रधानों ने मुहम्मद को अपना मुखिया बनाया और धीरे–धीरे मदीना के लोगों ने इस्लाम को वि"ाल रूप दिया। 10वीं एवं 11 वीं ई. में अजाम के इतिहास में दो आंदोलन प्रसिद्ध थे, प्रथम –सेना प्र"ासन में तुर्कों की प्रधानता। द्वितीय इस समय सल्तनत, अजाम का प्र"ासनिक केन्द्र बन गया और खलीफा एक प्रतीक मात्र रह गया।

भारत पर सर्वप्रथम अरबों ने आक्रमण किया उसके प"चात् तुर्कों ने आक्रमण किया भारत के इतिहास में यह एक मुख्य घटना थी, क्योंकि इस से पहले जितने भी आक्रमण हुए इनमें से कोई भी इतना प्रभाव"ाली सिद्ध नहीं हुआ था। जैसे – शकों, कुषाणों, हूणों आदि के आक्रमण। तुर्क चीन के उत्तर–पि"चम सीमा पर निवास करने वाली एक असभ्य और खूँखार जाति थी। तुर्कों का एक मात्र लक्ष्य वि"ाल मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना करना था। अलप्तगीन नाम का एक तुर्क सरदार था जिसने गजनी में एक तुर्क साम्राज्य स्थापित किया था। 977 ई. में सुबुक्तगीन जो अलप्तगानि का दामाद था उसने गजनी पर अपना अधिकार कर लिया। हिन्दू"ाही वं"ा के एक शासक जयपाल थे उन्हें सुबुक्तगीन से अपने राज्य पर खतरा महसूस हुआ अतः उन्होंने दो बार उस पर आक्रमण किया किंतु प्रकृति की विपरीत परिस्थितियों के कारण उन्हें दोनों बार पराजय मिली इस अपामन से क्षुब्ध होकर उन्होंने आत्महत्या कर ली। 986 में सुबुक्तगीन ने जयपाल के विरूद्ध एक संघर्ष में शामिल हुआ दुर्भाग्यव"ा इसमें जयपाल को पराजय हाथ लगी। जब सुबुक्तगीन मरा तब तक उसके राज्य की सीमाएँ अफगानिस्तान, खु"ासान, वल्ख तथा पि"चमोत्तर भारत तक फैल चुकी थीं।

सुबुक्तगीन के मरणोपरान्त उसका उत्तराधिकारी पुत्र महमूद गजनवी गजनी के राजसिंहासन पर आसीन हुआ। 'तारीख ए गुजीदा के अनुसार गजनी ने सीस्तान के राजा खलफ को हराकर सुलतान की उपाधि पाई। इतिहासकारों का विचार है कि सुल्तान की उपाधि से विभूषित गजनी पहला तुर्क शासक था। महमूद गजनवी ने बगदाद के खलीफा यामीनुद्दौला तथा अमीन–उल्ल–मिल्लाह' से जब यह उपाधि पाई तभी उसने यह प्रतिज्ञा की कि वह प्रत्येक वर्ष भारत पर एक आक्रमण अव"य करेगा। उसने इस्लाम के प्रसार तथा धन प्राप्ति की आंकाक्षा से भारत पर 17 बार आक्रमण किए। महमूद गजनी जब सिहांसन पर बैठा था तब उसकी आयु 27 वर्ष थी (998 ई. में) इतिहासकार इलियट के मतानुसार ये सभी 17 आक्रमण महमूद ने 1000–1026 ई. तक किए गए। भारत पर

अपने प्रत्येक आक्रमण को मजमूद ने 'जेहाद' का नाम दिया और अपना नाम 'बुत ि"ाकन' रखा। महमूद गजनवी ने भारत पर निम्न क्रम से आक्रमण किए।

हिन्दू राजव"ा जयपाल, आनंदपाल तथा त्रिलोचनपाल के विरूद्ध (1000–1021 ई.) मुल्तान, भटिंडा के विरूद्ध (1004–1010 ई.) नारायणपुर के विरूद्ध (1002 ई.) थाने"वर के विरूद्ध (1014ई.) कन्नौज एवं मथुरा के विरूद्ध (1018–1029 ई.) कलिंजर के विरूद्ध (1019–1023 ई.) सोमनाथ के विरूद्ध (1024 ई. से 1026 ई.) तथा जाटों के विरूद्ध (1019–1027 ई.)। अपनी अपार संपत्ति के लिए प्रसिद्ध गुजरात में समुद्र तट पर स्थित सोमनाथ मंदिर की संपत्ति को लूटने के लिए गजनवी ने लगभग 50,000 ब्राह्मण तथा हिन्दुओं की हत्या की। पंजाब से बाहर किया गया यह उसका अंतिम आक्रमण था। सन् 1030 में वह गजनी में ही मृत्यु को प्राप्त हो गया। महमूद के भारत पर आक्रमण का एकमात्र उद्दे"य धन लूटना था। वह भारत में 'मूर्ति भंजक' आक्रमणकारी के रूप में जाना गया। उसकी सेना में सेवंदराय और तिलक जैसे हिन्दू उच्च पदों पर विराजमान थे। जब महमूद ने भारत पर आक्रमण किया उस समय उसके साथ ख्यातिलब्ध इतिहासवेत्ता गणितज्ञ, भूगोल ज्ञाता, खगोल तथा द"ान"ास्त्र के ज्ञाता थे अथवा किताबुल हिंद के लेखक 'अलबरूनी' भी भारत आए थे। अलबरूनी महमूद का दरबारी कवि भी था। उसने 'तहकोके–ए–हिंद' पुस्तक में भारत का वर्णन किया है। इन इतिहासकारों के अलावा 'उतबी, तारीख–ए–सुबुक्तगीन' का लेखक 'वैहाकी' भी महमूद के साथ आए थे। 'वैहाकी' इतिहासकार 'लेनपुल' के द्वारा 'पूर्वीपेटस' की उपाधि से सम्मानित किया गया था। महमूद के दूसरे दरबारी कवियों में '"ाहनामा' का लेखक 'फिरदौसी' फारस का कवि 'उजरी' खुरासानी विद्वान 'तुसी' महान ि"ाक्षक व विद्वान 'उन्सूरी', 'अस्जदी' और फरूखी का नाम प्रसिद्ध है।

गौर महमूद गजनी के अधीनस्थ एक छोटा सा राज्य था। ि"ाहाबुद्दीन उर्फ मुईजुद्दीन मुहम्मद गौरी द्वारा भारत में तुर्क राज्य की स्थापना की गई। मुहम्मद गौरी के द्वारा भारत पर अनेक आक्रमण किए गए। उसका पहला आक्रमण 1175 ई. में मुल्तान के विरूद्ध था। मुहम्मद गोरी ने दूसरा आक्रमण 1178 ई. में गुजरात पर किया उस समय वहाँ पर चालुक्य सोलंकी व"ा का शासक था। इसी कुल में जन्में मूलराज द्वितीय (भीम द्वितीय) ने आबू पर्वत के समीप मुहम्मद गौरी को परास्त किया। यह भारत में मुहम्मद गौरी की पहली हार थी। तत्प"चात् गौरी 1179–1186 ई. के बीच पंजाब पर आक्रमण कर उसे अपने अधीन कर लिया। 1179 ई. पे"ावर तथा 1185 को स्यालकोट जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। 1191 ई. में तराईन में पृथ्वीराज के साथ भिंडत हुई जिसमें गौरी बुरी तरह पराजित हुआ। यह तराईन का प्रथम युद्ध था। तराईन का द्वितीय युद्ध 1192 में फिर मुहम्मद गौरी और पृथ्वीराज चौहान के बीच हुआ इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की हार हुई। इस युद्ध के बाद चौहान की गोरी ने हत्या कर दी। 1194 ई. में राजपूत नरे"ा जयचन्द और गोरी के बीच चन्दावर का युद्ध हुआ। इस युद्ध में गौरी ने जयचन्द को पराजित कर उसकी हत्या कर दी। मुहम्मद गौरी अपने विजित प्रदे"ा कुतुबद्दीन ऐबक को सौंपकर

गजनी वापस चला गया। कुतुबद्दीन ऐबक ने 1194 में अजमेर को जीता और वहाँ पर स्थापित जैन मंदिर तथा संस्कृत वि"वविद्यालय को नष्ट कर दिया और इनके मलवों पर 'कुव्वत–उल–इस्लाम' तथा ढाई दिन के झोपड़े का निर्माण करवाया। 1202–1203 के बीच ऐबक ने बुंदेलखण्ड के कलिंजर को जीतकर अपने राज्य में शामिल कर लिया 1197–1205 ई. के बीच ऐबक ने बंगाल और बिहार पर आक्रमण कर विक्रमशिला, नालंदा वि"वविद्यालयों और उददण्डपुर पर अधिकार कर लिया।

1205 ई. में गौरी फिर भारत लौटा अबकी बार उसकी मुठभेड़ खोक्खरों से हुई। खोक्खरों को हराकर उसने उनकी बड़ी निर्ममता से हत्या कर दी। इस विजय के बाद जब वह गजनी लौटने लगा तो 15 मार्च 1206 ई. को रास्ते में ही उसकी भी हत्या कर दी गई उसके शव को गजनी ले जाकर दफनाया गया। मुहम्मद गौरी के मरणोपरान्त उसके गुलाम सरदार कुतुबद्दीन ऐबक के द्वारा 1206 में गुलाम वं"ा की नींव रखी गई। इस अध्याय में हम किस प्रकार अरबों के बाद तर्कों ने भारत में अपने साम्राज्य का विस्तार किया, उनका क्या लक्ष्य था इस लक्ष्य को प्राप्त करने में तुर्क सरदार महमूद गजनी एवं मुहम्मद गौरी ने कौन–कौन सी लडाईयाँ लड़ी। इसकी विस्तार से चर्चा की जाएगी ताकि छात्र इस से ज्ञान प्राप्त करके लाभान्वित हो सके।

12.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु (Main Body of Text) :-

12.3.1. भारत में तुर्को का आगमन या तुर्को का आक्रमण। (The arrival of thurks in indial or invasion of truks in india) :-

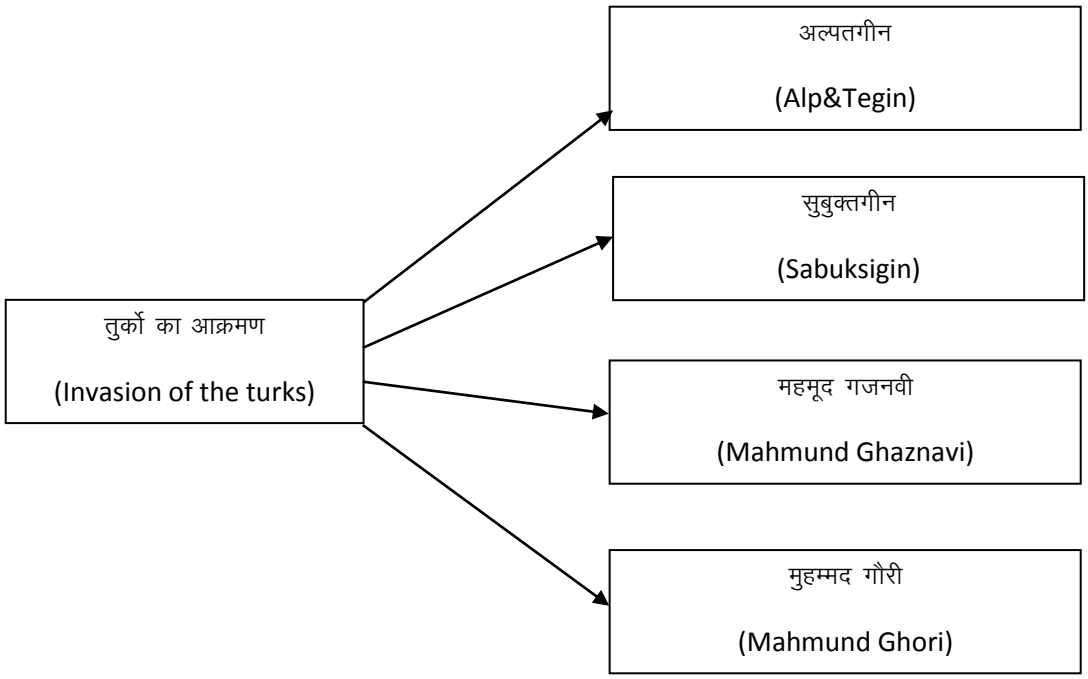

मध्यकालीन भारत के इतिहास में अरबों के आक्रमण के बाद भारत पर तुर्की आक्रमण एवं तुर्की शासन की स्थापना भारत के इतिहास में एक मुख्य घटना भारतीय इतिहास के किसी भी काल में प्रथम बार जिस विदे"ी जाति ने 11वीं व 12वीं सदी में तुर्की आक्रमणों की शुरूआत हुई। इस बार इस्लामी आक्रमण एक योजना के तहत् किया गया। भारतीय राजनीतिक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए भारत के बहुत बड़े भू–भाग पर अधिकार स्थापित कर लिया। तुर्को को भारत में इस्लामी राज्य स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है। तुर्को के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक द"ा अच्छी नहीं थी। इस समय उत्तर भारत में केन्द्रीय शक्ति की कमी थी। जो छोटे–छोटे राज्यों के रूप में बिखरी हुई थी। ये सभी शासक आपसी द्वंद्व के कारण किसी बाह्य शक्ति का सामना करने में असमर्थ थे। इस तरह की राजनीतिक परिस्थितियों का तुर्को ने उचित लाभ उठाया।

अल्पतगीत प्रथम तुर्क शासक था और यह गजनवी वं"ा का संस्थापक भी था। इसने 962 ई. में काबुल पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। वह गजनी का शासक था और उसके उत्तराधिकारी सुबुक्गीत ने हिन्दू"ाही शासक जयपाल को हराकर पे"ावर पर अपना अधिकार स्थापित किया था। महमूद गजनवी के आक्रमण और मुहम्मद गौरी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति (Political condition of India) काफी दयनीय थी। इस समय कोई भी शासक या शक्ति ऐसी नहीं थी जो विदे"ी आक्रमणों का सामना कर सके। क्योंकि हिन्दू शासक और मुस्लिम शासक एक साथ मिलकर संगठन बनाने में असफल रहे। भारत पर तुर्कों के आक्रमण का उद्दे"य इस्लाम के प्रसार और धर्म परिवर्तन मात्र के लिए थे, ऐसा कहना तत्कालीन सामाजिक, सामयिक एवं राजनीतिक प्रवृतियों तथा परिप्रेक्ष्यों की उपेक्षा करना होगा। ि"ाहाबुद्दीन ने भारत की भूमि पर पहली बार युद्ध सहधर्मी मुस्लिम शासकों के साथ किया राजनीतिक सूझ–बूझ का परिचय देते हुए स्थानीय शासकों के साथ समझौते की नीति अपनाई।

12.3.2. महमूदकालीन भारतोय राजनीतिक परिस्थितियाँ। (Indian political circumstances during mahmud) :-

11 वीं या 12 वीं सदी में भारत अनेक छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। इस समय भारत पर अधिकां"ात राजपूत शासक थे। हर्ष के बाद भारत में राजपूत राजाओं की स्थिति काफी सुदृढ़ हो गई थी। जिस समय महमूद ने भारत पर आक्रमण किया उस समय भारत में निम्नलिखित राज्य अस्तित्व में थे :–

(1) दक्षिण भारत के राज्य :– 11 वीं शताब्दी की शुरूआत में दक्षिण भारत पर चोलों और चालुक्यों का अधिकार था। चोलवं"ा के प्रमुख शासक राजराज प्रथम (985–1014 ई.) तथा राजेन्द्र ने (1014–1044 ई.) तक कु"ालता पूर्वक शासन किया। यह चोलों के उत्कर्ष का समय था। महमूद के शासनरूढ़ की कालावधि में चालुक्यवं"ा के

सत्याश्रय (997–1015 ई.) तथा जय सिंह द्वितीय का शासन था। इसी अवधि में बेगी के चालुक्य वं"ा में शक्ति वर्मा प्रथम शासन करते थे इन्होनें चोल सम्राट की सहायता से अपना राज्य हस्तगत किया।

(2) सिंध की स्थिति :– 8 वीं शताब्दी में जब अरबों ने सिंध पर अधिकार कर लिया तो महमूद के शासनरूढ़ होने के समय उनका शासन क्षेत्र मुल्तान से मैसूर तक फैला था। सिंध के दूसरे क्षेत्रों पर स्थानीय राजाओं के राज्य थे।

(3) काबुल एवं पंजाब का हिन्दूशाही राज्य :– महमूद ने जब भारत पर आक्रमण किया उस समय काबूल और पंजाब में हिन्दू"ाही वं"ा का राज्य था। पंजाब पर उस समय जयपाल का शासन था 1002 में आनन्दपाल राजा बना। इस शाही परिवार ने अंतिम साँस तक महमूद के आक्रमणों का जवाब दिया। इस वं"ा के सम्बन्ध में अलबरूनी का कथन है कि यह प्राचीन भारत में उत्पन्न राजवं"ा था।

(4) दिल्ली के तोमर :– तोमर राजपूत राजाओं की एक वं"ावली थी इन्होंने दिल्ली पर 11 वीं सदी में शासन किया था। अनंगपाल भी एक तोमर वं"ी राजा थे। जिन्होंने 11 वीं शताब्दी में दिल्ली नगर की नींव रखी।

(5) मालवा का परमार वंश :– नवीं शताब्दी के आरंभ में परमार वं"ा आगमन उत्तर–मालवा क्षेत्र से हुआ। इस वं"ा का प्रारंभ कृष्णराज से माना जाता है। इस वं"ा का सबसे महत्वाकांक्षी राजा भोज था जो चेदि राजाओं के साथ युद्ध में मारा गया। महमूद के समय मालवा पर सिंधुराज का राज्य था।

(6) त्रिपुरी का कलचुरी वंश :– महमूद की शासनावधि में कलचुरी वं"ा के दो प्रमुख शासक हुए कोकल्ल द्वितीय तथा गांगेय देव। कलचुरी वं"ा का दूसरा नाम हैहयवं"ा भी था। इनका गुजरात के सोलंकी वं"ा से लंबे समय तक संघर्ष चलता रहा।

(7) कश्मीर का लोहर वंश :– महमूद जब राजसिंहासन पर बैठा तक क"मीर में कंर्कोट वं"ा का शासन था। उस समय रानी दिद्दा ने राज्य संभाल रखा था। रानी की मृत्यु के बाद 1003 में संग्राम राज क"मीर के शासक बने और लोहरवं"ा की स्थापना की।

(8) शाकम्भरी के चौहान :– प्रतिहार साम्राज्य के पतन के बाद कई राजपूत राजा अस्तित्व में आए इनमें अजमेर और शाकम्भरी के चौहान मुख्य थे। पृथ्वीराज चौहान इस वं"ा के पराक्रमी शासक हुए। इनका शासन सांभर–अजमेर और दिल्ली में रहा। इनके प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी जयचन्द कन्नौज के शासक थे।

(9) बुंदेलखण्ड के चंदेल :– महमूद शासन की कालावधि में बुंदेलखण्ड के चंदेलों का उत्कर्ष अपने चरम पर था 950–1002 तक धंग, 1002–1017 तक गण्ड तथा 1018 से 1029 ई. तक विद्याधर चंदेल का शासक बना। उस काल में बुंदेलखण्ड की राजधानी खुजराहो थी।

(10) बंगाल का पालवंश :– इस वं"ा का आर्विभाव 750 ई. में गोपाल से माना जाता है। महमूद के बंगाल आक्रमण के समय वहाँ पालवं"ा के 9 वें शासन महीपाल (992–1026 ई.) तक शासन किया।

(11) कन्नौज के प्रतिहार :– प्रतिहार राजाओं की राजधानी 816 ई. में कन्नौज बनी। बंगाल के राजा धर्मपाल ने सर्वप्रथम कन्नौज पर आक्रमण कर कुछ वर्षो तक शासन किया। 1018 ई. में महमूद के आक्रमण के समय यहाँ का राजा राज्यपाल था। आक्रमण के समय प्रतिहार राजा राज्यवाल ने अपनी राजधानी बदलकर गंगा के दूसरे ओर 'बारी' को बना लिया।

(12) गुजरात का चालुक्य वंश :– महमूद के शासनवधि के समय गुजरात पर चालुक्य वं"ा का शासन था। इस अवधि के दौरान चालुक्य वं"ा के चार प्रमुख शासक हुए – चामुण्डराज, वल्लभराज, दुर्लभराज और भीम।

12.3.3. महमूद गजनवी के आक्रमणों के उद्दश्य या कारण। (Motives of Mahmud's invasions or causes) :-

महमूद के आक्रमणों के उद्दे"य के बारे में इतिहासकारों ने अपने –अपने मत अलग–अलग दिए है किसी ने उसे लालची लुटेरा कहा है। किसी ने कहा कि उसका उद्दे"य इस्लाम धर्म को भारत में फैलाना था। इसके भारत पर आक्रमण के निम्न उद्दे"य या कारण थे।

(1) धार्मिक कट्टरता :– यद्यपि महमूद ने सीस्तान के राजा खलफ से सुलतान की उपाधि प्राप्त करते समय प्रतिज्ञा की थी कि वह भारत पर प्रत्येक वर्ष आक्रमण करेगा किंतु उसके आक्रमण का उद्दे"य मात्र धार्मिक कट्टरता नहीं था। वास्तव में वह एक मूर्तिभंजक आक्रमणकारी था।

(2) धन प्राप्ति :– महमूद मध्य ए"ाया में एक वि"ाल साम्राज्य स्थापित करना चाहता था। इसके लिए उसे बहुत मात्रा में धन की आव"यकता थी। प्राचीन काल से ही भारत में मंदिर सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियों के केन्द्र माने जाते थे। मूर्तियों के साथ–साथ इन मंदिरों में सोना–चाँदी, हीरा, जवाहरात और खजाना आदि रखा जाता था। इसी उद्दे"य की पूर्ति हेतु उसने मंदिरों पर आक्रमण किए।

(3) तुर्की–फारसी साम्राज्य की स्थापना :– महमूद गजनी के भारत पर आक्रमण का उद्दे"य मध्य ए"ाया में तुर्की फारसी साम्राज्य की स्थापना करना था।

(4) मंदिरों का महत्त्व :– मुहम्मद भारतीय मंदिरों के वैभव से सुपरिचित था इन मंदिरों का धन संबंधी महत्व उसे भारत की ओर उसे आक्रमण के लिए खींच लाया। मंदिरों की लूट से प्राप्त धन ने उसकी वित्तीय व्यवस्था को सुरक्षित किया।

(5) धर्मयुद्ध :– महमूद के मंदिरों पर आक्रमण को धर्म युद्ध कहना ऐतिहासिक भूल होगी। **प्रोफेसर हबीव के अनुसार** '' यह आ"चर्य की बात नहीं है कि यूरोप के कैथोलिक चर्च के समान हिंदू मंदिर की कभी न कभी किसी शक्ति"ाली और अत्याचारी को कोई अपवित्र कार्य करने के लिए अव"य आकर्षित करते थे ''

(6) मंदिरों को तहस–नहस करना :– महमूद ने मंदिरों के खजाने को लूटने के लिए ही उस पर भारी हमलें किए। शांति के समय महमूद ने मंदिरों पर कोई आक्रमण नहीं किए। उसने लड़ाई के समय ही अपने मुस्लिम भाइयों की सहानुभूति तथा सहायता प्राप्त करने के लिए ही मंदिरों को तहस–नहस किया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि आय के साधन मानकर ही भारतीय मंदिरों पर महमूद के हमले केवल धन प्राप्ति के साधन रूप ही किए गए थे।

(7) अलबरूनी का भारत आगमन :– महमूद के आक्रमण के समय एक बहुत बडे विद्वान अलबरूनी का भारत आगमन हुआ। अलबरूनी की पुस्तक 'किताबुलहिंद' में तत्कालीन भारतीय इतिहास, गणित, भूगोल, खगोल, द"र्न आदि की समीक्षा मिलती है।

(8) भारत की स्थिति में परिर्वतन :– महमूद गजनवी बार–बार भारत पर आक्रमण कर संपदा को लूट कर गजनी जाता रहा क्योंकि भारत में उसकी स्थायी राज्य बनाने की कोई मन्"ा नहीं थी। मुहम्मद का भारत पर आक्रमण आर्थिक एवं राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है। मुहम्मद के आक्रमण ने गोरी के भारत में तुर्क साम्राज्य की स्थापना में भारी मदद मिली और भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना का मार्ग प्र"ास्त शुरू हो गया। 1000 ई. में भारत पर यूनानियों, शकों, हूणों, कुषाणों के आक्रमण हुए किन्तु उनके प्रभावों को भारतीय संस्कृति व सामाजिक संगठनों ने पचा लिया किन्तु अनेक कारणों से महमूद के आक्रमण बहुत महत्वपूर्ण रहे इन्हीं कारणों से भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना का मार्ग प्र"ास्त हुआ।

(9) हिन्दुओं की उच्च पदों पर नियुक्ति :– महमूद ओर उसके उत्राधिकारी मसूद ने बड़ी मात्रा में हिन्दुओं का रोजगार दिए मसूद की आदि सेना में हिंदू ही थे। सेवंद राव तथा तिलक इसके प्रमुख उदाहरण है। ये दोनों मसूद की सेना में उच्च पद पर नियुक्त थे।

उपरोक्त कथनों के आधार पर कहा जा सकता है कि महमूद के आक्रमणों का मुख्य उद्दे"य भारत से धन लूटना (Plunderning) था। महमूद के संबंध में इतिहासकारों के तीन विचार सर्वाधिक प्रचलित माने गए है –

(i) प्रथम विचार – महमूद एक लालची लुटेरा था उसने केवल भारत पर आक्रमण धन लूटने के लिए किया था।

(ii) द्वितीय विचार – इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए युद्ध किए।

(iii) तृतीय विचार – उसके आक्रमणों का उद्दे"य न धन लूटना था और न ही धर्म का प्रसार करना, वास्तव में वह राजनीतिक उद्दे"यों से प्रेरित था। वह आक्रमण के माध्यम से वि"ाल साम्राज्य की नींव रखने का इच्छुक था। पंडित नेहरू के अनुसार' वह डाकू तथा लालची लुटेरा था और भारत को लूटने के लिए ही वह भारत आया था''

यानि भारत की सारी सम्पत्ति को अपने अधीन कर लेना ही उसका संतोष था। व सामाजिक संगठनों ने पचा लिया किन्तु अनेक कारणों से महमूद के आक्रमण बहुत महत्वपूर्ण रहे। इन्हीं कारणों ने भारत में मस्लिम राज्य की स्थापना का मार्ग प्र"ास्त किया।

स्त्रोत – www.com (महमूद गजनी) **(Mahmud Ghazni)**

12.3.4. महमूद गजनी के भारत पर आक्रमण (Mahmud's invasion of India) :-

अपने पिता की मृत्यु के बाद महमूद ने गजनी पर अधिकार कर लिया। सुल्तान महमूद के साथ ही इस्लाम के इतिहास में एक नया अध्याय शुरू हुआ। महमूद ने अपना ध्यान भारत की ओर 1000 ई. के आस–पास इस्लाम की नींव मजबूत करने तथा अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए उसने भारत पर 17 बार आक्रमण किए और इन सभी में महमूद गजनवी विजयी रहा। इसके भारतीय आक्रमणों की रूप रेखा निम्न प्रकार से है।

(1) प्रथम आक्रमण (First Invasion) :– महमूद गजनी ने भारत पर प्रथम आक्रमण सितम्बर, 1000 ई. में किया उसे इस आक्रमण में कुछ खास सफलता नहीं मिली इसलिए इस आक्रमण का दृष्टिकोण से कोई महत्व नहीं है।

(2) द्वितीय आक्रमण (Second Invasion) :– महमूद ने 1001–1002 ई. में पंजाब के हिन्दू"ाही शासक जयपाल पर आक्रमण किया यह युद्ध पे"ावर में हुआ जिसमें जयपाल की पराजय हुई। महमूद गजनी ने उसकी राजधानी व हिन्द पर अधिकार कर लिया। जयपाल ने पुत्र , पोत्रों, सम्बन्धियों को छुड़वाने के लिए 50 गज (हाथी) 2.5 लाख दीनार देने का वचन दिया और जमानत के रूप में अपने लड़के तथा पोते को महमूद के पास छोड़ा। म्लेच्छों के इस अपमान से जयपाल इतना आहत हुआ कि राज्य का भार अपने पुत्र आनंद पाल को सौंपकर चिता में भस्म हो गया।

(3) तृतीय आक्रमण (Third Invasion) :– 1002–1003 ई. के मध्य महमूद ने भारत पर कोई आक्रमण नहीं किया। 1004 ई. में उसने तीसरा आक्रमण शासक भीरा के विरूद्ध किया। महमूद के इस आक्रमण में इस्लाम धर्म स्वीकार न करने वाले सभी हिन्दुओं को मार दिया गया।

(4) चतुर्थ आक्रमण (4th Invasion) :– महमूद का यह आक्रमण 1006 ई. में मुलतान के शासक अबुलफतेह दाउद पर किया। अबुलफतेह दाउद मुस्लिमों के कर्माथी (f"ाक्षा) से सम्बन्ध रखता था। कट्टर सुन्नी मुसलमान होने के कारण महमूद को इस सम्प्रदाय से घोर वितृष्णा थी। यद्यपि दाउद ने बड़ी वीरता से महमूद का मुकाबला किया किन्तु पराजित हो गया। इस प्रकार मुलतान पर महमूद का आधिपत्य हो गया। महमूद ने आनंदपाल के पुत्र सुखपाल जिसने इस्लाम धर्म कबूल कर लिया था और जिसका इस्लामिक नाम नबास"ाह था को मुल्तान का गवर्नर बना दिया।

(5) पंचम आक्रमण (5th Invasion) :– नबास"ाह के नाम से जाने वाले सुखपाल ने 1007 ई. में अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी तो महमूद ने भारत पर पांचवाँ आक्रमण कर सुखपाल को पराजित कर दिया और मुलतान को अपने नियंत्रण में शासन करने लगा।

(6) शष्ठम आक्रमण (6th Invasion) :– 1008 ई. में महमूद को अनुभव हुआ कि आनंदपाल के रहते वह भारत के आंतरिक भाग पर आक्रमण करने में असुरक्षित है। आनंदपाल ने सभी राजपूत राजाओं को संगठित कर महमूद के विरूद्ध मोर्चा संभाला। फलस्वरूप उज्जैन कालिंजर, ग्वालियर तथा कन्नौज के शासकों ने मिलकर एक संघ का निर्माण किया। इस संघ से भारतीय प्रजा इतनी उत्साहित थी कि युद्ध में सहायता के लिए स्त्रियों ने अपने गहने बेच दिए। अटक के निकट ओहिंद नामक स्थान पर भयानक युद्ध हुआ। इस युद्ध में हुई तबाही से महमूद की आ"ा टूट गई किन्तु अचानक बारूद के फटने से हुई आवाज के कारण आनंदपाल का हाथी विदक कर भाग खड़ा हुआ इससे राजपूतों में भगदड़ मच गई। जिसमें महमूद को अप्रत्या"ित लाभ हुआ। महमूद के सैनिक दो दिनों तक राजपूतों को ढूंढकर मारते रहे। महमूद की यह सबसे बड़ी विजय थी क्योंकि इस युद्ध में 'राजपूतों' की संगठित शक्ति की पराजय पूरे दे"ा की पराजय थी। इस विजय के बाद महमूद ने पंजाब पर अपना अधिकार स्थापित किया।

(7) सप्तम आक्रमण (7th Invasion) :– महमूद का 1009 ई. में भारत पर सातवाँ आक्रमण हुआ इस आक्रमण में महमूद ने अलवर राज्य के एक अंग नारायण पुर पर अपनी विजय पताका फहराई।

(8) अष्टम आक्रमण (8th Invasion) :– महमूद का आठवाँ आक्रमण 1010 ई. में दाउद के विरूद्ध मुलतान में हुआ। यह युद्ध कुछ समय तक चलता रहा। अल्पकालिक युद्ध के बाद महमूद ने दाउद को हराकर मुलतान को सदा के लिए अपने अधीन कर लिया।

(9) नवम आक्रमण (9th Invasion) :– महमूद ने भारत पर अपना नौवाँ आक्रमण 1011 ई. में थाने"वर के विरूद्ध किया। इस युद्ध में महमूद ने हिंदूओं को पराजित कर लूट से अपार धनरा"ि अर्जित की।

(10) दशम आक्रमण (10th Invasion) :– महमूद का भारत पर दसवाँ आक्रमण 1013 ई. में हुआ। 1008 ई. में आनंदपाल पराजित होकर अपने साहस को संजोते हुए नान्दान"ाह को राजधानी बनाया। जिसका उत्तराधिकारी त्रिलोचन था। 1013 ई. में महमूद ने आक्रमण कर नान्दान"ाह को अपने अधीन कर लिया। महमूद से हारकर त्रिलोचन क"मीर कूच कर गया। पंजाब लौटा तो त्रिलोचन पाल ने बुंदेलखण्ड के शासक विद्याधर से संधि कर ली। महमूद ने दोबारा आक्रमण कर त्रिलोचन पाल को हरा दिया।

(11) एकादश आक्रमण (11th Invasion) :– महमूद का भारत पर ग्यारवाँ आक्रमण 1015 में हुआ। इस बार उसने क"मीर पर आक्रमण कर त्रिलोचनपाल के पुत्र भीमपाल को परास्त किया किंतु उसे इस आक्रमण से कुछ वि"ोष लाभ न हुआ।

(12) द्वादश आक्रमण (12th Invasion) :– महमूद का भारत पर बारहवाँ आक्रमण 1018 ई. में हुआ। इस बार उसने कन्नौज पर आक्रमण किया। यहां पर उसने वरन के शासक हरदत्त को परास्त किया और इस्लाम स्वीकार करने के लिए मजबूर किया। तत्प"चात् महावन के शासक कुलाचंद पर उसका आक्रमण हुआ पराजय के भय से कुलाचंद और उनकी धर्मपत्नी ने आत्महत्या कर ली। उसके बाद उसने मथुरा पर आक्रमण किया। मंदिरों के इस नगर को उसने बड़ी निर्दयता से ध्वंस किया। 1019 ई. में कन्नौज लौटकर उसने राज्यपाल पर आक्रमण किया। राज्यपाल ने आत्मसमर्पण कर दिया इसमें कालिंजर का शासक गोण्डा क्षुब्ध हो उठा और ग्वालियर के शासक से संधि कर कन्नौज पर आक्रमण कर राज्यपाल को मार डाला।

(13) त्रयोदश आक्रमण (13th Invasion) :– महमूद का भारत पर 13 वाँ आक्रमण 1020 ई. में हुआ। इस आक्रमण में उसने बारी, बुंदेलखण्ड, किरात, नूर तथा लोडकोट पर अपना अधिकार कर लिया।

(14) चतुदर्श आक्रमण (14th Invasion) :– 1021 ई. में महमूद ने भारत पर 14 वाँ आक्रमण किया। उसने ग्वालियर को घेर लिया और उसके शासक को आत्मसमर्पण करने को कहा। तत्प"चात् अगले अभियान में कालिंजर को घेर लिया। भयभीत होकर कालिंजर शासक गोण्डा ने संधि कर ली।

(15) पच्चदश आक्रमण (15th Invasion) :– महमूद का भारत पर 15 वाँ आक्रमण 1024 ई. में हुआ। इस आक्रमण में महमूद ने तत्कालीन लोदोर्ग (आधुनिक जैसलमेर) चिकलोदर (गुजराज) अन्हिलवाड़ा (गुजराज) को फतह किया।

(16) षोडष आक्रमण (16th Invasion) :– महमूद का सर्वाधिक महत्ववाला सोलहवाँ आक्रमण था जो उसने 1025 ई. में किया। इस अभियान में उसने सोमनाथ को अपना लक्ष्य बनाया। सोमनाथ को विजित कर उसने प्रसिद्ध मंदिर को तोड़ डाला और असीमित धन–दौलत लूट कर गजनी ले गया।

(17) सप्तदश आक्रमण (17th Invasion) :– महमूद ने भारत पर अपना सत्रहवाँ आक्रमण 1027 ई. में किया जो उसका भारत पर आखिरी आक्रमण था। उसका यह आक्रमण सिंध और मुलतान के तटवर्ती क्षेत्रों में जाटों पर था क्योंकि सोमनाथ विजय के बाद वापसी में जाटों ने उसकी सेना को लूट लिया था। उसका यह अंतिम आक्रमण जाटों के प्रति"ोध में किया गया था।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत पर महमूद का एक–एक करके लगातार किए गये 17 आक्रमण उसकी दृढ़ इच्छा"ाक्ति, महत्वकांक्षा, शारीरिक एवं मानसिक प्रबलता तथा तृष्णा का आभास कराते हैं। अपने आक्रमण में महमूद ने मंदिरों और राजकोषों को अपना लक्ष्य बनाया। वह सोना, चाँदी, बहुमूल्य पत्थर, हाथी, घोड़े, दास–दासियाँ लूटकर गजनी लौट जाता था। भारत में महमूद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आक्रमण सोमनाथ था। इस दौरान उसने मंदिरों को लूटा और भारी रक्तपात किया। उसका अंतिम आक्रमण 1027 में जाटों के प्रति"ोध स्वरूप था।

12.4. विषय वस्तु का आगे का भाग (Further Main body of the text)

12.4.1 महमूद गजनी के आक्रमणों का भारत पर प्रभाव या परिणाम (Result or effects of Mahmud's invasions):- महमूद गजनवी के आक्रमणों का प्रभाव निम्न प्रकार से था –

(1) महमूद गजनवी के आक्रमण का प्रभाव भारत की आर्थिक स्थिति, धार्मिक स्थिति, राजनीतिक स्थिति, सांस्कृतिक एवं धार्मिक स्थिति पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ा।

(2) महमूद गजनवी के आक्रमणों के परिणामस्वरूप उत्तर भारत राजनीतिक दृष्टि से कमजोर एवं असुरक्षित हो गया।

(3) महमूद गजनवी के आक्रमण का राजनैतिक प्रभाव यह रहा कि उसने उत्तर–पि"चम के रक्षक 'हिंदू"ाही व"ा को समाप्त कर अन्य आक्रमणकारियों के लिए भारत का मार्ग प्र"ास्त किया और केवल पंजाब पर प्रत्यक्ष शासन स्थापित किया।

(4) उत्तरी भारत का सीमान्त क्षेत्र असुरक्षित हो गया और किसी भावी आक्रमणकारी के लिए उत्तरी भारत पर विजय प्राप्त करना सरल हो गया।

(5) लगभग 150 वर्ष के बाद महमूद गोरी ने महमूद गजनवी के द्वारा दिए गए निर्दे"ाों पर चल कर भारत की वि"ाल राजनीतिक शासन प्रणाली को धरा"ाही कर दिया और भारत में मुस्लिम सत्ता को स्थापित कर दिया।

(6) महमूद के आक्रमणों से शक्ति"ाली एवं अभिमानी राजपूत शासक पराजित हुए। इस प्रकार उनकी शक्ति क्षीण हो गई जिसके फलस्वरूप परिणाम विभिन्न राज्य छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट गए।

(7) आक्रमणों का सामना करते हुए हजारों सैनिक युद्ध में मारे गए। आम जनता को भी मौत के घाट उतार दिया और कुछ को बंदीबनाकर दासों के रूप में महमूद के सैनिक अपने साथ ले गए। जिन नागरिकों ने इस्लाम धर्म को अपना लिया उन्हे जीवन दान दिया गया।

(8) महमूद गजनवी ने अपने आक्रमणों के दौरान जो नगर आर्थिक दृष्टि से उन्नत थे उन्हें लूटा तथा मंदिरों को लूटकर उन्हें विनष्ट कर दिया। जो हिंदू मंदिर थे उनकी पवित्रता को नष्ट कर दिया एवं स्थापत्य की विरासत को विनष्ट कर दिया।

(9) महमूद गजनवी के सैनिक थे उन्होंने भारतीय निवासियों की आजीविका के साधनों को बर्बाद कर दिया जिससे लाखों लोग अपने ही दे"ा में घर विहीन रहने को विव"ा हो गए।

(10) महमूद गजनवी के आक्रमणों का सबसे अधिक विना"ाक प्रभाव धर्म और अर्थ के क्षेत्र पर हुआ उसने अपने आक्रमण के दौरान अनेक राज्यों के राजकोष को लूटकर उन्हें रिक्त कर दिया। उसने मंदिरों को विनष्ट करने से पहले उनमें सुरक्षित धन–संपदा को लूटा। उसने नारियों और नादान बच्चों के साथ भी क्रूरता का व्यवहार किया। महमूद ने भारतीयों को न केवल आर्थिक दृष्टि से तंग किया बल्कि उन पर धार्मिक अत्याचार भी किए

(11) महमूद गजनवी ने भारतीयों को बलपूर्वक इस्लाम स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जिसके फलस्वरूप भारतवासियों ने इस्लाम का आतंक व्याप्त हो गया। उसने पहले भारतीय शासकों पर आक्रमण किया जिससे शासकों का ध्यान जनसाधारण से हट गया इस कारण जनसामान्य की द"ाा और भी शोचनीय बन गई।

(12) महमूद गजनवी के आक्रमणों से भारत में इस्लाम का रास्ता साफ हो गया। ऐसा नही 'कहा जा सकता कि उस समय भारतीय शासक शक्तिहीन थे परंतु उनकी शक्ति संगठित नहीं थी उन्होंने एकत्रित होकर कभी महमूद का सामना नहीं किया जिसका सम्पूर्ण लाभ महमूद को प्राप्त हुआ। महमूद ने एक–एक करके भारतीय शासकों को पराजित कर उनके मनोबल को तोड़ दिया।

(13) महमूद के आक्रमणों का अंतिम और महत्वूपर्ण प्रभाव यह हुआ कि भारत में अनेक हिंदू मुसलमान बन गए। भारत की कला को सख्त आघात पहुँचा जैसे मथुरा वृन्दावन, कन्नौज, थाने"वर, नगरकोट आदि के नगरों को नष्ट किया।

12.4.2. भारत पर मुहम्मद गौरी के आक्रमण एवं कारण (Mohammad ghori's invasions of india and causes) :-

(1) **तर्कों के आक्रमण की शुरूआत** – महमूद गजनवी के आक्रमणों के लगभग डेढ़ सदी के बाद तुर्कों के आक्रमण का दूसरा चरण उत्तरी भारत में शुरू हो गया। इन आक्रमणों का नेतृत्व मुहम्मद गौरी के द्वारा किया गया। मुहम्मद गौरी गियासुद्दीन का अनुज था और जो गौर का शासक था।

(2) **भारतीय राजनीति में परिवर्तन** – महमूद गजनवी के आक्रमणों ने भारतीय राजनीति का स्वरूप ही परिवर्तित कर दिया। हिन्दू धर्म को मानने वालों को मुस्लिम धर्म के अधीनस्थ के लिए बाध्य किया गया।

(3) **राजनीतिक लालसा** – महमूद गजनवी के भारतीय आक्रमण का मुख्य उद्दे"य राजनीतिक था और उत्तर भारत में साम्राज्य विस्तार की इच्छा मुहम्मद गौरी के आक्रमण का मूल कारण था।

(4) मुल्तान व उच्छ की विजय – मुहम्मद गौरी ने 1175 ई. में भारत पर आक्रमण करने की शुरूआत की और मुल्तान पर आक्रमण किया। मुल्तान के मुसलमानों को परास्त कर उसने वहाँ पर अपना शासन स्थापित कर लिया। इसके बाद उच्छ पर आक्रमण किया। वहाँ के राजा भट्टी को पराजित किया और उसकी पुत्री पुत्री के साथ विवाह किया।

(5) **मुहम्मद गौरी की पराजय** :– 1178 ई. में मुहम्मद गौरी ने पाटन (गुजरात) पर आक्रमण किया। उस समय पाटन का शासक भीम द्वितीय था उसने मुहम्मद को पराजित किया और यह मुहम्मद गौरी की भारत में प्रथम पराजय थी।

(6) पजांब पर आक्रमण :– 1179 ई. में उसने पे"ावर पर अपना नियंत्रण स्थापित किया दो वर्ष के बाद लाहौर (पंजाब) पर आक्रमण किया। खुसरव मलिक ने बहुमूल्य भेंट देकर अपनी रक्षा की। 1185 ई. में मुहम्मद गौरी ने सियालकोट को जीता और वापस चला गया। 1186 ई. में उसने पुनः लाहौर को जीत कर वहाँ के शासक खुसरव को बंदी बना लिया। लाहौर को केन्द्र बनाकर 1189 ई. में मुहम्मद गौरी ने भटिंडा के दुर्ग को जीता। उस समय भटिंडा का शासक पृथ्वीराज चौहान बहुत क्रोधित हुए और यही बाद में तराईन के युद्ध का तात्कालिक कारण था।

(7) तराइन का प्रथम युद्ध (1191 ई0) :– पंजाब की विजय के बाद मुहम्मद गौरी की इच्छा बढ़ी और दिल्ली–अजमेर राज्य पर सत्ता स्थापित करने की योजना तैयार की उस समय दिल्ली–अजमेर का शासक पृथ्वीराज चौहान था। जिसकी वीरता एवं सैनिक नेतृत्व के लिए इतिहास प्रसिद्ध है। पृथ्वीराज ने राजपूत शासकों को संगठित करके एक वि"ाल सेना गठित की। 1191 ई. में थाने"वर से 14 मील दूर स्थित तराइन नामक स्थान पर दोनो की भिड़ंत आमने–सामने हुई और राजपूतों की सेना को देखकर गौरी की सेना घबरा गई। मुहम्मद गौरी की हार हुई और वह पराजित होकर वापस चला गया।

(8) तराइन का द्वितीय युद्ध (1192 ई0) :– तराइन के प्रथम युद्ध का बदला लेने के लिए मुहम्मद गौरी ने व्यापक रूप से युद्ध की रणनीतियाँ तैयार की सन् 1192 ई. में तराइन की दूसरी लड़ाई में उसने एक लाख बीस हजार सैनिकों के साथ, दस हजार घुड़सवार, धर्नुधारी भी शामिल किए। इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की हार हुई और उसे सरस्वती नदी के निकट बंदी बना लिया गया। कुछ दिनों के बाद पृथ्वीराज को 'ाड्यंत्र करने के आरोप में मृत्यदण्ड दे दिया गया। इस युद्ध को भारतीय इतिहास का निर्णायक मोड़ माना गया है। मुहम्मद गौरी ने इस युद्ध के बाद दिल्ली–अजमेर पर अपना नियंत्रण स्थापित करके भारत में मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना की नींव डाल दी। मुहम्मद गौरी को भारत में मुस्लिम साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। इस युद्ध के बाद मुहम्मद गौरी गजनी वापिस चला गया और भारत के राजकाज का कार्य अपने वि"वसनीय गुलाम कुतुबद्दीन ऐबक को सौंप दिया।

(9) मुहम्मद गौरी के अन्य आक्रमण :– 1193 ई. में मुहम्मद गौरी के प्रिय कुतुबद्दीन ऐबक ने मेरठ, दिल्ली तथा कोल पर अधिकार कर लिया। 1194 ई. में मुहम्मद गौरी भारत वापस आया। पचास हजार घुड़सवारों के साथ उसने यमुना पार की और कन्नौज की ओर बढ़ा। कन्नौज के निकट चंदावर नामक स्थान पर गौरी और जयचंद के मध्य युद्ध हुआ। इस युद्ध में राजा जयचंद की हार हुई और मुहम्मद गौरी की विजय हुई। इसके बाद राजा जयचंद को मार डाला और कन्नौज पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। तराइन एवं चंदावर की लड़ाइयों ने भारत में तुर्क साम्राज्य की नींव स्थापित की। 1205 ई. में मुहम्मद गौरी एवं कुतुबद्दीन ऐबक ने मुल्तान के निकट खोखरों से युद्ध किया इस युद्ध में उनको पराजित किया और उन्हें मौत के घाट उतार दिया इस प्रकार 1206 ई. में मुहम्मद गौरी ने भारत पर अंतिम बार आक्रमण किया था। मुहम्मद गौरी जब भारत से वापिस जा रहा था तब रास्ते में ि"ाया विद्रोहियों ने 15 मार्च 1206 ई. में उनकी हत्या कर दी। इसके बाद **भारतीय राज्यों** का उत्तराधिकर **कुतुबद्दीन ऐबक** को प्राप्त हुआ और गजनी का उत्तराधिकारी गुलाम **याल्दौज** को बनाया गया। मुहम्मद गौरी के मुख्य सेनापति **विख्यितार खिलजी** ने पूर्वी भारत पर विजय प्राप्त की और ि"ाक्षा के केन्द्रों के रूप में प्रसिद्ध वि"वविद्यालयों –नालंदा व विक्रमि"ाला को नष्ट कर दिया।

12.4.3. मुहम्मद गौरी के भारतीय आक्रमण के परिणाम या प्रभाव (Results or effects of Mohammad Ghori's invasions) :-

मुहम्मद गौरी के भारतीय आक्रमण दो रूपों में परिलक्षित हुए तात्कालिक एवं दीर्घकालिक। तात्कालिक प्रभाव राजनीतिक, आर्थिक एवं प्र"ाासनिक क्षेत्र में दृष्टिगोचर हुए तथा दीर्घकालिक परिणाम सांस्कृतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में देखे जा सकते है :–

(1) राजनीतिक परिणाम (Political Result) :– मुहम्मद गौरी के आक्रमणों के राजनीतिक परिणाम यह हुए कि भारत में एक नए राज्य का सपना साकार हुआ जो दिल्ली सल्तनत के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस राज्य के कारण उत्तरी भारत में फिर से राजनीतिक एकता संभव हो सकी। इन आक्रमणों में राजपूतों की सत्ता का अन्त हो गया और तुर्क सत्ता उत्तरी भारत में काबिज हो गई। तुर्क शासकों ने नए रीति–रिवाजों और राजनीतिक संस्थाओं का विकास किया जिससे भारत के राजनीतिक जीवन में नवीन परिवर्तन सामने आने लगे।

(2) प्रशासनिक परिणाम (Administration Result) :– प्र"ासनिक क्षेत्र में तुर्क शासन की स्थापना के कारण अभूत पूर्व परिवर्तन हुए। राजपूतों को विकेंद्रीकृत शासन पद्धति के स्थान पर केन्द्रीय शासन पद्धति का सूत्रपात हुआ। टैक्स वसूली पर केन्द्रीय शासन पद्धति के परिणामस्वरूप भू–राजस्व सीधा शासक के हाथों में पहुँचने लगा।

(3) आर्थिक परिणाम (Economy Result) :– वित्तीय क्षेत्र में परिणाम धीरे–धीरे दृष्टिगोचर हुए। वि"ोषतः व्यापार के विकास और नगरों के पुनरूत्थान के रूप में। तुर्कों ने भारत के नगरों का पुनरूत्थान किया जिससे हस्ति"ाल्प के विकास को नई दि"ा मिली। नई मुद्रा के प्रचलन से आर्थिक विकास का नया दौर शुरू हुआ। नगरों के पुनरूत्थान के कारण मुहम्मद हबीब ने तुर्को के आगमन को नगरीय क्रान्ति की संज्ञा दी।

(4) सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिणाम (Social and Cultural Result) :– सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में तुर्कों के आक्रमण का प्रभाव धीरे–धीरे दृष्टिगोचर हुआ। तुर्क शासन की स्थापना के कारण इस्लाम के प्रचार में गति आ गई। जाति प्रथा के कारण हिन्दुओं में निम्न जाति की द"ा अत्यन्त दयनीय थी। जबकि इस्लाम में ऐसा नहीं था। इस कारण हिन्दुओं की निम्न जातियाँ इस्लाम धर्म की ओर आकर्षित होने लगी। सूफी संतो ंके विचारों का प्रभाव भक्त संतों पर तथा भक्त संतों की भक्ति का प्रभाव सूफी संतों पर होने लगा। तुर्क शासकों ने भारत की क्षेत्रीय भाषाओं का विकास किया। उन्होंने एक नई स्थापत्य शैली के विकास का सूत्रपात किया जिससे भारत का सांस्कृतिक जीवन समृद्ध होता चला गया। मुहम्मद गौरी के आक्रमणों से उत्तर भारत की परिस्थितयाँ आमूल चूल परिवर्तित हो गई जिसका परिणाम आगे चलकर लाभदायक और सरंचनात्मक सिद्ध हुआ। उत्तरी भारत में एक नये युग का दौर चल पड़ा।

(5) प्रौद्योगिक परिणाम (Industries Result) :– इरफान हबीब के अनुसार तुर्को के आक्रमणों ने उत्तरी भारत को एक नई प्रोद्यौगिक क्रान्ति में बदल दिया। जिससे कृषि, हस्तशिल्प, कागज का उत्पादन, सैन्य सामग्री के उत्पादन में नए–नए विकास के साधन बढ़ते चले गए।

12.4.4. तुर्को /मुसलमानों के विरूद्ध राजपूतों की पराजय के कारण (Casues of the Defeat of the Rajputs against the Muslims/Turks) :-

राजपूतों ने आपसी एकता व एकजुटता की कमी थी। इस कारण तुर्को ने भारत पर आक्रमण किए और राजपूतों को लगातार पराजय का मुँह देखना पड़ा उनके सभी राज्यों का इस प्रकार अन्त हो गया। **राजपूतों की हार एवं तुर्कों (मुस्लमानों) की भारत में विजय के कारण निम्नलिखित थे** :–

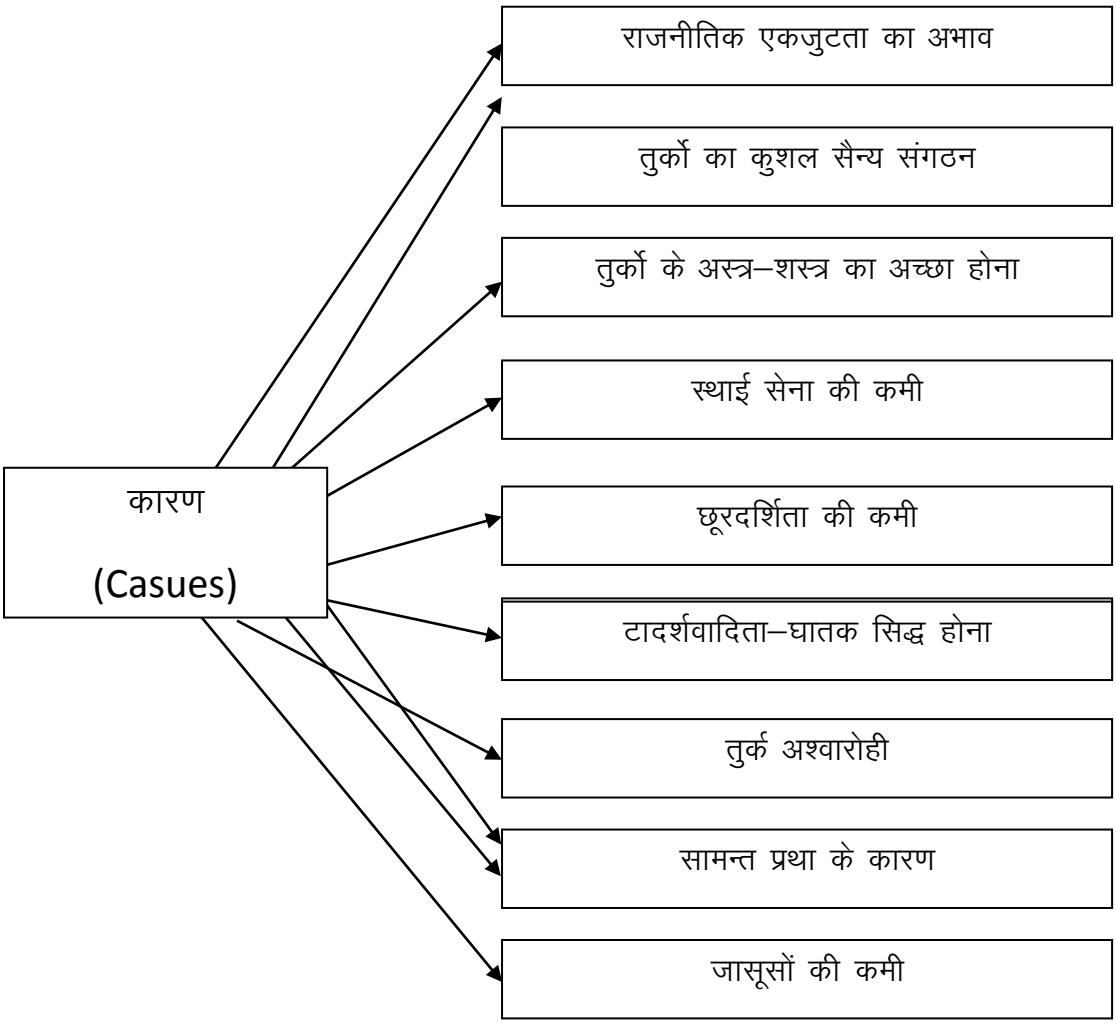

(1) राजनैतिक एक जुटता का अभाव (Lack of Political Unity) :– तुर्को के आगमन के समय पूरा दे"ा छोटे–छोटे राज्यों में बंटा हुआ था और आपसी द्वन्द्व के कारण एक दूसरे से युद्ध करते रहते थे। जिसके कारण भारत की राजनीतिक एकता व शक्ति क्षीण हो गई। जिसका अवसर परद् लाभ बाह्य शक्तियों ने उठाया। जैसे– जयचंद ने पृथ्वीराज चौहान का साथ नहीं दिया। इसी प्रकार जब जयचन्द पर मुहम्मदगौरी ने हमला किया तब चौहान शासक ने साथ नहीं दिया। इस प्रकार धीरे–धीरे राजपूत शासक एक के बाद एक हार का मुहँ देखता गया इस प्रकार कहा जा सकता है कि तुर्कों के आक्रमण के समय भारत में राजनैतिक एकता का अभाव था।

(2) तुर्को का कुशल सैन्य संगठन (Lack of Permanent Army) :– युद्ध के दौरान राजपूत राजा अपनी सेना को तीन वर्गों में विभक्त कर लेते थे दक्षिण, मध्य और अन्तिम किन्तु तुर्क अपनी सेना के पाँच भाग बनाते थे। तुर्कों की सेना अंगरक्षक तथा पृथक रक्षित दो अतिरिक्त भाग बड़े महत्वपूर्ण थे। ये सैन्य टुकडियाँ थके शत्रु सैनिकों पर एकाएक हमला बोल देती थी जिससे शत्रु सैनिकों में भगदड़ मच जाती और वे युद्ध का मैदान छोड़ने को विव"ा हो जाते ।

(3) तुर्कों के अस्त्र–शस्त्र का अच्छा होना :– राजपूतों के अस्त्र–"ास्त्र मुस्लिमों की अपेक्षा अविकसित थे। राजपूत अक्सर पुरातन पद्धति से युद्ध किया करते थे। उनके शस्त्र–अस्त्र भी पंरपरागत ही थे उनमें आधुनिकता का अभाव था। उनके अस्त्र तलवार व भाले ही थे। इन अस्त्र–"ास्त्रों से निकटस्थ शत्रु पर ही वार किया जा सकता था। मुसलमानों में तीर–कमानों का प्रयोग किया जाता था जिसके द्वारा दूर से ही शत्रु को समाप्त कर दिया जाता था। किन्तु डा. पी. शरण के द्वारा इस सत्य को स्वीकार नहीं किया गया।

(4) स्थाई सेना की कमी (Lack of Permanent Army) :– स्थायी सेना का न होना राजपूतों का पराजय का एक बहुत बड़ा कारण था। राजपूत सेना के लिए सामन्तों पर निर्भर थे। ये सैनिक पूरी तरह अनु"ाासित नहीं होते थे। ये राजा की अपेक्षा सामन्तों के प्रति अधिक वफादार होते थे। इनकी युद्ध कला में भी भिन्नता होती थी। इनमें पारस्परिक तालमेल का भी अभाव होता था। इसके प्रतिकूल मुस्लिम आक्रमणकारियों के पास स्थायी सेना होती थी। इनके सैनिक भी अनु"ाासित थे। ये अपने सुलतान के प्रति वफादार भी होते थे। इसके अलावा मुस्लिम सैनिक सुनियोजित ढंग से संगठित होकर युद्ध करते परिणामस्वरूप तुर्को की विजय सुनि"चत हो जाती थी।

(5) दूरदर्शिता की कमी (Lack of Farsighteaness) :– राजपूत राजा बहादुर और पराक्रमी थे किन्तु उनमें दूरदर्"िता का अभाव था। वे रक्षा संबंधी युद्ध कौ"ाल से अपरिचित थे। इन्होंने भारतीय सीमाओं

को कभी मजबूत करने का प्रयत्न नहीं किया और न शत्रु को सीमा पर ही रोकने का उपाय किया। वे सीमा सुरक्षा के प्रति सदैव उदासीन रहे। उनकी सीमा सुरक्षा के प्रति लापरवाही का वर्णन करते हुए एक विदे"ाी पथिक ''**इश्र हौकल**'' ने लिखा है '' भारत एक अद्भुत दे"ा है। यहाँ विदे"ाी बिना रोक–टोक के आ सकते है। दर्रा खैबर में न तो कोई पुलिस चौकी है और न ही कोई सैनिक पहरा है ''

(6) जातीय भेदभाव (Recial Differnce) :– तत्कालीन हिन्दू समाज अनेक जातियों में बंटा हुआ था। उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्ग को हेय दृष्टि से देखते थे परिणाम स्वरूप राष्ट्रीयता में कमी आती गई। इसी कारण संकट के समय वे एक जुट होकर शत्रु का सामना न कर सके। इस जातिगत भेदभाव के कारण सभी जातियों को अपना पैतृक व्यवसाय अपनाना पड़ता था। रक्षा का भार क्षत्रियों पर था। दूसरी जातियों में दे"ा के लिए लड़ने का कोई भाव नहीं था वे इसे अपना कर्तव्य नहीं मानते थे। हिन्दू समाज युद्ध के समय भी अपने–अपने व्यवसाय में सलंग्न रहता था। मुस्लिमों में जातिगत भेदभाव न था। यही कारण था कि वे राजपूतों के विरूद्ध सदैव विजयी रहे।

(7) तुर्क अश्वारोही (Turak cavalary) :– राजपूतों को अपने अस्त्र–"ास्त्रों पर अत्यधिक वि"वास था। वे युद्ध में हाथियों को सर्वप्रमुख स्थान देते थे। शत्रुओं के भयानक प्रहार से हाथी भाग खड़े होते थे और अपने ही सैनिकों को रौंद डालते थे जबकि तुर्क घोड़ों को अधिक महत्व देते थे। घोड़े फुर्तीले होते थे अ"वरोही सैनिक घूम कर शत्रु पर तेजी से प्रहार करते थे, किंतु हाथियों के लिए तेजी से घूम पाना असम्भव था। इस प्रकार तुर्को के अ"वार सैनिक ही अपना बचाव करके घूमकर शत्रु पर प्रहार करने में अधिक कारगर सिद्ध हुए। फलतः तुर्कों को विजय श्री प्राप्त होती रही।

(8) सामन्त प्रथा के कारण ( ) :– राजपूतों में सामन्त प्रथा प्रचलित थी। राजपूतों ने सामन्तों को बड़ी–बड़ी जागीरें दे रखी थी। बदले में सामन्त युद्ध के समय राजाओं की सैन्य सहायता किया करते थे। राजपूत राजा सेना के लिए सामन्तों पर निर्भर थे। वैसे तो ये सामन्त स्वामिभक्त थे किन्तु शक्ति"ाली हो जाने पर विद्रोह कर देते थे और स्वयं को स्वतंत्र शासन घोषित कर लेते थे। सेना के लिए सामन्तों पर निर्भर होने के कारण राजपूत राजा इनके विद्रोह का दमन नहीं कर पाते थे। इसी कारण राजपूत राजा दिनोंदिन कमजोर होते चले गए और तुर्क आक्रमणकारियों का मुकाबला न कर सके।

(9) जासूसों की कमी (Turak of Spy-System) :– तुर्क आक्रमणकारी गोपनीय ढंग से शत्रु की शक्ति की पूरी खबर ले लेते थे जबकि राजपूत राजाओं के पास ऐसी कोई जानकारी नहीं होती थी। तुर्क आक्रमणकारी लड़ाकू प्रदे"ाों की भौगोलिक जानकारी का पूरा ध्यान रखते थे किन्तु राजपूत शासक

भौगोलिक ज्ञान को कोई महत्व नहीं देते थे। परिणामस्वरूप भौगोलिक अज्ञानता के कारण राजपूतों की पराजय होती रही।

(10) आदर्शवादिता का घातक सिद्ध होना ( ) :– राजपूत आद"ावादी थे। निहत्थे शत्रु पर प्रहार करना कायरता का पर्याय समझते थे। परम्परागत नीति पर युद्ध करते थे। उनके पास अस्त्र–"ास्त्र भी परंपरागत थे। हथियार डाल देने या समर्पण कर देने पर वे शत्रु के साथ क्रूरता का व्यवहार नहीं करते थे। इसके प्रतिकूल तुर्क सेनापति युद्ध जीतने के लिए सभी प्रकार के छल–कपट का अवलंब लेने में संकोच नहीं करते थे अतः उच्च आद"ावादी होने के कारण भी राजपूत पराजित होते चले गए।

12.4.5. भारत में तुर्को की सफलता के कारण (Causes of the success of the Turks in india) :-

भारत में तुर्को की सफलता के सैनिक कारण, सामाजिक कारण, राजनैतिक कारण, व्यक्तिगत कारण, धार्मिक कारण आदि अनेक कारण थे जो निम्न प्रकार से है –

(1) भारतीय शासकों में राजनीतिक एकता की कमी थी, जिस समय तुर्को ने भारत पर आक्रमण किया तब समस्त भारत छोटे–छोटे राज्यों में बंटा हुआ था जिसका फायदा तुर्क शासकों को मिला अर्थात भारतीय शासकों की आपसी संघर्ष एवं द्वंद्व के कारण तुर्कों की सफलता का मुख्य कारण इस घोर संकट के समय भारतीय शासक एक जुटता न दिखा पाऐ।

(2) राजपूतों की राजनीतिक नीतियों का ताना–बाना बहुत कमजोर था। प्र"ासन में किसी प्रकार की एकरूपता नहीं थी। प्रायः सभी शासक साम्राज्य की लालसा एवं प्राप्ति के लिए एक दूसरे को लगातार पराजित कर रहे थे। जिससे तुर्कों को सफलता आसानी से मिल गई।

(3) भारतीयों का सैनिक संगठन पुराने सिद्धान्तों पर आधारित था। जो समय के अनुकूलन नहीं था। मध्य एि"ाया की रणनीति में जो विकास हो चुका था, उससे भारतीय सेनापति अपरिचित थे। इस प्रकार से अस्त्र–"ास्त्रों तथा रणनीतियों दोनों की दृष्टि से तुर्क आक्रमणकारी भारतीय सेना से अधिक सर्वश्रेष्ठ थे।

(4) भारतीय सैनिक अच्छे वीर थे लेकिन शत्रु की कमजोरियों का लाभ उठाकर युद्ध में विभिन्न दाँव–पेचों का प्रयोग करने की कला में बहुत पीछे थे।

(5) तुर्क रिजर्व सेना का उपयोग करते थे। जब शत्रु की सेना थककर चूर हो जाती थी तब वे अपनी रिजर्व सेना को युद्ध भूमि में उतार देते थे जिसका मुकाबला थकी हुई भारतीय सेना नहीं कर पाती थी।

(6) भारतीयों की असफलता का कारण सामाजिक व्यवस्था एवं जातिगत भेदभाव भी था। जिसने राजनीतिक एकता एवं सामाजिक एकता को कमजोर किया।

(7) राजपूत राज्यों में विदे"ाों की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए दूतावास की कमी थी जो विदे"ाों में क्या घटित हो रहा है इसकी जानकारी भारतीय शासकों को नहीं मिल पाती थी। अपने दे"ा या राज्य के जनकल्याणकारी कार्यो की उपेक्षा कारण भी वे जनसाधारण से भी दूर होते गए। इन सभी दुर्बलताओं का लाभ तुर्कों को मिला।

(8) तुर्क आक्रमणकारियों की सेना में वि"ोषकर आ"वारोही होते थे जो अपनी गति"ीलता के लिए ख्यात थे जबकि भारतीय सेना में पैदल सैनिकों की संख्या अधिक होती थी ये सैनिक अ"वारोही सैनिकों का सामना नहीं कर सकते थे। ये घुड़सवार केवल गति"ीलता के कारण पैदल सैनिकों को अस्त–व्यस्त कर देते थे।

(9) आम जनता न तो शासन में हाथ बंटा सकती थी और न ही युद्ध में भाग ले सकती थी इसलिए राजा और प्रजा के संबंधों में पर्याप्त दूरी रहती थी। जनता राजनीतिक मामलों से उदासीन रहती थी। जनता को पता था कि शासन संचालन और दे"ा रक्षा उसके कर्तव्यों में सम्मिलित नहीं है। जनता की राजनीतिक उदासीनता ने तुर्कों का कार्य अत्यन्त सरल कर दिया।

(10) युद्ध में सेनानायक के व्यक्तित्व की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। महमूद गजनवी, मुहम्मदगौरी तथा कुतुबुद्दीन ऐबक निर्विवाद रूप से महान सेनानायक थे। उन्हे अनेक युद्ध करने का अनुभव भी प्राप्त था। भारतीय सेनानायकों में जयपाल आनन्दपाल, पृथ्वीराजचौहान, जयचन्द, गहड़वाल आदि भी कु"ाल सेना नायक थे किंतु यदि हम तुर्क सेनानायकों से इनकी तुलना करें तो ये उनके समान दूरद"ार्ी और बुद्धिमान न थे और न ही उनमें अवसर का लाभ उठाने की चतुरता थी।

(11) भारतीय शासक तुर्कों से मुकाबले के दौरान कोई न कोई ऐसी गलती कर बैठते थे जिसका लाभ उठाकर तुर्क उन्हें पराजित कर देते थे। वास्तव में तुर्क सैनिकों का भारतीय सैनिकों से अधिक रण–कु"ाल सेना ज्यादा महत्व की बात है महत्वपूर्ण तो यह है कि तुर्क सेनानायक भारतीय सेनानायकों से अधिक श्रेष्ठ और कु"ाल थे।

(12) धर्म की दृष्टि से भारत अनेक सम्प्रदायों व उपसम्प्रदायों में बंटा हुआ था। धर्म के क्षेत्र में समन्वयवादी तथा उदारवादी दृष्टिकोण रखने के कारण अनेक प्रकार की मान्यताएं तथा धार्मिक वि"वास जन्म ले रहे थे। भारतीय लोगों की व्यक्तिवादी मनोवृति इन्हीं धार्मिक मान्यताओं के मूल में निहित थी। इस्लामिक समाज की एकता भारत की धार्मिक विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में सम्भव न थी।

(13) धर्म के द्वारा प्रेरित कर्म तथा संसार के द"ान से अधिका"ा भारतीय इतने प्रभावित थे कि हर प्रकार का दुख तथा दमन सहने के अभ्यासी हो गए थे। नियतिवादी तथा भाग्यवादी विचारधारा के कारण वे विदे"ाी आक्रमणों को वे अपने पूर्वजन्म कृत कर्म का फल मानते थे। इन्ही मान्यताओं के कारण जनसाधारण ने एकजुट होकर विदे"ाी आक्रमणों का विरोध नहीं किया।

(14) उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त तुर्को की सफलता में सौभाग्य पूर्ण संयोग की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। उदाहरणार्थ 986 ई. में जयपाल और सुबुक्तगीन का लम्बे समय तक युद्ध चलने के बाद भी युद्ध का निर्णय नहीं हो सका।

(15) एकाएक भयानक हिमपात के कारण जयपाल के अनेक सैनिकों ने ठण्ड से ठिठुर कर दम तोड़ दिए विव"ा होकर जयपाल को सुबुक्तगीन से सन्धि करनी पड़ी। इसी प्रकार आनन्द पाल के हाथी का बिगड़ना, जयचन्द की आँख में तीर लगना आदि अनेक कारण है इन्हीं अचानक घटी घटनाओं ने युद्ध का निर्णय तुर्कों के पक्ष में कर दिया।

12.4.6. महमूद गजनी एवं मुहम्मद गौरी का मूल्यांकन (Evaluation of Mahmud Ghazni Muhamad Ghori) :-

- **महमूद गजनी (Mahmud Ghazni) :-** लेनपूल ने द"ार्या है कि महमूद एक महान सेनानी, अनु"ांसनीय साहसी, अपराजेय शासक, मानसिक और शारीरिक रूप से शक्ति"ाली शासक था। महमूद नए शासन तथा सिद्धान्तों का निर्माण करने वाला दूरद"ार्ी राजनीतिज्ञ नही थ। उसने हिन्दू धर्म की अनेक मूर्तियों को तोड़ा। इस कारण उसे मूर्तिभंजक की संज्ञा दी गई। महमूद विद्वानों तथा कलाकारों को संरक्षण देता था इस कारण भवन निर्माता कवि और कलाकार उसके दरबार में भरे रहते थे। महमूद गजनवी द्वारा प्रचलित चाँदी के सिक्कों के एक तरफ अरबी तो दूसरी तरफ 'संस्कृत' मुद्रालेख अंकित थे।
- **मुहम्मद गौरी (Muhamad Ghori) :-** मुहम्मद गौरी गजनवी की तरह महान सेनानायक नहीं था क्योंकि उसे अनेक बार भारतीय राजाओं से पराजय का भी सामना करना पड़ा। परन्तु मुहम्मद गौरी राजनैतिक सुधारों में गजनवी से अधिक कु"ाल था। मुहम्मद गजनवी तो केवल विजय और सोने–चाँदी के संग्रह में ही संलग्न रहा किंतु मुहम्मद गौरी ऐसे तुर्क साम्राज्य की स्थापना में सफल हुआ जो शताब्दियों पर्यन्त स्थाई रहा। तुर्क साम्राज्य संगठित हो गया और यूरोपीय कंपनियों के आगमन तक मुस्लिम सिंहासन पर विराजमान रहे। मोइनुद्दीन चि"ती जैसा संत भी मुहम्मद गौरी के साथ भारत आया और उसने भारत में चि"ती संप्रदाय की स्थापना की।

12.4.7. भारत पर तुर्कों की विजय का प्रभाव या परिणाम (Results or Effects of the success of the Truks in India) :-

(1) तुर्को के आक्रमण के प"चात् भारत से अनेक दे"ाीय (बहुराज्यतंत्र) प्रणाली समाप्त हो गई। तुर्कों की सत्ता स्थापित हो जाने से पुरानी परंपराएँ कमजोर हो गई, नए संबंध व संपर्क अस्तित्व में आने लगे।

(2) सामन्तवाद के स्थान पर नई केन्द्रीकृत निरंकु"ा प्रणाली का उदय हुआ। केन्द्रीय राजतंत्र की स्थापना से राजनैतिक दृष्टिकोण विस्तृत हो गया और अलगाव की स्थिति कम होने लगी।

(3) उत्तरी भारत पर तुर्कों के विजय के फलस्वरूप नगरीय क्रान्ति का उदय हुआ।

(4) शहरी अर्थव्यवस्था के आ जाने से व्यापार में एक नई गति आ गई। कानून प्रणाली, सीमा शुल्क विनिमय और मुद्रा के समान हो जाने से व्यापारियों की क्रियाविधि का विस्तार हुआ और वे स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर व्यापार करने लगे।

(5) तुर्को की विजय से सैनिक क्षेत्र भी अछूता न रहा। भारतीय सेनाओं के स्वरूप उनके गठन, भर्ती और रखरखाव की प्रणालियों में पर्याप्त बदलाव आ गया।

(6) युद्ध करना जाति वि"ोष का अधिकार नहीं रह गया। सामन्ती सेना के स्थान पर मजबूत एवं स्थायी सेना का प्रावधान किया गया अब सैनिकों की भर्ती केन्द्र द्वारा की जाने लगी।

(7) तुर्कों की सत्ता स्थापित हो जाने से शासन की भाषा 'फारसी' हो गई इस कारण प्र"ाासन की भाषा में एकरूपता आ गई।

(8) तुर्क प्र"ाासन में भारत की जाति व्यवस्था भंग हो गई। इसका नतीजा यह हुआ कि जो लोग जाति व्यवस्था से तंग थे वे मुसलमानों के समर्थक हो गए।

(9) तुर्को के आगमन के साथ नई प्रोद्यौगिकी का भी भारत में प्रवे"ा हुआ जिससे अर्थव्यवस्था में रचनात्मक बदलाव हुआ। नगरों के पुनरूद्धार के कारण मोहम्मद हबीब ने तुर्को के आगमन को नगरी क्रान्ति का नाम दिया।

(10) परम्परागत सामंती सेना के स्थान पर शक्ति"ाली स्थाई सेना का गठन किया गया।

(11) सामंती परंपरा को तोड़कर साम्राज्य के सुदूर प्रदे"ाों को केन्द्रीय शासन प्रणाली से जोड़ने के लिए 'इक्ता प्रणाली' विकसित की गई।

(12) एि"ाया तथा अफ्रीका के निकटम प्रदे"ाों से व्यापारिक संबंध स्थापित किए गए।

(13) सैन्य दृष्टि से भारत ाके मध्येि"ायाई शक्तियों के समकक्ष बना दिया गया। पैदल सैनिक अ"वारोही सैनिकों में बदल दिए गए। यही पुनर्गठित सेना मंगोल आक्रमण को विफल करने में सफल हुई।

(14) उत्तरी भारतवर्ष पर तुर्कों की विजय को प्रोफेसर हबीब ने 'नगरीय क्रांति' कहा है।

(15) भारत में भाषा की समस्या थी हिन्दू केवन संस्कृत भाषा के माध्यम से एक दूसरे के विचार समझते थे।

12.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress):-

(क) निम्न लिखित प्रश्नों के खाली स्थान में सही उत्तर लिखें–

(i) महमूद गजनवी के पिता का नाम ..... था।

(ii) महमूद गजनी ने सोमनाथ मंदिर को लूटने का कार्य ..... ई0 में किया।

(iii) सुल्तान खुसरों ने ..... साम्राज्य का अंतिम शासक था।

(iv) 1030 ई. में महमूद गजनवी की मृत्यु के बाद उसके ..... पुत्रों के बीच उत्तराधिकार का संघर्ष हुआ।

(v) मुहम्मद गौरी ने ..... ई. में कन्नौज के राजा जयचंद को पराजित किया।

(vi) मुहम्मद गौरी ने अपना प्रथम अभियान 1175 ई. में ..... पर किया।

(vii) मुहम्मद गौरी और पृथ्वीराज चौहान के बीच हुए युद्धों की विस्तृत व्याख्या चंदवरदाई रचित ..... मे मिलता है।

(viii) गजनवी साम्राज्य की राजभाषा ..... थी।

(ix) अलप्तगीन 962 ई. में ..... शासक बना।

(x) ि"ाया विद्रोहियों ने गौर लोटते समय 15 मार्च 1206 ई को ..... की हत्या कर दी।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के सही कथन के लिए (सत्य) व गलत कथन के लिए (असत्य) लिखकर प्रतिक्रिया दें :–

(1) अरबों के आक्रमण के बाद तुर्को ने भारत पर आक्रमण किया यह एक महत्वपूर्ण घटना थी ( )

(2) मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में अरबों ने भारत पर पहला सफल आक्रमण किया। ( )

(3) मुहम्मद गजनी की मृत्यु 1030 ई. में जाटों के विद्रोह में हुई थी। ( )

(4) मुहम्मद गजनी का अंतिम भारतीय आक्रमण 1027 ई. जाटों के विरूद्ध था। ( )

(5) मुहम्मद गजनी सुबुक्तगीन का सबसे छोटा पुत्र था उसका जन्म 1 नवम्बर 971 ई. में हुआ था ( )

(6) महमूद गजनी ने सोलहवाँ आक्रमण 1025 ई. में सोमनाथ मंदिर पर किया था। ( )

(7) मुहम्मद गजनी ने अपने आक्रमणों को जिहाद का नाम दिया। ( )

(8) मुहम्मद गौरी ने 1178 ई. में भारत पर आक्रमण करने की शुरूआत की और मुलतान पर आक्रमण किया। ( )

(9) तुर्कों ने सर्वप्रथम भारतीय शासक दाउद को पराजित किया ( )

(10) फिरदोसी की रचना '"ाहनामा' थी। ( )

12.6. सारांश (Summary) :-

- **अलप्तगीनः**— अलप्तगीन ने तुर्की साम्राज्य की स्थापना की।
- अलप्तगीन ने ही गजनी साम्राज्य की स्थापना की थी। अलप्तगीन प्रथम तुर्क शासक था जिसने 962 ई. में काबुल को अपने अधीन किया।
- अलप्तगीन बुखारा के सामानीवं"ा के शासक अब्दुलमलिक का तुर्क दास था। उसकी योग्यता और दूरदर्"िता के कारण 956 ई. में खुरासान का राज्य पाल नियुक्त किया।
- अब्दुलमलिक के देहान्त के बाद अलप्तगीन ने उसके चाचा की सहायता की लेकिन अब्दुलमलिक का भाई मंसूर सिंह पाने में सफल रहा।
- अलप्तगीन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र इस्हाक और उसके बाद बलक्तगीन सिंहासन पर बैठे। इसकी मृत्यु के बाद पीराई ने गजनी पर अधिकार कर लिया जिसे हटाकर सुबक्तगीन गद्दी पर बैठा।
- **सुबक्तगीन** :— शुरूआत में यह अलप्तगीन का गुलाम था। इसकी प्रतिभा को देखकर उसे अपना दामाद बना लिया और इसे 'अमीर—उल—उमरा' की उपाधि दी गई।

- सुबक्तगीन ने अपने स्वतंत्र राज्य की नींव गजनी में डाली थी।
- सबुक्तगीन ही प्रथम तुर्क शासक था जिसने हिन्दू"ाही शासक जयपाल को हराया था। इसकी मृत्यु के बाद महमूद गजनी उसका पुत्र उत्तराधिकारी गजनी की गद्दी पर बैठा। जिसने (998–1030 ई. तक) शासन किया।
- भारत पर आक्रमण करने वाला प्रथम तुर्क (मुस्लिम) शासक सुबक्तगीन ही था।
- **भारत पर अरबों का आक्रमण** – अरबों ने आक्रमण भारत पर 1009 ई. से पहले किया था। भारत पर आक्रमण करने वाले **प्रथम मुस्लिम आक्रमणकारी अरब** थे। इसकी जानकारी हमें बिलादुरी द्वारा रचित पुस्तक फुतुह अलबदानी तथा चचनामा से मिलती है।
- भारत पर प्रथम मुस्लिम आक्रमणकारी **मुहम्मद बिन कासिम** था। इसने 712 ई. में सिंध के **राजा दाहिर** को पराजित करके थट्टा के पास देवल बंदरगाह को जीत लिया। इस युद्ध को रावर का युद्ध भी कहा जाता है।
- भारत पर अरबवासियों के आक्रमण का मुख्य उद्दे"य धन–दौलत लूटना तथा इस्लाम धर्म का प्रचार–प्रसार करना था।
- **महमूद गजनवी** :– महमूद गजनी सुबुक्तगीन का ज्येष्ट पुत्र था। इसका जन्म 1 नवम्बर, 971 ई. को हुआ। अपने पिता के काल में गजनी खुरासान का शासक था।
- सुबुक्तगीन की मृत्यु के बाद महमूद गजनवी 998 ई. में गजनी की गद्दी पर आसीन हुआ तब महमूद गजनवी की आयु केवल 27 वर्ष थी।
- बगदाद के खलीफा–अल–आदिर बिल्लाह ने महमूद गजनी के पद को मान्यता प्रदान करते हुए उसे 'यमीन–उद्–दौला' तथा 'यमीन–उल–मिल्लाह' की उपाधि दी।
- महमूद गजनवी ने भारत पर 1000 ई. से 1027 ई. के बीच 17 बार आक्रमण किया। इन आक्रमणों में सोमनाथ मंदिर का आक्रमण सबसे प्रमुख था।
- महमूद गजनवी के आक्रमणों का मुख्य उद्दे"य भारत की संपत्ति को लूटना था एवं इसकी धन की सहायता से मध्य एि"ाया में वि"ाल साम्राज्य की स्थापना करना था।
- महमूद गजनवी ने 1000 ई. में भारत पर आक्रमण शुरू किए तथा सीमावर्ती क्षेत्रों के दुर्गो/किलों को जीता। इसके बाद 1001 ई. हिन्दू"ाही शासक जयपाल को पे"ावर के निकट पराजित किया महमूद ने उसे बंदी बना लिया।

- जयपाल अपनी पराजय से इतना हतोत्साहित हो गया कि उसने स्वंय को जलती चिता में जलाने का फैसला लिया। हिन्दू"ाही राजधानी वैहिंद (पे"ावर के निकट) में 1008–1009 ई. के आस–पास महमूद और आनंदपाल के बीच युद्ध हुआ जिस में आनंदपाल की हार हुई और सिंध से नगरकोट तक महमूद का शासन स्थापित हो गया।
- महमूद गजनी ने थानेसर के चक्रस्वामिन की कास्य निर्मित आदमकद प्रतिमा को गजनी भेजकर रंगभूमि में रखवाया।
- 1014 ई. में महमूद ने थाने"वर पर आक्रमण किया। दिल्ली के राजा ने पड़ोसी राजाओं के साथ मिलकर महमूद को रोकने की भरपूर कोि"ा"ा की लेकिन सफलता नहीं मिली।
- 1018 ई. में महमूद ने कन्नौज क्षेत्र पर आक्रमण किया।
- 1019 ई. में महमूद ने हिन्दू"ाही राजा त्रिलोचनपाल को परास्त किया और 1020–1021 ई. में महमूद ने बुंदेलखंड की सीमा पर विद्याधर की सेना के एक भाग को पराजित किया।
- महमूद गजनी का सबसे चर्चित आक्रमण 1025 ई. में सोमनाथ मंदिर (सौराष्ट्र) पर हुआ। इस मंदिर की लूट में उसे करीब बीस लाख दीनार की संपति मिल गई। सोमनाथ मंदिर की रक्षा में सहायता करने के कारण अन्हिलवाड़ा के शासक पर महमूद ने आक्रमण किया।
- सोमनाथ मंदिर को लूट कर जब वापस जा रहे थे तक पि"चमोत्तर में सिंधु के जाटों ने आक्रमण किया और कुछ सम्पत्ति वापस लूट ली थी।
- महमूद गजनवी का अन्तिम भारतीय आक्रमण 1027 ई. में जाटों के विरूद्ध था।
- महमूद गजनी के साथ अरबी लेखक अलबरूनी भारत आया था। वह पुराणों का अध्ययन करने वाला प्रथम मुस्लिम था।
- अलबरूनी द्वारा लिखित पुस्तक किताबुल–हिंद भारतीय इतिहास के लिए महत्वपूर्ण स्त्रोत है, जो 80 अध्यायों और अनेक उपअध्यायों में बंटा हुआ है।
- महमूद गजनवी की मृत्यु 1030 ई. में हो गयी। महमूद गजनी के आक्रमण के समय उत्तर भारत की बागडोर राजपूत शासकों के हाथों में थी।
- अलबरूनी, फिरदौसी, उत्बी तथा फरूखी महमूद गजनी के दरबार में रहते थे।
- **शिहाबुद्दीन उर्फ मुदज़्दीन मुहम्मद गौरी** :– भारत में मुसलमानों के साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक मुइजुद्दीन–मुहम्मद–बिन–साम था, जिसे ि"ाहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी अथवा गौर वं"ा का मुहम्मद भी कहा है।

- गौर महमूद गजनी के अधीन एक छोटा सा पहाड़ी राज्य था। सर्वप्रथम 12 वीं सदी के मध्य गौरी व"ा (गौर व"ा) का उदय हुआ था 1173 ई. में ि"ाहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी गौर का शासक बना। इसने भारत पर प्रथम आक्रमण 1175 ई. में मुल्तान के विरूद्ध किया था।
- 1178 ई. में पाटन (गुजरात) पर मुहम्मद गौरी ने दूसरा आक्रमण किया। यहाँ के शासक भीत द्वितीय गौरी को बुरी तरह से पराजित किया। यह मुहम्मद गौरी की भारत में प्रथम पराजय थी।
- जिन दिनों मुइज्जुद्दीन मुहम्मद मुल्तान और कच्छा को पदमार्दित कर रहा था। उन्हीं दिनों 14 वर्षीय कि"ोर अजमेर की गद्दी पर बैठा, जिसका नाम पृथ्वीराज तृतीय था।
- साम्राज्य की स्थापना के उद्दे"य से 1175 से 1205 ई. के मध्य गौरी ने कई बार भारत पर आक्रमण किये।
- तराईन का प्रथम युद्ध 1191 ई. में गौरी एवं पृथ्वीराज चौहान के मध्य हुआ इसमें पृथ्वीराज चौहान विजयी हुआ और मुहम्मद गौरी की पराजय हुई।
- 1192 ई. मुहम्मद गौरी ने दोबारा युद्ध की तैयारी के साथ पृथ्वीराज चौहान के साथ युद्ध किया इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की पराजय हुई। इस विजय के बाद दिल्ली में गौर साम्राज्य की स्थापना हुई।
- तराईन के युद्धों का वर्णन मिनहास–उस–सिराज में किया गया है। मुहम्मद (मोहम्मद) गौरी का भारत में मुस्लिम साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक माना जाता है।

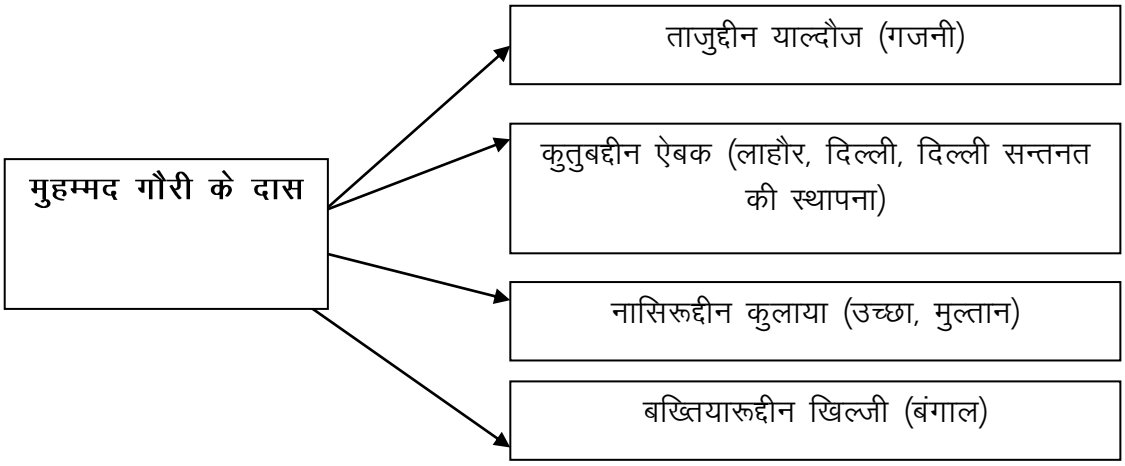

- तराईन के युद्ध के बाद मुहम्मद गौरी वापिस गजनी लौट गया और भारत सत्ता अपने वि"वसनीय दास कुतुबद्दीन ऐब को सौंप गया।
- चन्दावर का युद्ध 1194 ई. में मुहम्मद गौरी और जयचन्द के मध्य कन्नौज के निकट चंदाबार नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध में मुहम्मद गौरी ने जयचंद को पराजित कर दिया।

- तराईन एवं चंदावर के युद्धों ने भारत में तुर्क साम्राज्य की नींव डाली थी।
- 15 मार्च, 1206 ई. में दमयक नामक स्थान पर मुहम्मद गौरी की हत्या कर दी गई।
- मुहम्मद गौरी की हत्या (मृत्यु) के बाद भारत में तुर्क साम्राज्य का शासन उसके तीन गुलामों ने संभाला – यलदोज, कुबाचा, कुतुबद्दीन ऐबक ने।
- मुहम्मद गौर के साथ एक प्रसिद्ध संत शेख मोइनुदीन चि"ती भारत आया। इस संत ने भारत में चि"ती संप्रदाय की स्थापना की थी। मुहम्मद गौरी, राजनैतिक स्थितियों को जानने एवं सुधारने में महमूद गजनी से अधिक योग्य था।
- मुहम्मद गौरी के सिक्कों पर एक ओर 'कलमा' खुदा रहता था एवं दूसरी ओर देवी 'लक्ष्मी' की आकृति रहती थी।

12.7. संकेत–सूचक (Key-Words) :-

- मूर्तिभंजक – मूर्ति तोड़ने वाला
- आविर्भाव – प्रकट होना/ उत्पन्न
- अ"वारोही – घुड़सवार
- रूबरू – अवगत करना/Face to face
- लाभान्वित – लाभ प्राप्त करना
- धार्मिक कट्टरता – धर्म के प्रति जकड़न/धार्मिक वि"वास को लेकर लोगों को बाध्य करना
- शासनवधि – शासनकाल
- महत्वाकांक्षी – अपना स्वार्थ हल करने की नीति
- अवलंब – सहारा, ओट
- क्षुब्ध – क्रोधित, क्रुद्ध, क्रोधी, रूष्ट

12.8. स्व–मूल्यांकन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT) :-

भाग (क) बहु विकल्पी प्रश्न (Multiple choice based Questions) :-

चार विकल्पों में से एक सही उत्तर का चयन करें :–

(इनके उत्तर दायीं ओर कोष्ठक में दिए हुए हैं)

21. तुर्को ने सर्वप्रथम किस भारतीय शासक को पराजित किया था। ?

(A) भीम प्रथम (B) जयपाल (B)

(C) दाउद (D) राजा हरदत

22. म्हमूद गजनवी के दरबार का सुप्रसिद्ध कवि था ?

(A) फिरदौसी (B) अलबेरूनी (A)

(C) उत्वी (D) फाराबी

23. महमूद गजनी के साथ भारत आने वाला विद्वान था ?

(A) अलबेरूनी (B) फिरदौसी (A)

(C) मिन्हाज (D) उत्वी

24. तराइन का दूसरा युद्ध हुआ ?

(A) 1191 ई. में (B) 1208 ई. में (D)

(C) 1194 ई. में (D) 1192 ई. में

25. चांदवाड़ का युद्ध निम्नलिखित में से किसके मध्य हुआ –

(A) मुहम्मद गौरी और पृथ्वीराज चौहान (A)

(B) मुहम्मद गौरी और परमल देव

(C) मुहम्मद गौरी और जयचन्द राठौर

(D) मुहम्मद गौरी और भीमदेव द्वितीय

26. मुहम्मद गौरी की मृत्यु हुई ?

(A) 1191 ई. में (B) 15 मार्च, 1206 ई. में (B)

(C) 16 मार्च, 1216 ई. में (D) 1194 ई. में

7 महमूद गजनवी का जन्म हुआ ?

(A) 997 ई. में (B) 973 ई. में (C)

(C) 1171 ई. में (D) 1173 ई. में

8 महमूद गजनी के दरबार का प्रसिद्ध गणितज्ञ, ज्योतिषी, दा"ानिक था

(A) फिरदौसी (B) उत्वी (D)

(C) शहाबुद्दीन (D) अलबेरूनी

9 महमूद गजनवी ने भारत पर कितने आक्रमण किए –

(A) तेरह (B) सत्रह (B)

(C) अठारह (D) छब्बीस

10 सिन्ध पर अरबों ने कब विजय प्राप्त की थी ?

(A) 712 ई. में (B) 997 ई. में (A)

(C) 636 ई. में (D) 722 ई. में

भाग (ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions) :-

(1) मुहम्मद गौरी के भारतीय आक्रमणों का विवरण दीजिए।

(Describe the invesions of Mahmud Ghori on India.)

(2) महमूद गजनवी के भारत पर आक्रमणों के उद्दे"यों का वि"लेषण कीजिए तथा प्रमुख आक्रमणों का उल्लेख कीजिए।

(Analyse the motives of Mahamud Gazanavi's invasion of India and describe the main invasions maid by him.) (M.D.U. ROHTAK, 2015, Dec.,2001)

(3) महमूद गजनवी के भारतीय आक्रमणों का संक्षिप्त वर्णन करें तथा उनके परिणामों की व्याख्या करें।

(Describe in brief the attacks of Mahmud Ghazni and their effects in India.)

(4) तुर्कों के विरूद्ध राजपूतों की पराजय के क्या कारण थे?

(What were the reasons of defeat of Rajputs against Turks?)

12.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

12.5 (क) का उत्तर :–

(i) सुबुक्तगीन (ii) 1025 (iii) गजनी

(iv) मसूद और मुहम्मद (v) 1194 (vi) मुल्तान

(vii) (पृथ्वीराज रासो) (viii) फारसी

(ix) गजनी (x) मुहम्मद गौरी

12.5 (ख) का उत्तर :–

(1) सत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य

(5) असत्य (6) सत्य (7) सत्य (8) असत्य

(9) असत्य (10) सत्य

11.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Readings)

- हरि"ाचन्द्र वर्मा – मध्यकालीन भारत (750–1540) हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदे"ालय दिल्ली वि"वविद्यालय, द्वितीय संस्करण : 20 फरवरी, 1985।
- प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1526 ई. तक) – अविना"ा चन्द्र अरोड़ा, तृतीय संस्करण : 1987, प्रदीप पब्लिके"ान्ज, प्रताप रोड़, जालन्धर
- भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय आन्दोलन – दृष्टि पब्लिके"ान्स, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली – द्वितीय संस्करण : जून, 2018।
- भारत का इतिहास (प्रांरभिक काल से 1200 ई. तक)–डॉ. य"वीर सिंह एवं अनिल यादव, लक्ष्मी बुक डिपो – भिवानी (हरियाणा)

- सामान्य अध्ययन – स्पेक्ट्रम पब्लिके"ान, अहीर नगर दिल्ली
- मध्यकालीन भारत – डॉ. वी0 डी0 महाजन, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी प्रा0 लि0 राम नगर, नई दिल्ली, ग्यारहवां संस्करण पुनः मुद्रित 2016

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE:B.A. 106	AUTHOR: MOHAN SINGH BALODA
LESSON NO. 13	VETTER :
दिल्ली सल्तनतः उदय, विस्तार व पतन (1200 ई.–1526 ई.) (Delhi Sultanate : Emergence, Fragmentation & Down-fall -1200A.D. - 1526 A.D.)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

13.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

13.2. परिचय **(Introduction)**

13.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

13.3.1 दिल्ली सल्तनत का संस्थापक वंश : गुलाम वंश

(Founder Dynesty of Delhi Sultanate : Slave Dynasty)

13.3.2 खिलजी वंश के काल में दिल्ली सल्तनत का विस्तार

(Fragmentation of Delhi Sultanate in the period of Khilji)

13.3.3 तुगलकवंशकालीन दिल्ली सल्तनत

(Delhi Sultanate during Tughlaq)

13.3.4 दिल्ली सल्तनत के कमजोर वंश : सैयद एवं लोदी वंश

(Weak dynasty of Delhi Sultanate : Sayyid and Lodhi) :–

13.4. विषय वस्तु का पुनः प्रस्तुतीकरण **(Further Main body of the text)**

13.4.1 दिल्ली सलतनत का वास्तविक संस्थापक : इल्तुतमिश।

(Real Founder of delhi sultanate : Ilutmish)

13.4.2. प्रसिद्ध शासक बलवन और उसकी उपलब्धियां।

(Famous Ruler Balban and his achivements)

13.4.3. अलाउद्दीन खिलजी के प्रशासनिक एवं आर्थिक सुधार

(Khilji administrative and economic reform of Ala-ud-din)

13.4.4. विरोधी तत्वों के मिश्रण वाला दिल्ली सल्तनत का प्रसिद्ध शासक मुहम्मद बिन तुगलक।

(Eminent ruler of Admixture Muhammad bin Tughlaq)

13.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress)

13.6. सारांश (Summary)

13.7. संकेत–सूचक (Key-Words)

13.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT)

13.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

13.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Reading)

13.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :- इस अध्याय के अधोलिखित उद्देश्य निम्नलिखित हैं जिनके अध्ययन के उपरान्त छात्र निम्न योग्य होंगे :–

- ि"क्षार्थी दिल्ली सल्तनत के उदय के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- दिल्ली सल्तनत का विस्तार किस प्रकार से हुआ इस पर अधिगमकर्ता परिचर्चा कर सकेंगे।
- दिल्ली सल्तनत के पतन के पीछे किन कारकों की अह्म भूमिका रही।
- विद्यार्थी अलाउद्दीन खिलजी के आर्थिक व प्र"ासनिक सुधारों का वर्णन कर सकेंगे।
- गुलाम व"ा के सबसे प्रसिद्ध शासक गयासुद्दीन बलबन की उपलब्धियों की विवेचना कर सकेंगे।
- पाठकगण मुहम्मद बिन तुगलक के विरोधी गुण–अवगुण के मिश्रणों पर अपने तर्क प्रस्तुत कर सकेंगे।

13.2. परिचय (Introduction) :- तुर्की आक्रमणों के प"चात भारत में मुि"लम सत्ता की स्थापना दिल्ली सल्तनत के नाम से हुई, जिसके अंतर्गत कुल पाँच व"ोंं – गुलाम व"ा, खिलजी व"ा, तुगलक व"ा, सैयद व"ा व लोदी व"ा के अलग–अलग शासकों ने राज किया। इस क्रम में सर्व प्रथम कुतुबद्दीन ऐबक का नाम आता है, जिसने

दिल्ली सल्तनत 1206–1526 ई.

गुलाम वंश

कुतुबुद्दीन ऐबक (1206–1210 ई.)

आराम'ाह (1210 ई.)

इल्तुतमि'ा (1210–1236 ई.)

रूकुनुद्दीन फिरोज'ाह (1236 ई.)

रजिया सुल्तान (1236–1240 ई.)

मुइजुद्दीन बहराम'ाह (1240–1242 ई.)

अलाउद्दीन मसूद'ाह (1242–1246 ई.)

नासिरूद्दीन महमूद (1246–1266 ई.)

बलवनी राजवं'ा

गयासुद्दीन बलबन (1266–1287 ई.)

मोइजुद्दीन कैकुबाद (1287–1290 ई.

कयूमर्स (1290 ई.

तुगलक वंश

गयासुद्दीन तुगलक शाह प्रथम (1320–1325 ई.)

मुहम्मद–बिन–तुगलक (1325–1351 ई.)

फिरोज'ाह तुगलक (1351–1388 ई.)

गयासुद्दीन तुगलक'ाह द्वितीय (1388–1389 ई.)

अबुबक्र शाह (1389–1390 ई.)

मुहम्मद शाह तृतीय (1390–1394 ई.)

अलाउद्दीन सिकंदर शाह प्रथम (1394 ई.)

दो स्वतंत्र शासक

खिलजी वंश

जलालुद्दीन फिरोज खिलजी (1290–1296 ई.)

अलाउद्दीन खिलजी (1290–1296 ई.)

ि'ाहाबुद्दीन उमर (1316 ई.)

कुतुबुद्दीन मुबारक शाह खिलजी (1316 –1320 ई.)

नासिरूद्दीन खुसरो खाँ (1236–1240 ई.)

मुइजुद्दीन बहराम'ाह (1320 ई.)

सैय्यद वंश

खिज्र खाँ (1414–1434 ई.)

मुबारक शाह (1421–1434 ई.)

मुहम्मद शाह (1434–1443 ई.)

अलाउद्दीन आलम शाह (1443–1451 ई.)

नसिरूद्दीन महमूद शाह (1394–1413 ई.) (दिल्ली)

नुसरत'ाह (1394–1398 ई.) (फिरोजाबाद)

लोदी वंश

बहलोल लोदी (1451–1489 ई.)

सिकंदर लोदी (1489–1517 ई.)

इब्राहिम लोदी (1517–1526 ई.)

गुलाम वं"ा की नींव रखी। कुतुबद्दीन ऐबक तुर्क आक्रमणकारी मुहम्मद गौरी का गुलाम था इसलिए इसके द्वारा स्थापित वं"ा को गुलाम वं"ा के नाम से जानते हैं। किन्तु इतिहासकार गुलाम वं"ा के नाम पर आपत्ति व्यक्त करते है। उनका कहना है कि ऐबक जन्मजात गुलाम नहीं था। अतः ऐबक द्वारा स्थापित वं"ा को गुलाम वं"ा की बजाय ममलूक वं"ा कहना अधिक उचित है। इस प्रकार दिल्ली सल्तनत का प्रथम वं"ा गुलाम (दास) वं"ा था जिसे ममलूक वं"ा के नाम से जाना जाता है। यह वं"ा 1206 से 1290 ई. तक कायम रहा। इसमें कुल 11 शासकों ने राज किया। कुतुबद्दीन ने लाहौर से शासन किया था। शासन की राजधानी दिल्ली लाने वाला इल्तुतमि"ा को ही दिल्ली सल्तनत का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। इस वं"ा का प्रसिद्ध शासक बलबन हुआ जिसने इल्न्तुतमि"ा के कमजोर उत्तराधिकारियों के कारण राज्य के क्षीण हुए वैभव को फिर से स्थापित किया। इसी वं"ा के अंतर्गत इल्तुतमि"ा के बाद उसकी पुत्री रजिया सुल्तान दिल्ली सल्तनत की गद्दी पर शासन करने वाली प्रथम व अंतिम महिला शासिका हुई थी। बलबन की मृत्यु के बाद ही तीन वर्षों के अंदर यह वं"ा समाप्त हो गया। इसके बाद जलालुद्दीन फिरोज खिलजी के द्वारा खिलजी वं"ा की स्थापना की गयी। यह वं"ा 1290 से 1320 ई. तक चला। इसमें कुल 5 शासकों ने राज किया। इस वं"ा का सर्वाधिक प्रसिद्ध शासक अलाउद्दीन खिलजी हुआ। विस्तारवादी नीति के कारण इसे सिकंदर–ए–सानी या सिकंदर द्वितीय सानी की उपाधि के रूप में भी इतिहास में जाना जाता है। अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत ही नहीं बल्कि मध्यकालीन भारतीय इतिहास में प्र"ासनिक व आर्थिक सुधारों के लिए प्रसिद्ध है। इसकी बाजार नियंत्रण की नीति सल्तनत काल में वि"िष्ट स्थान रखता है। अलाउद्दीन खिलजी के बाद के शासक कमजोर हुए जिस कारण यह वं"ा इसके चार वर्षो के बाद ही 1320 ई. में समाप्त हो गया। इसके बाद गयासुद्दीन तुगलक या गाजी मलिक ने तुगलक वं"ा की स्थापना की। यह वं"ा 1320 से 1414 ई. तक चला। इसमें कुल 9 शासकों ने राज किया। दिल्ली के गद्दी पर सबसे अधिक समय तक 94 वर्षो तक इस वं"ा के शासकों ने राज किया। गयासुद्दीन तुगलक दिल्ली सल्तनत का प्रथम सुल्तान था जिसने सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण शुरू करवाया और इसी वं"ा के फिरोज"ाह तुगलक ने सबसे अधिक नहरों का निर्माण करवाया। किन्तु इस वं"ा का सबसे प्रसिद्ध शासक मुहम्मद बिन तुगलक हुआ जो मध्यकालीन इतिहास में विद्वान, दा"ानिक, कला प्रेमी, धर्मनिरपेक्ष, अनुभवी किन्तु पागल सुल्तान के नाम से प्रसिद्ध है। इसलिए इसे विरोधाभासी गुणों के मिश्रण के रूप में भी इतिहास में जाना जाता है। इसके राजधानी परिवर्तन व सांकेतिक सिक्के चलाने की नीति की आलोचना की जाती है। इसकी गलत नीतियों के कारण ही दिल्ली सल्तनत का विघटन होने लगा और क्षेत्रीय राज्यों ने अपनी स्वतंत्र पहचान बनानी शुरू कर दी। मुहम्मद बिन तुगलक के काल में ही दक्षिण भारत में महान विजयनगर साम्राज्य तथा बहमनी साम्राज्य की स्थापना हुई। तुगलक वं"ा के शासकों खासकर मुहम्मद बिन तुगलक की गलत नीतियों के कारण दिल्ली सल्तनत जो खिलजी वं"ा के काल में यौवन अवस्था में अब पतन के लक्षण वृद्धावस्था की ओर अग्रसर हो गया। इस वं"ा के संस्थापक गयासुद्दीन तुगलक का

सूफी संत निजामुद्दीन औलिया से विवाद भी प्रसिद्ध है। इसी वं"ा का फिरोज"ाह तुगलक ने ब्राह्मणों पर भी जजिया कर लगाया।

फिरोज"ाह तुगलक के बाद अयोग्य शासक के कारण यह वं"ा जैसे–तैसे 1414 ई. तक चला। इसके बाद खिज्र खाँ ने सैयद वं"ा की स्थापना की। खिज्रखाँ अपने को तैमूर के लड़के शाहरूख का प्रतिनिधि मानता था और साथ ही उसे नियमित कर भेजा करता था। खिज्र खाँ ने सुल्तान की उपाधि न धारण कर अपने को 'रैयत–ए–आला' की उपाधि से खु"ा रखा। यह वं"ा 1414–1451 ई. तक चला। इस वं"ा की दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत कोई उपलब्धि नहीं है। इस वं"ा के काल से ही दिल्ली सल्तनत पतन की ओर अग्रसर हो गया।

इस वं"ा का अंतिम शासक अलाउद्दीन आलम"ाह विलासी प्रवृत्ति का था। इसके बाद यह वं"ा समाप्त हो गया।

दिल्ली सल्तनत का अंतिम वं"ा लोदी वं"ा था। यह वं"ा 1451 से 1526 ई. तक चला। अब तक जिन चार वं"ाों ने दिल्ली सल्तनत पर राज किया वे सभी तुर्की थे, किन्तु लोदी वं"ा वाले अफगानी थे।

बहलोल लोदी को दिल्ली में प्रथम अफगान राज्य का संस्थापक माना जाता है। इस वं"ा का प्रसिद्ध शासक सिकंदर लोदी हुआ जिसे 1489 से 1517 ई. तक राज किया। इसने 1504 ई. में आगरा शहर की नींव रखी और इसे अपनी राजधानी बनाया। आर्थिक सुधार के अंतर्गत इसने भूमि मापन के लिए एक प्रमाणिक पैमाना 'गजेसिकन्दरी' का प्रचलन करवाया। धार्मिक रूप से असहिष्णु शासक सिकंदर लोदी 'गुलरूखी' उपनाम से कविता लिखता था। सिकंदर लोदी के बाद इस वं"ा का और दिल्ली सल्तनत का भी अंतिम शासक इब्राहिम लोदी बना। 1526 ई. में पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर ने इब्राहिम लोदी को हराकर दिल्ली पर मुगल वं"ा की सत्ता स्थापित की और इस प्रकार 1506 ई. में गुलाम वं"ा से जो दिल्ली सल्तनत आरंभ हुआ था उसका अंत हो गया। 1206 से लेकर 1526 ई. तक 5 राजवं"ाों ने कुल 320 वर्षों तक दिल्ली सल्तनत के नाम से दिल्ली पर राज किया था।

13.3.1 दिल्ली सल्तनत का संस्थापक वंश : गुलाम वंश (Founder Dynesty of Delhi Sultanate : Slave Dynasty) :-

मुहम्मद गोरी के प्रतिनिधि के रूप में उसके विजित क्षेत्र को अपने नियंत्रण में लेकर कुतुबद्दीन ऐबक ने भारत में दिल्ली सल्तनत के नाम से मुस्लिम सत्ता की स्थापना की। इसके द्वारा स्थापित वं"ा को गुलाम वं"ा या ममलूक वं"ा के नाम से जानते है। ऐबक का राज्यभिषेक 1206 ई. में लाहोर में 'मलिक' एवं 'सिपहसालार' की उपाधि के साथ हुआ। उसने अपने नाम से न तो कोई सिक्का जारी करवाया और न कभी खुतबे पढ़वाये।

सिंहासन पर बैठते ही कुतुबद्दीन ऐबक को मुहम्मद गोरी के अन्य उत्तराधिकारी गयासुद्दीन मुहम्मद, ताजुद्दीन एल्दौज एवं नासिरूद्दीन कुबाचा के विद्रोह का सामना करना पड़ा। ऐबक ले अपनी कूटनीतिक योग्यता का परिचय देते हुए वैवाहिक संबंधों के आधार पर इन विद्रोहियों को शांत किया। उसने गजनी के शासक ताजुद्दीन एल्दौज की पुत्री से अपना विवाह, नासिरूद्दीन कुबाचा से अपनी बहन का तथा इल्तुतमि"ा से अपनी पुत्री का विवाह किया। कुबाचा इस समय मुल्तान एवं सिंध पर तथा एल्दौज गजनी पर शासन कर रहा था। इन वैवाहिक संबंधों के कारण एल्दौज तथा कुबाचा की ओर से विद्रोह का खतरा टल गया। कालांतर में गोरी के उत्तराधिकरी गयासुद्दीन ने ऐबक को 1208 ई. में सुल्तान के रूप में स्वीकार कर लिया। इस प्रकार ऐबक एक स्वतंत्र शासक के रूप में भारत में तुर्की राज्य का संस्थापक बना। स्वतंत्र शासक के रूप में स्थापित करने के बाद ऐबक ने भारत में नये प्रदे"ा जीतने की अपेक्षा जीते हुए प्रदे"ा को सुरक्षित करने और तुर्की राजय को दृढ़ीकृत करने पर वि"ोष ध्यान दिया। ऐबक को अपनी उदारता एवं दानी प्रवृत्ति के कारण ' लाखबख्श' (लाखों का दानी) कहा गया है। इतिहासकार मिनहाज ने उसकी दान"ीलता के कारण ही उसे हातिम द्वितीय की संज्ञा दी है। ऐबक हमे"ाा अपने साथ कुरान की एक प्रति रखता था और नित्य इसका पाठ करता था। इस कारण ऐबक को कुरान खवाँ (कुरान का पाठ करने वाला) भी कहा जाता था। साहित्य एवं स्थापत्य कला में भी कुतुबद्दीन ऐबक की रूचि थी।

विद्वान इसन निजामी एवं फख–ए–मुदब्बिर को ऐबक के काल में संरक्षण प्राप्त था। स्थापत्य कला के क्षेत्र में ऐबक ने दिल्ली में कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद तथा अजमेर में ढाई दिन का झोपड़ा का निर्माण करवाया। कुतुबद्दीन ऐबक को सूफी संत शेख ख्वाजा कुतुबद्दीन बख्तियार काकी की स्मृति में दिल्ली में कुतुबमीनार का निर्माण कार्य प्रारंभ करवाने का श्रेय भी जाता है। अपने शासन के 4 वर्ष बाद 1210 ई. में लाहौर में चौगान (पोलो) खेलते समय घोड़े से गिरकर ऐबक की मृत्यु हो गई।

ऐबक की अचानक मृत्यु के कारण उत्पन्न विषम स्थिति सैनिक असंतोष व जनता में विद्रोह तथा अ"ांति की भावना को देखते हुए लाहौर के सरदारों ने उसके अयोग्य पुत्र आराम"ाह को गद्दी पर बैठाया। परंतु दिल्ली की जनता ने इसको मन से स्वीकार नहीं किया और बदायूँ के गर्वनर (प्राताध्यक्ष) इल्तुतमि"ा जो ऐबक का दामाद भी था को आमंत्रित किया। इसके बाद सत्ता को लेकर दिल्ली के जड नामक स्थान पर आराम"ाह तथा इल्तुतमि"ा के बीच संघर्ष हुआ जिसमें इल्तुतमि"ा की जीत हुई और आराम"ाह को बंदी बनाकर उसकी हत्या कर दी गई। इस प्रकार आराम"ाह के 8 माह का शासन समाप्त हो गया और दिल्ली की सत्ता पर इल्तुतमि"ा का अधिकार हो गया। अंततः ऐबक की मृत्यु के बाद कुछ महीनों तक आराम"ाह के शासन के बाद दिल्ली सल्तनत का शासक इल्तुतमि"ा बना।

- **इल्तुतमिश (1210–1236 ई.) :–**

इल्तुतमि"ा इल्बरी तुर्क था। इस कारण इससे आरंभ वं"ा को इल्बरी वं"ा के नाम से भी जानते है। इल्तुतमि"ा ने सल्तनत की राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाया। अतः इसे दिल्ली सल्तनत का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। यह 1210 से 1236 ई. तक दिल्ली का सुल्तान बना रहा। वह बहुत ही योग्य शासक था। उसने अपने पराक्रम एवं साहस से न केवल आराम"ाह बल्कि पंजाब के एल्दोज, सिंध के कुबाचा तथा बंगाल के अली मर्दान खाँ को भी पराजित किया। रणथम्भौर एवं ग्वालियर को उसने फिर से हिन्दुओं से छीन लिया तथा मालवा एवं उज्जैन पर भी अपनी जीत दर्ज की। इल्तुतमि"ा ने कुतुबद्दीन के समय के सरदार 'कुत्बी' तथा गोरी के समय के सरदार 'मुइज्जी' का कठोरता से दमन करते हुए अपने गुलाम मंगोल चंगेज खाँ के आक्रमण से अपने राज्य को बचाया। उसने अपनी कूटनीति के द्वारा 40 सरदारों का गुट चालीसा गुट (तुर्कान–ए–चिहलगानी) बनाया और इसे राजत्व का एक अंग बना लिया। शासन को व्यवस्थित करने के लिए 'इक्ता–व्यवस्था' प्रचलन में लाया। 1229 ई. में उसे बगदाद के खलीफा से भारत में स्वतंत्र तुर्क शासन के रूप में 'खिलअत' एवं प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ। शुद्ध अरबी सिक्के चलाने वाला भारत में वह पहला तुर्क सुल्तान था। उसने 1232 ई. में कुतुबमीनार का निर्माण पूरा किया तथा दिल्ली के सुल्तानगढ़ी में पहला मकबरा निर्मित करवाने का श्रेय भी इल्तुतमि"ा को ही दिया जाता है।

1236 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। अपने 25 वर्षों के शासन काल में उसने एक कु"ाल प्र"ाासक का परिचय दिया, इसलिए उसे दिल्ली के प्रारंभिक सुल्तानों में सबसे महान कहा जाता है।

- **रूक्नुद्दीन फिरोज (1236 ई.) :–**
- इल्तुतमि"ा ने अपनी पुत्री रजिया को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था, पर उसकी मृत्यु के बाद उसके दरबारियों को किसी स्त्री का शासक बनना बर्दास्त नहीं हुआ और उन्होंने उसके बड़े पुत्र जो विलासी, निरंकु"ा तथा अयोग्य था को गद्दी पर बैठा दिया। उसे शासन के कार्य में कोई रूचि नहीं थी। वस्तुतः शासन की बागडोर उसकी माँ शाहतुर्कान के हाथों में थी। जनता ने इसको बर्दास्त नहीं किया और विद्रोह कर दिया और अंततः कुछ ही महीनों के शासन के उपरांत रूक्नुद्दीन की हत्या कर दी गई और जनता की समर्थन से रजिया को सिंहासन पर बैठाया गया।
- **रजिया सुल्तान (1236–1240 ई.) :–**

  रजिया एकमात्र महिला सुल्तान थी, जो दिल्ली के सिंहासन पर बैठी। उसने 1236 से 1240 ई. तक शासन किया। वह एक योग्य शासिका थी। चूंकि रजिया को सुल्तान बनाने का अधिकार सिर्फ दिल्ली के अमीरों को मिला इसलिए अन्य तुर्क अमीर/सरदार उससे अप्रसन्न रहते थे। इसलिए वे उसे सुल्तान के पद से हटाना चाहते थे। इसके लिए सरदारों ने सिंध के सूबेदार अल्तूनिया को नेता बनाकर रजिया के खिलाफ

विद्रोह कर दिया जबकि रजिया ने याकूत नामक एक गुलाम को अपना वि"वासपात्र बनाया था। इस 'ाड्यंत्र से निकलने के लिए रजिया ने अल्तूनिया से विवाह कर लिया, किंतु सरदारों ने अंततः 1240 ई. में रजिया तथा उसके पति अल्तूनिया को युद्ध में परास्त कर मार डाला।

उसने मात्र तीन या साढ़े तीन वर्षों तक शासन किया, किंतु इस बीच उसने अपनी वीरता, कूटनीतिज्ञता और नेतृत्व क्षमता का पर्याप्त परिचय दिया। उसने भारत में तुर्की सत्ता की पुनः प्रतिष्ठा की और सुल्तान की शक्ति को निरंकु"ा बनाने का प्रयत्न किया। रजिया दिल्ली सल्तनत पर शासन करने वाली पहली महिला सुल्तान थी जिसने अमीरों एवं मालिकों को सभी प्रकार के आदे"ाों को मानने के लिए विव"ा किया। सामान्यतः ऐसा माना जाता है कि रजिया के पतन का मुख्य कारण उसका स्त्री होना था। परंतु इस बात में सच्चाई नहीं है कि उसके पतन का सबसे बड़ा कारण अमीरों और मालिकों की महत्वकांक्षाएं थीं। अमीरों एवं मालिकों ने अपने अधिकार क्षेत्र में वृद्धि के लिए रजिया के विरूद्ध 'ाड्यंत्र किया और मरवा डाला।

- **मुईजुद्दीन बहरामशाह (1240–1242 ई.) :–**

रजिया के बाद मुईजुद्दीन बहराम"ाह सुल्तान बना। वह नाममात्र का ही सुल्तान था। क्योंकि शासन का संचालन तुर्क अमीरों द्वारा ही हो रहा था। इसके काल में सुल्तान के अधिकार को कम करने के लिए तुर्क सरदारों ने एक नये पद 'नायब' अथवा 'नायब–ए–मुमलिकात' का सृजन किया। इस पद पद नियुक्त व्यक्ति संपूर्ण अधिकारों का स्वामी होता था। बहराम"ाह के समय में इस पद पर सर्वप्रथम मलिक इख्यिारूद्दीन एतगीन को नियुक्त किया गया। एतगीन ने सुल्तान के कुछ अधिकार अपने हाथों में ले लिए और उसकी बहन के साथ विवाह भी रचाया। एतगीन की बढ़ती शक्ति से बहराम"ाह घबरा गया और उसने उसका वध करवा दिया और सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथों में ले ली। इसी के शासनकाल में 1241 ई. में मंगोलों ने पंजाब पर आक्रमण किया। 1242 ई. में तुर्क सरदारों के 'ाड्यंत्र के कारण सैनिकों द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी। इस प्रकार 1240 ई. में सत्तासीन हुए बहराम"ाह के शासनकाल की समाप्ति 2 वर्षो की छोटी सी अवधि में हो गई।

- **अलाउद्दीन मसूदशाह (1242–1246 ई.) :–**

बहराम"ाह की हत्या के प"चात् तुर्क सरदारों ने मसूद"ाह को दिल्ली का शासक बना दिया। वह एक अयोग्य शासक सिद्ध हुआ। उसके शासन काल में बलबन ने मंगोलों को हराकर राज्य में अपना वि"िाष्ट स्थान प्राप्त कर लिया था। अमीरे हाजिब के पद पर बने रहकर बलबन ने शासन का वास्तविक अधिकार अपने हाथ में ले लिया। मसूद"ाह नाम मात्र का शासक रह गया था। अंततः बलबन ने एक 'ाडयंत्र द्वारा सुल्तान को कैद करवा दिया तथा उसका वध करवा दिया और दिल्ली की गद्दी पर नसिरूद्दीन महमूद को बिठा दिया।

- **नासिरूद्दीन महमूद (1246–1266 ई.) :–**

नासिरूद्दीन महमूद धर्म–पराय और सच्चरित्र था, परंतु वह नाममात्र का शासक रह गया था। राज्य की समस्त शक्तियों का प्रयोग नायब–ए–मुमलिकात बलवन के हाथों में सौंप दिया और स्वयं सुल्तान तुर्की अधिकारियों की आज्ञा के बिना कोई कार्य नहीं करता था। बलबन ने आन्तरिक विद्रोहों तथा मंगोलों के आक्रमणों का सफलतापूर्वक विरोध किया जिससे महमूद के शासनकाल में उसका राजनीतिक कद काफी बढ़ गया। नायब के पद के साथ सुल्तान ने बलबन को 'उलगू खाँ' की उपाधि प्रदान की। बलबन ने अपनी पुत्री का विवाह सुल्तान से करवाया। 1266 ई. में महमूद की मृत्यु के बाद बलबन स्वयं सुल्तान बन गया।

- **गयासुद्दीन बलबन (1246–1286 ई.) :–**

बलबन इल्बरी तुर्क था। महमूद की मृत्यु के बाद 1266 ई. में वह गयासुद्दीन की उपाधि के साथ दिल्ली की गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बैठते ही उसने चालीसा गुट को समाप्त कर दिया। बलबन ने अमीरों के प्रभाव एवं बढ़ी हुई शक्ति को कमजोर करने तथा सुल्तान को शक्ति"ाली बनाने के उद्दे"य से इनकी शक्ति को कुचलने का कार्य किया। उसने आंतरिक विद्रोहों का सफलता पूर्वक दमन किया। अपने सफल रणनीति के द्वारा उलेभाओं को राजनीति से पृथक कर दिया।

अपनी प्रभुसत्ता, अधिकार एवं शक्ति को स्पष्ट करने के लिए बलबन ने राजत्व के दैवीय सिद्धान्त का समर्थन किया और स्वयं को जिल्ले इलाही (ई"वर की छाया) से नवाजा तथा अपने आप को शाही वं"ाज होने का दावा किया।

उसने अपने राज्य में ईरानी आद"ों एवं परंपराओं – 'सिजदा' एवं 'पाबोस' का पालन तथा 'नौरोज' उत्सव मनाने का प्रचलन प्रारंभ किया। राज्य की शक्ति बढ़ाने के लिए उसने 'दीवान–ए–अर्ज' नाम से नियमित सेना का गठन किया।

शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए 'बरीद–ए–मुमालिक' के नाम से गुप्तचर विभाग बनाया। बलबन की न्याय व्यवस्था कठोर तथा गैर–पक्षपात पूर्ण थी। सुल्तान प्रमुख अपराधों से संबंधित मामलों का न्याय स्वयं करता था। अपने विद्रोहियों के प्रति शासक व्यवस्था में उसने 'रक्त एवं लौह' की नीति का पालन किया जिसके अंतर्गत विद्रोही व्यक्ति की हत्या कर उसकी स्त्री एवं बच्चों को दास बना लिया जाता था। 1286 ई. में बलबन की मृत्यु हो गई। बलबन की मृत्यु के 3–4 वर्षों के अंदर ही उसके द्वारा स्थापित व्यवस्थाएँ और सुल्तान की मद–प्रतिष्ठा नष्ट हो गई।

- **बलबन के उत्तराधिकारी कैकुबाद एवं शम्सुद्दीन क्यूमर्स (1286–1290 ई.) :–**

दिल्ली सल्तनत के निर्माता शासकों में से एक बलबन ने राज्य को स्थायित्व प्रदान किया तथा आंतरिक प्र"ासन की व्यवस्था की परंतु अपने उत्तराधिकारियों के लिये वह कुछ न कर सका। उसके जीवनकाल में ही युवराज शहाजादा मुहम्मद की मंगोलों से युद्ध करते हुए मृत्यु और दूसरे पुत्र बुगरा खाँ की सुल्तान पद से उदासीनता के कारण अपनी मृत्यु के पूर्व उसने शहाजादा मुहम्मद के पुत्र कैखुसरों को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। परंतु बलबन की मृत्यु के बाद उसके वि"वस्तों ने ही उसके आदे"ा की अवहेलना करते हुए बुगरा खाँ के अल्पव्यस्क विलासी पुत्र कैकुबाद को सुल्तान बना दिया।

1290 ई में कैकुवाद लकवाग्रस्त हो गया तो उसके पुत्र क्यूमर्स को सुल्तान बनाया गया लेकिन उसके संरक्षक मलिक फिरोज खिलजी ने उसकी हत्या कर दिल्ली सल्तनत पर अपना कब्जा कर लिया। इस सत्ता परिवर्तन के साथ ही ममलूक या गुलाम वं"ा का अंत हो गया और दिल्ली सल्तनत पर एक नवीन वं"ा खिलजी वं"ा का शासन स्थापित हो गया।

13.3.2 खिलजी वंश के काल में दिल्ली सल्तनत का विस्तार (Fragmentation of Delhi Sultanate in the period of Khilji) :-

- **खिलजी वंश (1290–1320 ई.) :–**

खिलजी वं"ा की स्थापना मध्यकालीन भारतीय इतिहास में दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत एक महत्वपूर्ण परिर्वतन को इंगित करती है। इसकी स्थापना जलालुद्दीन फिरोज खिलजी के द्वारा 1290 ई. में किया गया। इतिहास में खिलजी वं"ा की स्थापना को खिलजी क्रांति के नाम से जाना जाता है।

खिलजी क्रान्ति का सामान्य अर्थ है – जाति व नस्ल आधारित शाही वं"ा के शासन की समाप्ति, क्योंकि अब उच्च समझे जाने वाले इल्बरी तुर्कों के स्थान पर निम्न तुर्क खिलजियों ने सत्ता पर अधिकार कायम कर ली।

इसके अतिरिक्त खिलजी क्रांति के परिणामस्वरूप दिल्ली सल्तनत का सुदूर दक्षिण तक विस्तार हुआ, तुर्की अमीर सरदारों के प्रभाव क्षेत्र में कमी आई, जातिवाद में कमी आई, प्र"ासन में सामाजिक विस्तार (भारतीय मुसलमान, मंगोलों को शामिल करना), प्रतिभा या योग्यता को शासन में महत्व, प्र"ासन में धर्म व उलेमा के महत्व को अस्वीकार करना आदि परिवर्तन हुये। जिस कारण इस दौरान तत्कालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक संरचना में मूलभूत परिवर्तन हुए। यही कारण है कि खिलजी वं"ा को एक क्रांति के रूप में देखा जाता है। इस वं"ा के अंतर्गत कुल पाँच शासकों ने 30 वर्षो तक शासन किया जिसका वर्णन निम्न प्रकार है :–

- **जलालुद्दीन फिरोज खिलजी (Jalaluddin Firoz Khilji) (1290–1296 ई.) :–**

खिलजी व"ा का संस्थापक फिरोज खिलजी 1290 ई. में दिल्ली की गद्दी पर जलालुद्दीन की उपाधि के साथ बैठा। उसने कैकुबाद द्वारा निर्मित किलोखरी के महले में अपना राज्याभिषेक करवाया और इसे अपनी राजधानी बनाया। राज्याभिषेक के समय इसकी आयु 70 वर्ष थी।

जलालुद्दीन फिरोज खिलजी ने बलबन की 'रक्त और लौह' की नीति त्यागकर शासन व्यवस्था में उदार नीति को महत्व देते हुये जनता की इच्छा को शासन का आधार बनाया।

जलालुद्दीन को अहस्तक्षेप की नीति के लिए जाना जाता है। उसका 1291 ई. में रणथम्भौर का अभियान असफल रहा। 1292 ई. में मन्डौर एवं झाईन के किलों को जीतने में जलालुद्दीन को सफलता मिली।

1292 ई. में ही इसके काल में एक बार अब्दुल्ला के नेतृत्व में तथा दूसरी बार उलगू खाँ के नेतृत्व में मंगोलों का आक्रमण हुआ जिसमें मंगोलों की हार हुई। अन्त में दोनों के बीच संधि हुई।

इसी समय जलालुद्दीन के काल में लगभग 4 हजार मंगोल उलूग के नेतृत्व में इस्लाम धम्र ग्रहण कर दिल्ली के निकट मुगरलनुर /मंगोलपुरी में बस गए, जो 'नवीन मुसलमान' के नाम से जाने जाते हैं। जलालुद्दीन के शासनकाल में ही उसके भतीजे अलाउद्दीन ने भिलसा एवं देवगिरी ("ासक रामचंद्र देव) का सफल अभियान किया।

अपने भतीजे अलाउद्दीन की सफलता से खु"ा होकर जब जलालुद्दीन उससे मिलने कड़ा–मानिकपुर की ओर चला तो रास्ते में ही स्वागत के दौरान उसकी हत्या कर दी गई। इस प्रकार अलाउद्दीन ने अपने उदार चाचा की हत्या कर 1296 ई. में दिल्ली की गद्दी पर अपना राज्यभिषेक करवाया।

- **अलाउद्दीन खिलजी (Alauddin Khilji) (1296–1316 ई.) :–**

जलालुद्दीन खिलजी का भतीजा, अलाउद्दीन खिलजी के बचपन का नाम 'अली' तथा 'गुर"ास्प' था। अलाउद्दीन के पिता की मृत्यु के बाद जलालुद्दीन ने उसका पालन–पोषण किया और बाद में उसे अपना दामाद बनाया। जलालुद्दीन के सुल्तान बनते ही उसे 'अमीर–ए–तुजुक' का पद मिला तथा इलाहाबाद (वर्तमान प्रयागराज) स्थित कड़ा–मानिकपुर की जागीर भी प्रदान की। प्रारंभ से महत्वाकांक्षी अलाउद्दीन ने जैसे ही मौका मिला कड़ा मानिकपुर में अपने चाचा जलालुद्दीन की हत्या कर अपने आप को सुल्तान घोषित कर दिया। इस प्रकार अलाउद्दीन 1296 ई. में दिल्ली का सुलतान बना। उसने 1316 ई. तक राज किया। अलाउद्दीन ने 'सिकन्दर–ए–सानी' या 'सिकन्दर द्वितीय सानी' की उपाधि धारण की।

जलालुद्दीन की हत्या के प"चात् उसकी पत्नी मलिका–ए–जहाँ ने अपने छोटे पुत्र कद्र खाँ को रूक्नुद्दीन इब्राहिम के नाम से सिंहासन पर बैठा दिया अपने बड़े पुत्र अर्कली खाँ को मुल्तान से बुलाया।

लेकिन अलाउद्दीन खिलजी के कूटनीति एवं पराक्रम के सामने इन दोनों की कुछ भी न चली। जब दिल्ली में बैठे इब्राहिम ने देखा कि अलाउद्दीन का विरोध असंभव है तो वह अपनी माता के साथ मुल्तान की ओर भाग गया और अंततः कड़ा–मानिकपुर से दिल्ली आकर अलाउद्दीन खिलजी ने अपना राज्यभिषेक करवाया।

इसके दिल्ली सल्तनत पर आसीन होने के बाद सल्तनत का विस्तार हुआ। उसने एक बड़ी सेना का गठन किया और राज्य के विस्तार के लिए कई अभियान शुरू किए।

अपने राज्य विस्तार के अभियान के अंतर्गत उत्तर भारत की विजय के दौरान गुजरात पर आक्रमण (1298–1299 ई.), रणथंभौर पर आक्रमण (1301 ई.), चित्तौड़ की विजय (1303 ई.), मालवा की विजय (1305 ई.), मारवाड़ की विजय (1308 ई.), जालौर की विजय (1311 ई.) को सफलतापूर्वक पूरा किया।

उत्तर भारत में राज्य विस्तार के साथ ही अलाउद्दीन ने दक्षिण भारत में भी राज्य विस्तार का सफलता पूर्वक अभियान चलाया। इसके दक्षिण भारत के अभियानों का नेतृत्व मलिक काफूर जो उसे गुजरात आक्रमण के दौरान एक हजार दीनार के बदले प्राप्त हुआ था ने किया। इसीलिए मलिक काफूर को 'हजार दीनारी' भी कहा जाता है। उसके दक्षिण अभियान की विस्तृत जानकारी बरनीकृत 'तारीख–ए–फिरोज"ाही' तथा अमीर खु"ारों की रचना खजायन–उल–फुतूह एवं इसामी की रचना '' फुतूह–उस–सलातीन से मिलती है। इन विवरणों से पता चलता है कि दक्षिण भारत में राज्य विस्तार के अभियान में अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरी का आक्रमण (1307–1308 ई.), तेलंगाना (वारंगल) की विजय (1309–1310 ई.) , पांड्य राज्य की विजय (1311ई.), देवगिरी पर पुनः आक्रमण (1313 ई.) के अभियान को सफलतापूर्वक चलाया। अपने कूटनीति का परिचय देते हुए अलाउद्दीन खिलजी ने उत्तर भारत के विपरीत दक्षिण भारत में विजित क्षेत्रों के साथ अप्रत्यक्ष शासन की नीति को अपनाया, क्योंकि प्रत्यक्ष साम्राज्य विस्तार से साम्राज्य का स्थायित्व प्रभावित होता। अलाउद्दीन खिलजी ने मंगोल आक्रमण का भी सफलतापूर्वक सामना किया। एक प्र"ासक के तौर पर अलाउद्दीन खिलजी मध्यकालीन भारतीय इतिहास में महत्वूपर्ण स्थान रखता है। अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली का ऐसा पहला सुल्तान था जिसने उलेमा वर्ग की उपेक्षा करते हुए धर्म पर राज्य का नियंत्रण स्थापित किया। उसने अपने आपको 'यामिन–उल–खिलाफत ना सिरी अमीर–उल–मुमनिन' कहा। वह निरंकु"ाता में वि"वास करता था। उसने अपने विरोधियों का निर्ममतापूर्वक दमन करके सारी सत्ता अपने हाथ में केंद्रित कर ली थी। सुल्तान ने अपनी सहायता के लिये एक मंत्रिपरिषद नियुक्त की, किंतु उन्हें केवल सुल्तान की आज्ञा का पालन करना पड़ता था।

अलाउद्दीन खिलजी ने अमीरों का दमन कर साधारण लोगों को उच्च पदों पर नियुक्त किया। उसके काल में दंड विधान अत्यधिक कठोर थे। राज्य की सर्वोच्च न्यायिक शक्ति सुल्तान में निहित थी।

सैन्य सुधार के अंतर्गत अलाउद्दीन पहला ऐसा सुल्तान था जिसने स्थायी सेना की व्यवस्था की, जो हमे"ा राजधानी में तैनात रहती थी। सैनिकों को पूर्व से चली आ रही जागीर देने की प्रथा को समाप्त करके उसके स्थान पर नकद वेतन देने की प्रथा को आरंभ किया। सैनिकों का हुलिया लिखना व घोड़ों को दागने की प्रथा को भी अलाउद्दीन खिलजी ने ही आरंभ किया। अलाउद्दीन खिलजी ने व्यक्तिगत संपत्ति तथा जागीरों की जब्ती के द्वारा अमीरों पर नियंत्रण स्थापित किया। अमीरों के विभिन्न उत्सवों पर मिलने–जुलने पर भी प्रतिबंध लगा दिया।

अलाउद्दीन की आर्थिक सुधार के अंतर्गत सबसे महत्वूपर्ण सुधार भूमि की माप करवाना व बाजार नियंत्रण की नीति को माना जाता है। अलाउद्दीन खिलजी को 'सार्वजनिक वितरण प्रणाली ' का आरंभ करने वाला के रूप में भी जाना जाता है।

वि"ाल साम्राज्य को चलाने के लिए अलाउद्दीन खिलजी ने पर्याप्त राजस्व एवं कर व्यवस्था को भी अपने राज्य में स्थापित किया। अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल का मूल्यांकन करते हुए एलफिंस्टन ने कहा – '' उसका शासन गौरवपूर्ण था। अनेक मूर्खतापूर्ण एवं क्रूर नियमों के बावजूद भी वह सफल शासक था, उसने अपनी शक्ति का उचित रूप से प्रयोग किया।''

- **अलाउद्दीन खिलजी के उत्तराधिकारी (Alauddin Khilji's successor)** :–

अलाउद्दीन खिलजी की मृत्यु (1316 ई.) के बाद इसके उत्तराधिकारी क्रम"ाः ि"ाहाबुद्दीन उमर, कुतुबुद्दीन मुबारक"ाह खिलजी तथा नासिरूद्दीन खुसरों शाह जैसे अयोग्य शासक सत्ता पर बैठे।

ि"ाहाबुद्दीन उमर (1316 ई.) जो 5–6 वर्ष का ही था को नाम मात्र का सुल्तान बनाकर उसके संरक्षक के रूप में मलिक काफूर ने सारा अधिकार अपने हाथों में कर लिया। इसके नाममात्र के शासन के कुछ ही दिन बाद (लगभग 35 दिन) मलिक काफूर की हत्या अलाउद्दीन के तीसरे पुत्र मुबारक खिलजी ने करवा दी। मलिक काफूर की हत्या के बाद वह स्वयं सुल्तान का संरक्षक बन गया और कालांतर में उसने ि"ाहाबुद्दीन को अंधा करा के कैद करवा दिया और सत्ता हथिया ली।

ि"ाहाबुद्दीन उमर के बाद कुतुबद्दीन मुबारक"ाह खिलजी (1316–1320 ई.) पहला शासक था जिसने अपने आपको 'खलीफा' घोषित किया। 1317–1318 ई. में देवगिरि की पुनर्विजय उसकी एक बड़ी उपलब्धि थी। बाद के दिनों में वह विलासी प्रवृति का हो गया और दरबार में भी स्त्रियों की पो"ाकें धारण करने लगा। उसकी इस कमजोरी का फायदा उठाते हुये उसके वजीर खु"ारव"ाह ने 15 अप्रैल, 1320 ई. को उसकी हत्या कर स्वयं दिल्ली की गद्दी को हथिया लिया।

नासिरूद्दीन खुसरव"ाह 15 अप्रैल, 1320 को दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। उसने अपने नाम से खुतबे पढ़ाये और साथ ही 'पैगम्बर के सेनापति' की उपाधि धारण की। लगभग साढ़े चार माह के शासन के उपरांत 5 सितंबर, 1320 को गाजी मलिक जिसने अलाउद्दीन खिलजी के काल में मंगोल आक्रमण को विफल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी एवं खुसख के मध्य युद्ध हुआ जिसमें खु"ारव"ाह पराजित हुआ। इस प्रकार खिलजी वं"ा का अंत हो गया और गाजी मलिक गयासुद्दीन तुगलक नाम से गद्दी पर बैठा तथा एक नवीन वं"ा तुगलक वं"ा आरंभ हो गया।

13.3.3 : तुगलकवंशकालीन दिल्ली सल्तनत (Delhi Sultanate during Tughlaq) :–

दिल्ली सल्तनत पर सबसे अधिक समय तक 94 वर्षों तक तुगलक वं"ा का शासन रहा। यह वं"ा 1320 ई. से 1414 ई. तक राज किया। इस दौरान इस वं"ा के संस्थापक गयासुद्दीन तुगलक से लेकर अंतिम शासक नासिरूद्दीन महमूद तक कुल 8 शासकों ने राज किया। इसका वर्णन निम्न प्रकार है –

- **गयासुद्दीन तुगलक (Gayasudin Tughlaq) (1320–1325 ई.) :–**

अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में सैन्य अभियानों का अध्यक्ष तथा दीपालपुर का राज्यपाल रहे गाजी मलिक ने 1320 ई. में तुगलक वं"ा की स्थापना की। इसने गयासुद्दीन तुगलक की उपाधि धारण की। इसका जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था। उसकी माता पंजाब की एक जाट महिला थी तथा पिता बलबन का तुर्की दास था। इसके काल में सबसे अधिक 29 बार मंगोलों के आक्रमण हुये। मंगोलों को हराने के कारण गयासुद्दीन तुगलक 'मलिक–उल–गाजी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसने अलाउद्दीन खिलजी की कठोरता की नीति के स्थान पर संयम, सख्ती एवं नर्मी के मध्य संतुलन को शासन का आधार बनाया। गयासुद्दीन ने अमीरों की भूमि पुनः लौटा दी जिसे अलाउद्दीन खिलजी ने जब्त कर लिया था। इसने अमीरों एवं उलेमाओं के साथ अलाउद्दीन की कठोरता के स्थान पर नर्मी बरती। इस कारण इसके काल में सामंतों और उलेमाओं की शक्ति में वृद्धि हुई तथा निरंकु"ा राजतंत्र की परंपरा दुर्बल हुई। गयासुद्दीन तुगलक ने दिल्ली सल्तनत राज्य के विस्तार के लिए कई प्रयास किए। उसकी महत्वपूर्ण विजय थी – वारंगल व तेलंगाना की विजय (1321–1323 ई.), उडीसा की विजय (1324 ई.), बंगाल की विजय (1324 ई.), तिरहुती विजय (1324ई.), मंगोल विजय (1324 ई.) आदि। गयासुद्दीन ने अपने शासन काल में कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए किसानों के हितों की रक्षा करने की नीति का पालन किया। दिल्ली सल्तनत में सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण करवाने वाला वह पहला सुल्तान था। उसने लगान के रूप में 1/10 या 1/12 भाग ही लेने का आदे"ा जारी कराया। अकाल की स्थिति में भूमि कर को माफ करने का नियम बनाया।

अलाउद्दीन खिलजी काल के सैनिक व्यवस्था को कु"ालतापूर्वक बनाए रखा। जन कल्याणकारी कार्य के अंतर्गत गयासुद्दीन की डाक व्यवस्था उत्कृष्ट थी और शीघ्र डाक पहुँचाने के लिए उसने घुड़सवार नियुक्त किये। प्र"ासन में नैतिक नियमों व ि"ाष्टाचारों के पालन के लिए 'मुहतसिब' नामक अधिकारी नियुक्त किया। अपने शासनकाल में शराब उत्पादन एवं बिक्री पर इसने पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया।

परंतु अलाउद्दीन खिलजी की तरह हिन्दुओं के प्रति गयासुद्दीन की नीति कठोर थी। स्थापत्य कला के क्षेत्र में इसने तुगलकबाद नामक नगर बसाया। वास्तुकला की तुगलक शैली का प्रारंभ इसके मकबरे के निर्माण से हुआ। सूफी संत निजामुद्दीन औलिया के साथ विवाद के कारण भी गयासुद्दीन तुगलक प्रसिद्ध रहा। सूफी संत निजामुद्दीन औलिया ने गयासुद्दीन के बारे में ही कहा था – 'दिल्ली अभी दूर है' (हूनूज दिल्ली दूरस्थ)। 1325 ई. में बंगाल अभियान से वापस लौटते समय गयासुद्दीन के स्वागत में दिल्ली के समीप अफगानपुर में उसके पुत्र जौना खाँ द्वारा स्वागत के लिए निर्मित लकड़ी के भवन में दबकर उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद उसका पुत्र जौना खाँ मुहम्मद बिन तुगलक के नाम से दिल्ली की गद्दी पर बैठा।

- **मुहम्मद बिन तुगलक (Muhammad Bin Tughlaq) (1325–1351 ई.) :–**

गयासुद्दीन तुगलक की मृत्यु के बाद उसका पुत्र जौना या जूना खाँ 'मुहम्मद बिन तुगलक' के नाम से दिल्ली सल्तनत का शासक बना। दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत विरोधी तत्वों के मिश्रण वाला सुल्तान के रूप में उसकी प्रसिद्धी रही है। मुहम्म्द बिन तुगलक को ि"ाक्षित, दा"ानिक, धर्मनिरपेक्ष, बुद्धि सम्पन्न, कला प्रेमी एवं अनुभवी सेनापति किन्तु पागल व सनक भरे निर्णयों एवं कार्यों के लिए जाना जाता है। दिल्ली सल्तनत का सर्वाधिक विस्तार इसी के शासनकाल में हुआ। इसका मूल नाम 'उलूग खाँ' था। मुहम्मद बिन तुगलक के समय में जियाउद्दीन बरनी द्वारा लिखी पुस्तक 'तारीख–ए–फिरोज"ाही' और मोरक्को यात्री इ"नबतूता के यात्रा वृतांतों से इसके शासनकाल के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। इब्नबतूता ने मुहम्मद–बिन–तुगलक के समय की घटनाओं को अपनी पुस्तक 'किताब–उल–रेहला' में वर्णन किया।

इब्नबतूता के विवरण से पता चलता है कि मुहम्मद बिन तुगलक के गद्दी पर बैठते समय सल्तनत 23 प्रांतों में बटाँ हुआ था। क"मीर एवं आधुनिक बलूचिस्तान को छोड़कर लगभग सारा हिंदुस्तान दिल्ली सल्तनत के अधिकार में था।

शासक बनने के बाद मुहम्मद बिन तुगलक ने कुछ नवीन योजनाओं को बनाने व उन्हें क्रियान्वित करने का प्रयास किया किन्तु पूर्व परिस्थितयों का गलत आकलन तथा वस्तुस्थिति की समझ का अभाव के

कारण वह इसमें असफल रहा। इतिहासकार बरनी सुल्तान की ऐसे पाँच प्रमुख शासन संबंधी योजनाओं का वर्णन करता है।

ये योजनायें थी – दोआब में कर वृद्धि (1325 ई.), राजधानी परिवर्तन (1326–1327 ई.), सांकेतिक मुद्रा जारी करना (1329–1330 ई.) खुरासान एवं कराचिल का अभियान।

दोआब में कर वृद्धि के दौरान ही अकाल पड़ने के कारण अत्यधिक उपजाऊ वाले इस क्षेत्र के किसानों में कर अदा करने की क्षमता नही रही। परंतु इस विपरीत परिस्थति में कर वसूलने में कठोरता बरती गई जिससे यह योजना असफल रही।

सुल्तान का राजधानी परविर्तन की योजना को व्यावहारिक रूप देने का तरीका गलत था जिससे इसका लोगों पर विपरीत प्रभाव पड़ा। मुद्रा के प्रचलन पर नियंत्रण का अभाव के कारण सांकेतिक मुद्रा जारी करने की योजना भी विफल रही है। खुरासान पर आक्रमण तथा कराचिल का सैनिक अभियान परिस्थितियों का आंकलन कर पूर्व योजना नहीं बनाने के कारण राज्य को इससे बहुत बड़ी हानि हुई।

इन अभियानों के अलावा मुहम्मद बिन तुगलक के अन्य कार्यों में सबसे महत्वपूर्ण कृषकों की सहायता के लिए अलग से 'दीवान–ए–कोही' नाम से कृषि विभाग की स्थापना करना है। उसने अकाल राहत संहिता बनवाये। सिंचाई के लिए इंतजाम किये। कृषि ऋण 'तकावी' की व्यवस्था की। कुएँ खोदने एवं बीज व हल खरीदने के लिए कृषि ऋण 'सोनधर' प्रदान किया।

मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने शासनकाल में मिस्त्र (Egypt) के अब्बासी खलीफा से स्वीकृति–पत्र प्राप्त किया तथा सिक्कों पर उसके नाम अंकित करवाये।

जनता को राहत देने के लिए सुल्तान ने 'उश्र' तथा 'जकात' को छोड़कर शेष कर समाप्त कर दिये।

मुहम्मद बिन तुगलक का मूल्यांकन करते हुए अधिकां"ा इतिहासकार इस बात पर सहमत है कि एक शासक के रूप में वह पूर्णतः असफल रहा। जब वह गद्दी पर बैठा तब साम्राज्य में लगभग समस्त उत्तर तथा दक्षिण भारत सम्मिलत था किंतु उसने अपने अदूरदर्"िता पूर्ण तथा अलोकप्रिय नीति के द्वारा क्षेत्रीय शासकों को विद्रोह के लिए मजबूर कर दिया। इसके काल में सर्वाधिक 22 विद्रोह हुए और सल्तनत का विघटन होने लगा तथा उत्तर व दक्षिण में स्वतंत्र मजबूत राज्य उभर कर आये। इस प्रकार उसके अंतिम समय तक वि"ाल दिल्ली सल्तनत दिल्ली तक सिमट कर रह गया।

1351ई. में एक विद्रोह को दबाने हेतु थट्टा (सिंध) की यात्रा के द्वौरान वह बीमार पड़ गया और अंततः मार्च 1351 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद उसका चचेरा भाई फिरोज"ाह तुगलक दिल्ली का शासक बना।

- **फिरोजशाह तुगलक (Firoz Shah Tughlaq) (1351–1388 ई.) :–**

फिरोज"ाह तुगलक मुहम्मद तुगलक का चचेरा भाई एवं सिपहसालार रजब का पुत्र था। उसकी माँ 'बीबी जैला' राजपूत सरदार रणमल की पुत्री थी। मुहम्मद बिन तुगलक की थट्टा (सिंध) अभियान के दौरान 1351 ई. में मृत्यु के बाद वहीं थट्टा के नजदीक इसका राज्याभिषेक हुआ। दिल्ली आने पर 1351 ई. में ही फिरोज का पुनः राज्याभिषेक हुआ।

सुल्तान बनते ही इसने साम्राज्य विस्तार की नीति को छोड़कर मात्र साम्राज्य को बचाने रखने के दृष्टिकोण से सैनिक अभियान आरंभ किया।

अपने इस सैनिक अभियान के अंतर्गत इसने 1353–1355 ई. के बीच बंगाल के शासक शम्सुद्दीन इलियास व इसके पुत्र सिंकदर"ाह के खिलाफ दो बार अभियान किया किंतु दोनों बार असफल रहा।

1360 ई. में फिरोज"ाह ने जाजनगर (उड़ीसा) के शासन के विरूद्ध आक्रमण किया और जगन्नाथ मंदिर को नष्ट कर दिया। इस अभियान में उसने काफी धन लूटा किंतु उड़ीसा को सल्तनत में मिलाने में असफल रहा।

1361 ई. में फिरोज"ाह ने कांगड़ा (हिमाचल प्रदे"ा) का सफल अभियान किया। इस अभियान में उसने नगरकोट के शासक को परास्त कर प्रसिद्ध ज्वालामुखी मंदिर को ध्वस्त कर दिया। 1362–1364 ई. के दौरान इसका अंतिम सैनिक अभियान थट्टा (सिंध) के खिलाफ था जो सफल रहा। उसने सिंध को अपने अधीनता स्वीकार करवाई तथा कर देने को मजबूर किया। फिरोज"ाह तुगलक का शासनकाल अमीरों, सेना और उलेमाओं के प्रति तुष्टीकरण की नीति के रूप में जाना जाता है। उसने अपनी सत्ता को उन्हीं प्रदे"ाों में कायम रखने की कोि"ा"ा की जिन पर केन्द्र से नियंत्रण आसानी पूर्वक किया जा सके। इस नीति के तहत उसने दक्षिण भारत और दक्कन पर फिर से अधिकार स्थापित करने का प्रयास नहीं किया।

राजस्व संबंधी सुधारों के अंतर्गत फिरोज ने जनता को राहत देते हुए पहले से चले आ रहे 24 कष्टदायक करों के स्थान पर सिर्फ 4 कर खराज (लगान), खुम्स (युद्ध में लूट का माल), जजिया (गैर मुस्लिमों पर) एवं जकात (मुस्लिम धार्मिक कर) वसूलने का आदे"ा दिया।

खेती के लिए सिंचाई का उचित प्रबंध किया। सबसे अधिक नहरों के निर्माण करने वाला सुल्तान के रूप में भी फिरोज को जाना जाता है। उसने एक नया कर सिंचाई कर भी लगाया जो उपज का 1/10 भाग होता था। इसके काल में लगान उपज का 1/5 भाग से 1/3 भाग होता था। उसने लगभग 1200 फलों के बाग लगवाये। जिससे राज्य को अतिरिक्त आय प्राप्त होती थी। राजपरिवार के उपयोग में आने वाली आव"यक वस्तुओं तथा विलासिता की वस्तुओं के उत्पादन के लिए राज्य के नियंत्रण पर चलने वाले 36 शाही कारखानों की स्थापना करवाई।

नगर एवं सार्वजनिक निर्माण कार्यों के अंतर्गत सुल्तान ने लगभग 300 नये नगरों की स्थापना की जिनमें हिसार, फिरोजाबाद (दिल्ली), फतेहाबाद, जौनपुर, फिरोजपुर आदि प्रमुख है। जौनपुर नगर जो सुल्तान को सबसे अधिक प्रिय था की स्थापना मुहम्मद बिन तुगलक की स्मृति में की थी। इसके शासनकाल में ही अ"ोक के दो स्तंभों को मेरठ एवं टोपरा से लाकर दिल्ली में स्थापित किया गया।

अपने कल्याणकारी कार्यों के अंतर्गत फिरोज ने एक रोजगार का दफ्तर एवं मुस्लिम अनाथ स्त्रियों, विधवाओं एवं लड़कियों की सहायता हेतु एक नये दीवान–ए–खैरात नामक विभाग की स्थापना की थी। इसके काल में दासों की संख्या सर्वाधिक 1,80,000 तक पहुँच गई थी जिनके देखभाल के लिए सुल्तान ने 'दीवान–ए–बंदगान' एक विभाग की अलग से स्थापना की। उसने सैन्य पदों को वं"ानुगत बनाते हुए पुनः जागीर के रूप में वेतन देने की व्यवस्था की जिसका सैनिक व्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा।

इस्लामी नियमों का कड़ाई से पालन करते हुए उलेमा वर्ग को राज्य में महत्व देने वाला फिरोज"ाह कट्टर सुन्नी मुसलमान था। इस्लाम न स्वीकार करने वाले हिन्दुओं को 'जिम्मी' कहा। फिरोज दिल्ली सल्तनत का प्रथम सुल्तान था जिसने ब्राह्मणों से भी जजिया कर लिया। वह पहला शासक था जिसने राज्य की खर्च पर हज की व्यवस्था की थी।

ि"ाक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु अनेक मकतबों एवं मदरसों का निर्माण करवाया तथा अपने राज्य में विद्वानों को सरंक्षण प्रदान किया। उसने जियाउद्दीन बरनी एवं शम्स–ए–सिराज अफीफ को अपना संरक्षण प्रदान किया। बरनी ने 'फतवा–ए–जहाँदारी' एवं 'तारीख–ए–फिरोज"ाही' की रचना की।

फिरोज"ाह ने अपनी आत्मकथा फुतूहात–ए–फिरोज"ाही' नाम से लिखी थी। फिरोज ने ज्वालामुखी मंदिर के पुस्तकालय से लूटे गये 1300 ग्रंथों में से कुछ का फारसी में विद्वान अपाउद्दीन द्वारा 'दलाचले फिरोज"ाही' नाम से अनुवाद कराया जो आयुर्वेद से संबंधित ग्रंथ था।

इसके शासनकाल में तांबे व चाँदी मिश्रित सिक्के चलाये गये जिन्हे 'अद्धा' एवं 'बिरव' कहा जाता था। फिरोज तुगलक ने शसगानी (6जीतल का) नाम से नया सिक्का भी अपने शासनकाल में जारी किया था। 1388 ई. में इसकी मृत्यु हो गई।

- **फिरोजशाह तुगलक के उत्तराधिकारी (Successors of Firoz Shah Tughlaq) (1351–1388 ई.)** :–

फिरोज"ाह तुगलक की 1388 ई. में मृत्यु के बाद यह व"ा जैसे–तैसे 1413–1414 ई. तक चला। इसके बाद के शासक अयोग्य साबित हुए जिनका शासनकाल का निम्न प्रकार रहा –

- गयासुद्दीन तुगलक द्वितीय (तुगलक"ाह) – (1388–1389 ई.)
- अबूबक्र – (फरवरी,1389 से अगस्त, 1390 ई.)
- नासिरूद्दीन मुहम्मद"ाह – (1390–1394 ई.)
- अलाउद्दीन सिकन्दर"ाह (हुमायूँ) – (1394 ई.)
- नासिरूद्दीन महमूद – (1394–1412 ई.)

इस व"ा के अंतिम शासक नासिरूद्दीन महमूद के काल में 1398–1399 ई. में समरकंद के शासक तैमुर लंग का दिल्ली पर आक्रमण हुआ। उसने दिल्ली में खूब लूट–पाट मचायी तथा साम्राज्य को तबाह कर दिया। सुल्तान को दिल्ली छोड़कर भागने के लिए मजबूर कर दिया। 1405 ई. में तैमुर की मृत्यु के बाद वह दिल्ली लौट सका।

नासिरूद्दीन महमूद के समय तक दिल्ली सल्तनत से दक्षिण भारत, बंगाल, खानदे"ा, गुजरात, मालवा, राजस्थान, बुदेलखंड आदि प्रान्त स्वतंत्र हो गये थे।

1412 ई. में नासिरूद्दीन महमूद"ाह की मृत्यु के बाद 1413 ई. में दौलत खाँ एवं खिज्र खाँ के बीच सत्ता को लेकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में खिज्र खाँ ने दौलत खाँ को हराकर दिल्ली पर एक नये राजव"ा सैयद व"ा की स्थापना की।

13.3.4: दिल्ली सल्तनत के कमजोर वंश : सैयद एवं लोदी वंश (Weak dynasty of Delhi Sultanate : Sayyid and Lodhi) :–

तुगलक व"ा के बाद जिन दो राजव"ाों – सैय्यद एवं लोदी ने राज किया ये कमजोर साबित हुये। इस दौरान न तो खिलजी काल की तरह विस्तार के क्षेत्र में कोई कार्य हुआ और न ही तुगलक काल की तरह

कोई प्र"ासनिक सुधार। जैसे–तैसे इन दोनों वं"ों ने दिल्ली पर शासन किया और अंततः 1526 ई. में बाबर ने दिल्ली सल्तनत को समाप्त कर दिया। इस शीर्षक के अंतर्गत हम इन्हीं दोनों वं"ों का अध्ययन करेंगे।

- **सैय्यद वंश (Sayyid dynasty) :–**

सैय्यद वं"ा का संस्थापक खिज्र खाँ था। यह वं"ा 1414 से 1450 ई. तक दिल्ली सल्तनत पर राज किया। इस वं"ा में 37 वर्ष के शासनकाल में कुल चार शासक हुए जिनका वर्णन निम्न प्रकार है –

- **खिज्र खाँ (Khizr Khan) (1414–1421 ई.) :–**

सैय्यद वं"ा का संस्थापक खिज्र खाँ 1414 ई. में दिल्ली की गद्दी पर बैठा। दिल्ली की गद्दी पर बैठते ही उसने अपने आपको सुल्तान की उपाधि के स्थान पर 'रैयत–ए–आला' की उपाधि से ही खु"ा रखा। तैमूर जिस समय भारत से वापस जा रहा था, उसने खिज्र खाँ को मुल्तान, लाहौर एवं दीपालपुर का शासक नियुक्त कर दिया था। अतः खिज्र खाँ अपने को तैमूर के लड़के शाहरूख का प्रतिनिधि मानते हुये उसे नियमित कर भेजा करता था। उसने अपने सिक्कों पर तैमूर तथा उसके पुत्र शाहरूख मिर्जा का नाम अंकित करवाया। इसका शासनकाल क्षेत्रीय राजवं"ों का उदय और चुनौतियों में ही बीत गया। इतिहासकार फरि"ता ने खिज्र खाँ को एक न्यायप्रिय व उदार शासक बताया। सात वर्ष के शासन के बाद 1421 ई. में खिज्र खाँ की मृत्यु हो गई।

- **मुबारक शाह (Mubarak Shah) (1421–1434 ई.) :–**

खिज्र खाँ की मृत्यु के बाद उसका पुत्र मुबारक शाह दिल्ली की गद्दी पर बैठा। उसने '"ाह' की उपाधि ग्रहण कर अपने नाम के सिक्के जारी किये। इसने अपने नाम से खुत्बा पढ़वाया। अपने शासनकाल में मुबारक शाह ने भटिण्डा एवं दोआब में हुए विद्रोह को सफलतापूर्वक दबाया परंतु खोक्खर जाति के नेता जसरथ द्वारा किये गये विद्रोह को दबाने में असफल रहा। अपने पिता की भांति इसे भी राजस्व वसूलने के लिए सैनिक अभियान का सहारा लेना पड़ता था। यमुना नदी के किनारे मुबारकाबाद की स्थापना मुबारक"ाह ने की थी। उसने 'तारीख–ए–मुबारक"ाही' के लेखक 'याहिया बिन अहमद सरहिंदी' को सरंक्षण प्रदान किया। 1434 ई. में 'ाड्यंत्र द्वारा उसके वजीर ने उसकी हत्या कर दी।

- **मुहम्मदशाह (Muhammadshah) (1434–1445 ई.) :–**

मुबारक"ाह की मृत्यु के बाद उसका भतीजा मुहम्मद"ाह के नाम से गद्दी पर बैठा। उसके काल में सत्ता की वास्तविक शक्ति उसके वजीर सरवर–उल–मुल्क के पास ही थी। अपने वजीर सरवर–उल–मुल्क की बढ़ती महत्वाकांक्षा को देखते हुए सुल्तान ने अमीरों की सहायता से उसकी हत्या करवा दी। इसके शासनकाल में मालवा के शासक महमूद द्वारा दिल्ली पर आक्रमण किया गया जिसे सुल्ताने ने मुल्तान के

सुबेदार बहलोल की सहायता से विफल कर दिया। मुहम्मद"ाह ने मालवा की जीत की खु"ी में बहलोल को 'खान–ए–खाना' की उपाधि दी और साथ ही उसे अपना पुत्र कहकर पुकारा। अपने अन्तिम समय में हुए विद्रोह को दबाने में वह असमर्थ रहा। अतः अधिका"ा राज्यों ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर लिया। 1445 ई. में इसकी मृत्यु के साथ ही सैय्यद व"ा पतन की ओर अग्रसर हो गया।

- **अलाउद्दीन आलमशाह (Alauddin AlamShah) (1445–1451 ई.) :–**

मुहम्मद"ाह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र अलाउद्दीन आलम"ाह की उपाधि के साथ दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह आरामपंसद एवं विलासी प्रवृत्ति का था। उसका अपने वजीर हम्मीर खाँ से विवाद होने के कारण वह दिल्ली छोड़कर बदायूँ चला गया और अपनी मृत्यु के समय 1476 तक वहीं रहा। आलम"ाह के चले जाने के बाद सत्ता संघर्ष की स्थिति में बहलोल लोदी को आमंत्रित किया। बहलोल लोदी ने दिल्ली आने के कुछ दिन बाद हमीद खाँ की हत्या कर दिल्ली की सत्ता को अपने कब्जे में कर लिया। इस प्रकार सैय्यद व"ा के अंतिम शासक आलम"ाह के वजीर हमीर खाँ की हत्या के बाद अंततः 1351 ई. में बहलोल लोदी ने एक नवीन व"ा लोदी व"ा की स्थापना की।

- **लोदी वंश (Lodhi Dyanasty) (1451–1526 ई.) :–**

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में सल्तनत युग में दिल्ली की गद्दी पर राज्य करने वाले 5 राजव"ोंं में लोदी व"ा अंतिम था।

दिल्ली सल्तनत पर शासन करने वाले पूर्व के 4 राजव"ा तुर्क थे परन्तु अंतिम लोदी व"ा वाले अफगान थे। इस प्रकार दिल्ली सल्तनत पर प्रथम अफगान व"ा लोदी व"ा की नींव बहलोल लोदी के द्वारा रखी गई इस व"ा के कुल तीन शासक निम्न हुए।

- बहलोल लोदी (1451 – 1489 ई.)
- सिकंदर लोदी (1489 – 1517 ई.)
- इब्राहिम लोदी (1517 – 1526 ई.)

- **बहलोल लोदी (Bahlol Lodhi) (1451–1489 ई.) :–**

बहलोल लोदी दिल्ली में प्रथम अफगान राज्य का संस्थापक था। उसका संबंध अफगानिस्तान के 'गिलजाई कबीले' की महत्वूपर्ण शाखा ' शाहूखेल' से था। 1451 ई. में वह 'बहलोल शाह गाजी' की उपाधि से दिल्ली की गद्दी पर आसीन हुआ। गद्दी पर बैठने के बाद बहलोल लोदी ने सम्भल, कोल, इटावा, रपरी, भोगाँव एवं मेवात पर सफल आक्रमण किया। जौनपुर राज्य को दिल्ली में एक बार फिर शामिल करना उसकी सबसे महत्वपूर्ण सफलता थी। ग्वालियर के मानसिंह के विरूद्ध किया गया अभियान उसका अंतिम अभियान था

जिसमें उसे मानसिंह के द्वारा 80 लाख टंके प्राप्त हुये। इसी अभियान से वापस लोटते समय जलाली के समीप उसकी मृत्यु हो गई। वह अपने सरदारों को मसनद–ए–अली कह कर पुकारता था। वह अपने सरदारों के खड़े रहने पर खुद भी खड़ा रहता था। बहलोल लोदी ने 'बहलोली' सिक्के का प्रचलन करवाया।

- **सिकंदर लोदी (Sikandar Lodhi) (1489–1517 ई.) :–**

बहलोल लोदी की मृत्यु के बाद उसका पुत्र निजाम खाँ 1489 ई. में सुल्तान सिकन्दर शाह की उपाधि से दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह स्वर्णकार हिन्दू माँ की संतान था। गद्दी पर बैठते ही उसने अपनी कु"ालता, कर्मठता व योग्यता का परिचय देते हुए राज्य में फैली अराजकता को दूर करने के लिए वि"ोष प्रयास किए। प्रांतीय शासकों, जमींदारों तथा सरदारों का उसने सख्ती के साथ दमन किया। अपने शासन के दौरान उसने बंगाल के साथ–साथ धौलपुर और चंदेरी की सीमा तक दिल्ली सल्तनत का विस्तार किया। 1504 ई. में उसने आगरा नगर की नींव डाली। सिकंदर लोदी ने कृषि और व्यापार के विकास के लिये प्रयास किये। भूमि माप के लिए उसने एक प्रमाणिक पैमाना 'गजेसिकन्दरी' का प्रचलन करवाया। उसके काल में सभी आव"यक वस्तुओं की कीमत कम कर दी गई।

धार्मिक दृष्टि से सिकंदर लोदी असहिष्णु था। उसने हिन्दू मंदिरों को तोड़कर वहाँ पर मस्जिद का निर्माण करवाया। उसने हिन्दूओं पर पुनः जजिया कर लगा दिया।

मुसलमानों को ताजिया निकालने एवं मुसलमान स्त्रियों के पीर एवं सन्तों के मजार पर जाने पर प्रतिबंध लगा दिया।

इतिहासकार सिकंदर लोदी को लोदी वं"ा का सर्वाधिक सफल शासक मानते हैं। वह विद्या का पोषक था। वह स्वयं फारसी भाषा का जानकार था तथा 'गुलरूरकी' उपनाम से फारसी में कविताएँ लिखता था। उसने संगीत के एक ग्रंथ 'लज्जत–ए–सिकंदर"ाही' की भी रचना की। उसके आदे"ा पर संस्कृत के एक आयुर्वेद ग्रंथ का फारसी में फरहंगे सिकंदरी' के नाम से अनुवाद हुआ। उसने आगरा को अपनी नई राजधानी बनाया। सिकंदर लोदी की मृत्यु 1517 ई. में गले की बीमारी के कारण हुई।

- **इब्राहिम लोदी (Ibrahim Lodhi) (1517–1526 ई.) :–**

सिकंदर लोदी की मृत्यु के बाद अमीरों ने आम सहमति से उसके पुत्र इब्राहिम को 1517 ई. में इब्राहिम शाह की उपाधि से आगरा की गद्दी पर बैठाया। यह दिल्ली के लोदी वं"ा का तीसरा और अंतिम शासक था। अपने शासन के शुरूआती दिनों में उसने 1518 ई. में ग्वालियर को दिल्ली सल्तनत में मिला लिया।

परन्तु 1517–1518 ई. में ही उसका खतोली के युद्ध में मेवाड़ के शासक राणा सांगा से सामना हुआ, जिसमें इसकी हार हुई। इब्राहिम के भाई जलाल खाँ ने स्वार्थी अफगान सरदारों की सहायता से जौनपुर को जीत कर कालपी में जलालुद्दीन नाम से अपना राज्याभिषेक करवाया था। अतः इब्राहिम का अपने भाई जलाल खाँ के साथ उत्तराधिकार को लेकर संघर्ष हुआ और अंततः इब्राहिम ने जलाल खाँ की हत्या करवा दी। अफगान सरदारों के प्रति इब्राहिम लोदी के दमनकारी नीति से असंतुष्ट सरदारों में पंजाब का शासक दौलत खाँ लोदी एवं इब्राहिम लोदी के चाचा आलम खाँ ने काबुल के तैमुर वं"ाी शासक बाबर को भारत पर आक्रमण के लिए निमंत्रण दिया। जिसे बाबर ने स्वीकार कर लिया और अंतः 21 अप्रैल, 1526 ई. को इतिहास प्रसिद्ध पानीपत का प्रथम युद्ध बाबर और इब्राहिम लोदी के मध्य पानीपत के मैदान में लड़ा गया। इसमें इब्राहिम लोदी की बुरी तरह से हार हुई और उसकी हत्या कर दी गई। इसकी मृत्यु के साथ ही दिल्ली सल्तनत समाप्त हो गया और भारत में बाबर ने एक नवीन वं"ा मुगल वं"ा की स्थापना की।

13.4.1 दिल्ली सलतनत का वास्तविक संस्थापक : इल्तुतमिश। (Real Faunder of delhi sultanate : Ilutmish) :-

इल्तुतमि"ा का वास्तविक नाम शम्सउद्दीन था। वह इल्बरी तुर्क था। मुहम्मद गोरी का गुलाम कुतुबद्दीन ऐबक ने उसे गुलाम के रूप में खरीदा था। अतः इसे दास का दास/ गुलाम का गुलाम कहा जाता है। इसकी योग्यता और बुद्धिमता से प्रभावित होकर ऐबक ने अपनी एक पुत्री का विवाह उससे कर दिया तथा उसे बदायुँ का सूबेदार (गर्वनर) नियुक्त कर दिया। ऐबक की मृत्यु के समय वह बदायूँ का ही सूबेदार था। ऐबक की मृत्यु के बाद 1210 ई. में कुछ समय के लिए उसका पुत्र आराम"ाह गद्दी पर बैठा परंतु इल्तुतमि"ा ने अपने पराक्रम व कूटनीति द्वारा दिल्ली के लोगों की सहमति व कुछ सरदारों की सहायता से आराम"ाह को अपदस्त कर सल्तनत का शासक बन गया।

सुल्तान का पद प्राप्त करने के बाद इल्तुतमि"ा को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। अपने साहस, पराक्रम व सफल कूटनीति के द्वारा इसने ना केवल इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त की बल्कि शासन को भी सुव्यवस्थित किया। इसके पहले ऐबक और उसका पुत्र आराम"ाह ने लाहौर को अपनी राजधानी बनाकर शासन किया था। किन्तु इल्तुतमि"ा ने राज्य की राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाया। इस कारण इल्तुतमि"ा को दिल्ली का वास्तविक संस्थापक माना जाता है।

इल्तुतमि"ा द्वारा शासन के समक्ष मौजूद समस्याओं के प्रति उठाये गये कठोर कदमों तथा शासन को व्यवस्थित करने के लिए किय गये कार्यों का वर्णन निम्न प्रकार है।

(i) दिल्ली के अमीरों का दमन (Suppression of Rich of Delhi) :– दिल्ली में कुतुबद्दीन के समय के सरदार 'कुत्बी' तथा गोरी के समय के सरदार 'मुइज्जी' कहलाते थे। इन सरदारों ने इल्तुतमी"ा के सुल्तान पद को मान्यता न देते हुए इसके खिलाफ 'ाड्यंत्र करना प्रारंभ कर दिया। अतः इल्तुतमि"ा ने गद्दी पर बैठते ही सर्वप्रथम इन 'ाड्यंत्रकारी अमीरों का दमन किया और सैनिक जागीरदारों को अपने कब्जे में कर लिया।

(ii) चालीस अमीरों के दल/ चालीस गुट का गठन (Formation/Formed a team of forty of chalisa group rich people) :– इल्तुतमि"ा ने विद्रोही सरदारों/अमीरों पर वि"वास न करते हुए अपने गुलाम 40 सरदारों का एक गुट/ संगठन बनाया जिसे तुर्कान–ए–चिहालगानी या चालीसा गुट का नाम दिया गया। इस संगठन को 'चरगान' के नाम से भी जानते है। इसमें योग्य, प्रतिभा"ाली और वि"वसनीय सरदारों को शामिल किया गया तथा इन्हें राजत्व का एक अंग बना लिया।

(iii) यल्दोज का दमन (Suppression of Yaldauj) :– इल्तुतमि"ा का मुख्य प्रतिद्वंद्वी यल्दोज मुहम्मद गोरी के प्रसिद्ध सेनापतियों में से एक था और उसकी मृत्यु के प"चात् गजनी का शासक बन बैठा था। इल्तुतमि"ा ने अपने इस प्रतिद्वंद्वी को 1215 ई. में तराईन के मैदान में युद्ध कर उसे बंदी बना लिया और बाद में उसकी हत्या कर दी।

(iv) कुबाचा का दमन (Suppression of Kubacha) :– नासिरूद्दीन कुबाचा, जो कुतुबद्दीन ऐबक का बहनोई था उसने मुल्तान तथा उच्च में अपना स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर लिया था। इल्तुतमि"ा ने यल्दौज का दमन करने के प"चात् अपने इस शत्रु को दबाने के लिए 1217 ई. में एक वि"ाल सेना सहित उस पर आक्रमण कर दिया और उसे पराजित करके अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विव"ा कर दिया।

(v) बंगाल के विद्रोहियों का दमन (Suppression of Bengal Rebels) :– 1225 ई. में इल्तुतमि"ा ने बंगाल के स्वतंत्र शासक हुसामुद्दीन इवाज के विरूद्ध सफल अभियान किया और इसे अपनी अधीनता स्वीकार करने को विव"ा किया। इल्तुतमि"ा के दिल्ली वापस लौटते ही इवाज ने पुनः विद्रोह कर दिया। इस बार विद्रोह को दबाने के लिए इल्तुतमि"ा के पुत्र नासिरूद्दीन महसूद (अवध का शासक) ने 1226 ई. में उसे पराजित कर बंगाल को सल्तनत में मिला लिया।

(vi) राजपूतों के प्रदेशों की विजय (Conquest of territories of Rajputs) :– राज्य के शत्रुओं की समाप्ति के बाद इल्तुतमि"ा ने राजपूतों के प्रदे"ाों पर विजय प्राप्त करने का नि"चय किया। राजपूतों के प्रदे"ाों की विजय अभियान के क्रम में इल्तुतमि"ा ने 1226 ई. में रणथंभौर पर तथा 1227 ई. में

परमारों की राजधानी मन्दौर पर अधिकार कर लिया। 1231 ई. में उसने ग्वालियर के किले पर घेरा डालकर वहाँ के शासक मंगलदेव को पराजित किया। 1233 ई. में चंदेलों के विरूद्ध एवं 1234–1235 ई. में उज्जैन एवं भिलसा के विरूद्ध उसका अभियान सफल रहा।

(vii) मंगोल आक्रमणों से साम्राज्य की रक्षा (Protecting the empire from Mongol Invasions) :– इल्तुतमि"ा ने अपनी कूटनीति के द्वारा मंगोल नेता चंगेज खाँ के शत्रु जलालजुद्दीन मांगबर्नी को अपने राज्य में शरण न देकर मंगोल आक्रमण की समस्या से साम्राज्य की रक्षा करने में सफल रहा।

(viii) खलीफा का प्रमाण पत्र (Proof of Khalifa) :– 1229 ई. में इल्तुतमि"ा को बगदाद के खलीफा से खिलअत (सम्मान सूचक वस्त्र) एवं प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ। प्रमाण पत्र प्राप्त होने के बाद इल्तुतमि"ा वैध सुल्तान एवं दिल्ली सल्तनत एक वैध राज्य बन गया। इससे इल्तुतमि"ा की शक्ति में वृद्धि हुई तथा सुल्तान के पद को व"ाानुगत रूप देने व अपनी संतानों के अधिकार को सुरक्षित करने में सहायता मिली।

(ix) नवीन तथा उत्तम सिक्के का प्रचलन (Circulation of new and excellent coins) :– दिल्ली सल्तनत की कु"ाल मुद्रा प्रणाली स्थापित करने में इल्तुतमि"ा का महत्वपूर्ण योगदान है। उसने तांबे की जीतल तथा चांदी का टंका चलाया। ये दोनों सिक्के आगे के सभी सुल्तानों के काल में जारी रहे। वह पहला तुर्क सुल्तान था जिससे शुद्ध अरबी सिक्के चलवाये। उसने ही सबसे पहले सिक्कों पर टकसाल के नगर के नाम अंकित करवाये। इसके अतिरिक्त सिक्कों पर अरबी भाषा में सुल्तान का नाम व खलीफा का नाम भी अंकित करवाया।

(x) इक्ता व्यवस्था का प्रचलन (Circulation of Ekta) :– इल्तुतमि"ा ने अपने शासन काल में इक्ता व्यवस्था का प्रचलन आरंभ किया। इक्ता प्रथा के अंतर्गत सैनिकों, राज्य अधिकारियों को वेतन के बदले भूमि दी जाती थी। इस प्रथा को उसने 1226 ई. में शुरू किया था। इक्ता व्यवस्था की शुरूआत भारत से बाहर फारस (ईरान) क्षेत्र तथा प"िचम ए"ाया में हो चुकी थी।

(xi) कला तथा साहित्य का संरक्षण (Protection of art and literature) :– इल्तुतमि"ा ने अपने शासनकाल में कला तथा साहित्य का भी संरक्षण किया। उसने कुतुबुद्दीन द्वारा आरंभ किये गये कुतुबमीनार के निर्माण कार्य को पूरा किया। सुलतानगढ़ी का मकबरा (दिल्ली) भारत में किसी तुर्क शासकों द्वारा निर्मित पहला मकबरा बनवाने का श्रेय इल्तुतमि"ा को ही जाता है। उसे विद्वानों का आदर करने वाला

सुल्तान के रूप में भी जाना जाता है। उसने मध्य एशिया से मंगोलों के भय से भाग निकले बहुत विद्वानों, सन्तों निर्धन लोगों को उदारतापूर्वक अपने राज्य में सरंक्षण दिया व सुविधा प्रदान की।

'तबकात–ए–नासिरी' के रचनाकार प्रसिद्ध इतिहासकार मिनहाज–उस–सिराज इसके दरबार को सुशोभित करते थे। इस पुस्तक से हमें आरंभिक मध्यकालीन इतिहास का ज्ञान होता है।

उपरोक्त विवरणों से यह स्पष्ट होता है कि डॉ. आर. पी. त्रिपाठी ने ठीक ही कहा कि – ''भारत में स्वतंत्र मुस्लिम साम्राज्य का इतिहास वास्तविक रूप से इल्तुतमिश से ही आरंभ होता है।'' उससे पहले कई मुस्लिम शासकों ने भारत पर सफल आक्रमण किये परन्तु किसी न किसी कारण से उनमें से किसी को भी मुस्लिम साम्राज्य स्थापित करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका। प्रथम मुस्लिम आक्रमणकारी अरबी मुहम्मद बिन कासिम तो केवल सिन्ध तथा मुल्तान तक ही सिमट कर रह गया था। जबकि 17 बार सफल आक्रमण करने वाला महमूद गजनवी अपने उद्देश्य धन के लूट–पाट व इस्लाम का प्रचार तक ही अपने आपको सीमित रखा। मुहम्मद गौरी पहला मुस्लिम आक्रमणकारी था जिसने लगभग समस्त उत्तर भारत को विजित किया परंतु सत्ता स्थापित करने का सौभाग्य उसे प्राप्त नहीं हो सका। उसने अपने विजित प्रदेश को अपने गुलाम कुतुबद्दीन ऐबक को सौंप दिया। उसके बाद कुतुबद्दीन ऐबक और कुछ समय के लिए शासक बना आरामशाह लाहौर को राजधानी बनाकर दिल्ली सल्तनत के नाम से शासन किया। वास्तव में अपने विद्रोहियों को दमन कर एक सुव्यवस्थित शासन प्रणाली के तहत राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाकर दिल्ली सल्तनत का राज्य विस्तार करने वाला स्वतंत्र शासक इल्तुतमिश ही था।

13.4.2. प्रसिद्ध शासक बलवन और उसकी उपलब्धियां (Famous Ruler Balban and his achivements) :-

गयासुद्दीन बलबन इल्बरी तुर्क था। बचपन में मंगोलों ने उसे पकड़कर गुलाम के रूप में बेच दिया था। ख्वाजा जमालुद्दीन वसरी नाम का एक व्यक्ति ने उसे गुलाम के रूप में खरीद कर 1232–1233 ई. में दिल्ली लाया था। ख्वाजा जमालुद्दीन से बलबन को गुलाम के रूप में इल्तुतमिश ने ग्वालियर विजय के दौरान खरीदा था। उसकी योग्यता क्षमता से प्रभावित होकर इल्तुतमिश ने उसे अपने 40 तुर्की सरदारों का गुट 'चालीसा गुट' का सदस्य बनाया। वह समस्त तुर्की सरदारों में सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त सरदार बन गया। वह अपने शौर्य, पराक्रम व कूटनीति के द्वारा रजिया के समय से अमीर–ए–शिकार, बहरामशाह के समय में अमीर–ए–आखूर, मसूदशाह के समय में अमीर–ए–हाजिब एवं सुल्तान नासिरूद्दीन के समय में प्रधानमंत्री के रूप में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति का केन्द्र बन गया। नासिरूद्दीन के काल में राज्य की समस्त शक्तियाँ व्यावहारिक रूप में बलबन के हाथ में आ गई और सुल्तान केवल नाम मात्र का रह गया। नासिरूद्दीन के शासनकाल में बलबन ने कई

सफल अभियान चलाये। उसने 1246 ई. में पंजाब के खोखरों का दमन किया। उसके बाद उसने दोआब के हिन्दू शासकों को अपनी अधीनता स्वीकार करने को मजबूर किया और दिल्ली से कालिंजर तक राज"ाक्ति को पुनः स्थापित किया। उसने ग्वालियर, मेवात, रणथम्भौर, चन्देरी तथा मालवा के खिलाफ सफलतापूर्वक अभियान चलाकर वि"ाल धनरा"ि के साथ 1252 ई. दिल्ली लौटा। इससे उसका महत्व और अधिक बढ़ गया। अपनी शक्ति को और भी अधिक बढ़ाने के लिए बलबन ने कूटनीति के द्वारा सुल्तान की बहन से स्वयं विवाह किया तथा अपनी पुत्री का सुल्तान से विवाह करवाया। इसके बाद उसने 1255 ई. में अवध के शासक कुतलुग खाँ को हराया तथा मेवों के विरूद्ध अभियान में 12,000 मेवों को मौत के घाट उतार दिया। उसने अपने पराक्रम तथा कूटनीति के द्वारा नासिरूद्दीन के काल में मंगोलों का सफलतापूर्वक विरोध किया तथा राज्य को इनसे सुरक्षित किया। अंततः 1266 ई. में नासिरूद्दीन की मृत्यु के बाद बलबन दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह 1266 ई. से लेकर 1286 ई. तक राज किया। अपने शासनकाल के 20 वर्षों में उसने राज्य के विस्तार तथा सुदृढ़ीकरण के लिए ऐसे महान कार्य किये जो इससे पूर्व दास व"ा के किसी अन्य शासकों ने नहीं किये। इसलिये उसे दास/गुलाम व"ा का सबसे महान् सुल्तान माना जाता है। अपने शासनकाल के दौरान उसके द्वारा उठाये गये कदम निम्नलिखित है –

(i) चालीसा गुट की समाप्ति (Ending of chalisa group) :- सल्तनत के अलग–अलग सुल्तानों के काल में शासन के महत्वपूर्ण पदों पर रहते हुए बलबन ने तुर्क सरदारों/अमीरों के 'ाड्यंत्र को देख चुका था। अतः सुल्तान बनते ही उसने इनके प्रभाव को कम करने तथा इन्हें कमजोर करने के लिए इल्तुतमि"ा के काल के 40 तुर्की सरदारों के दल को समाप्त कर दिया।

(ii) रक्त एवं लौह की नीति (Blood and Iron policy) :- बलबन ने अपने विद्रोहियों को समाप्त करने के लिए जो कठोर नीति अपनाई उसे रक्त एवं लौह की नीति के नाम से जाना जाता है। इस नीति के तहत उसने असाधारण साहस तथा उत्साह से शत्रुओं का दमन किया और राज्य में आगे कोई विद्रोह का साहस नहीं कर सके को ध्यान में रखते हुए उनका वध करके सफाया कर दिया जाता था। उसने उपद्रवी मेवों, दोआब के डाकुओं, कटेहर तथा बंगाल के विद्रोहियों से निपटने के लिये सफलतापूर्वक इस नीति को अपनाया। इसके फलस्वरूप बलबन ने साम्राज्य को आंतरिक तथा बाहरी दोनों खतरों से सुरक्षित करते हुए सुदृढ़ तथा शक्ति"ाली बनाने का कार्य किया।

(iii) सेना का संगठन (Military organisation) :- आंतरिक तथा बाह्य दोनों दृष्टियों से वि"ाल साम्राज्य को सुव्यवस्थित करने के लिए बलबन ने 'दीवान–ए–अर्ज' नाम से एक अलग सैन्य विभाग का गठन किया था। सेना में भर्ती के लिए योग्यता को महत्व दिया। उसने अयोग्य एवं वृद्ध सैनिकों को पें"ान देकर मुक्त करने की

योजना चलाई। सैनिकों को नकद वेतन देना आरंभ किया। बलबन ने दीवान–ए–अर्ज पद पर इमादुलमुल्क को प्रतिष्ठित किया तथा सीमान्त क्षेत्र में स्थित किलों का पुननिर्माण करवाया।

(iv) मंगोल एवं सीमान्त सम्बन्धी नीति (Policy related to Mangols Frontier) :- पि"चमोत्तर सीमा प्रान्त पर मंगोल आक्रमण से राज्य को सुरक्षित करने के लिए बलबन ने एक सुनि"चत योजना का क्रियान्वयन किया। इस नीति के अंतर्गत मुलतान, सामाना व दीपालपुर आदि प्रदे"ाों को सीमांत प्रांत घोषित किया गया। इन प्रदे"ाों में पुराने किलों की मरम्मत नये, किलों का निर्माण तथा योग्य सैनिकों के नेतृत्व में सैनिक चौकियां स्थापित करने का अभियान चलाया गया। सीमांत प्रांत के शासन को सुदृढ़ करने के लिये सुल्तान ने अपने वीर तथा योग्य सम्बन्धियों को नियुक्त किया। सेना में और अधिक सुधार करते हुए सैनिकों के प्रि"ाक्षण की व्यवस्था की गयी। बहुत अधिक संख्या में शस्त्र बनवाये गये। इस प्रकार मंगोलों का सफलतापूर्वक विरोध करने के लिए एक नीति के तहत शक्ति"ाली सेना का निर्माण किया गया।

(v) मंगोलों के आक्रमण (Invasion Mangols) :- मंगोलों के आक्रमण से राज्य को सुरक्षित करने के लिए बलबन ने सीमान्त नीति के तहत एक वि"ाल प्रि"ाक्षित सेना की व्यवस्था की थी। यही कारण है कि 1279 ई. में जब मंगोलों ने भारत पर आक्रमण करने का साहस किया तो उन्हें बुरी तरह परास्त करके भगा दिया गया। इसके बाद 1285 ई. में पुनः मंगोलों का आक्रमण हुआ। उस समय सीमा प्रान्त का शासक बलबन का पुत्र मुहम्मद था। मुहम्मद के नेतृत्व में सेना ने डटकर सामना किया, परन्तु इस युद्ध में उसका पुत्र मारा गया। मंगोल आक्रमण ने बलबन की राज्य नीति को कई तरह से प्रभावित किया। मंगोलों के आक्रमण के कारण बलबन को दूर–दूर के प्रदे"ाों को विजय करने का विचार छोड़ना पड़ा। इसके लिए उसे राज्य के आय का बहुत बड़ा हिस्सा सेना निर्माण पर खर्च करना पड़ा जिसे प्रजा–हित प्रभावित हुआ। इसके अतिरिक्त उत्तर–पि"चम में मंगोलों के साथ उलझे रहने के कारण सुदूर पूर्व में विद्रोह बढ़ गये और अंततः मंगोल आक्रमण में सुल्तान को अपना पुत्र खोना पड़ा जो उसके स्वयं के लिए प्राण घातक साबित हुआ।

(vi) राजत्व–सिद्धान्त (The theory of goverenance) :- राजत्व से अभिप्राय उन सिद्धान्तों नीतियों एवं कार्यों से है जिन्हें सुल्तान अपनी प्रभुसत्ता, अधिकार एवं शक्ति को स्पष्ट करने के लिए अपनाता था। बलबन दिल्ली सल्तनत का पहला और एकमात्र सुल्तान था जिसने राजत्व के संबंध में स्पष्ट विचार रखे। बलबन के राजत्व सिद्धान्त के महत्वपूर्ण तत्व थे – राजवं"ाज अर्थात् राजा को राजवं"ा से संबंधित होना चाहिए। राजत्व को दैवी संस्था मानते हुए बलबन ने कहा कि राजा पृथ्वी पर ई"वर का प्रतिनिधि (नियाबते खुदाई) होता है। अतः उसका स्थान कैवल पैगम्बर के प"चात् है। राजा का न्याय ही अंतिम न्याय है। उसके द्वारा किया गया कार्य न्याय संगत होता है। उसने अपने शासनकाल में उच्च कुल एवं निम्न कुल के व्यक्तियों के बीच अंतर

स्थापित करने को महत्व दिया। बलबन ने अपने इस सिद्धान्त के तहत् भव्य दरबार एवं दिखावटी मान मर्यादा को महत्व देते हुए अपने दरबार में फारसी (ईरानी) रीति–रिवाज को स्थापित किया। 'सिजदा' (घुटने पर बैठकर सम्राट के सामने सिर झुकाना) एवं पाबोस (पाँव को चूमना) की प्रथा शुरू की। उसने ईरानी त्यौहार नौरोज को मनाना प्रारंभ किया। बलबन ने ई"वर, शासक तथा जनता के बीच त्रिपक्षीय संबंधों को राजत्व का आधार बनाना चाहा। उसने राजा द्वारा निष्पक्ष एवं कठोर न्याय किये जाने को महत्व दिया और साथ ही शासन में कुरान के नियमों को स्थान दिया। उसने खलीफा के महत्व को स्वीकार करते हुए अपने द्वारा जारी किये गये सिक्कों पर खलीफा के नाम से अंकित कराया तथा उसके नाम से खुतबे पढ़ें।

(vii) गुप्तचर विभाग का संगठन (Intelligence Department organisation) :- बलबन ने अपने शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए 'बरीद–ए–मुमालिक' नाम से गुप्तचर विभाग का गठन किया था। इस विभाग के अधिकारी को बरीद कहा जाता था। इन्हें नकद वेतन दिया जाता था तथा वे सीधे सुल्तान के नियंत्रण में होते थे। गुप्तचरों द्वारा सुल्तान को राज्य संबंधी महत्वपूर्ण सूचनायें प्राप्त होती थीं।

(viii) न्याय व्यवस्था (Judiciary system) :- बलबन की न्याय व्यवस्था कठोर तथा गैर–पक्षपातपूर्ण थी। न्याय का केन्द्र बिंदु सुल्तान होता था। सुल्तान का न्याय अंतिम न्याय होता था। अपराधियों को वह बर्बरतापूर्वक दंड देता था।

(ix) उलेमा को रणनीति से पृथक करना (To separate the Ulama from Strategy) :- बलबन से पूर्व उलेमा का शासन–प्र"ासन में बहुत महत्व था। बलबन ने अपनी रणनीति के द्वारा उलेमा के हस्तक्षेप पर रोक लगा दी। बलबन ने उससे सलाह लेना बंद कर दिया।

(x) विद्वानों का संरक्षक (Scholar Mentor) :- उसने अपने राजदरबार में अनेक विद्वानों, कलाकारों एवं साहित्यकारों को संरक्षण प्रदान किया। फारसी के प्रसिद्ध कवि 'तूतीये हिन्द' अमीर खुसरों उसके समय का सबसे प्रसिद्ध विद्वान था। अमीर खुसरों के साथ–साथ फारसी में एक अन्य विद्वान अमीर हसन को भी उसके काल में संरक्षण प्राप्त था। इनके अतिरिक्त ज्योतिषी एवं चिकित्सक मौलाना हमीदुद्दीन मुतरिज, प्रसिद्ध मौलाना बदरूद्दीन एवं मौलाना हिसानुद्दीन भी उसके दरबार में रहते थे।

निष्कर्षत : बलबन एक महान योद्धा, शासक तथा राजनीतिज्ञ था जिसने विकसित हो रहे मुस्लिम साम्राज्य को भयानक समय में नष्ट होने से बचाया और इसकी नींव को मजबूत किया जिसके ऊपर आगे के वं"ों व शासकों ने वि"ाल साम्राज्य खड़ा किया। अतः मध्यकालीन भारतीय इतिहास में उसे गुलाम वं"ा का सबसे महान सुल्तान माना जाता है।

13.4.3. अलाउद्दीन खिलजी के प्रशासनिक एवं आर्थिक सुधार (Administrative and economic reform of Ala-ud-din Khilji) :- अलाउद्दीन खिलजी ने दिल्ली सल्तनत का विस्तार उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक किया। इस वि"ाल साम्राज्य को चलाने के लिए उसने आव"यकतानरूप प्र"ाासनिक एवं आर्थिक सुधार किये। अलाउद्दीन खिलजी मध्यकालीन भारतीय इतिहास में एक प्र"ाासक के रूप में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

डॉ. के. एस. लाल के अनुसार, '' अलाउद्दीन एक प्र"ाासकीय प्रयोगकर्त्ता था, उसने नवीन विचारों को जन्म दिया और नवीन भूमि पर उन्हें रोपा।''

उसके प्रशासनिक सुधारों का वर्णन निम्न प्रकार है –

(i) शासन का केंद्रीकरण (Centralisation of Governance) : - अलाउद्दीन खिलजी ने वि"ाल दिल्ली साम्राज्य को उचित प्र"ाासन देने के लिए शासन में उलेमा वर्ग की उपेक्षा करते हुए धर्म पर राज्य का नियंत्रण स्थापित किया। उसने अपने आपको 'यामिन–उल–खिलाफत नासिरी अमीर–उल मुमनिन कहा। वह निरंकु"ाता में वि"वास करता था। उसने अपने विरोधियों का निर्ममतापूर्वक दमन करके सारी सत्ता का अधिकार अपने पास कर लिया था। उसने शक्ति"ाली अमीरों/सरदारों का दमन करके उन्हे अपनी इच्छानुसार चलाया व शासन में साधारण लोगों को उच्च पदों पर नियुक्त किया। उसने अमीरों की भूमि जब्त कर ली और उनके सार्वजनिक समारोहों में मिलने–जुलने पर प्रतिबंध लगा दिया ताकि वे कोई 'ाड्यंत्र न रच सके।

(ii) मंत्रिपरिषद (Council of Ministers) : - सुल्तान ने शासन चलाने के दृष्टिकोण से अपनी सहायता के लिए एक मंत्रिपरिषद नियुक्त की, किन्तु उन्हें केवल सुल्तान की आज्ञा का पालन करना पड़ता था। अलाउद्दीन के मंत्रिपरिषद में 4 महत्वपूर्ण मंत्री थे जिनके ऊपर प्र"ाासन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी होती थी। ये मंत्री एवं संबधित विभाग निम्न थे –

1. **दीवान–ए–वजारत** :– **यह** सबसे महत्वपूर्ण विभाग था। इस विभाग के मुख्यमंत्री को वजीर कहा जाता है। वह सुल्तान का प्रधानमंत्री होता था। वित्त के अतिरिक्त उसे सैनिक अभियान के समय शाही सेनाओं को नेतृत्व भी करना पड़ता था। अलाउद्दीन के शासन काल में ख्वाजा खातिर, ताजुद्दीन काफूर, नुसरत खाँ आदि वजीर के पद पर नियुक्त किये गये थे।
2. **दीवान–ए–अर्ज या आरिज** :– यह सैन्य विभाग था। इस विभाग का मंत्री आरिज–ए–मुमालिक युद्धमंत्री व सैन्यमंत्री होता था। प्र"ाासन में वजीर के बाद दूसरा महत्वपूर्ण स्थान इसी मंत्री का होता

था। इसके मुख्य कार्य सैनिकों की भर्ती करना, उन्हें वेतन बांटना, सेना की दक्षता एवं साज–सज्जा की देखभाल करना, युद्ध के समय सेनापति के साथ युद्धक्षेत्र में जाना आदि था।

3. **दीवाना–ए–इंशा** :– अलाउद्दीन खिलजी के काल में यह तीसरा महत्वपूर्ण मंत्रालय होता था जिसके प्रधान को बरीद–ए–मुमालिक कहते थे। उसका महत्वपूर्ण कार्य शाही उद्घोषनाओं एवं पत्रों का प्रारूप तैयार करना तथा प्रांतपतियों एवं स्थानीय अधिकारियों से पत्र व्यवहार करना होता था। इसका सहायक सचिव ' दबीर' कहलाता था। दबीर के प्रमुख को 'दबीर–ए–मुमलिकात' कहते थे।
4. **दीवान–ए–रसालत** :– यह विदे"ाी कार्यों का मंत्री होता था। पड़ोसी राज्यों से संबंध स्थापित रखना, उन राज्यों में राजदूत भेजना तथा उनके राजदूतों को स्वीकार करना इनके मुख्य कार्य थे।

इन मुख्य मंत्रियों के अतिरिक्त शासन चलाने के लिए अलाउद्दीन खिलजी ने आर्थिक मामलों से सम्बन्धित नये विभाग 'दीवान–ए–रियासत' की स्थापना की थी। राजमहल के कार्यों की देख–रेख करने वाला मुख्य अधिकारी वकील–ए–दर होता था। सुल्तान के अंगरक्षकों के मुखिया को 'जांदार' कहा जाता था।

'अमीर–ए–आखूर' – अ"व"ाला का अध्यक्ष होता था।

'"ाहना–ए–पील' – इस्ति"ाला का अध्यक्ष होता था।

'अमीर–ए–ि"ाकार' – सुल्तान के लिये ि"ाकार की व्यवस्था करने वाला होता था।

(iii) न्याय प्रशासन (Judicial Administration) : - न्याय की सर्वोच्च शक्ति सुल्तान में निहित थी। सुलतान का न्याय ही अंतिम न्याय होता था। सुल्तान के बाद 'सद्र–ए–जहाँ' या काजी–उल–कुजात होता था। इसके नीचे नायब काजी या अदल कार्य करता था जिनकी सहायता के लिए मुफ्ती होते थे। 'अमीर–ए–दाद' नाम का अधिकारी दरबार में ऐसे प्रभाव"ाली व्यक्ति को प्रस्तुत करता था जिस पर काजियों का नियंत्रण नहीं होता था।

(iv) पुलिस एवं गुप्तचर (Police and Detective) : - अलाउद्दीन खिलजी के काल में पुलिस एवं गुप्तचर विभाग प्रभावी तरीके से कार्य करते थे। पुलिस विभाग का प्रमुख अधिकारी 'कोतवाल' होता था। पुलिस विभाग को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए एक नये पद 'दीवान–ए–रियासत' का गठन किया जो व्यापारी वर्ग पर नियंत्रण रखता था। '"ाहना' व दंडाधिकारी भी पुलिस विभाग से संबंधित अधिकारी थे। जन–सामान्य के आधार की रक्षा एवं देखभाल के लिए नियुक्त अधिकारी – 'मुहतसिव' होता था।

इस काल में गुप्तचर विभाग का प्रमुख अधिकारी – 'बरीद' अर्थात् संदे"ावाहक कार्य करते थे। बरीद के अतिरिक्त अन्य सूचदाता को 'मुन्ही' कहा जाता था।

(v) सैनिक प्रबन्ध (Military Management) : - अलाउद्दीन खिलजी ने वि"ाल साम्राज्य के समक्ष आंतरिक विद्रोहों एवं बाह्य आक्रमणों जैसे चुनौतियों का सामना करने तथा राज्य विस्तार हेतु सुव्यवस्थित स्थायी सेना का गठन किया था। दिल्ली सल्तनत में स्थायी सेना को गठित करने वाला वह पहला सुल्तान था। उसने घोड़ों को दागने एवं सैनिकों के हुलिया लिखे जाने की प्रथा को भी आरंभ किया। उसने सैनिकों को वेतन के रूप में जागीर देने की प्रथा को समाप्त करके उसके स्थान पर नकद वेतन देने की प्रथा को प्रारंभ किया। अलाउद्दीन खिलजी का सेना आकार में भी वि"ाल था। अमीर खु"ारों के अनुसार 'तुमन' दस हजार सैनिकों की टुकड़ी को कहा जाता था। उसकी सेना में घुड़सवार, पैदल सैनिक एवं हाथी सैनिक थे। इनमें घुड़सवार सैनिक सबसे अधिक महत्वपूर्ण थे। इतिहासकार फरि"ता अपने विवरण में उसके 4 लाख 75 हजार सुसज्जित एवं वर्दीधारी सैनिक का वर्णन करता है। पूर्णतया जांच–परख कर योग्यता के आधार पर भर्ती किये जाने वाले सैनिक को मुर्रत्तब कहा जाता था। एक घोड़े वाले सैनिक 'एक अस्पा' तथा दो घोड़े वाले सैनिक को 'दो अस्पा' के नाम से जानते थे। एक अस्पा सैनिक को 234 टंका वेतन जबकि दो अस्पा सैनिक को प्रतिवर्ष 378 टंका वेतन के रूप में मिलता था।

(vi) डाक पद्धति (Post System) : - अलाउद्दीन के प्र"ासन व्यवस्था में उसका डाक पद्धति प्रभावी व सुव्यवस्थित तथा तीव्रगामी था। उसने डाक चौकियों पर कु"ाल घुड़सवारों एवं लिपिकों को नियुक्त कर रखा था, जो राज्य भर का समाचार शीघ्रतापूर्वक पहुँचाते थे।

(vii) प्रांतीय प्रशासन (State Administration) : - इतिहासकार बरनी अलाउद्दीन के साम्राज्य में 11 प्रांतों का वर्णन करता है। प्रांत के मुख्य शासक को प्रांतपति कहा जाता था। प्रांतपति एक प्रकार का लघु सुल्तान था जिसका अधिकार केन्द्र के अंर्तगत एक प्रांत तक सीमित होता था। मध्यकालीन भारतीय इतिहासकार प्रांतपति के लिए बली/मुक्ता शब्द का प्रयोग बताते है जो 'अक्ता' (जागीर) का अधिकारी होता था।

आर्थिक सुधार (Economic Reform) : -

साम्राज्य विस्तार की महत्वाकांक्षा एवं निरंतर हो रहे मंगोल आक्रमण से राज्य की रक्षा हेतु वि"ाल सेना की आव"यकता ने अलाउद्दीन को आर्थिक सुधार के लिए प्रेरित किया। उसने सैनिक व्यय व शासन

के अन्य खर्चों के लिए नवीन आर्थिक नीति का निर्माण किया। अलाउद्दीन खिलजी की आर्थिक सुधारों के विषय में व्यापक जानकारी के स्त्रोत है –

जियाउद्दीन बरनी कृत 'तारीखे–फिरोज"ाही', अमीर खु"ारो कृत 'खजाइनुल फतूह', इब्नबतूता कृत 'रेहला' एवं इसामी कृत 'फुतूहस्सलातीन' आदि। इन विवरणों के आधार पर उसके आर्थिक सुधार निम्न प्रकार है –

(i) व्यक्तिगत संपत्ति तथा जागीरों की जब्ती (Seizure of personal property and estates): -

अलाउद्दीन खिलजी ने सुल्तान बनते ही पहले से प्रचलित जागीर प्रथा को समाप्त कर दिया। उसने अमीरों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए कठोर कदम उठाये जिसके तहत उनको जागीर के रूप में दी गयी भूमि को जब्त कर लिया जिससे राज्य के राजस्व में भी वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त उसने उन सभी व्यक्तियों से भूमि छीन ली जो उन्हें राज्य की ओर से 'मिल्क' तथा 'वक्फ' के रूप में मिली थी। 'मिल्क' वह भूमि या संपत्ति थी जो राज्य अपने व्यक्ति को इनाम, पें"ान या इदराद के रूप में देती थी। जबकि 'वक्फ' धर्म कार्य के लिए दी गयी भूमि को कहते थे। इससे खालसा भूमि (सरकारी भूमि) का अतिरिक्त विस्तार हुआ।

(ii) हिन्दू पदाधिकारियों के विशेषधिकारों की समाप्ति (Abolition of special rights of Hindu officials) : - पूर्व व्यवस्था के अनुसार मुकद्दम, खुत तथा चौधरी जो हिन्दू थे कर वसूली का कार्य करते थे उन्हें वि"ोषाधिकार के तहत कर की छूट थी जिसे अलाउद्दीन ने समाप्त कर दिया। अन्य सामान्य नागरिकों के समान उन्हें भी कर देना पड़ता था। इससे राज्य की आय में वृद्धि हुई।

(iii) भूमि की माप (Measurement of Land) :-

भूमि की माप अलाउद्दीन खिलजी की सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक सुधार है। इसके आधार पर भूमि की गुणवत्ता का पता लगाकर कर व्यवस्था की जानी थी। भूमि मापन को 'मसाहत' कहते थे। इसके लिए उसने 'दीवान–ए–मुस्तखराज' विभाग बनाये तथा उसमें योग्य एवं ईमानदार अधिकारी नियुक्त किये गये।

(iv) कठोर कर नीति (Rigid Tax Policy) :-

अलाउद्दीन खिलजी के काल में करों में अत्यधिक वृद्धि कर दी गई तथा इसे कठोरतापूर्वक वसूला भी गया। इसने पैदावार का 50 प्रति"ात भूमिकर के रूप में वसूला जिसे 'खराज' कहते थे। अलाउद्दीन प्रथम सुल्तान था जिसने भूमि की पैमाइ"ा कराकर (मसाहत) उसकी वास्तविक आय पर अन्न के रूप में

कर वसूलने की व्यवस्था की थी। अलाउद्दीन के काल में दुधारू प"ुओं पर 'चराई कर' तथा घरों एवं झोपड़ी पर 'घरी कर' लगाये गये थे। 'जजिया' कर गैर मुस्लिमों से लिया जाता था। लूट के माल पर खुम्स नाम का कर लगाया जाता था जिसका 1/5 भाग सेना को तथा 4/5 भाग राज्य का होता था। 'जकात' केवल मुसलमानों से लिया जाने वाला एक धार्मिक कर था जो सम्पत्ति 1/40 भाग अर्थात् 2.5 प्रति"ात होता था।

(v) बाजार नियंत्रण की नीति (Policy of market control) :- अलाउद्दीन खिलजी के आर्थिक सुधार में उसका बाजार नियंत्रण प्रणाली सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। बाजार नियंत्रण की प्रणाली के अंतर्गत उसने कई महत्वपूर्ण कदम उठाए जिनका वर्णन निम्न प्रकार है

1. **वस्तुओं के मूल्य पर नियंत्रण (Control of the price of goods) :-** अलाउद्दीन ने एक नियम बनाकर दैनिक उपभोग की वस्तुओं का मूल्य नि"चत कर दिया था। उसने तय कर दिया कि मूल्य वही होगा जो, सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य सूची में दिया हुआ है। आव"यक वस्तुओं का मूल्य इतना कम कर दिया था कि एक सैनिक कम वेतन में भी अपना निर्वाह कर सके। अतः मूल्यों की स्थिरता अलाउद्दीन की महत्वपूर्ण वि"ोषता थी। इसके लिए अलग विभाग बनाये। इसमें योग्य व ईमानदार अधिकारियों की नियुक्ति की।
2. **बाजार के अधिकारी एवं कर्मचारी (Market official and employee) :-** अलाउद्दीन के काल में बाजार नियंत्रण की पूरी व्यवस्था का संचालन दीवान–ए–रियासत का नाम का अधिकारी करता था। उसके नीचे काम करने वाले कर्मचारी वस्तओं के क्रय–विक्रय एवं व्यवस्था का निरीक्षण करते थे। बाजार का सबसे बड़ा अधिकारी दीवान–ए–रियासत/सदर–ए–रियासत कहलाता था जिसकी नियुक्ति सुल्तान करता था। सदर–ए–रियासत के नीचे तीन अधिकारी – शहना–ए–मंडी (निरीक्षक) बरीद (गुप्तचर अधिकारी) और मुनहियान (गुप्तचर) नियुक्त किये गये थे। दिल्ली आकर व्यापार करने वाले प्रत्येक व्यापारी को दीवान–ए–रियासत में अपना नाम दर्ज करवाना पड़ता था। अलाउद्दीन खिलजी ने बाजार व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए परमिट जारी करने वाले एक अधिकारी की भी नियुक्ति की थी।
3. **वितरण की व्यवस्था (Distribution System) : -** सामान के वितरण के लिए दिल्ली में विभिन्न प्रकार के बाजारों की व्यवस्था की गई। सराय–ए–अदल सरकारी सहायता प्राप्त बाजार था जहाँ वस्त्र, शक्कर, जड़ी–बूटी, मेवा, दीपक जलाने का तेल एवं अन्य निर्मित वस्तुएं बिकने के लिए आती थीं। दीवान–ए–रियासत नाम का अधिकारी अपने अधीनस्थ अधिकारी एवं कर्मचारी के

माध्यम से सम्पूर्ण बाजार पर नियंत्रण रखता था। नगर के प्रत्येक मुहल्ले में स्थापित वि"ोष अनाज मंडी से ही अनाजों की खरीद बिक्री होती थी। इसके लिए लाइसेंस भी जारी करने की व्यवस्था थी। उपभोक्तओं को आज्ञा पत्र के आधार पर ही वस्तुएँ मिलती थी।

4. **शासकीय भंडारण व्यवस्था (Government stores system) : -** मध्यकालीन भारतीय इतिहास में अलाउद्दीन खिलजी को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के जनक के रूप में जाना जाता है। उसने वस्तुओं के कम कीमत में उपलब्धता के लिए मूल्य नियंत्रण के साथ–साथ भंडारण व्यवस्था के महत्व को भी बाजार व्यवस्था में शामिल किया। अतः उसने अनाज के भंडारण के लिए बड़े–बड़े गौदाम बनावाए। गोदामों का अनाज आपातकालीन परिस्थितयों में ही निकाला जाता था। इस प्रकार के प्रमाण मिलते है कि अलाउद्दीन ने रा"ानिंग व्यवस्था भी लागू किया था। अकाल के समय प्रत्येक घर को आधा मन अनाज प्रतिदिन दिया जाता था।

13.4.4. विरोधी तत्वों के मिश्रण वाला दिल्ली सल्तनत का प्रसिद्ध शासक मुहम्मद बिन तुगलक (Eminent ruler of Admixture Muhammad bin Tughlaq) :-

मुहम्मद बिन तुगलक दिल्ली सल्तनत का सबसे विद्वान, ि"ाक्षित व निपुण सल्तान था। वह गणित, भूगोल, ज्योतिष, चिकित्सा शास्त्र, द"ान शास्त्र आदि कई विषयों का ज्ञान रखता था। दूसरी ओर उसमें व्यावहारिक बुद्धिमता का अभाव था। वह मूर्खतापूर्ण निर्णय लेने और योजना बनाने के रूप में भी प्रसिद्ध है। वह एक साथ ही बहुत क्रूर तथा दयालु शासक भी था। वह राज्य विस्तार की महत्वाकांक्षा भी रखता था तो दूसरी ओर मंगोलों के आक्रमण का विरोध करने का साहस भी नहीं कर पा रहा था।

उसके व्यवहार कई बार सरदारों तथा प्रजा से घृणा व नीचता का प्रद"ान वाला भी हुआ तो इसके विपरीत कई मौकों पर विनम्रता व सहृदयता का व्यवहार भी प्रदि"ात किया। वह इस्लाम का सच्चा अनुयायी भी था तो दूसरी ओर उलेमा तथा मुस्लिम धार्मिक वर्ग के अन्य लोगों के विरूद्ध था।

उपरोक्त वर्णित इन तमाम बातों से यह स्पष्ट होता है कि मुहम्मद–बिन–तुगलक विरोधी तत्वों अथवा विरोधी गुणों–अवगुणों के मिश्रण वाला प्रसिद्ध सल्तान था।

मुहम्मद बिन तुगलक 1325 से 1351 ई. तक तुगलक व"ा का शासक रहा। दिल्ली सल्तनत की सीमा का सर्वाधिक विस्तार इसी के शासनकाल में हुआ। इसके बचपन का नाम जौना खाँ था। 1320 ई. में पिता गयासुद्दीन तुगलक के सुल्तान बन जाने के बाद राजकुमार जौना खाँ की उत्तराधिकारी के रूप में नियुक्ति हो गई और उसे 'उलूग खाँ' की उपाधि दी गई। अपने पिता के शासनकाल में राजकुमार जौना खाँ ने 1321 और 1322–23 ई. में वारंगल में दो अभियानों का नेतृत्व किया। यद्यपि प्रथम अभियान में वह

असफल रहने के बाद दूसरे अभियान में सफल रहा। मुहम्मद बिन तुगलक के काल में एक तरफ जहाँ सल्तनत का सर्वाधिक विस्तार हुआ वहीं दूसरी ओर उसकी क्रूर नीतियों के कारण विद्रोह का आरंभ हो गया जिसके फलस्वरूप दक्षिण में नये स्वतंत्र राज्यों की स्थापना हुई और ये क्षेत्र दिल्ली सल्तनत से पृथक हो गए। बंगाल भी स्वतंत्र हो गया। इस प्रकार विस्तार का चरमोत्कर्ष दिल्ली सल्तनत को विघटन की ओर ले गया। मुहम्मद बिन तुगलक का शासनकाल मध्यकालीन भारतीय इतिहास में राजस्व, कृषि, धर्म व शासन संबंधी योजनाओं में अनेक प्रकार के परिवर्तन के कारण अपना पृथक महत्व रखता है। इब्नबतूता जो 1333 ई. में मोरक्को (अफ्रीका) से आया था ने मुहम्मद बिन तुगलक के समय की घटनाओं को अपनी पुस्तक 'किताब–उल–रेहला' में उल्लिखित किया। इतिहासकार बरनी ने अपने विवरण में उसकी पाँच प्रमुख शासन संबंधी योजनाओं का उल्लेख किया है। इस प्रकार इतिहासकारों के विवरण के आधार पर मुहम्मद बिन तुगलक के शासन व्यवस्था का वर्णन निम्न प्रकार है –

(i) दोआब में कर वृद्धि (Tax increase in Doab) :- राजस्व में वृद्धि के लिए उसने 1325 ई. में दो आब में कर वृद्धि की। यह क्षेत्र सल्तनत का सबसे उपजाऊ क्षेत्र था। अतः खाली खजाना की पूर्ति के लिए उसने इस क्षेत्र में 10 से 20 गुणा तक कर वृद्धि की। परंतु जिस समय कर वृद्धि की गई, उसी दौरान अकाल पड़ने के कारण जनता में कर अदा करने की क्षमता नहीं रही। ऐसी स्थिति में जनता बढ़ी हुई कर देने को तैयार नहीं थी। कर वसूली की कठोरता के कारण आक्रो"ात जनता में सुल्तान के प्रति भयंकर असंतोष फैल गया और इस प्रकार यह योजना असफल हो गई।

(ii) राजधानी परिवर्तन (Capital Change) (1326-1327 A.D.) :- मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने शासनकाल में शासन व्यवस्था के अंतर्गत सामरिक महत्व के साथ–साथ विस्तृत साम्राज्य के केन्द्र में स्थित स्थान के दृष्टि से राजधानी परिवर्तन का प्रयोग भी किया। उसने सल्तनत की राजधानी दिल्ली से लगभग 700 मील दूर देवगिरी में स्थानांतरित कर दी। देवगिरी का नाम बदलकर दौलताबाद रख दिया। कुछ इतिहासकार यह भी कहते है कि दिल्ली निवासियों के व्यवहार से परे"ान होकर सुल्तान ने उन्हें सजा देने के लिए राजधानी परिवर्तन का कार्य किया। किन्तु यह योजना अव्यावहारिक थी तथा इसके लागू करने का तरीका भी गलत था। इस कारण उसकी यह योजना भी असफल रहा। अंततः 1335 ई. में राजधानी पुनः दिल्ली स्थानांतरित कर ली।

(iii) सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन (Nominal currency system) :- मुद्रा प्रणाली सुधार योजना के तहत मुहम्मद बिन तुगलक ने बहुमूल्य धातुओं के सिक्कों के आपेक्षिक मूल्य निर्धारित किए और अनेक प्रकार के नए सिक्के जारी किए। इसी क्रम में 1329–30 ई. में सांकेतिक मुद्रा को जारी करना उसका सर्वाधिक उल्लेखनीय कार्य थ। इसके शासनकाल तक राजकोष में बहुमूल्य धातुओं का अभाव हो गया था।

अकाल तथा अन्य प्रकार की आपदाओं के वजह से आय में कमी हो गयी थी। अतः मुहम्मद बिन तुगलक ने नए अध्यादे"ा जारी कर तांबे के सिक्के को कानूनी मुद्रा घोषित कर दिया और मूल्य की दृष्टि से उन्हें सोने तथा चांदी के सिक्कों के समकक्ष रखा। संभवतः नये प्रयोगों में माहिर सुल्तान को इसकी प्रेरणा 13 वीं शताब्दी में चीनी शासकों द्वारा सांकेतिक मुद्रा जारी करने से मिली थी। परंतु इसके प्रभावी प्रयोग के अभाव में यह योजना भी सफल नहीं हो सकी।

(iv) खुरासान पर आक्रमण (Khurasan invasion) :- एक महत्त्वाकांक्षी शासक के रूप में मुहम्मद बिन तुगलक ने 1337 ई. में अपेक्षाकृत कमजोर राज्य खुरा"ाान पर आक्रमण करने की योजना बनाई। मंगोल नेता तरम ि"ारीन तथा मिस्त्र के सुल्तान खुरासान को अपने अधिकार में लेने की योजना बना रहे थे। मुहम्मद तुगलक उनसे पीछे नहीं रहना चाहता था और उसने भी खुरासान पर आक्रमण करने के लिए 3,70,000 जवानों की सेना तैयार की और सैनिकों को पूरे एक वर्ष का अग्रिम वेतन प्रदान किया गया। कालांतर में मध्य ए"ाया की राजनीति में परिवर्तन आ जाने से सुल्तान को खुरासान पर आक्रमण का अभियान टालना पड़ा। परिणमतः सुल्तान अपनी इस योजना में भी असफल रहा।

(v) कराचिल का सैनिक अभियान (The Military campaign of Karachil) :- कराचिल का सैनिक अभियान मुहम्मद बिन तुगलक की परिस्थितियों के समझ का अभाव उसके अदूरदर्"ितापूर्ण नीति को द"र्ाता है। जिसके तहत उसने बिना सोचे समझे उत्तरी भारत के पहाड़ी प्रदे"ा कराचिल (आधुनिक कुगाऊँ गड़वाल) में एक लाख सेना भेज दी। इस अभियान में पहले वर्षा और फिर ठंडी तथा महामारी व भोजन सामग्री कम हो जाने से काफी सैनिक मारे गए। कुछ इतिहासकार यहां तक कहते है कि केवल तीन सैनिक बचकर लौटे। इस प्रकार इस योजना से राज्य को बहुत बड़ी हानि हुई।

(vi) कृषि विभाग का निर्माण (Construction of agriculture department) :- मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने शासनकाल में अलग से अमीर–ए–कोही/दीवान–ए–कोही नाम से कृषि विभाग को निर्माण करवाया था। राज्य की ओर से सीधी आर्थिक सहायता देकर कृषि योग्य भूमि का विस्तार इस विभाग की स्थापना का मुख्य उद्दे"य था। इसके अंतर्गत कृषि के विकास के लिए सिंचाई की व्यवस्था भी की गई। अकाल राहत संहिता तैयार करवाई। कृषकों को कृषि ऋण (तकावी) प्रदान करने की व्यवस्था भी की गई। इन सब कार्यो में दो वर्ष के भीतर राज्य का बहुत बड़ा रकम लगभग 70 लाख खर्च कर दिये गये। किंतु कई कारणों से यह योजना भी असफल हो गई।

उपरोक्त विवराण से स्पष्ट है कि मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने शासनकाल में कई योजनाएं बनाई जो पूर्ण रूप से असफल हुई। इतिहास में उसकी योजनाओं को काल्पनिक योजनायें कहकर आलोचना की गई है। परंतु गंभीरता से विचार करने पर पता चलता है कि वह असाधारण योग्यता तथा

नवीन बातों को सोचने वाला उत्साही शासक था। परन्तु इन योजनाओं के क्रियान्वयन में उसने भारी भूले की। इसलिए लेनपूल ने लिखा है –''अपने उत्तम उद्दे"यों और उच्च विचारों के होते हुए भी, संतुलन अथवा धैर्य और यथोचित भावों के अभाव के कारण मुहम्मद तुगलक पूर्णतः असफल हुआ।''

13.5 प्रगति समीक्षा (Check your progress) :–

(क) निम्नलिखित प्रश्नों के खाली स्थान में सही उत्तर लिखें :–

(Fill in the blanks based Questions)

(1) कुतुबद्दीन ऐबक ..... का गुलाम था।

(2) दिल्ली सल्तनत के..... शासन ने इक्ता व्यवस्था का प्रचलन किया।

(3) अलाउद्दीन खिलजी के काल में हजार दिनारी ..... को कहा जाता था।

(4) सिकन्दर द्वितीय (सानी) की उपाधि ..... सुल्तान ने धारण की।

(5) बलबन के काल में दीवान–ए–अर्ज ..... था।

(6) ..... सुल्तान ने किलोखरी को अपनी राजधानी बनाया।

(7) ब्राह्मणों पर जजिया कर लगाने वाला दिल्ली का सुल्तान ..... था।

(8) अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता..... के काल में आया था।

(9) दिल्ली में प्रथम अफगान राज्य का संस्थापक ..... था।

(10) दिल्ली सल्तनत की राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाने वाला सुल्तान ..... था

(ख) सत्य या असत्य कथन आधारित प्रश्न (True or False statement based Questions):-

(1) फीरोज तुगलक पहला शासक था जिसने राज्य की खर्च पर हज की व्यवस्था किया था।
( )

(2) मुहम्मद तुगलक द्वारा स्थापित दीवान–ए–अमीर कोही सैन्य विभाग था ( )

(3) 'गुलरूखी' उपनाम से कविता लिखने वाला दिल्ली सल्तनत का सुल्तान इब्राहिम लोदी था।
( )

(4) इल्तुतमि"ा द्वारा गठित 40 तुर्क सरदारों के गुट तुर्कान–ए– चिहालगानी को बलबन ने समाप्त कर दिया। ( )

(5) कुतुबद्दीन ऐबक को अपनी उदारता एवं दानी प्रवृति के कारण लाखबख्श (लाखों का दानी) कहा गया है। ( )

(6) सुल्तान के अधिकार को कम करने के लिए तुर्क सरदारों ने एक नये पद 'नाईब' अर्थात् नाईब–ए–मुमलिकात का सृजन रजिया सुल्तान के काल में किया था। ( )

(7) अलाउद्दीन खिलजी के बचपन का नाम अली तथा गुरू"ास्प था। ( )

(8) मुहम्मद बिन तुगलक के शासन काल में ही दक्षिण में 1336 ई. में हरिहर एवं बुक्का नामक दो भाइयों ने विजयनगर साम्राज्य की स्थापना की। ( )

(9) दिल्ली सल्तनत के सैय्यद व"ा का संस्थापक खिज्र खाँ था। ( )

(10) दिल्ली सल्तनत के 1206 ई. से 1526 ई. तक के शासनकाल में कुल 5 राजवं"ाों में खिलजी वं"ा वालों ने सबसे अधिक समय तक राज किया। ( )

13.6. सारांश (Summary)

- दिल्ली सल्तनत का संस्थापक कुतुबुद्दीन ऐबक मुहम्मद गोरी का गुलाम था।
- दिल्ली सल्तनत 1206 ई. से लेकर 1526 ई. तक चला।
- दिल्ली सल्तनत पर कुल 5 राजवं"ाों ने राज किया।
- दिल्ली सल्तनत पर सबसे अधिक तुगलक वं"ा का शासन रहा।
- कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा स्थापित वं"ा का नाम–गुलाम वं"ा है।
- गुलाम वं"ा को ममलूक वं"ा के नाम से भी जानते है।
- कुतुबुद्दीन ऐबक, इल्तुतमि"ा तथा बलबन इन तीनों तुर्क शासकों का जन्म स्वतंत्र माता–पिता से हुआ था अतः इन्हें प्रारंभिक तुर्क शासक व ममलूक शासक भी कहा जाता था।
- ऐबक का राज्याभिषेक 1206 ई. में लाहौर में हुआ था।
- वह 'मलिक' एवं 'सिपहसालार' की पदवी धारण कर गद्दी पर बैठा।
- लाखबख्श (लाखों का दानी) – ऐबक की उपाधि थी।

- ऐबक के दरबार में विद्वान हसन निजामी एवं फख–ए–मुदबिबर को संरक्षण प्राप्त था।
- ऐबक 1206–1210 ई. तक शासन रहा।
- इल्तुतमि"ा इल्बरी तुर्क था।
- इल्तुतमि"ा कुतुबुद्दीन ऐबक का दामाद था।
- ऐबक की मृत्यु के समय वह बदायूँ का सूबेदार (गवर्नर) था।
- इल्तुतमि"ा ने सल्तनत की राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाया था।
- इसे दिल्ली सल्तनत का वास्तविक संस्थापक माना जाता है।
- इसे गुलाम का गुलाम कहा जाता है।
- तुर्कान–ए–चिहलगानी/चरगान – 40 तुर्क सरदारों का एक गुट या संगठन इल्तुतमि"ा ने बनाया।
- चंगेज खाँ – मंगोल आक्रमणकारी था।
- चंगेज खाँ – इल्तुतमि"ा के काल में भारत में सिंध तक आ गया था।
- 1229 ई. में इल्तुतमि"ा को बगदाद के खलीफा से खिलअत एवं प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ।
- शुद्ध अरबी सिक्के चलाने वाला इल्तुतमि"ा पहला तुर्क सुल्तान था।
- इसके दो महत्वपूर्ण सिक्के थे – चाँदी का 'टंका' तथा तांबे का 'जीतल'।
- इल्तुतमि"ा ने 'इक्ता व्यवस्था' का प्रचलन किया।
- इक्ता व्यवस्था के अंतर्गत सभी सैनिकों व गैर सैनिक अधिकारियों को नकद वेतन के बदले भूमि प्रदान की जाती थी।
- इक्ता एक अरबी शब्द है जिसका अर्थ भूमि है। इस भूमि को लेने वाले 'इक्तादार' कहलाते थे।
- दिल्ली का प्रथम शासक था जिसने सुल्तान की उपाधि धारण की।
- घंटी बजाकर न्याय माँगने की व्यवस्था करने वाला सुल्तान इल्तुतमि"ा था।
- इसके काल में न्याय चाहने वाला व्यक्ति लाल वस्त्र धारण करता था।
- इल्तुतमि"ा 1210 से 1236 ई. तक सल्तनत का शासन रहा।
- इल्तुतमि"ा की मृत्यु के बाद उसका बड़ा पुत्र रूक्नुद्दीन फिरोज जो विलासी प्रवृति का व अयोग्य था शासक बना।
- फिरोज के शासनकाल में सत्ता की बागडोर उसकी मां शाहतुर्कान के हाथों में थी।

- रजिया दिल्ली सल्तनत की प्रथम तुर्क महिला शासिका थी।
- वह 1236 से 1240 ई. तक दिल्ली की शासिका रही।
- वह दिल्ली की जनता तथा अमीरों के सहयोग से शासिका बनी।
- वह इल्तुतमि"ा की बेटी थी।
- रजिया ने पर्दा प्रथा को त्याग दिया और पुरूषों के समान कुबा (कोट) और कुलाह (टोपी) पहनकर दरबार में बैठती थी तथा शासन कार्य संभालती थी।
- वजीर निजाम–उल–मुल्क जुनैदी ने उसकी राज्यारोहण का विरोध किया था और उसके विरूद्ध अमीरों के विद्रोह का समर्थन किया था।
- उसके पति का नाम अल्तूनिया था।
- 1240 ई. में कैथल (हरियाणा) में उसकी हत्या कर दी गयी।
- मुईजुद्दीन बहराम"ाह (1240–1242 ई.) के शासन काल में सुल्तान के अधिकार को कम करने के लिए तुर्क सरदारों ने एक नये पर 'नाइब' अर्थात नाइब–ए–मुमलिकात का सृजन किया।
- अलाउद्दीन मसूद"ाह (1242–1246 ई.) दिल्ली का शासक बना जो रूकनुद्दीन फिरोज"ाह का पुत्र तथा इल्तुतमि"ा का पौत्र था।
- वह अयोग्य व नाममात्र का शासक था। वास्तविक सत्ता वजीर मुहाजुबुद्दीन के हाथों में थी जो तजाकिस्तान का गैर–तुर्क था।
- इसके काल में हाँसी का इक्ता प्राप्त बलबन सबसे प्रमुख व्यक्ति बन गया।
- नासिरूद्दीन महमूद (1246–1266 ई.) के शासन काल में समस्त शक्ति बलबन के हाथों में थी।
- 1249 ई. में उसने बलबन को 'उलगू खाँ' की उपाधि प्रदान की और सेना पर पूर्ण नियंत्रण के साथ 'नायबे मुमलकात' का पद दिया।
- नसिरूद्दीन महमूद की मृत्यु के बाद गयासुद्दीन बलबन 1266 से 1286 ई. तक दिल्ली का शासक रहा।
- बलबन पहला सुल्तान था जिसने राजत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।
- उसने राजत्व को नियाबते खुदाई (ई"वर द्वारा प्रदत्त) तथा राजा को जिल्ले–इलाही (ई"वर की छाया) कहा है।
- बलबन ने अपने शासनकाल में मद्यपान का निषेध कर दिया जाता था।

- उसने फारसी (ईरानी) परंपरा सिजदा (घुटने पर बैठकर सम्राट के सामने सिर झुकाना) एवं पाबोस(पाँव को चूमना) के प्रचलन को प्रारंभ किया।
- बलबन ने फारसी नववर्ष नौरोज उत्सव मनाने की प्रथा को भारत में प्रारंभ किया था।
- उसने 'दीवान–ए–अर्ज' नाम से सैन्य विभाग का गठन किया।
- सैनिकों को नकद वेतन देना आरंभ किया।
- सैना का पुनर्गठन के लिए वृद्ध सैनिकों को पें"ान देकर मुक्त करने की योजना चलायी।
- इल्तुतमि"ा के चालीसा दल को पूर्णतः समाप्त कर दिया।
- उसने अपने विद्रोहियों के प्रति 'रक्त और लौह' की नीति का पालन किया। इसके अंतर्गत अपराधियों का बर्बरता पूर्वक हत्या कर दी जाती थी।
- इस वं"ा का अंतिम शासक शम्सुद्दीन क्यमर्स था।
- यह वं"ा 1206 से लेकर 1290 ई. तक चला।
- दिल्ली सल्तनत का दूसरा वं"ा खिलजी वं"ा का शासन 1290–1320 ई. तक रहा।
- दिल्ली सल्तनत पर खिलजी वं"ा की स्थापना को इतिहास में खिलजी क्रांति के नाम से जाना जाता है।
- इस वं"ा का संस्थापक – जलालुद्दीन फिरोज खिलजी था।
- उसने किलोखरी (दिल्ली के निकट को अपनी राजधानी बनाया।
- वह 1290 से 1296 ई. तक दिल्ली का शासक रहा।
- उसने अपने शासनकाल में इस्लाम धर्म ग्रहण कर भारत में बसने को इच्छुक मंगोलो को 'नवीन मुसलमान' के नाम से दिल्ली के समीप मुगरलपुर/मंगोलपुरी नाम से बस्ती बनाकर बसाई।
- अपने उदार चाचा जलालुद्दीन फिरोज खिलजी की हत्या कर अलाउद्दीन खिलजी 1296 ई. में दिल्ली की गद्दी पर बैठा।
- अलाउद्दीन के बचपन का नाम – अली तथा गुर"ाास्प था।
- उसका राज्याभिषेक दिल्ली में स्थित बलबन के लाल महल में हुआ था।
- खिलजी वं"ा ही नहीं दिल्ली सल्तनत का सबसे प्रसिद्ध शासक अलाउद्दीन खिलजी ने सिकन्दर द्वितीय (सानी) की उपाधि ग्रहण किया और इसका उल्लेख अपने सिक्कों पर करवाया।
- उसने दान, उपहार एवं पें"ान के रूप में अमीरों को दी गयी भूमि को जब्त कर लिया।

- अमीरों के आपस में मेल–जोल, सार्वजनिक समारोहों एवं वैवाहिक समारोहों पर प्रतिबंध लगा दिया।
- सर्वप्रथम दक्षिण भारत के राज्यों को सल्तनत में मिलाने का श्रेय अलाउद्दीन खिलजी को जाता है।
- अलाउद्दीन खिलजी ने शासन में इस्लाम के सिद्धान्तों को प्रमुखता न देकर राज्यहित को सर्वोपरि माना।
- मलिक काफूर हिन्दू हिजड़ा था।
- गुजरात विजय के दौरान नुसरतखाँ ने उसे एक हजार दिनार में खरीदकर अलाउद्दीन को सौंपा।
- इसलिए मलिक काफूर को 'हजार दिनारी' के नाम से भी जानते है।
- मलिक काफूर ने दक्षिण भारत के विजय अभियान का नेतृत्व किया था।
- वह वि"ाल स्थायी सेना का गठन करने वाला पहला सुल्तान था।
- सैनिकों की सीधी भरती एवं नकद वेतन देने की व्यवस्था की।
- घोड़ों को दागने एवं सैनिकों के हुलिया लिखने की व्यवस्था भी थी।
- बाजार नियंत्रण अलाउद्दीन के आर्थिक सुधारों में सबसे महत्वपूर्ण था।
- बजार नियंत्रण अधिकारी दीवान–ए–रियासत कहलाता था।
- शहना–ए–मंडी बाजार का अधीक्षक होता था।
- मध्यकालीन भारतीय इतिहास में अलाउद्दीन खिलजी को रा"ानिंग व्यवस्था आरंभ करने का श्रेय जाता है।
- सराय–ए–अदल ऐसा बाजार था जहाँ पर वस्त्र, शक्कर, जड़ी–बुटी, मेवा, तेल व अन्य निर्मित वस्तुएं बिकने के लिए आती थीं।
- इसके काल में 'दीवाने मुस्तखराज' कर विभाग था।
- भूमिकर पैदावार का 50 प्रति"ात होता था जिसे 'खराज' के नाम से जानते थे।
- 'जजिया' कर गैर मुस्लिमों से लिया जाता था।
- 'जकात' मुस्लिमों से लिया जाने वाला धार्मिक कर था जो आय का 1/40 भाग अर्थात 2.5 प्रति"ात होता था।
- 'बरीद' गुप्तचर अधिकारी को कहते थे।
- खिलाफत की उपेक्षा करने वाला खिलजी व"ा का शासक कुतुबुद्दीन मुबारक खिलजी था।
- तुगलक व"ा की स्थापना गयासुद्दीन तुगलक ने की।
- इसका असली नाम गाजी मलिक था।

- नहर का निर्माण करवाने वाला पहला सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक को ही माना जाता है।
- इसने अलाउद्दीन खिलजी के विपरीत अमीरों को भूमि पुनः लौटा दी।
- सूफी संत निजामुद्दीन औलिया से विवाद के लिए भी उसको जाना जाता है।
- 'हुनूज दिल्ली दूरस्त' (दिल्ली अभी दूर है) सूफी संत औलिया का यह कथन गयासुद्दीन तुगलक के लिए ही कहा गया था।
- गयासुद्दीन तुगलक के बाद 1325 ई. में मुहम्मद बिन तुगलक दिल्ली का सुल्तान बना।
- सभी सुल्तानों में सर्वाधिक ि"ाक्षित, विद्वान, योग्य, कलाप्रेमी किन्तु सनकी व पागल के रूप में उसको जाना जाता है।
- उसके बचपन का नाम जूना खाँ था।
- उसके काल में 'अमीर–ए–कोही' कृषि विभाग था।
- 1326–1327 ई. में उसने राजधानी परिवर्तन – दिल्ली से देवगिरी (दोलबाद) की योजना बनायी जो असफल रहा।
- 1329–1330 ई. में सांकेतिक/ प्रतीकात्मक सिक्कों का प्रचलन किया।
- यह सांकेतिक सिक्का तांबा या पीतल का था।
- इसके काल में ही अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता मौरक्को दे"ा से 1333 ई. में भारत की यात्रा पर आया था।
- इब्नबतूता को दिल्ली का काजी नियुक्त किया गया।
- इसकी पुस्तक का नाम 'रेहला' है।
- इसके शासनकाल में दिल्ली सल्तनत का विघटन आरंभ हो गया।
- इसके शासनकाल में ही दक्षिण भारत में 1336 ई. में महान विजयनगर साम्राज्य तथा बहमनी साम्राज्य (1347 ई. में) स्वतंत्र राज्य की स्थापना हुई थी।
- 1351 ई. में थट्टा के विद्रोह के समय मुहम्मद बिन तुगलक की मृत्यु हो गयी।
- मुहम्मद बिन तुगलक की मृत्यु के बाद फिरोज"ाह तुगलक 1351–1388 ई. तक दिल्ली का शासक रहा।
- उसने सैनिकों को पुनः जागीर के रूप में वेतन देना आरंभ करके सैन्य पदों का वं"ाानुगत बना दिया।
- उसने ब्राह्मणों से भी 'जजिया कर वसूला।
- सर्वाधिक नहरों का निर्माण करने वाला सुल्तान के रूप में फिरोज"ाह तुगलक को जाना जाता है।

- उसने हिसार, फिरोजाबाद (दिल्ली), फतेहाबाद, जौनपुर तथा फिरोजपुर नये नगर बसाये।
- उसके काल में मुस्लिम अनाथ स्त्रियों, विधवाओं एवं लड़कियों की सहायता हेतु दीवान–ए–खैरात विभाग बनाये गये।
- 'दीवान–ए–बंदगान' दासों की देखभाल हेतु था।
- उसकी आत्मकथा का नाम 'फतूहा–ए–फिरोज"ाही' है।
- उसके काल का विवरण हमें बरनी कृत 'फतवा–ए–जहाँदारी' तथा 'तारीख–ए–फिरोज"ाही' से प्राप्त होता है।
- तुगलक व"ा के शासन नासिरूद्दीन महमूद के समय में तैमूर लंग ने 1398 ई. में दिल्ली पर आक्रमण किया।
- तुगलक व"ा के बाद 1414 से 1450 ई. तक दिल्ली पर सैय्यद व"ा का शासन रहा।
- सैय्यद व"ा का संस्थापक – खिज्र खाँ था।
- सैय्यद व"ा का शासन 1414 –1450 ई. तक रहा।
- लोदी व"ा, दिल्ली सल्तनत का अंतिम व"ा था।
- इसका संस्थापक बहलोल लोदी अफगानी था।
- लोदी व"ा 1451 से 1526 ई. तक चला।
- इस व"ा का प्रसिद्ध शासक सिकंदर शाह लोदी हुआ।
- सिकंदर लोदी ने 1504 ई. में आगरा नगर की स्थापना की और इसे अपनी राजधानी बनाया।
- इसने 'गजेसिकन्दरी' नाम से भूमि मापन के लिए एक प्रमाणिक पैमाने का प्रचलन करवाया।
- वह फारसी भाषा का ज्ञाता था तथा 'गुलरूखी' उपनाम से कविता लिखता था।
- इस व"ा का अंतिम शासक इब्राहिम लोदी (1517–1526 ई.) था
- इब्राहिम लोदी को पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर ने हराया।
- इस प्रकार पानीपत के प्रथम युद्ध 21 अप्रैल, 1526 के द्वारा बाबर ने इब्राहिम लोदी को हराकर एक नवीन व"ा मुगल व"ा की नींव रखी।
- 1206 ई. से लेकर 1526 ई. तक चले आ रहे इस वि"ाल साम्राज्य के पतन के कारण थे –

स्वेच्छाचारी शासन, सुल्तानों का धर्मतंत्र, मंगोलों के आक्रमण, राजसिंहासन के लिए आपसी संघर्ष, सल्तनत एक सैनिक राज्य, सल्तनत की वि"ालता, मुहम्मद तुगलक की असफल योजनाये, बाद के तुगलक सुल्तानों की अयोग्यता, तैमूर का आक्रमण, इब्राहिम लोदी की अयोग्यता, बाबर का आक्रमण आदि।

13.7. संकेत–सूचक (Key-Words)

- ममलूक – अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है अपनाया गया। इसका प्रयोग प्रायः उन तुर्की दासों के लिए किया जाता था जो घर में काम करने की अपेक्षा सैनिक सेवा करते थे।
- चौगान – पोलो खेल
- लाखबख्श – लाखों का दान करने वाला।
- तुर्की – यूरे"ाया में स्थित एक दे"ा है। यहां के निवासी तुर्क कहे जाते है और इनकी भाषा तुर्की कहलाती है।
- इलबरी/अलबरी – तुर्कों का एक कबीला।
- खिल्लत/खिलअत – पो"ाक।
- मंगोल – मध्य ए"ाया और पूर्वी ए"ाया में रहने वाली एक जाति, जिसने वि"व इतिहास को अत्यधिक प्रभावित किया।
- मकबरा – कब्र पर बनी हुई इमारत या गुंबद।
- अक्ता – जागीर अर्थात् वेतन के बदले सैनिकों और गैर सैनिक अधिकारियों को दी जाने वाली भूमि का टुकड़ा।

13.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा (Self Assessment Test) (SAT) :-

(क) वस्तुनिष्ठ प्रश्न (बहुविकल्पी प्रश्न) (objective Question) (Multiple Choice Questions) :-

(इनके उत्तर दायीं ओर कोष्ठक में अंकित हैं)

1 चहलगानी अथवा चालीस की शक्ति को किस सुल्तान ने समाप्त किया।

(i) बलबन (ii) इल्तुतमि"ा (i)

(iii)अलाउद्दीन खिलजी (iv) मुहम्मद तुगलग

2 अलाउद्दीन खिलजी के समय में भूमि कर उपज का कितना भाग लिया जाता था।

(i) 1/3 भाग (ii) 1/4 भाग (iii)

(iii) 1/2 भाग (iv) 1/6 भाग

3 तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया

(i) 1348 ई. (ii) 1378 ई. (iv)

(iii) 1518 ई. (iv) 1398 ई.

4 अपने विद्रोहियों के प्रति किस सुल्तान ने 'रक्त एवं लौह' की नीति अपनाई।

(i) इल्तुतमि"ा (ii) बलबन (ii)

(iii)रजिया बेगम (iv) ऐबक

5 चंगेज खाँ कौन था?

(i) मंगोल (ii) तुर्क (i)

(iii) अरबी (iv) अफगानी

6 दिल्ली सल्तनत का वह प्रथम सुल्तान कौन था जिसने स्थायी सेना रखी?

(i) इल्तुतमि"ा (ii) बलबन (iii)

(iii)अलाउद्दीन खिलजी (iv) मुहम्मद तुगलग

7 दिल्ली सल्तनत के किस शासक को इक्ता प्रथा शुरू करने का श्रेय जाता है?

(i) बलबन (ii) कुतुबुद्दीन ऐबक (iii)

(iii) इल्तुतमि"ा (iv) अलाउद्दीन खिलजी

8 सल्तनत काल में किस सुल्तान ने सर्वप्रथम 'सिचाई कर' लगाया?

(i) अलाउद्दीन खिलजी (ii) गयासुद्दीन तुगलक (iv)

(iii)मुहम्मद तुगलक (iv) फिरोज तुगलक

9 ब्राह्मणों पर जजिया कर सर्वप्रथम किस सुल्तान ने लगाया ?

(i) बलबन (ii) अलाउद्दीन खिलजी (iv)

(iii)मुबारक"ाह खिलजी (iv) फिरोज तुगलग

10 निम्न में से किसकी स्थापना फिरोज तुगलक द्वारा की गयी?

1. जौनपुर 2. दौलताबाद 3. हिसार 4. फिरोजपुर

5. फिरोजाबाद 6. तुगलकाबाद 7. फतेहाबाद

(i) 1,3,4,5,7 (ii) 1,2,5,6,4 (i)

(iii) 1,2,3,5,6 (iv) 3,4,5,6,7

13.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

13.5 (क) का उत्तर :–

1. मुहम्मद गोरी 2. इल्तुतमि"ा 3. मलिक काफूर
4. अलाउद्दीन खिलजी 5. सैन्य विभाग 6. गयासुद्दीन तुगलक
7. फिरोज तुगलक 8. मुहम्मद बिन तुगलक 9. बहलोल लोदी
10. इल्तुतमि"ा

13.5 (ख) का उत्तर :–

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य
4. सत्य 5. सत्य 6. असत्य
7. सत्य 8. सत्य 9. सत्य
10. असत्य

13.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री (References/Suggested Reading) :-

- अविना"ा चन्द्र अरोड़ा (ए.सी.अरोड़ा) – प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1526 ई. तक), प्रदीप पब्लिके"ान्ज अपोजीट ि"ातला मन्दिर, जालन्धर (पंजाब), तृतीय संस्करण : 1987
- मध्यकालीन भारत प्रथम खंड (750–1540) – हरि"ाचन्द्र वर्मा, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदे"ालय दिल्ली वि"वविद्यालय, द्वितीय संस्करण : 20 फरवरी, 1985
- भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय आन्दोलन– द्वितीय संस्करण : जून, 2018 – दृष्टि पब्लिके"ान्स 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली
- सामान्य अध्ययन – यूनिक पब्लिके"ान्स, 35/1, जवाहर लाल नेहरू रोड़, बटलर मार्केट, जार्ज टाउन – इलाहाबाद (उत्तर प्रदे"ा)
- सामान्य अध्ययन – स्पेक्ट्रम (Spectrum) पबिल्के"ान्स, अहीर नगर, दिल्ली

SUBJECT : HISTORY	
COURSE CODE :B.A. 106	AUTHOR: Mr. MOHANSINGH BALODA
LESSON NO. 14	VETTER :
सल्तनतकालीन भासन प्रबन्ध, अर्थव्यवस्था, कला व स्थापत्य (भवन निर्माण) (Administration, Economy, Arts Architecture during the Sultanate period)	

अध्याय संरचना **(Lesson Structure)**

14.1. अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

14.2. परिचय **(Introduction)**

14.3. विषय वस्तु के मुख्य बिन्दु **(Main Body of Text)**

14.3.1 सल्तनतकालीन प्रशासनिक व्यवस्था

(Administration under sultanate period)

14.3.2 सल्तनतकालीन राजस्व व्यवस्था

(Revenue system under Sultan period)

14.3.3 सल्तनतकालीन लगान व्यवस्था

(Rent Arrangements under Sultanate period)

14.3.4 सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था

(Economy under Delhi Sultanate period)

14.4. विषय वस्तु का पुनः प्रस्तुतीकरण **(Further Main body of the text)**

14.4.1 सल्तनतकालीन स्थापत्य कला

(Architecture during Sultanate period)

14.4.2. गुलाम तथा खिलजी काल में वास्तुकला/स्थापत्य कला

(Architecture during slave and Khilji period)

14.4.3. तुगलक काल में वास्तुकला

(Architecture during Tughlaq period)

14.4.4. सैय्यद व लोदी काल में वास्तुकला

(Architecture during Sayyid and Lodi period)

14.5. प्रगति समीक्षा **(Check your progress)**

14.6. सारांश **(Summary)**

14.7. संकेत–सूचक **(Key-Words)**

14.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा **(Self Assessment Test)(SAT)**

14.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर **(Answers to check your Progress)**

14.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री

(References/Suggested Reading)

14.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

(i) विद्यार्थी सल्तनतकालीन प्र"ासनिक व्यवस्थाओं के विभिन्न बिन्दुओं का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

(ii) दिल्ली सल्तनत काल में आर्थिक जीवन (Economic Life) पर जिज्ञासु छात्र टिप्पणी कर सकेंगे।

(iii) पाठकगण दिल्ली सल्तनत के अलग–अलग व"ाों के समय हुये वास्तुकला के विकास की वि"ाषताओं का तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।

(iv) इस अध्याय के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी 'इस्लाम तथा भारतीय संस्कृति' विषय पर साथियों के साथ परिचर्चा का आयोजन करने के लिए प्रेरित हेागें।

14.2. परिचय (Introduction) :-

मुहम्मद गोरी के गुलाम कुतुबद्दीन ऐबक ने भारत में दिल्ली सल्तनत के नाम से इस्लामी सत्ता की स्थापना की। उसने लाहौर को राजधानी बनाकर अपना शासन चलाया। इसके बाद इल्तुमि"ा ने दिल्ली सल्तनत की राजधानी को लाहौर से दिल्ली लाया। इस प्रकार 1206 ई. में प्रारंभ हुआ दिल्ली सल्तनत पर 1526 ई. तक पाँच राजव"ाो का शासन रहा। दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों ने राज्य विस्तार का अभियान चलाकर इस सल्तनत को एक वि"ाल साम्राज्य के रूप में बदल दिया। इस वि"ाल साम्राज्य को सुरक्षित करने के लिए मजबूत सैन्य व्यवस्था की आव"यकता को देखते हुए उस समय के शासकों ने एक सुव्यवस्थित शासन प्रणाली का विकास किया। दिल्ली सल्तनत की सम्पूर्ण शक्ति सैनिकों पर आधारित थी। अतः सैन्य व्यवस्था के खर्च के लिए शासकों ने प्र"ासन के अंतर्गत व्यवस्थित वित्त विभाग बनाये। वि"ाल साम्राज्य के संचालन के लिए सल्तनत काल में भारत एक नवीन प्र"ासनिक व्यवस्था की शुरूआत हुई जो मुख्य रूप से अरबी–फारसी पद्धति पर आधारित थी। सल्तनत काल में प्र"ासनिक व्यवस्था पूर्ण रूप से इस्लामिक धर्म पर आधारित थी। प्र"ासन में उलेमाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। प्रत्येक सुल्तान के लिए यह आव"यक होता था कि वह खलीफा से मान्यता प्राप्त करें। इल्तुतमि"ा प्रथम सुल्तान था जिसने बगदाद के खलीफा से मान्यता प्राप्त की थी। फिर भी दिल्ली सल्तनत के बाद के सुल्तानों ने खलीफा को नाम मात्र का ही प्रधान माना। बलबन ने रणनीतिपूर्वक खलीफा को शासन से अलग–थलग कर दिया तो अलाउद्दीन खिलजी जो दिल्ली सल्तनत में प्र"ासनिक और आर्थिक सुधार के लिए प्रसिद्ध है ने अपने आप को खलीफा का 'नाइब' मानने से इंकार कर दिया। जबकि मुबारक"ाह खिलजी ने खिलाफत की उपेक्षा करते हुए खुद को ही खलीफा घोषित कर दिया। मुहम्मद तुगलक ने अपने शासन काल के प्रारंभ में खलीफा को मान्यता नहीं दी, पर शासन के अंतिम चरण में उसने खलीफा को मान्यता प्रदान कर दी। दिल्ली सल्तनत में यद्यपि सुल्तान की सहायता के लिए मंत्रिपरिषद् की व्यवस्था थी तथापि सुल्तान समस्त प्र"ासन व न्याय व्यवस्था का केंद्र होता था और सुल्तान का निर्णय अंतिम निर्णय होता था। सहायता के लिए शासन व्यवस्था के अंतर्गत आव"यकतानुसार शासकों ने बहुत से राजनीतिक व प्र"ासनिक विभाग बनाये जिसका विस्तृत वर्णन हम आगे के शीर्षकों में पढ़ेगें।

सल्तनत में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि ही था। अतः कृषि के विकास के लिए उचित सिंचाई की व्यवस्था व कृषि ऋण की व्यवस्था शासकों के द्वारा की जाती थी। इस काल में ग्राम में कृषकों के अतिरिक्त अन्य उद्योग धंधों वाले लोग भी रहते थे जिससे ग्राम एक आत्मनिर्भर इकाई के समान था। इस काल में इतिहासकारों व विदे"ाी यात्रियों के विवरणों से पता चलता है कि सल्तनत काल में भारत में कपड़े, धातु, चीनी, नील, चर्म, कागज आदि उद्योगों का बहुत विकास हुआ। व्यापार व वाणिज्य दे"ा के

अंदर व दे"ा के बाहर बड़े पैमाने पर हो रहे थे। दिल्ली सल्तनत के समय एक से बढ़कर एक बड़े–बड़े नगरों का विकास हुआ।

व्यापार व वाणिज्य को बढ़ावा देने के लिए बंदरगाहों का विकास किया गया। इस प्रकार सल्तनत काल में भारत आर्थिक दृष्टि से विकसित था।

यद्यपि सल्तनतकाल में सुल्तानों ने सैनिक अभियानों और विद्रोहों को दबाने में ही अपना अधिकां"ा समय व्यतीत किया तथापि इस काल में कला एवं स्थापत्य का भी पर्याप्त विकास हुआ है। इस काल के कला की प्रमुख वि"ोषता स्थापत्य कला उत्कृष्टता ही है। स्थापत्य कला के अंतर्गत प्रारंभिक गुलाम या ममलूक वं"ा के शासकों से लेकर अंतिम वं"ा लोदी वं"ा तक के शासकों ने मस्जिदों, मकबरों, मीनारों एवं अन्य भवनों के निर्माण किये। सल्तनत के प्रारंभिक सुल्तानों के निर्माणों में हिन्दू शैली की प्रधानता रही है बाद के निर्माण कलाओं में इस्लामिक शैली के साथ–साथ भारतीय शैली के भी द"ान होते है। तुगलक वं"ा के शासकों ने निर्माण कार्यों में खिलजीकालीन संदरता व भव्यता के स्थान पर सादगी पर बल दिया तो सैय्यद व लोदी वं"ा के काल के निर्माणों में गुंबदों की प्रधानता रही है। इस काल तक आते–आते स्थापत्य कला का पतन आरंभ हो चुका था। इस प्रकार सल्तनत काल में स्थापत्य कला का खूब विकास हुआ। इस काल में कला के अंतर्गत यद्यपि मुख्यतः स्थापत्य कला का ही सर्वाधिक विकास हुआ तथापि कुछ अं"ाों में चित्रकारी व संगीत का भी विकास हुआ।

14.3.1 सल्तनतकालीन प्रशासनिक व्यवस्था (Administration under sultanate period) :-

सल्तनत काल में भारत में अरबी–फारसी पद्धति पर आधारित एक नवीन प्र"ासनिक व्यवस्था की शुरूआत हुई। इस काल की प्र"ासनिक व्यवस्था में कुरान व कुरान आधारित नियमों–कानूनों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। अलाउद्दीन खिलजी व उसके पुत्र मुबारक"ाह खिलजी को छोड़कर लगभग सभी शासकों ने किसी न किसी रूप में खलीफा की सर्वोच्च शक्ति को स्वीकार किया। इतना सब कुछ होने के बावजूद सुल्तानों ने भारतीय परिस्थितियों के अनुसार भी प्र"ासन में परिवर्तन किये। उन्होंने प्र"ासन में हिन्दुओं को भी स्थान दिया। हिन्दुओं की सुरक्षा के लिए उनसे जजिया कर वसूला। अधिकतर सुल्तानों तथा उनके सरदारों का मुख्य उद्दे"य साम्राज्य में सेना की शक्ति द्वारा शान्ति स्थापित करना तथा लोगों से बलपूर्वक कर एकत्रित करना था। इसलिए डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव ने लिखा है, '' दिल्ली की सल्तनत एक सैनिक राज्य था जो शक्ति पर आधारित था, न कि लोगों की इच्छा पर।'' प्र"ासनिक व्यवस्था की मुख्य वि"ोषतायें इस प्रकार थी :–

- **सुल्तान** – दिल्ली सल्तनत में राज्य की समस्त शक्ति उसमें केन्द्रित थी। सुल्तान का न्याय ही अंतिम न्याय होता था। न्यायपालिका एवं कार्यपालिका पर सुल्तान का पूर्ण नियंत्रण होता था। साम्राज्य का सर्वोच्च सेनापति भी सुल्तान ही होता था। वह पूर्ण रूप से निरंकु"ा होता था। उसकी संपूर्ण शक्ति सैनिक बल पर निर्भर करती थी। सुल्तान '"ारियत' के अधीन ही कार्य करता था। सल्तनत काल में उत्तराधिकार का कोई नि"चत नियम नहीं था। सुल्तान अपने संतानों में से किसी को भी उत्तराधिकारी चुन सकता था। उत्तराधिकारी के अयोग्य होने की स्थिति में सरदार नये सुल्तान का चुनाव करते थे। कभी–कभी शक्ति के प्रयोग से भी सिंहासन पर अधिकार सुनि"चत होता था।

- **मंत्रिपरिषद्/मंत्रिगण** :– यद्यपि सत्ता का केन्द्र–बिंदु सुल्तान होता था फिर भी शासन–प्रबंध के कार्यों में सुल्तान की सहायता करने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होती थी। मंत्रिपरिषद् को 'मजलिस–ए–खलवत' कहा जाता था। मंत्रिपरिषद् की सलाह मानने के लिए सुल्तान बाध्य नहीं होता था। मंत्रिपरिषद् में कई मन्त्री होते थे जिनकी नियुक्ति एवं पदमुक्ति वह अपनी इच्छानुसार कर सकता था। मजलिस–ए–खास में मजलिस–ए–खलवत की बैठक हुआ करती थी। यहाँ पर सुल्तान कुछ खास लोगों को बुलाता था। 'बार–ए–खास' में सुल्तान सभी दरबारियों, खानों, अमीरों, मालिकों और अन्य रईसों को बुलाता था। 'बार–ए–आजम' में सुल्तान राजकीय कार्यों का अधिका"ा भाग पूरा करता था। यहाँ पर विद्वान, मुल्ला, काजी भी उपस्थित रहते थे।

  सल्तलतकालीन मंत्रिपरिषद् में 4 मंत्री महत्वपूर्ण थे जिनका वर्णन इस प्रकार है :–

  1. **दीवान–ए–वजारत** :– सल्तनतकालीन प्र"ासन में यह सबसे महत्वपूर्ण विभाग था। इस विभाग के मंत्री को वजीर कहा जाता था जो प्रधानमंत्री के समान होता था। वह वित्त संबंधी सभी कार्य करता था। सुल्तान को प्र"ासनिक मामलों में सलाह देता था तथा अन्य मंत्रियों के कार्यों पर निगरानी रखता था।

     सुल्तान की अनुपस्थिति में उसे शासन का प्रबंध करना पड़ता था। तुगलक काल में वजीर का महत्व अत्यधिक बढ़ गया था। फिरोज"ाह तुगलक के समय में यह पद अपने चरमोत्कर्ष पर था। सैय्यदों के समय में यह शक्ति घटने लगी तथा लोदी व"ा के काल में वजीर का पद महत्वहीन हो गया। वजीर के प्रमुख सहयोगियों तथा इसके द्वारा नियंत्रित होने वाले विभाग थे–

     (i) **नायब वजीर** – वजीर की अनुपस्थिति पर उसके स्थान पर कार्य एवं उसके सहयोगी के रूप में नायब वजीर कार्य करता था।

(ii) **मुशरिफ–ए–मुमालिक (महालेखाकार)** – प्रांतों एवं अन्य विभागों से प्राप्त होने वाली आय एवं उसके व्यय का लेखा–जोखा रखने का दायित्व इसका होता था। नाजिर इसका सहायक होता था।

(iii) **मुस्तौफी–ए–मुमालिक (महालेखा परीक्षक)** – मु"ारिफ द्वारा तैयार किये गये लेखों–जोखों की जाँच की जिम्मेदारी इसकी होती थी। कभी–कभी इसे आय–व्यय का निरीक्षण भी करना पड़ता था।

(iv) **खजीन (खजांची)** – यह कोषाध्यक्ष के रूप में कार्य करता था।

(v) **दीवान–ए–वकूफ** – जलालुद्दीन खिलजी द्वारा स्थापित यह विभाग कागजात की देखभाल करता था।

(vi) **दीवान–ए–मुस्तखराज** – वित्त विभाग से संबंधित इस विभाग की स्थापना अलाउद्दीन खिलजी ने किया था। यह विभाग अतिरिक्त मात्रा में वसूले गये कर का हिसाब रखता था।

(vii) **दीवान–ए–अमीर कोही** – मुहम्मद तुगलक द्वारा स्थापित कृषि विभाग था। मालगुजारी व्यवस्था की देखभाल करना एवं भूमि को खेती योग्य बनाना इसका मुख्य कार्य होता था।

इस प्रकार वजीर अपने सहयोगियों की सहायता से अपने कार्यालय दीवान–ए–विजारत के माध्यम से उपरोक्त विभागों पर नियंत्रण रखता था।

2. **दीवान–ए–आरिज** :– यह सैन्य विभाग था। आरिज–ए–मुमालिक इसका प्रमुख अधिकारी होता था। सैनिकों की भर्ती करना, सैनिकों एवं घोड़ों का हुलिया रखना, रसद की व्यवस्था करना, सेना का निरीक्षण करना एवं सेना की साज–सज्जा की व्यवस्था करना इसका महत्वपूर्ण कार्य होता था। इस विभाग की स्थापना बलबन ने की थी। तुगलक वं"ा के अंतिम शासक नासिरूद्दीन महमूद के समय 'वकील–ए–सुल्तान' नाम से मंत्री बनाया गया था जो इस विभाग के अधीन शासन व्यवस्था एवं सैनिक व्यवस्था की देखभाल करता था। परंतु कुछ दिन बाद यह समाप्त हो गया।

3. **दीवान–ए–इंशा** :– यह शाही पत्र व्यवहार का विभाग था। 'दबीरे मुमालिक' के नियंत्रण में यह विभाग कार्य करता था। दवीर व लेखक इसके सहयोगी होते थे। यह सुल्तान की घोषणाओं एवं पत्रों का मसविदा तैयार करता था और उन्हें स्थानीय कार्मचारियों तक पहुंचाता था। फिरोज तुगलक के समय इसका स्तर मंत्री का नहीं रह गया।

4. **दीवान–ए–रसालत** :– यह विदे"ाी कार्यों का मंत्रालय था। इस विभाग में मंत्री के मुख्य कार्य अन्य राज्यों में राजदूत भेजना तथा उनके राजदूत स्वीकार करना और विदे"ाी राज्यों से पत्र–व्यवहार करना आदि थे।

उपर्युक्त विभागों व इनके मंत्रियों के अतिरिक्त भी राज्य व्यवस्था में कुछ मंत्री होते थे। वे निम्नलिखित है

(i) **नाइब (नाइब–ए–मुमलिकत)** – इसकी स्थापना इल्तुतमि"ा के पुत्र बहराम"ाह के काल में उसके सरदारों द्वारा की गई। इस पद का महत्व अयोग्य सुल्तानों के समय में अधिक रहा। अतः ऐसी स्थिति में यह पद सुल्तान के बाद माना जाता था। नाइब के पद का सर्वाधिक प्रयोग बलबन ने किया था।

(ii) **सद्र–उस–सुदूर** – यह धर्म विभाग एवं दान विभाग का प्रमुख होता था। धार्मिक विभाग तथा न्यायिक विभाग का कार्य करने के लिए दो अधिकारी थे – सद्र–उस–सुदूर और दीवान–ए–कजा। प्रायः एक ही व्यक्ति को यह दोनों पद दिया जाता था।

सद्र–उस–सुदूर का कार्य था – इस्लामी नियमों और उपनियमों को लागू करना तथा यह देखना कि मुसलमानों द्वारा दैनिक जीवन में इनका पालन किया जा रहा है अथवा नहीं। मुसलमानों के लिए दिन में पांच बार नमाज पढ़ना तथा रोजा रखना आव"यक था। दान के रूप में धन वितरित करने और उलेमा तथा विद्वानों को जीवन–निर्वाह के लिए भत्ते मंजूर करना भी उसका कार्य था। दीवान–ए–काजी न्यायिक विभाग का प्रधान था तथा राज्य में न्याय व्यवस्था का निरीक्षण करना उसका मुख्य कार्य था।

(iii) **काजी–उल–कुजात** – सल्तनत काल में सुल्तान के बाद न्याय का सर्वोच्च अधिकारी काजी–उल–कुजात होता था। इसी के न्यायालय में मुकदमें शुरू किये जाते थे। इसे अपने से नीचे के काजियों के निर्णय पर फिर से विचार करने का अधिकार होता था। सल्तनत काल में प्रायः यह पद सद्र–उस–सुदूर के पास ही रहता था।

(iv) **दीवान–ए–वरीद** – यह गुप्तचर विभाग था। वरीद–ए–मुमालिक इसका प्रधान अधिकारी होता था। इसके अधीन गुप्तचर, संदे"ावाहक एवं डाक चौकियां होती थी।

सल्तनत काल में राज–दरबार से संबंधित पद निम्नलिखित थे।

(v) **वकील–ए–दर** – शाही महल एवं सुल्तान की व्यक्तिगत सेवाओं की देखभाल करने वाला अत्यंत महत्वपूर्ण पद होता था।

(vi) **बारबक** – दरबार की शान शौकत एवं रस्मों की देख–रेख करने वाला पद होता था।

(vii) **अमीर–ए–हाजिब** – यह सुल्तान से मिलने वालों की जाँच पड़ताल करता था।

(viii) **अमीर ए शिकार** – सुल्तान के ि"ाकार की व्यवस्था करने वाला।

(ix) **अमीर–ए–मजलिस** – शाही उत्सवों एवं दावतों के प्रबंध का दायित्व इसके ऊपर होता था।

(x) **सर–ए–जांदर** – सुल्तान के अंगरक्षकों के अधिकारी को सर–ए–जांदर कहते थे।

(xi) **अमीर–ए–आखूर** – यह अ"व"ाला का अध्यक्ष होता था।

(xii) **शहना–ए–पील** – हस्ति"ाला के अध्यक्ष के रूप में कार्य करता था।

(xiii) **दीवान–ए–इस्तिहाक** – पें"ान विभाग था।

(xiv) **दीवान–ए–खैरात** – दान विभाग था।

(xiii) **दीवान–ए–बंदगान** – दास विभाग था।

दीवान–ए–इस्तिहाक, दीवान–ए–खैरात तथा दीवान–ए–बंदगान ये तीनों विभाग फिरोज"ाह तुगलक द्वारा स्थापित किये गये। मुस्लिम अनाथ स्त्रियों, विधवाओं एवं लड़कियों की सहायता हेतु दान विभाग के रूप में दीवान–ए–खैरात विभाग कार्य करता था। फिरोज के शासनकाल में दासों की संख्या लगभग 1,80,000 पहुंच गई थी। इनकी देखभाल हेतु दीवान–ए–बंदगान की स्थापना की।

- **प्रांतीय शासन (Provincial Government)** :– दिल्ली सल्तनत के प्रारंभिक व"ा दास/गुलाम व"ा के काल में साम्राज्य की प्रमुख इकाई इक्ता होती थी। इल्तुतमि"ा के काल के शासन प्रबंध की प्रमुख वि"ोषता – इक्तेदारी व्यवस्था थी। इस व्यवस्था के अंतर्गत राज्य की सेवा देने वाले दो प्रकार के कर्मचारी या अधिकारी आते थे। इन्हें सेवा के बदले वेतन के स्थान पर भूमि का टुकड़ा दिया जाता था। उन्हें छोटे इक्ता के नाम से जाना जाता था तथा इन्हें अपने भूमि पर कर वसूलने का अधिकार होता था। दूसरे प्रकार में इक्ता को बड़े इक्ता के नाम से जाना जाता

था। बड़े इक्तों के सरदार सैनिक सेवा के साथ–साथ प्र"ाासन सम्बन्धी कार्य भी करते थे। वे अपने प्रदे"ाों के शासन प्रबंध का खर्च तथा वेतन काटकर शेष रकम केन्द्रीय सरकार को भेज देते थे। इल्तुतमि"ा ने केवल तुर्क सरदारों को ही इक्ते प्रदान किए। बलबन ने इक्तादारों पर नियंत्रण रखने तथा इनके भ्रष्टाचार को रोकने के लिए 'ख्वाजा' नामक अधिकारियों की नियुक्ति की थी।

अलाउद्दीन खिलजी ने विजय अभियान चलाकर सल्तनत का उत्तर से लेकर दक्षिण तक विस्तार किया। अतः उसने अपने वि"ाल साम्राज्य को प्रांतों में बांट दिया। उसके साम्राज्य में कुल 11 प्रांत थे। दास व"ा से इतर खिलजी के काल में इक्ता के स्थान पर प्रांत नामक इकाई का प्रयोग किया गया।

प्रत्येक प्रांत का मुखिया एक सूबेदार होता था जो प्रान्त में केन्द्र के अधीन एक छोटे से राजा के समान कार्य करता था। प्रांत के शासन को संचालित करने वाले इस सूबेदार को नायबवली व मुक्ति कहा जाता था।

वित्तीय मामलों में बली की सहायता ख्वाजा नामक अधिकारी करता था। प्रांत में शांति तथा व्यवस्था स्थापित करना, एक सैनिक टुकड़ी तैयार रखना, मुकदमों का फैसला करना, भूमि कर जमा करना आदि इनके मुख्य कार्य होते थे। ये सभी कार्य नायबवली व मुक्ति अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की सहायता से करते थे। सल्तनत के अंतर्गत मुहम्मद तुगलक के समय प्रांतों की संख्या सबसे अधिक 23 हो गई थी।

- **स्थानीय शासन (Local Government)** :– प्र"ाासकीय सुविधा के दृष्टिकोण से सल्तनत काल में प्रत्येक प्रांत को कई ि"ाकों (जिलों) में विभाजित किया गया। ि"ाक का प्रधान ि"ाकदार कहलाता था। ि"ाकों को परगना में बांटा गया था। परगना का मुखिया आमिल या नजीम होता था जो अपने परगने में सहयोगियों के साथ शासन व्यवस्था संभालता था। वह अपने परगने में कर भी वसूलता था।

  उसकी नियुक्ति वजीर द्वारा की जाती थी। परगना अनेक गांवों का समूह होता था। अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता सौ गाँव के मण्डल के रूप में 'सादी' नाम से एक प्र"ाासनिक इकाई का उल्लेख करता है। सादी के प्र"ाासन की देखभाल 'अमीर–ए–सदा' नामक अधिकारी करता था। इसकी सहायता के लिए मुतसर्रिफ, कारकून, बलाहार, मुकद्दम, चौधरी, पटवारी, पियादा आदि होते थे। शासन की सबसे छोटी इकाई गाँव थी। जहाँ का शासन पंचायतें करती थी। गाँवों में मुकद्दम (मुखिया) पटवारी व कारकून होते थे।

- **सैन्य संगठन (Military organisation)** :– दिल्ली सल्तनत का शासन सैनिक शक्ति पर आधारित था। वि"ाल साम्राज्य के राज्य विस्तार की नीति, बाहरी आक्रमण से रक्षा, आंतरिक विद्रोहों को कुचलने के लिए सल्तनतकालीन प्र"ासन के अंतर्गत एक मजबूत सैन्य संगठन की व्यवस्था थी। सल्तनतकालीन सैन्य व्यवस्था के अंतर्गत इल्तुतमि"ा द्वारा स्थापित केन्द्रीय सेना को 'ह"म–ए–कल्ब' या 'कल्ब–ए–सुल्तानी' के नाम से जानते थे। जबकि सामंतों व प्रांतपतियों की सेना को ह"म–ए–अतराफ कहा जाता था। शाही घुड़सवार सेना को सवार–ए–कल्ब कहा जाता था।

  सल्तनतकालीन सेना मुख्यतः तीन भागों – घुड़सवार सेना, हस्ति (हाथी) सेना और पदाति (पैदल) या पाचक सेना में विभक्त थी। संख्या की दृष्टि से पैदल सेना सबसे बड़ी होती थी परन्तु सामरिक दृष्टि से घुड़सवार सेना महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। सल्तनतकाल में बारूद की सहायता से गोला फेंकने की म"ाीन को मंगलीक तथा अर्राट कहा जाता था। सुल्तान के पास नावों का एक बेडा होता था जिसका संचालन 'मीर बहर' नामक अधिकारी के हाथ में होता था। इनका उपयोग सैनिक सामान को ढोने में किया जाता था। सल्तनतकाल में सैन्य संगठन व इनमें सुधार के दृष्टिकोण से बलबन व अलाउद्दीन खिलजी का काल सर्वश्रेष्ठ रहा। बलबन ने सर्वप्रथम दीवान–ए–अर्ज के नाम से सैन्य विभाग बनाया। सेना पुनर्गठन किया। नकद वेतन देना आरंभ किया। जागीर की प्रथा को समाप्त कर दिया।

  सैनिक सुधार की दृष्टि से अलाउद्दीन खिलजी बलबन से आगे बढ़ते हुए सर्वप्रथम स्थायी सेना का गठन किया। घोड़ों को दागने एवं सैनिकों का हुलिया रखने की प्रथा चलायी। उसने इक्ता प्रथा को पूरी तरह से समाप्त करते हुए नकद वेतन दिया। परंतु फिरोज"ाह के काल में नकद वेतन के स्थान पर पुनः इक्ता देने की प्रथा को आरंभ कर सैनिक के पद को आनुवं"ाक बना दिया जिससे सैन्य संगठन कमजोर हुआ। सल्तनत काल में सैन्य व्यवस्था के अंतर्गत अच्छी नस्ल के घोडे तुर्की, अरब एवं रूस से मंगाये जाते थे तथा हाथी मुख्यतः बंगाल से प्राप्त होते थे।

- **न्याय एवं दण्ड व्यवस्था (Arrangement of justice and Punishment)** :– सलतनतकालीन प्र"ानिक व्यवस्था का सर्वाधिक दुर्बल एवं अनियमित पक्ष न्याय प्र"ासन का था। इस काल में सुल्तान ही न्याय का प्रमुख स्त्रोत था। उसका न्याय ही अन्तिम न्याय होता था। न्याय विभाग का अध्यक्ष भी वही होता था। धार्मिक मुकदमों का निर्णय करते समय सुल्तान मुख्य सद्र तथा मुफ्ती की सहायता लेता था। धर्म से अलग मामलों के निपटारा के समय वह काजी की सहायता लेता था।

बड़े नगरों में न्यायिक व्यवस्था के लिए अमीर–ए–दाद नामक पदाधिकारी होता था। उसक मुख्य कार्य अपराधियों को गिरफ्तार करना तथा काजी की सहायता से मुकदमों का निर्णय करना होता था। सुल्तान के प"चात् सबसे बड़ा न्यायअधिकारी मुख्य काजी अर्थात् अमीर–ए–दाद होता था। जिसकी नियुक्ति सुल्तान द्वारा की जाती थी। काजी प्रायः दीवानी मुकदमों का निर्णय करता था। प्रत्येक नगर में फौजदारी मुकदमों का फैसला कोतवाल करता था। गाँवों में मुकदमों के निर्णय पंचायत करती थी। इनमें सरकार का हस्तक्षेप नहीं होता था।

सल्तनतकाल में न्यायलयों में कुरान के नियमों के अनुसार हिन्दू व मुसलमान दोनों के मामले निपटाये जाते थे। इस समय न्याय व्यवस्था में मुस्लिम कानून के चार महत्वपूर्ण स्त्रोतों का प्रयोग होता था। ये थे – कुरान, हदीस, इजमा एवं कयास।

सल्तनतकाल में दण्ड व्यवस्था अत्यधिक कठोर था। अपराधियों को सामान्यतः अंगछेदन और मृत्युदण्ड दिया जाता था। अपराध स्वीकार करवाने के लिए अभियुक्तों को यातनाएं दी जाती थी।

14.3.2 सल्तनतकालीन राजस्व व्यवस्था (Revenue system under Sultan period) :-

दिल्ली सल्तनत में राजस्व व्यवस्था का सिद्धान्त गजनवी के पूर्वाधिकारियों के द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले प्रथाओं पर आधारित थी। इस काल में राजकीय धन की प्राप्ति के लिए सुल्तानों ने संख्ती के साथ विभिन्न प्रकार के कर वसूले। जिन्हे धार्मिक और धर्म निरपेक्ष कर के रूप में भी बांटा जाता है। सल्तनत काल में राजकीय धन का व्यय जिन मुख्य क्षेत्र में होता था, उनमें प्रमुख है – सुल्तान का परिवार, सैनिक तथा नागरिक सेवाएं, धर्मार्थ अथवा पुण्यार्थ दान, युद्ध और विद्रोह, खलीफा को दी जाने वाली भेंट तथा सल्तनत के बाहर धार्मिक स्थानों को दिया जाने वाला दान आदि। इसके लिए वि"ाल धन की आव"यकता थी। अतः सल्तनत काल में राजस्व की प्राप्ति के लिए प्र"ासन के अंतर्गत कई प्रकार के करों की व्यवस्था की गयी थी जिनका वर्णन निम्न प्रकार है –

- **जकात** :– यह धार्मिक कर संपन्न वर्ग के मुसलमानों से लिया जाता था जो आय का 1/40 भाग अर्थात 2.5 प्रति"ात होता था। इस कर की वसूली में बल प्रयोग पूर्णतः वर्जित था। इस कर द्वारा प्राप्त आय का सम्पूर्ण भाग मुसलमानों के कल्याण पर खर्च किया जाता था। एक अन्य धार्मिक कर 'सदका' का उल्लेख मिलता है। जिसे कभी –कभी जकात ही मान लिया जाता था।

- **उश्र** :– मुसलमानों से उनकी भूमि की उपज पर लिया जाने वाला कर उश्र कहलाता था। इस कर से वक्फ, नाबालिग एवं दास भी मुक्त नहीं थे। इस कर की वसूली में बल प्रयोग किया जा सकता था। यह कर प्राकृतिक साधनों से सिंचित भूमि की उपज का 1/10 भाग तथा मानव निर्मित साधनों से सिंचित भूमि की उपज का 1/5 भाग लिया जाता था।
- **जजिया** :– गैर मुसलमानों से उनकी सम्पत्ति, सम्मान की सुरक्षा एवं सैनिक सेवा से मुक्त रहने के लिए लिया जाने वाला कर जजिया कर था। इस कर से स्त्रियाँ, बच्चे, भिखारी एवं लँगड़े मुक्त थे। यद्यपि ब्राह्मण इस कर से मुक्त थे फिर भी फिरोज तुगलक ने इस कर को ब्राह्मणों पर भी लगाया। यह कर संपन्न वर्ग से 40 टंका, मध्यम वर्ग से 20 टंका एवं सामान्यवर्ग से 10 टंका प्रतिवर्ष लिया जाता था।
- **खराज** :– गैर मुसलमानों की भूमि पर लगाया जाने वाला कर 'खराज' था। इस कर के रूप में उपज का 1/3 से 1/2 भाग तक वसूल किया जाता था।
- **खुम्स** :– लूट के धन से प्राप्त आय पर लगाये जाने वाले कर को खुम्स/खम्स कर कहते थे। इस धन का 1/5 भाग राजकोष में तथा 4/5 भाग सैनिकों में बाँट दिया जाता था। परंतु अलाउद्दीन एवं मुहम्मद तुगलक इस व्यवस्था को उलट दिया। इन दोनों ने लूट के धन का 4/5 भाग राजकोष में जमा करवाया तथा शेष 1/5 भाग सैनिकों में बाँटा।

उपर्युक्त करों के अतिरिक्त सल्तनत काल में आयात कर व्यापारिक वस्तुओं के लिए 2.5 प्रति"ात जबकि घोड़ों के लिए 5 प्रति"ात थी। आयाज कर की दर गैर मुसलमानों के लिए मुसलमानों से दुगुनी थी। इसके अतिरिक्त मकान कर, चारागाह कर, सिंचाई कर तथा अन्य साधारण कर भी वसूल किए जाते थे। जो लोग निस्संतान मर जाते थे और जिनका कोई वारिस नहीं होता था उनकी संपत्ति राज्य की हो जाती थी। अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में दो नवीन कर लगाये गये थे – चराई कर व घरी कर।

'चराई कर' दुधारू प"ुओं पर लगाया जाता था जबकि घरों एवं झौपड़ियों पर लगाया जाने वाला कर 'घरी कर' था जिसे 'करी' या 'कर ही' के नाम से भी पुकारते थे।

फिरोज"ाह तुगलक ने अपने शासनकाल में उलेमाओं के आदे"ा पर सिंचाई कर के नाम से एक नया कर लगाया था। यह सिंचाई कर उपज का 1/10 भाग वसूला जाता था।

14.3.3 सल्तनतकालीन लगान व्यवस्था (Rent Arrangements under Sultanate period) :-

सल्तनत काल में बंटाई प्रणाली के द्वारा लगान का निर्धारण किया जाता था। जिसमें राज्य की ओर से प्रत्यक्ष रूप से जमीन की पैदावार से हिस्सा लिया जाता था। इसे दो तरीके से किया जा सकता था। एक फसल तैयार होने के समय सरकारी अधिकारी कुल पैदावार का मूल्य निर्धारित करके करों को तय करते थे और दूसरा तैयार फसलों की माप तौल के आधार पर कर का निर्धारण किया जाता था। दूसरी विधि को बंटाई किस्मत–ए–गल्ला, गल्ला बक"ी व हासिल के नाम से जानते थे। सल्तनत काल में निम्न तीन प्रकार की बंटाई विधि प्रचलन में थी।

(i) खेत बंटाई – खड़ी फसल या बुवाई के समय ही खेत बांटकर कर का निर्धारण करना खेत बंटाई कहलाता था।

(ii) लंक बंटाई– फसल काटने के बाद खलिहान में लाये गये अनाज से भूसा निकाले बिना ही किसान एवं सरकार के बीच करों के बंटवारा को लंक बटाई कहा जाता था।

(iii) रास बंटाई – खलिहान में अनाज से भूसा अलग करने के बाद कर के निर्धारण की प्रणाली को रास बंटाई कहा जाता था।

बंटाई व हासिल की यह प्रणाली सल्तनत के प्रत्यक्ष शासन क्षेत्र में अपनाई गई थी।

सल्तनत काल में लगान निर्धारण की मिश्रित प्रणाली को 'मुक्ताई' के नाम से जानते थे।

दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत आर्थिक सुधारों के लिए प्रसिद्ध अलाउद्दीन खिलजी ने लगान निर्धारण की 'मसाहत' प्रणाली की शुरूआत की। इस प्रणाली के अंतर्गत भूमि की नाप–जोख करके उसके क्षेत्रफल के आधार पर उपज का लगान नि"चत किया जाता था।

गयासुद्दीन तुगलक के शासन काल में खेतों के माप द्वारा कर निर्धारण प्रणाली को छोड़कर 'हम्स–ए–हासिल' को अपनाया गया।

सल्तनतकाल में लगान व्यवस्था के अंतर्गत समस्त भूमि को 4 वर्गों में विभाजित किया गया था।

(i) खालसा भूमि – सरकारी नियंत्रण वाली भूमि को खालसा भूमि कहते थे। इस भूमि से कर वसूलने का कार्य राजस्व विभाग के पदाधिकारी चौधरी एवं मुकद्दम होते थे। प्रांत स्तर से नीचे की प्र"ासनिक इकाई ि"ाक (जिला) में इस भूमि से कर वसूलने का कार्य आमिल नाम का अधिकारी करता था।

(ii) इक्ता की भूमि – इक्ता की भूमि की देख–भाल 'मुक्ति' करते थे। इस भूमि से 'मुक्ति' व 'वली' लगान वसूलने का कार्य करते थे। लगान वसूल करने के बाद मुक्ती अपना खर्च अलग कर

शेष धन को सरकारी खजाने में जमा कर देता था। मुक्ती व वली के ऊपर ख्वाजा नाम का अधिकारी होता था जो इनके कार्यो का निरीक्षण करता था।

(iii) सामंतों की भूमि – यह भूमि सल्तनत की अधीनता स्वीकार करने वाले हिन्दू सामंतों व राजाओं की होती थी जिसके बदले प्रतिवर्ष एक निर्”चत मात्रा में धन कर के रूप में सरकारी कोष में जमा करते थे।

(iv) इनाम व वक्फ – राज्य के अंतर्गत दान के रूप में वि”ोष लोगों को दी गई मुक्त भूमि इनाम व वक्फ भूमि कहलाती थी। इस भूमि को पाने वालों का भूमि पर वं”ाानुगत अधिकार होता था।

सल्तनतकाल में किसानों को लगान के रूप में उपज का 1/3 से लेकर 1/2 भाग तक राज्य को देना होता था। अलाउद्दीन के समय में भूमि कर को 50 प्रति”ात कर दिया गया था। अलाउद्दीन एवं मुहम्मद तुगलक ने भूमि की पैमाइ”ा के आधार पर लगान को निर्धारित किया। अलाउद्दीन ने दान के रूप में दी गई अधिकां”ा भूमि को छीन कर इसे खालसा भूमि में बदल दिया। उसने लगान को दिल्ली के आस–पास के क्षेत्रों एवं दोआब से अनाज के रूप में वसूल किया। सल्तनत काल में सबसे अधिक नहरों का निर्माण करने वाला सुल्तान फिरोज तुगलक था। उसके द्वारा बनवायी गयी सबसे महत्वपूर्ण नहरों में 'राजवाही' और 'उलूगखनी' प्रमुख थीं। उसने सिंचाई की सुविधा के बदले एक नवीन कर सिंचाई कर वसूला।

इस प्रकार दिल्ली सल्तनत प्र”ाासन के अंतर्गत एक नि”चत लगान व्यवस्था थी। जिससे राज्य को सुनिर्”चत रूप से लगान प्राप्त होता था।

14.3.4 सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था (Economy under Delhi Sultanate period) :-

सल्तनतकाल में भारत आर्थिक दृष्टि से विकसित था। इस काल के गाँव कृषि व छोटे–मोटे उद्योग धंधों के साथ एक आत्मनिर्भर आर्थिक इकाई के रूप में था। इस काल में बड़े–बड़े नगरों का विकास हुआ। कई प्रकार के नवीन उद्योगों का विकास हुआ। व्यापार जल व थल दोनों मार्गों से होता था। आंतरिक व बाह्य दोनों दृष्टि से व्यापार व वाणिज्य का विकास हुआ। अलाउद्दीन खिलजी ने महत्वपूर्ण आर्थिक सुधारों के द्वारा बाजार नियंत्रण प्रणाली स्थापित करके व्यापार की सुनिर्”चत प्रणाली विकसित की जिससे अर्थव्यवस्था को बल मिला। इस प्रकार सल्तनत काल की विकसित अर्थव्यवस्था की मुख्य वि”ोषतायें निम्न थी।

(i) कृषि (Agriculture) :- सल्तनत काल में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि ही था। अधिकां"ा लोग कृषि के द्वारा ही अपना जीवन यापन करते थे। खेती परंपरागत तरीकों से की जाती थी। सिंचाई के लिए मुख्य रूप से वर्षा पर ही किसान निर्भर रहते थे। परंतु कुंओं और नहरों से भी सिंचाई की व्यवस्था की जाती थी। भारतीय किसान ईरानी पद्धति पर आधारित रहर वाले कुओं का इस्तेमाल भी सिंचाई के रूप में करते थे। गयासुद्दीन तुगलक सर्वप्रथम नहर बनवाने वाला सुल्तान था तो फिरोज तुगलक ने सिंचाई हेतु सर्वाधिक नहरें बनवाये। उसने इस सुविधा के बदल सिंचाई कर भी लगाये। मुख्य फसलें गेहूँ, मक्का, ज्वार, जौ, चावल, विभिन्न दालें, कपास, गन्ना, सरसों आदि की होती थी। इस काल में जागीरदार किसानों से जिन्स अथवा नकदी के रूप में पैदावार का अधिक भाग बटोर कर उन पर बहुत अधिक अत्याचार करते थे। भूमि कर प्रायः उपज का 1/3 भाग लिया जाता था। परंतु अलाउद्दीन खिलजी तथा मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने समय में उपजाऊ भूमि से उपज का 1/2 भाग कर के रूप में वसूला। इसके अतिरिक्त किसानों को अन्य कर भी देने पड़ते थे। अतः किसानों की आर्थिक व्यवस्था अच्छी नहीं थी। अकाल तथा युद्धों की स्थिति में तो इनकी द"ा और भी दयनीय हो जाती थी।

(ii) ग्रामीण उद्योग धंधे (Rural industries business) :- ग्राम के लोगों का मुख्य पे"ा कृषि था परंतु खेती के अतिरिक्त अलग–अलग उद्योगों व धंधों के लोग भी रहते थे। ग्राम में लुहार, बढई, कुम्हार, जुलाह, मोची, धोबी, वैद्य, नाई, ग्वाले अथवा गुज्जर, कहार आदि अपने धंधे चलाते थे। इन सब धंधों के लोग इक्ट्ठे मिलकर ग्राम की सभी आव"यकताओं की पूर्ति कर देते थे। इस प्रकार आर्थिक दृष्टि से प्रत्येक ग्राम एक आत्मनिर्भर इकाई के समान था।

(iii) प्रसिद्ध नगरों का विकास (Famous cities for development) :- सल्तनत काल में प्र"ासन, वाणिज्य, व्यापार व उद्योगों के विकास के कारण उच्च कोटि के नगरों का विकास हुआ। उस काल में भारत प्रसिद्ध नगर थे – दिल्ली, मुलतान, जालन्धर, सरहिन्द, सुल्तानपुर, स्थालकोट, रोपड़, पठानकोट, समाना, हांसी, हिसार, भटिंडा, मेरठ, मथुरा, बनारस, इलाहाबाद, जौनपुर, पटना, लखनौती, सोनारगांव, भड़ौच, कैम्बे आदि। नगर की रक्षा के लिए इसके चारों ओर प्रायः दीवार बनी होती थी। ये नगर अलग–अलग प्रकार की कला व उद्योग के लिए प्रसिद्ध थे जिनसे अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन मिला। नगर की साफ–सफाई करने वाले मेहतर तथा निर्धन भिखारी लोग प्रायः नगर के बाहर रहते थे।

(iv) प्रमुख उद्योग (Key Industries) :- सल्तनत काल में अनेक प्रकार के उद्योग कपड़े, धातु, चीनी, नील, चर्म, कागज आदि का विकास हुआ। दिल्ली के सुल्तानों के द्वारा कई कारखाने स्थापित किये गये जिनमें अनेक वस्तुयें तैयार की जाती थी। इन कारखानों को शाही कारखाना कहा जाता था। शाही परिवार की विभिन्न वस्तुओं के लिए बड़े पैमाने पर मांग होती थी। इन शाही कारखानों में अनेक प्रकार के कपड़े के अतिरिक्त जूते, टोपियां, पर्दे, अस्त्र–"ास्त्र, घोड़ों की काठियां आदि तैयार की जाती थी। रे"ामी कपड़े तैयार करने के लिए 4000 से अधिक जुलाहे कारखाने में काम करते थे। हमें कारखानों में काम करने वाले कारीगरों एवं श्रमिकों की वेतन व मजदूरी के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नही होता है। राज्य की ओर से ि"ाल्पकार कोई भी वस्तु तैयार कर स्वतंत्रतापूर्व व्यापार करने व बेचने के लिए पूर्ण स्वतंत्र थे। केवल अलाउद्दीन के काल में दिल्ली के आस–पास के प्रदे"ाों में वस्तुओं के भाव नि"चित कर दिये गये थे तथा बाजार नियंत्रण प्रणाली के अंतर्गत व्यापार के लिए सुनि"चत नियम बनाये गये थे। इस काल में सतगांव रे"ामी रजाइयों के लिए, आगरा नील उद्योग के लिए, बनारस सोने, चाँदी एवं जरी के काम के लिए प्रसिद्ध था। सरसुती अच्छे किस्म के चावल के उद्योग के लिए प्रसिद्ध था।

(v) व्यापार एवं वाणिज्य (Trade and Commerce) :- सल्तनत काल में आंतरिक तथा विदे"ाी दोनों प्रकार के व्यापार को बहुत प्रोत्साहन मिल रहा था। छोटे नगरों में तैयार वस्तुओं को दिल्ली, लाहौर, मुलतान, भड़ौच, कैम्बे, लखनौती आदि बड़े नगरों में ले जाकर व्यापारी बेचा करते थे। माल ढुलाई का कार्य, बैलगाड़ियां, ऊँट, खच्चर आदि के द्वारा बंजारे करते थे। नगरों में समय–समय पर मेले लगते थे जिनमें छोटे नगरों व गाँवों के दुकानदार माल खरीदकर अपनी दुकानों में रख लेते थे और इससे लोगों की आव"यकता की पूर्ति होती थी। प"ुओं के व्यापार के लिए समय–समय पर प"ुओं की मण्डियां लगती रहती थी। राज्य की ओर से व्यापार हेतु पर्याप्त सड़कों की व्यवस्था थी। सबसे लम्बी सड़क पे"ावर से लाहौर और दिल्ली से होती हुई सोनारगाओं तक जाती थी। मुहम्मद बिन तुगलक ने दिल्ली से देवगिरी तक की नई सड़क का निर्माण करवाया था। दिल्ली को लाहौर के अतिरिक्त मुल्तान से भी सड़क द्वारा मिला दिया गया था। चोर डाकुओं से बचने के लिए व्यापारी बड़े–बड़े काफिलों में अपने माल सहित एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाते थे।

विदे"ाों से वस्तुएँ मंगाई एवं भेजी जाती थी। व्यापार जल एवं थल दोनों मार्गों से होता था। इस समय भारत से विदे"ाों से भेजी जाने वाली महत्वपूर्ण वस्तुएँ थी – लोहा, हथियार, अनाज,

सूतीवस्त्र, जड़ी–बूटी, मसाले, फल, शक्कर, नील आदि। बाहर से आयात की जाने वाली महत्वपूर्ण वस्तुओं में घोड़े, अस्त्र–"ास्त्र, दास, मेवे, फल आदि। भारत में उत्तम नस्ल के घोड़े, अरब, तुर्किस्तान, रूस व ईरान से मंगाये जाते थे।

स्थल मार्ग द्वारा भारत का व्यापार अफगानिस्तान, मध्य एि"ाया, ईरान, इराक आदि से होता था। जिनमें हिन्दू मुलतानियों, अफगान एवं ईरानी, इराक आदि से होता था जिनमें हिन्दू मुलतानियों अफगान एवं ईरानी खुरासानियों का दबदबा कायम था। जलमार्ग द्वारा भारत का व्यापार अफ्रीका, दक्षिण–पूर्वी एि"ाया के दे"ाों, चीन आदि के साथ चलता था जिनमें मारवाड़ी तथा गुजराती व बोहरा जाति के मुसलमान बढ़–चढ़ कर भाग लेते थे।

सल्तनत काल के महत्वूपर्ण व्यापारिक केन्द्र के रूप में दिल्ली, थट्टा, देवल, सरसुती, अन्हिलवाड़, सतगाँव, सोनार गाँव, आगरा, वाराणसी, लाहौर आदि प्रसिद्ध थे। देवल सल्तनत काल में अंर्तराष्ट्रीय बंदरगाह के रूप में प्रसिद्ध था। गुजरात में कैम्बे बंदरगाह भी सुप्रसिद्ध थी। सरसुती अच्छे किस्म के चावल के लिए अन्हिलवाड़ व्यापारियों के तीर्थस्थल के रूप में, सतगाँव रे"ामी रजाइयों के लिए, आगरा नील उत्पादन के लिए एवं बनारस सोने, चाँदी एवं जरी के काम के लिए प्रसिद्ध था।

(v) कीमत नीति (Price Policy) :- सल्तनतकाल में सदैव चीजों की कीमतें एक जैसी नहीं होती थी। अकाल के समय अनाज तथा अन्य वस्तुओं के मूल्य बढ़ जाते थे। सामान्य परिस्थितियों में भी सभी सुल्तानों के शासन काल में विभिन्न वस्तुओं के मूल्यों में अन्तर था। आर्थिक सुधारों के लिए प्रसिद्ध अलाउद्दीन खिलजी ने अपने शासन काल में आव"यक वस्तुओं के भाव नि"चत कर दिये थे। अतः उसके समय में चीजें सस्ती थी। मुहम्मद तुगलक के समय में वस्तुओं के मूल्यों पर नियंत्रण नहीं रहा और इसके काल में कीमतें बढ़ गई परन्तु इसके बाद शासक बना फिरोज तुगलक के समय कीमतें घट गई। ऐतिहासिक विवरण से पता चलता है कि इस काल में सामान्यतः चीजों की कीमतें इतनी थी कि एक साधारण परिवार का एक मास में पांच टंकों से गुजारा चल सकता था।

14.4.1 सल्तनतकालीन स्थापत्य कला (Architecture during Sultanate period) :-

यद्यपि दिल्ली सल्तनत एक सैनिक शक्ति पर आधारित राज्य था। सल्तनत के सुल्तानों का अधिका"ा समय व धन राज्य विस्तार व अपने क्षेत्र को आंतरिक विद्रोहों तथा बाहरी आक्रमणों से

सुरक्षित करने के चक्कर में सैनिक अभियानों में ही लगा रहा। फिर भी इन सुल्तानों के काल में भारत में कला का विकास हुआ जिसमें खासकर स्थापत्य या वास्तुकला अर्थात् भवन निर्माण कला का वि"ाष्ट स्थान रहा। सल्तनत काल में वास्तुकला के क्षेत्र में सुल्तानों ने मस्जिदों, मकबरों, मीनारों एवं अन्य भवनों का निर्माण किया जिनमें अलग–अलग व"ाों के निर्माणों में भिन्नता का द"ान होता है। गुलाम काल के स्थापत्य कला में जहाँ हिन्दू शैली का प्रत्यक्ष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है वहीं खिलजीकालीन इमारतें साज–सज्जा, भव्यता एवं सुन्दरता के लिए जानी जाती है। साज–सज्जा से अलग तुगलक काल की इमारतें सादगी के सूचक है। सैय्यद व"ा तक आते–आते स्थापत्य कला का पतन आरंभ हो गया और लोदी व"ा दिल्ली सल्तनत के अंतिम व"ा तक स्थापत्य कला मृतप्राय अवस्था में पहुँच गया। सैय्यद तथा लोदी व"ा के स्थापत्य कला की वि"ाषता थी – गुम्बदों की प्रधानता।

इस प्रकार वास्तव में सल्तनतकालीन भारतीय स्थापत्य कला के क्षेत्र में जिस शैली का प्रयोग हुआ उनमें स्थानीय भारतीय शैली व इस्लामी शैली दोनों के मिले–जुले रूप दिखाई पड़ते है। इसीलिए इस काल के स्थापत्य कला की इस शैली को इण्डो–इस्लामिक शैली कहा गया। कुछ विद्वानों ने इस इण्डो–सारसेनिक शैली भी कहा है। विद्वान फग्यूर्सन महोदय ने इस शैली को पठान शैली कहा है, किन्तु यह वास्तव में भारतीय एवं इस्लामी शैलियों का मिश्रण था। सर जॉन मा"ाल, ई"वरी प्रसाद जैसे इतिहासकारों ने अपने विवरणों में इनका वर्णन करते हुये व स्थापत्य कला की इस शैली को इण्डो–इस्लामिक शैली व हिन्दू–मुस्लिम शैली कहने पर बल दिया। इस स्थापत्य कला शैली की प्रमुख वि"ाषताएँ निम्न प्रकार थी।

(i) सल्तनतकाली शासकों द्वारा स्थापत्य कला में भारतीय शैली के साथ–साथ ईरानी कलाओं के प्रयोग का भी द"ान होता है। अतः भारतीय ईरानी शैलियों का मिश्रण इस स्थापत्य कला की एक प्रमुख वि"ाषता है।

(ii) दिल्ली सल्तनत के काल में निर्मित किला, मकबरा, मस्जिद, महल एवं मीनारों में नुकीले मेहराबों–गुम्बदों तथा संकरी एवं ऊँची मीनारों का प्रयोग बहुतायत में मिलता है। अतः नुकीले मेहराब, गुम्बद व मीनार इस स्थापत्य कला की वि"ाषता है।

(iii) सल्तनतकाल के सुल्तानों ने मंदिरों को तोड़कर उनके अव"ाष पर मस्जिद बनाये जिनमें परंपरा से हटकर एक नवीन ढंग के पूजाघर का निर्माण किया गया।

(iv) इस काल में सुल्तानों, अमीरों एवं सूफी संतो ंके याद में मकबरों के निर्माण की परम्परा की शुरूआत हुई जिसे आगे चलकर मुगल वं"ा वालों ने भी अपनाया।

(v) इमारतों की मजबूती को ध्यान में रखते हुए निर्माण कार्यों में पत्थर, कंकरीट व उत्तम किस्म के चूने का प्रयोग किया गया।

(vi) सल्तनतकाल में पहली बार निर्माण कार्यो में परंपरागत तौर तरीकों के साथ–साथ वैज्ञानिक ढंग से मेहराब एवं गुम्बर का प्रयोग देखने को मिलता है। यह कला भारतीयों ने अरबों से सीखी। तुर्क सुल्तानों ने गुम्बद और मेहराब के निर्माण में ि"ाला एवं शहतीर दोनों प्रणालियों का उपयोग किया।

(vii) इस्लामी धार्मिक मान्यता के अनुसार जीवित वस्तुओं को चित्रण की मनाही होने के कारण सल्तनतकालीन स्थापत्य कलाओं में साज–सज्जा के रूप में अनेक प्रकार के फूल–पत्तियाँ, ज्यामितीय आकृतियाँ एवं कुरान की आयतों का प्रयोग किया जाता था। आगे चलकर तुर्क सुल्तानों ने इनके साथ–साथ साज–सज्जा में हिन्दू शैली का भी प्रयोग आरंभ कर दिया। हिन्दू साज–सज्जा की कमलबेल के नमूने, स्वास्तिक, घंटियों के नमूने, कल"ा आदि का भी प्रयोग किया जाने लगा। अलंकरण की संयुक्त विधि को इस काल में अरबस्क' विधि कहा गया।

सल्तनतकालीन वास्तुकला के विकास को अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से तीन भागों में बाटाँ जा सकता है – गुलाम तथा खिलजी काल में वास्तुकला, तुगलक काल में वास्तुकला व सैय्यद व लोदी काल में वास्तुकला।

14.4.2. गुलाम तथा खिलजी काल में वास्तुकला/स्थापत्य कला (Architecture during slave and Khilji period) :-

1206 ई. में दिल्ली सल्तनत की स्थापना के साथ ही इण्डो–इस्लामिक स्थापत्य शैली के क्रमिक विकास की प्रक्रिया आरंभ हुई। सल्तनत काल में स्थापत्य कला के विकास का यह काल प्रथम अवस्था के रूप में माना जाता है। इसके अंतर्गत सल्तनत का प्रथम वं"ा गुलाम वं"ा या ममलूक वं"ा के द्वारा जो निर्माण कार्य किये गये उनमें हिन्दू शैली के प्रत्यक्ष प्रभाव देखने को मिलते है। इनमें स्तंभों का प्रयाग मंदिरों के समान प्रतीत होते है। इनकी दीवारें चिकनी एवं मजबूत है। पहली बार हिन्दू कारीगरों द्वारा मेहराबदार दरवाजे बनाये गये। मस्जिदों के चारों तरफ मीनारों का प्रयोग

उच्च विचारों की प्रतीक है। इस प्रकार गुलाम वं"ा या ममलूक वं"ा के सुल्तानों द्वारा जो निर्माण कार्य किये गये उन्हें ममलूक शैली के नाम से भी जानते है। इस शैली के उत्कृष्ट निर्माण कार्य निम्न प्रकार है :–

- **कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद** :– कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा दिल्ली विजय के उपलक्ष्य में तथा इस्लाम धर्म को प्रतिष्ठित करने के उद्दे"य से 1192 ई. के तराइन के युद्ध के बाद किला रायपिथौरा (दिल्ली) में इस मस्जिद का निर्माण करवाया। इसे हिन्दू एवंज ैन मंदिरों के अव"ोष पर बनाया गया है। अतः इसमें हिंदू शैली का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है। इण्डो–इस्लामिक शैली में निर्मित स्थापत्य कला का यह प्रथम नमूना है। 1230 ई. में इल्तुतमि"ा ने मस्जिद के प्रांगण को दुगुना कराया। अलाउद्दीन खिलजी ने भी इस मस्जिद का विस्तार कराया तथा कुरान की आयतें लिखवायी।
- **कुतुबमीनार** :– सूफी संत ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी की स्मृति में कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1206 ई. में इसका निर्माण कार्य आरंभ किया तथा 1231 ई. में इल्तुतमि"ा ने ऐबक की मृत्यु के बाद इसके निर्माण कार्य को पूरा किया था। यह दिल्ली से 12 मील दूर मेहरौली गाँव में स्थित है। इल्तुतमि"ा द्वारा निर्माण कार्य पूरा करवाने के बाद यह इमारत सात मंजिलों की 71.4 मीटर ऊँची थी। वर्तमान में इसकी 4 मंजिले ही सुरक्षित है शेष तीन मंजिलें क्षतिग्रस्त अवस्था में है। तुफान के कारण क्षतिग्रस्त हुए मीनार के कुछ भागों की मरम्मत फिरोज"ाह तुगलक एवं सिकन्दर लोदी ने करवाया था। पर्सी ब्राउन का मानना है कि, 'कुतुबमीनार का निर्माण वि"व के समक्ष इस्लाम की शक्ति के उद्घोष के लिए किया गया था। यह न्याय, प्रमुखता तथा धर्म के स्तंभ स्वरूप का प्रतीक थी। उन्होंने इसे पूर्व तथा पि"चम पर अल्लाह की छाया का प्रतीक माना है।' ऊपर चढ़ने के लिए मीनार में 375 सीढियाँ बनाई गई है।
- **अढ़ाई दिन का झोपड़ा** :– विग्रहराज बीसलदेव द्वारा निर्मित सरस्वती जैन विद्या मंदिर को तुड़वाकर कुतुबुद्दीन ऐबक ने इसके अव"ोष पर अजमेर में अढ़ाई दिन का झोपड़ा के नाम से मस्जिद का निर्माण करवाया। मा"ाल का कहना है कि क्योंकि इस मस्जिद का निर्माण मात्र ढ़ाई दिन में किया गया इसलिए इसे अढ़ाई दिन का झोपड़ा कहा जाता है। जबकि पर्सी ब्राउन का कहना है कि यहाँ एक झोपड़ी के पास अढ़ाई दिन का मेला लगता था, इस कारण इसका नाम अढ़ाई दिन का झोपड़ा पडा। इसमें पाँच मेहराबदार दरवाजे के साथ–साथ इसके प्रत्येक कोने में चक्राकार एवं बाँसुरी के आकार की मीनारें बनाये गये हैं।

- **नासिरूद्दीन का मकबरा या सुल्तानगढ़ी का मकबरा** :– इल्तुतमि"ा ने अपने सबसे बड़े पुत्र नासिरूद्दीन की याद में 1231 ई. में दिल्ली के निकट मलकापुर में जिस मकबरे का निर्माण कराया था वह स्थापत्य की दृष्टि से अत्यंत उल्लेखनीय है। तुर्क सुल्तानों द्वारा भारत में निर्मित यह पहला मकबरा था इसलिए इल्तुतमि"ा को मकबरा निर्माण शैली का जन्मदाता भी कहा जाता है। इस मकबरे के निर्माण में कहीं भूरे रंग का पत्थर तो कहीं संगमरमर का प्रयोग किया गया है। मकबरे की चारदीवारी के मध्य में लगभग 66 फूट का आंगन है। आंगन के बीच में अष्टकोणीय चबूतरा निर्मित है जो धरातल में मकबरे की छत का काम करता है। मस्जिद में निर्मित महराबों में मुस्लिम कला एवं पूजास्थल तथा गुम्बद के आकार की छत में हिन्दू कला शैली का प्रभाव दिखाई पड़ता है।
- **इल्तुतमिश का मकबरा** :– इल्तुतमि"ा ने अपने बड़े पुत्र की याद में मकबरे का निर्माण कराने के बाद 1235 ई. में कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद के निकट अपने लिये भी मस्जिद का निर्माण करवाया। इस मकबरे पर कुरान की आयतें सुंदर ढंग से उत्कीर्ण की गई है। इसके गुम्बद में घुमावदार पत्थर का उपयोग किया गया है। इल्तुतमि"ा के मकबरे में सर्वप्रथम हिन्दू शैली को हटाने की कोि"ा"ा की गई थी।
- **मुइनुद्दीन चिश्ती का दरगाह** :– सल्तनतकाल में सूफी संतो ंके लिए खानकाह या दरगाह का निर्माण किया जाता था। इल्तुतमि"ा ने इस परंपरा को ध्यान में रखते हुए चि"ती सम्प्रदाय के आरंभिक संतों में प्रमुख चि"ती के लिए दरगाह का निर्माण करवाया। बाद में अलाउद्दीन खिलजी ने इसका विस्तार किया।

इल्तुतमि"ा के अन्य निर्माण कार्यों में बदायुँ में निर्मित 'हौज–ए–"ाम्सी', '"ाम्मी दरगाह' एवं जामा मस्जिद है। 1223 ई. में निर्मित बदायुँ की यह जामा मस्जिद अपने समय की सर्वाधिक बड़ी एवं मजबूत मस्जिद है। इसका पुर्ननिर्माण मुहम्मद तुगलक एवं अकबर ने करवाया था। 'अतारिकिन' नामक एक वि"ाल दरवाजे का निर्माण 1230 ई. में इल्तुतमि"ा के द्वारा जोधपुर राज्य के नागौर में करवाया गया। बाद में इसका जीर्णाद्धार मुहम्मद तुगलक ने करवाया। मुगल सम्राट अकबर को बुलन्द दरवाजे के निर्माण की प्रेरणा इसी दरवाजे से मिली थी।

इल्तुतमि"ा के बाद गुलामवं"ा के शासक गयासुद्दीन बलबन ने राय–पिथौड़ा किले के समीप स्वयं का मकबरा एवं लाल महल नामक इमारत का निर्माण करवाया। दिल्ली में बना उसका

मकबरा पूर्णतः इस्लामी शैली का है। मकबरे के द्वार की मेहराब भारत में निर्मित तुर्की मेहराबों में सर्वोत्तम है।

गुलाम वं"ा के बाद दिल्ली सल्तनत पर राज करने वाले खिलजी वं"ा को खिलजी क्रांति के नाम से जाना जाता है। गुलाम वं"ा वालों के निर्माण कार्यों में प्रत्यक्ष रूप से हिन्दू शैली का द"ान होता है वहीं खिलजी वं"ा वालों ने अपने निर्माण कार्यों में शुद्ध इस्लामी शैली का प्रयोग किया। इस वं"ा का सबसे प्रसिद्ध शासक अलाउद्दीन खिलजी ने न केवल प्र"ासनिक व आर्थिक सुधार किये बल्कि स्थापत्य कला के विकास में भी उसने महत्वपूर्ण योगदान दिया। खिलजीकालीन स्थापत्य कला में साज–सज्जा, भव्यता एवं सुन्दरता पर अधिक ध्यान दिया गया। अलाउद्दीन ने अनेक निर्माण कार्य शुद्ध इस्लामी शैली के अन्तर्गत करवाया। इसका वर्णन निम्न प्रकार है –

- **सीरी फोर्ट/सीरी नगर की स्थापना** – अलाउद्दीन ने दिल्ली के निकट सीरी नामक गाँव में एक नगर की स्थापना की। बर्नी ने इस नगर को नौ अथवा नया नगर कहा। इस नगर के बाहर उसने एक तालाब एवं उसके किनारे कुछ भवनों का निर्माण करवाया। आज इन स्थानों को हौज–ए–खास या हौज–ए–रानी के नाम से जाना जाता है जो काफी जीर्ण–"ीर्ण स्थिति में है। अमीर खुसरों ने इन स्थानों की प्र"ंसा करते हुए लिखा है कि, पानी के बीच गुम्बद समुद्र की सतह पर बुलबुले के समान है।
- **अलाई दरवाला** – 1311 ई. में अलाउद्दीन खिलजी द्वारा निर्मित अलाई दरवाजा सल्तनतकालीन स्थापत्य कला के इतिहास में वि"िाष्ट स्थान रखता है। इसकी भव्यता एवं साज–सज्जा इसे सर्वश्रेष्ठ इमारत की श्रेणी में ला खड़ा करता है। कुतुबमीनार के चारों और के दरवाजों में से एक है अलाई दरवाजा। इसका निर्माण ऊँचे चबूतरे पर एक चौकोरनुमा इमारत के रूप में किया गया है। इसकी छतें चपटी गुम्बद की भांति है। दरवाजे के बीच वाली मेहराब अपने सुंदर मोड़–चौड़ाई एवं ऊंचाई के अनुपात एव ंवि"िाष्ट सजावट के कारण इस्लामी कला का उत्कृष्ट नमूना है। इतिहासकार सर जॉन मा"ाल ने अलाई दरवाजा को इस्लामी वास्तुकला की अमूल्य निधि कहा है। विद्वान पर्सी ब्राउन कहता है कि अलाई दरवाजा परिमित आकार का है तथा महराबों का आकार तथा अलंकरण इसके सौंदर्य को प्रकट करता है। इतिहासकार मा"ाल ने कहा है कि 'अलाई दरवाजा इस्लामी स्थापत्य कला के खजाने का सबसे बड़ा हीरा है। ''
- **जमात खाँ/जमातखाना मस्जिद** – दिल्ली में सूफी संत निजामुद्दीन औलिया की दरगाह के समीप स्थित इस मस्जिद का निर्माण अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में खिज्र खाँ के द्वारा

करवाया गया। लाल पत्थर से निर्मित यह मस्जिद पूर्णतः इस्लामी शैली के स्थापत्य का शानदार नमूना है। सुंदर मेहराब युक्त जमात खाँ मस्जिद आयताकार है।

खिलजी काल में निर्मित अन्य निर्माण कार्यों में प्रसिद्ध है – भरतपुर में 'उखा मस्जिद' जिसका निर्माण कुतुबुद्दीन मुबारक"ाह खिलजी ने करवाया। इसी काल में खिज्र खाँ द्वारा निर्मित निजामुद्दीन औलिया की दरगाह वि"ोष उल्लेखनीय है।

14.4.3. तुगलक काल में वास्तुकला (Architecture during Tughlaq period) :-

दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत तुगलककालीन वास्तुकला सादगी एवं वि"ालता के लिए प्रसिद्ध है। सल्तनत के पूर्व शासकों की अपेक्षा तुगलक वं"ा के संस्थापक गयासुद्दीन तुगलक ने सादगी एवं मितव्ययितापूर्ण नीति पर अधिक बल दिया। यही कारण है कि खिलजीकालीन स्थापत्य कला के साज–सज्जा, भव्यता व सुंदरता के स्थान पर इस काल में हमें सादगी का द"ान होता है। तुगलक वं"ा के अन्य शासकों ने भी इस परंपरा को बनाये रखा। इसके पीछे इस काल की अपनी समस्यायें भी थी। मुहम्मद तुगलक की प्र"ासनिक समस्याओं एवं धनाभाव के कारण फिरोज तुगलक ने भी साज–सज्जा पर अधिक ध्यान नहीं दिया। इस काल की प्रमुख निर्माण कार्यों का वर्णन इस प्रकार है –

- **तुगलकाबाद** – दिल्ली के समीप स्थित पहाड़ियों पर तुगलक वं"ा का संस्थापक गयासुद्दीन तुगलक ने तुगलकाबाद नाम से नवीन नगर स्थापित किया। इस नगर में रोमन शैली में एक दुर्ग का भी निर्माण करवाया जिसे 'छप्पन कोट' के नाम से जानते है। इस नगर में प्रवे"ा के लिए 52 द्वारों का निर्माण किया गया था। इतिहासकार सरजॉन मा"ाल का कहना है कि इसकी सुदृढ़ता की व्यवस्था धोखा है, क्योंकि इसका निर्माण निम्न कोटि का है। किले के अन्दर सुल्तान ने अपने लिए भव्य राजमहल का निर्माण करवाया जिसमें शाही दरबार तथा जनान खाने का भी निर्माण किया गया। अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता ने कहा कि 'राजमहल सूर्य के प्रका"ा में इतना चमकता था कि कोई भी व्यक्ति उसे टकटकी बाँध कर नहीं देख पाता था।
- **गयासुद्दीन तुगलक का मकबरा** – मिस्त्र (Egypt) के पिरामिडों की तरह अंदर की ओर झुका यह मकबरा तुगलक शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। चतुर्भुजाकार आधार पर टिकी 8 फुट ऊँची इस मकबरे के निर्माण में लाल पत्थरों का प्रयोग किया गया है जबकि इसकी दीवारों में सफेद संगमरमर की पच्चीकारी है। सफेद संगमरमर युक्त गुम्बद के ऊपरी हिस्से में आमलक एवं कल"ा का प्रयोग किया गया है।

- **विजय मण्डल** – अष्टभुजाकार छत युक्त इस स्तम्भनुमा इमारत का निर्माण जहाँपनाह नगर की ऊँची पहाड़ियों पर किया गया है। इसका निर्माण इतिहास में पागल सुल्तान के नाम से प्रसिद्ध मुहम्मद बिन तुगलक ने विजय मण्डल के नाम से करवाया जो कला एवं स्थापत्य का महान संरक्षक था।
- **आदिलाबाद/आदिलशाह का किला** – मुहम्मद तुगलक ने तुगलकाबाद के समीप इस किले का निर्माण करवाया था जो अब मात्र खण्डहर के रूप में बचा हुआ है।
- **जहाँपनाह नगर** – मुहम्मद तुगलक ने इस नगर की स्थापना राय पिथौरा एवं सीरी के मध्य करवाया। इस नगर के अव"ोषों में सात मेहराबों का पुल आज भी मौजूद है जो इस काल के स्थापत्य का सुन्दर नमूना है। विजयमण्डल, जहाँपनाह नगर में ही निर्मित था।
- **बारह खम्भा** – धर्मनिरपेक्ष इमारतों के रूप में प्रसिद्ध बारह खम्भा तुगलककालीन स्थापत्य कला में वि"ोष्ट स्थान रखता है। यह काफी सुरक्षित स्थान था तथा इसका उपयोग आवास के रूप में होता था।
- **दौलताबाद** – मुहम्मद बिन तुगलक ने जब अपनी एक योजना के तहत राजधानी को दिल्ली से दक्षिण भारत स्थित देवगिरी ले जाने का निर्णय लिया तो इस नगर का नाम बदलकर दौलताबाद रखा। उसने इस नगर में बड़े–बड़े भवन तथा सड़के बनवायी। एक सड़क दौलताबाद से दिल्ली तक बनायी गयी। हालांकि बाद में राजधानी को पुनः दिल्ली ले आया गया।

  तुगलक व"ा का शासन फिरोज तुगलक जो मुहम्मद बिन तुगलक के बाद गद्दी पर बैठा की स्थापत्य कला में रूचि के विषय में फरि"ता ने कहा है कि सुल्तान फिरोज तुगलक वास्तुकला का महान् प्रेमी था। उसने 200 नगर, 20 महल, 30 पाठ"ालायें, 40 मस्जिदें, 100 अस्पताल, 100 स्नानगृह, 5 मकबरे एवं 150 पुलों का निर्माण करवाया। फिरोज ने फिरोजाबाद, फतेहाबाद, हिसार, जौनपुर आदि नगरों का निर्माण करवाया। यमुना नदी पर निर्मित नहर इसका महत्वपूर्ण निर्माण कार्य है।
- **कोटला फिरोजशाह** – दिल्ली में फिरोज"ाह तुगलक के द्वारा इस दुर्ग का निर्माण करवाया गया। इसे पाँचवी दिल्ली के नाम से भी जानते है। दुर्ग के अन्दर जन सामान्य के लिए आठ मस्जिदें एवं व्यक्तिगत प्रयोग के लिए एक मस्जिद का निर्माण भी किया गया। दुर्ग के अंदर स्थित जामा मस्जिद के सामने अ"ोक का टोपरा (अंबाला) से लाया गया स्तंभ गड़ा है। मेरठ से लाया गया दूसरा अ"ोक का स्तंभ दुर्ग के अंदर स्थित 'कुटक–ए–ि"ाकार' महल के सामने स्थापित किया गया है। दुर्ग के अन्दर विद्यालय के लिए भी भवन बने थे।
- **कुश्क–ए–शिकार** – फिरोज तुगलक द्वारा '"ाहनुमा' कह कर पुकारा जाने वाला यह भवन मुख्यतः ि"ाकार के लिए प्रयोग किया जाता था। यह फिरोज"ाह कोटला दुर्ग के अंदर ही स्थित था।

- **फिरोजशाह तुगलक का मकबरा** – फिरोज"ाह तुगलक ने दिल्ली में हौजखास के समीप यह मकबरा बनवाया था। इसकी आकृति वर्गाकार है और इसका मुख्य द्वार दक्षिण की तरफ है। मकबरे के निर्माण में संगमरमर व लाल पत्थरों का प्रयोग किया गया है। इसके दीवारों को फूल–पत्तियों एवं बेल–बूटी से सजाया गया है। इसके गुम्बद अष्टकोणीय ड्रम पर निर्मित हैं।
- **खान–ए–जहाँ तेलंगानी का मकबरा** – खाने जहाँ जूना"ाह ने इस मकबरे का निर्माण अपने पिता एवं फिरोज के प्रधानमंत्री खाने जहां तेलंगानी की याद में कराया था। इसके निर्माण में लाल पत्थर एवं सफेद संगमरमर का सुन्दर प्रयोग किया गया है। इस मकबरे की तुलना जेरूसलम में निर्मित उमर के मस्जिद से की जाती है।
- **खिड़की मस्जिद** – वर्गाकार रूप में तहखाने के ऊपर बनी यह मस्जिद दुर्ग के समान दिखती है। यह मस्जिद जहाँपनाह नगर में स्थित है। इसकी तुलना इल्तुतमि"ा के सुल्तानगढ़ी से की जाती है। यह मस्जिद फिरोज"ाह तुगलक के काल की है।
- **काली मस्जिद** – फिरोज"ाह तुगलक के काल में इस मस्जिद का निर्माण जौना"ाह ने करवाया। दो मंजिली इस मस्जिद में अर्धवृत्तीय मेहराब का प्रयोग किया गया है।
- **बेगमपुरी मस्जिद** – संगमरमर से निर्मित जहाँपनाह नगर में स्थित यह मस्जिद गुम्बदों एवं मेहराबों के प्रयोग से काफी प्रभाव"ाली दिखती है।
- **कलां मस्जिद** – खान–ए–जौना"ाह द्वारा तहखाने के ऊपर निर्मित यह मस्जिद शाहजहाँबाद में स्थित है। इसकी छत पर गुम्बद तथा चारों कोनों में बुर्ज बने हैं।
- **कबीरूद्दीन औलिया का मकबरा** – लाल गुम्बद के नाम से प्रसिद्ध इस मकबरे का निर्माण कार्य गयासुद्दीन द्वितीय ने आरंभ किया था तथा नासिरूद्दीन मुहम्मद ने इसके निर्माण कार्य को पूरा किया। आयताकार रूप में बनी इस मस्जिद में लाल पत्थर एवं सफेद संगमरमर का प्रयोग किया गया है।

14.4.4. सैय्यद व लोदी काल में वास्तुकला (Architecture during Sayyid and Lodi period) :-

दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत सैय्यद काल में स्थापत्य कला का पतन आरंभ हो चुका था। इस काल में खिलजीकालीन निर्माण कार्यों को नकल करते हुए इसकी प्राणवंत शैली को फिर से जीवित करने के प्रयास किये गये। परंतु इस प्रयास में इन्हें आं"िक सफलता ही मिली। लोदी काल में कुछ प्रयास किये गये। लोदी काल को स्थापत्य कला के क्षेत्र में मकबरों के युग के नाम से जाना जाता है। इन दोनों कालों की स्थापत्य कला की मुख्य वि"ोषता गुम्बदों की प्रधानता रही है। इनके निर्माण कार्यों का वर्णन इस प्रकार है–

- **खिज्राबाद नगर** – सैय्यद व"ा के संस्थापक खिज्र खाँ के द्वारा इस नगर का निर्माण करवाया गया।
- **मुबारकबाद नगर** – खिज्र खाँ के बाद गद्दी पर बैठे। मुबारक शाह के द्वारा मुकारकाबाद नगर का निर्माण हुआ।
- **सुल्तान मुबारकशाह सैय्यद का मकबरा**– यह मकबरा मुबारकपुर नामक गाँव में स्थित है। मकबरे के चारों ओर बने बरामदे की ऊँचाई अधिक होने के कारण द"ाक इसे सरलता से देख ही नहीं सकते। इतिहासकार मा"ाल ने अधिक ऊँचाई वाले बरामदे को इस मकबरा का सबसे बड़ा दोष बताया है। अष्टभुजाकार इस मकबरे के निर्माण में लाल पत्थरों का प्रयोग किया गया है।
- **मुहम्मदशाह का मकबरा** – सैय्यदकालीन इस अष्टभुजीय मकबरे में अत्यधिक ऊँचाई के कमी को दूर किया गया है। मकबरे के साज–सज्जा में चीनी टाइलों का उपयोग किया गया है।
- **बहलोल लोदी का मकबरा** – यह मकबरा 1418 ई. में सिंकदर लोदी द्वारा बनवाया गया। इसमें कुल 5 गुम्बद है। बीच में स्थित गुम्बद की ऊँचाई सर्वाधिक है। इसके निर्माण में लाल पत्थरों का प्रयोग हुआ है।
- **सिकंदर लोदी का मकबरा** – इब्राहिम लोदी ने 1517 ई. में इस मकबरे का निर्माण करवाया था। इस मकबरे के गुम्बद के चारों और आठ स्तंभ बने हैं। इसके चारों किनारे पर लम्बे–लम्बे बुर्ज बने है। यह मकबरा एक वृहदाकार प्रांगण में है और चहारदीवारी से घिरा है।
- **बडे खाँ तथा छोटे खाँ का मकबरा** – इन मकबरों का निर्माण सिंकदर लोदी के द्वारा करवाया गया था।
- **मोती मस्जिद** – मोती मस्जिद का निर्माण भी सिकंदर लोदी के द्वारा करवाया गया था।
- **मोठ की मस्जिद** – मोठ की मस्जिद को लोदियों की स्थापत्य कला का सुंदरतम नमूना माना जाता है। इस मस्जिद का निर्माण सिंकदर लोदी के वजीर द्वारा करवाया गया। सैय्यद एवं लोदी काल में निर्मित मकबरों को इस प्रकार वर्गीकृत किया गया है– बड़ा खाँ एवं छोटे खाँ का मकबरा, शी"ा गुम्बद, दादी का गुम्बद, पोली का गुम्बद एवं ताजखाँ के गुम्बद आदि। विद्वान पर्सी ब्राउन ने इस युग को 'मकबरों के युग' का नाम से संबोधित किया है।

14.5. प्रगति समीक्षा (Check your progress)

(क) खाली स्थान को भरने पर आधारित प्रश्न :–

(Fill in the blanks based Questions)

(1) दीवान–ए–अमीर को ही सल्तनत काल में ..... विभाग था।

(2) सल्तनत काल में राजस्व विभाग का प्रमुख ..... होता था।

(3) 'दीवान–ए–बंदगान' नाम से दास विभाग का गठन ..... ने किया था

(4) मुसलमानों से लिया जाने वाला भूमि कर ..... कहलाता था।

(5) सल्तनत काल में व्यापारिक तीर्थ स्थल ..... नगर को कहा गया है।

(6) शुद्ध इस्लामी शैली में निर्मित भारत का प्रथम मकबरा ..... है।

(7) सल्नत काल में लगान निर्धारण की मिश्रित प्रणाली को ..... कहा जाता था।

(8) गैर मुसलमानों पर लगाया जाने वाला कर ..... था।

(9) दिल्ली में तुगलकाबाद नगर की नींव ..... सुल्तान ने रखी।

(10) सल्तनत काल में डाक तथा गुप्तचर विभाग का अध्यक्ष ..... कहलाता था।

(ख) सत्य या असत्य कथन आधारित प्रश्न (True or False statement based Questions)

(1) अलाउद्दीन सल्तनतकाल का प्रथम शासक था जिसने भूमि की नाप–जोख करायी और साथ में राज्य की समस्त भूमि को खालसा भूमि के अंतर्गत कर लिया ( )

(2) शुद्ध रूप में मेहराब का प्रयोग सर्वप्रथम बलबन के मकबरे में हुआ। ( )

(3) बारह खम्भा खिलजी काल में निर्मित धर्म निरपेक्ष इमारत थी। ( )

(4) तुगलकाबाद में छप्पन कोट 'दुर्ग का निर्माण मुहम्मद बिन तुगलक ने करवाया था। ( )

(5) सलतनतकाल में लगान निर्धारण की मिश्रित प्रणाली को मुक्ताई कहा जाता था। ( )

(6) सल्तनतकाल में जकात नाम का धार्मिक कर मुसलमानों से तथा जजिया कर गैर मुसलमानों से लिया जाता था। ( )

(7) 1504 ई. में सिंकदर लोदी ने आगरा नगर की नींव डाली। ( )

(8) फिरोज तुगलक दिल्ली सल्तनत का पहला शासक था जिसने राज्य की खर्च पर हज की व्यवस्था किया था। ( )

(9) देवल सल्तनतकाल में अंर्तराष्ट्रीय बंदरगाह के रूप में प्रसिद्ध था। ( )

(10) इल्तुतमि"ा ने दिल्ली में जामा मस्जिद का निर्माण करवाया था। ( )

14.6. सारांश (Summary):-

- दिल्ली सल्तनत में सल्तान केन्द्रीय प्र"ासन का मुखिया होता था।
- राज्य की समस्त शक्ति न्यायिक व कार्यपालिका पर सुल्तान का पूरा नियंत्रण था।
- वह सल्तनत की सेना का प्रधान सेनापति था।
- समस्त इस्लामी राज्य का संवैधानिक प्रधान खलीफा ही माना जाता था।
- दिल्ली में सुल्तान स्वयं को खलीफा का नायब (सहयोगी) मानते थे।
- इल्तुतमि"ा प्रथम तुर्क सुल्तान था जिसे 1229 ई. में अब्बासी खलीफा से मान्यता प्राप्त हुआ था।
- खलीफा से मान्यता प्राप्ति के बाद इल्तुतमि"ा ने नासिर–अमीर उलमोमिनीन (खलीफा का सहायक) की उपाधि प्राप्त की थी।
- सल्तनतकाल में सभी प्रभाव"ाली पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा अमीर थी। अमीरों का प्रभाव सुल्तान पर होता था।
- नाईब – इस पद की स्थापना इल्तुतमि"ा के पुत्र बहराम"ाह के समय में उसके सरदारों द्वारा की गई। सल्तनत में सुल्तान के बाद इस पद का स्थान था। अयोग्य शासकों की स्थिति में इसका महत्व बढ़ गया था।
- नाइब के पद का सर्वाधिक प्रयोग बलबन ने किया।
- सुल्तान के अधीन सल्तनत के केन्द्रीय प्र"ासन को निम्न रेखा चित्र द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं।
- बलबन ने निरंकु"ा राजतंत्र की स्थापना की, वह अपने को जिल्ले इलाही (अल्लाह की परछाई) मानता था।
- अलाउद्दीन खिलजी ने मोमीन–उल–खिलाफत (खलीफा का दाहिना हाथ) और नासिर–ए–अमीर–उलमोमिनीन (खलीफा का सहायक) की उपाधि धारण की।
- मुस्लिम शासकों में उत्तराधिकार का कोई स्पष्ट नियम नहीं था।
- प्र"ासन में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति वजीर होता था।
- सल्तनत काल के प्रमुख वजीर –

सुल्तान **वजीर**

इल्तुतमि"ा –	फखरूल मुल्क इसामी, निजामुल मुल्क जुनैदी
रजिया –	निजामुल मुल्क जुनैदी
बलबन –	एवाजा हसन बसरी
अलाउद्दीन खिलजी –	नुसरत खाँ, मलिक काफूर, ताजुलमुल्क
मुहम्मद–बिन–तुगलक –	ख्वाजा जहाँ, अहमदअयाज
फिरोज तुगलक –	खान–ए–जहाँ
सिंकदर लोदी –	मियाँ भुँआ

- फिरोज तुगलक का वजीर खान–ए–जहाँ तैलंग ब्राह्मण था जिसने इस्लाम में अपना धर्मातरण कर लिया था।
- वजीर के बाद राज्य का सबसे महत्वूपर्ण विभाग दीवान–ए–अर्ज (सैन्य विभाग) था।
- सैन्य विभाग के प्रधान को आरिज–ए–मुमालिक/दीवान–ए–आरिज कहा जाता था।
- अलग से सैन्य विभाग की स्थापना सर्वप्रथम बलबन ने किया था।
- अलाउद्दीन खिलजी ने घोड़ों को दागने तथा सैनिकों का हुलिया लिखने की प्रथा को आरंभ किया था।
- अलाउद्दीन पहला सुल्तान था, जिसने सभी सैनिकों को पूरा वेतन नकद अदा करना शुरू किया।
- अलाउद्दीन खिलजी द्वारा किए गए प्रयोगों में सर्वाधिक कारगर बाजारों पर नियंत्रण था।
- अलाउद्दीन खिलजी के काल में दीवान–ए–मुस्तखराज लगान वसूली का अध्यक्ष था।
- बरीद–ए–मुमालिक डाक तथा गुप्तचर विभाग का अध्यक्ष था।
- दीवान–ए–अमीर कोही कृषि विभाग का अध्यक्ष था
- दीवान–ए–इस्तिकाक पें"ान विभाग का अध्यक्ष था।
- सर–ए– जहांदार/जांदार शाही गृह प्रबंधक था।
- दीवान–ए–बंदगान गुलामों का प्रबंधक था।
- इक्ता तथा पद पर वं"ाानुगत अधिकार देने वाला सुल्तान फिरोज"ाह तुगलक था।
- वं"ागत नीति को सेना में लागू करने वाला शासक फिरोज"ाह तुगलक था।
- फिरोज"ाह तुगलक के शासनकाल में सैनिकों को नकद वेतन की जगह लगान वाला गाँव मिलने लगा।

- सल्तनत काल में ब्राह्मणों पर भी जजिया कर लगाने वाला सुल्तान फिरोज"ाह तुगलक था।
- मुहम्मद–बिन–तुगलक ने सिक्कों पर से खलीफा का नाम हटा दिया।
- सल्तनज काल में जासूसों को बरीद कहा जाता था।
- सल्तनतकाल में शाही कारखानों में काम की देखभाल करने वाला अधिकारी वकील–ए–दर कहलाता था।
- सल्तनतकाल में सामान्यतः कृषि उत्पादन का 1/3 से 1/2 भाग तक कर के रूप में लेते थे।
- सल्तनतकाल में प्रारंभिक शासकों ने राज्य को कई प्रदे"ाों में बाँट दिया जिसे इक्ता कहते थे।
- जिन अमीरों को इक्ता प्रदान किया जाता था उन्हें मुक्ता या वली कहा जाता था।
- सल्तनतकाल में प्रांतों को ि"ाकों और ि"ाकों को परगनों में विभक्त किया गया था।
- परगने के प्रधान को आमिल कहा जाता था।
- सल्तनतकाल में गाँव के मुखिया को मुकद्दम कहा जाता था।
- सल्तनतकाल में छोटे जमीदारों को खूत कहा जाता था।
- सल्तनतकाल में सुल्तान की सेना को ह"मे–कल्ब और खासखेल कहते थे।
- सल्तनतकाल में राजस्व के लिए पाँच प्रकार के कर लगाए जाते थे – उश्र, खराज, खम्स, जकात और जजिया।
- खालसा भूमि – सरकारी भूमि।
- क्लोम भूमि – इक्ता की भूमि।
- इनाम, मिल्क अथवा वक्फ भूमि – मुस्लिम विद्वानों को दी जाने वाली भूमि।
- सल्तनतकाल में काजी न्याय विभाग का अध्यक्ष होता था।
- नगरों में बाजार के नियंत्रण और बाटों के माप तथा निरीक्षण के कार्य मुहतसिब करता था।
- सल्तनतकाल में कोतवालों को छोड़कर किसी अन्य प्रकार के पुलिस की व्यवस्था नहीं थी।
- अलाउद्दीन खिलजी ने मलिक काफूर को अपना नायब नियुक्त किया।
- सल्तनतकाल में भारत की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि थी।
- सल्तनतकाल में भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ थी – कृषि की उपज, वस्त्र (सूती तथा रे"ामी), अफीम, नील, जस्ता आदि।

- सल्तनतकाल में विदे"ाों से भारत में आयात की जाने वाली वस्तुएं थीं– घोड़े, खच्चर और अनेक प्रकार की विलासितापूर्ण वस्तुएं।
- देवल सल्तनतकाल में प्रसिद्ध अंर्तराष्ट्रीय बंदरगाह था।
- सरसुति अच्छे किस्म के चावल के लिए प्रसिद्ध था।
- अन्हिलवाड़ व्यापारियों के तीर्थस्थल के रूप में प्रसिद्ध था।
- आगरा – नील उत्पादन के लिए।
- बनारस – सोने, चाँदी एवं जरी के काम के लिए प्रसिद्ध था।
- बंगाल का सोनारगाँव अपने कच्चे रे"ाम और मलमल के लिए विख्यात था।
- अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता ने दिल्ली को इस्लामी दुनिया के पूर्वी हिस्से का सबसे बड़ा नगर कहा है।
- मुस्लिम कानून के चार प्रमुख स्त्रोत थे – कुरान, हदीस, इजमा एवं कयास।
- कुरान – मुस्लिमों का पवित्र ग्रंथ।
- हदीस – पैगम्बर के कार्यों एवं कथनों का उल्लेख।
- इजमा – मुस्लिम विधि"ाास्त्रियों द्वारा व्याख्यायित कानून।
- कयास – तर्क के आधार पर वि"लेषित कानून।
- फारसी भाषा के सर्वश्रेष्ठ भारतीय कवि अमीर खु"ारो को तूतिये हिन्द (हिन्द का तोता) के नाम से जानते है।
- अमीर खु"ारों का जन्म – पटियाली गाँव, इटावा (उत्तर प्रदे"ा)
- बचपन का नाम – अबुल हसन।
- गुरू – सूफी संत निजामुद्दीन औलिया।
- संरक्षण – बलबन से लेकर गयासुद्दीन तुगलक तक के शासनकाल में।
- अमीर खुसरों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृतियां –खाजियान–उल–फतूह या तारीखे अलाई, किरान–उस–सादेन, निफला–उल–फुतूह, आ"ाका, नूह–सिपेहर, तुगलकनामा आदि।
- अमीर खु"ारो ने भारत में तबला व सितार के वादन को लोकप्रिय बनाया।

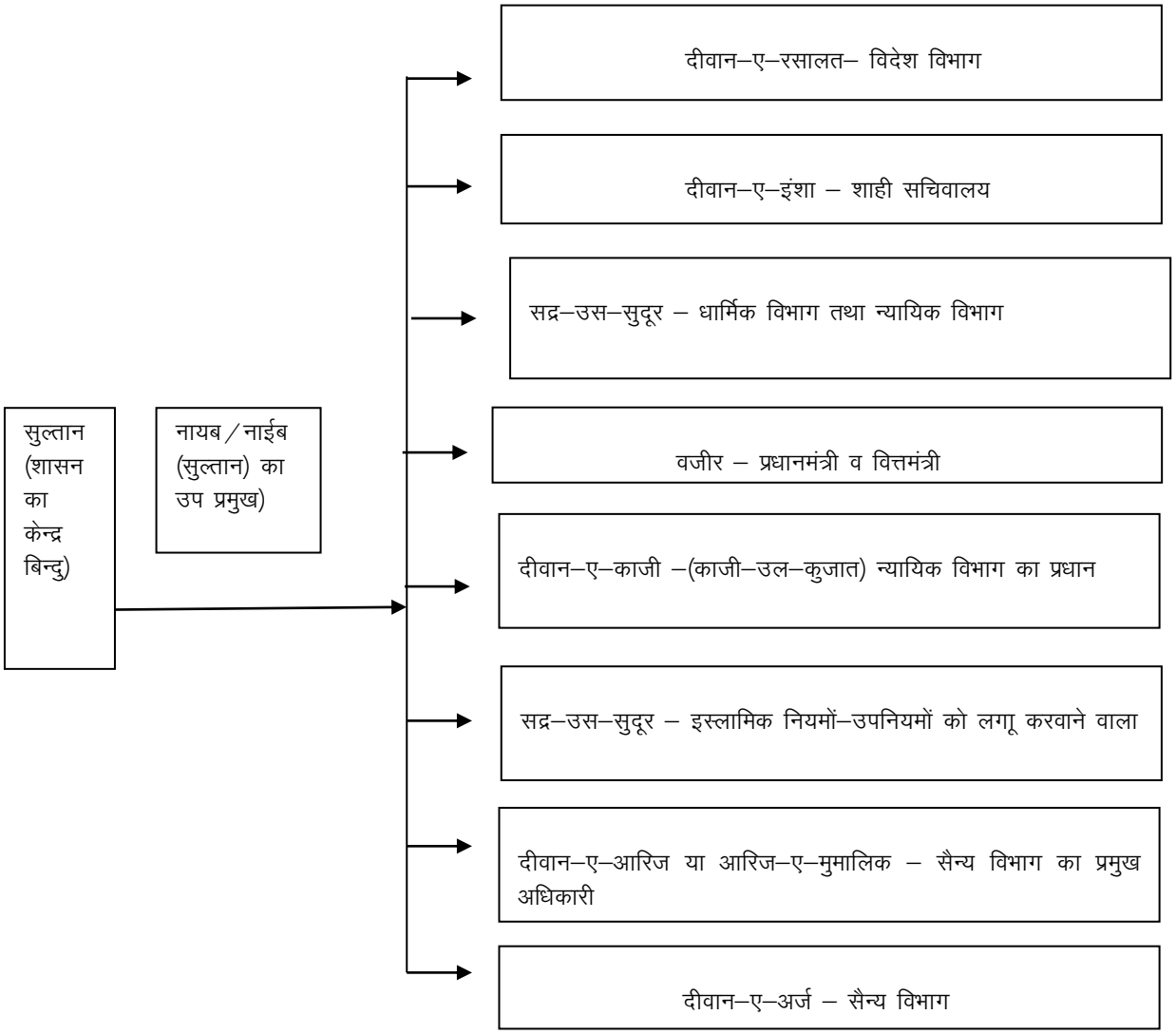

- तबकाते नासिरी – मिनहाज–उस–सिराज द्वारा रचित इस पुस्तक में मुहम्मद के भारत विजय तथा तुर्की सुल्तान का आरंभिक इतिहास लगभग 1260 ई. तक की जानकारी मिलती है।
- तारीखे फिरोज"ाही – जियाउद्दीन बरनी द्वारा रचित इस ग्रंथ में बलबन के राज्यभिषेक से लेकर फिरोज तुगलक के शासन के छठें वर्ष तक की जानकारी मिलती है।
- फतवा–ए–जहांदारी – जियाउद्दीन बरनी द्वारा रचित इस कृति में सल्तनतकालीन राजनीतिक विचारधारा का वर्णन किया गया है।
- किताब–उल–रहला – मोरक्को (अफ्रीका) यात्री इब्नबतूता का यात्रा वृतांत।
- इब्नबतूता मुहम्मद बिन तुगलक के काल में भारत की यात्रा पर आया था।

- उसने अपने यात्रा वृतांत 'रहला' में 1333 ई. से लेकर 1342 तक की भारत की राजनीतिक गतिविधियों का वर्णन किया।
- मुहम्मद तुगलक ने इसे दिल्ली का काजी नियुक्त किया था।
- कालान्तर में इसे दूत बनाकर चीन भी भेजा था।
- गुलरूखी – लोदी सुल्तान सिकंदर लोदी ने गुलरूखी शीर्षक से फारसी में कविताएँ लिखी।
- सल्तनत काल की राजकीय भाषा फारसी थी।
- सल्तनत काल में उर्दू को रेख्ता कहते थे।
- हिन्दी में मसनवी लिखने की परंपरा की शुरूआत तुगलक काल में हुई।
- सल्तनतकालीन स्थापत्य कला की शैली को इस्लामिक शैली कहा गया है।
- इस काल में स्थापत्य कला में अलंकरण की संयुक्त विधि (हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों) को अरबस्क विधि कहा गया ।
- इमारतों में गुम्बद एवं मेहराब का प्रयोग तुर्कों ने रोमवासियों से सीखा।
- अलंकरण में तुर्कों द्वारा जीवित वस्तुओं जैसे मानव एवं प"ु आकृतियों का प्रयोग निषिद्ध होने के कारण लिखावट एवं ज्यामितीय आकृतियों का अंकन किया जाता था।
- भारत में प्रथम पूर्णतः इस्लामी परम्परा के आधार पर निर्मित मस्जिद जमातखाना मस्जिद है।
- अलाउद्दीन द्वारा निर्मित 'अलाई दरवाजा' कुण्वत–उल–इस्लाम मस्जिद का प्रवे"ा द्वार है।
- शुद्ध रूप में मेहाराब का प्रयोग सर्वप्रथम बलबन के मकबरे में हुआ।
- तुगलक वास्तुकला की वि"ेषता थी लिम्टल एवं शहतीर के साथ मेहराब का प्रयोग।
- तुगलक वास्तुकला सादगी का प्रतीक है।
- खिलजीकालीन वास्तुकला भव्यता एवं सुंदरता का प्रतीक है।
- सैय्यद एवं लोदी के काल को मकबरों का काल के नाम से जानते है।
- लोदियों के साथ मकबरों का निर्माण ऊँचे चबूतरों पर किया जाने लगा।
- सल्तनतकाल में प्रचलित ख्याल गायकी के अविष्कार का श्रेय जोनपुर के सुल्तान शर्की वं"ी हुसैन शाह शर्की को दिया जाता है।
- संगीत के क्षेत्र में उपलब्धि के कारण हुसैन"ाह शर्की को 'नायक' की उपाधि प्राप्त हुई थी।

- लोकप्रिय गायन शैली कव्वाली का प्रचलन भी सल्तनत काल में ही प्रारंभ हुआ।
- सल्तनतकाल में अनेक वाद्ययंत्र जैसे रबाब, सारंगी, सितार, तथा तबला का प्रचलन था।
- अमीर खुसरों को सितार और तबले के अविष्कार का श्रेय दिया जाता था।
- सल्तनत काल में संगीत पर आधारित महत्वपूर्ण पुस्तकों की रचना हुई।
- संगीत पर आधारित प्रमुख पुस्तकें हैं –
  संगीत रत्नाकर, संगीत समयसार, संगीतराय, संगीत ि"ारोमणि, संगीत कौमुदी, संगीत नारायण आदि।

14.7. संकेत–सूचक (Key-Words)

- उलेमा – मुस्लिम धर्म गुरू।
- खलीफा – मुस्लिम राज्य एवं इस्लाम धर्म का प्रधान।
- सुल्तान – शासक।
- अमीर – सल्तनत काल में सभी प्रभाव"ाली पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा अमीर थी।
- मुकद्दम – सल्तनतकाल में गाँव के मुखिया को मुकद्दम कहते थे।
- खूत – छोटे जमींदार।
- कारकून – कर्मचारी।
- अमीर, खान, मलिक – ये उपाधियां सल्तनत काल में सरदारों की सैनिक पदवियों की द्योतक थीं।
- दीवानी मामला – धन–संपत्ति से संबंधित मामला।
- फौजदारी मामला – लड़ाई–झगड़े व खून–खूराबी से संबंधित मामला।
- वक्फ – धार्मिक कार्यों से संबंधित दान रा"ि व भूमि।
- लगान – भूमि कर।
- सामन्त – अधीनस्थ शासक।
- टंका – सल्तनतकालीन चाँदी का सिक्का।

14.8. स्व–मूल्याकंन परीक्षा (Self Assessment Test)(SAT) :-

(क) वस्तुनिष्ठ प्रश्न (बहुविकल्पी प्रश्न) (objective Question) (Multiple Choice Qyestions) :-

(इनके उत्तर दायीं ओर कोष्ठक में अंकित है)

11 किस शासक ने स्वयं को खलीफा घोषित किया ?

(i) नासिरूद्दीन खुसरो (ii) मुबारक खिलजी (ii)

(iii)अलाउद्दीन खिलजी (iv) बलबन

12 तुगलकाबाद की नींव किस शासक ने डाली ?

(i) मुहम्मद तुगलक (ii) गयासुद्दीन तुगलक (ii)

(iii) फिरोज"ाह तुगलक (iv) अलाउद्दीन खिलजी

13 हुनूज दिल्ली दूरस्थ (अब दिल्ली दूर नहीं) कथन किसका है ?

(i) गाजी मलिक (ii) शेख सलीम चि"ती (iii)

(iii) निजामुद्दीन औलिया (iv) अमीर खुसारो

14 टोपरा और मेरठ से अ"ोक स्तंभ को लाकर किस सुल्तान ने दिल्ली में स्थापित करवाया ?

(i) अलाउद्दीन खिलजी (ii) फिरोज तुगलक (ii)

(iii) मुहम्मद तुगलक (iv) उपर्युक्त में से काई नहीं

15 मकबरा निर्माण शैली का जन्मदाता किसे माना जाता है ?

(i) बलबन (ii) कुतुबुद्दीन ऐबक (iii)

(iii) इल्तुतमि"ा (iv) रजिया

16 तुगलक काल की किस इमारत को धर्मनिरपेक्ष इमारत कहा जाता है?

(i) गयासुद्दीन के मकबरे को (iii)

(ii) शेख निजामुद्दीन औलिया के मकबरे को

(iii) बारहखम्भा भवन को

(iv) उपर्युक्त सभी को

17 इतिहासकार पर्सी ब्राउन ने किस काल को मकबरों का काल कहा?

(i) तुगलक काल (ii) खिलजी काल (iv)

(iii) गुलाम व"ा का काल (iv) सैय्यद एवं लोदी काल

18 सल्तनतकाल का प्रथम मकबरा किसे माना जाता है?

(i) नासिरूद्दीन का मकबरा या सुल्तानगढ़ी का मकबरा (i)

(ii) इल्तुतमि"ा का मकबरा

(iii) बलबन का मकबरा

(iv) ऐबक का मकबरा

19 सल्तनतयुगीन सैन्य विभाग को आरिजे मुमालिक कहा जाता था। इस समय सेना का गठन सिपहसालार, अमीर, मलिक एवं खान पदाधिकारियों में किया जाता था। निम्न से सर्वोच्च पदाधिकारी कौन था?

(i) खान (ii) अमीर (i)

(iii) बलबन (iv) सिपहसालार

20 इल्तुतमि"ा द्वारा लागू की गयी इक्ता प्रणाली किसके शासन काल में आनुवं"िक हो गयी?

(i) अलाउद्दीन खिलजी (ii) मुहम्मद तुगलक (iv)

(iii) बलबन (iv) फिरोज तुगलक

(ख) सही मिलान पर आधारित प्रश्न (Based on the correct match Questions) :–

1 सूची I को सूची II से सुमेलित कीजिए।

	सूची I	सूची II
(अ)	उश्र	1 लूट में प्राप्त हुआ धन
(ब)	खुम्स	2 सम्पन्न मुसलमानों से लिया जाने वाला धार्मिक कर
(स)	खराज	3 गैर मुसलमानों (जिम्मी) से लिया जाने वाला कर
(द)	जकात	4 गैर मुसलमानों से वसूला जाने वाला भूमि कर
(ध)	जजिया	5 मुसलमानों से वसूला जाने वाला भूमि कर

	अ	ब	स	द	ध	
(क)	5	1	4	2	3	**(क)**
(ख)	1	2	3	4	5	
(ग)	5	4	3	2	1	
(घ)	2	4	3	5	1	

2 सूची I में दिये गये विभागों को सूची II में दिये गये संस्थापकों से सुमेलित कीजिए।

	सूची I	सूची II
(अ)	दीवान–ए–अर्ज	1 जलालुद्दीन फिरोज खिलजी
(ब)	दीवान–ए–मुसतखराज	2 फिरोज तुगलक
(स)	दीवान–ए–अमराकोही	3 इल्तुतमि"ा
(द)	दीवान–ए–खैरात	4 मुहम्मद तुगलक
(ध)	दीवान–ए–वकूफ	5 अलाउद्दीन खिलजी
(न)	दीवान–ए–बंदगान	6 बलबन

	अ	ब	स	द	ध	न	
(क)	1	2	4	3	5	6	**(ख)**
(ख)	6	5	4	2	1	2	
(ग)	6	5	3	1	4	2	
(घ)	6	5	4	1	3	2	

3 सूची I को सूची II में सुमेलित कीजिए।

	सूची I	सूची II
(अ)	तुगलकाबाद	1 अलाउद्दीन
(ब)	आदिलाबाद	2 गयासुद्दीन तुगलक
(स)	फिरोजाबाद	3 मुहम्मद तुगलक
(द)	खिज्राबाद	4 फिरोज तुगलक

	अ	ब	स	द	
(क)	1	2	3	4	**(ख)**
(ख)	2	3	4	1	
(ग)	2	3	1	4	
(घ)	4	3	2	1	

(ग) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer type Questions) :–

1. सल्तनतकालीन शासन व्यवस्था का विस्तार से वर्णन करें।

(Describe the Sultanate regime in detail)

2. सल्तनतकालीन कला एवं स्थापत्य पर प्रका"ा डालें।

(Highlight on art and Architecture during Sultanate period)

3. सल्तनतकालीन आर्थिक जीवन की विवेचना करें।

(Discuss the economic life of Sultanate)

(घ) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer type Questions) :–

(1) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें –

(Write short notes on following)

(i)सल्तनतकालीन राजस्व व्यवस्था

(Revenue system under Sultanate period)

(ii) सल्तनतकालीन लगान व्यवस्था

(Rent Arrangements Under Sultanate period)

(iii) सल्तनतकालीन स्थानीय प्र"ासन

(Local administration during Sultanate period)

(2) सलतनतकालीन स्थापत्य कला की मुख्य वि"ोषताओं को लिखें –

(Write down the main characteristics of Sultanate's Architecture)

14.9. प्रगति समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Answers to check your Progress)

14.5 (क) का उत्तर :–

1. कृषि विभाग	2. वजीर	3. फिरोज तुगलक
4. उश्र	5. अन्हिलवाड़	6. बलबन का मकबरा
7. मुक्ताई	8. खराज	9. गयासुद्दीन तुगलक
10. बरीद–ए–मुमालिक		

14.5 (ख) का उत्तर :–

1. सत्य	2. सत्य	3. असत्य
4. असत्य	5. सत्य	6. सत्य
7. सत्य	8. सत्य	9. सत्य

10. असत्य

14.10. संदर्भ ग्रंथ एवं सहायक पुस्तकें/सहायक अध्ययन सामग्री (References/Suggested Reading) :-

- मध्यकालीन भारत प्रथम खंड (750–1540) – हरि"ाचन्द्र वर्मा, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदे"ालय दिल्ली वि"वविद्यालय, द्वितीय संस्करण : 20 फरवरी, 1985
- प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास – अविना"ा चन्द्र अरोड़ा व सहायक आर. अरोड़ा, प्रदीप पब्लिके"ान्स, प्रताप रोड़, जालंधर (पंजाब), तृतीय संस्करण : 1987
- सामान्य अध्ययन – यूनिक पब्लिके"ान्स, 35/1, जवाहर लाल नेहरू रोड़, बटलर मार्केट, जार्ज टाउन – इलाहाबाद (उत्तर प्रदे"ा)
- सामान्य अध्ययन – स्पेक्ट्रम (Spectrum) पबिल्के"ान्स, अहीर नगर, दिल्ली
- संक्षिप्त इतिहास – NCERT सार महे"ा कुमार वर्णवाल, Cosmos Publication मुखर्जी नगर, प्रथम संस्करण, जनवरी, 2019
- भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय आंदोलन – द्वितीय संस्करण : जून, 2018 – दृष्टि पब्लिके"ान्स (The Vision) डॉ, मुखर्जी नगर, दिल्ली

नोट

नोट

नोट

नोट